बृहत

पाराशर होरा शास्त्रम्

भाषा-टीका



ज्यौतिषाचार्य पं. गणेशदत्त पाठक

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

बृहत्-
पाराशरहोराशास्त्रम्

काशीस्थ जोखीराम मटरूमल गोयनका महाविद्यालय
पूर्व ज्योतिषविभागाध्यक्षेण
स्वर्गीय गणेशदत्तपाठकेन
सम्पादितम्।

[illegible] तया—

सोदाहर[illegible] सहितम्

प्रकाशक
सावित्री ठाकुर प्रकाशन
रथयात्रा, वाराणसी

प्रमुख वितरक
ठाकुर प्रसाद कैलाशनाथ बुकसेलर
राजादरवाजा, वाराणसी

प्रकाशक
सावित्री ठाकुर प्रकाशन
रथयात्रा, वाराणसी
फोन-0542-3257309

संशोधित परिवर्तित संस्करण
सन् : २००९

मूल्य : रु० २००.०० (दो सौ रुपये)

मुद्रक
सावित्री प्रिंटिंग प्रेस
वाराणसी

Sri Ganeśāya Namaha

Brihat-
Pārāśarhorāśāstram

Edited by
Late Ganesh Dutt Pathak
Former Head, Department of Jyotish
Jokhiram Matarumal Goenka Mahavidyalaya
Varanasi

Enriched with
Hindi Meanings and Examples

Published by
Savitri Thakur Prakashan
Rathyatra, Varanasi

Distributed by
Thakur Prasad Kailashnath Bookseller
Rajadarwaja, Varanasi

Publisher
Savitri Thakur Prakashan
Rathyatra, Varanasi

Price : Rs. 200.00 (Rupees Two Hundred)

Printed at
Savitri Printing Press
Varanasi

भूमिका

ज्योतिषशास्त्र सिद्धान्त संहिता और होरा नामक तीन स्कंधों में प्रसिद्ध है। यह वेद का प्रधान अङ्ग माना जाता है। उपर्युक्त तीनों स्कंधों में प्रतिपाद्य विषय स्वतन्त्र हैं। किन्तु सिद्धान्त स्कंध के आश्रित शेष दोनों स्कंध हैं।

वेदों में, ब्राह्मण-ग्रन्थों में, श्रौत सूत्रों में, मीमांसा आदि दर्शनों में, पाणिनि सूत्रों में और पुराण-इतिहास में प्रसंगानुसार प्रयोजनवश ज्योतिष विद्या के अनेक प्रकीर्णक विषय सूत्ररूप से उपलब्ध हैं। इसके स्वतन्त्र विषय लगध मुन्युक्त (वेदाङ्गज्योतिष) नामक अति प्राचीन प्रसिद्ध ग्रंथ में प्रतिपादित हैं।

तात्पर्य यह है कि प्रत्येक यज्ञादि और गृह्योक्त संस्कारों के अथवा धार्मिक आचारों के कर्तव्य के काल का ज्ञान ज्योतिष के ही ऊपर निर्भर माना गया है। इसी कारण वेद में काल के संवत्सर, अयन, ऋतु आदि विभाग और नक्षत्रों का दैवतक सम्बन्धादि प्राप्त होते हैं। इसका विशेष विवरण अथर्ववेद में कालक्रमानुसार चर्चा है।

पंचभूतों के प्राकृतिक विभिन्न गुण-धर्मों से वेष्ठित भौतिक जगत् जड़ पिंड अपने अणु संसक्तावयवों से सदा स्पन्द क्रियाशील रहा करते हैं। मानस जीवन का अथवा स्थावर-जंगम विश्व के प्रत्येक वस्तु का परस्पर में दिव्य भौम एवं अन्तरिक्ष विविध उत्पात अर्थात् चेष्टाओं से प्रत्यक्ष-परोक्ष वशीकारक प्रभाव माना गया है और यही आरम्भ की भूमि है। तात्पर्य यह है कि विज्ञानानुमोदित प्राकृतिक अनुपात से अनुकूल क्रिया, प्रतिकूल अर्थात् शुभाशुभ ग्रह-नक्षत्रों के पिंडस्थ तत्त्व आकर्षण शक्ति द्वारा रश्मियों से प्रतिफलित होकर ऋतुधर्मानुसार अपने परिणामजन्य परिपाकों को प्राप्त हुआ करते हैं और इसका निदर्शन अन्य वस्तुओं की अपेक्षा सहज ही चेतन-पिंडों में अनुभूत होकर देखा जाता है। इस सूक्ष्म रहस्य की संगति अति कठिन है। आचार्य वराहमिहिर ने बृहत् जातक में लिखा है–

होरेत्यहोरात्र विकल्पमेके वाञ्छन्ति पूर्वापरवर्णलोपात्।
कर्मार्जितं पूर्वभवेसदादि यत्तस्य पंक्तिं समभिव्यनक्ति।।

इसमें जन्मान्तरवाद अर्थात् जीवों के परिमाणवाद को आधार मानकर शुभाशुभ कर्म संस्कार का शरीर द्वारा भोग रूप से अभिव्यक्त होना प्रगट किया है। यहाँ मूलभूत अनिर्वचनीय सत्य फलित विद्या की सत्यता का एक मात्र स्तम्भ है। प्रत्येक नैसर्गिक घटना का कालज्ञान और आधाराधेय भाव से स्वरूप फल प्राप्ति परिणामान्तर में स्थित होकर भिन्न स्वरूप में प्रगट होती है। इसी गूढ़ तत्त्व को ऋषि-मुनियों ने अपने दिव्य दृष्ट से जानकर परिभाषाओं के भेद से संसार को सूचित किया है। इससे भौतिक पदार्थों के सिवाय ग्रहों का मानवीय सम्बन्ध उपपत्ति सिद्ध होता है।

यह निःसन्देह है कि वैदिक ज्यौतिष तत्त्व का विकास ऋषि-मुनियों के समय से लेकर कालक्रमानुसार बढ़ता गया है और विभिन्न प्रकारों से इसकी उपयोगिता की परीक्षा करके वशिष्ठ, नारद, कश्यप, गर्ग आदि के संहिता-ग्रंथों की सृष्टि हुई। इसके अंग-उपांगों का आविष्कार समीकरण एवं उनके अनुयायी महाविशाल जाल भूपृष्ठ पर आकाश मध्य रेखा तक सीधा सम्बन्ध स्थापित करके ही छोड़ा और भविष्य में इनके अनुयायियों को वाद, जल्प, वितंडा, हेत्वाभास, छल, निग्रह आदि के सहारे कल्पना जालों को नवीन रूप देकर अनन्त की ओर प्रवृत्त होने के लिए पर्याप्त सामग्री छोड़ दी है।

प्रस्तुत ग्रंथ भी उन्हीं ऋषियों में से एक आचार्य की कृति है। इसके अनेक संस्करण निकले हुए हैं। जिनमें परस्पर पाठभेद हैं। इसकी कतिपय पांडुलिपियाँ भी कई स्थानों में वर्तमान हैं। मैने उन्हीं पांडुलिपियों में से कुछ एक का सहारा लेकर इस ग्रंथ का संपादन यथामति भाषाटीका में सोदाहरण किया है।

भ्रांति होना मनुष्य धर्म है। इस नीति के अनुसार सम्भवतः मुझसे भी कुछ भ्रांति और त्रुटि हो गई हो, अतः सज्जन विद्वत् गणों से करबद्ध प्रार्थना है कि उक्त त्रुटिओं के लिए क्षमा करते हुए मुझे सूचित करेंगे।

विनीत :

गणेशदत्त पाठक

संवत् २०२९
श्रा० शु० १५

विषय-सूची

इति विषयानुक्रमणिका समाप्ता।

श्रीगणेशाय नमः

अथ बृहत्पाराशरहोराशास्त्रम्

भाषा-टीकासहितम्

पूर्वार्धम्

श्रीगणेशं गुरुं नत्वा नत्वाम्बां सुमतिप्रदाम्।
पाराशरीयहोरायाः कुर्वे टीकां सुबोधिनीम्।।१।।

मैत्रेय उवाच—

नमस्तस्मै भगवते बोधरूपाय सर्वदा।
परमानन्दकन्दाय गुरवेऽज्ञानध्वंसिने।।१।।
इति स्तुत्या सुसंहृष्टो मुनिस्तत्त्वविदाम्बरः।
अथादिदेश सच्छास्त्रं सारं यज्ज्योतिषां शुभम्।।२।।

मैत्रेय जी ज्योतिषशास्त्र के सार पदार्थ को जानने के लिए पाराशर जी की स्तुति करते हैं।

अज्ञान को नाश करने वाले परम आनन्द को देनेवाले सर्वदा ज्ञान को देनेवाले भगवन् परमपूज्य आपको नमस्कार है। इस स्तुति से तत्त्व के जानने वालों में श्रेष्ठ मुनि प्रसन्न होकर ज्यौतिष (ग्रहों) के शुभ तत्त्व शास्त्र का आदेश करने लगे।।१-२।।

पराशर उवाच—

शुक्लाम्बरधरं विष्णुं शुक्लाम्बरधरां गिरम्।
प्रणम्य पाञ्चजन्यं च वीणां याभ्यां धृतं द्वयम्।।३।।

पराशर जी बोले— सफेद वस्त्र को धारण किये हुये, पांचजन्य को लिये हुये विष्णु को एवं सफेद वस्त्र को धारण किये हुये, वीणा को लिये हुये सरस्वती को प्रणाम कर।।३।।

सूर्यं नत्वा ग्रहपतिं जगदुत्पत्तिकारणम्।
वक्ष्यामि वेदनयनं यथा ब्रह्ममुखाच्छ्रुतम्।।४।।

संसार के उत्पत्ति के कारण ग्रहों के स्वामी सूर्य को नमस्कार करके जैसा मैंने ब्रह्मा के मुख से सुना है वैसा ही वेद के नेत्र को (ज्यौतिष- शास्त्र) कहूँगा।।४।।

शान्ताय गुरुभक्ताय ऋजवेऽर्चितस्वामिने।
आस्तिकाय प्रदातव्यं ततः श्रेयो ह्यवाप्यति।।५।।

इस शास्त्र को शान्तस्वभाव गुरुभक्त, सीधे, स्वामीभक्त और आस्तिक को देना चाहिए। इससे कल्याण की प्राप्ति होती है।।५।।

न देयं परशिष्याय नास्तिकाय शठाय च।
दत्ते प्रतिदिनं दुःखं जायते नात्र संशयः।।६।।

दूसरे के शिष्य को, नास्तिक और मूर्ख को नहीं देना चाहिए। ऐसा करने से प्रतिदिन दुःख होता है, इसमें संशय नहीं है।।६।।

अथ सृष्ट्यारम्भमाह—

एकोऽव्यक्तात्मको विष्णुरनादिः प्रभुरीश्वरः।
शुद्धसत्त्वो जगत्स्वामी निर्गुणस्त्रिगुणान्वितः।।७।।

एक अव्यक्त आत्मावाले विष्णु हैं जो कि अनादि, समर्थ, ईश्वर, शुद्ध सतोगुणी, जगत् के स्वामी, निर्गुण होते हुए भी तीनों गुणों से युक्त हैं।।७।।

संसारकारकः श्रीमान्निमित्तात्मा प्रतापवान्।
एकांशेन जगत्सर्वं सृजत्यवति लीलया।।८।।

संसार को बनाने वाले सर्व सम्पत्ति से युक्त, नियतात्मावाले, प्रतापी हैं। वे अपने एक अंश से सम्पूर्ण जगत् की लीला से ही रचना करते और पालन करते हैं।।८।।

त्रिपादं तस्य देवस्य ह्यमृतं तत्त्वदर्शिभिः।
विदन्ति तत्प्रमाणं च सप्रधानं तथैकपात्।।९।।

इनके तीन चरण अमृतमय हैं जिसे तत्त्वदर्शी लोग जानते हैं। प्रधान के सहित प्रमाणस्वरूप एक चरण से।।९।।

व्यक्ताव्यक्तात्मको विष्णुर्वासुदेवस्तु गीयते।
यदव्यक्तात्मको विष्णुः शक्तिद्वयसमन्वितः।।१०।।

व्यक्त और अव्यक्त आत्मावाले विष्णु को वासुदेव कहते हैं। जो अव्यक्त विष्णु हैं वे दो शक्तियों से युक्त हैं।।१०।।

व्यक्तात्मकस्त्रिशक्तीभिः संयुतोऽनन्तशक्तिमान्।
सत्त्वप्रधाना श्रीशक्तिर्भूशक्तिश्च रजोगुणः।।११।।

व्यक्त आत्मावाले विष्णु तीन शक्तियों से युक्त होने से अनन्त शक्तिवाले कहे जाते हैं। तीनों शक्तियों में श्री शक्ति सत्त्वगुण प्रधान, भू शक्ति रजोगुण प्रधान है।।११।।

शक्तिस्तृतीया प्रोक्ता नीलाख्या ध्वान्तरूपिणी।
वासुदेवश्चतुर्थोऽभूच्छ्रीशक्त्या प्रेरितो यदा।।१२।।

तीसरी नील शक्ति तमोगुण प्रधान है। इनसे भिन्न श्रीशक्ति से प्रेरित चौथे वासुदेव हैं।।१२।।

सङ्कर्षणश्च प्रद्युम्नोऽनिरुद्ध इति मूर्त्तिधृक्।
तमःशक्त्यान्वितो विष्णुर्देवः सङ्कर्षणाभिधः।।१३।।

वे संकर्षण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध नामक मूर्ति को धारण करते हैं, तमः शक्ति से युक्त विष्णु संकर्षण नाम से।।१३।।

प्रद्युम्नो रजसा शक्त्याऽनिरुद्धः सत्त्वया युतः।
महान्सङ्कर्षणाज्जातः प्रद्युम्नादहंकृतिः।।१४।।

रज शक्ति से प्रद्युम्न, सत्त्व शक्ति से युक्त अनिरुद्ध होते हैं। संकर्षण से महत्तत्त्व की उत्पत्ति और प्रद्युम्न से अहंकार की उत्पत्ति हुई।।१४।।

अहङ्कारात्स्वयं जातो ब्रह्माहङ्कारमूर्त्तिधृक्।
सर्वेषु सर्वशक्तिश्च स्वशक्त्याधिकया युतः।।१५।।

अहंकार से अहंकार की मूर्त्ति को धारण किये हुए ब्रह्मा हुए। सभी लोगों में सभी शक्तियाँ हैं किन्तु जिस शक्ति से जो उत्पन्न हुए हैं वह शक्ति उनमें अधिक है।।१५।।

अहङ्कारस्त्रिधा भूत्वा सर्वमेतदविस्तराद्।
सात्त्विको राजसश्चैव तामसश्चेदहंकृतिः।।१६।।

अहंकार भी सात्त्विक, राजस, तामस क्रम से वैकारिक, तैजस और तामस नाम से तीन प्रकार के हैं।।१६।।

देवा वैकारिकाज्जातास्तैजसादिन्द्रियाणि च।
तामसाश्चैव भूतानि खादीनि स्वशक्तिभिः।।१७।।

वैकारिक से देवता, तैजस से इन्द्रिय और तामस से पंचमहाभूतों की उत्पत्ति हुई है। ये सभी अपनी-अपनी शक्ति से उत्पन्न हैं।।१७।।

श्रीशक्त्या सहितो विष्णुः सदापाति जगत्त्रयम्।
भूशक्त्या सृजते विष्णुर्नीलशक्त्या युतोऽत्ति हि।।१८।।

श्री शक्ति से युक्त होकर विष्णु (वासुदेव) तीनों लोकों का पालन करते हैं, भू शक्ति से (विष्णु) ब्रह्मा जगत् की सृष्टि करते हैं और नील शक्तिसम्पन्न शिव तीनों लोकों का लय करते हैं।।१८।।

सर्वेषु चैव जीवेषु परमात्मा विराजते।
सर्वं हि तदिदं ब्रह्मन् स्थितं हि परमात्मनि।।१९।।

हे ब्रह्मन्! सभी जीवों में परमात्मा स्थित हैं और यह समस्त जगत् परमात्मा में स्थित है।।१९।।

सर्वेषु चैव जीवेषु स्थितं ह्यंशद्वयं क्वचित्।
जीवांशमधिकं तद्वत्परमात्मांशकः किल।।२०।।

सभी जीवों में दो अंश अधिक होते हैं, किसी में जीवांश अधिक होता है और किसी में परमात्मांश अधिक होता है।।२०।।

सूर्यादयो ग्रहाः सर्वे ब्रह्मकामद्विषादयः।
एते चान्ये च बहवः परमात्मांशकाधिकाः।।२१।।

सूर्यादि ग्रहों में, ब्रह्मा, शिव आदि देवता तथा अन्य अवतारों में परमात्मांश अधिक होता है।।२१।।

शक्तयश्च तथैतेषामधिकांशाः श्रियादयः।
अन्यासु स्वस्वशक्तीषु ज्ञेया जीवांशकाधिकाः।।२२।।

इनकी जो शक्तियाँ (लक्ष्मी आदि) हैं इनमें भी परमात्मांश अधिक होता है। अन्य देवता और उनकी शक्तियों में जीवांश अधिक होता है।।२२।।

अवतारवादः।

पराशर जी के उत्तर से शंकित हो मैत्रेय जी ने पुनः प्रश्न किया।

मैत्रेय उवाच–

रामकृष्णादयो ये च ह्यवतारा रमापतेः।
तेऽपि जीवांशसंयुक्ताः किं वा ब्रूहि मुनीश्वर।।२३।।

मैत्रेय जी बोले– हे मुनीश्वर! राम, कृष्ण आदि जो विष्णु के अवतार हैं क्या वे भी जीवांश से युक्त हैं।।२३।।

पराशर उवाच–

रामः कृष्णश्च भो विप्र नृसिंहः शूकरस्तथा।
इति पूर्णावतारश्च ह्यन्ये जीवांशकान्विताः।।२४।।

पराशर जी बोले– हे विप्र! राम, कृष्ण, नृसिंह और शूकर ये पूर्ण अवतार हैं। अन्य अवतार जीवांश से युक्त हैं।।२४।।

अवताराण्यनेकानि ह्यजस्य परमात्मनः।
जीवानां कर्मफलदो ग्रहरूपी जनार्दनः।।२५।।

अजन्मा परमात्मा के अनेक अवतार हैं। जीवों के कर्मानुसार फल देने के लिए ग्रहरूप जनार्दन भगवान् का अवतार है।।२५।।

दैत्यानां बलनाशाय देवानां बलवृद्धये।
धर्मसंस्थापनार्थाय ग्रहाज्जाताः शुभाः क्रमात्।।२६।।

दैत्यों के बल को नाश करने के लिए और देवताओं का बल बढ़ाने के लिये तथा धर्म को स्थापित करने के लिये ग्रहों से शुभद अवतार हुए हैं।।२६।।

रामोऽवतारः सूर्यस्य चन्द्रस्य यदुनायकः।
नृसिंहो भूमिपुत्रस्य बुद्धः सोमसुतस्य च।।२७।।

जैसे सूर्य का रामावतार, चन्द्रमा का कृष्णावतार, भौम का नृसिंहावतार और बुध का बौद्धावतार है।।२७।।

वामनो विबुधेज्यस्य भार्गवो भार्गवस्य च।
कूर्मो भास्करपुत्रस्य सैंहिकेयस्य सूकरः।।२८।।

बृहस्पति का वामन अवतार, शुक्र का भार्गव (परशुराम) अवतार, शनि का कूर्म अवतार, राहु का सूकर अवतार है।।२८।।

केतोर्मीनावतारश्च ये चान्ये तेऽपि खेटजाः।
परमात्मांशमधिकं येषु ते च वै खेचराभिधाः।।२९।।

केतु का मत्स्यावतार हुआ है, अन्य अवतार भी ग्रहों से ही हुए हैं। जिनमें परमात्मांश अधिक है वे खेचर यानि देव कहे जाते हैं।।२९।।

जीवांशमधिकं येषु जीवास्ते वै प्रकीर्त्तिताः।
सूर्यादिभ्यो ग्रहेभ्यश्च परमात्मांशनिःसृताः।।३०।।
रामकृष्णादयः सर्वे ह्यवतारा भवन्ति वै।
तत्रैव ते विलीयन्ते पुनः कार्यान्तरे सदा।।३१।।

जिनमें जीवांश अधिक हैं वे जीव कहे जाते हैं। सूर्य आदि ग्रहों से परमात्मांश निकल कर ही राम, कृष्ण आदि अवतार हुए हैं। वे अपने-अपने कार्यों को करके पुनः उन्हीं में लीन हो जाते हैं।।३०-३१।।

जीवांशनिः सृतास्तेषां तेभ्यो जाता नरादयः।
तेऽपि तथैव लीयन्ते तेऽव्यक्ते समयान्ति हि।।३२।।

उन्हीं (सूर्यादिग्रहों) में से जीवांश के निकलने से मनुष्य आदि जीवों की सृष्टि होती हैं वे भी इहलोक में अपने-अपने कार्यों को करके अन्त में उन्हीं में लीन हो जाते हैं। ये ग्रह भी प्रलय के समय अव्यक्त परमात्मा में लीन हो जाते हैं।।३२।।

इदं ते कथितं विप्र स यस्मिन् वै भवेदिति।
भूतान्यपि भविष्यन्ति तत्तत्सर्वज्ञतामियात्।।३३।।

हे विप्र! इस प्रकार से मैंने सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय जैसे होती है, हुई है और होगी उन सभी को तुम से कहा। इन सबको वही सर्वज्ञ (परमात्मांश पुरुष) ही जानता है।।३३।।

विना तज्ज्योतिषं नान्यो ज्ञातुं शक्नोति कर्हिचित्।
तस्मादवश्यमध्येयं ब्राह्मणैश्च विशेषतः।।३४।।

इन सभी बातों को बिना ज्योतिषशास्त्र के कोई कभी भी नहीं जान सकता है। इसलिये इस शास्त्र का अध्ययन अवश्य करना चाहिए, विशेषकर ब्राह्मण को अवश्य करना चाहिए।।३४।।

यो नरः शास्त्रमज्ञात्वा ज्यौतिषं खलु निन्दति।
रौरवं नरकं भुक्त्वा चान्धत्वं चान्यजन्मनि।।३५।।

इति बृहत्पाराशरहोरायां पूर्वखंडे सृष्ट्यादिक्रमशास्त्रावतरणं नाम प्रथमोऽध्यायः।।१।।

जो मनुष्य इस शास्त्र को न जानते हुए ज्योतिषशास्त्र की निन्दा करता है, वह रौरव नरक को भोगकर दूसरे जन्म में अन्धा होता है।।३५।।

इति पाराशरहोरायां सुबोधिन्यां प्रथमोऽध्यायः।।१।।

अथ राशिप्रभेदाध्यायः

मैत्रेय उवाच—

यदव्यक्तात्मको विष्णुः कालरूपो जनार्दनः।
तस्याङ्गानि निबोध त्वं क्रमान्मेषादि राशयः।।१।।

मैत्रेय जी बोले— जो व्यक्त (प्रकट रूप) विष्णु काल (समय) रूपी जनार्दन हैं, उनके अंगों का ज्ञान क्रम से मेषादि राशियों द्वारा बताइये।।१।।

पराशर उवाच—

अहोरात्र्याद्यन्तलोपाद्धोरेतिं प्रोच्यते बुधैः।
तस्य हि ज्ञानमात्रेण जातकर्म फलं वदेत्।।२।।

पराशर जी बोले— अहोरात्र शब्द के आदिम वर्ण 'अ' और अन्तिम वर्ण 'त्र' का लोप हो जाने से होरा शब्द होता है, जिसका ज्ञान होने से जातक के शुभ-अशुभ फल का ज्ञान होता है।।२।।

मेषो वृषश्च मिथुनः कर्कसिंहकुमारिकाः।
तुलालिधनुषो नक्रकुम्भमीनास्ततः परम्।।३।।

मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धन, मकर, कुम्भ और मीन ये बारह राशियाँ हैं।।३।।

शीर्षाननौ तथा बाहू हृत्क्रोडकटिवस्तयः।
गुह्योरुजानुयुग्मे वै युगले जङ्घके तथा।।४।।

जन्मलग्न से उक्त बारह राशियाँ क्रम से शिर, मुख, दोनों भुजायें, हृदय, पेट, कटि, बस्ति (नाभिलिंग के मध्यभाग को बस्ति कहते हैं), गुह्यस्थान (स्त्री-पुरुष के चिह्न), उरु, दोनों जानु, जंघे हैं।।४।।

चरणौ द्वौ तथा लग्नात् ज्ञेयाः शीर्षादयः क्रमात्।
चरस्थिरद्विस्वभावाः क्रूराक्रूरौ नरस्त्रियौ।।५।।

दोनों चरण कालपुरुष के अंग में हैं। मेषादि राशियों की क्रम से चर, स्थिर, द्विस्वभाव तथा क्रूर, शुभ और पुरुष स्त्री संज्ञायें हैं।।५।।

पित्तानिलस्त्रिधा त्वैक्यं श्लेष्मिकाश्च क्रियादयः।
रक्तवर्णो बृहद्गात्रश्चतुष्पाद्रात्रिविक्रमी।।६।।

पित्त, वायु, पित्त वायु कफ तीनों मिले हुए, और कफ प्रकृति है मेष राशि का लाल वर्ण, बड़ी शरीर, चार पैर, रात में बलवान् हैं।।६।।

अथ मेषराशिस्वरूपम्—

पूर्ववासी नृपज्ञातिः शैलचारी रजोगुणी।
पृष्ठोदयी पावकी च मेषराशिः कुजाधिपः।।७।।

पूर्व दिशा, क्षत्रिय वर्ण, पर्वतीय प्रदेश में घुमनेवाली, रजोगुणी, पृष्ठोदयी अग्निराशि है और इसके स्वामी मंगल हैं।।७।।

अथ वृषराशिस्वरूपम्—

श्वेतः शुक्राधिपो दीर्घः चतुष्पाच्छर्वरी बली।
याम्येट् ग्राम्यो वणिग्भूमिः स्त्री पृष्ठोदयो वृषः।।८।।

वृष राशि का श्वेत (सफेद) वर्ण, लम्बी शरीर, चार पैर, रात्रिबली, दक्षिण दिशा, ग्रामवासी, वैश्यवर्ण, भूमिप्रिय, पृष्ठोदयी है और शुक्र इसके स्वामी हैं।।८।।

अथ मिथुनराशिस्वरूपम्—

शीर्षोदयी नृमिथुनं सगदं च सवीणकम्।
प्रत्यक्स्वामी द्विपाद्रात्रिबली ग्राम्याग्रगोऽनिली।।९।।
समगात्रो हरिद्वर्णो मिथुनाख्यो बुधाधिपः।

मिथुन राशि शीर्षोदय, पुरुष-स्त्री, पुरुष गदा को लिए और स्त्री वीणा को लिए हुए, पश्चिम दिशा का स्वामी, द्विपद, रात्रिबली, ग्राम में रहनेवाला, वायु प्रकृति है।।९।।

समान (चौखूटी) शरीर, हरे रंग की है और बुध इसके स्वामी हैं।

अथ कर्कराशिस्वरूपम्—

पाटलो वनचारी च ब्राह्मणो निशि वीर्यवान्।।१०।।
बहुपटुतरः स्थौल्यतनुः सत्त्वगुणी बली।
पृष्ठोदयी कर्कराशिर्मृगाङ्कोऽधिपतिः स्मृतः।।११।।

कर्क राशि का पाटल (थोड़ा लाल और सफेद मिला हुआ) वर्ण, वनचारी, ब्राह्मण वर्ण, रात में बली है।।१०।।

अत्यन्त विद्वान्, स्थूल शरीर, जल में रहने वाली, पृष्ठोदयी राशि है और चन्द्रमा इसके स्वामी हैं।।११।।

अथ सिंहराशिस्वरूपम्—

सिंहः सूर्याधिपः सत्त्वी चतुष्पात्क्षत्रियो बली।
शीर्षोदयी बृहद्गात्रः पाण्डुः पूर्वेद्युवीर्यवान्।।१२।।

सिंह राशि सतोगुणी, चतुष्पाद, क्षत्रिय वर्ण, बलवान्, शीर्षोदयी राशि, लम्बी शरीर, पांडुवर्ण, पूर्वदिशा का स्वामी, दिन में बली है और सूर्य इसके स्वामी हैं।।१२।।

अथ कन्याराशिस्वरूपम्—

पार्वतीयाथ कन्याख्या राशिर्दिनबलान्विता।
शीर्षोदया च मध्याङ्गा द्विपाद्याम्यचरा स्मृता।।१३।।

कन्या राशि पर्वत में विशेष रुचिवाली, दिवाबली, शीर्षोदयराशि, मध्यम शरीर, द्विपद, दक्षिण दिशा में रहनेवाली, वैश्यवर्ण है।।१३।।

ससस्यदहना वैश्या चित्रवर्णा प्रभञ्जिनी।
कुमारी तमसायुक्ता बालभावा बुधाधिपः।।१४।।

धान को भूजती हुई, चित्र वर्ण (छींट) के वस्त्र को पहने हुई कन्या तमोगुण से युक्त बालभाव वाली है और बुध इसके स्वामी हैं।।१४।।

अथ तुलाराशिस्वरूपम्—

शीर्षोदयी द्युवीर्याढ्यस्तथा शूद्रो रजोगुणी।
शुक्रोऽधिपो पश्चिमेशो तुलो मध्यतनुर्द्विपात्।।१५।।

तुलाराशि शीर्षोदयी, दिवाबली, शूद्रवर्ण, रजोगुणी, पश्चिम दिशा की स्वामी, मध्यम शरीरवाली है और शुक्र स्वामी हैं।।१५।।

अथ वृश्चिकराशिस्वरूपम्—

शीर्षोदयोऽथ स्वल्पाङ्गो बहुपाद्ब्राह्मणो बली।
सौम्यस्थो दिनवीर्याढ्यः पिशङ्गो जलभूचरः।
रोमस्वाढ्योऽतितीक्ष्णाङ्गो वृश्चिकश्च कुजाधिपः।।१६।।

वृश्चिक राशि— शीर्षोदय राशि, छोटा शरीर, अनेक चरण, ब्राह्मण वर्ण, उत्तर दिशा में बली, दिवाबली, धुम्रवर्ण जलीय भूमि पर चलने वाली है।।१६।।

रोम से युक्त शरीर, अत्यन्त तीखे अंगोवाली है और भौम स्वामी हैं।

अथ धनुराशिस्वरूपम्—

अश्वजङ्घो त्वथ धनुर्गुरू स्वामी च सात्त्विकः।।१७।।
पिङ्गलो निशि वीर्याढ्यः पावकः क्षत्रियो द्विपाद्।
आदावन्ते चतुष्पाद् समगात्रो धनुर्धरः।।१८।।

धन राशि को घोड़े का जंघा है, सात्त्विक राशि है।।१७।।

पिंगल वर्ण, रात्रिबली, अग्निराशि, क्षत्रिय वर्ण, पूर्वार्ध द्विपद और उत्तरार्ध चतुष्पद, समान शरीर, धनुष को लिये हुए है।।१८।।

पूर्वस्थो वसुधाचारी तेजवान्पृष्ठतोद्गमी।

पूर्वदिशा का स्वामी, भूमि पर रहने वाली, तेजस्वी, पृष्ठोदयी है और गुरु इसके स्वामी हैं।

अथ मकरराशिस्वरूपम्—

मन्दाधिपस्तमी भौमी याम्येट् च निशि वीर्यवान्।।१९।।
पृष्ठोदयी बृहद्गात्रः मकरो जलभूचरः।

आदौ चतुष्पादन्ते च द्विपदो जलगो मतः।।२०।।

मकर राशि तमोगुणी, भूतत्व, दक्षिण दिशा का स्वामी, रात्रिबली है।।१९।।

पृष्ठोदयी, बड़ा शरीर, जलीय भूमि में चलनेवाली, पूर्वार्ध चतुष्पद और उत्तरार्ध द्विपद, जल में रहने वाली है और शनि स्वामी हैं।।२०।।

अथ कुम्भराशिस्वरूपम्–

कुम्भः कुम्भी नरो बभ्रुः वर्णमध्यतनुर्द्विपात्।
द्युवीर्यो जलमध्यस्थो वातशीर्षोदयी तमः।।२१।।
शूद्रः पश्चिमदेशस्य स्वामी दैवाकरिः स्मृतः।

कुम्भ राशि– घड़ा लिये हुए, पुरुष नेवले के रंग के जैसा (भूरा) वर्ण, मध्यम शरीर, द्विपद, दिवाबली, जल में रहने वाली (जलचर), वायु प्रकृति, शीर्षोदयी तम प्रकृति है।।२१।।

शूद्रवर्ण, पश्चिम देश वा दिशा का स्वामी है और शनि स्वामी हैं।

अथ मीनराशिस्वरूपम्–

मीनौ पुच्छास्य संलग्नौ मीनराशिर्दिवाबली।।२२।।
जली सत्त्वगुणाढ्यश्च स्वस्थो जलचरो द्विजः।
अपदो मध्यदेही च सौम्यस्थो ह्युभयोदयी।।२३।।

मीनराशि– दो मछलियों में एक का मुख दूसरे की पूँछ में लगा हुआ स्वरूप, दिन में बली हैं।।२२।।

जलचर, सतोगुणी, ब्राह्मण वर्ण, चरण हीन, मध्यम शरीर, उत्तर दिशा का स्वामी, उभयोदयी है।।२३।।

सुराचार्याधिपश्चास्य राशीनां गदितं मया।
त्रिंशद्भागात्मकः स्थूलसूक्ष्माकरफलाय च।।२४।।

गुरु स्वामी हैं। इस प्रकार मैंने ३० अंश के राशियों का स्वरूप कहा, इनके स्थूल और सूक्ष्म फल ग्रन्थों में कहे हुए हैं।।२४।।

इति पाराशरहोरायां पूर्वखण्डे सुबोधिन्यां राशिस्वरूपाध्यायः द्वितीयः।।२।।

अथ ग्रहस्वरूपाध्यायः।।३।।

पराशर उवाच–

कालात्मा च दिवानाथो मनः कुमुदबान्धवः।
सत्त्वं कुजो विजानीयाद्बुधो वाणीप्रदायकः।।१।।

पराशरजी बोले— हे विप्र! सूर्य कालपुरुष (उत्पन्न पुरुष) की आत्मा, चन्द्रमा मन, मंगल सत्त्व, बुध वाणी है।।१।।

देवेज्यो ज्ञानसुखदो भृगुवीर्यप्रदायकः।
विचार्यतामिदं सर्वं छायासूनुश्च दुःखदः।।२।।

गुरु ज्ञान और सुख और शुक्र बल के तथा शनि दुःख के स्वामी हैं।।२।।

राजानौ भानुहिमगू नेता ज्ञेयो धरात्मजः।
बुधो राजकुमारश्च सचिवौ गुरुभार्गवौ।।३।।

ग्रहों में सूर्य और चन्द्रमा राजा, मंगल नेता, बुध राजकुमार, गुरु और शुक्र मन्त्री हैं।।३।।

प्रेष्यको रविपुत्रश्च सेना स्वर्भानुपुच्छकौ।
एवं क्रमेण वै विप्र! सूर्यादीनां विचिन्तयेत्।।४।।

शनि दास और सेना राहु तथा केतु हैं। इस प्रकार सूर्यादि ग्रहों से विचार करना चाहिए।।४।।

रक्तश्यामो दिवाधीशो गौरगात्रो निशाकरः।
अत्युच्चाङ्गो रक्तभौमो दुर्वाश्यामो बुधस्तथा।।५।।

हे द्विजश्रेष्ठ! सूर्य का श्यामता लिये हुए रक्तवर्ण, चन्द्रमा का गौरवर्ण, मंगल का ऊँचा शरीर रक्तवर्ण, बुध का दूर्वा के समान श्यामवर्ण है।।५।।

गौरगात्रो गुरुर्ज्ञेयः शुक्रः श्यामस्तथैव च।
कृष्णदेहो रवेः पुत्रो ज्ञायते द्विजसत्तम।।६।।

गुरु का गौरवर्ण, शुक्र का श्याम वर्ण और शनि का काला वर्ण है।।६।।

वह्न्यम्बुशिखिजा विष्णुविडौजशचिका द्विज।
सूर्यादीनां खगानाञ्च नाथाः ज्ञेया क्रमेण च ।।७।।

सूर्य के अग्नि, चन्द्रमा के जल, भौम के स्वामि कार्त्तिक, बुध के विष्णु, गुरु के इन्द्र, शुक्र के इन्द्राणी और शनि के ब्रह्मा स्वामी हैं।।७।।

क्लीवौ द्वौ सौम्यसौरी च युवतीन्दुभृगुर्द्विज।
नरा शेषाश्च विज्ञेया भानुभौमौ गुरुस्तथा।।८।।

बुध और शनि ये नपुंसक, चन्द्रमा और शुक्र स्त्रीग्रह और शेष सूर्य, भौम और गुरु ये पुरुषग्रह हैं।।८।।

अग्निभूमिनभस्तोयवायवः क्रमतो द्विज।
भौमादीनां ग्रहाणां च तत्त्वाश्चामी प्रकीर्त्तिताः।।९।।

भौमादि ग्रहों में क्रम से अग्नि, भूमि, आकाश, जल, वायु ये तत्त्व हैं।।९।।

गुरुशुक्रौ विप्रवर्णौ कुजार्कौ क्षत्रियौ द्विज।
शशिसौम्यौ वैश्यवर्णौ शनिः शूद्रो द्विजोत्तम।।१०।।

गुरु-शुक्र का ब्राह्मण वर्ण, भौम-सूर्य का क्षत्रिय वर्ण, चन्द्रमा-बुध का वैश्य वर्ण और शनि का शूद्र वर्ण है।।१०।।

चन्द्रसूर्यगुरुसौम्या भृग्वारशनयो द्विज।।
सत्त्वं रजस्तम इति स्वभावो ज्ञायते क्रमात्।।११।।

चन्द्र, सूर्य, गुरु इनका सतोगुणी स्वभाव, बुध-शुक्र का रजोगुणी स्वभाव और भौम-शनि का तमोगुणी स्वभाव है।।११।।

मधुपिङ्गलदृक्सूर्यश्चतुरस्रः शुचिर्द्विज।
पित्तप्रकृतिको श्रीमान्पुमानल्पकचो द्विज।।१२।।

सूर्य– मधु के सदृश पीले नेत्रोंवाला, चौखूटी शरीर, स्वच्छ कान्ति वाला, पित्त प्रकृति, दर्शनीय, पुरुषग्रह, थोड़े बालों से युक्त स्वरूपवाला है।।१२।।

बहु वातकफः प्राज्ञश्चन्द्रो वृत्ततनुर्द्विज।।
शुभदृक् मधुवाक्यश्च चञ्चलो मदनातुरः।।१३।।

चन्द्रमा– वायु और कफ से युक्त प्रकृति, बुद्धिमान्, गोल शरीर, सुन्दर नेत्र, मीठे वचन बोलनेवाला, चंचल और कामी है।।१३।।

क्रूररक्तेक्षणो भौमश्चपलोदारमूर्त्तिकः।
पित्तप्रकृतिकः क्रोधी कृशमध्यतनुर्द्विज।।१४।।

भौम– क्रूर स्वभाव, रक्तवर्ण की दृष्टि, चपल, उदार स्वभाव, पित्त प्रकृति, क्रोधी, पतली मध्यम कद की शरीरवाला है।।१४।।

वपुः श्रेष्ठो श्लिष्टवाक्य ह्यतिहास्यरुचिर्बुधः।
पित्तवान्कफवान्विप्र मारुतप्रकृतिकस्तथा।।१५।।

बुध– अच्छी शरीर, तोतली बोली वाला, अत्यंत हँसी करनेवाला, पित्त-कफ-वायु से युक्त प्रकृतिवाला है।।१५।।

बृहद्गात्रो गुरुश्चैव पिङ्गलो मूर्धजेक्षणः।
कफप्रकृतिको धीमान् सर्वशास्त्रविशारदः।।१६।।

गुरु—लम्बी शरीर, पीले शिर के केश और दृष्टि वाला, कफ प्रकृति, बुद्धिमान्, सभी शास्त्रों का जाननेवाला है।।१६।।

सुखी कान्तवपुः श्रेष्ठ सुलोचनो भृगोः सुतः।
काव्यकर्त्ता कफाधिक्यानिलात्मा वक्रमूर्धजः।।१६।।

शुक्र—सुन्दर शरीर, सुखी, अच्छे सुन्दर नेत्रोंवाला, काव्य (कविता) करनेवाला, कफ-वायुमिश्रित प्रकृति, टेढ़े शिर के बालों वाला है।।१७।।

कृशदीर्घतनुः सौरिः पिङ्गदृष्ट्यनिलात्मकः।
स्थूलदन्तोऽलसो पङ्गु खररोमकचो द्विज!।।१८।।

शनि—दुर्बल लम्बी शरीर, पीले नेत्र, वायु प्रकृति, मोटे दाँत, आलसी, पंगु, रूखे रोम और बालों वाला है।।१८।।

धूम्राकारो नीलतनुर्वनस्थोऽपि भयङ्करः।
वातप्रकृतिको धीमान् स्वर्भानुः प्रतिमः शिखी।।१९।।

राहु—धुएँ के सदृश वर्ण, नीले रंग की शरीर, जंगल में रहनेवाला, भयंकर, वायु प्रकृति और बुद्धिमान् है। केतु का भी स्वरूप राहु के समान ही है।।१९।।

अस्थिरक्तस्तथा मज्जा त्वक्वसावीर्यस्नायवः।
तासामीशा क्रमेणोक्ता ज्ञेयाः सूर्यादयो द्विजाः।।२०।।

सूर्य आदि क्रम से अस्थि (हड्डी), रक्त, मज्जा, त्वक् (चर्म), वसा, वीर्य, स्नायु (नस) इनके स्वामी हैं।।२०।।

देवालयं जलं वह्नी क्रीडादीनां तथैव च।
कोशशय्या ह्युत्कराणामीशाः सूर्यादयः क्रमात्।।२१।।

एवं सूर्य आदि ग्रहों के क्रम से देवालय, जलाशय, अग्निस्थान, क्रीडास्थान, कोश (खजाना), शय्यास्थान, ऊसरभूमि ये स्थान हैं।।२१।।

अयनक्षणवासर्तुमासपक्षसमा द्विज!।
सूर्यादीनां क्रमाज्ज्ञेया निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।२२।।

सूर्य आदि ग्रह क्रम से अयन, क्षण (मुहूर्त), वासर (दिन), ऋतु, मास, पक्ष, वर्ष के स्वामी हैं।।२२।।

कटुलवणतिक्तमिश्रमधुरोकषायकाः ।
क्रमेण सर्वे विज्ञेया सूर्यादीनां द्विजोत्तम।।२३।।

सूर्य आदि ग्रहों के क्रम से कटु, लवण, तीता मिश्रित, मधुर, खट्टा, और कसैला ये रस हैं।।२३।।

बुधेज्यौ बलिनौ पूर्वे रविभौमौ च दक्षिणे।
वारुणे सूर्यपुत्रश्च सितचन्द्रौ तथोत्तरे।।२४।।

बुध-गुरु पूर्वदिशा (लग्न में) में, सूर्य-भौम दक्षिण दिशा (दशम) में, शनि पश्चिम (सप्तम) में, शुक्र-चन्द्रमा उत्तर (चतुर्थ) में बली होते हैं।।२४।।

निशायां बलिनश्चन्द्रकुजसौरा भवन्ति हि।
सर्वदा ज्ञो बली ज्ञेयो दिनशेषा द्विजोत्तम।।२५।।

चन्द्रमा, भौम, शनि ये रात में बली, बुध दिन-रात्रि दोनों में और शेष सूर्य, गुरु, शुक्र दिन में बली होते हैं।।२५।।

कृष्णे च बलिनः क्रूराः सौम्याः वीर्ययुताः सिते।
सौम्यायने सौम्यखेटो बली याम्यायनेऽपरः।।२६।।

कृष्णपक्ष में पापग्रह और शुक्लपक्ष में शुभग्रह बली होते हैं। उत्तरायण में शुभग्रह और दक्षिणायन में पापग्रह बली होते हैं।।२६।।

स्वदिवससमहोरामासपैः कालवीर्यकम्।
शकुवुगुशुचराद्या वृद्धितो वीर्यवन्तराः।।२७।।

जो ग्रह जिस दिन का, वर्ष का, होरा का और मास का स्वामी होता है वह अपने दिन, वर्ष, होरा, मास में बली होता है। शनि, भौम, बुध, गुरु, शुक्र, चंद्र और सूर्य यथोत्तर बली होते हैं। अर्थात् शनि से भौम, भौम से बुध, बुध से गुरु, गुरु से शुक्र, शुक्र से चन्द्रमा और चन्द्र से सूर्य बली होता है।।२७।।

स्थूलान् जनयति सूर्यो दुर्भगान् सूर्यपुत्रकः।
क्षीरोपेतांस्तथा चन्द्रः कण्टकाद्यान्धरासुतः।।२८।।

स्थूल वृक्षों का कारक सूर्य है, दुष्ट वृक्षों का कारक शनि, दूधवाले वृक्षों का चन्द्रमा, काँटेवाले वृक्षों का भौम है।।२८।।

गुरुज्ञौ सफलान्विप्र पुष्पवृक्षान्भृगोः सुतः।
नीरसान्सूर्यपुत्रश्च एवं ज्ञेया खगाः द्विज।।२९।।

फूलवाले वृक्षों का गुरु-बुध, फूल के वृक्षों का शुक्र और नीरस वृक्षों का शनि कारक है।।२९।।

राहुश्चाण्डालजातिश्च केतुर्जात्यन्तरस्तथा।
शिखिस्वर्भानुमन्दानां वल्मीकस्थानमुच्यते।।३०।।

राहु की चांडाल जाति और केतु वर्णशंकर जाति का है। केतु, राहु और शनि का वल्मीक (विमौट) स्थान है।।३०।।

चित्रकन्था फणीन्द्रस्य केतोश्छिद्रयुतो द्विज।
सीसं राहोर्नीलमणिः केतोर्ज्ञेयो द्विजोत्तम।।३१।।

अनेक रंग के कपड़ों से कथरी (गुदरी) राहु का और केतु का छेदों से युक्त वस्त्र है। राहु का शीशा और केतु का नीलमणि धातु है।।३१।।

गुरोः पीताम्बरं विप्र! भृगोः क्षौमं तथैव च।
रक्तक्षौमं भास्करस्य इन्दोः क्षौमं सितं द्विज!।।३२।।

गरु का पीताम्बर, शुक्र का रेशमी वस्त्र, सूर्य का लाल रंग का, चन्द्रमा का श्वेत रेशमी वस्त्र है।।३२।।

बुधस्य तु कृष्णक्षौमं रक्तवस्त्रं कुजस्य च।
वस्त्रं चित्रं शनेर्विप्र! पट्टवस्त्रं तथैव च।।३३।।

बुध का काले रंग का, भौम का लाल रंग का वस्त्र और शनि का चित्रवर्ण पट्टवस्त्र है।।३३।।

भृगोर्ऋतुवसन्तश्च कुजभान्वोश्च ग्रीष्मकः।
चन्द्रस्य वर्षा विज्ञेया शरच्चैव तथा विदः।।३४।।

शुक्र की वसन्तऋतु, भौम और रवि की ग्रीष्मऋतु, चन्द्रमा की वर्षाऋतु, बुध की शरद्ऋतु है।।३४।।

हेमन्तोऽपि गुरोर्ज्ञेयः शनेस्तु शिशिरो द्विज!।
अष्टौ मासाश्च स्वर्भानोः केतोर्मासत्रयं द्विज!।।३५।।

गुरु की हेमन्त ऋतु और शनि की शिशिर ऋतु है। राहु का ८ मास और केतु का ३ मास है।।३५।।

राह्वारपङ्गुचन्द्राश्च विज्ञेया धातुखेचराः।
मूलग्रहौ सूर्यशुक्रौ अपरा जीवसंज्ञकाः।।३६।।

राहु, भौम और चन्द्रमा धातु के स्वामी, सूर्य-शुक्र मूल के स्वामी और शेष बुध, गुरु, केतु जीव के स्वामी हैं।।३६।।

ग्रहेषु मन्दो वृद्धोऽस्ति आयुर्वृद्धिप्रदायकः।
नैसर्गिके बहुसमान्ददाति द्विजसत्तम।।३७।।

सभी ग्रहों में शनि वृद्ध (निर्बल) है, किन्तु निसर्ग आयु साधन करने में बहुत वर्ष को देता है।।३७।।

अथ ग्रहाणामुच्चनीचमाह—

अजो वृषो मृगः कन्या कुलीरंझषतौलिकाः।
सूर्यादीनां क्रमादेतास्तुङ्गसंज्ञाः प्रकीर्त्तिताः।।३८।।
दिग्गुणाष्टयमा भागा तिथिभूतर्क्षनखासमा।
स्वोच्चात्सप्तमभं नीचं पूर्वोक्तांशैः प्रकीर्त्तितम्।।३९।।

मेष, वृष, मकर, कन्या, कर्क, मीन, तुला राशियों में १०, ३, २८, १५, ५, २७ अंश सूर्यादि ग्रहों के उच्च होते हैं और अपनी उच्च राशि से सातवीं राशि में उतने ही अंश तक नीच होते हैं।।३८-३९।।

स्पष्टार्थ चक्र

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ग्रहाः
मे. १०	वृ. ३	म. २८	क. १५	क. ५	मी. २७	तु. २०	उच्चराशयः अंशाः
तु. १०	क. ३	क. २८	मी. १५	म. ५	क. २७	मे. २०	नीचराशयः अंशाः

अथ ग्रहाणां मूलत्रिकोणमाह—

विंशतिरंशाः सिंहे कोणमपरे स्वभवनमर्कस्य।
उच्चं भागत्रितयं वृषमिन्दोः शेषांशास्युस्त्रिकोणकाः।।४०।।

सूर्य का सिंह राशि में २० अंश तक मूलत्रिकोण है, शेष १० अंश स्वराशि है। चन्द्रमा का वृष राशि के आरम्भ से ३ अंश तक उच्च है, इसके बाद के अंश मूलत्रिकोण हैं।।४०।।

द्वादशभागा मेषे त्रिकोणमपरे स्वभं तु भौमस्य।
उच्चफलं च कन्यायां बुधस्य तिथ्यंशकैः सदा भवेत्।।४१।।

भौम का मेष राशि में १२ अंश तथा मूलत्रिकोण है, शेष अंश स्वराशि है। बुध का कन्या राशि में १५ अंश तक उच्च, इसके बाद ५ अंश तक मूलत्रिकोण और शेष अंश स्वराशि है।।४१।।

ततस्त्रिकोणजाते पंचभिरंशैः स्वराशिजं परतः।
दशभिर्भागैर्जीवस्य त्रिकोणफलं स्वयं परं चापे।।४२।।

गुरु का धन राशि में १० अंश तक मूलत्रिकोण तथा शेष अंश स्वराशि है।।४२।।

शुक्रस्य तु तिथयोऽशास्त्रिकोणभपरे तुले स्वराशिश्च।
शनेः कुम्भे नखांशास्त्रिकोणं परतस्तु स्वराशिजं ज्ञेयम्।।४३।।

तुला राशि में १५ अंश तक शुक्र का मूलत्रिकोण और शेष अंश स्वराशि है। कुम्भ राशि में २० अंश तक शनि का मूलत्रिकोण हैं तथा शेष अंश स्वराशि है।।४३।।

अथ ग्रहाणां नैसर्गिकमित्रामित्रत्वमाह—

रवेः समो ज्ञः सितसूर्यपुत्रावरी परे ये सुहृदो भवन्ति।
चन्द्रस्य नारी रविचन्द्रपुत्रौ स्मृतास्तु शेषग्रहाः समाः।।४४।।

सूर्य के बुध सम, शुक्र-शनि शत्रु और शेष चन्द्रमा, भौम, गुरु मित्र हैं। चन्द्रमा के कोई शत्रु नहीं हैं, सूर्य-बुध मित्र हैं और शेष ग्रह सम हैं।।४४।।

समौ सितार्की शशिजश्च शत्रुर्मित्राणि शेषाः पृथिवीसुतस्य।
शत्रुः शशी सूर्यसितौ च मित्रे समापरे स्युः शशिनन्दनस्य।।४५।।

भौम के शुक्र-शनि सम हैं, बुध, शुक्र और शेष ग्रह मित्र हैं। बुध के चन्द्रमा शत्रु, सूर्य-शुक्र मित्र और शेष ग्रह सम हैं।।४५।।

गुरोर्ज्ञसशुक्रौ रिपुसंज्ञकौ तु शनिः समोऽन्ये सुहृदो भवन्ति।
शुक्रस्य मित्रे बुधसूर्यपुत्रौ समौ कुजार्यावितरावरीतौ।।४६।।

गुरु के बुध-शुक्र शत्रु, शनि सम और शेष ग्रह मित्र हैं। शुक्र के बुध, शनि मित्र, भौम-गुरु सम और शेष ग्रह शत्रु हैं।।४६।।

शनेः समो वाक्पतिरिन्दुसूनु शुक्रौ च मित्रे रिपवः परेऽपि।
ध्रुवं ग्रहाणां चतुराननेन शत्रुत्वमित्रत्वसमत्वमुक्तम्।।४७।।

शनि के गुरु सम, बुध-शुक्र मित्र और शेष ग्रह शत्रु हैं। इस प्रकार से ब्रह्माजी ने ग्रहों के मित्र, सम, शत्रु को कहा है।।४७।।

अथ तात्कालिकमित्रशत्रुत्वमाह—

दशायबन्धुसहजस्वान्त्यस्थास्ते परस्परम्।
तत्काले सुहृदो ज्ञेयः शेषस्थाने त्वमित्रकम्।।४८।।

जो ग्रह जिस ग्रह से १०।११।४।३।२।१२ वें स्थान में होता है वह ग्रह उस ग्रह का तात्कालिक मित्र होता है, शेष स्थानों में शत्रु होता है।।४८।।

अथ पञ्चधा मैत्रीमाह—

तात्कालिके निसर्गे च मित्रत्वे त्वधिमित्रकम्।
द्वयोर्मित्रसमत्वे च मित्रं शत्रुः शत्रुसमत्वके।।४९।।

जो ग्रह जिस ग्रह का तात्कालिक और निसर्ग में मित्र होता है वह उस ग्रह का अधिमित्र होता है। तत्काल में मित्र और निसर्ग में सम हो तो वह मित्र होता है। तात्कालिक शत्रु और नैसर्गिक सम हो तो शत्रु होता है।।४९।।

समौ तु शत्रुमित्रत्वे शत्रुशत्रौ त्वधिशत्रुकम्।
एवं पञ्चप्रकाराः स्युः ग्रहाणां मित्रता बुधैः।।५०।।

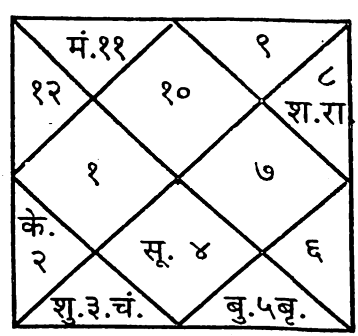
नैसर्गिक मित्र और तात्कालिक शत्रु या नैसर्गिक शत्रु और तात्कालिक मित्र हो तो सम होता है। तात्कालिक शत्रु और नैसर्गिक सम हो तो शत्रु होता है और तात्कालिक शत्रु और नैसर्गिक शत्रु हो तो अधिशत्रु होता है। इस प्रकार ग्रहों की पाँच प्रकार की मैंत्री होती है।।५०।।

उदाहरण

नैसर्गिकमैत्रीचक्रम्

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ग्रहाः
चं. मं. बृ.	सू. बु.	सू. चं. बृ.	सू. शु.	सू. चं. मं.	बु. श.	बु. शु.	मित्राणि
बु.	मं. बृ. शु. श.	शु. श.	चं. बृ. श.	श.	मं. बृ.	बृ.	समाः
शु. श.		बु.	चं.	बु. शु.	सू. चं.	सू. चं. मं.	शत्रवः

जन्माङ्गम्



अथ तात्कालिकमैत्रीचक्रम्

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ग्रहाः
चं. बु. बृ. शु.	सू. बु. बृ. शु.	श.	सू. चं. बृ, शु. श.	सू. चं. बु. शु. श.	सू. चं. बु. बृ.	मं. बु. बृ.	मित्राणि
मं. श.	मं, श.	सू. चं. बु. बृ. शु.	मं.	मं.	मं. श.	सू. चं. शु.	शत्रवः

अथ पञ्चधा मैत्रीचक्रम्

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ग्रहाः
चं. बृ.	सू. बु.		सू. शु.	सू. चं.	बु.	बु.	अधिमित्राणि
बु.	बृ. शु.		चं. बृ. श.	श.	मं. बृ.	बृ.	मित्राणि
मं. गु.		सू. चं. बृ. श.	मं.	मं. बु. शु.	सू. चं. श.	मं. शु.	समाः
	मं.	शु.					शत्रवः
श.	श.	बु.				सू. चं.	अधिशत्रवः

अथ ग्रहाणामुच्चादिबलमाह—

स्वोच्चे शुभं बलं पूर्णं त्रिकोणे पादवर्जितम्।
स्वर्क्षे दलं मित्रगेहे पादमात्रं प्रकीर्त्तितम्।।५१।।

यदि ग्रह अपनी उच्च राशि में हो तो सम्पूर्ण शुभ बल, अपने मूलत्रिकोण राशि में हो तो ३ चरण, अपनी राशि में हो तो आधा बल, मित्र की राशि में हो तो १ चरण है।।५१।।

पादार्धं समभे प्रोक्तं व्यर्थं नीचास्तशत्रुभे।
तद्वद्दुष्टबलं ब्रूयाद् व्यत्ययेन विचक्षणः।।५२।।

सम की राशि में हों तो आधा बल प्राप्त करता है। नीच अस्त और शत्रु की राशि में हो तो शून्य बल पाता है। इसके विपरीत शेष अशुभ बल पाता है।।५२।।

अथ बलचक्रम्

उच्च	मूलत्रिकोण	स्वर्क्ष	मित्र क्षेत्र	सम	नीच अस्त	शत्रु
१	०	०	०	७	०	०
०	४५	३०	१५	३०	०	०

अथ धूमाद्यप्रकाशग्रहानयनमाह—

सदा चतुर्भैः विश्वांशैः नखलिप्ताधिको रविः।
धूमो नाम महादोषः सर्वकर्मविनाशकः।।५३।।

सूर्य में ४ राशि १३ अंश २० कला जोड़ देने से धूम नाम का महादोष होता है, जो कि सभी कार्यों का विनाशक होता है।।५३।।

धूमो मण्डलतः शुद्धो व्यतीपातोऽत्र दोषदः।
सषड्भेऽत्र व्यतीपाते परिवेषस्तु दोषदः।।५४।।

धूम को १२ राशि में घटा देने से शेष व्यतीपात नाम का दोष होता है। व्यतीपात में ६ राशि जोड़ देने से परिवेष नाम का दोष होता है।।५४।।

परिवेषश्युतश्चक्रादिन्द्रचापस्तु दोषदः।
त्र्यंशोनात्यष्ट्यंशा युतश्चापः केतुग्रहो भवेत्।।५५।।

परिवेष को १२ राशि में घटाने से इन्द्रचाप नामक दोष होता है। १७ अंश में अंश का तृतीयांश १० कला घटाने से शेष १६°।४०′ इन्द्रचाप में जोड़ने से केतु नाम का दोष होता है।।५५।।

एकराशियुते केतौ सूर्यः स्यात्पूर्ववत्समः।
अप्रकाशग्रहाश्चैते दोषाः पापग्रहाः स्मृताः।।५६।।

केतु में १ राशि जोड़ देने से पूर्वोक्त सूर्य के तुल्य हो जाता है। यही अप्रकाशग्रह हैं, जो कि दोषरूप पापग्रह हैं।।५६।।

उदाहरण-स्पष्ट सूर्य ३।१०।२६।२९ इसमें ४ राशि १३ अंश २० कला जोड़ने से ८।१।४६।२० धूम ग्रह हुआ। इसको १२ राशि में घटाने से ३।२८।१३।४० यह व्यतीपात ग्रह हुआ। इसमें ६ राशि जोड़ने से ९।२८।१३।४० यह परिवेष ग्रह हुआ। इसे १२ राशि में घटाने से २।१।४६।२० यह इन्द्रचाप हुआ। इसमें १६ अंश ४० कला जोड़ने से २।१८।२६।२० यह केतु ग्रह हुआ। इसमें १ राशि जोड़ने से पूर्वोक्त सूर्य के तुल्य ३।१८।२६।२० हुआ।

अथाऽप्रकाशग्रहाणां फलमाह—

भान्विन्दुलग्नगेष्वेषु वंशायुर्ज्ञाननाशनम्।
एषां बह्स्वर्कदोषाणां स्थितिः पद्मासनोदिताः।।५७।।

पूर्वोक्त धूम आदि अप्रकाश ग्रह यदि सूर्य-चन्द्र लग्न से युक्त हों तो क्रम से वंश, आयु और ज्ञान का नाश करते हैं। इस प्रकार दोषकारक अप्रकाश ग्रहों की स्थिति ब्रह्मा ने कही है।।५७।।

इति पाराशरहोरायां पूर्वखण्डे सुबोधिन्यां ग्रहस्वरूपाध्यायस्तृतीयः।।३।।

अथ लग्नाध्यायः।।४।।

तत्रादौ गुलिकादिकालज्ञानमाह—

रविवारादिशन्यन्तं गुलिकादि निरूप्यते।
दिवसानष्टधा कृत्वा वारेशाद्गणयेत्क्रमात्।।१।।

रवि से शनि पर्यन्त वारों में गुलिक आदि का निरूपण कर रहे हैं। (जिस दिन इनका विचार करना हो उस दिन के) दिनमान में आठ का भाग देने से जो लब्ध हो उतना ही एक खंड का मान होता है; वारेश से (जिस दिन विचार कर रहे हों उस वार से खंडों के अनुसार अपने इष्टकाल तक) गिनने से।।१।।

अष्टमांशो निरीशः स्याच्छन्यंशो गुरिकः स्मृतः।
रात्रिरप्यष्टधा भक्त्वा वारेशात्पञ्चमादितः।।२।।

आठवें भाग का स्वामी कोई नहीं होता और शनि का खंड गुलिक होता है। इसी प्रकार रात्रिमान का भी (यदि रात्रि का जन्म हो तो) आठ भाग करके वारेश से पाँचवें वार से गिनने से।।२।।

गणयेदष्टमो खण्डो निष्पत्तिः परिकीर्त्तितः।
शन्यंशो गुलिकः प्रोक्तो गुर्वंशो यमघण्टकः।।३।।

शनि का अंश (खंड) गुलिक होता है और आठवें खंड का कोई स्वामी नहीं होता है। शनि का अंश गुलिक, गुरु का अंश यमघंट होता है।।३।।

भौमांशो मृत्युरादिष्टो रव्यंशो कालसंज्ञकः।
सौम्यांशोऽर्धप्रहरकः स्पष्टकर्मप्रदेशकः।।४।।

भौम का मृत्यु, रवि का काल और बुध का अर्धप्रहर होता है।।४।।

उदाहरण—जैसे संवत् २०३१ श्रावण कृष्ण १३ शनिवार को दिनमान ३२/५० है और इसी के बराबर इष्टकाल भी है। इसमें आठ का

भाग देने से ४।६।१५ यह लब्धि हुई। यहाँ वारेश शनि से गणना करने से प्रथम खंड ही गुलिक हुआ। इसी को इष्टकाल मानकर सूर्य को स्पष्ट कर लग्न लाने से गुलिक लग्न ४।९।२६।२५ हुआ।

अथ गुलिकध्रुवाङ्कचक्रम्

रवि	चन्द्र	भौम	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	वाराः
७	६	५	४	३	२	१	दिवा
३	२	१	७	६	५	४	रात्री

अथ प्राणपदसाधनम्—

घटी चतुर्गुणा कार्या तिथ्याप्तैश्च पलैर्युताः।
दिनकरेणापहृतं शेषं प्राणपदं स्मृतम्।।५।।

यहाँ प्राणपद साधन के दो प्रकार दिये हैं—

(१) इष्टकाल के घटी को ४ से गुणा कर एक जगह रख देवें। पलों में १५ का भाग देकर लब्धि को चतुर्गुणित इष्ट घटी में जोडकर योगफल में १२ का भाग देने से जो शेष बचे, वह प्राणपद की राशि होती है।।५।।

शेषात्पलान्ताद्द्विगुणी विधाय राश्यंशसूर्यर्क्षनियोजिताच्च।
तत्रापि तद्राशिचरान् क्रमेण लग्नांशप्राणांशपदैक्यता स्यात्।।६।।

शेष बचे हुए पलों को दूना करने से अंश होता है। इस प्रकार से राशि और अंश मध्यम प्राणपद के होते हैं।।६।।

अथच—स्वेष्टकालं पलीकृत्य तिथ्याप्तं भादिकं च यत्।।७।।
चरागद्विभके भानौ योज्यं स्वे नवमे सुते।।७।।
स्फुटं प्राणपदं तस्मात् पूर्ववच्छोधयेत्तनुम्।।७।।

इसमें सूर्य की राशि चर-स्थिर-द्विस्वभाव के अनुसार सूर्य की राशि अंश, सूर्य की राशि से नवीं राशि और अंश तथा सूर्य की राशि से पाँचवीं राशि और अंश को जोड़ देने से राश्यादि स्पष्ट प्राणपद होता है। ऐसा करने से यदि जन्मलग्न का अंश और प्राणपद का अंश बराबर हो तो इष्टकाल शुद्ध होता है।

(२) इष्टकाल को पलात्मक बनाकर उसमें १५ का भाग देकर लब्धि राशि और अंश लाकर उसमें ऊपर कहे हुए अनुसार सूर्य की राशि के अनुसार राशि-अंश जोड़ने से स्पष्ट राश्यादि प्राणपद होता है। इससे जन्म-

लग्न को शुद्ध करना चाहिए। अर्थात् लग्न का अंश और प्राणपद का अंश समान होना चाहिए।।७।।

विना प्राणपदाच्छुद्धो गुलिकाद्वा निशाकराद्।
तदशुद्धं विजानीयात्स्थावराणां तदेव हि।।८।।

जो जन्मलग्न प्राणपद या गुलिक या चन्द्रमा से शुद्ध न की गई हो वह अशुद्ध होती है और वह स्थावर की जन्मलग्न होती है।।८।।

द्वयोर्हीनबलेऽप्येवं गुलिकात्परिचिन्तयेत्।
तस्मात्तत्सप्तमस्थात्तदंशाच्च कलत्रतः।।९।।

इसलिए उससे सप्तम से या उसके अंश से लग्न का संशोधन करना चाहिए। दोनों निर्बल हों तो गुलिक (माँदी) विचार करे।।९।।

तथैव तत्त्रिकोणे वा जन्मलग्नं विनिर्दिशेत्।
मनुष्याणां पशूनां य द्वितीये दशमे रिपौ।।१०।।

प्राणपद की राशि से त्रिकोण (५।९।१) राशि में मनुष्यों के जन्मलग्न की राशि होती है। २, ६, १०वीं राशि पशुओं की है।।१०।।

तृतीये मदने लाभे विहङ्गानां विनिर्दिशेत्।
कीटसर्पजलस्थानां शेषस्थानेषु संस्थितः।।११।।

३।७ वीं राशि में चिडियों का और शेष राशियों में कीट, सर्प, जल में रहनेवाले जीवों का जन्म होता है।।११।।

उदाहरण—जैसे संवत् २०१३ श्रावण कृष्ण १३ शनिवार को इष्ट-३२।५० पर लग्न ९।१७ में जन्म हुआ। इष्टकालिक सूर्य ३।१८ है।

श्लोक ६१-६२ के अनुसार प्रथम प्रकार से प्राणपद का साधन—

इष्टघटी X ४= ३२ X ४ = १२८

इष्टपल ÷ १५ = ५० ÷ १५ = ३ शेष ५

१२८ + ३ = १३१

१३१÷१२=१० लब्धि का त्याग कर देने से शेष ११ प्राणपद की राशि और पल शेष को दूना करने से १० अंश यह मध्यम प्राणपद हुआ। सूर्य चर राशि में है अतः सूर्य के राशि-अंश में जोड़ने से ११।१०°+३।१८।२२।२८ यह स्पष्ट प्राणपद हुआ।

श्लोक ६३ के अनुसार—

इष्टकाल ३२।२८।३०

इसका पल=१९४९।३० इसमें १५ का भाग देने से १२९ लब्धि-राशि हुई और शेष १३/३० को दूना करने से २७ अंश हुआ। सूर्य को चर राशि में होने से सूर्य में जोड देने से १२९।२७

३।१८

१३३।१५

१।१५° यह स्पष्ट प्राणपद हुआ, जिससे 'प्राणत्रिकोणे प्रवदन्ति लग्नम्' और 'लग्नांशप्राणांशपदैक्यता स्यात्' यह सिद्ध होता है।

प्राणपद की राशि मिथुन से जन्मलग्न की राशि तक गिनने से जन्मलग्न की राशि आठवीं आती है। अतः इष्टशोधन करना आवश्यक है, जिससे दोनों का परस्पर त्रिकोणत्व हो जाय। इसलिए इष्टकाल में १५ पल कम करने से ३२।३५ इष्टमान कर उपर्युक्त विधि से प्राणपद बनाने से १।२८ आया। यहाँ राशि तो ठीक आई, यानि वृषराशि, जिससे जन्मलग्न ९वीं राशि है किन्तु लग्नांश और प्राणांश एक नहीं हुए। अतः ६ पल और ३० विपल और घटा देने से शुद्ध इष्टकाल ३२।२८।३० हुआ। इस पर से प्राणपद बनाने से १/१५ आया, जो कि उक्त वाक्य के अनुसार शुद्ध है।

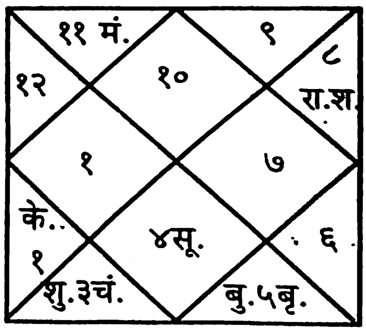
विशेष—वस्तुतः प्राणपद शब्द का अर्थ है—प्राण देनेवाला पद (स्थान) या अंश। यह सूर्योदय से १५ पल में एक राशि का होता है। अतः ३ दंड में १२ राशि की पूर्त्ति हो जाती है और १ पल में २ अंश प्राणपद का होता है। इस नियम को ध्यान में रखकर इष्ट शुद्ध कर लेना चाहिए। उपर्युक्त शुद्ध किये हुए इष्टकाल द्वारा जन्माङ्ग का स्वरूप निम्नलिखित होगा।

संवत् २०१३ शके १८७८ श्रावणकृष्ण १३ शनिवासरे पुनर्वसुभे प्रथम-चरणे इष्टम् ३२।२८।३० भयातम् १०।३२ भभोगः ५५।३३ लग्नम् ९।१५।२२।३७ शुभम्।

स्पष्टग्रहाः

सू.	चं.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.	रा.
३	२	१०	४	४	२	७	७
१८	२२	२२	५	१२	५	१	१३
२६	३०	३२	२२	५०	३	४८	२७
३४	४७	८	५९	५४	५	५२	२६

जन्माङ्गम्



अथ निषेकलग्नानयनमाह—

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि शृणुष्व मुनिपुङ्गव।
जन्मलग्नं च संशोध्य निषेकं परिशोधयेत्।।१२।।

हे मुनिश्रेष्ठ मैत्रेय! अब मैं जन्मलग्न की शुद्धि के अनंतर निषेक (गर्भाधान) लग्न की शुद्धि को कहता हूँ, इसे धारण करो।।१२।।

तदहं सम्प्रवक्ष्यामि मैत्रेय त्वं विचारय।
जन्मलग्नात् परिज्ञानं निषेकं सर्वजन्तुषु।।१३।।

सभी जन्मलग्न के ज्ञान से सभी जन्तुओं के गर्भाधान लग्न का ज्ञान हो जाता है।।१३।।

यस्मिन् भावे स्थितो कोणस्तस्य मान्देर्यदन्तरम्।
लग्नभाग्यन्तरं योज्यं यच्च राश्यादि जायते।।१४।।

जिस भाव में शनि हो उस भाव और मान्दि (गुलिक) लग्न का अन्तर कर उसमें लग्न और भाग्य भाव के अन्तर को जोड़ देने से जो राश्यादि होती है।।१४।।

मासादिस्तन्मितं ज्ञेयं जन्मतः प्राक् निषेकजम्।
यदादृश्यदलेऽङ्गेशस्तदेन्दोर्भुक्तभागयुक्।।१५।।

जन्म से पूर्व के (निषेक काल के) मासादि का ज्ञान होता है। यदि लग्नेश अदृश्य चक्रार्ध (लग्न से सप्तम के बीच) में हो तो पूर्वोक्त मासादि में चन्द्रमा के भुक्त अंशादि को जोड़ने से मासादि होता है।।१५।।

तत्काले साधयेल्लग्नं शोधयेत्पूर्ववत्तनुम्।
तस्माल्लग्नात्फलं वाच्यं गर्भस्थस्य विशेषतः।।१६।।

इसे जानकर तात्कालिक लग्न को बनावे, वही गर्भाधान की लग्न होती है। उस लग्न से गर्भस्थ प्राणी के शुभ-अशुभ फल कहते हैं।।१६।।

शुभाशुभं वदेत् पित्रोर्जीवतं मरणं तथा।
एवं निषेकलग्नेन सम्यक् ज्ञेयं स्वकल्पनात्।।१७।।

माता-पिता के जीवन-मरण के शुभ-अशुभ फलों का विचार अपनी कल्पनावश करे।।१७।।

उदाहरण– जैसे पूर्वोक्त जन्माङ्ग में शनि कर्मभाव की सन्धि में है, अतः सन्धि ७।११।५८।३३ और गुलिक लग्न ४।९।२६।३५ का अन्तर ३।२।३१।५८ हुआ। इसमें लग्न ९।१५।३१।५ और भाग्य भाव ५।२४।४१।२५ का अन्तर ४।२०।५१।२६ जोड़ देने से ७।२३।२३।२४ अर्थात् जन्म से पूर्व ७ माह २३ दिन २३ घटी २४ पल पूर्व गर्भाधान हुआ था।

अथ भावलग्नानयनमाह–

सूर्योदयात्समारभ्य घटीपञ्च प्रमाणतः।
जन्मेष्टकालपर्यन्तं गणनीयं प्रयत्नतः।।१८।।

सूर्योदय से पाँच घटी के बराबर एक लग्न बीतती है। इसे भावलग्न

या घटीलग्न कहते हैं।।१८।।

ओजलग्ने यदा जन्म सूर्यराश्यनुसारतः।
समलग्ने जन्मलग्नात्यत्संख्या प्राप्यते द्विज।
भावलग्नं विजानीयात् होरालग्नं तदुच्यते।।१९।।

इसलिए इष्ट घटी पर्यन्त जितनी लग्न बीती हो उसमें यदि जन्मलग्न विषम राशि में हो तो सूर्य राशि से और यदि समराशि में हो तो जन्मलग्न से उक्त संख्या गिनने से जो लग्न हो वही भावलग्न होती है।।१९।।

उदाहरण—इष्ट घटी ३२।२८।३० सूर्य ३।१८।२६ हैं। इष्ट घटी में ५ से भाग देने से ६।२९।४२ लब्धि हुई। इसे सूर्य में जोडने से १०।२८।८ यह भावलग्न हुई।

विशेष—इष्टकाल और लग्न की प्रवृत्ति सूर्योदय से होने के कारण सूर्य में ही जोड़ना चाहिए। यह युक्तिसंगत मालूम होता है।

अथ होरालग्नानयनमाह—

सार्धद्विघटिका विप्र कालादिति विलग्नभात्।
प्रयान्ति लग्नं तन्नाम होरालग्नं द्विजोत्तम।।२०।।

जन्मलग्न से ढ़ाई घटी के तुल्य एक लग्न होती है, जिसे होरालग्न कहते हैं।।२०।।

यज्जन्म विषमर्क्षेषु सूर्यादि गणयेत्क्रमात्।
समलग्ने यदा जन्म गणयेज्जन्मभाद्द्विज।।२१।।

अतः इसके अनुसार इष्ट घटी पर्यन्त गिनने से जो संख्या हो उसमें यदि जन्म विषम लग्न में हो तो सूर्य की राशि से अन्यथा जन्मलग्न से गणना करने से जो राशि हो वही होरालग्न होती है।।२१।।

उदाहरण—इष्ट घटी ३२।२८।३० है, इसमें ढाई $\frac{5}{2}$ का भाग देने से लब्धि राश्यादि ०।२९।४२ हुई। इसमें सूर्य की राश्यादि जोड़ने से ४।१८।१८ यह राश्यादि होरालग्न हुआ।

घटीलग्नानयनमाह—

घटीलग्नं प्रवक्ष्यामि शृणु त्वं द्विजसत्तम।
सूर्योदयात्समारभ्य जन्मकालावधि क्रमात्।।२२।।

हे द्विजश्रेष्ठ! मैं घटीलग्न को कह रहा हूँ, उसे सुनो। सूर्योदय से आरम्भ कर जन्म समय पर्यन्त क्रम से।।२२।।

एकैकं घटिकामानाल्लग्नं राश्यादिकं च यत्।
तदेव घटिकालग्नं कथितं ऋषिभिः पुरा।।२३।।

एक-एक घटी के तुल्य एक राशि के हिसाब से जो राशि हो वही घटीलग्न होती है, ऐसा पूर्वाचार्यों ने कहा है।।२३।।

राशीन् तत्र घटीतुल्या द्विभागाः पलसम्मिताः।
योज्यं सदा स्पष्टभानौ घटीलग्नं स्फुटं भवेत्।।२४।।
क्रमाल्लग्नादि भावाश्च संलिखेत् द्विजसत्तम।
सूर्यादि यत्र ऋक्षे च जन्मवत्संलिखेद्द्विज।।२५।।

इसमें इष्ट-घटी के तुल्य राशि होती है और एक पल में दो अंश होते हैं। इसके अनुसार जो राशि और अंश हो उसमें सदा सूर्य के राशि-अंश को जोड़ देने से स्पष्ट घटी-लग्न होती है। इसे लग्न मानकर द्वादशभाव चक्र लिखकर जन्मकालिक सूर्य आदि ग्रह जिन-जिन राशियों में हों, उन्हें उन्हीं-उन्हीं राशियों में देवें।।२४-२५।।

उदाहरण—इष्टकाल ३२।२८।३० हैं और सूर्य ३।१८।२६ है, उक्त प्रकार से ३२ राशि १४ अंश हुआ। इसमें सूर्य के राश्यादि को जोड़ने से ० राशि २ अंश यह घटीलग्न हुई।

अथ वर्णदलग्नानयनमाह—

जन्महोराख्यलग्नर्क्षसंख्या ग्राह्या पृथक् पृथक्।
ओजे लग्ने त्वेकयुग्मे चक्रशुद्धैकसंयुता।।२६।।

जन्मलग्न की राशि और होरालग्न की राशि संख्या विषम हों तो अथवा दोंनो सम हों तो, दोनों का योग करने से यदि विषम राशि हो तो वही वर्णद राशि होती है। दोनों में एक विषम और दूसरी सम हो तो सम को १२ राशि में घटाकर शेष को पहले में घटाने से शेष वर्णद राशि होती है।।२६।।

युग्मौजसाम्ये संयोज्य वियोज्यान्योनमन्यथा।
मेषादितः क्रमादोजे मीनादेरुत्क्रमात्समे।।२७।।

विषम राशि में मेषादि क्रम से और सम राशि में मीनादि से उत्क्रम गणना से है।।२७।।

एवं यल्लग्नमायाति वर्णदं तत् प्रकीर्त्तितम्।
एवं द्वादशभावानां वर्णदं लग्नमानयेत्।।२८।।

जो लग्न हो वही वर्णद लग्न होती है। इस प्रकार सभी भावों की वर्णद लग्न बनानी चाहिए।।२८।।

विशेष—१. जन्मलग्न और होरालग्न दोनों विषम हों तो दोनों का योग यदि विषम राशि हो तो वही वर्णद राशि होती है।

२. यदि दोनों सम हों तो दोनों को १२ राशि में घटाकर शेषों का योग करने से यदि विषम राशि हो तो वही वर्णद राशि होती है।

३. यदि जन्मलग्न होरालग्न दोनों में एक विषम और दूसरी सम हो तो सम राशि को १२ राशि में घटाकर दोनों का अन्तर करने से शेष विषम राशि हों तो वर्णद राशि होती है।

उपर्युक्त तीनों प्रकारों से यह स्पष्ट है कि योग वा अन्तर करने से सम राशि आवे तो उसे १२ राशि में पुनः घटा देने से वर्णद राशि होती है अर्थात् वर्णद राशि हमेशा विषम ही होती है।

उदाहरण—जन्मलग्न ९।१५।२२।३७ और होरालग्न ४।१८।१८ है। यहाँ जन्मलग्न सम और होरालग्न विषम है, अतः नियम तीन के अनुसार जन्मलग्न को १२ राशि में घटाने से शेष २।१४।३७।२३ हुआ। यही लग्न की वर्णद राशि है।

यदि द्वावोजराशौ वा समराशौ यदा द्विज।
द्वयं संयोजनीयं वै संज्ञे या वर्णदा भवेत्।।२९।।

यदि दोनों विषम वा समराशि हों तो दोनों का योग करने से वर्णद राशि होती है।।२९।।

एकस्थाने ओजराशावपरे समभे द्विज।
समं तु चक्रतः शोध्यं न्यूनसंख्यां विशोधयेत्।।३०।।

एक विषम राशि हो और दूसरी सम राशि हो तो सम राशि को १२ राशि में घटाने से जो न्यून हो उसे पुनः घटाने से वर्णद होती है।।३०।।

मेषादिकेन गणयेत्क्रममार्गेण वै द्विज।
यल्लब्धमन्तिमो राशिः स राशिर्वर्णदो भवेत्।।३१।।

मेष से क्रममार्ग से गणना करने से अंतिम राशि पर्यन्त जो राशि आवे वही वर्णद होती है।।३१।।

युग्मलग्नेषु यज्जन्म मीनादेरपसव्यतः।
क्रमेण लग्नहोरान्तं गणयेत् द्विजसत्तम।।३२।।

समलग्न में जन्म होने से मीनादि अपसव्य मार्ग से गिनने से लग्न पर्यन्त गणना करनी चाहिए।।३२।।

ओजराशौ द्वयं लब्धं तथा द्वौ समराशिगौ।
साजात्ये योजनं कार्यं जायते वर्णदा दशा।।३३।।

यदि दोनों विषम राशि में अथवा दोनों समराशि में हों तो दोनों के सजातीय होंने से दोनों का योग करने से वर्णद दशा हेती है।।३३।।

वैजात्ये पूर्ववत्कार्याधिक्ये न्यूनं विशोधयेत्।
मेषादि सव्यमार्गेण गणनीयं प्रयत्नतः।।३४।।

दोनों विजातीय हों तो पूर्ववत् विषम में न्यून को घटाकर मेषादि से सव्यमार्ग से गणना करना चाहिए।।३४।।

यल्लब्धमन्तिमो राशिस्तद्राशिर्वर्णदो भवेत्।
वर्षसंख्या विजानीयात् चरपर्याप्रमाणतः।।३५।।

जो लग्न से अंतिम राशि हो वही वर्णद राशि होती है। वही वर्णद संख्या चराति क्रम से होती है।।३५।।

होरालग्नभयोर्नेया दुर्बला वर्णदा दशा।
यत्संख्या वर्णदा लग्नात्तत्र संख्या क्रमेण तु।।३६।।

होरालग्न से आई हुई वर्णद दशा दुर्बल होती है, वहाँ पर जन्मलग्न से लाई हुई दशा की संख्या लेनी चाहिए।।३६।।

क्रमव्युत्क्रमभेदेन दशा स्यात् पुरुषस्त्रियोः।
वर्णदा राशिमेषादि मीनादि गणयेत्क्रमात्।।३७।।

क्रम-उत्क्रम भेद से पुरुष और स्त्री की दशा होती है। और वर्णद राशि मेषादि और मीनादि से गिनना चाहिए।।३७।।

फलविचारमाह—

वर्णदात्स्यात् त्रिकोणे च पापयुक् पापराशिकः।
पापयोगकृते विप्र दशापर्यन्तजीवनम्।।३८।।

हे विप्र! वर्णद राशि से त्रिकोण में पापग्रह की युति हो अथवा पापग्रह की राशि हो, उसमें पापग्रह की युति हो तो उसके दशा पर्यन्त आयु होती है।।३८।।

रुद्रशूले यथैवायुर्निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।
तथैव वर्णदादप्यायुश्चिन्त्यं द्विजोत्तम।।३९।।

जिस प्रकार रुद्रशूल पर्यन्त आयु होती है उसी प्रकार वर्णद से भी आयु का विचार करना चाहिए।।३९।।

वर्णदात्सप्तमाद्राशेः कलत्रायुः विचिन्तयेत्।
पञ्चमे तनयस्यायुर्मातुः स्यात्तुर्यभावके।।४०।।

वर्णद से पाँचवीं राशि से पुत्र की, चौथी राशि से माता की।।४०।।

तृतीये भ्रातुरायुः स्याज्ज्येष्ठभ्रातुर्भवेद्द्विज।
पितुस्तु नवमाद् भावादायुर्ज्ञेयं विचक्षणैः।।४१।।

तीसरी राशि से भाई की और ग्यारहवीं राशि से ज्येष्ठ भाई की, नवीं राशि से पिता की आयु का विचार करना चाहिए।।४१।।

शूलराशिदशायां वै प्रबलायामरिष्टकम्।
वर्णदाल्लग्नवच्चिन्त्यं फलं सर्वं विचक्षणैः।।४२।।

शूलराशि की दशा में उन लोगों को प्रवल अरिष्ट होता है। वर्णद लग्न से लग्नभाव के समान ही सभी बातों का विचार करना चाहिए।।४२।।

एवं तन्वादिभावानां कारयेद्वर्णदा दशा।
पूर्ववच्च फलं ज्ञेयं शुभाशुभं द्विजोत्तम।।४३।।

इसी प्रकार लग्न आदि सभी भावों की वर्णद राशि बनाना चाहिए। उस पर से प्रत्येक भावों के शुभ-अशुभ फलों का विचार पूर्ववत् करना चाहिए।।४३।।

ग्रहाणां वर्णदा नैव राशीनां वर्णदा दशा।
यल्लब्धं पूर्वमब्दानां भानुभागं च कारयेत्।।४४।।

ग्रहों की वर्णद राशि नहीं होती है। इस प्रकार वर्णद राशि के दशा का जो वर्ष मिले, उसमें १२ का भाग देकर।।४४।।

क्रमव्युत्क्रमभेदेन संलिखेद्वै दशान्तरम्।
चरस्थिरदशायां वै वर्णदायास्तथैव च।।४५।।

जैसे चर आदि दशा में क्रम-उत्क्रम से अन्तर्दशा लिखी जाती है उसी प्रकार यहाँ भी अन्तर्दशा लिखें।।४५।।

पूर्णायां कारकस्यैव केन्द्रस्थानां दशा भवेत्।
ततः पणफरस्थानामापोक्लिम दशां ततः।।४६।।

पहले केन्द्रस्थ की दशा, इसके बाद पणफरस्थ की और इसके बाद आपोक्लिमस्थ की दशा होती है।।४६।।

...शरहोरायां पूर्वखण्डे ...बोधिन्यां लग्नाध्याय चतुर्थः।

अथ षोडशवर्गप्रकरणम्

वर्गान् षोडश संख्याकान् ब्रह्मा प्रोक्तं पितामहः।
तानहं सम्प्रवक्ष्यामि मैत्रेय श्रूयतामिति।।१।।

हे मैत्रेय ! लोकपितामह ब्रह्माजी ने जो सोलह वर्गों को कहा है, उसे मैं कहता हूँ।।१।।

क्षेत्रं होरां च द्रेष्काणश्चतुर्थांशः सप्तमांशकः।
नवांशो दशमांशश्च सूर्यांशः षोडशांशकः।।२।।

१ गृह, २ होरा, ३ द्रेष्काण, ४ चतुर्थांश, ५ सप्तमांश, ६ नवांश, ७ दशमांश, ८ द्वादशांश, ९ षोडशांश।।२।।

त्रिंशांशो वेदवाह्वंशो भांशास्त्रिंशांशकस्तथा।
खवेदांशोऽक्षवेदांशः षष्ठ्यंशश्च ततः परम्।।३।।

१० त्रिंशांश, ११ चतुर्विंशांश, १२ सप्तविंशांश, १३ त्रिंशदंशांश, १४ चत्वारिंशांश, १५ पञ्चचत्वारिंशांश, १६ षष्ठ्यंश ये १६ वर्ग हैं।।३।।

गृहहोराकथनम्—

तत्क्षेत्रं यस्य खेटस्य राशेर्यो यस्य नायकः।
सूर्येन्दोर्विषमे राशौ समे तद्विपरीतकम्।।४।।

जो ग्रह जिस राशि का स्वामी है वही उसका गृह है। विषम राशि में पहली होरा सूर्य की और दूसरी चन्द्रमा की होती है। सम राशि में पहली होरा चन्द्रमा की और दूसरी सूर्य की होती है।।४।।

पितरश्चन्द्रहोरेशा देव्यः सूर्यस्य कीर्त्तिताः।
राशेरर्द्धं भवेद्धोरा ताश्चतुर्विंशतिः स्मृताः।
मेषादि तासां होराणां परिवृत्तिद्वयं भवेत्।।५।।

चन्द्रमा के होरा के स्वामी पितर और सूर्य के होरा के स्वामी देवियाँ होती हैं। एक राशि का आधा १५ अंश का एक होरा होता है अथात् १२ राशियों में २४ होरा होती है, इसलिये मेषादि राशियों की दो आवृत्ति होती है।।५।।

उदाहरण—जैसे लग्न ९।१५।२२।५७ है, लग्न सम राशि है और १५ अंश से अधिक है, अतः दूसरी होरा सूर्य की है।

स्पष्टार्थ चक्र—

हो.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	राशयः
१	सू.	चं.	सू.	चं.	सू.	चं.	सू.	चं.	सू.	चं.	सू.	चं.	स्वामिनः
२	चं.	सू.	चं.	सू.	चं.	सू.	च.	सू.	चं.	सू.	चं.	सू.	स्वामिनः

द्रेष्काणमाह—

राशित्रिभागा द्रेष्काणास्ते च षट्त्रिंशदीरिताः।
परिवृत्तित्रयं तेषां मेषादेः क्रमशो भवेत्।।६।।

एक राशि के तीसरे भाग का अर्थात् १० अंश का एक द्रेष्काण होता है, अर्थात् एक राशि में ३ द्रेष्काण होते हैं। १२ राशि में कुल ३६ द्रेष्काण होते हैं।।६।।

स्वपञ्चनवपानां च विषमेषु समेषु च।
नारदागस्तिदुर्वासा द्रेष्काणेशाश्चरादिषु।।७।।

विषम एवं सम राशि में पहले द्रेष्काण का स्वामी उसी राशि का स्वामी, दूसरे का उस राशि से पाँचवी राशि का स्वामी और तीसरे का उस राशि से नवीं राशि का स्वामी होता है। और पहले द्रेष्काण के स्वामी नारद, दूसरे के अगस्त और तीसरे के दुर्वासा स्वामी होते हैं।।७।।

उदहारण—जैसे जन्मलग्न ९।१५।२२।३७ है, इसमें दूसरा द्रेष्काण है जिसके स्वामी शुक्र हैं और अधिपति अगस्त हैं।

द्रेष्काण चक्र—

स्वामी	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	राशयः
नारद	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	स्वामिनः
अगस्त	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	स्वामिनः
दुर्वासा	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	स्वामिनः

अथ चतुर्थांशमाह—

स्वर्क्षादि केन्द्रपतयस्तुर्यांशेशाः क्रियादयः।
सनकश्च सनन्दश्च कुमारश्च सनातनः।।८।।

एक राशि में ७ अंश ३० कला के चार चतुर्थांश होते हैं। प्रत्येक राशि में उस राशि से प्रथम, चतुर्थ, सप्तम और दशम राशियों के स्वामी क्रम से चतुर्थांश के स्वामी होते हैं और सर्वदा क्रम से सनक, सनन्दन, सनत्कुमार और सनातन ये स्वामी होते हैं।।८।।

उदाहरण— लग्न ९।१५।२२।३७ है। इसमें ३रा चतुर्थांश कर्क राशि के स्वामी चन्द्रमा का और अधिपति सनत्कुमार का है।

चतुर्थांश चक्र—

स्वामिनः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	अंशाः
सनकः	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ बृ.	७ ३०
सनन्दनः	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ बृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	१५
सनत्कुमारः	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ बृ.	१ म.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	२२/३०
सनातनः	१० श.	११ श.	१२ बृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	३०

अथ सप्तमांशमाह—

सप्तमांशास्त्वोजगृहे गणनीया निजेशतः।
युग्मराशौ तु विज्ञेया सप्तमर्क्षादिनायकम्।।९।।

एक राशि में ४ अंश १७ कला के सात सप्तमांश होते हैं। विषम राशि में उसी राशि से और सम राशि में उससे सातवीं राशि से ७ सप्तमांश के स्वामी होते हैं।।९।।

क्षारक्षीरौ च दध्याज्यौ तथेक्षुरससम्भवः।
मद्यशुद्धजलावोजे समे शुद्धजलादिकाः।।१०।।

उसके क्षार, क्षीर,आज्य, इक्षुरस, मद्य और शुद्ध जल विषम राशि में और सम राशि में शुद्ध जल, मद्य, इक्षुरस, आज्य, दधि, क्षीर, क्षार, ये विशेष अधिकारी होते हैं।।१०।।

उदाहरण— लग्न ९।१५।२२।३७ है। इसमें तीसरा सप्तमांश है, जिसके स्वामी बुध और विशेष अधिपति इक्षुरस है।

सप्तमांश चक्र—

पतयः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
क्षार	१ मं.	८ मं.	३ बु	१० श.	५ सू.	१२ बृ.	७ शु.	२ शु.	९ बृ.	४ चं.	११ श.	६ बु.
क्षीर	२ शु.	९ बृ.	४ चं.	११ श.	६ बु.	१ मं.	८ मं.	३ बु.	१० श.	५ सू.	१२ बृ.	७ शु.
दधि	३ बु.	१० श.	५ सू.	१२ बृ.	७ शु.	२ शु.	९ बृ.	४ चं.	११ श.	६ बु.	१ मं.	८ मं.
आज्य	४ चं.	११ शु.	६ बु.	१ मं.	८ मं.	३ बु.	१० श.	३ बु.	१२ बृ.	७ शु.	२ शु.	९ बृ.
इक्षु-रस	५ सू.	१२ बृ.	७ शु.	२ शु.	९ बृ.	४ चं.	११ श.	६ बु.	१ मं.	८ मं.	३ बु.	१० श.
मद्य	६ बु.	१ मं.	८ मं.	३ बु.	१० श.	५ सू.	१२ बृ.	७ शु.	२ शु.	९ बृ.	४ चं.	११ श.
शुद्ध जल	७ शु.	२ शु.	९ बृ.	४ चं.	११ श.	६ बु.	१ मं.	८ मं.	३ मं.	१० श.	५ सू.	७ शु.

नवमांशाधिपतिमाह—

नवांशेशाश्चरे तस्मात्स्थिरे तन्नवमादितः।
उभये तत्पञ्चमादेरिति चिन्त्यं विचक्षणैः।
देवानृराक्षसाश्चैव चरादिषु गृहेषु च।।११।।

एक राशि में ३ अंश २० कला के नव नवमांश होते हैं। चर राशि में उसी राशि से, स्थिर राशि में उससे नवम राशि से और द्विस्वभाव राशि में उससे पाँचवीं राशि से नव राशि तक प्रत्येक राशि ३ अंश २० कला के तुल्य होती हैं। क्रम से देवता, नर और राक्षस अंशेश होते हैं।।११।।

उदाहरण— लग्न ९।१५।२२।३७ में ३ अंश २० कला के हिसाब से पाँचवाँ नवमांश वृष राशि का हुआ। इसके स्वामी शुक्र और नर अंशेश हुए।

नवमांशचक्रम्–

अंशाः	स्वामी	सं.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
३/२०	देवता	१	मे. मं.	म. श.	तु. शु.	क. चं.	मे. मं.	म. श.	तु. शु.	क. चं.	मे. मं.	म. श.	तु. शु.	क. चं.
६/४०	नर	२	वृ. शु.	कुं. श.	वृ. मं.	सिं. सू.	वृ. शु.	कुं. श.	वृ. मं.	मे. सू.	वृ. शु.	कुं श.	वृ. मं.	सि. सू.
१०	राक्षस	३	मि. बु.	मी. बृ.	ध. बृ.	क. बु.	मि. बु.	मी. बृ.	ध. बृ.	क. बु.	मि. बु.	मी. बृ.	ध. बृ.	क. बु.
१३/२०	देवता	४	क. चं.	मे. मं.	म. श.	तु. शु.	क. चं.	मे. मं.	मं. श.	तु. शु.	क. चं.	मे. मं.	म. श.	तु. शु.
१६/४०	नर	५	सिं. सू.	वृ. शु.	कुं. श.	वृ. मं.	सिं. सू.	वृ. शु.	कुं. श.	वृ. मं.	सिं. सू.	वृ. शु.	कुं. श.	वृ. मं.
२०	राक्षस	६	कं. बु.	मि. बु.	मी. बृ.	ध. बृ.	क. बु.	मं बु.	मी. बृ.	ध. बृ.	क. बु.	मि. बु.	मी. बृ.	ध. बृ.
२३/२०	देवता	७	तु. शु.	क. चं.	मे. मं.	म. श.	तु. शु.	क. चं.	मे. मं.	मं. श.	तु. शु.	क. चं.	मे. मं.	म. श.
२६/४०	नर	८	वृ. मं.	सिं. सू.	वृ. शु.	कुं. श.	वृ. मं.	सिं. सू.	वृ. शु.	कुं. श.	वृ. मं.	सिं. सू.	वृ. शु.	कुं. श.
३०	राक्षस	९	ध. बृ.	क. बु.	मि. बु.	मी. बृ.	ध, बृ.	क. बु.	मि. बु.	मी. बृ.	ध. बृ.	क. बु.	मि. बु.	मी. बृ.

अथ दशमांशमाह–

दिगंशयाः ततश्चोजे युग्मे तन्नवमाद्वदेत्।
पूर्वादि दश दिक्पाला इन्द्राग्नियमराक्षसाः।।१२।।
वरुणो मारुतश्चैव कुबेरेशानपद्मजाः।
अनन्तश्चोक्तमोजे तु समे स्यात्व्युत्क्रमेण च।।१३।।

एक राशि में दश दशमांश प्रत्येक ३ अंश के होते हैं। यदि विषम राशि लग्न हो तो उसी राशि से और सम राशि हो तो उससे नवीं राशि से दश दशमांश होते हैं। विषम राशि में क्रम से इन्द्र, अग्नि, यम, राक्षस, वरुण, मारुत, कुबेर, ईशान, ब्रह्मा और अनन्त इन पूर्वादि दिशाओं के दिक्पालों का होता है और सम राशि में उत्क्रम से अधिपति होते हैं।।१२-१३।।

उदाहरण— लग्न ९।१५।२२।३७ है। इसमें ३ अंश के अनुसार छठा ६ दशमांश हुआ। लग्न राशि के सम होने से उससे ९वीं राशि कन्या से गिनने से छठी राशि कुम्भ के स्वामी शनि का दशमांश हुआ। इसके मारुत स्वामी हैं।

दशमांशचक्रम्—

विषमे स्वामिनः		मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	समे स्वामिनः
इन्द्रः	३	१ मं.	१० श.	३ बु.	१२ बृ.	५ सू.	२ शु.	७ शु.	४ चं.	९ बृ.	६ बु.	११ श.	८ मं.	अनंत
अग्निः	६	२ शु.	११ श.	४ चं.	१ मं.	६ शु.	३ बु.	८ मं.	५ सू.	१० श.	७ शु.	१२ बृ.	६ बु.	ब्रह्मा
यमः	९	३ बु.	१२ बृ.	५ सू.	२ शु.	७ शु.	४ चं.	९ बृ.	६ बु.	११ श.	८ मं.	१ मं.	१० श.	ईशान
राक्षस	१२	४ चं.	१ मं.	६ बु.	३ बु.	८ मं.	५ सू.	१० श.	७ शु.	१० श.	९ बृ.	२ शु.	११ श.	कुबेर
वरुण	१५	५ सू.	२ शु.	७ शु.	४ चं.	९ बृ.	६ बु.	११ श.	८ मं.	१ मं.	१० श.	३ बु.	१२ वृ.	मारुत
मारुत	१८	६ बु.	३ बु.	८ मं.	५ सू.	१० श.	७ शु.	१२ बृ.	९ बृ.	२ शू.	११ श.	४ चं.	१ मं.	वरुण
कुबेर	२१	७ शु.	४ चं.	९ बृ.	६ बु.	११ श.	८ मं.	१ मं.	१० श.	३ बु.	१२ बृ.	५ सू.	२ शु.	राक्षस
ईशान	२४	८ मं.	५ सू.	१० श.	७ शु.	१२ बृ.	९ बृ.	२ शु.	११ श.	४ चं.	१ मं.	६ बु.	३ बु.	यम
ब्रह्मा	२७	९ बृ.	६ बु.	११ श.	८ मं.	१ मं.	१० श.	३ बु.	१२ बृ.	५ सू.	२ शु.	७ शु.	४ चं.	अग्नि
अनंत	३०	१०	७ शु.	१२ बृ.	९ बृ.	२ शु.	११ श.	४ चं.	१ मं.	६ बु.	३ बु.	८ मं.	५ सू.	इन्द्र

अथ द्वादशांशमाह—

द्वादशांशस्य गणना तत्तत्क्षेत्राद्विनिर्दिशेत्।
तेषामधीशाः क्रमशो गणेशाश्वियमाहयः।।१४।।

एक राशि में १२ द्वादशांश २ अंश ३० कला के होते हैं। उनकी गणना उसी राशि से होती है। उनके स्वामी क्रम से गणेश, अश्विनीकुमार, यम और अहि (सर्प) होते हैं।।१४।।

उदाहरण— लग्न ९।१५।२२।३७ है। यहाँ २'।३०' के अनुसार ७वाँ द्वादशांश मकर से गिनने से कर्क राशि के स्वामी चन्द्रमा का है। उसके स्वामी यम हैं।

अथ द्वादशांशचक्रम्—

स्वामी	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	अंशाः
गणेश	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ बृ.	२।३०
अश्वि	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ बृ.	१ मं.	५।०
यम	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ बृ.	१ मं.	२ शु.	७।३०
अहि	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ बृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	१०।०
गणेश	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ बृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	१२।३०
अश्वि	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ बृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ सू.	१५।०
यम	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ बृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	१७।३०
अहि	८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ बृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु.	२०।०
गणेश	९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ बृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	२२।३०
अश्वि	१० श.	११ श.	१२ बृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	२५।७
यम	११ श.	१२ बृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	२७।३०
अहि	१२ बृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	३०।०

अथ षोडशांशमाह—

अजसिंहाश्वितो ज्ञेया नृपांशाः क्रमशः सदा।
अजविष्णुहरः सूर्यो ह्योजे युग्मे प्रतीपकम्।।१५।।

एक राशि में १अंश ५२ कला और ३० विकला का एक षोडशांश होता है। इस प्रकार एक राशि में १६ षोडशांश होता है। मेष आदि राशियों में क्रम से मेष, सिंह और धन से आरम्भ होता है। इनके अज, विष्णु, हर और सूर्य स्वामी होते हैं।।१५।।

उदाहरण— लग्न ९।१५।२२।३७ है। इसमे उक्त नियम से नवाँ षोडशांश धन राशि के स्वामी गुरु का हुआ। इसके स्वामी ब्रह्मा हैं।

षोडशांशचक्रम्—

सू.	विषमे स्वा.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	समे स्वा.	अं. क. वि.
१	ब्र.	१ मं.	५ सू.	९ बृ.	१ मं.	५ सू.	९ बृ.	१ मं.	५ सू.	९ बृ.	१ मं.	५ सू.	९ बृ.	सू.	१।५२।३०
२	वि.	२ शु.	६ बु.	१० श.	२ शु.	६ बु.	१० श.	२ शु.	६ बु.	१० श.	२ शु.	६ बु.	१० श.	ह.	३।४५।०
३	ह.	३ बु.	७ शु.	११ श.	३ बु.	७ शु.	११ श.	३ बु.	७ शु.	११ श.	३ बु.	७ शु.	११ श.	वि.	१।३७।३०
४	सू.	४ चं.	८ मं.	१२ बृ.	४ चं.	८ मं.	१२ बृ.	४ चं.	८ मं.	१२ बृ.	४ चं.	८ मं.	१२ बृ.	ब्र.	७।३०।०
५	ब्र.	५ सू.	९ बृ.	१ मं.	५ सू.	९ बृ.	१ मं.	५ सू.	९ बृ.	१ मं.	५ सू.	९ बृ.	१ मं.	सू.	९।२२।३०
६	वि.	६ बु.	१० श.	२ शु.	६ बु.	१० श.	२ शु.	६ बु.	१० श.	२ शु.	६ बु.	१० श.	२ शु.	ह.	११।१५।०
७	ह.	७ शु.	११ श.	३ बु.	७ शु.	११ श.	३ बु.	७ शु.	११ श.	३ बु.	७ शु.	११ श.	३ बु.	वि.	१३।७।३०
८	सू.	८ मं.	१२ बृ.	४ चं.	८ मं.	१२ बृ.	४ चं.	८ मं.	१२ बृ.	४ चं.	८ मं.	१२ बृ.	४ चं.	ब्र.	१५।०।०
९	ब्र.	९ बृ.	१ मं.	५ सू.	९ बृ.	१ मं.	५ सू.	९ बृ.	१ मं.	५ सू.	९ बृ.	१ मं.	५ सू.	सू.	१६।५२।३०
१०	वि.	१० श.	२ शु.	६ बु.	१० श.	२ शु.	६ बु.	१० श.	२ शु.	६ बु.	१० श.	२ शु.	६ बु.	ह.	१८।४५।०
११	ह.	११ श.	३ बु.	७ शु.	११ श.	३ बु.	७ शु.	११ श.	३ बु.	७ शु.	११ श.	३ बु.	७ शु.	वि.	२०।३७।३०
१२	सू.	१२ बृ.	४ चं.	८ मं.	१२ बृ.	४ चं.	८ मं.	१२ बृ.	४ चं.	८ मं.	१२ बृ.	४ चं.	८ मं.	ब्र.	२२।३०।०
१३	ब्र.	१ मं.	५ सू.	९ बृ.	१ मं.	५ सू.	९ बृ.	१ मं.	५ सू.	९ बृ.	१ मं.	५ सू.	९ बृ.	सू.	२४।२२।३०
१४	वि.	२ शु.	६ बु.	१० श.	२ शु.	६ बु.	१० श.	२ शु.	६ बु.	१० श.	२ शु.	६ बु.	१० श.	ह.	२६।१५।०
१५	ह.	३ बु.	७ शु.	११ श.	३ बु.	७ शु.	११ श.	३ बु.	७ शु.	११ श.	३ बु.	७ शु.	११ श.	वि.	२८।७।३०
१६	सू.	४ चं.	८ मं.	१२ बृ.	४ चं.	८ मं.	१२ बृ.	४ चं.	८ मं.	१२ बृ.	४ चं.	८ मं.	१२ बृ.	ब्र.	३०।०।०

अथ विंशांशमाह—

अथ विंशतिभागानामधिपा ब्रह्मणोदिताः।
क्रियाच्चरे स्थिरे चापान्मृगेन्द्राद्द्विस्वभावके।।१६।।

एक राशि में २० विंशांश १अंश ३० कला के होते हैं। चर राशि में मेष से, स्थिर राशि में धन से और द्विस्वभाव राशि में सिंह से आरम्भ होकर २० राशि तक होता है।।१६।।

काली गौरी जया लक्ष्मीर्विजया विमला सती।
तारा ज्वालामुखी श्वेता ललिता बगलामुखी।।१७।।

इनके स्वामी विषम राशि में क्रम से काली, गौरी, जया, लक्ष्मी, विजया, विमला, सती, तारा, ज्वालामुखी, श्वेता, ललिता, बगलामुखी है।।१७।।

प्रत्यङ्गिरा शची रौद्री भवानी वरदा जया।
त्रिपुरा सुमुखी चेति विषमे परिचिन्तयेत्।।१८।।

प्रत्यंगिरा, शची, रौद्री, भवानी, वरदा, जया, त्रिपुरा, सुमुखी है।।१८।।

समराशौ दया मेधा छिन्नशीर्षा पिशाचिनी।
धूमावती च मातङ्गी बाला भद्राऽरुणाऽनला।।१९।।

सम राशि में दया, मेधा, छिन्नशीर्षा, पिशाचिनी, धूमावती, बाला, भद्रा, अरुणा और अनला है।।१९।।

पिङ्गला छुच्छुका घोरा वाराही वैष्णवी सिता।
भुवनेशी भैरवी च मङ्गला ह्यपराजिता।।२०।।

पिंगला, छुच्छुका, घोरा, वाराही, वैष्णवी, सिता, भुवनेशी, भैरवी, मंगला और अपराजिता ये स्वामी होते हैं।।२०।।

उदाहरण– लग्न ९।१५।२२।३७ है, अतः ११वाँ त्रिंशांश कुम्भ राशि के अधिपति शनि का हुआ और इसके स्वामी पिंगला देवी हुई।

विंशांशचक्रम्–

सां.	विषमे स्वा.	मे.	वृ.	मि.	क.	सि.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	समे स्वा.	अ. क.
१	काली	१ मं.	९ बृ.	५ सू.	१ मं.	९ बृ.	५ सू.	१ मं.	९ बृ.	५ सू.	१ मं.	९ बृ.	५ सू.	दया	१।३०
२	गौरी	२ शु.	१० श.	६ बु.	२ शु.	१० श.	६ बु.	२ शु.	१० श.	६ बु.	२ शु.	१० श.	६ बु.	मेधा	३।०
३	जया	३ बु.	११ श.	७ शु.	३ बु.	११ श.	७ शु.	३ बु.	११ श.	७ शु.	३ बु.	११ श.	७ शु.	छिन्नशी.	४।३०

इस चक्र का शेष भाग आगे पृष्ठ में देखें।

सां	विषमे स्वा.	मे.	वृ.	मि.	क.	सि.	कं.	तु.	वृ.	ध.	मं.	कुं.	मी.	समे स्वा.	अं.क.
४	लक्ष्मी	४ चं.	१२ बृ.	८ मं.	४ चं.	१२ बृ.	८ मं.	४ चं.	१२ बृ.	८ मं.	४ चं.	१२ बृ.	८ मं.	पिशाचि.	६।०
५	विजया	५ सू.	१ मं.	९ बृ.	५ सू.	१ मं.	९ बृ.	५ सू.	१ मं.	९ बृ.	५ सू.	१ मं.	९ बृ.	धूमावती	७।३०
६	विमला	६ बु.	२ शु.	१० श.	६ बु.	२ शु.	१० श.	६ बु.	२ शु.	१० श.	६ बु.	२ शु.	१० श.	मातंगी	९।०
७	सती	७ शु.	३ बु.	११ श.	७ शु.	३ बु.	११ श.	७ शु.	३ बु.	११ श.	७ शु.	३ बु.	११ श.	काला	१०।३
८	तारा	८ मं.	४ चं.	१२ बृ.	८ मं.	४ चं.	१२ बृ.	८ मं.	४ चं.	१२ बृ.	८ मं.	४ चं.	१२ बृ.	भद्रा	१२।०
९	ज्वालामु.	९ बृ.	५ सू.	१ मं.	९ बृ.	५ सू.	१ मं.	९ बृ.	५ सू.	१ मं.	९ बृ.	५ सू.	१ मं.	अरुणा	१३।३
१०	श्वेता	१० श.	६ बु.	२ शु.	१० श.	६ बु.	२ शु.	१० श.	६ बु.	२ शु.	१० श.	६ बु.	२ शु.	अनला	१५।०
११	ललिता	११ श.	७ शु.	३ बु.	११ श.	७ शु.	३ बु.	११ श.	७ शु.	३ बु.	११ श.	७ शु.	३ बु.	पिंगला	१६।३
१२	बंगला	१२ बृ.	८ मं.	४ चं.	१२ बृ.	८ मं.	४ चं.	१२ बृ.	८ मं.	४ चं.	१२ बृ.	८ मं.	४ चं.	छुच्छुका	१८।०
१३	प्रत्यंगिरा	१ मं.	९ बृ.	५ सू.	१ मं.	९ बृ.	५ सू.	१ मं.	९ बृ.	५ सू.	१ मं.	९ बृ.	५ सू.	घोरा	१९।३
१४	शची	२ शु.	१० श.	६ बु.	२ शु.	१० श.	६ बु.	२ शु.	१० श.	६ बु.	२ शु.	१० श.	६ बु.	वाराही	२१।०
१५	रौद्री	३ बु.	११ रा.	७ शु.	३ बु.	११ श.	७ शु.	३ बु.	११ श.	७ शु.	३ बु.	११ श.	७ शु.	वैष्णवी	२२।३
१६	भवानी	४ चं.	१२ बृ.	८ मं.	४ चं.	१२ बृ.	८ मं.	४ चं.	१२ बृ.	८ मं.	४ चं.	१२ बृ.	८ मं.	सिता	२४।०
१७	वरादा	५ सू.	१ मं.	९ बृ.	५ सू.	१ मं.	९ बृ.	५ सू.	१ मं.	९ बृ.	५ सू.	१ मं.	९ बृ.	भुवनेश्व.	२५।३
१८	जया	६ बु.	२ शु.	१० श.	६ बु.	२ शु.	१० श.	६ बु.	२ शु.	१० श.	६ बु.	२ शु.	१० श.	भैरवी	२७।०
१९	त्रिपुरा	७ शु.	३ बु.	११ श.	७ शु.	३ बु.	११ श.	७ शु.	३ बु.	११ श.	७ शु.	३ बु.	११ श.	मंगला	२८।३
२०	सुमुखी	८ मं.	४ चं.	१२ बृ.	८ मं.	४ चं.	१२ बृ.	८ मं.	४ चं.	१२ बृ.	८ मं.	४ चं.	१२ बृ.	अपराजि.	३०।०

सिद्धांशकमाह—

सिद्धांशकानामधिपाः सिंहादोजभके गृहे।

कर्काद्युग्मभके खेटे स्कन्दः पशुधरोऽनलः।।२१।।
विश्वकर्मा भगो मित्रो भगोऽन्तकवृषध्वजाः।
गोविन्दो मदनो भीमः सिंहादौ विषमे क्रमात्।
कर्कादौ समभे भीमाद्विलोमेन विचिन्तयेत्।।२२।।

एक राशि में १ अंश १५ कला के २४ चतुर्विंशांश होते हैं। विषम राशि लग्न हो तो सिंह से और सम राशि में कर्क से गणना कर २४ राशियों का चतुर्विंशांश होता है। विषम राशि में क्रम से स्कंद, पशुधर, अनल, विश्वकर्मा, भग, मित्र, भग, अंतक, वृषध्वज, गोविंद, मदन, भीम, फिर स्कंद से भीम पर्यन्त एवं सम राशि में भीम से उत्कय रीति से गिनने से स्वामी होते हैं।। २१-२२ ।।

उदाहरण– लग्न ९।१५।२२।३७ सम राशि में कर्क से गिनने से १३वाँ कर्क राशि यानि चन्द्र का चतुर्विंशांश हुआ और उसके भीम स्वामी हुए।

चतुर्विंशांश चक्रम्—

सं.	विषमे स्वा.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	समे स्वा.	अं.क.
१	स्कन्दः	५	४	५	४	५	४	५	४	५	४	५	४	१।१५	भीमः
२	पशुधरः	६	५	६	५	६	५	६	५	६	५	६	५	२।३०	मदनः
३	अनलः	७	६	७	६	७	६	७	६	७	६	७	६	३।४५	गोविन्दः
४	विश्वकः	८	७	८	७	८	७	८	७	८	७	८	७	५।०	वृषध्वजः
५	भगः	९	८	९	८	९	८	९	८	९	८	९	८	६।१५	अंतकः
६	मित्रः	१०	९	१०	९	१०	९	१०	९	१०	९	१०	९	७।३०	यमः
७	यमः	११	१०	११	१०	११	१०	११	१०	११	१०	११	१०	८।४५	मित्रः
८	अंतकः	१२	११	१२	११	१२	११	१२	११	१२	११	१२	११	१०।०	भगः
९	वृषध्वजः	१	१२	१	१२	१	१२	१	१२	१	१२	१	१२	११।१५	विश्वक.
१०	गोविन्दः	२	१	२	१	२	१	२	१	२	१	२	१	१२।३०	अनलः
११	मदनः	३	२	३	२	३	२	३	२	३	२	३	२	१३।४५	पशुधरः
१२	भीमः	४	३	४	३	४	३	४	३	४	३	४	३	१५।०	स्कंदः
१३	सकन्दः	५	४	५	४	५	४	५	४	५	४	५	४	१६।१५	भीमः
१४	पशुधरः	६	५	६	५	६	५	६	५	६	५	६	५	१७।३०	मदनः
१५	अनलः	७	६	७	६	७	६	७	६	७	६	७	६	१८।४५	गोविन्दः
१६	विश्वक.	८	७	८	७	८	७	८	७	८	७	८	७	२०।०	वृषध्वजः
१७	भगः	९	८	९	८	९	८	९	८	९	८	९	८	२१।१५	अंतकः

इस चक्र का शेष आगे पृष्ठ में देखें।

सं.	विषमे स्वा.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	समे स्वा.	अं.क.
१८	मित्रः	१०	९	१०	९	१०	९	१०	९	१०	९	१०	९	२२ ।३०	यमः
१९	यमः	११	१०	११	१०	११	१०	११	१०	११	१०	११	१०	२३ ।४५	मित्रः
२०	अंतकः	१२	११	१२	११	१२	११	१२	११	१२	११	१२	११	२५ ।०	यमः
२१	वृषध्वजः	१	१२	१	१२	१	१२	१	१२	१	१२	१	१२	२६ ।१५	विश्वकर्मा
२२	गोविन्दः	२	१	२	१	२	१	२	१	२	१	२	१	२७ ।३०	अनलः
२३	मदनः	३	२	३	२	३	२	३	२	३	२	३	२	२८ ।४५	पशुधरः
२४	भीमः	४	३	४	३	४	३	४	३	४	३	४	३	३० ।०	स्कन्दः

मांशमाह—

नक्षत्रेशाः क्रमाद्धस्त्रयमवह्निपितामहाः।
चन्द्रेशादितिजीवाहि पितरो भगसंज्ञिताः।।२३।।
अर्यमार्कस्त्वष्टमरुच्छक्राग्निमित्रवासवाः।
निरृत्युदकविश्वेऽज गोविन्दो वसवोऽम्बुपः।।२४।।
ततोऽजयादहिर्बुध्यः पूषा चैव प्रकीर्त्तिताः।
नक्षत्रेशास्तु भांशेशा भांशसंख्यः चरात्क्रमात्।।२५।।

एक राशि में २७ अंश १ अंश ६ कला और ४० विकला के होते हैं। प्रत्येक राशियों में क्रम से चर राशि से आरम्भ होता है और उनके स्वामी नक्षत्रेश होते हैं। शेष चक्र में देखिए।। २३-२५ ।।

उदाहरण— लग्न ९/१५/२२/३७ है। इसमें सिंह राशि यानि सूर्य भांशपति हुआ और नक्षत्रेश त्वष्टा हुए।

भांशचक्रम्—

सं.	स्वामी	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	अ.क.वि.
१	अश्वि.कु.मी.	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१ ।६ ।४०
२	यम	२	५	८	११	२	५	८	११	२	५	८	११	२ ।१३ ।२०
३	अग्नि	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३ ।२० ।०
४	ब्रह्मा	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४ ।२६ ।४०
५	चन्द्र	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	५ ।३३ ।२०
६	शंकर	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	६ ।४० ।०
७	अदिति	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	७ ।४६ ।४०
८	जीव	५	८	११	२	५	८	११	२	५	८	११	२	८ ।५३ ।२०
९	अहि	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	१० ।० ।०

इस चक्र का शेष आगे पृष्ठ में देखें।

सं.	स्वामी	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	अ.क.वि.
१०	पितर	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	११।६।४०
११	यम	८	११	२	५	८	११	२	५	८	११	२	५	१२।१३।२०
१२	अर्यमा	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	१३।२०।०
१३	अर्क	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१४।२६।४०
१४	त्वष्टा	११	२	५	८	११	२	५	८	११	२	५	८	१५।३३।२०
१५	वायु	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१६।४०।०
१६	शक्राग्नि	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१७।४६।२०
१७	मित्र	२	५	८	११	२	५	८	११	२	५	८	११	१८।५३।२०
१८	वासव	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	२०।०।०
१९	निर्ऋति	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	२१।६।४०
२०	उदक	५	८	११	२	५	८	११	२	५	८	११	२	२२।१३।२०
२१	विश्वेदे	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	२३।२०।०
२२	गोविंद	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	२४।२६।४०
२३	वसु	८	११	२	५	८	११	२	५	८	११	२	५	२५।३३।२०
२४	वरुण	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	२६।४०।०
२५	अजपात्	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	२७।४६।४०
२६	अहिर्बुध्न्य	११	२	५	८	११	२	५	८	११	२	५	८	२८।५३।२०
२७	पूषा	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	३०।०।०

अथ त्रिंशांशमाह—

त्रिंशांशेशाश्च विषमे कुजार्कीज्यज्ञभार्गवाः।
पञ्चपञ्चाष्टसप्ताक्षभागा व्यत्ययतः समे।।२६।।
वह्निः समीरशक्रौ च धनदो जलदस्तथा।
विषमेषु क्रमाज्ज्ञेया समराशौ विपर्ययम्।।२७।।

विषम राशि में भौम, शनि, गुरु, बुध और शुक्र का क्रम से ५,५,८,७,५ अंश और सम राशि में शुक्र, बुध, गुरु, शनि और भौम का क्रम से ५,७,८,५,५ अंश त्रिंशांश होता है। विषम राशि में क्रम से वह्नि, वायु, इन्द्र, धनद और जलद तथा सम राशि में जलद, धनद, इन्द्र, वायु और अग्नि अधिपति होते हैं।। २६-२७ ।।

उदाहरण— लग्न ९।१५।२२।३७ है। लग्न सम है अतः गुरु का त्रिंशांश हुआ और इन्द्र स्वामी हुए।

विषमे त्रिंशांशचक्रम्— समराशौ त्रिंशांशचक्रम्—

अं.	स्वामी	मे.	मि.	सि.	तु.	ध.	कुं.		वृ.	क.	क.	वृ.	म.	मी.	स्वामी
५	वह्नि	मं.	मं.	मं.	मं.	मं.	मं.	५	शु.	शु.	शु.	शु.	शु.	शु.	जलद
१०	वायु	श.	श.	श.	श.	श.	श.	१२	बु.	बु.	बु.	बु.	बु.	बु.	धनद
१८	इन्द्र	बृ.	बृ.	बृ.	बृ.	बृ.	बृ.	२०	बृ.	बृ.	बृ.	बृ.	बृ.	बृ.	इन्द्र
२५	धनद	बु.	बु.	बु.	बु.	बु.	बु.	२५	श.	श.	श.	श.	श.	श.	वायु
३०	जलद	शु.	शु.	शु.	शु.	शु.	शु.	३०	मं.	मं.	मं.	मं.	मं.	मं.	वह्नि

अथ खवेदांशमाह—

चत्वारिंशतिभागानामधिपा विषमे क्रियात्।
विष्णुश्चन्द्रो मरीचिश्च त्वष्टा धाता शिवो रविः।।२८।।
यमो यक्षेशगन्धर्वः कालो वरुण एव च।
समभे तुलतो ज्ञेयाः स्वस्वाधिपसमन्विताः।।२९।।

विषम राशि में मेष से और सम राशि में तुला राशि से ४०वाँ अंश आरम्भ होता है। क्रम से विष्णु, चन्द्र, मरीचि, त्वष्टा, धाता, शिव, रवि, यम, यक्षेश, गंधर्व, काल, वरुण यही स्वामी होते हैं।। २८-२९ ।।

उदाहरण— लग्न ९।१५।२२।३७ है। एक चालीसवाँ अंश ४५ कला का होता है। इस हिसाब से २१वाँ भाग मिथुन राशि बुध का अंश और यक्षेश स्वामी हुए।

खवेदांशचक्रम्—

सं.	स्वामी	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	अं.क.
१	विष्णु	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	० ।४५
२	चन्द्रः	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	१ ।३०
३	मरीचि	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	२ ।१५
४	त्वष्टा	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	३ ।०
५	धाता	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	३ ।४५
६	शिव	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	४ ।३०
७	रवि	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	५ ।१५
८	यम	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	६ ।०
९	यक्षेश	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	६ ।४५
१०	गंधर्व	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	७ ।३०
११	काल	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	८ ।१५
१२	वरुण	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	९ ।०
१३	विष्णु	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	९ ।४५

इस चक्र का शेष आगे पृष्ठ में देखें।

सं.	स्वामी	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	अं. क.
१४	चन्द्र	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	१०।३०
१५	मरीचि	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	११।१५
१६	त्वष्टा	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	१२।०
१७	धाता	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	१२।४५
१८	शिव	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	१३।३०
१९	रवि	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	१४।१५
२०	यम	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	१५।०
२१	यक्षेश	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	१५।४५
२२	गंधर्व	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१६।३०
२३	काल	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	१७।१५
२४	वरुण	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१८।०
२५	विष्णु	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१८।४५
२६	चन्द्र	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	१९।३०
२७	मरीचि	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	२०।१५
२८	त्वष्टा	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	२१।०
२९	धाता	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	२१।४५
३०	शिव	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	२२।३०
३१	रवि	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	२३।१५
३२	यम	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	२४।०
३३	यक्षेश	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	२४।४५
३४	गंधर्व	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	२५।३०
३५	काल	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	२६।१५
३६	वरुण	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	२७।०
३७	विष्णु	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	२७।४५
३८	चन्द्र	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२८।३०
३९	मरीचि	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	२९।१५
४०	त्वष्टा	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	३०।०

अथाक्षवेदांशमाह—

तथाक्षवेदभागानामधिपाश्चलभे क्रियात्।
स्थिरे सिंहाद्द्विस्वभावे चापाद्ब्रह्मेशकेशवाः।
ईशाच्युतसुरज्येष्ठविष्णुकेशाश्चराधिषु।।३०।।

चर राशि में मेष से, स्थिर राशि में सिंह से और द्विस्वभाव राशि में धन राशि से गणना करने से अक्षवेदांश के स्वामी होते हैं और चर, स्थिर,

द्विस्वभाव के क्रम से ब्रह्मा, शंकर, विष्णु; शंकर, विष्णु, ब्रह्मा; विष्णु, ब्रह्मा, शंकर ये स्वामी होते हैं।।३०।।

उदाहरण— लग्न ९।१५।२२।३७ है। ४० कला का एक भाग होता है, अतः २४वाँ मीन राशि अर्थात् गुरु का अक्षवेदांश हुआ और विष्णु स्वामी हुए।

अक्षवेदांशचक्रम्—

	ब्रह्मा	शं.	वि.	ब्र.	शं.	वि.	ब्र.	शं.	वि.	ब्र.	शं.	विष्णु	
	शंकर	वि.	ब्र.	शं.	वि.	ब्र.	शं.	वि.	ब्र.	शं.	वि.	ब्रह्मा	
	विष्णु	ब्र.	शं.	वि.	ब्र.	शं.	वि.	ब्र.	शं.	वि.	ब्र.	शंकर	
सं.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	अं.।क.
१	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	०।४०
२	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	१।२०
३	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	२।०
४	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	२।४०
५	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	३।२०
६	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	४।०
७	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	४।४०
८	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	५।२०
९	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	६।०
१०	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	६।४०
११	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	७।२०
१२	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	८।०
१३	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	८।४०
१४	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	९।२०
१५	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	१०।०
१६	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	१०।४०
१७	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	११।२०
१८	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	१२।०
१९	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	१२।४०
२०	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	१३।२०
२१	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	१४।०
२२	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१४।४०
२३	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	१५।२०
२४	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१६।०
२५	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१६।४०

इस चक्र का शेष आगे पृष्ठ में देखें।

	ब्रह्मा	शं.	वि.	ब्र.	शं.	वि.	ब्र.	शं.	वि.	ब्र.	शं.	विष्णु	
	शंकर	वि.	ब्र.	शं.	वि.	ब्र.	शं.	वि.	ब्र.	शं.	वि.	ब्रह्मा	
	विष्णु	ब्र.	शं.	वि.	ब्र.	शं.	वि.	ब्र.	शं.	वि.	ब्र.	शंकर	
सं.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	अं.।क.
२६	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	१७।२०
२७	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	१८।०
२८	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	१८।४०
२९	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	१९।२०
३०	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	२०।०
३१	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	२०।४०
३२	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	२१।२०
३३	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	२२।०
३४	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	२२।४०
३५	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	२३।२०
३६	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	२४।०
३७	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	२४।४०
३८	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२५।२०
३९	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	२६।०
४०	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	२६।४०
४१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	२७।२०
४२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	२८।०
४३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	२८।४०
४४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	२९।२०
४५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	३०।०

अथ षष्ट्यंशमाह—

घोरश्च राक्षसो देवः कुबेरो यक्षकिन्नरौ।

भ्रष्टः कुलघ्नो गरलो वह्निर्माया पुरीषकः।।३१।।

विषम राशि में १ घोर, २ राक्षस, ३ देव, ४ कुबेर, ५ यक्ष, ६ किन्नर, ७ भ्रष्ट, ८ कुलघ्न, ९ गरल, १० अग्नि, ११ माया, १२ यम(पुरीष)।।३१।।

अपाम्पतिर्मरुत्वांश्च कालः सर्पामृतेन्दुकाः।

मृदुः कोमलहेरम्बब्रह्मविष्णुमहेश्वराः।।३२।।

१३ वरुण, १४ इन्द्र, १५ काल, १६ सर्प, १७ अमृत, १८ चन्द्रमा, १९ मृदु, २० कोयल, २१ हेरम्ब, २२ ब्रह्मा, २३ विष्णु, २४ शिव।।३२।।

देवार्द्रौ कलिनाशश्च क्षितीशकमलाकरौ।

गुलिको मृत्युकालश्च दावाग्निर्घोरसंज्ञकः।।३३।।

२५ देव, २६ आर्द्र, २७ कलिनाश, २८ क्षितीश, २९ कमलाकर, ३० गुलिक, ३१ मृत्यु, ३२ काल, ३३ दावाग्नि, ३४ घोर।।३३।।

यमश्च कण्टकसुधाऽमृतौ पूर्णनिशाकरः।
विषदग्धकुलान्तश्च मुख्यो वंशक्षयस्तथा।।३४।।

३५ यम, ३६ कंटक, ३७ सुधा, ३८ अमृत, ३९ पूर्णचन्द्र, ४० विषदग्ध, ४१ कुलनाश, ४२ मुख्य, ४३ वंशक्षय।।३४।।

उत्पातकालसौम्याख्याः कोमलः शीतलाभिधः।
करालदंष्ट्रचन्द्रास्यौ प्रवीणः कालपावकः।।३५।।

४४ उत्पात, ४५ काल, ४६ सौम्य, ४७ कोमल, ४८ शीतल, ४९ करालदंष्ट्र, ५० इन्दुमुख, ५१ प्रवीण, ५२ कालाग्नि।।३५।।

दण्डभृन्निर्मलः सौम्यः क्रूरोऽतिशीतलोऽमृतः।
पयोधिं भ्रमणाख्यौ च चन्द्ररेखात्वयुग्मपौ।।३६।।

५३ दंडभृत्, ५४ निर्मल, ५५ सौम्य, ५६ क्रूर, ५७ अतिशीतल, ५८ अमृत, ५९ भ्रमण और ६० इन्दुरेखा।।३६।।

समे भे व्यत्ययाज्ज्ञेयाः षष्ठ्यंशाश्च प्रकीर्तिताः।
षष्ठ्यंशस्वामिनस्त्वोजे तदीशाद् व्यत्ययतः समे।।३७।।

विषम राशि में घोर आदि और सम राशि में चन्द्ररेखा आदि क्रम से षष्ठ्यंश के अधिपति होते हैं।।३७।।

शुभषष्ठ्यंशसंयुक्ता ग्रहाः शुभफलप्रदाः।
क्रूरषष्ठ्यंशसंयुक्ता नाशयन्ति खचारिणः।।३८।।

शुभग्रह के षष्ठ्यंश में ग्रह हो तो शुभफल देता है और क्रूर ग्रह के षष्ठ्यंश में हो तो नाश करता है।।३८।।

राशीन् विहाय खेटस्य द्विघ्नमंशाद्यमर्कहृत्।
शेषं सैकं च तद्राशिनाथ षष्ठ्यंशपाः स्मृताः।।३९।।

जिस ग्रह का षष्ठ्यंश देखना हो उसकी राशि को छोड़कर अंश, कला, विकला आदि को २ से गुणा कर गुणनफल में १२ से भाग देने पर जो शेष बचे उसमें १ जोड़कर जो संख्या हो उतनी ही संख्या वाली ग्रह की राशि से जो राशि हो उसके स्वामी षष्ठ्यंश के स्वामी होते हैं।।३९।।

उदाहरण– लग्न ९।१५।२२।३७ है। इसकी राशि को छोड़कर अंशादि को २ से गुणा करने से ३०।४५।१४ हुआ। इसमें १२ से भाग

देने पर शेष ६ बचा। इसमें १ और जोड़ देने से ७वाँ षष्ठ्यंश हुआ। मकर से ७वीं राशि कर्क के स्वामी चन्द्रमा षष्ठ्यंश के स्वामी हुए। दूना किये हुए अंश ३० में १ जोड़ देने से ३१वाँ सम राशि में कुलिक षष्ठ्यंश का अधिपति हुआ।

अथ षष्ठ्यंशचक्रम्—

सं.	स्वामी	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	स्वामी	अं.क.
१	घोर	१	२	३	४	५	६	७	८	[illegible]	१०	११	१२	इन्दुरेखा	०।३०
२	राक्षस	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	भ्रमण	१।०
३	देव	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	पयोधीश	१।३०
४	कुबेर	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	सुधा	२।०
५	यम	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	अ.शीतल	२।३०
६	किन्नर	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	क्रूर	३।०
७	भ्रष्ट	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	सौम्य	३।३०
८	कुलघ्न	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	निर्मल	४।०
९	गरल	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	दण्डायुध	४।३०
१०	अग्नि	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	कालाग्नि	५।०
११	माया	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	प्रवीण	५।४०
१२	पुरीष	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	इन्दुमुखी	६।०
१३	अपांपति	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	दंष्ट्राकराल	६।३०
१४	मरुत्वान्	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	शीतल	७।०
१५	काल	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	कोमल	७।३०
१६	अहि	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	सौम्य	८।०
१७	अमृत	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	कालरूप	८।३०
१८	चन्द्र	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	उत्पात	९।०
१९	मृदु	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	वंशक्षय	९।३०
२०	कोमल	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	कुलनाश	१०।०
२१	हेरम्ब	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	विषदग्ध	१०।३०
२२	ब्रह्म	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	पूर्णचंद्र	११।०
२३	विष्णु	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	अमृत	११।३०
२४	महेश्वर	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	सुधा	१२।०
२५	देव	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	कंटक	१२।३०
२६	आर्द्र	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	यम	१३।०
२७	कलिनाश	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	घोर	१३।३०

इस चक्र का शेष आगे पेज पर देखें।

सं.	स्वामी	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	स्वामी	अं.क.
२८	क्षितीश्वर	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	दावाग्नि	१४ ।०
२९	कमलाकर	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	काल	१४ ।३०
३०	गुलिक	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	मृत्यु	१५ ।०
३१	मृत्यु	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	कुलिक	१५ ।३०
३२	काल	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	कमलाकर	१६ ।०
३३	दावाग्नि	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	क्षितीश्वर	१६ ।३०
३४	घोर	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	कलिनाश	१७ ।०
३५	यम	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	आर्द्र	१७ ।३०
३६	कण्टक	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	देव	१८ ।०
३७	सुधा	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	महेश्वर	१८ ।३०
३८	अमृत	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	विष्णु	१९ ।०
३९	पूर्णचन्द्र	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	ब्रह्मा	१९ ।३०
४०	विषदग्ध	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	हेरम्ब	२० ।०
४१	कुलनाश	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	कोमल	२० ।३०
४२	वंशक्षय	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	मृदु	२१ ।०
४३	उत्पात	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	चन्द्र	२१ ।३०
४४	काल	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	अमृत	२२ ।०
४५	सौम्य	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	अहिभाग	२२ ।३०
४६	कोमल	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	काल	२३ ।०
४७	शीतल	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	मरूत्वान्	२३ ।३०
४८	दंष्ट्राकरा.	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	अपांपति	२४ ।०
४९	इन्दुमुख	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	पुरीष	२४ ।३०
५०	प्रवीण	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	माया	२५ ।०
५१	कालाग्नि	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	अग्नि	२५ ।३०
५२	दण्डायुध	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	गरल	२६ ।०
५३	निर्मल	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	कुलघ्न	२६ ।३०
५४	सौम्य	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	भ्रष्ट	२७ ।०
५५	क्रूर	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	किन्नर	२७ ।३०
५६	अतिशी..	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	यक्ष	२८ ।०
५७	सुधा	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	कुबेर	२८. ।३०
५८	पयोधीश	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	देव	२९ ।०
५९	भ्रमण	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	राक्षस	२९ ।३०
६०	इन्दुरेखा	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	घोर	३० ।०

अथ वर्गभेदानाह—

वर्गभेदानहं वक्ष्ये मैत्रेय त्वं विधारय।
षड्वर्गाः सप्तवर्गाश्च दिग्वर्गा नृपवर्गगाः।।४०।।

हे मैत्रेय ! मैं वर्गभेद को कहता हूँ, उसे तुम सुनो। षड्वर्ग, साप्तावर्ग, दशवर्ग और षोडश वर्ग होते हैं।।४०।।

भवन्ति वर्गसंयागे षड्वर्गे किंशुकादयः।
द्वाभ्यां किंशुकनामा च त्रिभिर्व्यञ्जनमुच्यते।।४१।।

षड्वर्ग में दो-तीन आदि वर्गों के संयोग से किंशुक आदि संज्ञायें होती हैं। यथा दो वर्ग में ग्रह हो तो किंशुक, तीन के संयोग से व्यंजन।।४१।।

चतुर्भिश्चामराख्यं च छत्रं पञ्चभिरेव च।
षड्भिः कुण्डलयोगः स्यान्मुकुटाख्यं च सप्तभिः।।४२।।

चार के संयोग से चामर, पाँच के संयोग से छत्र और छः वर्गो के संयोग से कुंडल नाम होता है। सप्तवर्ग में छः वर्ग तक तो पूर्वोक्त ही होती हैं, किन्तु सात वर्ग के संयोग से मुकुट होता है।।४२।।

सप्तवर्गेऽथ दिग्वर्गे पारिजातादिसंज्ञकाः।
पारिजातं भवेद्द्वाभ्यामुत्तमं त्रिभिरुच्यते।।४३।।

दशवर्ग में दो वर्ग के संयोग से पारिजात, तीन वर्ग के संयोग से उत्तम।।४३।।

चतुर्भिर्गोपुराख्यं स्याच्छरैः सिंहासनं तथा।
पारावतं भवेत्षड्भिर्देवलोकं तु सप्तभिः।।४४।।

चार वर्ग के संयोग से गोपुर, पाँच वर्ग के संयोग से सिंहासन, छः वर्गो के संयोग से पारावत, सात वर्ग के संयोग से देवलोक।।४४।।

वसुभिर्ब्रह्मलोकाख्यं नवभिः शक्रवाहनम्।
दिग्भिः श्रीधामयोगं स्यादथ षोडश वर्गके।।४५।।

आठ वर्ग के संयोग से ब्रह्मलोक, ९ वर्ग के संयोग से शक्रवाहन और १० वर्ग के संयोग से श्रीधाम योग होता है।।४५।।

भेदकं तु भवेद्द्वाभ्यां त्रिभिः स्यात्कुसुमाख्यकम्।
चतुर्भिर्नागपुष्पं स्यात्पञ्चभिः कन्दुकाह्वयम्।।४६।।

षोडश वर्ग में २ वर्ग संयोग से भेदक, ३ वर्ग के संयोग से कुसुम, चार वर्ग के संयोग से नागपुष्प, पाँच वर्ग के संयोग से कंदुक।।४६।।

केरलाख्यं भवेत्षड्भिः सप्तभिः कल्पवृक्षकम्।
अष्टभिश्चन्दनवनं नवभिः पूर्णचन्द्रकम्।।४७।।

६ वर्ग के संयोग से केरल, ७ वर्ग के संयोग से कल्पवृक्ष, आठ वर्ग के संयोग से चन्द्रवन, ९ वर्ग के संयोग से पूर्णचन्द्र।।४७।।

दिग्भिरुच्चैःश्रवा नाम रुद्रैर्धन्वन्तरिर्भवेत्।
सूर्यकान्तं भवेत्सूर्यैर्विश्वैः स्याद्विद्रुमाह्वयम्।।४८।।

दश वर्ग के संयोग से उच्चैःश्रवा, ग्यारह वर्ग के संयोग से धन्वन्तरि, बारह वर्ग के संयोग से सूर्यकान्त, तेरह वर्ग के संयोग से विद्रुम।।४८।।

शक्रसिंहासनं शक्रैर्गोलोकं तिथिभिर्भवेत्।
भूपैः श्रीवल्लभाख्यं स्याद्वर्गभेदैरुदाहृता।।४९।।

चौदह वर्ग के संयोग से सिंहासन, पंद्रह वर्ग के संयोग से गोलोक और सोलह वर्ग के संयोग से श्रीवल्लभ नाम होता है।।४९।।

स्वोच्चमूलत्रिकोणस्वभवनाधिपतेः तथा।
स्वारूढात्केन्द्रनाथानां वर्गा ग्राह्या सुधीमता।।५०।।

जो ग्रह अपने उच्चराशि में, अपने मूलत्रिकोण राशि में, अपने राशि में और आरूढ़ लग्न से केन्द्रपतियों का वर्ग लेना चाहिये।।५०।।

अस्तंगता ग्रहजिता नीचगा दुर्बलास्तथा।
शयनादिगतादुस्था उत्पन्ना योगनाशकाः।।५१।।

जो अस्त हों, यद्ध में पराजित हों, अपने नीचराशि में हों, दुर्बल हों, शयनादि दुष्ट अवस्था में हों तो उनका वर्ग अशुभ होता है।।५१।।

विशेष— गृह, होरा, द्रेष्काण, नवमांश, द्वादशांश और त्रिंशांशक को षड्वर्ग कहते हैं। इनके साथ सप्तमांश को मिला देने से सप्तवर्ग होता है और इसमें दशमांश, षोडशांश, षष्ठांश को ले लेने से दशवर्ग होता है, शेष षोडशवर्ग होते हैं।

किंशुकादि सप्तवर्गजसंज्ञाबोधकचक्रम्—

२	३	४	५	६	७
किंशुक	व्यंजन	चामर	छत्र	कुंडल	मुकुट

पारिजातादि दशवर्गजसंज्ञाबोधकचक्रम्—

२	३	४	५	६	७	८	९	१०
पारिजात	उत्तमम्	गोपुरम्	सिंहासनम्	पारावतम्	देवलोक	ब्रह्मलोक	शक्रवाहनम्	श्रीधाम

षोडशवर्गजसंज्ञाबोधकचक्रम्।

२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१२	१३	१४	१५
भेदकम्	कुसुमाख्यम्	नागपुष्पम्	कंदुकाख्यम्	केरलाख्यम्	कल्पवृक्षम्	चन्दनवनम्	पूर्णचन्द्रकम्	उच्चैःश्रवा	धन्वन्तरिः	सूर्यकांतम्	विद्रुमाख्यम्	शक्रसिंहासनम्	गोलोकम्	श्रीवत्साख्यम्

उदाहरण— पूर्वोक्त उदाहरणों में लग्न सप्तवर्गों में २ वर्ग में है, अतः किंशुक संज्ञा हुई। दशवर्ग के अनुसार २ वर्ग में है, अतः पारिजात संज्ञा में है और षोडशवर्ग के अनुसार ४ वर्ग में है, अतः नागपुष्प संज्ञा हुई। इसी प्रकार प्रत्येक ग्रहों की संज्ञायें बनानी चाहिए।

इति पाराशरहोरायां सुबोधिन्यां पञ्चमः।

अथ षोडशवर्गविवेकाध्यायः

अथ षोडशवर्गेषु चिन्ता लग्नं वदाम्यहम्।
लग्नं देहस्य विज्ञानं होरायां सम्पदादिकम्।।१।।

अब मैं षोडश वर्गों से विचारणीय विषयों को कह रहा हूँ। लग्न से शरीर सम्बंधी शुभ-अशुभ का विचार करना चाहिए, होरा से द्रव्य का।।१।।

द्रेष्काणे भ्रातृजं सौख्यं तुर्यांशे भाग्यचिन्तनम्।
पुत्रपौत्रादिकानां वै चिन्तनं सप्तमांशके।।२।।

द्रेष्काण से भाई का, चतुर्थांश से भाग्य का, सप्तमांश से पुत्र-पौत्रादि का।।२।।

नवमांशे कलत्राणां दशमांशे महत्फलम्।
द्वादशांशे तथा पित्रोश्चिन्तनं षोडशांशके।।३।।

नवमांश से स्त्री का, दशमांश से बड़े कार्यों का (राजसम्बंधी), द्वादशांश से माता पिता का, षोडशांश से वाहन के सुख-दुःख का।।३।।

सुखासुखस्य विज्ञानं वाहनानां तथैव च।
उपासनाया विज्ञानं साध्यं विंशतिभागके।।४।।

विंशांश से उपासना के विज्ञान का विचार करना चाहिए।।४।।

विद्याया वेदवाह्वंशे भांशे चैव बलाऽबलम्।
त्रिंशांशके रिष्टफलं खवेदांशे शुभाशुभम्।।५।।

चतुर्विंशांश से विद्या का, सप्तविंशांश से बलाबल का, त्रिंशांश से अरिष्ट का, खवेदांश से शुभ-अशुभ का।।५।।

अक्षवेदांशभागे च षष्ठ्यंशेऽखिलमीक्षयेत्।
यत्र कुत्रापि सम्प्राप्तः क्रूरषष्ठ्यंशकाधिपः।।६।।

अक्षवेदांश और षष्ठ्यंश से सभी वस्तुओं का विचार करना चाहिए। जहाँ पर (जिस भाव में) क्रूरग्रह षष्ठ्यंशपति होता है।।६।।

तत्र नाशो न सन्देहो प्राचीनानां वचो यथा।
यत्र कुत्रापि सम्प्राप्तः कालांशाधिपतिः शुभः।।७।।
तत्र वृद्धिश्च पुष्टिश्च प्राचीनानां वचो यथा।
इति षोडशवर्गाणां भेदास्ते प्रतिपादिताः।।८।।

उस भाव के फलों की हानि होती है। जिस किसी भाव में शुभग्रह षष्ठ्यंशपति होता है वहाँ उस भाव संबंधी फलों की वृद्धि होती है। इस प्रकार सोलह ग्रहों के भेद को मैंने कहा।।७-८।।

अथ विंशोपकबलमाह—

उदयादिषु भावेषु खेटस्य भवनेषु वा।
वर्गविश्वाबलं वीक्ष्य ब्रूयात्तेषां शुभाशुभम्।।९।।

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि वर्गविश्वाबलं द्विज।
यस्य विज्ञानमात्रेण विपाकं दृष्टिगोचरम्।।१०।।

लग्न आदि भावों का और ग्रहों के राश्यादि से वर्गविश्वाबल को देखकर उनके शुभ-अशुभ फलों को कहना चाहिए। अब मैं वर्ग विश्वाबल कह रहा हूँ, जिसके ज्ञानमात्र से फल साक्षात् दिखाई देता है।।९-१०।।

गृहं विंशोपकं वीक्ष्य सूर्यादीनां खचारिणाम्।
स्वगृहोच्चे बलं पूर्णं शून्यं तत्सप्तमस्थिते।।११।।

भावों की राशियों का और सूर्य आदि ग्रहों के विंशोपक बल को देखना चाहिए। अपने गृह उच्च में पूर्ण बल तथा नीच में शून्य बल तथा मध्य में अनुपात से बल ले आना चाहिए।।११।।

ग्रहस्थितिवशाज्ज्ञेयं द्विराश्याधिपतिस्तथा।
मध्येऽनुपाततो ज्ञेया ओजयुग्मर्क्षभेदतः।।१२।।

ग्रहों की स्थितिवश, दो राशियों के अधिपति तथा विषम समराशि के स्थितिवश से बल ले आना चाहिए।।१२।।

सूर्यः होराफलं दद्युर्जीवार्कवसुधात्मजाः।
चन्द्रास्फुजिदर्कपुत्राश्चन्द्रहोराफलप्रदाः।।१३।।

होरावर्ग केवल रवि-चन्द्रमा का ही होता है, अतः शेष ग्रहों के फल विचार के लिए विशेष कह रहे हैं। गुरु, सूर्य, भौम ये सूर्य के होराफल और चन्द्रमा, शुक्र, शनि ये चन्द्र के होरा का फल देते हैं।।१३।।

फलद्वयं बुधो दद्यात्समे चान्द्रं तदन्यके।
रवेः फलं स्वहोरादौ फलहीनं विरामके।।१४।।

बुध दोनों के होरा का फल देता है। समराशि में चन्द्र के होरा का फल और विषम राशि में सूर्य के होरा का फल होता है। रवि के होरा आदि में पूर्ण फल, अन्त में शून्य फल होता है।।१४।।

मध्येऽनुपातात्सर्वत्र द्रेष्काणेऽपि विचिन्तयेत्।
गृहवत्तुर्यभागेऽपि नवांशादावपि स्वयम्।।१५।।

मध्य में सर्वत्र अनुपात से फल लाना चाहिए। इसी प्रकार द्रेष्काण आदि से भी फल लाना चाहिए। गृह के ही समान चतुर्थांश में तथा नवांश आदि में भी फल समझना चाहिए।।१५।।

सूर्यः कुजफलं धत्ते भार्गवस्य निशापतिः।
त्रिंशांशके विचिन्त्येवमत्रापि गृहवत्स्मृतम्।।१६।।

त्रिंशांश में सूर्य भौम का और चन्द्रमा शुक्र का फल देता है। इसमें गृह के समान ही फल होता है।।१६।।

अथ षट्-सप्त-वर्गाणां विंशोपकमाह—

लग्नहोरादृकाणाङ्कभागाः सूर्यांशका इति।
त्रिंशांशकाश्च षड्वर्गास्तेषां विंशोपकाः क्रमात्।।१७।।

लग्न (गृह), होरा, द्रेष्काण, नवमांश, द्वादशांश और त्रिंशांश ये ही षड्वर्ग कहे जाते हैं।।१७।।

रसनेत्राब्धिपञ्चाश्विभूमयः सप्तवर्गके।
स्थूलं फलं च संस्थाप्य तत्सूक्ष्मं च ततस्ततः।।१८।।

इनका विंशोपक बल क्रम से ६, २, ४, ५, २, १ है। यह स्थूल है, सूक्ष्म के लिए अनुपात करना चाहिए।।१८।।

स सप्तमांशकं तत्र विश्वङ्का पञ्चलोचनम्।
त्रयं सार्धद्वयं सार्धवेदं द्वौराशिनायकाः।।१९।।

ये ही सप्तमांश के साथ मिलकर सप्तवर्ग कहे जाते हैं। इसका विंशोपक बल क्रम से ५, २, ३, २$\frac{१}{२}$, ४$\frac{१}{२}$, २, २, १ है।।१९।।

अथ दशवर्गाणां विंशोपकमाह—

दशवर्गादिगंशाख्या कलांशाः षष्ठिनायकाः।
त्रयं क्षेत्रस्य विज्ञेया पञ्च षष्ठ्यंशकस्य च।।२०।।

पूर्वोक्त सप्तवर्ग में दशमांश, षोडशांश, षष्ठ्यंश को मिला देने से दशवर्ग होता है। इसमें गृह का ३, षष्ठ्यंशका ५ और शेष वर्गों का डेढ़ (१$\frac{१}{२}$) विंशोपक बल होता है।।२०।।

अथ षोडशवर्गाणां विंशोपकमाह—

सार्धैकभागाः शेषाणां विश्वङ्काः परिकीर्त्तिताः।
अथ वक्ष्ये विशेषेण विश्वङ्का मम सम्मतम्।।२१।।

अब मैं षोडश वर्गों का विशेषतः विश्वाबल को कह रहा हूँ।।२१।।

क्रमात् षोडश वर्गाणां क्षेत्रादीनां पृथक् पृथक्।
होरांशभागदृक्काणकुचन्द्रशशिनः क्रमात्।।२२।।

होरा का १, अंशभाग (त्रिंशांश) का १, द्रेष्काण का १।।२२।।

कलांशस्य द्वयं ज्ञेय त्रयं नन्दांशकस्य च।
क्षेत्रे सार्धं च त्रितयं चतुः षष्ठ्यंशकस्य हि।।२३।।

षोडशांश का २, नवमांश का ३, गृह का १$\frac{1}{2}$, षष्ठ्यंश का ४।।२३।।

अर्धमर्धं तु शेषाणां ह्येतत् स्वीयमुदाहृतम्।
पूर्णं विश्वाबलं विंशो धृतिः स्यादधिमित्रके।।२४।।

और शेष वर्गों का आधा आधा ($\frac{1}{2}$) विंशोपक बल होता है। यह विंशोपक बल अपने वर्ग में पूर्ण २० होता है। अधिमित्र के वर्ग में १८।।२४।।

मित्रे पञ्चदश प्रोक्तं समे दश प्रकीर्त्तितम्।
शत्रौ सप्ताधिशत्रौ च पञ्च विश्वाबलं भवेत्।।२५।।

मित्र के वर्ग में १५, सम के वर्ग में १०, शत्रु के वर्ग में ७ और अधिशत्रु के वर्ग में ५ विंशोपक बल होता है।।२५।।

अथ विंशोपकबलस्य स्पष्टीकरणम्—

वर्गविश्वास्वविश्वघ्नाः पुनर्विंशतिभाजिताः।
विश्वफलोपयोग्यं तत्पञ्चोनं फलदो न हि।।२६।।

वर्ग के विश्वा को उसी में गुणा कर उसमें २० का भाग देने से स्पष्ट विंशोपक फल कहने योग्य होता है। वह ५ से कम हो तो फल कहने योग्य नहीं होता है।।२६।।

तदूर्ध्वं स्वल्पफलदं दशोर्ध्वं मध्यमं स्मृतम्।
तिथ्यूर्ध्वं पूर्णफलदं बोध्यं सर्वं खचारिणाम्।।२७।।

इसके ऊपर १० तक अल्प फल देने वाला, दश के ऊपर १५ तक मध्यम फल, इसके ऊपर २० तक पूर्ण फल देने वाला होता है। ऐसा सभी ग्रहों का समझना चाहिए ।।२७।।

अथ फलकथने विशेषः—

अथान्यदपि वक्ष्येऽहं मैत्रेय! त्वं विधारय।
खेटाः पूर्णफलं दद्युः सूर्यात्सप्तमके स्थिताः।।२८।।

हे मैत्रेय! और भी प्रकारों को कहता हूँ, तुम सुनो! सूर्य से सातवें भाव में ग्रह हो तो पूर्ण फल देता है।।२८।।

फलाभावं विजानीयात्समे सूर्यनभश्चरे।
मध्येऽनुपातात्सर्वत्र ह्युदयास्तविंशोपकाः।।२९।।

सूर्य के समान ही राशि-अंशादि हो तो शून्य फल देता है और इसके मध्य में हो तो अनुपात से फल समझना चाहिए। ग्रहों के उदय-अस्त का भी विचार कर लेना चाहिए।।२९।।

वर्गविश्वसमं ज्ञेयं फलमस्य द्विजर्षभ।
यत्र यत्र फलं बद्ध्वा तत्फलं परिकीर्त्तितम्।।३०।।

हे द्विजश्रेष्ठ! वर्गविंशोपक के अनुसार जो ग्रह जैसा फल देता हो उसके अनुसार ही उसके फल की कल्पना करें।।३०।।

वर्गविश्वाफलं चादावुदयास्तमः परम्।
पूर्णं पूर्णेति पूर्वं स्यात् सर्वं दैवं विचिन्तयेत्।।३१।।

पूर्ण, मध्यम हीन और अल्प में दो-दो भेद हैं। श्लोक २६-२७ के अनुसार प्रत्येक पूर्ण आदि फलों में ५ का भेद है। अतः १५ से १७।। तक पूर्ण १७।। से २० तक अतिपूर्ण, १० से १२ तक मध्यम, १२।। से १५ तक अति मध्यम।।३१।।

हीनं हीनेऽतिहीनं स्यात्स्वल्पाल्पेऽत्यल्पकं स्मृतम्।
मध्यं मध्येऽतिमध्यं स्याद्यावत्तस्य दशास्थितिः।।३२।।

३।। से ५ तक हीन, ० से २।। तक अतिहीन, ७।। से १० तक स्वल्प और ५ से ७।। तक अतिस्वल्प होता है। इस प्रकार विंशोपक बल के अनुसार ग्रहों की दशा का फल समझना चाहिए।।३२।।

अथ भावानां केन्द्रादिसंज्ञामाह—

अथान्यदपि वक्ष्यामि मैत्रेय! शृणु सुव्रत!
लग्नतुर्यास्तवियतां केन्द्रसंज्ञा विशेषतः।।३३।।

हे मैत्रेय! सुव्रत! लग्न, चतुर्थ, सप्तम और दशम भावों की केन्द्र संज्ञा है।।३३।।

द्विपञ्चरन्ध्रलाभाख्यं ज्ञेयं पणफराभिधम्।
त्रिषड्भाग्यंव्ययादीनामापोक्लिममिति द्विज।।३४।।

दूसरे, पाँचवें, आठवें और ग्यारहवें भाव की पणफर संज्ञा है। तीसरे, छठें, नवें और बारहवें भाव की आपोक्लिम संज्ञा है।।३४।।

लग्नात्पञ्चमभाग्यस्य कोणसंज्ञा विधीयते।
षष्ठाष्टव्ययभावानां दुःसंज्ञास्त्रिकसंज्ञकाः।।३५।।

लग्न, पंचम और नवम भाव को कोण कहते हैं। छठें, आठवें और बारहवें भाव को दुष्ट स्थान और त्रिक कहते हैं।।३५।।

चतुरस्रं तुर्यरन्ध्रं कथयन्ति द्विजोत्तम।
स्वस्थादुपचयर्क्षाणि त्रिषडायां वराणि हि।।३६।।

चौथे और आठवें को चतुरस्र कहते हैं। अपने स्थान से तीसरे, छठें, ग्यारहवें और दशम भाव को उपचय कहते हैं।।३६।।

अथ तन्वादिभावानां संज्ञामाह—

तनुर्धनं च सहजो बन्धुपुत्रालयस्तथा।
युवती रन्ध्रधर्माख्यं कर्मलाभव्ययाः क्रमात्।।३७।।

तनु, धन, सहज, बन्धु, पुत्र, अरि, युवती (जाया), रंध्र, धर्म, क़र्म, लाभ और व्यय ये क्रम से बारह भावों के नाम हैं।।३७।।

सङ्क्षेपेणैतदुदितमन्यद्बुध्यानुसारतः।
किञ्चिद्विशेषं वक्ष्यामि यथा ब्रह्ममुखाच्छ्रुतम्।।३८।।

यह संक्षेप से कहा है, अन्य बुद्धि के अनुसार जानना। जैसा मैंने ब्रह्माजी के मुख से सुना है उन विशेषों को कह रहा हूँ।।३८।।

नवमे चं पितुर्ज्ञानं सूर्याच्च नवमेऽथवा।
यत्किञ्चिद्दशमे लाभे तत्सूर्याद्दशमे शिवे।।३९।।

लग्न से नवम स्थान में पिता का विचार किया जाता है। उसे सूर्य से नवम में भी करना चाहिए। इसी प्रकार लग्न से १०वें और ग्यारहवें में जो विचार किया जाता हे वही सूर्य से १०।११ भावों में भी करना चाहिए।।३९।।

तुर्ये तनौ धने लाभे भाग्ये यच्चिन्तनं च तत्।
चन्द्रात्तुर्ये तनौ लाभे भाग्ये तच्चिन्तयेद्ध्रुवम्।।४०।।

लग्न से चौथे, दूसरे, ग्यारहवें और भाग्य में जो फल विचार किये जाते हैं वही चन्द्रमा से भी उन्हीं चौथे, दूसरे, ग्यारहवें और भाग्य भावों में करने चाहिए।।४०।।

लग्नाद्दुश्चिक्यभवने तत्कुजाद्विक्रमे स्थितात्।
विचार्यं षष्ठभावस्य बुधात्षष्ठे विचिन्तयेत्।।४१।।

लग्न से तीसरे भाव में जो विचार होता है उसे भौम से तीसरे भाव में भी विचारना चाहिए। लग्न से छठें भाव में जो विचार होता है वही बुध से छठें भाव में भी होता है।।४१।।

पञ्चमस्य गुरोः पुत्रे जायायाः सप्तमे भृगोः।
अष्टमस्य व्ययस्यापि मन्दान्मृत्यौ व्यये तथा।।४२।।

गुरु से पाँचवें भाव में पुत्र का और शुक्र से सातवें भाव में स्त्री का, शनि से आंठवें और बारहवें भाव में उन भावों का विचार करना चाहिए।।४२।।

यद्भावाद्यत्फलं चिन्त्यं तदीशात्तत्फलं विदुः।
ज्ञेयं तस्य फलं तद्धि तत्तच्चिन्त्यं शुभाशुभम्।।४३।।

जिन-जिन भावों का विचार करना हो वह उन-उन भावों के स्वामियों से भी करना चाहिए।।४३।।

इति बृहत्पाराशरहोरायाः पूर्वखण्डे सुबोधिन्यां राशिस्वभावषोडश-वर्गादिकथनं तृतीयोऽध्यायः।।३।।

अथ राशिदृष्टिभेदाध्यायः

मेषादीनां च राशीनां द्वादशानां पृथक् पृथक्।
दृष्टिभेदं प्रवक्ष्यामि शृणु त्वं द्विजसत्तम।।१।।

हे द्विजसत्तम! मैं मेषादि १२ राशियों के दृष्टिभेद को पृथक्-पृथक् कह रहा हूँ उसे सुनो।।१।।

चरः स्थिरान्पश्यतिस्म स्थिरः पश्यति वै चरान्।
उभयानुभयं विप्र पश्यतीत्ययमागमः।।२।।

चर राशियाँ स्थिर राशियों को, स्थिर राशियाँ चर राशियों को और द्विस्वभाव राशियों को देखती हैं, यह आगम है।।२।।

समीपराशिं सन्त्यक्त्वा राशींस्त्रीननुपश्यति।
सर्वोदाहरणं वक्ष्ये शृणु त्वं द्विजसप्तम।।३।।

इनमें विशेषता यह है कि समीप की राशियों को छोड़कर तीन-तीन राशियों को सभी राशियाँ देखती हैं। इनका उदाहरण मैं कह रहा हूँ।।३।।

मेषो वृषं परित्यज्य सिंहालिघटकं तथा।
अनयैव क्रमेणैव पश्यतिस्म द्विजोत्तम।।४।।

मेष राशि वृष राशि को छोड़कर सिंह, वृश्चिक, कुम्भ राशि को देखती है। इसी प्रकार क्रम से आगे की राशियाँ भी देखती हैं।।४।।

कर्कः सिंहं परित्यज्य वृश्चिकं च घटं वृषम्।
तुलापि वृश्चिकं त्यक्त्वा कुम्भं सिंहं तथा वृषम्।।५।।

कर्क राशि सिंह को छोड़कर वृश्चिक, कुंभ और वृष को; तुला राशि वृश्चिक को छोड़कर कुंभ, सिंह और वृष को।।५।।

नक्रो घटं परित्यज्य मेषं कर्कं तुलां द्विज।
सिंहः कर्कं परित्यज्य नक्रं मेषं तुलां द्विज।।६।।

कर्क राशि सिंह को छोड़कर वृश्चिक, कुंभ, वृष को, मकर राशि कुंभ राशि को छोड़कर मेष, कर्क, तुला को।।६।।

वृश्चिकस्तु तुलां त्यक्त्वा कर्कं मेषं मृगं तथा।
कुम्भश्च मकरं त्यक्त्वा मेषं कर्कं तुलां द्विज।।७।।

सिंह राशि कर्क राशि को छोड़कर मकर, मेष, तुला को; वृश्चिक राशि तुला को छोड़कर कर्क, मेष, मकर को; कुंभ राशि मकर राशि को छोड़कर मेष, कर्क, तुला को।।७।।

युग्मः कन्याधनुर्मीनान् पश्यतीति द्विजोत्तम।
कन्या धनुर्मीनयुग्मं पश्यत्येवं न संशयः।।८।।

मिथुन राशि कन्या, धन, मीन को; कन्या राशि धन, मीन, मिथुन को।।८।।

धनुर्झषयुग्मकन्याः पश्यति द्विजसत्तम।
मीनो युग्माङ्गको दण्डान् पश्यति सुमते द्विज।।९।।

धन राशि मीन, मिथुन, कन्या को और मीन राशि मिथुन, कन्या और धन राशि को देखती है।।९।।

सूर्यादयः क्रमेणैव पश्यन्ति च परस्परम्।
राशित्रयं त्रयं विप्र सर्वराशिगता ग्रहाः।।१०।।

हे विप्र! इसी प्रकार सूर्य आदि ग्रह भी तीन-तीन राशियों के क्रम से सभी राशियों को देखते हैं।।१०।।

चरेषु संस्थिताः खेटाः पश्यन्ति चरसंस्थितान्।
स्थिरेषु संस्थिताः खेटाः पश्यन्ति चरसंस्थितान्।।११।।

उभयस्थस्तु भान्वादिः पश्यन्त्युभयसंस्थितान्।
निकटस्थं विना खेटा निरीक्ष्यन्ते द्विजोत्तम।।१२।।

चर राशि पर बैठा हुआ ग्रह स्थिर राशि पर बैठे हुए ग्रह को, स्थिर राशि पर बैठा हुआ ग्रह चर राशि पर बैठे हुए ग्रह को और द्विस्वभाव राशि पर बैठा हुआ ग्रह द्विस्वभाव राशि पर बैठे हुए ग्रह को देखता है, किन्तु निकटस्थ राशि को छोड़कर।।११-१२।।

दृष्टिचक्रमाह—

चक्रन्यासमहं वक्ष्ये यथावद्ब्रह्मणोदितम्।
यस्य विज्ञानमात्रेण दृष्टिभेदः प्रकाश्यते।।१३।।

जैसा ब्रह्माजी ने कहा है वैसा ही मैं दृष्टिचक्र को कह रहा हूँ, जिसके ज्ञान लेने से दृष्टिभेद समझ में आ जाता है।।१३।।

पूर्वे मेषवृषौ लेख्यौ कर्कसिंहौ च दक्षिणे।
तुलालिवारुणे विप्र नक्रकुम्भे तथोत्तरे।।१४।।

एक वर्गाकार चक्र बनाकर पूर्व आदि दिशाओं की कल्पना कर पूर्व दिशा में मेष-वृष, दक्षिण में कर्क-सिंह को, तुला-वृश्चिक को पश्चिम में, मकर-कुंभ को उत्तर में।।१४।।

अग्निकोणे तु मिथुनं नैर्ऋत्यामङ्गनां द्विज।
वायव्यां धनुषं लेख्यमीशान्यां च झषं लिखेद्।।१५।।

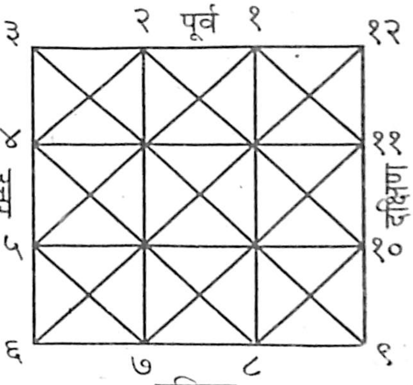
मिथुन को अग्निकोण में, कन्या को नैर्ऋत्य कोण में, वायव्य कोण में धन को और ईशान्य कोण में मीन को लिखे।।१५।।

चतुरस्रं च विन्यासं ज्ञायते द्विजसत्तम।
वृत्ताकारं विशेषेण ब्रह्मणा चोदितं पुरा।।१६।।

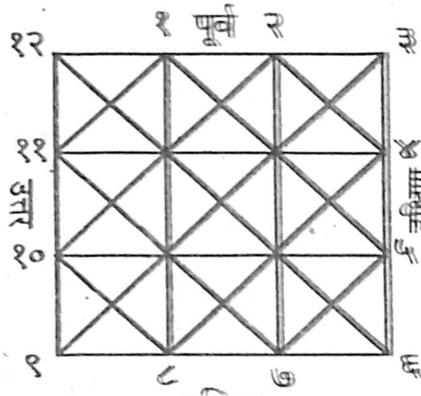
ब्रह्माजी ने विशेष कर इस चक्र को वृत्ताकार ही कहा है।।१६।।

विशेष— १६वें श्लोक के अनुसार स्पष्ट है कि राशियों की सव्यगणना ही ब्रह्मोदित है तथापि व्यवहार में ऐसा नहीं है, अतः व्यवहार के अनुकूल मीनान्त से अपसव्य गणना ही चक्र में लिखा गया है। ऊपर के १४-१५ श्लोक सव्य गणना के अनुसार ही है। शेष चक्र से स्पष्ट है।

अपसव्यगणना



सव्यगणना



इति राशिदृष्टिभेदम्।

अथ ग्रहाणां दृष्टिचक्रमाह—

होराशास्त्रे मित्रदृष्टिः खेटानां च परस्परम्।
त्रिदशे च त्रिकोणे च चतुरस्रे च सप्तमे।।१७।।

होराशास्त्र में ग्रहों की भिन्न-भिन्न दृष्टियाँ कहीं गई है, वो इस प्रकार हैं॥ ग्रह अपने स्थान से ३।१०, ९।५, ४।८।७ स्थान को देखते हैं॥।१७॥।

शनिर्देवगुरुर्भौमः परे च वीक्षणेऽधिकाः।
पदार्धं त्रिपदं पूर्णं वदन्ति गणकोत्तमाः।।१८।।
शनिपादं त्रिकोणेषु चतुरस्रे द्विपादकम्।
त्रिपादं सप्तमे विप्र त्रिदशे पूर्णमेव हि।।१९।।

किन्तु शनि ९।५ स्थान को १ चरण से, ४।८ स्थान को २ चरण से,. सातवें को ३ चरण से और ३।१० स्थान को पूर्णदृष्टि से देखता है।।१८-१९।।

चतुरस्रे गुरुः पादं सप्तमे च द्विपादकम्।
त्रिपादं त्रिदशे विप्र पूर्णं पश्यति कोणभे।।२०।।

गुरु अपने स्थान से ४।८ भाव को १ चरण से, ७ स्थान को २ चरण से, ३।१० को ३ चरण से और ९।५ स्थान को पूर्णदृष्टि से देखता है॥।२०॥।

सप्तमे पादमेकं च द्विपादं त्रिदशे द्विज।
त्रिपादं च त्रिकोणेषु भौमः पूर्णं चतुरस्रगे।।२१।।

भौम अपने स्थान से सातवें स्थान को १ चरण से, ३।१० स्थान को २ चरण से, ९।५ स्थान को ३ चरण से और ४।८ स्थान को पूर्ण दृष्टि से देखता है।।२१।।

अन्येषां त्रिदशे पादं द्विपादं च त्रिकोणगे।
चतुरस्त्रे त्रिपादं च पूर्णं पश्यति सप्तमे।।२२।।

शेष ग्रह ३।१० स्थान को १ चरण से, ९।५ को १ चरण से, ९।४ को २ चरण से, ४।८ स्थान को ३ चरण से और सातवें स्थान को पूर्णदृष्टि से देखते हैं।।२२।।

ग्रहदृष्टिचक्रम्—

..	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ग्रहः
१	३।१३	३।१०	७	३।१०	४।८	३।१०	९।५	स्थान
२	९।५	९।५	३।१०	९।५	७	९।५	४।८	स्थान
३	४।८	४।८	९।५	४।८	३।१०	४।८	७	स्थान
४	७	७	४।८	७	९।५	७	३।१०	स्थान

इति दृष्टिभेदाध्यायः।

इति पाराशरहोरायाः पूर्वखण्डे सुबोधिन्या दृष्टिभेदकं नाम चतुर्थोऽध्यायः।

अथाऽरिष्टाध्यायः

चतर्विंशतिवर्षाणि यावद्गच्छन्ति जन्मतः।
जन्मारिष्टं तु तावत्स्यादायुर्दायं न चिन्तयेत्।।१।।

जन्म से २४ वर्ष की अवस्था तक बालारिष्ट होता है, अतः उक्त अवस्था तक बालकों के आयु की गणना नहीं करनी चाहिए।।१।।

षष्ठाष्टरिष्फगश्चन्द्रः क्रूरैश्च सह वीक्षितः।
जातस्य मृत्युदः सद्यस्त्वष्टवर्षैः शुभेक्षितः।।२।।

इसलिए बालारिष्ट को कह रहा हूँ— जन्मलग्न से ६।८।१२ भाव में चन्द्रमा हो और क्रूरग्रही से देखा जाता हो तो बालक की शीघ्र ही मृत्यु होती है। यदि चन्द्रमा को शुभग्रह देखता हो तो ८वें वर्ष में अरिष्ट होता है।।२।।

शशिवन्मृत्युदः सौम्याश्चेद्वक्राः क्रूरवीक्षिताः।
शिशोर्जातस्य मासेन लग्ने सौम्यविवर्जिते।।३।।

यदि वक्री शुभग्रह ६।८।१२ भाव में हों और क्रूरग्रहों से देखे जाते हों और शुभग्रह जन्म लग्न में न हों तो बालक की एक मास में मृत्यु हो जाती है।।३।।

यस्य जन्मनिधीस्थाः स्युः सूर्यार्केन्दुकुजाभिधाः।
तस्य त्वाशु जनित्री च भ्राता च निधनं लभेत्।।४।।

जिसके जन्मांग में ५वें स्थान में सूर्य, शनि, चन्द्रमा और मंगल हों तो उस बालक के माता और भाई की मृत्यु होती है।।४।।

पापेक्षिते युतो भौमो लग्नगो न शुभेक्षितः।
मृत्युदस्त्वष्टमस्थोऽपि सौरेणार्केण वा पुनः।।५।।

यदि पापग्रह से युत और पापग्रह से देखा जाता हुआ भौम जन्मलग्न में हो और शुभग्रह से न देखा जाता हो तो मृत्युकारक होता है और आठवें भाव में शनि या रवि हों तो भी मृत्युकारक होते हैं।।५।।

चन्द्रसूर्यग्रहे राहुश्चन्द्रसूर्ययुतो यदि।
शनिभौमेक्षितं लग्नं पक्षमेकं स जीवति।।६।।

चन्द्रग्रहण या सूर्यग्रहण के समय का जन्म हो, लग्न में राहु, चन्द्रमा, सूर्य हों और शनि को भौम देखता हो तो बालक एक पक्ष (१५ दिन) तक जीता है।।६।।

कर्मस्थाने स्थितः सौरिः शत्रुस्थाने कलानिधिः।
क्षितिजो सप्तमस्थाने समात्रा म्रियते शिशुः।।७।।

लग्न से दशम भाव में शनि हो, छठे भाव में चन्द्रमा हो, सातवें भाव में भौम हो तो माता के साथ ही बालक की मृत्यु होती है।।७।।

लग्ने भास्करपुत्रश्च निधने चन्द्रमा यदि।
तृतीयस्थो यदा जीवः स याति यममन्दिरम्।।८।।

लग्न में शनि हो, आठवें भाव में चन्द्रमा हो और तीसरे भाव में गुरु हो तो बालक की मृत्यु होती है।।८।।

होरायां नवमे सूर्यः सप्तमस्थः शनैश्चरः।
एकादशे गुरुः शुक्रो मासमेकं स जीवति।।९।।

अपने होरा में सूर्य नवम भाव में हो, सातवें भाव में शनि हो और ग्यारहवें भाव में गुरु-शुक्र हों तो १ मास में बालक की मृत्यु होती है।।९।।

व्यये सर्वे ग्रहा नेष्टा सूर्यशुक्रेन्दुराहवः।
विशेषान्नाशकर्त्तारो दृष्ट्या वा भङ्गकारिणः।।१०।।

१२वें भाव में सभी ग्रह अशुभ होते हैं, विशेषकर सूर्य, शुक्र, चन्द्रमा और राहु। इनकी दृष्टि भी हानिकर होती है।।१०।।

पापान्वितः शशी धर्मे द्यूनलग्नगतो यदि।
शुभैरवीक्षितयुतस्तदा मृत्युप्रदः शिशोः।।११।।

पापग्रह से युत चन्द्रमा ९वें या ७वें भाव में हो और शुभग्रह से दृष्ट-युत न हो तो बालक की मृत्यु होती है।।११।।

सन्ध्यायां चन्द्रहोरायां गण्डान्ते निधनाय वै।
प्रत्येकं चन्द्रपापैश्च केन्द्रगैः स्याद्विनाशनम्।।१२।।

प्रातः संध्या या सायं संध्या में चन्द्रमा की होरा में जन्म हो और गंडात हो तो बालक की मृत्यु होती है। प्रत्येक केन्द्रों में पापग्रह चन्द्रमा से युत हो तो भी मृत्यु होती है।।१२।।

रवेस्तु मण्डलार्द्धास्तात्सायं सन्ध्या त्रिनाडिका।
तथैवार्द्धोदयात्पूर्वं प्रातः सन्ध्या त्रिनाडिका।।१३।।

सूर्यबिंब के आधा अस्त हो जाने के बाद ३ दंड सायं संध्या और सूर्यबिंब के आधा उदय होने के पश्चात् ३ घटी प्रातः संध्या होती है।।१३।।

चक्रपूर्वापरार्धेषु क्रूरसौम्येषु कीटभे।
लग्नगे निधनं यान्ति नात्र कार्या विचारणा।।१४।।

यदि सभी पापग्रह चक्र के पूर्वार्ध में हों और परार्ध में शुभग्रह हों और कीटलग्न (कर्कराशि) जन्मलग्न हो तो बालक की मृत्यु होती है।।१४।।

व्ययशत्रुगतैः क्रूरैर्मृत्युद्रव्यगतैरपि।
पापमध्यगते लग्ने सत्यमेव मृतिं वदेत्।।१५।।

यदि १२वें, छठे, ८वें और दूसरे भाव में पापग्रह हों, जन्मलग्न पापग्रह के मध्य में हो तो बालक की मृत्यु होती है।।१५।।

लग्नसप्तमगौ पापौ चन्द्रोऽपि क्रूरसंयुतः।
यदा त्ववीक्षितः सौम्यैः शीघ्रान्मृत्युर्भवेत्तदा।।१६।।

यदि लग्न और सातवें भाव में पापग्रह हों और चन्द्रमा भी क्रूरग्रह से युक्त हो और शुभ ग्रहों से न देखा जाता हो तो शीघ्र ही मृत्यु होती है।।१६।।

क्षीणे शशिनि लग्नस्थे पापैः केन्द्राष्टसंस्थितैः।
यो जातो मृत्युमाप्नोति स विप्रेश न संशयः।।१७।।

क्षीण चन्द्रमा लग्न में हो, केन्द्र और आठवें भाव में पापग्रह हों तो बालक की मृत्यु होती है।।१७।।

पापयोर्मध्यगश्चन्द्रो लग्नरन्ध्रान्त्यसप्तगः।
अचिरान्मृत्युमाप्नोति यो जातः स शिशुस्तथा।।१८।।

दो पापग्रहों के मध्य में होकर चन्द्रमा लग्न, आठवें या बारहवें या सातवें भाव में हो तो बालक की मृत्यु होती है।।१८।।

पापद्वयमध्यगे चन्द्रे लग्ने समवस्थिते।
सप्तमष्टमेन पापेन मात्रा सह मृतः शिशुः।।१९।।

दो पापग्रहों के मध्य में चन्द्रमा लग्न में हो, सातवें, आठवें भाव में पापग्रह हों तो माता के साथ बालक की मृत्यु होती है।।१९।।

शनैश्चरार्कभौमेषु रिष्फधर्माष्टमेषु च।
शुभैरवीक्षमाणेषु यो जातो निधनं गतः।।२०।।

शनि, सूर्य, भौम क्रम से १२, ९, ८ वें भाव में हों और शुभग्रहों से न देखे जाते हों तो शीघ्र ही मृत्यु होती है।।२०।।

यद्द्रेष्काणे च यामित्रे यस्य स्याद्दारुणो ग्रहः।
क्षीणचन्द्रो विलग्नस्थो सद्यो हरति जीवितम्।।२१।।

जिसके लग्न के द्रेष्काण और सातवें भाव में पापग्रह हों और क्षीण चन्द्रमा लग्न में हो तो शीघ्र ही मृत्यु होती है।।२१।।

आपोक्लिमस्थिताः सर्वे ग्रहाः बलविवर्जिताः।
षण्मासं वा द्विमासं वा तस्यायुः समुदाहृतम्।।२२।।

सभी ग्रह निर्बल होकर आपोक्लिम (३।६।९।१२) भाव में हों तो ६ मास या दो मास की आयु होती है।।२२।।

अथ मातृकष्टम्—

चन्द्रमा यदि पापानां त्रितयेन प्रदृश्यते।
मातृनाशो भवेत्तस्य शुभदृष्टे शुभं भवेत्।।२३।।

यदि जन्म समय चन्द्रमा को तीन पापग्रह देखते हों तो माता की मृत्यु होती है। शुभग्रह देखते हों तो शुभ होता है।।२३।।

धने राहुर्बुधः शुक्रः सौरिः सूर्यो यथास्थितः।
यस्य मातुः भवेन्मृत्युर्मृते पितरि जायते।।२४।।

धन भाव में राहु, बुध, शुक्र, शनि और सूर्य हों तो उसके पिता के मरने के बाद माता की मृत्यु होती है।।२४।।

पापात्सप्तमरन्ध्रस्थे चन्द्रे पापसमन्विते।
बलिभिः पापकैर्दृष्टे जातो भवति मातृहा।।२५।।

पापग्रह से सातवें, आठवें भाव में पापग्रह से युत चन्द्रमा हो, बलवान् पापग्रहों से देखा जाता हो तो उसकी माता की मृत्यु होती है।।२५।।

उच्चस्थो वाथ नीचस्थः सप्तमस्थो यदा रविः।
मातृहीनो भवेद्बालः अजाक्षीरेण जीवति।।२६।।

जिसके जन्म समय में लग्न में सातवें भाव में उच्चराशि में या नीच राशि में सूर्य हो तो उसके माता की मृत्यु होती है और वह बालक बकरी के दूध से जीता है।।२६।।

चन्द्राच्चतुर्थगः पापो रिपुक्षेत्रे यदा भवेत्।
तदा मातृवधं कुर्यात्केन्द्रे यदि शुभो न चेत्।।२७।।

यदि अपने शत्रु की राशि का पापग्रह चन्द्रमा से चौथे हो और केन्द्र में शुभग्रह न हों तो माता की मृत्यु होती है।।२७।।

द्वादशे रिपुभावे च यदा पापग्रहो भवेत्।
तदा मातुर्वधं विन्द्याच्चतुर्थे दशमे पितुः।।२८।।

जन्मलग्न से १२ वें, छठे स्थान में पापग्रह हों तो माता का विनाश होता है। चौथे, दशवें स्थान में पापग्रह हो तो पिता की हानि होती है।।२८।।

लाभे क्रूरो व्यये क्रूरो धने सौम्यस्तथैव च।
सप्तमे भवने क्रूरः परिवारक्षयङ्करः।।२९।।

लग्न और बारहवें भाव में पापग्रह हों, दूसरे भाव में शुभग्रह हों तथा सातवें भाव में क्रूरग्रह हों तो परिवार का नाश करने वाला होता है।।२९।।

लग्नस्थे च गुरौ सौरी धने राहौ तृतीयगे।
इति चेज्जन्मकाले स्यान्माता तस्य न जीवति।।३०।।

लग्न में गुरु और शनि हों तथा दूसरे या तीसरे भाव में राहु हो तो माता नहीं जीती है।।३०।।

क्षीणचन्द्रात् त्रिकोणस्थैः पापैः सौम्यविवर्जितैः।
माता परित्यजेद्बालं षण्मासाच्च न संशयः।।३१।।

क्षीण चन्द्रमा से त्रिकोण (९।५) में पापग्रह हों, शुभग्रह न हों तो ६ मास के अन्दर ही माता बालक को त्याग देती है।।३१।।

एकांशकस्थौ मन्दारौ यत्र कुत्र स्थितौ यदा।
शशिकेन्द्रगतौ तौ वा द्विमातृभ्यां च जीवति।।३२।।

एक ही नवमांश में शनि और भौम हों और कहीं बैठे हों अथवा चन्द्रमा से केन्द्र में हो तो बालक दो माताओं से जीता है।।३२।।

अथ पितृकष्टम्—

लग्ने सौरिर्मदे भौमः षष्ठस्थाने च चन्द्रमाः।
इति चेज्जन्मकाले स्यात्पिता तस्य न जीवति।।३३।।

यदि जन्मलग्न में शनि, सातवें स्थान में भौम और छठे स्थान में चन्द्रमा हों तो उसका पिता नहीं जीता है।।३३।।

लग्ने जीवो धने मन्दरविभौमबुधस्तथा।
विवाहसमये तस्य जातस्य म्रियते पिता।।३४।।

लग्न में गुरु हो, दूसरे स्थान में शनि, रवि, भौम, बुध हों तो उसके विवाह के समय में पिता की मृत्यु होती है।।३४।।

सूर्यः पापेन संयुक्तः सूर्यो वा पापमध्यगः।
सूर्यात्सप्तमगः पापस्तदा पितृवधं भवेत्।।३५।।

सूर्य पापग्रह के साथ हो अथवा पापग्रहों के मध्य में हो और सूर्य से सातवें भाव में पापग्रह हो तो पिता की मृत्यु होती है।।३५।।

सप्तमे भवने सूर्यः कर्मस्थो भूमिनन्दनः।
राहुर्व्यये च यस्यैव पिता कष्टेन जीवति।।३६।।

सातवें स्थान में सूर्य हो, दशम स्थान में भौम और बारहवें स्थान में राहु हों तो पिता कष्ट से जीता है।।३६।।

दशमस्थो यदा भौमः शत्रुक्षेत्रसमन्वितः।
म्रियते तस्य जातस्य पिता शीघ्रं न संशयः।।३७।।

यदि दशम स्थान में शत्रु की राशि में भौम हो तो पिता की शीघ्र ही मृत्यु होती है।।३७।।

रिपुस्थाने यदा चन्द्रो लग्नस्थाने शनैश्चरः।
कुजश्च सप्तमस्थाने पिता तस्य न जीवति।।३८।।

यदि छठें स्थान में चन्द्रमा, लग्न में शनि और सातवें में भौम हो तो पिता नहीं जीता है।।३८।।

भौमांशकस्थिते भानौ स्वपुत्रेण निरीक्षिते।।३९।।
प्राज्जन्मतो निवृत्तिः स्यान्मृत्युर्वापि शिशोः पितुः।।३९।।

भौम के नवांश में सूर्य हो और शनि से देखा जाता हो तो पिता नहीं जीता है।।३९।।

पाताले चाम्बरे पापा द्वादशे च यदा स्थितौ।
पितरं मातरं हत्वा देशाद्देशान्तरं व्रजेत्।।४०।।

चतुर्थ, दशम और बारहवें स्थान में पापग्रह हों तो माता-पिता दोनों की मृत्यु होती है।।४०।।

राहुजीवौ रिपुक्षेत्रे लग्ने वाथ चतुर्थके।
त्रयोविंशतिमे वर्षे पुत्रस्तातं न पश्यति।।४१।।

राहु, गुरु छठे, लग्न या चौथे भाव में हों तो २३वें वर्ष में पुत्र पिता को नहीं देखता है।।४१।।*

भानुः पिता च जन्तूनां चन्द्रो माता तथैव च।
पापदृष्टियुतो भानुः पापमध्यगतोऽपि वा।
पित्रारिष्टं विजानीयाच्छिशोर्जातस्य निश्चितम्।।४२।।

यदि सूर्य पापग्रह से दृष्ट-युत होकर पापग्रह के मध्य में हो तो बालक के पिता का नाश होता है।।४२।।

भानोः षष्ठाष्टमर्क्षस्थैः पापैः सौम्यविवर्जितैः।
चतुरस्रगतैर्वापि पित्रारिष्टं विनिर्दिशेत्।।४३।।

*जीव के पिताकारक सूर्य और मातृकारक चन्द्रमा होता है।

सूर्य से छठे, आठवें भाव में पापग्रह हों तो पिता की मृत्यु होती है। सूर्य से छठे, आठवें भाव में पापग्रह हों, शुभग्रह न हों या चौथे, आठवें भाव में पापग्रह हों तो पिता को अरिष्ट होता है।।४३।।

इत्यरिष्टाध्यायः।

अथारिष्टभङ्गाध्यायः

एकोऽपि ज्ञार्यशुक्राणां लग्नात्केन्द्रगतो यदि।
अरिष्टं निखिलं हन्ति तिमिरं भास्करो यथा।।४४।।

यदि बुध, गुरु, शुक्र में से एक लग्न भी केन्द्र में हो तो संपूर्ण अरिष्ट का नाश हो जाता है; जैसे सूर्य के उदय से अंधकार का नाश हो जाता है।।४४।।

एक एव बली जीवो लग्नस्थो रिष्टसञ्चयः।
हन्ति पापक्षयं भक्त्या प्रणाम इव शूलिनः।।४५।।

यदि केवल गुरु ही बली होकर लग्न में हो तो अरिष्ट-समूह का नाश हो जाता है, जैसे भक्तिपूर्वक शंकर को प्रणाम करने से पापसमूह नष्ट हो जाते हैं।।४५।।

एक एव विलग्नेशः केन्द्रसंस्थो बलान्वितः।
अरिष्टं निखिलं हन्ति पिनाकी त्रिपुरं यथा।।४६।।

एक लग्नेश ही बली होकर केन्द्र में हो तो अरिष्ट का नाश होता है, जैसे शंकरजी ने त्रिपुर राक्षस का नाश किया था।।४६।।

शुक्लपक्षे क्षपाजन्म लग्ने सौम्यनिरीक्षिते।
विपरीतं कृष्णपक्षे तथारिष्टविनाशनम्।।४७।।

शुक्लपक्ष से रात्रि में जन्म हो और लग्न को शुभ ग्रह देखता हो तथा कृष्णपक्ष में दिन का जन्म हो और लग्न को शुभ ग्रह देखता हो तो अरिष्ट का नाश होता है।।४७।।

व्ययस्थाने यदा सूर्यस्तुला लग्ने तु जायते।
जीवेत्स शतवर्षाणि दीर्घायुर्बालको भवेत्।।४८।।

यदि तुला लग्न में जन्म हो और बारहवें स्थान में सूर्य हों तो बालक १०० वर्ष तक जीता है।।४८।।

गुरुभौमौ यदा युक्तौ गुरुदृष्टोऽथवा कुजः।
हत्वारिष्टमशेषं च जनन्याः शुभकृद्भवेत्।।४९।।

गुरु-भौम एक भाव में हों अथवा गुरु से भौम देखा जाता हो तो अरिष्टों का नाश होता है और माता को सुख होता है।।४९।।

चतुर्थदशमे पापः सौम्यमध्ये यदा भवेत्।
पितुः सौख्यकरो योगः शुभैः केन्द्रत्रिकोणगैः।।५०।।

शुभग्रह के मध्य में चौथे, दशम भाव में पापग्रह हों, केन्द्रत्रिकोण में शुभग्रह हों तो पिता को सुख होता है।।५०।।

लग्नाच्चतुर्थे यदि पापखेटः केन्द्रत्रिकोणे सुरराजमन्त्री।
कुलद्वयानन्दकरो प्रसूतः दीर्घायुरारोग्यसमन्वितश्च।।५१।।

लग्न से चौथे स्थान में पापग्रह हों, केन्द्र व त्रिकोण में गुरु हों तो बालक दोनों कुलों (माता-पिता) को सुखदायक होता है।।५१।।

सौम्यान्तरगतैः पापैः शुभैः केन्द्रत्रिकोणगैः।
सद्यो नाशयतेऽरिष्टं तद्भावोत्थफलं न तत्।।५२।।

शुभग्रह के मध्य में पापग्रह हों और शुभग्रह केन्द्रत्रिकोण में हो तो अरिष्ट का नाश होता है और उस भाव के फलों की वृद्धि होती है।।५२।।

इति पाराशरहोरायां पूर्वखण्डे सुबोधिन्यामरिष्टभङ्गाध्यायः पञ्चमः।
इत्यरिष्टभङ्गाध्यायः।

अथाऽप्रकाशग्रहफलाध्यायः

तत्रादौ धूमग्रहफलम्—

शूरो विमलनेत्रांशः सुस्तब्धो निर्घृणः खलः।
मूर्त्तिस्थे धूमसम्प्राप्ते गाढशेषो नरः सदा।।१।।

यदि धूमग्रह प्रथम भाव में हो तो जातक शूरवीर, सुन्दर नेत्र और कंधे वाला, मूर्ख, निर्लज्ज, दुष्ट तथा बड़ा क्रोधी होता है।।१।।

रोगी धनी तु हीनाङ्गो राज्यापहृतमानसः।
द्वितीये धूमसम्प्राप्ते मन्दप्राज्ञो नपुंसकः।।२।।

दूसरे भाव में हो तो रोगी, धनी, विकलांग, राजा से अपहृत चित्तवाला, मंदबुद्धि और नपुंसक होता है।।२।।

मतिमान् शौर्यसङ्ग्रामे इष्टचित्तः प्रियंवदः।
धूमे सहजभावस्थे धनाढ्यो धनवान् भवेत्।।३।।

तीसरे भाव में हो तो बुद्धिमान्, पराक्रमी, शुद्धचित्त, मीठा बोलने वाला, धनसंयुक्त धनी होता है।।३।।

कलत्राङ्गपरित्यक्तो नित्यं मनसि दुःखितः।
चतुर्थे धूमसम्प्राप्ते सर्वशास्त्रार्थचिन्तकः।।४।।

चौथे भाव में हो तो स्त्री से त्यागा हुआ नित्य दुःखी, सभी शास्त्रों का विचार करने वाला होता है।।४।।

स्वल्पापत्यो धनैर्हीनो धूमे पञ्चमसंस्थिते।
गुरुतः सर्वभक्षं च सुहृन्मन्त्रविवर्जितः।।५।।

पाँचवें भाव में हो तो थोड़े संतानवाला, निर्धन, गौरव से युक्त, सर्वभक्षी, अच्छे मित्रों से रहित होता है।।५।।

बलवाञ्छत्रुवधको धूमे च रिपुभावगे।
बहुतेजोयुतः ख्यातः सदा रोगविवर्जितः।।६।।

छठे भाव में हो तो बलवान्, शत्रु को मारने वाला, तेजस्वी, प्रसिद्ध और रोगहीन होता है।।६।।

निर्धनः सततं कामी परदारेषु कोविदः।
धूमे सप्तमभे प्राप्ते निस्तेजः सर्वदा भवेत्।।७।।

सातवें भाव में धूम हो तो निर्धन, निरंतर कामी, परस्त्रीगामी और तेजहीन होता है।।७।।

विक्रमेण परित्यक्तः सोत्साही सत्यसङ्गरः।
अप्रियो निष्ठुरः स्वामी धूमे मृत्युगते सति।।८।।

आठवें भाव में हो तो पराक्रम से त्यागी, उत्साही सत्संकल्पवाला, अप्रिय, निष्ठुर स्वामी होता है।।८।।

सुतसौभाग्यसम्पन्नो धनी मानी दयान्वितः।
धर्मस्थाने स्थिते धूमे धनवान्बन्धुवत्सलः।।९।।

नवम भाव में हो तो पुत्र, भाग्य संयुक्त, धनी, मानी, दयालु, धनी और बंधुप्रिय होता है।।९।।

सुतसौभाग्यसंयुक्तः सन्तोषी मतिमान् सुखी।
कर्मस्थे मानवो नित्यं धूमे सत्यपदस्थितः।।१०।।

दशम भाव में हो तो पुत्र तथा सौभाग्य संयुक्त, संतोषी, बुद्धिमान् और सुखी होता है।।१०।।

धनधान्यहिरण्याढ्यो रूपवांश्च कलान्वितः।
धूमे लाभगते चैव विनीतो गीतकोविदः।।११।।

ग्यारहवें भाव में हो तो धन, धान्य और सुवर्ण से युक्त, रूपवान् तथा कला को जानने वाला होता है।।११।।

पतितः पापकर्मा च द्वादशे धूमसङ्गते।
परदारेषु संसक्तो व्यसनी निर्घृणः शठी।।१२।।

बारहवें भाव में हो तो पतित, पाप करने वाला परस्त्रीगामी, व्यसनी और निर्लज्ज होता है।।१२।।

इति धूमफलम्।

अथ पातफलम्

मूर्तौ च पाते सम्प्राप्ते दुःखेनाङ्गप्रपीडितः।
क्रूरो घातकरो मूर्खो द्वेष्यो बन्धुजनेन च।।१।।

यदि लग्न में पात हो तो दुःखी, अंग से पीडित, क्रूर प्रकृति, मूर्ख, भाइयो से द्वेष करने वाला होता है।।१।।

जिह्मोऽतिपित्तवान् भोगी धनस्थे पातसंज्ञके।
निर्घृणश्च कृतघ्नश्च दुष्टात्मा पापकृत्तथा।।२।।

दूसरे भाव में हो तो कुटिल, अत्यंत पित्तप्रकृति, भोगी, निर्लज्ज, कृतघ्न, दुष्टात्मा और पापी होता है।।२।।

स्थिरप्रज्ञो रणी दाता धनाढ्यो राजवल्लभः।
सहजे पापसम्प्राप्ते सेनाधीशो भवेन्नरः।।३।।

तीसरे भाव में हो तो सेनापति, स्थिरबुद्धि, संगति करने वाला, दाता, धनी, राजा का प्रियपात्र होता है।।३।।

बन्धव्याधिसमायुक्तः सुतसौभाग्यवर्जितः।
चतुर्थगो यदा पातस्तदा स्यान्मनुजश्च सः।।४।।

चौथे भाव में हो तो बंधन और व्याधि संयुक्त, पुत्र और भाग्य से हीन मनुष्य होता है।।४।।

दरिद्रो रूपसंयुक्तः पातो पञ्चमगो यदि।
कफपित्तानिलैर्युक्तो निष्ठुरो निरपत्रपः।।५।।

पाँचवें भाव में हो तो मनुष्य दरिद्र, रूपवान्, कफ, पित्त और वायु प्रकृति से संयुक्त, क्रूर और निर्लज्ज होता है।।५।।

शत्रुहन्ता सुपुष्टश्च सर्वास्त्राणां च ग्राहकः।
कलासु निपुणः शान्तः पाते शत्रुगते सति।।६।।

छठे भाव में हो तो जातक शत्रु का नाशक, शरीर से पुष्ट, सभी अस्त्रों को धारण करने वाला, कला में निपुण और शान्त होता है।।६।।

धनदारसुतैस्त्यक्तः स्त्रीजितः कष्टजीविकः।
पाते कलत्रगे कामी निर्लज्जः परसौहृदः।।७।।

सातवें भाव में पात हो तो धन, स्त्री, पुत्र से हीन, स्त्री से जीता हुआ, कष्ट से जीविका प्राप्त करने वाला, कामी और शत्रुओं से मित्रता करने वाला होता है।।७।।

विकलाङ्गो विरूपश्च दुर्भगो द्विजनिन्दकः।
मृत्युस्थाने स्थिते पाते रक्तपीडापरिप्लुतः।।८।।

आठवें भाव में पात हो तो अंगहीन, कुरूप, दरिद्र, ब्राह्मणनिंदक और रक्तपीड़ा से युक्त होता है।।८।।

बहुव्यापारको नित्यं बहुमित्रो बहुश्रुतः।
धर्मभे पातसम्प्राप्तो स्त्रीप्रियज्ञः प्रियंवदः।।९।।

नवम भाव में पात हो तो अनेक व्यापार को करने वाला, अनेक मित्रों वाला, अनेक शास्त्रों को जानने वाला, स्त्री को प्रिय और प्रिय बोलने वाला होता है।।९।।

सश्रीको धर्मकृच्छ्रान्तो धर्मकार्येषु कोविदः।
कर्मस्थे पातसम्प्राप्ते महाप्राज्ञो विचक्षणः।।१०।।

दशम भाव में पात हो तो लक्ष्मी से युक्त, धार्मिक, शान्त, धर्मकार्य में पंडित होता है।।१०।।

प्रभूतधनवान्मानी सत्यवादी दृढव्रतः।
अश्वाढ्यो गीतसंसक्तः पाते लाभगते सति।।११।।

एकादश भाव में हो तो बहुत बड़ा धनी, मानी, सत्य बोलने वाला, दृढ़-प्रतिज्ञ, घोड़ा रखने वाला, गीत को जानने वाला होता है।।११।।

क्रोधी च बहुकर्माढ्यो व्यङ्गो धर्मस्य द्वेषकः।
व्ययस्थाने गते पाते विद्वेषी निजबन्धुभिः।।१२।।

बारहवें भाव में हो तो क्रोधी, अनेक कार्यों में संलग्न, अंगहीन, धर्मनिंदक और अपने बंधुओं से विद्वेष करने वाला होता है।।१२।।

इति पातफलम्।

अथ परिधिफलम्

विद्वान् सत्यरतः शान्तो धनवान्पुत्रवाञ्छुचिः।
दाता च परिधौ मूर्तौ जायते गुरुवत्सलः।।१।।

यदि परिधि लग्न में हो तो जातक विद्वान्, सत्य बोलने वाला, शान्तचित्त, धनवान्, पुत्रवान्, पवित्र, दाता और गुरुभक्त होता है।।१।।

ईश्वरो रूपवान् भोगी सुखी धर्मपरायणः।
धनस्थे परिधौ प्राप्ते प्रभुर्भवति मानवः।।२।।

दूसरे भाव में हो तो समर्थ, रूपवान्, भोगी, सुखी, धर्मपरायण और समर्थ होता है।।२।।

स्त्रीवल्लभः सुरूपाङ्गो देवस्वजनसङ्गतः।
तृतीये परिधौ भृत्यो गुरुभक्तिसमन्वितः।।३।।

तीसरे भाव में हो तो स्त्रीप्रिय, सुन्दर रूप, धन से पूर्ण, देवता और आपस के लोगों के अनुकूल, नौकर और गुरुभक्त होता है।।३।।

परिधौ सुखभावस्थे विस्मितं त्वरिमङ्गलम्।
अक्रूरं त्वथ सम्पूर्णं कुरुते गीतकोविदः।।४।।

चौथे भाव में हो तो विस्मयालु, शत्रु का मंगल करने वाला, सरल और गीतज्ञ होता है।।४।।

लक्ष्मीवान् शीलवान् कान्तः प्रियवान् धर्मवत्सलः।।५।।
पञ्चमे परिधौ जाते स्त्रीणां भवति वल्लभः।।५।।

पाँचवें भाव में हो तो लक्ष्मीवान्, शीलवान्, सुन्दर, धार्मिक और स्त्रियों का प्रिय होता है।।५।।

व्यक्तोऽर्थपुत्रवान् भोगी सर्वसत्त्वहिते रतः।
परिधौ रिपुभावस्थे शत्रुहा जायते नरः।।६।।

छठे भाव में हो तो प्रसिद्ध धनी, पुत्रवान्, भोगी, सभी का हित करने वाला, शत्रुयुक्त किन्तु शत्रु का नाश करने वाला होता है।।६।।

स्वल्पापत्यसुखैर्हीनो मन्दप्रज्ञः सुनिष्ठुरः।
परिधौ द्यूनभावस्थे स्त्रीणां व्याधिश्च जायते।।७।।

यदि परिधि सातवें भाव में हो तो थोड़े संतान सुख से हीन, मंदबुद्धि एवं निष्ठुर और उसकी स्त्री रोगी होती है।।७।।

अध्यात्मचिन्तकः शान्तो दृढकार्यो दृढव्रतः।
धर्मवांश्च ससत्यश्च परिधौ रन्ध्रसंस्थिते।।८।।

आठवें भाव में हो तो अध्यात्म (वेदान्त) को जानने वाला, शांत, दृढ़ कार्य करने वाला, दृढ़निश्चयी, धार्मिक और बली होता है।।८।।

पुत्रान्वितः सुखी कान्तो धनाढ्यो लोलवर्जितः।
परिधौ धर्मगे मानी अल्पसन्तुष्टमानसः।।९।।

नवम भाव में हो तो पुत्रयुक्त, सुखी, सुन्दर, धनी, स्थिर, अभिमानी और थोड़े में संतुष्ट होने वाला होता है।।९।।

क्वचिदज्ञस्तथा भोगी दृढकायो ह्यमत्सरः।
परिधौ दशमे प्राप्ते सर्वशास्त्रार्थपारगः।।१०।।

दशम भाव में परिधि हो तो कोई मूर्ख होता है, भोगी, बली और सभी शास्त्र का विशारद होता है।।१०।।

स्त्रीभोगी गुणवांश्चैव मतिमान् स्वजनप्रियः।
लाभे च परिधौ जाते मन्दाग्निः संसुपद्यते।।११।।

एकादश भाव में हो तो स्त्रीभोगी, गुणी, बुद्धिमान्, बंधुप्रिय और मंदाग्नि रोग से पीडित होता है।।११।।

व्ययस्थे परिधौ जाते गुरुनिन्दापरायणः।
दुःखी क्रोधाधिकश्चैव व्ययाधिक्यं च जायते।।१२।।

बारहवें भाव में हो तो गुरु की निंदा करने वाला, दुःखी, अत्यंत क्रोधी और अधिक व्यय करने वाला होता है।।१२।।

इति परिधिफलम्।

अथ चापफलम्

धनधान्यहिरण्याढ्यो कृतज्ञः सम्मतः सताम्।
सर्वदोषपरित्यक्तश्चापे तनुगते नरः।।१।।

यदि चापलग्न में हो तो जातक धन-धान्य से पूर्ण, सज्जनों के अनुकूल, कृतज्ञ, सभी दोषों से रहित होता है।।१।।

प्रियंवदः प्रगल्भाढ्यो विनीतो विद्ययाधिकः।
धनस्थे चापसम्प्राप्ते रूपवान् धर्मतत्परः।।२।।

दूसरे भाव में हो तो प्रिय बोलने वाला, प्रगल्भ, धनी, विनीत विद्वान्, सुन्दर और धार्मिक होता है।।२।।

कृपणोऽतिकलाभिज्ञश्चौर्यकर्मरतः सदा।
सहजे धनुषि प्राप्ते हीनाङ्गो मत्तसौहृदः।।३।।
सुखी गोधनधान्यादिराजसन्मानपूजितः।
धनुषि सुखसंस्थे तु नीरोगो न तु जायते।।४।।

तीसरे भाव में हो तो कृपण, कला को जानने वाला, हमेशा चोरी करने में आसक्त, अंग से हीन और मतवाले साथियों से युक्त होता है।।३।। चौथे भाव में हो तो सुखी, गौ, धन-धान्य से पूर्ण, राजसम्मानयुक्त और नीरोग होता है।।४।।

रुचिमान् दीर्घदर्शी च देवभक्तः प्रियंवदः।
चापे पञ्चमभे जातो विवृद्धः सर्वकर्मसु।।५।।

पाँचवें भाव में हो तो कांतिमान्, दीर्घदर्शी, देवभक्त, प्रिय बोलने वाला और सभी कामों में वृद्धि करने वाला होता है।।५।।

शत्रुहन्ताऽतिधूर्त्तश्च सुखी प्रतिरुचिः शुचिः।
अरिस्थलगते चापे सर्वकर्मसमृद्धिभाक्।।६।।

छठे भाव में हो तो शत्रु का नाश करने वाला, अत्यंत मूर्ख, प्रेम करने वाला, सुखी, पवित्र और सभी कामों में समृद्धि को प्राप्त करने वाला होता है।।६।।

ईश्वरो गुणसम्पूर्णः शास्त्रविद्धार्मिकः प्रियः।
चापे सप्तमभावस्थे भवतीति न संशयः।।७।।

यदि चाप सातवें भाव में हो तो जातक ईश्वर-सदृश गुणों से पूर्ण, शास्त्र को जानने वाला, धार्मिक और प्रियभाषी होता है।।७।।

परकर्मरतः क्रूरः परदारपरायणः।
अष्टमस्थानगे चापे करोति विफलान्तिकः।।८।।

आठवें भाव में हो तो परकर्म में आसक्त, क्रूर, परस्त्रीगामी और अंतिम समय में अधिक कष्ट भोगने वाला होता है।।८।।

तपस्वी व्रतचर्यासु निरतो विद्ययाधिकः।
धर्मस्थे यदि चापे च मानज्ञो लोकविश्रुतः।।९।।

नवें भाव में हो तो मानी, लोक में प्रसिद्ध, तपस्वी, व्रतादि करने में आसक्त, विद्वान् होता है।।९।।

बहुपुत्रधनैश्वर्यो गोमहिष्यादिभाक् भवेत्।
कर्मस्थे चापसंयुक्ते जायते लोकविश्रुतः।।१०।।

दशम भाव में हो तो बहुपुत्र, धन, ऐश्वर्य, गौ, भैंस से युक्त और लोक-प्रसिद्ध होता है।।१०।।

लाभगे चापसम्प्राप्ते लाभयुक्तो भवेन्नरः।
नीरोगो दृढकर्माग्निर्मन्त्रस्त्रीपरमार्थवित्।।११।।

ग्यारहवें भाव में हो तो लाभ से युक्त, नीरोग, क्रोधी, मंत्र, स्त्री और परमास्त्र को जानने वाला होता है।।११।।

खलोऽतिमानी दुर्बुद्धिर्निर्ल्लज्जो व्ययसंस्थितः।
चापे परस्त्रीसंयुक्तो जायते निर्धनः सदा।।१२।।

बारहवें भाव में हो तो दुष्ट, अभिमानी, दुर्बुद्धि, निर्लज्ज, परस्त्री युक्त और निर्धन होता है।।१२।।

इति चापफलम्।

अथ शिखिफलम्

कुशलः सर्वविद्यासु सुखी वाङ्निपुणः पुमान्।
मूर्त्तिस्थे शिखिसम्प्राप्ते सर्वकामान्वितो भवेत्।।१।।

यदि लग्न में शिखि (केतु) हो तो सभी विद्याओं में निपुण, सुखी, वाक्चातुर्य, प्रवीण और सभी कार्यों में चतुर होता है।।१।।

वक्ता प्रियंवदः कान्तो धनस्थानगते शिखी।
काव्यकृत्पण्डितो मानी विनीतो वाहनान्वितः।।२।।

दूसरे भाव में हो तो वक्ता, प्रिय बोलने वाला, सुन्दर, कविता करने वाला, मानी, नम्र और वाहन युक्त होता है।।२।।

कदर्यः क्रूरकर्मा च कुशाङ्गो धनवर्जितः।
शिखिनि सहजस्थे तु तीव्ररोगी प्रजायते।।३।।

तीसरे भाव में हो तो कृपण, क्रूर कर्म करने वाला, कृश शरीर वाला, धनहीन और कठिन रोगवाला होता है।।३।।

रूपवान् गुणसम्पन्नः सात्त्विको विश्रुतिप्रियः।
सुखस्थे तु शिखीजाते सदा भवति सौख्यभाक्।।४।।

चौथे भाव में हो तो रूपवान्, गुण से युक्त, सात्त्विक, वेद को जानने वाला और सदा सुखी होता है।।४।।

सुखी भोगी कलाविच्च पञ्चमस्थानगः शिखी।
युक्तिज्ञो मतिमान् वाग्मी गुरुभक्तिसमन्वितः।।५।।

पाँचवें भाव में हो तो युक्ति को जानने वाला, वक्ता, चतुर, गुरुभक्ति युक्त, सुखी, भोगी और कला को जानने वाला होता है।।५।।

मातृपक्षक्षयकरः रिपुहा बहुबान्धवः।
रिपुस्थाने शिखिप्राप्ते शूरः कान्तो विचक्षणः।।६।।

छठे भाव में हो तो मातृपक्ष (माया आदि) को नाश करने वाला, शत्रु को नाश करने वाला, बहु बांधवों वाला, शूरवीर, सुन्दर और विचक्षण होता है।।६।।

रक्तपीडाभिरतः कामी भोगसमन्वितः।
शिखी तु सप्तमस्थाने वेश्यास्तु कृतसौहृदः।।७।।

यदि शिखी सातवें भाव में हो तो रक्तपीडा से युक्त, कामी, भोगयुक्त, वेश्या से मित्रता करने वाला होता है।।७।।

नीचकर्मरतः पापो निर्लज्जो निन्दकः सदा।
मृत्युस्थाने शिखिप्राप्ते गतस्त्र्यपरपक्षकः।।८।।

आठवें भाव में हो तो नीचकर्म में आसक्त, पापी, निर्लज्ज, निंदा करने वाला, स्त्रीहीन, शत्रुपक्ष से युक्त होता है।।८।।

लिङ्गधारी प्रसन्नात्मा सर्वभूतहिते रतः।
धर्मभे शिखिनि प्राप्ते धर्मकार्येषु कोविदः।।९।।

नवम भाव में हो तो चिह्नधारी (तिलक-विशेष), प्रसन्न आत्मा, सभी प्राणियों के हित करने में आसक्त, धार्मिक कार्यों में पटु होता है।।९।।

सुखसौभाग्यसम्पन्नः कामिनीनां च वल्लभः।
दाता द्विजसमायुक्तः कर्मस्थे शिखिनी भवेत्।।१०।।

दशम स्थान में हो तो सुख-सौभाग्य से संपन्न, स्त्रियों का प्यारा, दाता, ब्राह्मणों से आवृत होता है।।१०।।

नित्यलाभः सुधर्मी च लाभे शिखिनि पूज्यते।
धनाढ्यः सुभगः शूरः सुयशश्चातिकोविदः।।११।।

एकादश भाव में हो तो नित्य लाभ से युक्त, धर्मात्मा, धनी, सुन्दर, शूरवीर, यशस्वी और पंडित होता है।।११।।

पापकर्मरतः शूरः श्रद्धाहीनोऽघृणो नरः।
परदाररतो रौद्रः शिखिनि व्ययगे सति।।१२।।

बारहवें भाव में हो तो पापकर्म में आसक्त, शूर, श्रद्धाहीन, निर्लज्ज, परस्त्रीगामी और भयंकर होता है।।१२।।

इति शिखिफलम्।

अथ गुलिकफलम्

रोगार्त्तः सततं कामी पापात्माधिगतः शठः।
मूर्त्तिस्थे गुलिके मन्दः खलभावोऽतिदुःखितः।।१।।

यदि गुलिक लग्न में हो तो जातक निरंतर रोग से पीड़ित, कामी, पापात्मा, मूर्ख, दुष्ट स्वभाव और अत्यंत दुःखी होता है।।१।।

विकृतो दुःखितः क्षुद्रो व्यसनी च गतत्रपः।
धनस्थे गुलिके जातो निःस्वो भवति मानवः।।२।।

दूसरे भाव में हो तो विकृत, दुःखी, क्षुद्र, दुर्व्यसनी, निर्लज्ज और निर्धन होता है।।२।।

चार्वङ्गो ग्रामपः पुण्यसंयुक्तः सज्जनप्रियः।
गुलिके तृतीयगे जातो जायते राजपूजितः।।३।।

तीसरे भाव में हो तो सुन्दर शरीर, ग्रामपति, पुण्यवान्, सज्जनों का प्रिय और राजपूजित होता है।।३।।

रोगी सुखपरित्यक्तः सदा भवति पापकृत्।
यमात्मजे सुखस्थे तु वातपित्ताधिको भवेत्।।४।।

चौथे भाव में हो तो रोगी, सुख से हीन, सदा पाप करने वाला और अधिक वायु-पित्त वाला होता है।।४।।

विस्तुतिर्विधनोऽल्पायुर्द्वेषी क्षुद्रो नपुंसकः।
सुते सगुलिको जातो स्त्रीजितो नास्तिको भवेत्।।५।।

पाँचवें भाव में हो तो निन्दा करने वाला, निर्धन, अल्पायु, द्वेषी, क्षुद्र, नपुंसक, स्त्री से जीता हुआ और नपुंसक होता है।।५।।

वीतशत्रुः सुपुष्टाङ्गो रिपुस्थाने यमात्मजे।
सुदीप्तः सम्मतः स्त्रीणां सोत्साहः सुदृढो हितः।।६।।

छठे भाव में हो तो शत्रु से रहित, पुष्ट शरीर, तेजस्वी, स्त्रीप्रिय, उत्साही और दृढ़ विचार का हितकारी होता है।।६।।

स्त्रीजितः पापकृज्जारः कृशाङ्गो गतसौहृदः।
जीवितः स्त्रीधनेनैव सप्तमस्थे रवेः सुते।।६।।

यदि गुलिक सातवें भाव में हो तो जातक स्त्री से पराजित, पाप करने वाला, दुर्बल शरीर वाला, मित्रहीन, स्त्रीधन से जीविका वाला होता है।।७।।

क्षुधालुर्दुःखितः क्रूरस्तीक्ष्णशेषोऽतिनिर्घृणः।
रन्ध्रे प्राणहरो निःस्वो जायते गुणवर्जितः।।८।।

आठवें भाव में हो तो भूख से पीड़ित, दुःखी, क्रूर, अधिक क्रोधी, अत्यंत निर्लज्ज, दरिद्र और गुण से हीन होता है।।८।।

बहुक्लेशी कृशतनुर्दुष्टकर्मातिनिर्घृणः।
मन्दे धर्मस्थिते मन्दः पिशुनो बहिरकृतिः।।९।।

नवम भाव में हो तो अत्यंत दुःखी, दुर्बल शरीर, दुष्टकर्म को करने वाला, अत्यंत निर्लज्ज, मंदप्रकृति, कृपण और चुगलखोर होता है।।९।।

पुत्रान्वितः सुखी भोक्ता देवाग्न्यर्चनवत्सलः।
दशमे गुलिके जातो योगधर्माश्रितः सुखी।।१०।।

दशम भाव में हो तो पुत्र से युक्त, सुखी, सुख भोगने वाला, देवता एवं अग्नि का उपासक, योगसाधन में संलग्न होता है।।१०।।

सुखी भोगी प्रजाध्यक्षो बन्धूनां च हिते रतः।
लाभे यमानुजो जातो नीचांशः सार्वभौमकः।।११।।

एकादश भाव में हो तो सुखी, भोगी, प्रजा का अध्यक्ष, बंधुओं के हित में आसक्त, नीचे अंगों वाला और सार्वभोम के समान रहने वाला होता है।।११।।

नीचकर्माश्रितः पापो हीनाङ्गो दुर्भगोऽलसः।
व्ययभे गुलिके जातो नीचेषु कुरुते रतिम्।।१२।।

बारहवें भाव में हो तो नीच कर्म में आसक्त, पापी, अंग से हीन, दरिद्र, आलसी और नीचों से प्रेम करने वाला होता है।।१२।।

इति गुलिकफलम्।

अथ प्राणपदफलम्

मूकोन्मत्तो जडाङ्गस्तु हीनाङ्गो दुःखितः कृशः।
लग्ने प्राणपदे क्षीणो रोगी भवति मानवः।।१।।

यदि प्राणपद लग्न में हो तो गूँगा, उन्मत्त, स्तब्ध, अंगहीन, दुःखी, कृश, रोगी और दुर्बल शरीर का होता है।।१।।

बहुधान्यो बहुधनो बहुभृत्यो बहुप्रजः।
धनस्थानस्थिते प्राणे सुभगो जायते नरः।।२।।

दूसरे भाव में हो तो धन-धान्य से पूर्ण, अनेक भृत्य एवं अनेक संतति वाला और भाग्यशाली पुरुष होता है।।२।।

हिंस्त्रो गर्वसमायुक्तो निष्ठुरोऽतिमलिम्लुचे।
तृतीयगे प्राणपदे गुरुभक्तिविवर्जितः।।३।।

तीसरे भाव में हो तो हिंसा करने वाला, गर्व से युक्त, निष्ठुर, अत्यंत मलिन और गुरुभक्तिहीन होता है।।३।।

सुखस्थे तु सुखी कान्तः सुहृद्रामासु वल्लभः।
गुरौ परायणः शीलः प्राणे वै सत्यतत्परः।।४।।

चौथे भाव में हो तो सुखी, सुन्दर, मित्र एवं स्त्री का प्रिय, गुरुभक्त, सुशील और सत्यवक्ता होता है।।४।।

सुखभाक् च क्रियोपेतस्त्वषचारदयान्वितः।
पञ्चमस्थे प्राणपदे सर्वकर्मसमन्वितः।।५।।

पाँचवें भाव में हो तो सुख भोगने वाला, क्रिया से युक्त, दयायुक्त और सभी कामों में अनुरक्त होता है।।५।।

बन्धुशत्रुवशस्तीक्ष्णो मन्दाग्निर्निर्दयः खलः।
षष्ठे प्राणोऽल्परोगश्च वित्तपोऽल्पायुरेव च।।६।।

छठे भाव में हो तो बन्धु एवं शत्रु के वश में रहने वाला, तीक्ष्ण स्वभाव, मंदाग्नि से युक्त, निर्दयी, दुष्ट, धनी और अल्पायु होता है।।६।।

ईर्ष्यालुः सततं कामी तीव्ररौद्रवपुर्नरः।
सप्तमस्थे प्राणपदे दुराराध्यः कुबुद्धिमान्।।७।।

यदि सातवें भाव में प्राणपद हो तो ईर्ष्यालु, कामी, भयानक शरीर, दुष्ट स्वभाव और मूर्ख होता है।।७।।

रोगसन्तापिताङ्गश्च प्राणपदेऽष्टमे सति।
पीडितः पार्थिवैर्दुःखैर्भृत्यबन्धुसुतोद्भवैः।।८।।

आठवें भाव में हो तो रोग से पीडित, राजा, रोग, बन्धु, पुत्र और शत्रु से पीड़ित होता है।।८।।

पुत्रवान् धनसम्पन्नः सुभगः प्रियदर्शनः।
प्राणे धर्मस्थिते भृत्यः सदाऽदुष्टो विचक्षणः।।९।।

नवम भाव में हो तो पुत्रवान्, धनी, भाग्यवान्, दर्शनीय, नौकर से युक्त, पंडित होता है।।९।।

वीर्यवान् मतिमान् दक्षो नृपकार्येषु कोविदः।
दशमे वै प्राणपदे देवार्चनपरायणः।।१०।।

दशम भाव में हो तो बलवान्, बुद्धिमान्, राजकार्य में चतुर, पंडित, देवपूजन में संलग्न होता है।।१०।।

विख्यातो गुणवान् प्राज्ञो भोगी धनसमन्वितः।
लाभस्थानस्थिते प्राणे गौराङ्गो मानवत्सलः।।११।।

एकादश भाव में हो तो प्रसिद्ध, गुणी, बुद्धिमान्, भोगी, धनी, गौरवर्ण, मानी होता है।।११।।

क्षुद्रो दुष्टस्तु हीनाङ्गो विद्वेषी द्विजबन्धुषु।
व्यये प्राणे नेत्ररोगी काणो वा जायते नरः।।१२।।

बारहवें भाव में हो तो क्षुद्र, दुष्ट, हीनांग, ब्राह्मण-बंधुओं का द्वेषी, नेत्ररोगी अथवा काना होता है।।१२।।

इति प्राणपदफलम्।

इति पाराशरहोरायां पूर्वखण्डेऽप्रकाशग्रहफलाध्यायः षष्ठः।।६।।

अथाऽर्गलाध्यायः

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि अर्गलार्गलमुत्तमम्।
यस्य विज्ञानमात्रेण ग्रहाणां च फलं वदेत्।।१।।

अब मैं अर्गला योग के लक्षण और फल को कह रहा हूँ, जिसके ज्ञान से ग्रहों के फलों का ज्ञान होता है।।१।।

चतुर्थे च धने लाभे विद्यमानग्रहार्गला।
तस्य दृष्ट्यादिकं ज्ञेयं निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।२।।

चौथे, दूसरे और एकादश भाव में ग्रहों के होने से अर्गला योग होता है और उसकी दृष्टि आदि पूर्वोक्त प्रकार से ही होती है।।२।।

एकग्रहार्गलाल्पं च द्विग्रहा मध्यमा भवेत्।
त्रयेण ग्रहयोगेन अर्गला पूर्णमुच्यते।।३।।

वह भी एक ग्रह के होने से अल्प, दो ग्रह के होने से मध्यम और तीन ग्रह के होने से पूर्ण अर्गला होती है।।३।।

राश्यर्गलापि सा ज्ञेया ग्रहयुक्ता विशेषतः।
तुर्यवित्तैकादशेषु यस्य कस्यार्गला भवेत्।।४।।

इसी प्रकार किसी राशि से उक्त स्थानों में राशि की अर्गला होती है। चौथे, दूसरे और एकादश भाव की अर्गला जिस किसी की होती है।।४।।

द्विविधा सार्गला विप्र ब्रह्मणा चोदितं पुरा।
शुभकृत् पापकृच्चैव तन्वादीनां विचिन्तयेत्।।५।।

वह दो प्रकार की होती है। शुभग्रह और पापग्रह कृत होती है।।५।।

भिन्नार्गलां पुनर्वक्ष्ये चतुर्थार्गलपापयुक्।
तृतीये तु यदा विप्र बहुपापयुते सति।।६।।

एक भिन्न अर्गला होती है जो कि चौथी होती है। वह तीसरे भाव में अधिक पापग्रहों के होने से होती है।।६।।

बहुपापा तृतीयस्था पापषड्वर्गयोगतः।
पापार्जितः पापदृष्ट्या संयुक्तार्गलकारकः।।७।।
तृतीये शुभसम्बन्धे शुभक्षेत्रे शुभान्विते।
शुभवर्गे च षड्वर्गे विज्ञेयं तुर्यमर्गला।।८।।

तीसरे भाव में शुभग्रह का संबन्ध हो, शुभग्रह की राशि हो, शुभग्रह देखता हो, शुभग्रह का षड्वर्ग हो तो चौथा अर्गला योग होता है।।७-८।।

तुर्यवित्तैकादशे च पापयुग्वा शुभोऽपि वा।
उभयक्षेत्रसम्बन्धे अर्गलां कारयेद्द्विज।।९।।

चौथे, दूसरे, एकादश भाव में पापग्रह युत हो वा शुभग्रह हो, दोनों के संबंध से अर्गला योग होता है।।९।।

तृतीये बहुपापस्थे बहुयुक्तार्गला भवेत्।
निर्बाधिका तु सा ज्ञेया निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।१०।।

तीसरे भाव में बहुत से पापग्रह हों तो बहुयुक्त अर्गला होती है और इसे निर्बाध अर्गला कहते हैं।।१०।।

एकेन द्वितयेनापि अर्गला या भवेद्द्विज।
सार्गला नैव विज्ञेया बहुपापयुतिं विना।।११।।

एक ग्रह या दो ग्रह से जो अर्गला होती है वह फलद नहीं होती है।।११।।

चतुर्थे धनलाभस्था शुभपापकृतार्गला।
तस्यापि बाधकाः खेटा व्योमारिष्फतृतीयगाः।।१२।।

चौथे, दूसरे, एकादश में शुभग्रह एवं पापग्रह से अर्गला योग होता है, किन्तु दशम, द्वादश और तीसरा स्थान उसका बाधक होता है।।१२।।

क्रमेण ज्ञायते विप्र चतुर्थं व्योमबाधकम्।
धने च व्ययभावं च भवेज्ज्ञेयं तृतीयकम्।।१३।।

चौथे का दशम, दूसरे का द्वादश और एकादश का तीसरा स्थान बाधक होता है।।१३।।

निर्बाधका च फलदा न दातव्या सबाधका।
चिन्तनीयं प्रयत्नेन तत्फलं द्विजपुङ्गव।।१४।।

अर्थात् बाधक स्थानों में ग्रहों के होने से अर्गला योग नहीं होता है। निर्बाध अर्गला फलदायक और सबाधक अर्गला निष्फल होती है।।१४।।

अर्गलाया बाधकानां बाधकान् कथयेऽधुना।
नूनं सा निर्बला खेटा ज्ञायते गणकैस्तदा।।१५।।

अर्गला योग से बाधक ग्रहों के बाधकों को मैं कह रहा हूँ, निश्चय ही वह निर्बल ग्रह होता है।।१५।।

वित्तलाभचतुर्थानां यः पश्यति शुभार्गलाम्।
व्ययभ्रातृनभस्थाश्चेद्विपरीतार्गला द्विज।।१६।।

दूसरे, ग्यारहवें और चौथे भाव को देखता हो तो शुभ अर्गला होती है। किन्तु १२वें, ३रे और १०वें स्थान में स्थित ग्रह देखते हों तो विपरीत अर्गला होती है।।१६।।

पुनर्योगार्गलं ज्ञेयं त्रिकोणे पूर्ववद्द्विज।
पञ्चमे चार्गलास्थानं नवमस्तद्विरोधकः।।१७।।

इसी प्रकार त्रिकोण (५।९) अर्गला योग होता है। ५वें भाव में ग्रह हो तो अर्गला होता है, किन्तु नवम भाव में कोई ग्रह हो तो अर्गला नहीं होता है।।१७।।

विपरीतेन केतुश्च नवमेऽर्गलकारकः।
पञ्चमस्थस्तद्विरोधो ज्ञायते गणकैर्द्विज।।१८।।

केतुग्रह विपरीत यानि ९वें भाव में अर्गला योगकारक और पाँचवें भाव में वाचक होता है।।१८।।

क्रमेण केतुः प्रकरोत्यर्गलां द्विज।
नवमस्थस्तद्विरोधो लग्नार्गलमिदं विदुः।।१९।।

हे द्विज! केतु ग्रह भी क्रम से अर्गला योग करता है। किन्तु नवमस्थ ग्रह उसका विरोधी होता है, इसे लग्नार्गल कहते हैं।।१९।।

राश्यर्गलं च खेटानां चिन्तयेद्विविधार्गलम्।
यस्या यस्या दशा प्राप्ता तस्यां तस्यां फलं भवेत्।।२०।।

इसी प्रकार राशियों का भी अर्गला योग विचार करना चाहिए।।२०।।

यत्र राशिस्थितः खेटस्तस्य पाकान्तरे भवेत्।
तत्काले च फलं वाच्यं निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।२१।।

जो-जो अर्गलायोगकारक ग्रह हों उनके दशा अन्तर में अर्गला योग का फल होता है।।२१।।

सारांश यह है कि जिस किसी भाव या ग्रह का विचार किया जाय तो यह देखना चाहिए कि उस भाव या ग्रह से चौथे, दूसरे और ग्यारहवें भाव में कोई ग्रह हो तो उस भाव या ग्रह का अर्गला योग होता है। किन्तु उक्त अर्गला योग का भंग भी होता है अर्थात् राशि का ग्रह से चौथे भाव में ग्रह के होने से अर्गला होता है, यदि राशि का ग्रह से दशमस्थ कोई ग्रह न हो। इसी दूसरे भाव में योग होता है, किन्तु १२वें कोई ग्रह न हो तथा ग्यारहवें भाव में योग होता है, यदि तीसरे भाव में कोई ग्रह न हो। यदि योगकारक ग्रह से बाधक ग्रह निर्बल या संख्या में कम हों तो अर्गला का प्रतिबंध नहीं होता है। इसी प्रकार राशि या ग्रह से तीसरे भाव में तीन से अधिक फल ग्रह हों तो निर्विरोधी अर्गला योग होता है। इसी प्रकार ५वें भाव में भी अर्गला योग होता है, यदि नवम में कोई ग्रह न हो तो। केतुग्रह का विपरीत अर्गला योग होता है अर्थात् बाधक स्थान में अर्गला और योगस्थान में प्रतिबंधक होता है।

अथाऽर्गलाफलम्—

पदे लग्ने सप्तमे वा निराभासार्गला द्विज।
निर्बन्धा चार्गला तत्र दृष्ट्वा भाग्यं भवेन्नरः।।२२।।

पद या लग्न से सातवें भाव में निराभासा (निर्बाध) अर्गला होता है। यदि यह अर्गला हो तो भाग्यवान् मनुष्य होता है।।२२।।

अर्गलां प्रतिबन्धं च प्रथमाङ्घ्रेर्विचिन्तयेत्।
धनधान्यपुत्रपशुदाराबन्धुकुलैर्युतः।।२३।।
शरीरारोग्यमैश्वर्यभृत्यवाहनसंयुतः ।
हरभक्तः सुधर्मज्ञो दृष्ट्वा भाग्यस्य लक्षणम्।।२४।।

अर्गला का प्रतिबंध एक स्थान में स्थित ग्रह से प्रथम चरण और दूसरे के चौथे चरण से, तीसरे और दूसरे चरण से देखना चाहिए। ऊपर कहे हुए प्रथम श्लोक के अनुसार अर्गला हो तो मनुष्य धन, धान्य, पुत्र, पशु, स्त्री और बन्धु-बान्धवों से युक्त, नीरोग शरीर, ऐश्वर्य, नौकर, वाहन और ऐश्वर्य से युक्त होता है।।२३-२४।।

शुभग्रहार्गला विप्र बहुद्रव्यप्रदायका।
पापेन स्वल्पवित्तः स्यान्निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।२५।।

शुभग्रह की अर्गला बहुत द्रव्य को देने वाली होती है और पापग्रह की अर्गला अल्प धन को देने वाली होती है।।२५।।

उभयार्गला भवेत्तत्र कदाचिद्धनवान् भवेत्।
कदाचिद्वित्तचिन्तार्तिर्जायते द्विजसत्तम।।२६।।

यदि दोनों (शुभ-पाप) से मिश्रित अर्गला हो तो कदाचित् धनी होता है। कदाचित् धन संबंधी चिंता से कष्ट होता है।।२६।।

यत्र जन्मनि सोऽपि स्याच्छुभदृष्टे शुभार्गला।
तेन दृष्टेक्षिते लग्ने प्रबल्यायोपकल्प्यते।।२७।।

यदि जन्मकाल में शुभग्रह से दृष्ट शुभ अर्गला हो और उसी शुभग्रह से लग्न युत वा दृष्ट हो तो लग्न प्रबल होती है।।२७।।

यदि पश्येद्ग्रहस्तत्र विपरीतार्गलसंस्थितः।
प्रथमां तु विजानीयाद्विपरीतार्गलां द्विज।।२८।।

यदि अर्गला के प्रतिबंधकस्थानीय ग्रह यानि विपरीत अर्गलायोग कारक ग्रह देखते हों तो विपरीत फल होता है।।२८।।

लग्नसप्तमयोगेन भाग्ययोगं विचिन्तयेत्।
भाग्यप्रबलता ज्ञेया लग्नसप्तशुभार्गला।।२९।।

लग्न और सप्तम के योग से भाग्ययोग की चिंता करनी चाहिए। लग्न सप्तम में शुभ कृत अर्गला हो तो भाग्य की प्रबलता जाननी चाहिए।।२९।।

शुभार्गले स्ववृद्धिः स्यात्पापे स्वल्पधनं वदेत्।
उभयार्गले तु तत्रैव क्वचिद्वृद्धिः क्वचित् क्षयम्।।३०।।

शुभग्रह की अर्गला में धन की वृद्धि और पापग्रह की अर्गला में अल्पधन की हानि होती है।।३०।।

तत्तद्राशिदशायां तु अर्गलाफलसिद्धये।
शुभो वाऽप्यशुभो वापि ह्यर्गला फलदायकः।।३१।।

उन-उन राशियों के अर्गला फल को देने वाले शुभग्रह शुभफल और पापग्रह अशुभ फल को देने वाले होते हैं।।३१।।

इति बृहत्पाराशरहोरायां पूर्वखण्डे सुबोधिन्यां अर्गलाफलकथनं नाम सप्तमोऽध्यायः।

अथ कारकाध्यायः

अथाग्रे सम्प्रवक्ष्यामि ग्रहाणां कारकान् द्विज।
आत्मादिकारकान् सप्त यथावत् कथयामि ते।।१।।

हे द्विज ! अब मैं ग्रहों के आत्मा आदि सात कारकों को कहूँगा।।१।।

रव्यादिशनिपर्यन्ता भवन्ति सप्तकारकाः।
अंशैः समौ ग्रहौ द्वौ च राह्वन्तान् गणयेद्द्विज।।२।।

रवि आदि ग्रह सात किसी-किसी के मत से राहु पर्यन्त आठ कारक होते हैं। यदि दो ग्रहों में अंश साम्य हो तो राहु पर्यंत ८ ग्रहों में कारक का विचार करना चाहिए।।२।।

रव्यादिपङ्गुपर्यन्तमंशाधिकग्रहो द्विज।
कारकेन्द्रोऽथ स ज्ञेयो आत्माकारक उच्यते।।३।।

रवि से राहु पर्यंत ग्रहों में भी जो ग्रह अंश से अधिक हो वह आत्मकारक ग्रहों का राजा होता है।।३।।

अंशसाम्यग्रहो यत्र कलाधिक्यं च पश्यति।
कलासाम्ये पलाधिक्यमात्माकारक ईर्यते।।४।।

जहाँ ग्रहों के अंश तुल्य हो वहाँ कला से अधिकता लेना चाहिए और कला समान हो तो विकला से जो अधिक हो वही आत्मकारक होता है।।४।।

तत्र राशिकलाधिक्ये नैव ग्राह्यः प्रधानकः।
अंशाधिक्ये कारकः स्यादल्पभागोऽन्तकारकः।।५।।

राशि और कला से अधिक हो तो वह आत्मकारक नहीं होता है। जिसका अंश अधिक हो वही आत्मकारक होता है, अल्प अंश वाला अंतिमकारक होता है।।५।।

मध्यांशो मध्यखेटः स्यादुपखेटः स एव हि।
अधोऽधः कारका ज्ञेयाश्चराणि सप्तकारकाः।।६।।

दोनों के मध्य अंश वाले अन्य कारक होते हैं। क्रम से कारक होते हैं उसी को उपकारक कहते हैं।।६।।

तेषां मध्ये प्रधानं तु आत्मकारक उच्यते।
जातकराट् स विज्ञेयः सर्वेषां मुख्यकारकः।।७।।

इन सभी में आत्मकारक प्रधान जातक का स्वामी होता है, इसी को मुख्यकारक कहते हैं।।७।।

यथा भूमौ प्रसिद्धोऽस्ति नराणां क्षितिपालकः।
सर्ववार्ताधिकारी च बन्धकृन्मोक्षकृत्तथा।।८।।

जिस प्रकार पृथ्वी पर मनुष्यों में राजा बंधन, मोक्ष आदि सभी बातों का अधिकारी होता है।।८।।

पुत्रामात्यप्रजानां तु तत्तद्दोषगुणैस्तथा।
बन्धकृन्मोक्षकृद्विप्र तथा सम्मानकारकः।।९।।

वही पुत्र, मंत्री और प्रजा का उनके गुण-दोष के अनुसार बंधन, मोक्ष तथा सम्मान आदि करने वाला होता है। उसी प्रकार कारकराज के वश से अन्य कारक फल देने वाले होते हैं।।९।।

तथैव कारको राजा ग्रहाणामात्मकारकः।
आत्मेत्यादि फलं दत्ते चान्यथा स्थापयेद्द्विज।।१०।।

जिस प्रकार राजा के क्रोधित होने से सभी मंत्री आदि अपने मन का कार्य करने में असमर्थ होते हैं।।१०।।

यथा राजाज्ञया विप्र पुत्रामात्यादयोऽपि च।
समर्था लोककार्येषु तथैवान्योन्यकारकः।।११।।
कारकराजवश्येन फलदातान्यकारकः।
यथा राजनि क्रुद्धे च सर्वेऽमात्यादयो द्विज।।१२।।
स्वजनानां कार्यकर्त्तुमसमर्था भवन्ति हि।
स्निग्धे भूपे ह्यमात्यादिः स्वशत्रूणां द्विजोत्तम।।१३।।
अकार्यं कर्तुं नो शक्तस्तथैवान्योपकारकः।
आत्मकारकवश्येन ह्यमात्यादि फलं ददुः।।१४।।

यदि राजा प्रसन्न होते हैं तो मंत्री आदि अपने शत्रु का भी अहित नहीं करते हैं, उसी प्रकार अन्य कारक भी आत्मकारक के वश में होते हैं।।१४।।

आत्मकारकखेटेन न्यूनभागो हि यद्ग्रहः।
अमात्यसंज्ञा तस्यैव ज्ञायते द्विजसत्तम।।१५।।

आत्मकारक ग्रह से न्यून अंशवाला ग्रह अमात्यकारक होता है।।१५।।

अमात्यन्यूनो भ्राता च भ्रातृन्यूनं च मातृकम्।
मातृकारकखेटेन न्यूनभागो हि यो ग्रहः।।१६।।

इससे न्यून अंश वाला ग्रह भ्राताकारक, इससे न्यून अंश वाला मातृकारक, इससे न्यून पुत्रकारक।।१६।।

सपुत्रकारको ज्ञेयस्तद्धीनो ज्ञातिकारकः।
ज्ञातिकारकखेटेन हीनभागो हि यो ग्रहः।।१७।।

इससे न्यून अंश वाला ग्रह शांति (जाति) कारक, इससे न्यून अंश वाला ग्रह।।१७।।

दारकारकविज्ञेयो निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।
चराश्च कारकाः सप्त ब्रह्मणा चोदितः पुरा।।१८।।

स्त्रीकारक होता है। यही सात चरकारक होते हैं।।१८।।

अंशसाम्यौ ग्रहौ द्वौ च जायेतां यस्य जन्मनि।
स्वकारकं विना विप्र लुप्यति चात्मकारकः।।१९।।

यदि ग्रहों के अंश तुल्य हों तो दोनों ही एक कारक होते हैं।।१९।।

तत्कारको लुप्यति चेदन्यन्नैवास्ति कारकम्।
कारकाणां स्थिराणां च मध्ये सञ्चितयेद्द्विज।।२०।।

वहाँ दोनों का नाश हो जाता है, फिर स्थिरकारक से ही फल को देखना चाहिए।।२०।।

अथ योगकारकमाह—

अधुना सम्प्रवक्ष्यामि खेटान् कारकसंज्ञकान्।
यस्य जन्मनि भावानां यथास्थाने च वै द्विज।।२१।।

अब मैं योग करने वाले कारक ग्रहों को कह रहा हूँ।।२१।।

स्वर्क्षे तुङ्गे च मित्रर्क्षे कण्टके संस्थिता ग्रहाः।
अन्योन्यकारका विप्र कर्मगास्तु विशेषतः।।२२।।

जन्म समय ग्रह अपनी उच्चराशि, अपनी राशि वा अपने मित्र की राशि में होकर परस्पर केन्द्र में हों तो परस्पर कारक (भाग्योदय) करने वाले होते हैं। इसमें भी दशम स्थान में विशेष योगकारक होते हैं।।२२।।

लग्ने सुखे तथा कामे ग्रहभाववशेन च।
भवन्ति कारका विप्र विशेषेण च खेगताः।।२३।।

लग्न चतुर्थ, सप्तम, दशम में कारक होते हैं, विशेषतः दशम में कारक होता है।।२३।।

स्वमित्रर्क्षोच्चगो हेतुरन्योन्यं यदि केन्द्रगः।
ससुहृद्गणसम्पन्नः सोऽपि कारक एव वै।।२४।।

यदि ग्रह अपने मित्र, राशि, उच्च में होकर परस्पर केन्द्र में हों तो वे भी परस्पर कारक होते हैं।।२४।।

नीचान्वये यस्य जन्म बभूव द्विजसत्तम।
पतन्ति कारका लग्ने प्रधानत्वं च स आप्नुयात्।।२५।।

नीच वंश में उत्पन्न हो और योगकारक ग्रहों से योग होता हो तो वह अपने कुल. में प्रधान होता है।।२५।।

राज्ञां कुले समुत्पन्नो राजा भवति निश्चितम्।
एवं कुलानुसारेण कारकाणां फलं भवेत्।।२६।।

और राजकुल में उत्पन्न हो और योग होता हो तो अवश्य राजा होता है। इस प्रकार कुल के अनुसार कारकों का फल होता है।।२६।।

अथ स्थिरकारकमाह—

अधुना सम्प्रवक्ष्यामि कारकाणि स्थिराणि च।
सूर्यादीनां ग्रहाणां च वीर्यवान् कारको भवेत्।।२७।।

अब मैं स्थिर कारकों को कह रहा हूँ। सूर्य आदि ग्रहों के बलाबल के अनुसार ये क़ारक होते हैं।।२७।।

बलवान् जायते विप्र जन्मनि रविशुक्रयोः।
स पितृकारको ज्ञेयो निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।२८।।

जन्मकाल में रवि और शुक्र में जो बलवान् हो वह पितृकारक होता है।।२८।।

चन्द्रारयोश्च बलवान् मातृकारक उच्यते।
भौमतस्तु विशेषेण भगिनीदारभ्रातृकौ।।२९।।

चंद्रमा और भौम में जो बलवान् हो वह भावकारक होता है। विशेषतः भौम से बहिन और साला (स्त्री के भाई) का विचार होता है।।२९।।

बुधान्मातुलमाख्यातो मातृतुल्यानपि द्विज।
गुरुणा चात्र विज्ञेया पुत्रस्वामिपितामहाः।।३०।।

बुध से मामा और मातृसदृश (मौसी) आदि का विचार होता है। गुरु से पुत्र और पितामह आदि का विचार होता है।।३०।।

स्वभार्यामातृपितरौ तथा मातामही द्विज।
भृगुद्वारा विजानीयादेतेषां शुक्रकारकाः।।३१।।

सास-ससुर और नानी का विचार शुक्र से होता है। यही उनका कारक होता है।।३१।।

सूर्याच्च पुण्यभे तात इन्दोर्माता चतुर्थतः।
कुजात्तृतीयतो भ्राता मातुलो रिपुभाद्बुधात्।।३२।।

सूर्य से ९वें स्थान में पिता का, चन्द्रमा से चतुर्थ स्थान पर माता का, भौम से तीसरे भाई का, बुध से छठे मामा का।।३२।।

देवेज्यात्पञ्चमे पुत्रो दैत्येज्याद्यूनभे स्त्रियः।
मन्दादष्टमतो मृत्युस्तातादीनां विचिन्तयेत्।।३३।।

गुरु से पाँचवें पुत्र का, शुक्र से सातवं स्त्री का और शनि से आठवें भाव में आयु का विचार करना चाहिए।।३३।।

अथ भावकारकमाह—

अधुना सम्प्रवक्ष्यामि विशेषं भावकारकम्।
जनुर्लग्नं च विद्याद्वै आत्मकारकमेव च।।३४।।

अब विशेषकर भावकारक को कह रहा हूँ। जन्मलग्न आत्मकारक।।३४।।

धनभावं विजानीयाद्दारकारकमेव च।
एकादशे ज्येष्ठभ्रातुस्तृतीये च कनिष्ठकाः।।३५।।

धनभाव स्त्रीकारक, ग्यारहवाँ ज्येष्ठ भाई का और तीसरा कनिष्ठ।।३५।।

सुते सुतं विजानीयाद्दारा सप्तमभावतः।
सुतस्थाने ग्रहस्तिष्ठेत्सोऽपि कारक उच्यते।।३६।।

पंचम भाव पुत्र का और सातवाँ स्त्री का कारक होता है। पाँचवें भाव में यदि कोई ग्रह हो तो वह भी उस भाव का कारक होता है।।३६।।

सूर्यो गुरुः कुजः सोमो गुरुर्भौमः सितः शनिः।।३७।।
गुरुश्चन्द्रसुतो जीवो मन्दश्च भावकारकः।।३७।।

क्रम से सूर्य, गुरु, भौम, बुध, गुरु, भौम, शुक्र, शनि, गुरु, बुध, गुरु और शनि ये लग्नादि भावों के कारक होते हैं।।३७।।

पुनस्तन्वादयो भावाः स्थाप्यास्तेषां शुभाऽशुभम्।
लाभं तृतीयं रन्ध्रं च शत्रुभावव्ययं तथा।
एषां योगेन यो भावस्तन्नाशं प्राप्नुयाद्ध्रुवम्।।३८।।

फिर भी लक्ष आदि भावों के शुभ-अशुभ को लिखकर उनके शुभाशुभ का निर्णय करना चाहिए। एकादश, तृतीय, आठवाँ, छठवाँ और बारहवाँ भाव— इनके साथ जिस भाव का सम्बन्ध होता है उस भाव के फल का नाश हो जाता है अर्थात् इन भावों के स्पष्ट दृश्यादि का योग करने से जो भाव बने वह नष्ट हो जाता है।।३८।।

चत्वारो राशयो भद्राः केन्द्रकोणशुभावहाः।
तेषां संयोगमात्रेण अशुभोऽपि शुभो भवेत्।।३९।।

केन्द्र और कोण ये चार भाव शुभद हैं। इनके संयोग से जो भाव हो वह भी शुभद होता है।।३९।।

अथ सूर्यादिग्रहाणां कारकत्वमाह

राज्यविद्रुमरक्तवस्त्रमाणिक्यराजवन-
पर्वतक्षेत्रपितृकारको रविः।।१।।

राज्य, मूँगा, रक्तवस्त्र, मानिक, राज, वन, पर्वत, क्षेत्र और पिता का कारक सूर्य होता है।।१।।

मातृमनःपुष्टिगन्धरसेक्षुगोधूमक्षारक-
द्विजशक्तिकार्यसस्यरजतादिकारकश्चन्द्रः।।२।।

माता, मन, शरीरपुष्टि, गंधद्रव्य, रस, ऊख, गेहूँ, क्षारपदार्थ, ब्राह्मण, शक्तिकार्य, धान्य और चाँदी आदि का कारक चन्द्रमा है।।२।।

सत्त्वसद्मभूमिपुत्रशीलचौर्यरोगब्रह्मभ्रातृ-
पराक्रमाग्निसाहसराजशत्रुकारकः कुजः।।३।।

ओज, भूमि, पुत्र, शील, चोर, रोग, ब्रह्म, भाई, पराक्रम, अग्नि, साहस और राजशत्रु के कारक भौम हैं।।३।।

ज्योतिर्विद्यामातुलगणितकार्यनर्तनवैद्य-
हास्यभीश्रीशिल्पविद्यादिकारको बुधः।।४।।

ज्योतिष विद्या, मामा, गणित विद्या, नृत्य, वैद्यक, हास्य, भय, लक्ष्मी, शिल्पविद्या का कारक बुध है।।४।।

स्वकर्मयजनदेवब्राह्मणधनगृहकाञ्चन-
वस्त्रपुत्रमित्रान्दोलनादिकारको गुरुः।।५।।

अपने कार्य, यज्ञ, देवता, ब्राह्मण, धन, गृह, सुवर्ण, वस्त्र, पुत्र, मित्र, आंदोलन आदि के कारक गुरु हैं।।५।।

कलत्रकार्मुकसुखगीतशास्त्र-
काव्यपुष्पसुकुमारयौवनाभरणरजत-
यानस्वर्गलोकमौक्तिक-
विभवकवितारसादिकारको भृगुः।।६।।

स्त्री, धनुष, सुख, गीतशास्त्र, काव्यशास्त्र, पुष्प, यौवन, आभूषण, चाँदी, सवारी, स्वर्गलोक, मोती, वैभव, कविता, रस आदि के कारक शुक्र हैं।।६।।

महिषहयगजतैलवस्त्रशृङ्गार-
प्रयाणसर्वराज्यसर्वायुधगृहयुद्ध-
सञ्चारशूद्रनीलमणिविघ्नकेशशल्य-
शूलरोगदासदासीजनायुष्यकारकः शनिः।।७।।

भैंस, घोड़ा, हाथी, तेल, वस्त्र, शृंगार, यात्रा, सभी प्रकार के राज्य, सभी प्रकार के आयुध, गृह, युद्ध संचार, शूद्र, नीलममणि, विघ्न, केश, हड्डी, शूलरोग, नौकर, नौकरानी, आयुष्य के कारक शनि है।।७।।

प्रयाणसमयसर्परात्रिसकलसुप्तार्थद्यूतकारको राहुः।।८।।

यात्राकाल, सर्प, रात्रि, सम्पूर्ण खोये हुए द्रव्य, जूआ का कारक राहु है।।८।।

व्रणरोगचर्मातिशूलस्फुटक्षुधार्तिकारकः केतुः।।९।।

फोड़ा आदि रोग, चर्मरोग, अत्यंत शूल, भूख से कष्ट आदि का कारक केतु है।।९।।

इति कारकाध्यायः।

अथ कारकांशफलमाह

अधुना सम्प्रवक्ष्यामि कारकांशाधिकान् ग्रहान्।
योगसम्बन्धमात्रेण यथावत् फलदा ग्रहाः।।१।।

अब मैं कारकांश के स्वामी ग्रहों के फल को कह रहा हूँ, जिसके संबंध मात्र से योग का फल प्राप्त होता है।।१।।

स्वांशकारककुण्डल्यां नवमांशाधिपोऽथवा।
यस्मिन् राशौ स्थिता विप्र तद्राशिफलमुच्यते।।२।।

आत्माकारकांश कुंडली में नवांश के अधिपति जिस राशि में हो उसके अनुसार फल होता है।।२।।

मेषादिमीनपर्यन्तं सर्वेषां फलमादिशेत्।
यथावद्भाषितं पूर्वं शूलिना रुद्रयामले।।३।।

मेष से मीन पर्यन्त सभी राशियों का फल इस प्रकार है।।३।।

अजांशकारकांशेषु तिष्ठन्ति च यदा ग्रहाः।
तदा मूषकमार्जारौ दुःखदौ भयकारकौ।।४।।

यदि आत्मकारक मेष राशि के नवांश में हो तो मूसा, बिलार दुःख देते हैं।।४।।

सुयोगे च यदा विप्र मार्जारादि सुखप्रदौ।
वृषे च कारकांशे तु भयार्ती च चतुष्पदात्।।५।।

शुभग्रह के योग से मूसा, बिलार आदि सुख देते हैं। वृष का नवांश हो तो चौपाये जानवरों से भय होता है।।५।।

शुभे चतुष्पदात्सिद्धिरिति तत्त्वं द्विजोत्तम।
मिथुने कारकांशे च कण्ड्वादिरोगसम्भवः।।६।।

शुभग्रह का योग हो तो चौपायों से सुख होता है। मिथुन के नवांश में कारक हो तो खुजली आदि रोगों की संभावना होती है।।६।।

कर्कांशे च जलाद्दुःखं जलभीतिर्न संशयः।
कुष्ठादिरोगसम्भूतिः शुभे फलविपर्ययः।।७।।

कर्क के नवांश में कारक हो तो जल से कष्ट वा जल का भय और कुष्ठ आदि रोग की संभावना होती है।।७।।

सिंहांशे कारके खेटे तिष्ठत्येवं द्विजोत्तम।
शुनकादि भयं दद्याच्छुभे सिद्धिप्रदायकः।।८।।

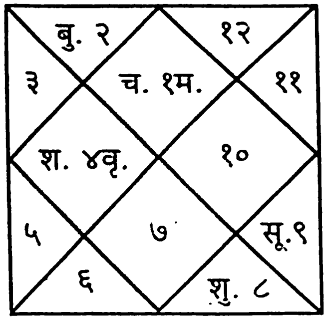
सिंह के नवांश में हो तो खाज आदि से भय होता है। शुभग्रह का योग हो तो शुभ फल होता है।।८।।

उदाहरण— पृष्ठ २५ के दिये हुए स्पष्ट ग्रहों के अनुसार चरकारक इस प्रकार है —

चरकारकाः

आत्म-कारक	अनात्म-कारक	भ्रातृ-कारक	मातृ-कारक	पुत्र-कारक	जाति-कारक	दारा-कारक
भौम	चंद्रमा	सूर्य	गुरु	बुध	शुक्र	शनि

कारकांशचक्रम्



कन्यायां कारकांशे चेत्तिष्ठत्येवं फलं भवेत्।
युग्मवत्कण्डुरोगार्त्तिर्वह्निदोषेण दुःखभाक्।।९।।

कन्यांश में आत्मकारक हो तो मिथुनांश के समान ही कंडू (खुजली) आदि रोग से कष्ट होता है।।९।।

तुलाख्यं कारकांशे च व्यापारेषु रतोऽधिकः।
क्रयविक्रयकर्त्ता च यदि जातो नृपालये।।१०।।

तुला कारकांश हो तो वह व्यापार में अधिक संलग्न, खरीद-बिक्री करने में पटु होता है।।१०।।

वृश्चिके कारकांशे च सर्पादिभयकारकः।
मातुः पयोधरे पीडा जायते द्विजसत्तम।।११।।

वृश्चिकांश में कारक हो तो सर्प आदि से भय और माता के स्तन में पीड़ा होती है।।११।।

चापस्थे कारकांशे च वाहनाद्भयमादिशेत्।
उच्चात्प्रपतनं वापि कोपी वस्तुसमन्वितः।।१२।।
नक्रकारकांशे विप्र सिद्धिर्जलचरादयः।
शङ्खमुक्ताप्रवालादिमत्स्यखेचरदेवताः।।१३।।

धन कारकांश हो तो वाहन से गिरने का भय वा ऊँचे से गिरने का भय, कोपी और वस्तुसंग्रही होता है।।१२।। मकर के अंश में कारक के होने से मूँगा आदि, मछली एवं पक्षियों से लाभ होता है।।१३।।

कुम्भाख्यकारकांशे च तडागादीनि कारयेत्।
कीर्त्तिमान्धर्मवान्सोऽपि जायते द्विजसत्तम।।१४।।

कुम्भांश में कारक हो तो तालाब आदि का रचयिता, यशस्वी और धार्मिक होता है।।१४।।

मीने च कारकांशे वै सायुज्यमुक्तिभाग्भवेत्।
शुभयोगे शुभं ब्रूयान्नशुभं विपरीतके।।१५।।

मीनांश में कारक हो तो साक्षात् मोक्ष पाता है। शुभग्रह के योग से शुभ फल और पापग्रह के योग से अशुभ फल होता है।।१५।।

शुभांशे शुभराशौ वा कारके धनवान् भवेत्।
लग्नांशे चेच्छुभो वा स्याद्राजा भवति निश्चितम्।।१६।।

यदि आत्मकारक शुभग्रह के अंश में वा शुभग्रह की राशि में हो तो जातक धनी होता है। एवं आत्मकारकांश में अथवा लग्नांश में शुभग्रह हो तो निश्चय ही राजा होता है।।१६।।

उपग्रहे शुभांशे चेत्स्वोच्चस्वर्क्षे शुभर्क्षभे।
पापदृग्योगरहिते चान्त्ये कैवल्यं विनिर्दिशेत्।।१७।।

यदि उपग्रह शुभग्रह के अंश में हो अथवा अपनी उच्चराशि या अपनी राशि के शुभग्रह की राशि में हो, पापग्रह के दृष्टि और योग से रहित हो तो अन्त में मोक्ष की प्राप्ति होती है।।१७।।

चन्द्रभृग्वारवर्गस्थे कारके पारदारिकः।
मिश्रे मिश्रं विजानीयाद्विपरीते विपर्ययम्।।१८।।

यदि आत्मकारक चन्द्र, शुक्र या भौम के षड्वर्ग में हो तो परस्त्री का सुख भोगने वाला होता है। उपर्युक्त फलों में मिश्रित ग्रह (शुभ और पाप दोनों) का संबंध हो तो मिश्रित फल और विपरीत हो तो विपरीत फल कहना चाहिए।।१८।।

कारकांशस्थितग्रहाणां फलम्—

अथैकः कारकांशेषु रव्यादिस्तिष्ठति ग्रहः।
तेषां फलं प्रवक्ष्यामि शृणु त्वं द्विजसत्तम।।१९।।

अब सूर्यादि ग्रहों का फल आत्मकारकांश के अनुसार कह रहा हूँ।।१९।।

कारकांशे यदा सूर्यस्तिष्ठति द्विजवीर्ययुक्।
आदावन्ते पुमान् सोऽपि राजकार्येषु तत्परः।।२०।।

यदि आत्मकारकांश में बलवान् सूर्य हो तो जातक अवस्था के आदि और अंत मे राजकर्मचारी होता है।।२०।।

कारकांशे तु पूर्णेन्दुर्दैत्याचार्येण वीक्षितः।
शतभोगी भवेत्सोऽथ विद्याजीवी च जायते।।२१।।

यदि कारकांश में पूर्णचन्द्रमा हो और शुक्र से देखा जाता हो तो १०० वर्ष की आयु होती है और विद्या द्वारा जीविका होती है।।२१।।

कारकांशे यदा भौमे बलाढ्येन युतेक्षिते।
रसवादी कुन्तधारी वह्निकृज्जीवनं भवेत्।।२२।।

यदि कारकांश में भौम हो और किसी बली ग्रह से युत वा दृष्ट हो तो रस बनाने वाला, कुँत (माला) धारण करने वाला और अग्नि द्वारा जीविका प्राप्त करने वाला होता है।।२२।।

कारकांशे यदा सौम्यः तिष्ठत्येव बलाढ्यकः।
शिल्पको व्यवहारी च वणिक्कृत्यकरो द्विज।।२३।।

यदि कारकांश में बुध हो तो और बली हो तो शिल्पी, व्यवहारी और बनिए का कार्य करने वाला होता है।।२३।।

कारकांशे गुरौ विप्र कर्मनिष्ठापरो भवेत्।
सर्वशास्त्राधिकारी च विख्यातः क्षितिमण्डले।।२४।।

यदि कारकांश में गुरु हो तो कर्म करने वाला, सभी शास्त्रों का अधिकारी और पृथ्वी पर प्रसिद्ध होता है।।२४।।

कारकांशे यदा शुक्रो राजमान्यः सदा भवेत्।
सदिन्द्रियः शतायुश्च कथनीयं द्विजोत्तम।।२५।।

यदि कारकांश में शुक्र हो तो राजा से सम्मान प्राप्त करता है, सुन्दर और १०० वर्ष की आयु वाला होता है।।२५।।

कारकांशे यदा सौरिर्मृत्युलोके प्रसिद्धियुक्।
महतां कर्मणां वृत्तिः क्षितिपालेन पूजितः।।२६।।

कारकांश में शनि हो तो संसार में प्रसिद्ध, बड़े कार्यों को करने वाला और राजा से पूजित होता है।।२६।।

कारकांशे यदा राहुर्धनुर्धारी प्रजायते।
जाङ्गल्यलोहयन्त्रादिकारकश्चौरसङ्गमी।।२७।।

कारकांश में राहु हो तो धनुष धारण करने वाला, जंगली, लोह के यंत्रों को बनाने वाला, चोर और संयमी होता है।।२७।।

कारकांशे यदा केतुस्तिष्ठति द्विजसत्तम।
व्यवहारी गजादीनामुशन्ति परद्रव्यके।।२८।।

कारकांश में केतु हो तो हाथी आदि का व्यवहार दूसरे के द्रव्य से करने वाला होता है।।२८।।

कारकांशे यदा विप्र संस्थितौ रविसैंहिकौ।
सर्पाद्भीतिर्भवेन्मृत्युः शुभदृष्ट्या निवर्तते।।२९।।

यदि कारकांश में सूर्य और राहु हों तो सर्प से भय या मृत्यु होती है, शुभग्रह की दृष्टि हो तो निवृत्ति हो जाती है।।२९।।

कारकांशे भानुतमौ शुभषड्वर्गसंयुतौ।
विषवैद्यौ भवेन्नूनं विषहर्ता विचक्षण।।३०।।

कारकांश में सूर्य और राहु हों और शुभ ग्रह के षड्वर्ग में हों तो विषवैद्य या विष का हरण करने वाला होता है।।३०।।

भौमेक्षिते कारकांशे भानुस्वर्भानुसंयुते।
अन्यग्रहा न पश्यन्ति स्ववेश्मपरदाहकः।।३१।।

कारकांश में सूर्य और राहु हों, उसे भौम देखता हो शेष ग्रह न देखते हो तो अपना और दूसरे का घर जलाने वाला होता है।।३१।।

सगुलिके कारकांशे पूर्णेन्दुवीक्षिते द्विज।
सति चौरैर्नीतधनः स्वयं चौरोऽथवा भवेत्।।३२।।

कारकांश में गुलिक हो और पूर्ण चन्द्र से देखा जाता हो तो चोरों से धन अपहृत होता है अथवा स्वयं चोर होता है।।३२।।

सगुलिके कारकांशे अन्यग्रहयुतेक्षिते।
बुधदृष्टियुते वापि अण्डवृद्धिः प्रजायते।।३३।।

कारकांश में गुलिक हो और अन्य ग्रहों से देखा जाता हो अथवा बुध से दृष्ट वा युत हो तो अंडवृद्धि होती है।।३३।।

कारकांशे केतुयुक्ते पापग्रहनिरीक्षिते।
श्रोत्रच्छेदं भवेन्नूनं कर्णरोगार्तिना द्विज।।३४।।

कारकांश में केतु हो और पापग्रह से देखा जाता हो तो कर्णरोग से पीडित होने से कान काटा जाता है।।३४।

कारकांशे स्थिते केतौ भृगुणा च समीक्षिते।
युते वा जायते विप्र क्रियाकर्मसमन्वितः।।३५।।

कारकांश में केतु हो और शुक्र से दृष्ट वा युत हो तो क्रिया-कर्म से युक्त होता है।।३५।।

कारकांशे स्थिते केतौ शनिसौम्यनिरीक्षिते।
बलवीर्येण रहितो जायते सोऽपि मानवः।।३६।।

कारकांश में केतु हो, शनि-बुध से देखा जाता हो तो मनुष्य बलवीर्य से हीन होता है।।३६।।

सकेतौ कारकांशे च बुधशुक्रनिरीक्षिते।
जायते पौनःपुनिको दासीपुत्रोऽथवा भवेत्।।३७।।

कारकांश में केतु हो और बुध-शुक्र से देखा जाता हो तो रुक-रुक कर बोलने वाला या दासीपुत्र होता है।।३७।।

सकेतौ कारकांशे च अन्यग्रहनिरीक्षिते।
शनिदृष्टिविहीने च सत्याच्च रहितो भवेत्।।३८।।

कारकांश में केतु हो, शनि को छोड़कर शेष ग्रह देखते हों तो असत्य बोलने वाला होता है।।३८।।

कारकांशे यदा विप्र भृगुभास्करवीक्षिते।
राजप्रेष्यो भवेद्बालो जायते नात्र संशयः।।३९।।

यदि कारकांश को शुक्र-सूर्य देखते हों तो जातक राजा का नौकर होता है।।३९।।

कारकांशाद्धनभावफलम्—

अंशात्कुटुम्बे भृग्वारवर्गे स्यात्पारदारिकः।
तयोर्दृग्योगकाभ्यां च भवेदामरणं किल।।४०।।

कारकांश से धन भाव में शुक्र-भौम का षड्वर्ग हो तो परस्त्रीगामी होता है। यदि शुक्र-भौम देखते हों तो आमरण परस्त्रीगामी होता है।।४०।।

केतुना प्रतिबन्धः स्याद्गुरुणा स्त्रैण एव च।
राहुणा चार्थनिवृत्तिः स्याद्धने एवं फलं भवेत्।।४१।।

केतु देखता हो तो नहीं होता है, गुरु देखता हो तो स्त्री के वश में होता है, राहु देखता हो तो परस्त्री के लिए द्रव्य खर्च करता है।।४१।।

कारकांशात्तृतीये च पापखेटयुतेक्षिते।
सशूरो जायते बालो वीर्यवान्बहुविक्रमी।।४२।।

कारकांश से तीसरे भाव में पापग्रह युत हो वा देखते हों तो बालक शूरवीर एवं पराक्रमी होता है।।४२।।

कारकांशात्तृतीये च शुभखेटयुतेक्षिते।
जायते तत्त्वहृदयः कातरोऽपि विशेषतः।।४३।।

कारकांश से तीसरे भाव में शुभग्रह हों वा देखते हों तो बालक शुद्ध हृदय का और विशेषकर कातर होता है।।४३।।

कारकांशात्तृतीये च षष्ठे पापयुतेक्षिते।
कृषिकर्मरतो नित्यं जायते नात्र संशयः।।४४।।

कारकांश से तीसरे व छठे भाव में पापग्रह हों या देखते हों तो बालक कृषिकर्म को करने वाला होता है।।४४।।

कारकांशाच्चतुर्थभावफलम्—

पाताले कारकांशाच्च शशिशुक्रयुतेक्षिते।
प्रासादवान् भवेद्बालो विचित्रगृहवान्भवेत्।।४५।।

कारकांश से चतुर्थ स्थान में चन्द्रमा, शुक्र युत हों वा देखते हों तो विचित्र प्रासाद (किला) या गृह वाला होता है।।४५।।

कारकांशाच्च पाताले तुङ्गर्क्षे कोऽपि खेचरः।
हर्म्यमन्दिरसंयुक्तो ह्यत्युच्चो बहुदीप्तिमान्।।४६।।

चौथे में यदि कोई ग्रह अपनी उच्चराशि का हो तो बहुत ऊँचा, खूबसूरत एवं प्रकाशमान् गृह होता है।।४६।।

कारकांशाच्च पाताले शनिराहुयुतेक्षिते।
विप्रेच्छाटनपट्टीयुग्जायते मन्दिरं द्विज।।४७।।

कारकांश से चौथे भाव में शनि-राहु हों या देखते हों तो पत्थर का गृह होता है।।४७।।

कारकांशाच्च पाताले कुजकेतुशनीक्षिते।
ऐष्टिकं मन्दिरं तस्य जायते नात्र संशयः।।४८।।

कारकांश से चौथे भाव में भौम, केतु एवं शनि हों वा देखते हों तो ईटे का मकान होता है।।४८।।

कारकांशाच्च पाताले गुरुयुक्तनिरीक्षिते।
दारवं मन्दिरं तस्य जायते नात्र संशयः।।४९।।

कारकांश से चौथे भाव में गुरु युक्त हो वा देखता हो तो लकड़ी का गृह होता है।।४९।।

कारकांशाच्च पाताले रवियुक्तनिरीक्षिते।
तृणावेष्टितगृहं तस्य जायते नात्र संशयः।।५०।।

कारकांश से चौथे भाव में सूर्य युत हो वा देखता हो तो फूस का गृह होता है।।५०।।

कारकांशात्पञ्चमभावफलम्—

स्वांशे तत्सुते वापि गुरुचन्द्राभ्यां च ग्रन्थकृत्।
भृगुणा किञ्चिदूनोऽसौ तस्मान्न्यूनो बुधेन च।।५१।।

आत्मकारकांश में अथवा उससे पाँचवें स्थान में चन्द्रमा-गुरु हों तो ग्रंथ बनाने वाला होता है।

यदि शुक्र हों तो कुछ न्यून होता है और बुध हो तो और भी न्यून होता है।।५१।।

सुराचार्येण सर्वज्ञः ग्रन्थकर्त्ता तथैव च।
वेदवेदान्तविच्चापि न वाग्मी शाब्दिकेऽपि च।।५२।।

केवल गुरु हो तो सर्वज्ञ और ग्रन्थकर्त्ता होता है तथा वेद-वेदान्त को जानने वाला वैयाकरणी होते हुए भी वाग्मी नहीं होता है।।५२।।

न्यायज्ञः धरणीजेन बुधे मीमांसकस्तथा।
सभामूकस्तु शनिना गीतज्ञो रविणा तथा।।५३।।

यदि भौम हो तो नैयायिक, बुध हो तो मीमांसक, शनि हो तो सभा में मूक रहने हाला और सूर्य हो तो गानविद्या में पंडित।।५३।।

शशिना सांख्ययोगज्ञः काव्यज्ञश्च तथा द्विज।
केतुना गणितज्ञश्च जायते नात्र संशयः।।५४।।

चन्द्रमा हो तो सांख्यशास्त्र और काव्य का पंडित और केतु हो तो गणित का पंडित होता है।।५४।।

उक्तफलानां साफल्यं गुरुसम्बन्धमात्रतः।
कारकांशाद्धने केचित्फलमेवं ब्रुवन्ति हि।।५५।।

जो योग ऊपर कहे गये हैं सभी में गुरु का योग और दृष्टि हो तो योग का फल अवश्य होता है। किसी-किसी का मत है कि कारकांश से दूसरे स्थान में भी इसी प्रकार विचार करना चाहिए।।५५।।

कारकांशात्षष्ठभावफलम्—

स्वांशात्तृतीयगे षष्ठे च पापस्तिष्ठेच्चे द् द्विज।
कर्षको जायते बालः नात्र कार्या विचारणा।।५६।।

आत्मकारक से तीसरे, छठे स्थान में पापग्रह हों तो जातक किसान होता है।।५६।।

कारकांशात्सप्तमभावफलम्—

कारकांशाच्च द्यूने चेद्गुरुचन्द्रयुते द्विज।
सुन्दरी गृहिणी तस्य पतिभक्तिपरायणा।।५७।।

आत्मकारक से सातवें भाव में गुरु-चन्द्रमा हों तो जातक की स्त्री सुन्दरी और पतिव्रता होती है।।५७।।

राहुणा विधवा भार्या जायते नात्र संशयः।
शनिना च वयोधिक्या रोगिणी वा तपस्विनी।।५८।।

यदि सातवें राहु हो तो विधवा स्त्री का संयोग होता है। यदि शनि हो तो अवस्था में अधिक, रोगिणी या तपस्विनी होती है।।५८।।

भौमेन विकलाङ्गी च तथा कान्ताद्यलक्षणा।
रविणा स्वकुले गुप्ता आसक्ता परवेश्मनी।।५९।।

भौम हो तो अंग से हीन, सूर्य हो तो अपने कुल में गुप्तरीति से रहती हुई दूसरे के वश में रहती है।।५९।।

बुधे कलावती ज्ञेया कलाभिज्ञा प्रजायते।
शुक्रेण तद्विज्ञेया निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।६०।।

बुध हो तो कला को जानने वाली स्वयं कलाविद् होती है। इसी प्रकार शुक्र से भी जानना चाहिए।।६०।।

कारकांशादष्टमभावफलम्—

कारकांशाल्लये चन्द्रे कुजराहुनिरीक्षिते।
क्षयरोगो भवेत्तस्य श्वासकासादिरोगयुक्।।६१।।

कारकांश से आठवें भाव में चन्द्रमा हो और भौम-राहु से देखा जाता हो तो जातक क्षयरोग और श्वास-कास रोग से युक्त होता है।।६१।।

कारकांशान्नवमभावफलम्—

कारकांशाच्च नवमे शुभखेटयुतेक्षिते।
सत्यवादी गुरोर्भक्तः स्वधर्मनिरतो भवेत्।।६२।।

कारकांश से नवम स्थान शुभग्रह से युत-दृष्ट हो तो जातक सत्यवादी, गुरुभक्त, अपने धर्म में आसक्त होता है।।६२।।

कारकांशाच्च नवमे पापग्रहयुतेक्षिते।
स्वधर्मनिरतो बालो मिथ्यावादी भवेद्द्विज।।६३।।

कारकांश से नवम स्थान पापग्रह से युत-दृष्ट हो तो अपने धर्म से रहित और असत्यवादी होता है।।६३।।

कारकांशाच्च नवमे शनिराहुयुतेक्षिते।
गुरुद्रोही भवेद्विप्र शास्त्रेषु विमुखो नरः।।६४।।

कारकांश से नवम भाव शनि-राहु से दृष्ट-युत हों तो गुरु से द्रोह करने वाला और मूर्ख होता है।।६४।।

कारकांशाच्च नवमे गुरुभानुयुतेक्षिते।
तदापि गुरुद्रोही स्याद्गुरुवाक्यं न मन्यते।।६५।।

कारकांश से नवम भाव गुरु-सूर्य से युत-दृष्ट हों तो भी गुरुद्रोही और गुरु के वचन को न माननेवाला होता है।।६५।।

कारकांशाच्च नवमे भृगुभौमयुतेक्षिते।
षड्वर्गाधिकयोगे च मरणं पारदारिकः।।६६।।

कारकांश से नवम भाव शुक्र-भौम से युत-दृष्ट हों तो और इन्हीं का षड्वर्ग अधिक हो तो परस्त्री के द्वारा मरण होता है।।६६।।

कारकांशाच्च नवमे बुधयुक्तेक्षिते द्विज।
परस्त्रीसङ्गमाद्बालो बन्धको जायते ध्रुवम्।।६७।।

कारकांश से नवम भाव बुध से युत-दृष्ट हो तो परस्त्रीसंगम से दुष्ट प्रकृति का होता है।।६७।।

कारकांशाच्च नवमे गुरुयुक्तेक्षिते यदा।
स्त्रीलोलुपो भवेद्बालो विषयी नैव जायते।।६८।।

कारकांश से नवम भाव गुरु से युत-दृष्ट हो तो स्त्रीलोलुप होता है, किन्तु विषयी नहीं होता है।।६८।।

कारकांशाद्दशमभावफलम्—

दशमे कारकांशाच्च बुधेन समवीक्षिते।
व्यापारे बहुलाभश्च महत्कर्मविचक्षणः।।६९।।

कारकांश से दशम भाव बुध से देखा जाता हो तो व्यापार में बहुत लाभ और बड़े-बड़े काम होते हैं।।६९।।

कारकांशाच्च दशमे रविणा संयुतो यदि।
गुरुदृष्टे तदा विप्र जायते योगकारकः।।७०।।

कारकांश से दशम में रवि हो और गुरु से देखा जाता हो तो राजयोग होता है।।७०।।

कारकांशाच्च दशमे शुभखेटनिरीक्षिते।
स्थिरचित्तो भवेद्बालो गम्भीरो बहुवीर्यवान्।।७१।।

कारकांश से दशम भाव को शुभग्रह देखता हो तो बालक स्थिरचित्त, गंभीर और बलवान् होता है।।७१।।

कारकांशाद्व्ययभावफलम्—

कारकांशाद्व्ययस्थाने उच्चस्थे च शुभग्रहे।
सङ्गतिर्जायते तस्य शुभलोकमवाप्नुयात्।।७२।।

कारकांश से बारहवें भाव में अपनी उच्चराशि में कोई शुभग्रह हो तो उस जातक को सद्गति और शुभ लोक की प्राप्ति होती है।।७२।।

कारकांशाद्व्यये केतौ शुभखेटैर्युतेक्षिते।
तदापि जायते मुक्तिः सायुज्यपदमाप्नुयात् ।।७३।।

कारकांश से बारहवें भाव में केतु हो, शुभग्रह से देखा जाता हो वा दृष्ट हो तो भी मुक्ति होती है और स्वर्ग की प्राप्ति होती है।।७३।।

मेषेऽथ वापि कोदण्डे कारकांशात् व्यये शिखी।
शुभग्रहेण सन्दृष्टे कैवल्यपदमाप्नुयात्।।७४।।

कारकांश से बारहवें भाव में मेष वा धन राशि में केतु हो, शुभग्रह से दृष्ट हो तो मोक्षपद की प्राप्ति होती है।।७४।।

केवलेऽपि व्यये केतुः पापग्रहयुतेक्षिते।
न मुक्तिर्जायते तस्य शुभलोकं न पश्यति।।७५।।

रविणा संयुते केतौ कारकांशाद्व्ययस्थिते।
गौर्यां भक्तिर्भवेत्तस्य शाक्तिको जायते नरः।।७६।।

केवल बारहवें भाव में केतु हो और पापग्रह से युत-दृष्ट हो तो उसकी मुक्ति नहीं होती है और मोक्ष भी नहीं होता है। कारकांश से बारहवें भाव में केतु सूर्य से युत हो तो पार्वती की भक्ति करने वाला शाक्त होता है।।७५-७६।।

रविभक्तिर्भवेत्तस्य निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।
चन्द्रेण संयुते केतौ कारकांशात् व्ययस्थिते।।७७।।

कारकांश से बारहवें केतु चन्द्रमा से युत हो तो सूर्य का उपासक होता है।।७७।।

शुक्रेण संयुते केतौ कारकांशात् व्ययस्थिते।
समुद्रतनयाभक्तिर्जायतेऽसौ समृद्धिमान्।।७८।।

कारकांश से बारहवें केतु शुक्र से युत हो तो लक्ष्मी का उपासक और धनी होता है।।७८।।

कुजेन स्कन्दभक्तो वा जायते द्विजसत्तम।
वैष्णवो बुधसौरिभ्यां गुरुणा शिवभक्तिमान्।।७९।।

भौम से युत हो तो स्कंद (स्वामिकार्तिक) की भक्ति, बुध-शनि से युत हो तो विष्णु का उपासक, गुरु से युत हो तो शिव का उपासक।।७९।।

राहुणा तामसीं दुर्गां भूतप्रेतादिसेवकृत्।
हेरम्बभक्तः शिखिना स्कन्दभक्तोऽथ वा भवेत्।।८०।।

राहु हो तो तामसी दुर्गा का और भूतप्रेतादि का सेवक होता है। केतु हो तो गणेश वा स्कंद का उपासक।।८०।।

कारकांशात् व्यये शौरिः पापराशौ यदा भवेत्।
तदैव क्षुद्रदेवस्य भक्तिस्तस्य न संशयः।।८१।।

कारकांश से बारहवें शनि पापग्रह की राशि में हो तो क्षुद्रदेवता का उपासक।।८१।।

पापर्क्षेऽपि व्यये शुक्रस्तदापि क्षुद्रसेवकः।
कारकान्न्यूनभागो हि अमात्यो जायते ग्रहः।।८२।।

बारहवें भाव में पापग्रह की राशि में शुक्र हो तो भी क्षुद्रदेवता का सेवक

होता है। आत्मकारक से न्यून अंशवाला अमात्यकारक होता है।।८२।।

अमात्यात् द्वादशे राशौ पापर्क्षे पापसंयुते।
तदापि क्षुद्रदेवस्य भक्तिर्भवति निश्चितम्।।८३।।

अमात्य से बारहवें भाव में पापग्रह की राशि पापयुत हो तो भी क्षुद्रदेवता का उपासक होता है।।८३।।

विशेषफलमाह—

अंशात्त्रिकोणे पापे द्वे तान्त्रिको जायते नरः।
पापदृष्टे क्षुद्रदेवः शुभेन शुभसेवकः।।८४।।

आत्मकारक से ९वें, ५वें भाव में दो पापग्रह हों तो जातक तांत्रिक होता है। पापग्रह देखता हो तो क्षुद्रदेवता का और शुभग्रह देखता हो तो शुभ देवता का उपासक होता है।।८४।।

पापैर्निरीक्षिते तत्र तन्त्रविग्राहको भवेत्।
शुभैर्निरीक्षिते वापि तन्त्रानुग्रहकारकः।।८५।।

यदि पापग्रह देखते हों तो निग्राहक और शुभग्रह देखते हों तो अनुग्राहक होता है।।८५।।

कारकांशेन्दुशुक्रौ च शुभग्रहनिरीक्षितौ।
रसवादी भवेद्बालो धातूनां भस्मकारकः।।८६।।

कारकांश में चन्द्रमा और शुक्र हों तथा शुभग्रह से देखे जाते हों तो रस बनाने वाला वैद्य होता है।।८६।।

शुक्रेन्दू बुधसन्दृष्टौ सद्वैद्यो हि नरो भवेत्।
पीयूषपाणिः कुशलः सर्वरोगहरो द्विज।।८७।।

शुक्र-चन्द्रमा को बुध देखता हो तो सद्वैद्य, कुशल और सभी रोगों को हरने वाला होता है।।८७।।

अंशाच्चतुर्थगे चन्द्रे दैत्याचार्यनिरीक्षिते।
श्वेतकुष्ठी भवेन्नूनं निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।८८।।

कारक से चौथे स्थान में चन्द्रमा हो और शुक्र से देखा जाता हो तो श्वेतकुष्ठी होता है।।८८।।

अंशाच्चतुर्थगे चन्द्रे धरापुत्रेण वीक्षिते।
राजरोगो भवेत्तस्य रक्तपित्तार्तिको भवेत्।।८९।।

कारक से चौथे स्थान में चन्द्रमा को भौम देखता हो तो राजरोग (यक्ष्मा) और रक्तपित्त से कष्ट होता है।।८९।।

अंशाच्चतुर्थगे चन्द्रे शिखिना वीक्षिते सति।
नीलकुष्ठं भवेत्तस्य निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।९०।।

केतु कारकांश से चौथे चन्द्रमा को देखता हो तो नीलकुष्ठ होता है।।९०।।

चतुर्थे पञ्चमे वापि युतौ राहुकुजौ यदि।
क्षयरोगो भवेत्तस्य चन्द्रदृष्ट्या विशेषतः।।९१।।

कारकांश से चौथे या पाँचवें राहु-भौम हों तो क्षयरोग होता है। चन्द्रमा देखता हो तो विशेषकर कुष्ठरोग होता है।।९१।।

स्वांशात्तुर्ये सुते वापि केवलः संस्थितः कुजः।
पिटकादि भवेत्तस्य निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।९२।।

कारकांश से चौथे या पाँचवें केवल भौम हो तो पिटक आदि क्षुद्र रोग होते हैं।।९२।।

तत्र स्थिते च शिखिना ग्रहणीरोगपीडितः।
स्वर्भानुर्गुलिके तत्र विषवैद्यो विषार्त्तिकः।।९३।।

यदि उन्हीं भावों में केतु हो तो संग्रहणी रोग होता है। यदि उक्त भावों में राहु और गुलिक हो तो विषवैद्य या विष से कष्ट पाने वाला होता है।।९३।।

कारकांशाद्धने तुर्ये केवले संस्थिते शनौ।
धनुर्विद्याधिको बालो जायते नात्र संशयः।।९४।।

कारकांश से दूसरे या चौथे भाव में शनि हो तो धनुष विद्या को जानने वाला होता है।।९४।।

कारकांशात्सुखे वित्ते केवले संस्थिते शिखी।
घटिकायन्त्रवादी स्यादिष्टशोधनतत्परः।।९५।।

कारकांश से चौथे वा दूसरे भाव में यदि केतु हो तो घटिकायंत्र को जानने वाला होता है।।९५।।

उक्तस्थाने स्थिते सौम्ये जातस्तु परमहंसकः।
तथा संन्यस्तकं ज्ञेयं निर्विशङ्को द्विजोत्तम।।९६।।

पूर्वोक्त स्थान में बुध हो तो परमहंस या संन्यासी दंडधारी।।९६।।

उक्तस्थानस्थिते राहौ लोहयन्त्रादिकारकः।
रविणा खड्गधारी च कुजेन कुन्तधारकः।।९७।।

राहु हो तो लोह के यंत्रों को बनाने वाला, रवि हो तो खड्ग धारण करने वाला और भौम हो तो कुंत (भाला) धारण करने वाला होता है।।९७।।

चन्द्रेज्यौ कारकांशे च तथा तत्पञ्चमे स्थितौ।
ग्रन्थकर्त्ता भवेन्नूनं सर्वविद्याविशारदः।।९८।।

चन्द्रमा और गुरु कारकांश में हो अथवा उससे पाँचवें भाव में हो तो बालक सभी विद्याओं को जानने वाला और ग्रंथकार होता है।।९८।।

उक्तस्थानगते शुक्रे स्वल्पग्रन्थकरो द्विज।
उक्तस्थानगते सौम्ये किञ्चिद्ग्रन्थकरो ह्यसौ।।९९।।

यदि उक्त स्थान में शुक्र हो तो अल्प ग्रंथकार होता है। यदि बुध हो तो कुछ ग्रंथकार होता है।।९९।।

शुक्रेण काव्यकर्ता च प्राकृतग्रन्थतत्परः।
गुरुणा सर्वग्रन्थानां कारको द्विजसत्तम।।१००।।

शुक्र हो तो काव्य करने वाला, गुरु हो तो सभी ग्रंथों को करने वाला होता है।।१००।।

उक्तस्थानगतः शौरिः सभाजाड्यो भवेन्नरः।
मीमांसको भवेन्नूनमुक्तस्थानगते बुधः।।१०१।।

यदि शनि हो तो सभामूक होता है। उक्त स्थान में बुध हो तो मीमांसक होता है।।१०१।।

कारकांशे धरासूनुर्लग्ने वा नवपञ्चमे।
नैयायिको भवेन्नूनं सुष्ठुकाव्यकरो नरः।।१०२।।

कारकांश लग्न में वा नवम-पंचम में हो तो नैयायिक और कविता करने वाला होता है।।१०२।।

कारकांशे निशानाथे त्रिकोणे चाथ लग्नगे।
सांख्यशास्त्रज्ञनिपुणो जायते मतिमान्नरः।।१०३।।

कारकांश में वा त्रिकोण वा लग्न में यदि चन्द्रमा हो तो सांख्यशास्त्र को जानने वाला होता है।।१०३।।

कारकांशे स्थिते केतौ पञ्चमे वापि संस्थिते।
गणितज्ञो भवेन्नूनं ज्योतिश्शास्त्रविशारदः।।१०४।।

कारकांश में या पाँचवें भाव में केतु हो तो गणित को जानने वाला ज्योतिषशास्त्र में प्रवीण होता है।।१०४।।

सुराचार्येण सम्बन्धात्साम्प्रदायिकसिद्धिकृत्।
ये योगा पञ्चमे भावे यथावद्भाषितं मया।।१०५।।

सभी योगों में गुरु का संबंध होने से साम्प्रदायिक कार्यों की सिद्धि होती है। जो योग पाँचवें भाव में कहा है उसमें गुरु का योग होने से फल होता है।।१०५।।

वित्तस्थानेऽपि ते ज्ञेया पूर्ववत्फलसिद्धिदम्।
कोऽपि तृतीयभावे तु कथयन्ति पुरो द्विज।।१०६।।

जो योग मैंने पाँचवें भाव में कहे हैं उन्हें दूसरे भाव में भी जानना चाहिए। किसी प्राचीन आचार्य ने तीसरे भाव में भी देखने को कहा है।।१०६।।

कारकांशे धने केतौ तथा भाग्यालये गते।
पापग्रहेण सन्दृष्टे वाचालश्च भवेन्नरः।।१०७।।

कारकांश में वा उससे दूसरे या ९वें भाव या ५वें भाव में केतु हो और पापग्रह से देखा जाता हो तो मनुष्य वाचाल होता है।।१०७।।

अंशाल्लग्नात्तथारूढाद्धने रन्ध्रे स्थिते द्विज।
पापसाम्ये च विज्ञेयो योगः केमद्रुमो भवेत्।।१०८।।

कारकांश लग्न तथा आरूढलग्न से दूसरे, आठवें भाव में यदि समान पापग्रह हो तो केमद्रुम योग होता है।।१०८।।

चन्द्रदृष्टिविशेषेण योगः केमद्रुमो मतः।
द्वितीयाष्टमभावाभ्यां योगोऽयं कथ्यते द्विज।।१०९।।

चन्द्रमा देखता हो तो विशेष रूप से केमद्रुम होता है। दूसरे और आठवें भाव में विशेषकर यह योग होता है।।१०९।।

कारकांशेषु ये योगाः पूर्वोक्ता गदितो मया।
तत्तद्राशिदशापाके सर्वेषां फलमादिशेत्।।११०।।

कारकांश से जिन योगों को मैंने कहा है उनका फल उन राशियों के दशा-अंतर में होता है।।११०।।

एवं दशाप्रदाद्राशेर्द्वितीयाष्टमयोर्द्विज।
ग्रहसाम्ये च विज्ञेयः केमद्रुः शशिनेक्षिते।।१११।।

इसी प्रकार दशाप्रद राशि से दूसरे, आठवें भाव में ग्रहसाम्य हो और चन्द्रमा देखता हो तो केमद्रुम योग होता है।।१११।।

दशाप्रारम्भसमये शोधयेज्जन्मलग्नवत्।
सूर्यादिखेचरान् स्पष्टान् साधयेज्जन्मवद्द्विज।।११२।।

दशा प्रवेश समय में सूर्यादि ग्रहों और लग्न को साधना चाहिए।।११२।।

तत्र वित्ताष्टमे भावे ग्रहसाम्यो यदा भवेत्।
तदा केमद्रुमो ज्ञेयश्चन्द्रदृष्ट्या विशेषतः।।११३।।

उस समय उक्त भावों में ग्रहसाम्य और चन्द्रमा की दृष्टि हो तो केमद्रुम योग होता है।।११३।।

एवं तन्वादिभावानां दशारम्भेषु योजयेत्।
तत्तद्ग्रहानुसारेण फलं वाच्यं बुधैः सदा।।११४।।

इसी प्रकार तनु आदि भावों की दशा के आरंभ में भी योजना करना चाहिए। क्योंकि उस समय के ग्रह के अनुसार ही फल होता है।।११४।।

इति बृहत्पाराशरहोरायां पूर्वखण्डे सुबोधिन्यां कारकांशफलकथनं नामाऽष्टमोऽध्यायः।

अथाऽऽरूढमाह

अधुना सम्प्रवक्ष्यामि राश्यारूढपदं द्विज।
राशीनां द्वादशानान्तु यावदीशाश्रयो भवेत्।।१।।

अब मैं राशि का आरूढ़-पद कहता हूँ— बारहों राशियों का उसके स्वामी जहाँ बैठे हों, उस राशि के राशि की संख्या जितनी हो।।१।।

संख्या त्वीशोदयादग्रे समाना तत्पदं वदेत्।
राशिवद्ग्रह आरूढं ज्ञायते गणकैर्जनैः।।२।।

उतनी संख्या और आगे गिनने से जो राशि हो वही आरूढ़ लग्न या पद होता है। इसी प्रकार अर्थात् राशि के ही समान ग्रहों का भी आरूढ़ लग्न होता है।।२।।

यावद्दूरं यस्य राशिस्तावत्संख्याक्रमेण वै।
अग्रे लग्नारूढपदं ज्ञायते द्विजसत्तम।।३।।

जिस ग्रह की राशि उस ग्रह से जितनी दूर हो उतनी ही संख्या आगे उस ग्रह की लग्नारूढ़ राशि होती है।।३।।

जनुर्लग्नाल्लग्नस्वामी यावद्दूरं हि तिष्ठति।
तावद्दूरं तदग्रे च लग्नारूढं च कथ्यते।।४।।

जन्मलग्न से लग्नेश जितनी दूर राशि पर हो उतनी ही राशि आगे जो राशि हो उसे लग्नारूढ़ राशि रहते हैं।।४।।

यदि लग्नेश्वरः स्वर्क्षे कलत्रे संस्थितोऽथवा।
आरूढलग्नमित्याहुर्जन्मलग्नं द्विजोत्तम।।५।।

यदि लग्नेश अपनी राशि के सप्तम में हो तो जन्मलग्न ही आरूढ़ लग्न होती है।।५।।

एकं तन्वादिभावानां भावारूढपदं भवेत्।
यत्र यत्र ग्रहा लग्ने तत्र तत्र सुसंलिखेत्।।६।।

इसी प्रकार तन्वादि भावों का प्रत्येक का आरूढ़ बनाना चाहिए।।६।। इस प्रकार लग्नारूढ़ को लग्न मानकर चक्र बनावे। उसमें जो ग्रह जिस स्थान में हो वहाँ लिखकर फल कहे।

विशेष— यहाँ पद और आरूढ़ शब्द दोनों एकार्थक हैं। जैमिनि के मत से यदि लग्नेश लग्न से चौथे भाव में हो तो चतुर्थभावगत राशि और सातवें भाव में हो तो दशमभावगत राशि लग्न का पद होता है। जैसे मिथुन लग्न का स्वामी बुध वृश्चिक राशि में है, मेषादि गणना से वृश्चिक की संख्या ५ है, अतः वृश्चिक से ५वीं मेष राशि ही मिथुन लग्न का पद हुआ। प्रायः लग्न के पद से ही विचार करना चाहिए।

पदादेकादशस्थानफलम्—

पदादेकादशे स्थाने शुभग्रहयुतेक्षिते।
लक्ष्मीवाञ्जायते बालः प्रजावाञ्छीलसंयुतः।।७।।

पद से ११वें भाव में शुभग्रह हों या देखते हों तो बालक धनी, पुत्रवान् और शीलवान् होता है।।७।।

वित्तोपार्जनन्यायेन नीतिवाञ्जायते सदा।
नरो न नास्तिको नूनं न तु शास्त्रविरुद्धकृत्।।८।।

सन्मार्ग से द्रव्य पैदा करने वाला नीतियुक्त होता है और धार्मिक तथा शास्त्रज्ञ होता है।।८।।

पदादेकादशे विप्र पापखेटयुतेक्षिते।
अन्यायोपार्जितं वित्तं विरुद्धं शास्त्रमार्गतः।।९।।

यदि पद से ११वें भाव में पापग्रह वा पापग्रह देखते हों तो अन्याय से द्रव्य को पैदा करने वाला और शास्त्र से अनभिज्ञ होता है।।९।।

मिश्रैर्मिश्रफलं ज्ञेयमुच्चमित्रादिक्षेत्रगः।
बहुधा जायते लाभो यत्र तत्र द्विजोत्तम।।१०।।

यदि शुभग्रह और पापग्रह दोनों से दृष्ट-युत हों तो दोनों फल होता है। यदि उच्च-मित्र आदि के गृह में हों तो प्रायः लाभ ही होता है।।१०।।

आरूढाल्लाभभवनं ग्रहः पश्येत्तु न व्ययम्।
यस्य जन्मनि सोऽपि स्यात्प्रबलो धनवानपि।।११।।

यदि शुभाशुभ ग्रह उच्चराशि में बैठे हों और ११वें भाव को देखते हों तो अनेक प्रकार से लाभ होता है, परन्तु १२वें भाव को न देखते हों तो।।११।।

दृष्टग्रहाणां बाहुल्ये तथा द्रष्टरि तुङ्गगे।
सार्गले चापि तत्रापि बह्वर्गलसमागमे।।१२।।

यदि बहुत से ग्रह अपनी उच्चराशि में होकर ११वें भाव को देखते हों और अर्गला योग करते हों।।१२।।

शुभग्रहार्गले तत्र तत्राप्युच्चग्रहार्गले।
सुखानि स्वामिनां दृष्टे लग्नभाग्यादिगेन वा।।१३।।

उच्चराशिस्थ शुभग्रह का अर्गला योग हो तो बालक अत्यंत सुख को पाता है।।१३।।

जातस्य पुंसः प्राबल्यं निर्दिशेदुत्तरोत्तरम्।
उक्तयोगेषु खेटाश्चेद्द्वादशं नैव पश्यति।।१४।।

लग्न, भाग्य में बैठे हुए ग्रह से देखा जाता हो, जो द्वादशभाव को न देखता हो तो जातक उत्तरोत्तर उन्नति करता है।।१४।।

पदाद्द्वादशभावादीनां फलम्—

आरूढाद्द्वादशे विप्र शुभपापयुतेक्षिते।
व्ययाधिक्यं भवेदेवं विशेषोपार्जनात्तथा।।१५।।

पद से १२वें भाव में शुभग्रह-पापग्रह युत हों और देखते हों तो विशेष लाभ के कारण द्रव्य का अधिक खर्च होता है।।१५।।

शुभग्रहे सुमार्गेषु कुमार्गात्पापखेचरैः।
मिश्रैर्मिश्रफलं वाच्यं यथालाभेषु पूर्ववत्।।१६।।

शुभग्रह का संबंध होने से सुमार्ग में और पापग्रह का संबंध होने से कुमार्ग में व्यय होता है। दोनों (शुभ-पाप) के रहने से दोनों मार्ग में व्यय होता है।।१६।।

आरूढाद्द्वादशे शुक्रे भानुस्वर्भानुवीक्षिते।
राजमूलाद्व्ययं वाच्यं चन्द्रदृष्ट्या विशेषतः।।१७।।

आरूढ से १२वें शुक्र हो, सूर्य-राहु से देखा जाता हो तो राजा के द्वारा व्यय होता है। चन्द्रमा देखता हो तो विशेष व्यय होता ही है।।१७।।

आरूढाद्द्वादशे सौम्ये शुभखेटयुतेक्षिते।
ज्ञातिमध्ये व्ययो नित्यं पापदृक्कलहाद्व्ययः।।१८।।

आरूढ़ से १२वें भाव में बुध हो और शुभग्रह से दृष्ट वा युत हो तो जाति (भाई-बंधु) में व्यय होता है और पापग्रह देखता हो तो कलह होने से व्यय होता है।।१८।।

पदाद्व्यये सुराचार्ये वीक्षिते चान्यखेचरैः।
करमूलाद्व्ययं वाच्यं करव्याजेन वै द्विज।।१९।।

पद से १२वें भाव में गुरु हो और अन्य ग्रहों से देखा जाता हो तो कर (लगान) आदि से व्यय होता है।।१९।।

आरूढाद्द्वादशे सौरी धरापुत्रेण संयुते।
अन्यग्रहेक्षिते विप्र भ्रातृमूलाद्धनव्ययम्।।२०।।

आरूढ से व्ययभाव में शनि हो और भौम से देखा जाता हो तथा शेष ग्रहों से देखा जाता हो तो भाई, कुटुंब के कारण धन का व्यय होता है।।२०।।

पदाद्द्वादशे भावे ये योगा गदिता मया।
लाभस्थानेषु ते योगा लाभयोगकराः सदा।।२१।।

पद से बारहवें भाव में जिन योगों को मैंने कहा है वे ही योग लाभभाव में हों तो लाभ करने वाले होते हैं।।२१।।

पदात्सप्तमभावफलम्—

पदाच्च सप्तमे राहुरथवा संस्थितः शिखी।
उदरव्यथायुतो बालः शिखिना पीडितोऽधिकम्।।२२।।

पद से सातवें भाव में राहु अथवा केतु हो तो बालक पेट की बीमारी से व्यथित रहता है। केतु से अधिक पीड़ायुक्त होता है।।२२।।

पदाच्च सप्तमे केतुः पापखेटयुतेक्षिते।
साहसी श्वेतकेशी च दीर्घलिङ्गी भवेन्नरः।।२३।।

पद से सातवें केतु हो और पापग्रह से युत वा दृष्ट हो तो बालक साहसी, सफेद बालों वाला और दीर्घलिंगी होता है।।२३।।

पदाच्च सप्तमे स्थाने गुरुशुक्रनिशाकराः।
एको द्वयं त्रयं वा स्याल्लक्ष्मीवान् कारयेद्बुधः।।२४।।

पद से सातवें भाव में गुरु, शुक्र, चन्द्रमा तीनों हों वा इनमें से एक या दो हों तो बालक धनी होता है।।२४।।

तुङ्गर्क्षे सप्तमे खेटे शुभो वाप्यशुभः पदात्।
श्रीमान् सोऽपि भवेन्नूनं सत्कीर्त्तिसहितो द्विज।।२५।।

पद से सातवें भाव में अपनी उच्चराशि में शुभग्रह या पापग्रह में से कोई हो तो बालक कीर्त्तिमान् और लक्ष्मीवान् होता है।।२५।।

ये योगाः सप्तमे भावे आरूढात् कथिता मया।
ते योगा द्यूनवच्चिन्त्या वित्तभावेऽपि वै द्विज।।२६।।

पद से सातवें भाव में जिन योगों को मैंने कहा है उनको उसी प्रकार दूसरे भाव में भी विचार करना चाहिए।।२६।।

तुङ्गस्थो रौहिणेयो वा जीवो वा शुक्र एव वा।
एको बली धनगतः श्रियं दिशति देहिनः।।२७।।

यदि बुध, गुरु, शुक्र इनमें से कोई भी अपनी उच्चराशि में बली होकर धनभाव में हो तो धन को देता है।।२७।।

ये योगाश्च पदे लग्ने यथावद्गदिता मया।
कारकांशस्थकुण्डल्यां निर्बाधका विचिन्तयेत्।।२८।।

जो योग लग्न पद में कहे गये हैं उनको कारकांश कुंडली में भी देखना चाहिए।।२८।।

आरूढाद्वित्तभे सौम्ये सर्वदेशाधिपो भवेत्।
सर्वज्ञो वा भवेद्बालः कविर्वाग्मी च भार्गवे।।२९।।

पद से दूसरे भाव में शुभग्रह हो तो सभी देशों का स्वामी होता है अथवा सर्वज्ञ होता है। केवल शुक्र हो तो कवि और वक्ता होता है।।२९।।

आरूढात्केन्द्रकोणेषु तथा लाभपदे द्विज।
लग्नदारपदे वापि सबलग्रहसंयुते।।३०।।
श्रीमांश्च जायते नूनं देशं विख्यातिमान् भवेत्।
षष्ठाष्टमे व्ययस्थाने श्रीमान्स न भवेत्तदा।।३१।।

पद से केन्द्र तथा कोण में लाभ पद में अथवा लग्न दारपद में बलवान् ग्रह हों तो श्रीमान् और प्रसिद्ध होता है। यदि छठे, आठवें, बारहवें स्थान में हों तो श्रीमान् नहीं होता है।।३०-३१।।

पदाल्लग्ने सप्तमे वा केन्द्रत्रिकोणोपचये।
सुवीर्यसंस्थिते खेटे भार्याभर्तृसुखप्रदः।।३२।।

पद से लग्न में वा सातवें वा केन्द्र, त्रिकोण, उपचय स्थान में बली ग्रह हों तो स्त्री, भाई आदि का सुख होता है।।३२।।

एवं लग्नपदाद्विप्र पुत्रभावादि चिन्तयेत्।
मित्रामित्रे विजानीयात्त्रिकभावेषु वै द्विज।।३३।।

इसी प्रकार लग्नपद से पुत्रभाव आदि का भी विचार करना चाहिए। यदि दोनों में मित्रता हो तो मित्रता, अन्यथा शत्रुता होती है।।३३।।

लग्नारूढं दारपदं मिथः केन्द्रगते यदि।
लाभे वा त्रित्रिकोणे वा तदा राजा धराधिपः।।३४।।

लग्नपद और दारपद परस्पर केन्द्रगत, लाभ, तृतीय वा त्रिकोण में हो तो पृथ्वी का राजा होता है।।३४।।

एवं दारादिभावानामर्जयित्वारिमित्रता।
जातकद्वयमालोक्य चिन्तनीयं विचक्षणैः।।३५।।

इसी प्रकार दारा आदि भावों के शत्रु-मित्रादि का विचार कर उनके फलों को भी कहना चाहिए।।३५।।

इति पाराशरहोरायां पूर्वखण्डे सुबोधिन्यां आरूढफलाध्यायः नवमः।

उपपदप्रकरणम्

पराशर उवाच—

अधुना सम्प्रवक्ष्याम्युपपदं च द्विजोत्तम।
यस्य विज्ञानमात्रेण जायते फलसूचकः।।१।।

अब मैं उपपद को कह रहा हूँ, जिसके ज्ञान मात्र से फल का निर्णय होता है।।१।।

लग्ने विषमे विप्र धनस्य पदोपपदम्।
समे लग्ने व्ययस्य च पदमुपपदं भवेत्।।२।।

लग्न यदि विषम हो तो धनभाव का पद उपपद होता है, यदि समलग्न हो तो बारहवें का पद उपपद होता है।।२।।

तदेवोपारूढगौणपदं च कथ्यते द्विज।
तस्मादेव फलं सर्वं शुभाशुभं विचारयेत्।।३।।

उपपद को ही उपारूढ़ और गौणपद कहते हैं। इसी से शुभ-अशुभ फलों का विचार करना चाहिए।।३।।

पापाक्रान्ते पापयुते पापर्क्षे पापवीक्षिते।
पापसम्बन्धसंयोगे उपपदाद् द्वितीयके।।४।।

उपपद से दूसरे भाव में पापग्रह हो, पापग्रह की राशि पापग्रह से देखी जाती हो तो।।४।।

प्रव्रज्या योगो विज्ञेयः संन्यासो भवति ध्रुवम्।
तथा भार्याविरोधी स्यादथवा स्त्रीविनाशकृत्।।५।।

व्रज्या (संन्यास) योग होता है। इसमें उत्पन्न बालक अवश्य संन्यासी होता है तथा स्त्री का विरोधी वा स्त्री का नाश करने वाला होता है।।५।।

रवेः पापत्वमात्रैव सिंहर्क्षे स्वोच्चभे सति।
पूर्वोक्तं नो फलं ज्ञेयं जायते गृहिणीसुखम्।।६।।

यदि सूर्य सिंह राशि में वा अपनी उच्चराशि में हो तो सूर्य पापग्रह नहीं होता है। ऐसी स्थिति का सूर्य उक्त भाव में हो तो प्रव्रज्या योग नहीं होता अपितु स्त्री का सुख होता है।।६।।

मेषादिपापराशौ चेत्संस्थिते दिवसाधिपे।
पूर्वोक्तं च फलं ज्ञेयं प्रव्रज्यादारनाशकः।।७।।

यदि मेषादि पापराशियों में सूर्य हो तो पूर्वोक्त फल होता है और स्त्री का नाश होता है।।७।।

उपपदाच्च द्वितीयं वै शुभसम्बन्धदृष्टियुक्।
शुभर्क्षे शुभसंयोगे पूर्वोक्तफलदो भवेत्।।८।।

उपपद से दूसरे भाव में शुभग्रह का संबंध हो, शुभग्रह देखते हों अथवा शुभग्रह की राशि हो तो पूर्वोक्त फल होता है।।८।।

उपपदे द्वितीये वा नीचांशे नीचखेटयुक्।
नीचसम्बन्धयोगे वा प्रव्रज्यादारनाशकृत्।।९।।

उपपद में उससे दूसरे भाव में नीचांश वा नीच राशि में नीच ग्रह युक्त हो, नीचस्थ ग्रह से संबंध होता हो तो प्रव्रज्या योग और स्त्री का नाश होता है।।९।।

उच्चांशे उच्चराशौ वा उच्चसम्बन्धदृष्टियुक्।
बहुदारा भवेत्तस्य रूपलक्षणसंयुताः।।१०।।

यदि उच्चांश का उच्चराशि में उच्चस्थ ग्रह से संबंध और दृष्टि हो तो उसे रूपवती अनेक स्त्रियाँ होती हैं।।१०।।

उपपदे द्वितीये वा युग्मर्क्षे संस्थिते यदा।
तत्र प्रजातः पुरुषः बहुदारसमन्वितः।।११।।

उपपद वा दूसरे भाव में मिथुन राशि हो तो जातक को अनेक स्त्रियाँ होती हैं।।११।।

उपपदे द्वितीये वा स्वस्वामिखेटसंयुते।
उत्तरायुषि निर्दारो भवत्येव न संशयः।।१२।।
स्वराशौ संस्थिते वापि नित्याख्ये दारकारके।
उत्तरायुषि भो विप्र! निर्दारः स नरो भवेत्।।१३।।

उपपद या दूसरा भाव अपने स्वामी शुभग्रह से युत हो तो आयुष्य के उत्तरार्ध में बिना स्त्री के पुरुष होता है।।१३।।

उपपदेऽपि तुङ्गर्क्षे नित्याख्ये दारकारके।
उत्तमकुलाद्दारलाभो नीचस्थे तु विपर्ययः।।१४।।

उपपद में उच्च में नित्य स्त्रीकारक हो तो उत्तम कुल से स्त्री का लाभ होता है। नीच राशि में हो तो विपर्यय होता है।।१४।।

शुभग्रहयुते दृष्टे उपपदे दारकारके।
सुन्दरी लभ्यते भार्या भव्या रूपवती द्विज।।१५।।

उपपद और स्त्रीकारक शुभग्रह से युत-दृष्ट हों तो बहुत सुन्दर स्त्री प्राप्त होती है।।१५।।

उपपदे द्वितीये वा शनिराहुयुते सति।
अपवादात्स्त्रियस्त्यागो भार्यानाशोऽथवा भवेत्।।१६।।

उपपद वा द्वितीय में शनि-राहु युत हों तो अपवाद के कारण स्त्री का त्याग या स्त्री का नाश होता है।।१६।।

उपपदे च द्वितीये वा शिखिशुक्रौ स्थितौ यदा।
रक्तप्रदररोगार्त्ता जायते तस्य भामिनी।।१७।।

उपपद या द्वितीय में केतु-शुक्र युत हों तो स्त्री रक्तप्रदर रोग से रोगिणी होती है।।१७।।

उपपदादिषु संयोगो बुधकेत्वोर्द्विजोत्तम।
अस्थिस्रावयुता बाला गृहे तस्य न संशयः।।१८।।

यदि बुध-केतु का संयोग हों तो अस्थिस्राव से स्त्री रोगिणी होती है।।१८।।

रविराहुस्तथा पङ्गुरुपपदे योगकारकः।
अस्थिज्वरवती बाला तप्ताङ्गा च दिवानिशम्।।१९।।

रवि, राहु, शनि उपपद में हों तो स्त्री अस्थिज्वर से पीड़ित होती है।।१९।।

उपपदे बुधकेतुभ्यां योगसम्बन्धके द्विज।
स्थूलाङ्गी गृहिणी तस्य जायते नात्र संशयः।।२०।।

उपपद में बुध-केतु का योग वा संबंध हो तो उसकी स्त्री स्थूल शरीर की होती है।।२०।।

उपपदे बुधक्षेत्रे भौमर्क्षे चाथवा द्विज।
मन्दारौ संस्थितौ तत्र नासिकारोगयुग्भवेत्।।२१।।

उपपद में बुध की राशि या भौम की राशि हो और शनि-भौम युत हों तो स्त्री की नाक में रोग होता है।।२१।।

यदि तत्र युतो सौरिः गुरुणा सहितो भवेत्।
कर्णरोगवती बाला नेत्ररोगयुता तथा।।२२।।

यदि गुरु-शनि का योग हो तो स्त्री कान तथा आँख के रोग वाली होती है।।२२।।

कुजसौम्यौ वान्यक्षेत्रे उपपदे द्विजोत्तम।
योगे स्वर्भानुदेवेज्यौ दन्तार्ता गृहिणी भवेत्।।२३।।

यदि भौम-बुध वा गुरु-राहु उपपद में हों तो दाँत के रोग से पीड़ित स्त्री होती है।।२३।।

उपपदे च कुम्भस्थे मीनस्थेऽपि तथा द्विज।
शनिस्वर्भानुयोगश्चेत्पंग्वंगी तस्य भामिनी।।२४।।

उपपद में कुम्भ या मीन राशि हो और उसमें शनि-राहु का योग हो तो उसकी स्त्री पंगुल (वातव्याधि से) होती है।।२४।।

ये योगाः पूर्वकथिता मया ते विप्रसत्तम।
शुभयुग्दृष्टिसंयोगे न भवेयुः फलप्रदाः।।२५।।

पूर्वोक्त जो योग कहे गये हैं वे यदि शुभग्रह से युक्त या दृष्ट हों तो फलप्रद नहीं होते हैं।।२५।।

लग्नादुपपदाद्वापि यो राशिः सप्तमो द्विज।
तदीशात्तन्नवांशाच्च फलमेव विचारयेत्।।२६।।

लग्न से वा उपपद से सातवीं राशि के जो स्वामि और उसके नवांश से भी इसी प्रकार फल का विचार करना चाहिए।।२६।।

शनिः शुक्रस्तथा चान्द्रिः सप्तमांशग्रहेभ्यश्च।
नवमे संस्थितो विप्र अपत्यरहितो नरः।।२७।।

उक्त प्रकार से सप्तमेश से नवम में शनि, शुक्र और बुध हों तो पुरुष पुत्रहीन होता है।।२७।।

पदोपपदलग्नाच्च सप्तमांशग्रहेभ्यश्च।
नवमस्थे गुरौ भावौ स्वर्भानौ योगकृत्तथा।।२८।।

उपपद से वा सप्तमांश ग्रह से नवमभाव में गुरु, सूर्य, राहु का योग हो तो।।२८।।

बहुपुत्रो भवेन्नूनं प्रतापी बलवीर्ययुक्।
प्रचण्डविजयी विप्र रिपुनिग्रहकारकः।।२९।।

बड़े बलवान् पराक्रमी, प्रतापी शत्रुओं का दमन करने वाले अनेक पुत्र होते हैं।।२९।।

उक्तस्थाने निशानाथे एकपुत्रो भवेद्द्विज।
उक्तस्थाने शुभे पापे पुत्रसौख्यं विलम्बितम्।।३०।।

उक्त स्थान में चन्द्रमा हो तो एक पुत्र होता है। यदि उक्त स्थान में शुभ-पाप दोनों हों तो विलंब से पुत्र का सुख होता है।।३०।।

उक्तस्थाने कुजशनिर्जायते च ह्यपुत्रवान्।
परपुत्रयुतो वापि सहोढ सुतवान् भवेत्।।३१।।

उक्त स्थान में भौम-शनि हों तो पुत्रहीन होता है और दूसरे के पुत्र से (दत्तक पुत्र) पुत्रवान् होता है, वा सहोदर के पुत्र से पुत्रवाला होता है।।३२।।

उक्तस्थाने चोजराशौ बहुपुत्रप्रदो भवेत्।
युग्मराशौ स्थिते तत्र स्वल्पापत्यो भवेन्नरः।।३२।।

उक्त स्थान में विषम राशि हो तो बहुत पुत्र होते हैं। समराशि हो तो अल्पसंतान होते हैं।।३२।।

उपपदे सिंहलग्ने निशानाथयुतेक्षिते।
स्वल्पापत्यो भवेन्नूनं कन्यायां कन्यका भवेत्।।३३।।

उपपद में सिंहलग्न हो और चन्द्रमा से युत वा दृष्ट हो तो थोड़ी संतान होती है, कन्या राशि हो तो कन्या होती है।।३३।।

सुतभावनवांशाच्च तथापि पुत्रकारकात्।
यद्वा त्रिंशांशकुण्डल्यां तदंशाच्च सदा द्विज।।३४।।

पंचम भाव के नवांश से, पुत्रकारक से, अथवा त्रिंशांश कुण्डली वा उसके नवांश से।।३४।।

तदीशाश्चिन्तयेद्विप्र सन्ततेर्योगमुत्तमम्।
एवं सर्वप्रकारेण चिन्तनीयं सदा बुधैः।।३५।।

वा उसके स्वामी से संतान भावों के उत्तम योगों का विचार करना चाहिए।।३५।।

उपारूढाच्च त्र्यायस्थौ शनिराहू भ्रातृनाशदौ।
एकादशे ज्येष्ठभ्रातुस्तृतीये च कनिष्ठकम्।।३६।।

उपपद से ३रे, ११वें भाव में शनि-राहु हों तो भाइयों का नाश होता है। ११वें में ज्येष्ठ भाई का और तीसरे में छोटे भाई का विचार करना चाहिए।।३६।।

उपपदैकादशस्थाने तृतीये दानवेज्यके।
व्यवहितगर्भस्य नाशः स्याद्यथा सम्भवति द्विज।।३७।।

उपपद से ११वें, ३रे स्थान में शुक्र हो तो उससे व्यवहित गर्भ माता का नाश हो जाता है।।३७।।

लग्नाद्वापि लये भावे दैत्याचार्ययुतेक्षिते।
व्यवहितगर्भस्य नाशः स्यादित्युक्तं गणकोत्तमैः।।३८।।

लग्न से आठवें भाव में शुक्र युत हो वा देखता हो तो भी व्यवहित गर्भ का नाश होता है।।३८।।

तृतीयैकादशे विप्र! कुजेज्यबुधचन्द्रमाः।
भ्रातृबाहुल्यता वाच्या प्रतापी बलवत्तरः।।३९।।

उपपद से ३रे, ११वें भाव में भौम, गुरु, बुध, चन्द्रमा हों तो प्रतापी बलवान् अधिक भाई होते हैं।।३९।।

शन्यारसंयुते दृष्टे तृतीयैकादशे द्विज।
कनिष्ठज्येष्ठयोर्नाशं भिन्नस्थे भिन्नभावहृत्।।४०।।

३, ११ को शनि-भौम देखते हों वा युत हों तो छोटे-बड़े दोनों भाइयों का नाश होता है। भिन्न भावों में हो तो उन भावों का नाश करते हैं।।४०।।

भ्रातृस्थाने युते सौरे लाभस्थे वा तृतीयगे।
स्वमात्रमेव शेषः स्यादन्यं नश्यन्ति वै द्विज।।४१।।

यदि शनि ३रे वा ११वें में हो तो केवल अपने बच जाता है और सभी भाई नष्ट हो जाते हैं।।४१।।

तृतीयैकादशे केतुर्बाहुल्यं स्याद्भगिन्ययोः।
भ्रात्रोः स्वल्पसुखं तस्य निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।४२।।

३,११ वें भाव में केतु हो तो बहनें अधिक होती हैं और भाइयों का सुख अल्प होता है।।४२।।

सप्तमेशाद्द्वितीये वै सैंहिकेययुतेक्षिते।
दंष्ट्रावान् स भवेद्बालो बहुभाग्ययुतो भवेत्।।४३।।

सप्तमेश से दूसरे भाव में राहु युक्त हो अथवा देखता हो तो बालक के दाँत बड़े-बड़े होते हैं और वह भाग्यशाली होता है।।४३।।

सप्तमेशाद्द्वितीये चेत्पुच्छनाथयुतेक्षिते।
स्तब्धवाग् जायते बालस्तथा स्खलितवाग्द्विज।।४४।।

सप्तमेश से दूसरे भाव को केतु देखता हो वा युत हो तो बालक हकलाकर बोलने वाला होता है।।४४।।

आरूढान्मृत्युभावस्थे पापाख्ये शुभवर्जिते।
शुभसम्बन्धरहिते चोशे भवति निश्चितम्।।४५।।

पद से आठवें भाव में पापग्रह हों, शुभग्रह से संबंध न हो तो चोर होता है।।४५।।

आरूढभावे सौम्ये तु सर्वदेशाधिपो भवेत्।
सर्वज्ञस्तत्र जीवे स्यात्कविर्वाग्मी च भार्गवे।।४६।।

पद में बुध हो तो चक्रवर्त्ती होता है, गुरु हो तो सर्वज्ञ होता है और शुक्र हो तो कवि तथा वक्ता होता है।।४६।।

सप्तमे द्वादशे स्थाने सैंहिकेययुतेक्षिते।
ज्ञानवांश्च भवेद्बालो बहुभाग्ययुतो द्विज।।४७।।

सातवें, बारहवें भाव में राहु हो अथवा देखता हो तो बालक ज्ञानी तथा बहुत भाग्यशाली होता है।।४७।।

आरूढाच्च पदाद्वापि धनस्थे शुभखेचरे।
सर्वद्रव्याधिपो धीमान् जायते द्विजसत्तम।।४८।।

आरूढ़ से वा पद से दूसरे भाव में शुभग्रह हो तो सम्पूर्ण द्रव्य का अधिपति और बुद्धिमान् होता है।।४८।।

उपपदाद्धनपो यत्र वर्तते वित्तभे यदा।
पापखेचरसंयुक्ते चौरो भवति निश्चितम्।।४९।।

उपपद से द्वितीयेश यदि धनभाव में हो और पापग्रह से संबंध करता हो तो निश्चय ही चोर होता है।।४९।।

अमात्यानुचराद्विप्र देवभक्तिं विचिन्तयेत्।
नीचत्वादेव नीचत्वं शुभपापाच्छुभाशुभम्।।५०।।

भ्रातृकारक से भी पूर्ववद् देवभक्ति-विचार करना चाहिए। यदि नीचग्रह का संबंध हो तो नीच देवता और शुभ-पाप के संबंध द्वारा शुभ-पाप देवता को समझना चाहिए।।५०।।

कारकांशे पापखगैः पापांशे पापयोगकृत्।
पापवर्गे शुभैर्हीने जायते परजातकः।।५१।।

कारकांश में पापग्रह, पापांश में पापग्रह से योग करते हुए पापग्रह के वर्ग में हों, शुभग्रह का सम्बन्ध न हो तो दूसरे से उत्पन्न हुआ होता है।।५१।।

इति पाराशरहोरायां पूर्वखण्डे सुबोधिन्यां उपपदफलं नाम दशमोऽध्यायः।

अथ कारकमारकविचाराध्यायः

पञ्चमं नवमं चैव विशेषधनमुच्यते।
चतुर्थं दशमं चैव विशेषसुखमुच्यते।।१।।

पाँचवाँ और नवम स्थान विशेष धनस्थान होता है और चौथा तथा दशम विशेष सुखस्थान होता है।।१।।

चन्द्रभानू विना सर्वे मारके मारकाधिपाः।
षष्ठाष्टमव्ययेशास्तु राहुः केतुस्तथैव च।।२।।

चन्द्रमा-सूर्य को छोड़कर शेष सभी ग्रह मारकेश होते हैं। छठा, आठवाँ, बारहवाँ स्थान के स्वामी और राहु तथा केतु ये सभी मारकेश होते हैं।।२।।

केन्द्राधिपतयः सौम्याः शुभं नैव दिशन्ति च।
क्रूराः नैवाशुभं कुर्युः कोणपौ शुभदायकौ।।३।।

यदि शुभग्रह केन्द्र के स्वामी हों तो शुभ फल नहीं देते हैं। पापग्रह केन्द्राधिपति हों तो अशुभ फल नहीं देते हैं। यदि कोण (९/५) के स्वामी हों तो शुभफल देते हैं।।३।।

धनेशो हि व्ययेशश्च संयोगात्फलदौ मताः।
लाभारित्र्यधिपा पापा रन्ध्रेशो न शुभप्रदः।।४।।

द्वितीयेश और व्ययेश संयोगवश (साहचर्य) फल देते हैं। ११/६/३भावों के स्वामी पाप होते हैं। अष्टमेश शुभद नहीं होता है।।४।।

जायाकुटुम्बकाधीशौ मारकौ परिकीर्त्तितौ।
क्रूराश्चैते ग्रहा ज्ञेया क्षीणचन्द्रो रविस्तथा।।५।।

सप्तम और दूसरे भाव के स्वामी मारकेश होते हैं। क्षीणचन्द्र और रवि क्रूर ग्रह हैं।।५।।

शनिर्भौमश्च विज्ञेया प्रबला ह्युत्तरोत्तराः।
लग्नाम्बुद्यूनकर्माणि प्रबलान्युत्तराणि हि।।६।।

शनि, भौम ये क्रूर ग्रह कहे जाते हैं और उत्तरोत्तर प्रबल होते हैं। लग्न, चतुर्थ, सप्तम, दशम ये उत्तरोत्तर प्रबल होते हैं।।६।।

सुतधर्मौ तथा ख्यातौ प्रबलौ चोत्तरोत्तरौ।
लाभारित्रितयस्थानं त्वधोधः प्रबलं भवेत्।।७।।

पंचम और नवम उत्तरोत्तर प्रबल होते हैं। ११/६/३ स्थान क्रमशः प्रबल होते हैं।।७।।

पुनर्मारकयोर्मध्ये ह्युत्तरं प्रबलं मतम्।
भाग्यस्थानाद्व्ययं विप्र तस्माच्चैवाशुभं वदेत्।।८।।

मारकों के मध्य में द्वितीयेश प्रबल मारक होता है। भाग्यस्थान से व्ययस्थान (अष्टम) से भी अशुभ फल होता है।।८।।

एतत्स्थानानुसारेण ग्रहाणां मानमालिखेत्।
चन्द्रज्ञगुरुशुक्राणां केन्द्रदोषो यथोत्तरम्।।९।।

इस प्रकार ग्रहों की शुभ-अशुभ फलों की तालिका लिखकर फल का विचार करें। चन्द्रमा, बुध, गुरु और शुक्र का केन्द्रदोष यथोत्तर बलवान् होता है।।९।।

तथैव ग्रहाः क्रूरा प्रबलाश्चैवोत्तरोत्तरम्।
भाग्येशः सर्वदा सौम्यो न क्रूरः फलदायकः।।१०।।

उसी प्रकार उसमें स्थित ग्रह भी यथोत्तर बली होते हैं। भाग्येश सर्वदा शुभफल देने वाला होता है, किन्तु क्रूरग्रह हो तो शुभ फलदायक नहीं होता है।।१०।।

पुत्राधिपोऽपि शुभदः क्रूरोऽपि सुखदः स्मृतः।
त्रिलाभरिपुमृत्यूनां पतयो दुःखदायकाः।।११।।

पंचमेश शुभग्रह हो या पापग्रह हो शुभफल ही देता है। ३/११/६/८ के अधिपति दुःखदायी होते हैं।।११।।

यद्यद्भावगतो राहुः केतुश्च जनने नृणाम्।
यद्यद्भावेशसंयुक्तस्तत्फलं प्रदिशेदलम्।।१२।।

राहु-केतु जिन-जिन भावों में हों, जिन-जिन भावेशों से युत हों उनके अनुसार फल को देते हैं।।१२।।

अथ मेषलग्ने शुभाशुभदायकौ—

मन्दसौम्यसिताः पापाः शुभौ गुरुदिवाकरौ।
न शुभं योगमात्रेण प्रभवेच्छनिजीवयोः।।१३।।

मेष लग्न में उत्पन्न बालक को शनि, बुध, शुक्र पापफल देने वाले और गुरु-सूर्य शुभफल देनेवाले होते हैं। शनि-गुरु योग मात्र से शुभदायक नहीं होते किन्तु सहायक होते हैं।।१३।।

परतन्त्रेण जीवस्य पापकर्माणि निश्चितम्।
कविः साक्षान्निहन्ता स्यान्मारकत्वेन लक्षितः।।१४।।

गुरु के पारतंत्र्य होने से (व्ययेश होने के कारण—पापसंबंध से) पापफल देना भी निश्चित है। शुक्र साक्षात् मारकेश होता है।।१४।।

मन्दादयो निहन्तारो भवेयुः पापिनो ग्रहाः।
शुभाशुभफलान्येवं ज्ञातव्यानि क्रियोद्भवैः।।१५।।

शनि आदि पापग्रह भी मारकेश के सहयोग से मारक होते हैं। इस प्रकार मेषलग्न में उत्पन्न जातक के शुभ-अशुभ का निर्णय करना चाहिए।।१५।।

विशेष—यहाँ मेषलग्न के स्वामी भौम अष्टमेश होने के कारण अशुभ है। किन्तु लग्नेश होने के कारण शुभ फल देने वाले के सहायक हैं। शनि केन्द्राधिपति होने के कारण शुभद है, किन्तु लाभाधिपति होने के कारण पापी हो गया। बुध ३/६ भाव का अधिपति होने के कारण अशुभ, शुक्र मारकस्थान (२/७) का स्वामी यानि केन्द्रेश होने के कारण अशुभ, सूर्य (५) का स्वामी होने से शुभ, गुरु व्ययेश और भाग्येश होने के कारण अपने सहयोगी के अनुसार पापफलद भी हो सकता है। इसी प्रकार प्रत्येक लग्नों में समझना चाहिए।

वृषलग्नम्—

जीवशुक्रेन्दवः पापाः शुभौ शनिदिवाकरौ।
राजयोगकरः साक्षादेक एव रवेः सुतः।।१६।।

वृष लग्न वाले को गुरु, शुक्र, चन्द्रमा पापफल देने वाले, शनि-सूर्य शुभ फलदायक और राजयोगकारक होते हैं।।१६।।

जीवादयो ग्रहाः पापाः सन्ति मारकलक्षणाः।
बुधः स्वल्पफलान्येवं ज्ञेयानि वृषजन्मनः।।१७।।

गुरु, शुक्र, चन्द्रमा ये पापफलदायक मारकेश के फल को देने वाले होते हैं और बुध अल्प शुभफल को देने वाला होता है। ऐसा लक्षण वृषलग्न वालों का होता है।।१७।।

मिथुनलग्नम्—

भौमजीवारुणः पापा एक एव कविः शुभः।
शनैश्चरेण जीवस्य योगो मेषभवो यथा।।१८।।

मिथुन लग्नवाले को भौम, गुरु, सूर्य पापफल देने वाले, केवल एक मात्र शुक्र शुभफल देने वाला होता है। शनि-गुरु का योग मेषलग्न वाले के समान ही फलदायक होता है।।१८।।

नायं शशी निहन्ता स्याल्लक्षणं पापनिष्फलम्।
ज्ञातव्यानि द्वन्द्वजस्य फलान्येतानि सूरिभिः।।१९।।

चन्द्रमा मारक नहीं होता है किन्तु साहचर्यानुसार फल देने वाला होता है। इस प्रकार मिथुन लग्न वालों के फल का विचार करना चाहिए।।१९।।

कर्कलग्नम्—

भार्गवेन्दुसुतौ पापौ भौमेज्यशशिनः शुभाः।
एकग्रहस्तु भवेत्साक्षान्महीसुतो योगकारकः।।२०।।

कर्क लग्नवाले को शुक्र-बुध पाप फल देने वाले और भौम, गुरु, चन्द्रमा शुभ फल देने वाले होते हैं। केवल एक भौम ही राजयोगकारक होता है।।२०।।

निहन्ता रविजोऽन्ये च साहचर्यात्फलप्रदाः।
कुलीरसम्भवस्यैव फलान्युक्तानि सूरिभिः।।२१।।

शनि मारकेश होता है, अन्य ग्रह साहचर्य के अनुसार फल देते हैं। ऐसा कर्क लग्न वाले का फल होता है।।२१।।

अथ सिंहलग्नम्—

बुधशुक्रार्कजाः पापाः भौमेज्यार्काः शुभप्रदाः।
प्रभवेद्योगमात्रेण न शुभं गुरुशुक्रयोः।।२२।।

सिंह लग्नवाले को बुध, शुक्र, शनि पापफल देने वाले और भौम, गुरु, सूर्य शुभ फल देने वाले होते हैं। गुरु-शुक्र के योगमात्र से शुभफल नहीं होता है।।२२।।

घ्नन्ति सौम्यादयः पापा मारकत्वेन लक्षिताः।
एवं फलानि वेद्यानि सिंहे यस्य जनुर्भवेत्।।२३।।

बुध पापग्रहों के साहचर्य से मारकेश होता है। ऐसा सिंहलग्न वालों का फल होता है।।२३।।

अथ कन्यालग्नम्—

कुजजीवेन्दवः पापा एक एव भृगुः शुभः।
भार्गवेन्दुसुतावेव भवेतां योगकारकौ।।२४।।

कन्या लग्नवाले को भौम, गुरु, चन्द्रमा पापफल देने वाले, केवल शुक्र ही शुभफलदायक है। शुक्र-बुध योगकारक होते हैं।।२४।।

निहन्ता कविरन्ये तु मारकास्तु कुजादयः।
प्रतीक्षते फलान्युक्तान्येवं कन्याभवे बुधैः।।२५।।

मारकेश शुक्र ही होता है, अन्य भौम आदि मारकेश के साहचर्य से फल देते हैं। यह कन्यालग्न का फल है।।२५।।

अथ तुलालग्नम्—

जीवार्कमहीजाः पापाः शनैश्चरबुधौ शुभौ।
भवेतां राजयोगस्य कारकौ चन्द्रतत्सुतौ।।२६।।

तुलालग्न वाले को गुरु, सूर्य, भौम पापफल देनेवाले, शनि-बुध शुभफलदाता, चंद्रमा-बुध राजयोगकारक होते हैं।।२६।।

कुजो निहन्ति जीवाद्याः परे मारकलक्षणाः।
निहन्तारः फलान्येवं काव्यो न तु तुलाभवः।।२७।।

भौम मारकेश होता है, गुरु आदि अन्य ग्रह, जो मारकेश के लक्षण के हैं, वे अनिष्टकारक और शुक्र समफलदाता होता है; ऐसा तुलालग्न का फल जानना चाहिए।।२७।।

अथ वृश्चिकलग्नम्—

सौम्यभौमसिताः पापाः शुभौ गुरुनिशाकरौ।
सूर्यचन्द्रमसावेव भवेतां योगकारकौ।।२८।।

वृश्चिक लग्नवाले को बुध, भौम, शुक्र पाप फल देने वाले, गुरु-चंद्रमा शुभ फल देने वाले और सूर्य-चंद्रमा योगकारक होते हैं।।२८।।

जीवो निहन्ता सौम्याद्या हन्तारो मारकाह्वयाः।
तत्तत्फलानि विज्ञान्येवं वृश्चिकजन्मनः।।२९।।

गुरु मारकेश होता है, बुध आदि मारक के समान ही फलदाता होते हैं। ऐसा वृश्चिक लग्न वाले का फल होता है।।२९।।

अथ धनुर्लग्नम्—

एक एव कविः पापः शुभौ सौम्यदिवाकरौ।
योगो भास्करसौम्याभ्यां निहन्ता भास्करःसुतः।।३०।।

धनुलग्नवाले को शुक्र पाप फल देने वाला, बुध-सूर्य शुभफल देने वाले, सूर्य-बुध का योग राजयोगकारक होता है।।३०।।

घ्नन्ति शुक्रादयः पापा मारकत्वेन लक्षिताः।
ज्ञातव्यानि फलान्येवं चापजस्य मनीषिभिः।।३१।।

शनि मारकेश होता है, शुक्र आदि मारकेश के समान ही पापफल देने वाले होते हैं; ऐसा धन लग्न का फल होता है।।३१।।

अथ मकरलग्नम्—

कुजजीवेन्दवः पापाः शुभौ भार्गवचन्द्रजौ।
स्वयं चैव निहन्ता स्यान्मन्दो भौमादयः परे।।३२।।

मकर लग्न वाले को भौम, गुरु, चंद्रमा पाप फल देने वाले शुक्र और चंद्रमा शुभफल देने वाले, शनि मारकेश होता है। भौम आदि मारकेश के लक्षण के समान होने से मारक होते हैं।।३२।।

तल्लक्षणानि हन्तारः कविरेकः सुयोगकृत्।
ज्ञातव्यानि फलान्येवं विबुधैर्मृगजन्मनः।।३३।।

शुक्र योगकारक होता है। इस प्रकार का फल मकर लग्न का होता है।।३३।।

अथ कुम्भलग्नम्—

जीवचन्द्रकुजाः पापा एको दैत्यगुरुः शुभः।
राजयोगकरः शुक्रो भौमश्चैव बृहस्पतिः।।३४।।

कुंभ लग्न वाले को गुरु, चंद्रमा, भौम पापफल देने वाले और शुक्र केवल राजयोग कारक होता है।।३४।।

निहन्ता सन्ति भौमाद्या मारकत्वेन लक्षिताः।
एवमेव फलान्यूहान्येतानि घटजन्मनः।।३५।।

भौम-गुरु मारकेश होते हैं, अन्य ग्रह भी मारकेश से संबंध होने से उनके फलों को देते हैं।।३५।।

अथ मीनलग्नम्—

मन्दशुक्रांशुमद् पापाः सौम्यो भौमविधू शुभौ।
महीसुतगुरुश्चैव भवेतां योगकारकौ।।३६।।

मीनलग्न वाले को शनि, शुक्र, सूर्य पाप फल देनेवाले, बुध, भौम, चंद्रमा शुभफलदायक और भौम-गुरु राजयोगकारक होते हैं।।३६।।

भौमः मारकत्वेऽपि न हन्तामन्दज्ञौ पापिनः।
इत्यूहानि फलान्येवं बुधैस्तु झषजन्मनः।।३७।।

भौम मारकेश होते हुए भी मारता नहीं है, किन्तु शनि-बुध मारक होते हैं। इस प्रकार मीनलग्न का फल जानना चाहिए।।३७।।

एतच्छास्त्रानुसारेण मारकान्निर्दिशेद् बुधः।
चन्द्रसूर्यं विना सर्वे मारकाः परिकीर्त्तिताः।।३८।।

इस शास्त्र के अनुसार मारकेश का निर्देश करना चाहिए। रवि-चंद्र को छोड़कर शेष सभी मारकेश होते हैं।।३८।।

स्वदशायां स्वमुक्तौ च नराणां निधनं न हि।
क्वचिद्दशायामिच्छन्ति स्वभुक्तौ न कदाचन।।३९।।

मारकेश की दशा और अन्तर्दशा में मृत्यु नहीं होती है। किसी-किसी के मत से मारकेश की दशा में मृत्यु होती है और कभी अंतर्दशा में नहीं होती है।।३९।।

इति पाराशरहोरायां पूर्वखण्डे सुबोधिन्यां कारकमारकादिविचारो नामैकादशोऽध्यायः।

अथ द्वादशभावेषु विचार्यत्वमाह

तनोरूपं च ज्ञानं च वर्णं चैव बलाबलम्।
शीलं वै प्रकृतिं चैव तनुस्थानाद्विचारयेत्।।१।।

प्रथम भाव से शरीर, रूप (रंग), ज्ञान, वर्ण (ब्राह्मणादि), बल, निर्बल, शील(स्वभाव) और प्रकृति का विचार करना चाहिए।।१।।

धनं धान्यं कुटुम्बं च मृत्युजालममित्रकम्।
धातुरत्नादिकं सर्वं धनस्थानाद्विचारयेत्।।२।।

दूसरे भाव में धन, धान्य, कुटुंब, मृत्यु, शत्रु का और धातु, रत्न आदि का विचार करना चाहिए।।२।।

विक्रमं भृत्यभ्रात्रादि चोपदेशप्रयाणकम्।
पित्रोर्वै मरणं विप्र दुश्चिक्याच्च निरीक्षयेत्।।३।।

तीसरे भाव में नौकर, भाई, उपदेश, यात्रा और पिता के मरण का विचार करना चाहिए।।३।।

वाहनस्याथ बन्धूनां मातृसौख्यादिकानपि।
निधिक्षेत्रं गृहं चापि पातालाच्च निरीक्षयेत्।।४।।

चौथे भाव से वाहन (सवारी) का, बंधुओं का, मातृसुख का, निधि (गड़े धन) का, क्षेत्र (खेत) तथा गृह का विचार करना चाहिए।।४।।

यन्त्रमन्त्रौ तथा विद्या बुद्धेश्चैव प्रबन्धकम्।
पुत्रराज्यापभ्रंशादि पश्येत्पुत्रालयाद् बुधः।।५।।

पाँचवें भाव से यंत्र, मंत्र, विद्या, बुद्धि, प्रबंध, पुत्र और राज्य के स्खलन का विचार करना चाहिए।।५।।

मातुलान्तकशङ्कानां शत्रूंश्चैव व्रणादिकान्।
सपत्नीमातरञ्चापि शत्रुस्थानान्निरीक्षयेत्।।६।।

छठे भाव से मामा के मरण की शंका का, शत्रु और व्रण का तथा सौतेली माँ का विचार करना चाहिए।।६।।

जायामध्वप्रयाणं च व्यापारं हृतवीक्षणम्।
मरणं च स्वदेहस्य जायाभावान्निरीक्षयेत्।।७।।

सप्तम भाव से स्त्री, मार्ग, यात्रा, व्यापार, नष्ट वस्तु और मृत्यु का विचार करना चाहिए।।७।।

ऋणदानग्रहणयोर्गुदे चैवाङ्कुरादयः।
गत्यनूकादिकं सर्वं पश्येद्रन्ध्राद्विचक्षणः।।८।।

आठवें भाव से ऋण देना-लेना, गुदा की बीमारी, पूर्वजन्म और इस जन्म का विवरण— ये सब विचार करना चाहिए।।८।।

भाग्यं धर्मं च श्यालं च भ्रातृपत्न्यादिकांस्तथा।
तीर्थयात्रादिकं सर्वं धर्मस्थानान्निरीक्षयेत्।।९।।

नवम भाव से भाग्य, साला, भाई की स्त्री, तीर्थयात्रा आदि का विचार करना चाहिए।।९।।

राज्यं चाकाशवृत्तिं च मानं चैव पितुस्तथा।
प्रवासस्य ऋणस्यापि व्योमस्थानान्निरीक्षयेत्।।१०।।

दशम स्थान से राज्य, आकाशवृत्ति, प्रतिष्ठा, पिता, परदेश आदि का विचार करना चाहिए।।१०।।

नानावस्तुभवस्यापि पुत्रजायादिकस्य च।
लाभवृद्धिपशूनां च भवस्थानाद्विचारयेत्।।११।।

एकादश भाव से अनेक वस्तुओं की प्राप्ति, पुत्र, स्त्री, पशुओं की वृद्धि तथा लाभ आदि का विचार करना चाहिए।।११।।

व्ययं च वैरिवृत्तान्तं फलमन्त्यादिकं तथा।
व्ययभावाच्च तत्सर्वं ज्ञातव्यं हि विपश्चिता।।१२।।

बारहवें भाव से व्यय, शत्रु का वृत्तांत आदि का विचार करना चाहिए।।१२।।

यो यो भावपतिर्नष्टस्त्रिकेशाद्यैश्च संयुतः।।१३।।
भावं न वीक्षते सम्यग्ग्रहो वापि मृतो यदा।
स्थविरो वा भवेत्खेटः सुप्तो वापि प्रपीडितः।
तदा तद्भावजं सौख्यं नष्टं ब्रूयाद्विशङ्कितः।।१४।।

जिन-जिन भावों के स्वामी अस्त हों, त्रिकेश (६।८।१२ के स्वामी) से युत हों, भाव को न देखते हों , मृत अवस्था में हों, वृद्ध अथवा सुप्त हों वा पीडित हों तो उन भावों के फल नष्ट हो जाते हैं।।१३-१४।।

यदा सौम्यग्रहैर्दृष्टो भावो भावेशसौम्ययुक्।
युवा प्रबुद्धराजस्थः कुमारो वापि तद् भवेत्।।१५।।

जो भाव शुभग्रह से दृष्ट हों, भाव अपने स्वामी शुभग्रह से युत हो, भावेश युवा, प्रबुद्ध, राजकुमार अवस्था में हो।।१५।।

ईशेक्षणवशात्तत्र भावसौख्यं वदेद्बुधः।
एवं हि सर्वभावेषु ज्ञेयो साधारणो नयः।।१६।।

भाव को भावेश देखता हो तो उस भाव के सुख की वृद्धि होती है। यह नियम सभी भावों में साधारणतः समझना चाहिए।।१६।।

शुक्रः शुक्रश्च नेत्रं च चन्द्रमा मनसस्तथा।
आत्मा वै दिनकृत्तत्र जीवो जीवितसौख्यदः।।१७।।

शुक्र धातु का स्वामी, नेत्र और मन का चन्द्रमा, आत्मा का सूर्य, गुरु सुख का।।१७।।

क्रोधः पराक्रमो भौमो बुधो बालत्वधीमतः।
शनिर्दुःखप्रदो ज्ञेयो राहुरैश्वर्यदायकः।।१८।।

क्रोध, पराक्रम का भौम, बुध बुद्धि का, शनि दुःख का और राहु ऐश्वर्य का स्वामी होता है।।१८।।

शिरोनेत्रे तथा कर्णे नासा चापि कपोलकौ।
हनूमुखं तथा वाच्यं लग्नादाद्यदृकाणके।।१९।।

एक लग्न में तीन द्रेष्काण होते हैं। यदि जन्म समय लग्न में प्रथम द्रेष्काण हो तो लग्न को मुख, २, १२ भाव को नेत्र, ३, ११ भाव को कान, ४, १२ को नाक, ५, ९ भाव को कपोल, ६, ८ भाव को दाढ़ी, ७ भाव को मुख कल्पना करना चाहिए।।१९।।

लग्नान्मध्यदृकाणे च कण्ठांशौ बाहुकौ तथा।
पार्श्वे च हृदयक्रोडे नाभिं चैव यथाक्रमम्।।२०।।

दूसरा द्रेष्काण हो तो लग्न को कण्ठ, २, १२ भाव को कंधा, ३,११ भाव को बाहु, ४,१० भाव को पार्श्व, ५,९ भाव को हृदय, ६, ८ भाव को पेट, ७ भाव को नाभि कल्पना करना चाहिए।।२०।।

वस्तिर्लिङ्गगुदे वृषणावुरू जानुजङ्घके।
पदेति चैवमुदितैर्वाममङ्गं तृतीयके।।२१।।

तीसरा द्रेष्काण हो तो लग्न को वस्ति (नाभि-लिंग के मध्य का स्थान), २।१२ भाव को लिंग और गुदा, ३।१० भाव को जंघा, ५।९ भाव को घुटना, ६।८ भाव को ठेहुने के नीचे, ७ भाव को पैर समझना चाहिए। सप्तम से १२ भाव तक वामभाग और लग्न से छठे भाव तक दाहिने भाग की कल्पना करना चाहिए।।२१।।

यस्मिन्नङ्गे स्थितः क्रूरस्तत्र चिह्नं समादिशेत्।
ससौम्यैर्नियतं विप्र सौम्यैर्लक्ष्मं समादिशेत्।।२२।।

अंग के जिस भाग में पापग्रह हों वहाँ चिह्न कहना चाहिए। यदि बुध के साथ पापग्रह हो तो निश्चय ही चिह्न होता है और शुभग्रह हो तो उस अंग में लक्षण होता है।।२२।।

अथ तनुभावफलम्—

देहाधिपः पापयुतोऽष्टमस्थो व्ययारिगोवाङ्गसुखं निहन्ति।
सर्वत्र भावेषु च योजनीयमेवं बुधैर्भाववशात्फलं हि।।२३।।

लग्नेश पापग्रह से युत होकर आठवें, बारहवें, छठे हो तो शरीर-सुख नहीं होता है। यही नियम सभी भावों का है, यानि जिस भाव का स्वामी पापग्रह से युत होकर ६, ८, १२ वें भाव के फल का अभाव होता है।।२३।।

पापो विलग्नाधिपतिर्विलग्ने चन्द्रेण युक्तो यदि बालकः स्यात्।
तदातिरोगं स हि केन्द्रसंस्थस्त्रिकोणलाभेषु गदं निहन्ति।।२४।।

यदि लग्नेश पापग्रह चन्द्रमा से युक्त होकर लग्न में हो तो बालक अत्यंत रोगी होता है। यदि वह केन्द्र-त्रिकोण और लाभभाव में हो तो रोग का नाश करता है।।२४।।

लग्नाधिपोऽथ जीवो वा शुक्रो वा यदि केन्द्रगः।
स जातो धनवांल्लोके दीर्घायू राजवल्लभः।।२५।।

लग्नेश वा गुरु या शुक्र केन्द्र में हो तो जातक धनी, दीर्घायु और राजप्रिय होता है।।२५।।

केन्द्रत्रिकोणेषु न यस्य पापा
लग्नाधिपःसुरगुरुश्च चतुष्टयस्थौ।
भुक्त्वा सुखानि विविधानि च पुण्यकर्मा
जीवेत्तु वर्षशतमेव विमुक्तरोगः।।२६।।

जिसके जन्मांग में केन्द्र-त्रिकोण भाव में पापग्रह न हों और लग्नेश तथा गुरु केन्द्र में हों तो वह बालक पुण्यकर्त्ता, अनेक प्रकार के सुखों को भोगने वाला एवं दीर्घायु होता है।।२६।।

लग्नेशे चरराशिस्थे शुभग्रहनिरीक्षिते।
कीर्त्तिः श्रीमान्महाभोगी देहपुष्टिसमन्वितः।।२७।।

लग्नेश चरराशि में हो तथा शुभग्रह से देखा जाता हो तो बालक यशस्वी, धनी, भोगों को भोगने वाला और बलवान् होता है।।२७।।

शुक्रो बुधोऽथवा जीवो लग्ने चन्द्रसमन्वितः।
लग्नात्केन्द्रगतो वापि राजलक्षणसंयुतः।।२८।।

यदि शुक्र, बुध वा गुरु चन्द्रमा से युत होकर लग्न से केन्द्र में गये हों तो बालक राजलक्षण से युक्त होता है।।२८।।

रविचन्द्रौ च ह्येकस्थावेकांशकसमन्वितौ।
त्रिमात्रं च त्रिभिर्मासैर्भ्रात्रा पित्रा च जीवति।।२९।।

रवि-चन्द्रमा एक स्थान में एक ही अंश में हों तो बालक को तीन मास के अन्दर तीन माताएँ होती हैं और भाई पिता से जीवित रहता है।।२९।।

लग्ने राहुसमायुक्ते तथा सोमनिरीक्षिते।
लग्नांशे मन्दसूरी चेज्जातश्च यमलो भवेत्।।३०।।

लग्न में राहु हो, उसे चन्द्रमा देखता हो तथा लग्न के नवमांश में शनि-गुरु हों तो यमल बालक होते हैं।।३०।।

अथ धनभावफलम्—

शुक्रेण युक्तो यदि नेत्रनाथः शुक्रस्य स्वोच्चांशगृहे गतो वा।
सम्बन्धवान्स्याद्यदि देहपेन नेत्रं विधत्ते विपरीतभावम्।।३१।।

यदि धन भाव का स्वामी शुक्र से युक्त हो और शुक्र के उच्च, नवांश, गृह में हो और लग्नेश से संबंध करता हो तो टेढ़े नेत्र होते हैं।।३१।।

तत्र स्थितौ चन्द्ररवी निशान्धं जात्यन्धतां नेत्रपदेहपार्काः।
पैत्रर्क्षनाथेन युतास्तदान्ध्यं कुर्वन्ति मात्रादिफलं तथेदृक्।।३२।।

यदि चन्द्र-सूर्य धनेश-लग्नेश से युक्त होकर दुःस्थ हों तो जन्मांध होता है। पिता आदि के स्वामी युत हों तो उन्हें भी अंधा समझना चाहिए।।३२।।

दोषकृन्न च सर्वत्र स्वोच्चस्वर्क्षगतो ग्रहः।
षडादित्रयसंस्थश्चेत्तदा दोषकृच्छुभः।।३३।।

यदि दोषकर्त्ता ग्रह अपनी उच्च राशि में हो तो दोष नहीं करता। यदि छठे, आठवें एवं बारहवें में हो तो दोष करता है।।३३।।

वागीशवाग्गृहाधीशौ षडादित्रयसंस्थितौ।
मूकतां कुरुतेऽप्येवं पितृमातृगृहाधिपाः।।३४।।

गुरु और द्वितीयेश छठे, आठवें, बारहवें भाव में हों तो मूक (गूंगा) होता है। इसी प्रकार पिता, माता आदि के भावेश हों तो उन्हें भी मूक कहना चाहिए।।३४।।

विद्याधिपौ जीवबुधावविद्यामरित्रयस्थौ कुरुतोऽथ तौ चेत्।
केन्द्रत्रिकोणस्थगृहोच्चसंस्थौ प्रयच्छतां द्रागनवद्यविद्याम्।।

गुरु, बुध और द्वितीयेश छठे, आठवें और बारहवें भाव में हों तो मूर्ख होता है। यदि ये केन्द्र-त्रिकोण अपने गृह उच्च राशि में हों तो शीघ्र ही विद्वान् होता है।।३५।।

धनाधिपो गुरुर्यस्य धनराशिस्थितो यदि।
भौमेन सहितो वापि धनवान् स नरो भवेत्।।३६।।

धनेश और भौम दूसरे भाव में हो तो पुरुष धनी होता है।।३६।।

धनेशे लाभराशिस्थे लाभेशे वा धनङ्गते।
तावुभौ केन्द्रराशिस्थौ धनवान्स नरो भवेत्।।३७।।

धनेश ११वें भाव में हो और लाभेश दूसरे भाव में हो अथवा दोनों केन्द्र में हों तो धनी होता है।।३७।।

धनेशे केन्द्रराशिस्थे लाभेशे तत्त्रिकोणगे।
गुरुशुक्रयुते दृष्टे धनलाभमुदीरयेत्।।३८।।

धनेश केन्द्र में हो और लाभेश उससे त्रिकोण में हो तथा गुरु-शुक्र से युत-दृष्ट हो तो धन का लाभ होता है।।३८।।

वित्तेशो रिपुभावस्थो लाभेशो तद्गतो यदि।
वित्तलाभौ पापयुक्तौ दृष्टौ निर्धन एव सः।।३९।।

धनेश, लाभेश छठे में हों अथवा धन-लाभ पापयुत और पापदृष्ट हों तो निर्धन होता है।।३९।।

वित्तलाभाधिपौ दुःस्थौ पापखेचरसंयुतौ।
जन्मप्रभृतिदारिद्र्यं भिक्षान्नं लभते नरः।।४०।।

धनेश, लाभेश पापग्रह से युत होकर छठे, आठवें, बारहवें भाव में हों तो जन्म से ही दरिद्र होता है और भिक्षा माँगकर खाने वाला होता है।।४०।।

षष्ठाष्टमव्ययस्थौ चेद्धनलाभाधिपौ यदि।
लाभे कुजे धने राहौ राजदण्डाद्धनक्षयः।।४१।।

यदि धनेश एवं लाभेश छठें, आठवें, बारहवें भाव में हो और ११वें भाव में भौम, धन भाव में राहु हो तो राजदंड से धन का नाश हौता है।।४१।।

लाभे जीवे धने शुक्रे तदीशे शुभसंयुते।
व्यये शुभग्रहयुते धर्ममूलाद्धनव्ययः।।४२।।

११वें भाव में गुरु, दूसरे भाव में शुक्र हो और धनेश शुभग्रह से युत हो और बारहवें भाव में शुभग्रह हो तो धर्म के कारण द्रव्य का व्यय होता है।।४२।।

कुटुम्बराशेरधिपः ससौम्ये केन्द्रत्रिकोणे च सुहृद्गृही वा।
सौम्यर्क्षयुक्तो यदि जातपुण्यः कुटुम्बसंरक्षणवाग्विभूतः।।

द्वितीय भाव का स्वामी शुभग्रह से युक्त होकर केन्द्र-त्रिकोण में भिन्न क्षेत्र में वा अपनी राशि में वा शुभग्रह की राशि में हो तो पुण्यवान् कुटुम्ब की रक्षा करने वाला होता है।।४३।।

कुटुम्बनाथे परमोच्चयुक्ते देवेन्द्रपूज्ये च समीक्षिते वा।
तथाविधे तद्भवनेऽभिजातः सहस्त्ररक्षो भुवनप्रतापी।।४४।।

धनेश अपने उच्च में हो और गुरु से देखा जाता हो तो सहस्त्र द्रव्य को रखने वाला होता है।।४४।।

तन्नाथे भृगुणा बुधेन सहिते पारावतांशे तथा
स्वोच्चेनाथ सुहृद्गृहे धनपतौ स्वस्थानकोलाहलः।।४५।।

धनेश शुक्र-बुध से युक्त हो, पारावतांश में हो, अपने उच्च मित्र के गृह में हो तो प्रसिद्ध धनी होता है।।४५।।

कुटुम्बराशिस्थपतौ यदि स्याद्भृगौ बुधे तादृशभावनाथे।
स्वोच्चे सुहृत्क्षेत्रगतेऽथवा स्यात्परोपकारी जनरक्षकः स्यात्।।

धनेश शुक्र वा बुध अपने उच्च मित्र के गृह में हो तो परोपकारी जनरक्षक होता है।।४६।।

नेत्रेशे बलसंयुक्ते शोभनाक्षो भवेन्नरः।
षष्ठाष्टमव्यये युक्ते नेत्रे वैकल्पमादिशेत्।।४७।।

धनेश बलवान् हो तो सुंदर नेत्रों वाला होता है। यदि छठे, आठवें, बारहवें भाव में हो तो नेत्र में विकारवाला होता है।।४७।।

धनेशे पापसंयुक्ते धने पापसमन्विते।
असत्यवादी पिशुनः पवनव्याधिसंयुतः।।४८।।

धनेश पापग्रह से युत हो और धनभाव में पापग्रह हो तो झूठ बोलने वाला, कृपण और वातव्याधि से युक्त होता है।।४८।।

अथ सहजभावफलम्—

सभौमो भ्रातृभावेशो त्रिकभिन्नं च चेत् स्थितः।
भ्रातृक्षेत्रगतो वापि भ्रातृभावं विनिर्दिशेत्।।४९।।

मंगल के साथ तीसरे भाव के स्वामी त्रिक (६।८।१२) से भिन्न स्थान में वा तीसरे भाव में हो तो भाइयों का सुख होता है।।४९।।

तौ पापयोगतः पापक्षेत्रयोगेन वा पुनः।
उत्पाट्य सहजान्सद्यो निहन्ता शास्त्रनिश्चयात्।।५०।।

वे ही दोनों पापग्रह से युत हों और त्रिक में हों तो भाइयों का जन्म होता है, किन्तु बचते नहीं हैं।।५०।।

स्त्रीग्रहो भ्रातृभावेशः स्त्रीग्रहो भ्रातृगोऽपि वा।
भगिनी स्यात्तदा भ्राता पुंगृहे पुंग्रहो यदि।।५१।।

यदि भ्रातृभाव का स्वामी स्त्रीग्रह हो और तीसरे भाव में भी स्त्रीग्रह हो तो बहिनें होती हैं। पुरुष ग्रह हो तो भाई होते हैं।।५१।।

भ्रातृभे कारके वापि शुभयुक्तनिरीक्षिते।
भावे वा बलसम्पूर्णे भ्रातॄणां वर्धनं भवेत्।।५२।।

भ्रातृभाव वा भ्रातृकारक शुभग्रह से युत-दृष्ट हो और भ्रातृभाव पूर्ण बलवान् हो तो भाइयों की वृद्धि होती है।।५२।।

केन्द्रत्रिकोणगे वापि स्वोच्चमित्रस्ववर्गगे।
नाथे वा कारके वापि भ्रातृलाभं वदेद्बुधः।।५३।।

यदि भ्रातृभावेश वा भ्रातृकारक केन्द्र-त्रिकोण में अपने उच्चमित्र आदि स्ववर्ग में हो तो भाइयों का लाभ होता है।।५३।।

भ्रातृभे बुधसंयुक्ते तदीशे चन्द्रसंयुते।
कारके मन्दसंयुक्ते भगिन्येकाग्रतो भवेत्।।५४।।

भ्रातृभावेश चन्द्रमा से युक्त हो और भ्रातृभाव में बुध हो और भ्रातृकारक शनि से युत हो तो उसके पहले एक बहन होती है।।५४।।

पश्चात्सहोदरोऽप्येकस्तृतीयस्तु मृतो भवेत्।
कारके राहुसंयुक्ते विक्रमेशस्तु नीचगः।।५५।।

उसके बाद एक भाई होता है और तीसरा मर जाता है। भ्रातृकारक राहु से युक्त हो और तृतीयेश नीच राशि में हो तो।।५५।।

पश्चात्सहोदराभावः पूर्वं तु तत्त्रयं भवेत्।
भ्रातृस्थानाधिपे केन्द्रे कारके तत्त्रिकोणगे।।५६।।

उससे छोटे भाइयों का अभाव और उससे बड़े ३ भाई होते हैं। भ्रातृस्थान के स्वामी केन्द्र में हों और भ्रातृकारक उससे त्रिकोण में।।५६।।

जीवेन सहितश्चोच्चे संख्या द्वादश सोदराः।
तत्र पूर्वद्वयं गर्भे जातकाच्च तृतीयकम्।।५७।।
सप्तमश्चैव नवमो द्वादशश्च मृतिप्रदः।
शेषाः सहोदराः षड्वै भवेयुर्दीर्घजीविनः।।५८।।

गुरु के साथ अपनी उच्चराशि में हो तो १२ भाई होते हैं। उसमें दो बड़े, तीसरा, सातवाँ, नवाँ और बारहवाँ मर जाता है। शेष ६ भाई दीर्घजीवी होकर रहते हैं।।५७-५८।।

व्ययेशेन युते भौमे गुरुणा सहितोऽपि वा।
भ्रातृस्थाने शशियुते सप्तसंख्यास्तु सोदराः।।५९।।

व्ययेश से भौम युत हो वा गुरु से युक्त हो और तीसरे भाव में चन्द्रमा हो तो सात भाई होते हैं।।५९।।

अथ चतुर्थभावफलम्—

गेहाधिनाथेन युते तु गेहे देहाधिपेनापि गृहाभिलब्धिः।
युते षडादौ तु विपर्ययः स्याद्गृहाधिपे देहपतौ च तद्वत्।।

यदि सुखभाव सुखेश और लग्नेश से युक्त हो तो गृह का लाभ होता है। यदि लग्नेश, सुखेश ६।८।१२ भाव में हो तो गृहप्राप्ति नहीं होती है।।६०।।

केन्द्रत्रिकोणे च शुभग्रहेण युते समीचीनगृहाभिलब्धिः।
क्षेत्रस्य चिन्ता सदनाधिपेन जीवेन चिन्ता तु सुखस्य कार्या।।६१।।

यदि दोनों केन्द्र-त्रिकोण में हों और शुभग्रह से युक्त हों तो सुन्दर गृह प्राप्त होता है। गृहादि की चिंता सुखेश से, गुरु से सुख की चिंता।।६१।।

दिव्याङ्गनावाहनवस्तुभूषा चिन्ता तु कार्या भृगुणा बुधैर्द्वैः।
तमः शनिभ्यामभिचिन्त्यमायुरर्केण तातःशशिना च माता।।६२।।

स्त्री, वाहन, आभूषण की चिन्ता शुक्र से, राहु-शनि से आयु की चिंता, सूर्य से पिता और चंद्रमा से माता की चिंता करनी चाहिए।।६२।।

बुधेन बुद्धिः सदनर्क्षसंस्थां गतेन भावेशयुतेन वा स्यात्।
केन्द्रत्रिकोणेषु गतेषु तत्र प्रपश्यता वापि स्वतुङ्गगेन।।६३।।

बुध से बुद्धि की चिंता करना चाहिएं। जब ये कारक उन-उन भावों में भावेशों से युत हों तो उन-उन पदार्थों की वृद्धि कहना चाहिए। सुखेश केन्द्र-त्रिकोण में उच्च में गये हुए ग्रह से दृष्ट हो।।६३।।

स्वकीये स्वांशगे स्वोच्चे सुखस्थानस्थितो यदि।
सुखवाहनवृद्धिः स्याच्छङ्खभेर्यादिवाद्ययुक्।।६४।।

अपने राशि, उच्च और अपनी अंश में होकर सुख-स्थान में हो तो विचित्र प्राकार से मंडित गृह होता है।।६४।।

विचित्रसौधप्राकारं मण्डितं गृहमादिशेत्।
कर्माधिपेन सहिते नाथे केन्द्रे कोणेऽवस्थिते।।६५।।

यदि सुखेश कर्मेश से युत होकर केन्द्र-त्रिकोण में हो तो सुन्दर गृह होता है।।६५।।

बन्धुस्थानेश्वरे सौम्ये शुभग्रहनिरीक्षिते।
शशिजे लग्नसंयुक्ते बन्धुपूज्यो भवेन्नरः।।६६।।

सुखेश शुभग्रह में हो और शुभग्रह से देखा जाता हो तथा बुध लग्न में हो तो मनुष्य बंधुपूज्य होता है।।६६।।

मातुःस्थाने शुभयुते तदीशे स्वोच्चराशिगे।
कारके बलसंयुक्ते मातुर्दीर्घायुरादिशेत्।।६७।।

मातृस्थान में शुभग्रह हो, सुखेश उच्चराशि में हो और मातृकारक बली हो तो माता दीर्घायु होती है।।६७।।

सुखेशे केन्द्रभावस्थे तथा केन्द्रे स्थितो भृगुः।
शशिजे स्वोच्चराशिस्थे विद्वान्पण्डित एव सः।।६८।।

सुखेश केंद्र में हो और शुक्र भी केंद्र में हो, बुध अपनी उच्च राशि में हो तो बालक विद्वान् एवं पंडित होता है।।६८।।

सुखे मन्दे रवियुते चन्द्रो भाग्यगतो यदि।
लाभस्थानगते भौमे गोमहिष्यादिलाभकृत्।।६९।।

सुखस्थान में रवि-शनि हों, चंद्रमा नवम स्थान में हो और लाभस्थान में भौम हो तो गाय, भैंस आदि का लाभ होता है।।६९।।

लग्नस्थानाधिपे सौम्ये सुखेशे नीचराशिगे।
कारके व्ययराशिस्थे सुखेशे लाभसंयुते।।७०।।
द्वादशे वत्सरे प्राप्ते लाभो वै वाहनस्य च।
वाहने रविसंयुक्ते स्वोच्चे तद्राशिनायके।।७१।।
कर्मेशेन युते बन्धुनाथे तुङ्गांशसंयुते।
शुक्रेण संयुते तत्र द्वात्रिंशे वाहनं भवेत्।।७२।।

लग्नेश शुभग्रह हो, सुखेश नीच राशि में हो, कारक बारहवें भाव में हो और सुखेश ११वें भाव में हो तो।।७०।।

१२वें वर्ष में वाहन का लाभ होता है। सुख भाव में रवि हो, सुखेश अपनी उच्चराशि का हो और शुक्र से युक्त हो तो ३२ वें वर्ष में वाहन का लाभ होता है।।७१।।

द्विचत्वारिंशके प्राप्ते नरोवाहनभाग्भवेत्।

कर्मेश युत होकर सुखेश अपनी उच्च राशि में हो तो ४२वें वर्ष में वाहन प्राप्त होता है।।७२।।

लाभेशे सुखराशिस्थे सुखेशे लाभसंयुते।।७३।।
द्वादशे वत्सरे प्राप्ते नरो वाहनलाभकृत्।
भावपस्य शुभत्वे तु फलं ज्ञेयं शुभं बुधैः।।७४।।

लाभेश सुख भाव में और सुखेश लाभ भाव में हो।।७३।।

तो १२वें वर्ष में वाहन का लाभ होता है। भावेश और भाव की शुभता के आधार पर ही शुभफल की प्राप्ति होती है।।७४।।

चरग्रहसमायुक्ते सुखे तद्राशिनायके।
षष्ठे भौमे व्ययगते मूकत्वं प्राप्यते नरः।।७५।।

सुख भाव चरग्रह से युक्त हो तथा सुखेश छठे भाव में और व्ययभाव में भौम हों तो जातक मूक (गूंगा) होता है।।७५।।

अथ पञ्चमभावफलम्—

षडादित्रयसंस्थे तु सुताधीशे त्वपुत्रता।
केन्द्रत्रिकोणसंस्थे तु पुत्रलाभाभिसम्भवः।।७६।।

पंचमेश ६।८।१२वें भाव में हो तो संतान का अभाव होता है। यदि केंद्र वा त्रिकोण में हो तो संतान का सुख होता है।।७६।।

षष्ठस्थाने सुताधीशे लग्नेशे कुजवेश्मनि।
म्रियते प्रथमापत्यं काकवन्ध्यत्वमाप्नुयात्।।७७।।

छठे भाव में पंचमेश हो और लग्नेश भौम की राशि में हो तो प्रथम संतान नष्ट हो जाती है तथा स्त्री काकवंध्या होती है।।७७।।

सुताधीशो हि नीचस्थः षडादित्रयसंस्थितः।
काकवन्ध्या भवेन्नारी सुते केतुबुधौ यदि।।७८।।

पंचमेश अपनी नीचराशि का ६।८।१२वें भाव में हो और पाँचवें भाव में केतु-बुध हो तो स्त्री काकवंध्या होती है।।७८।।

सुतेशो नीचगो यत्र सुतस्थानं न पश्यति।
सुते सौरिबुधौ स्यातां काकवन्ध्यत्वमाप्नुयात्।।७९।।

पंचमेश नीच राशि का हो और पंचम भाव को न देखता हो और पंचम में शनि-बुध हो तो स्त्री काकवंध्या होती है।।७९।।

भाग्येशो मूर्तिवर्ती च सुतेशो नीचगो यदि।
सुते केतुबुधौ स्यातां सुतं कष्टाद्विनिर्दिशेत्।।८०।।

भाग्येश लग्न में हो, पंचमेश अपनी नीच राशि में हो और पाँचवें भाव में केतु-बुध हों तो कष्ट से पुत्र होता है।।८०।।

षडादित्रयसंस्थोऽपि नीचो वाप्यरिसंस्थितः।
पापाक्रान्ते सुतस्थाने पुत्रं कष्टाद्विनिर्दिशेत्।।८१।।

पंचमेश ६।८।१२ में हो अथवा नीच में शत्रु की राशि में हो और पंचम भाव में पापग्रह हो तो कष्ट से पुत्र होता है।।८१।।

दत्तकपुत्रयोगः—

पुत्रस्थाने बुधक्षेत्रे मन्दक्षेत्रेऽथवा पुनः।
मन्दमान्दियुते दृष्टे तदा दत्तादयः सुताः।।८२।।

पंचम स्थान में बुध की राशि (३।६) हो अथवा शनि की राशि (१०।११) हो, उसमें शनि और गुलिक हो वा उससे देखा जाता हो तो दत्तक पुत्र होता है।।८२।।

पञ्चमे षड्ग्रहैर्युक्ते तदीशे व्ययराशिगे।
लग्नेशे दुर्बलो चेत्स्यात्तदा दत्तादयः सुताः।।८३।।

पाँचवें भाव में ६ ग्रह हों, पंचमेश १२वें भाव में हो और लग्नेश, चंद्रमा बलवान् हो तो दत्तक पुत्र से सुख होता है।।८३।।

सन्तानयोगमाह—

सुतभवने भृगुजीवसौम्ययाते बलसहितेन विलोकिते युते वा।
बहुसुतजननं वदन्ति सन्तः सुतभवनेशबलेन चिन्त्यमेतत्।।८४।।

संतान भाव में शुक्र, गुरु, बुध हों तथा बलवान् ग्रह से देखे जाते हों वा युत हों और सुतेश बली हो तो अनेक संतान होती हैं।।८४।।

सुतेशे शशिसंयुक्ते तद्द्रेष्काणगतेऽपि वा।
तदा हि कन्यकालाभं प्रवदेन्मतिमान्नरः।।८५।।

सुतेश चंद्रमा से युक्त हो अथवा उसके द्रेष्काण में हो तो अधिक कन्या होती है।।८५।।

सुतेशे नरराशिस्थे राहुणा सहितो शशी।
पुत्रस्थानं गते मन्दे परजातं वदेच्छिशुम्।।८६।।

सुतेश पुरुष राशि में हो और चंद्रमा-राहु से युत हो और पंचम स्थान में शनि हो तो दूसरे से उत्पन्न बालक होता है।।८६।।

लग्नाद्दशमे चन्द्रे लग्नादष्टमगो गुरुः।
पापयुक्तेऽथ सन्दृष्टे अन्यबीजं न संशयः।।८७।।

लग्न से १०वें भाव में चंद्रमा हो तथा लग्न से आठवें भाव में गुरु हो तथा पापग्रह से युत-दृष्ट हो तो दूसरे से उत्पन्न बालक होता है।।८७।।

पुत्रस्थानाधिपे स्वोच्चे लग्नाच्चेद्द्वित्रिकोणभे।
गुरुणा संयुते दृष्टे पुत्रभाग्यमुपैति सः।।८८।।

यदि पंचमेश अपनी उच्चराशि में होकर लग्न से २।९।५ भाव में हो और गुरु से युत-दृष्ट हो तो पुत्रसुख को भोगने वाला होता है।।८८।।

त्रिचतुःपापसंयुक्ते सुते च सौम्यरहिते।
सुतेशे नीचराशिस्थे नीचसंस्थो भवेच्छिशुः।।८९।।

पाँचवें भाव में ३ या ४ पापग्रह हों और शुभग्रह न हो और पंचमेश नीच राशि में हो तो बालक नीच कर्म करने वाला होता है।।८९।।

पुत्रप्राप्ति-वियोगसमयश्च—

पुत्रस्थानं गते जीवे तदीशे भृगुसंयुते।
द्वात्रिंशे च त्रयस्त्रिंशे वत्सरे पुत्रलाभकृत्।।९०।।

पंचम स्थान में गुरु हो और पंचमेश शुक्र से युत हो तो ३२वें वा ३३वें वर्ष में पुत्र का लाभ होता है।।९०।।

सुतेशे केन्द्रभावस्थे कारकेण समन्विते।
षट्त्रिंशे त्रिंशदब्दे च पुत्रोत्पत्तिं विनिर्दिशेत्।।९१।।

पंचमेश कारक से युत होकर केंद्र में हो तो ३६वें वर्ष में पुत्र उत्पन्न होता है।।९१।।

लग्नाद्भाग्यगते जीवे जीवाद्भाग्यगते भृगौ।
लग्नेशे भृगुसंयुक्ते चत्वारिंशे सुतं लभेत्।।९२।।

लग्न से नवम स्थान में गुरु हो और गुरु से भाग्य ९वें भाव में शुक्र हो तथा लग्नेश शुक्र से युक्त हो तो ४०वें वर्ष में पुत्र का लाभ होता है।।९२।।

पुत्रस्थानं गते राहौ तदीशे पापसंयुते।
नीचराशिगते जीवे द्वात्रिंशे पुत्रमृत्युदः।।९३।।

पाँचवें भाव में राहु हो, पंचमेश पाप से युत हो और गुरु अपनी नीच राशि में हो तो ३२वें वर्ष में पुत्र की मृत्यु होती है।।९३।।

जीवात्पञ्चमगे पापे लग्नात्पुत्रं गतेऽपि च।
षड्विंशे च त्रयस्त्रिंशे चत्वारिंशे सुतक्षयः।।९४।।

गुरु से पाँचवें भाव में पापग्रह हों और लग्न से पाँचवें भाव में भी गये हों तो २६वें और ४०वें वर्ष में पुत्र का नाश होता है।।९४।।

लग्ने मान्दिसमायुक्ते लग्नेशे नीचराशिगे।
षट्पञ्चाशदब्देषु पुत्रशोकाकुलो भवेत्।।९५।।

लग्न में गुलिक हो और लग्नेश अपनी नीच राशि में हो तो ५६वें वर्ष में पुत्रशोक होता है।।९५।।

सन्तानसंख्याज्ञानमाह—

चतुर्थे पापसंयुक्ते षष्ठे चैव तथैव हि।
सुतेशे परमोच्चस्थे लग्नेशेन समन्विते।।९६।।
कारके शुभसंयुक्ते दशसंख्यास्तु सूनवः।

यदि ४, ६ भाव में पापग्रह हों, सुतेश लग्नेश से युत होकर परम उच्च में हो, सुतभावकारक शुभग्रह से युत हो तो दश पुत्र होते हैं।।९६।।

परमोच्चगते जीवे धनेशे राहुसंयुते।।९७।।
भाग्येशे भाग्यसंयुक्ते संख्यानां नव सूनवः।।९८।।

गुरु परमोच्च में हो, धनेश राहु से युत हो और भाग्येश भाग्यस्थान में हो तो ९ पुत्र होते हैं।।९७-९८।।

पुत्रभाग्यगते जीवे सुतेशे बलसंयुते।
धनेशे कर्मराशिस्थे वसुसंख्यास्तु सूनवः।।९९।।

पंचम वा भाग्य स्थान में गुरु हो, पंचमेश बली हो और धनेश १०वें स्थान में हो तो ८ पुत्र होते हैं।।९९।।

पञ्चमात्पञ्चमे मन्दे सुतस्थे च तदीश्वरे।
सूनवः सप्तसंख्याश्च द्विगर्भे यमलं भवेत्।।१००।।

पाँचवें भाव से पंचम में शनि हो, पाँचवें भाव में पंचमेश हो तो ७ पुत्र होते हैं, जिन में २ यमल (जुड़वा) होते हैं।।१००।।

वित्तेशे पञ्चमस्थे च सुतस्थे पञ्चमाधिपे।
षट्संख्या च सुतप्राप्तिस्तेषां च त्रिप्रजामृतिः।।१०१।।

धनेश पाँचवें भाव में, पंचमेश पंचम में हो तो ६ पुत्र होते हैं, जिसमें तीन मर जाते हैं।।१०१।।

लग्नात्पञ्चमगे जीवे जीवात्पञ्चमगे शनौ।
मन्दात्पञ्चमगे राहौ पुत्रमेकं विनिर्दिशेत्।।१०२।।

लग्न से पाँचवें भाव में गुरु, गुरु से पाँचवें भाव में शनि हों, शनि से पाँचवें राहु हो तो १ पुत्र होता है।।१०२।।

पञ्चमे पापसंयुक्ते जीवात्पञ्चमगे शनौ।
सुतेशे भौमसंयुक्ते लग्नेशे धनसङ्गते।
जातं जातं विनाशं च दीर्घायुश्चैव मानवः।।१०३।।

पंचम में पापग्रह हो और गुरु से पाँचवें भाव में शनि हो, पंचमेश भौम से युक्त हो, लग्नेश धनभाव में हो तो जितने बालक उत्पन्न हो सभी मर जावें।।१०३।।

अथ षष्ठभावफलम्—

षष्ठाधिपोऽपि पापश्चेद्देहे वाप्यष्टमे स्थितः।
तदा व्रणो भवेद्देहे षष्ठस्थानेऽप्ययं विधिः।।१०४।।

षष्ठेश (छठे भाव का स्वामी) पापग्रह हो और जन्मलग्न वा आठवें भाव में बैठा हो तो शरीर में व्रण (घाव) के चिह्न होते हैं। छठे भाव में हो तो भी वही फल होता है।।१०४।।

एवं पित्रादिभावेशास्तत्तत्कारकसंयुताः।
व्रणाधिपयुताश्चापि षष्ठाष्टमयुता यदि।।१०५।।

इसी प्रकार पिता आदि भावेशों के साथ षष्ठेश से युत होकर ६/८ भाव में हो तो उनके शरीर में भी व्रण के चिह्न कहना चाहिए। सूर्य षष्ठेश हो तो शिर में ।।१०५।।

तेषामपि व्रणं वाच्यमादित्ये च शिरोव्रणम्।
इन्दुना च मुखे कण्ठे भौमज्ञेन च नाभिषु।।१०६।।

चंद्रमा हो तो मुख या कंठ में, भौम-बुध हों तो नाभि में।।१०६।।

गुरुणा नासिकायां च भृगुणा नयने पदे।
शनिना राहुणा कुक्षौ केतुना च तथा भवेत्।।१०७।।

गुरु हो तो नाक में, शुक्ल हो तो आँख और पैर में, शनि-राहु हों तो कुक्षि (कोंख) में, केतु से भी कुक्षि में चिह्न कहना चाहिए।।१०७।।

लग्नाधिपः कुजक्षेत्रे बुधस्य यदि संस्थितः।
यत्र कुत्र स्थितो ज्ञेन वीक्षितो मुखरुक्प्रदः।।१०८।।

लग्नेश भौम की राशि में वा बुध की राशि में होकर कहीं पर बैठा हो तथा बुध से देखा जाता हो तो मुख में रोग होता है।।१०८।।

कुष्ठयोगः—

लग्नाधिपो कुजबुधौ चन्द्रेण यदि संयुतौ।
राहुणा शनिना सार्धं कुष्ठं तत्र विनिर्दिशेत्।।१०९।।

यदि भौम वा बुध लग्नेश होकर चंद्रमा, राहु वा शनि से युत हों तो कुष्ठ-रोग होता है।।१०९।।

लग्नाधिपं विना लग्ने स्थितश्चेत्तमसा शशी।
श्वेतकुष्ठं तथा कृष्णकुष्ठं च शनिना सह।।११०।।
कुजेन रक्तकुष्ठं स्यात्तत्तदेवं विचारयेत्।

यदि लग्नेश को छोड़कर चंद्रमा राहु के साथ लग्न में हो तो सफेद कुष्ठ होता है। शनि के साथ हो तो काला कुष्ठ, भौम के साथ हो तो लाल कुष्ठ होता है।।११०।।

गण्डादिरोगयोगाः—

लग्ने षष्ठाष्टमाधीशौ रविणा यदि संस्थितौ।।१११।।
ज्वरगण्डः कुजे ग्रन्थिः शस्त्रव्रणमथापि वा।
बुधेन पित्तं गुरुणा रोगाभावं विनिर्दिशेत्।।११२।।

यदि सूर्य से युत होकर षष्ठेश अष्टमेश लग्न में हों तो ज्वर से उत्पन्न गंडरोग, भौम से युत हो तो गठिया वा शस्त्र से आघात, बुध हो तो पित्त से उत्पन्न गंड और गुरु हो तो रोग का अभाव कहना चाहिए।।११२।।

स्त्रीभिः शुक्रेण शनिना वायुना संयुतो यदि।
गण्डश्चाण्डालतो नाभौ तमःकेत्वोर्युते भयम्।।११३।।

शुक्र से युत हो तो स्त्रीजनित रोग, शनि से युत हो तो वायुजनित गंड, राहु से युत हो तो चांडाल से नाभि में गंडरोग और केतु से युत हो तो भय होता है।।११३।।

चन्द्रेण गण्डः सलिलैः कफश्लैष्मादिना भवेत्।
एवं पित्रादिभावानां तत्तत्कारकयोगतः।।११४।।

चंद्रमा से युत हो तो जल से तथा कफरोग होता है। इसी प्रकार पिता आदि के भावेशों से उन लोगों के भी रोग का विचार करना चाहिए।।११४।।

रोगप्राप्तिसमयः—

गण्डो तेषां भवेदेवमूह्यमत्र मनीषिभिः।
रोगस्थानगते पापे तदीशे पापसंयुते।।११५।।
राहुणा संयुते मन्दे सर्वदा रोगसंयुतः।
रोगस्थानगते भौमे तदीशे रन्ध्रसंयुते।।११६।।
षड्वर्षे द्वादशे वर्षे ज्वररोगी भवेन्नरः।

छठे स्थान में पापग्रह हो, षष्ठेश पापयुत हो, राहु से शनि युत हो तो सर्वदा रोगी होता है। षष्ठस्थान में भौम हो और षष्ठेश आठवें भाव में हो तो छठे, बारहवें वर्ष में ज्वररोग से युक्त होता है।।११६।।

षष्ठस्थानगते जीवे तद्गृहे चन्द्रसंयुते।।११७।।
द्वाविंशकोनविंशके कुष्ठरोगं विनिर्दिशेत्।

छठे भाव में गुरु हो और गुरु की राशि में चंद्रमा हो तो २२वें, १९ वें वर्ष में कुष्ठरोग होता है।।११७।।

रोगस्थानं गतो राहुः केन्द्रे मान्दिसमन्वितः।।११८।।
लग्नेशे नाशराशिस्थे षड्विंशे क्षयरोगता।

छठे भाव में राहु हो, केन्द्र में गुलिक हो, लग्नेश आठवें भाव में हो तो २६वें वर्ष में क्षयरोग होता है।।११८।।

व्ययेशे रोगराशिस्थे तदीशे व्ययराशिगे।।११९।।
त्रिंशद्वर्षैकोनवर्षे गुल्मरोगं विनिर्दिशेत्।

व्ययेश छठे भाव में हो और षष्ठेश बारहवें भाव में हो तो ३०वें वा २९वें वर्ष में गुल्मरोग होता है।।११९।।

रिपुस्थानगते चन्द्रे शनिना संयुते यदि।।१२०।।
पञ्चपञ्चाशताब्देषु रक्तकुष्ठं विनिर्दिशेत्।

छठे भाव में शनि से युत चंद्रमा हो तो ५५वें वर्ष में रक्तकुष्ठ होता है।।१२०।।

लग्नेशे लग्नराशिस्थे मन्दे शत्रुसमन्विते।।१२१।।
एकोनषष्टिवर्षे तु वातरोगार्दितो भवेत्।

लग्नेश लग्न में हो और शनि छठे भाव में हो तो ५९वें वर्ष में वात-रोग होता है।।१२१।।

रन्ध्रेशे रिपुराशिस्थे व्ययेशे लग्नसंस्थिते।।१२२।।
चन्द्रे षष्ठेशसंयुक्ते वसुवर्षे मृगाद्भयम्।

अष्ठमेश छठे भाव में हो और व्ययेश लग्न में हो, चन्द्रमा षष्ठेश से युत हो तो ८वें वर्ष में मृग से भय होता है।।१२२।।

षष्ठाष्टमगतो राहुस्तस्मादष्टगते शनौ।।१२३।।
बालस्य जन्मतो विज्ञ आद्ये चैव द्वितीयके।
वत्सरेऽग्निभयं तस्य त्रिवर्षे पक्षिदोषभाक्।।१२४।।

छठे, आठवें भाव में राहु हो, उससे आठवें भाव में शनि हो तो, बालक को १, २ वर्ष में अग्नि का भय और ३ वर्ष में पक्षि का भय होता है।।१२३।।

षष्ठाष्टमगते सूर्ये तद्व्यये चन्द्रसंयुते।
पञ्चमे नवमेऽब्दे च जलभीतिं विनिर्दिशेत्।।१२५।।

६, ८ भाव में सूर्य हो, उससे बारहवें चन्द्रमा हो तो ५, ९ वर्ष में जल से भय होता है।।१२४।।

अष्टमे मन्दसंयुक्ते रन्ध्राद्वे द्वादशे कुजः।
त्रिंशांके च दशांके च स्फोटकादि विनिर्दिशेत्।।१२६।।

आठवें भाव में शनि हो, उससे बारहवें भाव में भौम हो तो ३०वें वा १० वें वर्ष में चेचक आदि का भय होता है।।१२६।।

रन्ध्रेशे राहुसंयुक्ते तदंशे रन्ध्रकोणगे।
द्वाविंशेऽष्टादशे वर्षे ग्रन्थिमेहादिपीडनम्।।१२७।।

अष्टमेश राहु से युत होकर अपने ही अंश में आठवें ५/९ भाव में हो तो २२वें, १८वें वर्ष में गठिया, प्रमेह आदि से पीड़ा होती है।।१२७।।

लाभेशे रिपुभावस्थे तदीशे लाभराशिगे।
एकत्रिंशदेकचत्वारि शत्रुमूलाद्धनक्षयः।।१२८।।

लाभेश छठे भाव में हो और षष्ठेश लाभ भाव में होतो ३१वें, ४१वें वर्ष में शत्रु द्वारा द्रव्य का व्यय होता है।।१२८।।

सुतेशे रिपुभावस्थे षष्ठेशे गुरुसंयुते।
व्ययेशे लग्नभावस्थे तस्य पुत्रो रिपुर्भवेत्।।१२९।।

पंचमेश छठे भाव में हो, षष्ठेश गुरु से युत हो और व्ययेश लग्न में हो तो उसका पुत्र शत्रु होता है।।१२९।।

लग्नेशे षष्ठराशिस्थे तदीशे षष्ठराशिगे।
दशमैकोनविंशे च शुनकाद्भीतिरुच्यते।।१३०।।

लग्नेश छठे भाव में हो, षष्ठेश षष्ठ भाव में हो तो १०वें, १९वें वर्ष में कुत्ता से भय होता है।।१३०।।

अथ सप्तमभावफलम्—

कलत्रपो विनास्वर्क्षषडादित्रयसंस्थितः।
रोगिणीं कुरुते नारीं तथा तुङ्गादिकं विना।।१३१।।

सप्तमेश यदि अपनी राशि से भिन्न राशि में ६।८।१२ भाव में नीचादि राशि में हो तो स्त्री रोगिणी होती है।।१३१।।

सप्तमे तु स्थिते शुक्रेऽतीवकामी भवेन्नरः।
यत्र कुत्र स्थिते पापयुते स्त्रीमरणं भवेत्।।१३२।।

सातवें स्थान में शुक्र हो तो पुरुष अत्यंत कामी होता है। कहीं किसी भाव में शुक्र पापग्रह से युत हो तो स्त्री की मृत्यु होती है।।१३२।।

दाराधिपः पुण्यग्रहेण युक्तो दृष्टोऽपि वा पूर्णबलः प्रसन्नः।
सौभाग्ययुक्तो गुणवान्प्रभुश्च दाता विभोग्यं बहुधान्ययुक्तः।।

यदि सप्तमेश शुभग्रह से युत-दृष्ट हो, पूर्ण बलवान् हो, असांगत आदि न हो तो पुरुष भाग्यवान्, गुणी, दाता, धन-धान्य से युक्त होता है।।१३३।।

कलत्रेशेऽस्तनीचशत्रुराशिगतेष्वपि ।
बहुभार्यान्तरं विद्याद्रोगिणीं च विशेषतः।।१३४।।

सप्तमेश अस्तंगत हो, नीचराशि में हो, शत्रुराशि में हो तो अनेक स्त्री रोगिणी होती है।।१३४।।

परमोच्चगते सप्ताधिनाथे मन्दराशौ शुभखेचरेण दृष्टे।
अथवा भृगुसदने तुंगे बहुभार्या प्रवदन्ति बुद्धिमन्तः।।१३५।।

सप्तमेश परमोच्च में होकर शनि की राशि में शुभग्रह से देखा जाता हो अथवा शुक्र की राशि में उच्च का हो तो अनेक स्त्रियाँ होती हैं।।१३५।।

वन्ध्यासंगो भवेद्भानौ चन्द्रे राशिसमस्त्रियः।
कुजे रजस्वलासंगो वन्ध्यासंगश्च कीर्त्तितः।।१३६।।

सातवें सूर्य हो तो विधवा से संबंध होता है। चंद्रमा हो तो सप्तमस्थ राशि की जाति से, भौम हो तो रजस्वला और वंध्या से।।१३६।।

बुधे वेश्या च हीना च वणिक् स्त्री वा प्रकीर्त्तितः।
गुरोर्ब्राह्मणभार्या स्याद्गर्भिणीसङ्ग एव च।।१३७।।

बुध हो तो वेश्या, हीना या बनिया की स्त्री से, गुरु हो तो ब्राह्मणी से वा गर्भिणी से।।१३७।।

हीना च पुष्पिणी वाच्या मन्दराहुफणीश्वरैः।
कुजेऽथ सुस्तनी मन्दे व्याधिदौर्बल्यसंयुता।।१३८।।
कटिनोर्ध्वकुचार्ये च शुक्रे स्थूलोत्तमस्तनी।

शनि, राहु, केतु हों तो नीचजाति ओर रजोधर्मवती से सम्पर्क होता है। सप्तम में भौम हो तो अच्छे स्तनोंवाली, शनि हो तो रोगिणी, दुर्बल, भौम-गुरु हों तो कठिन ऊँचे कुचों वाली, शुक्र हो तो मोटे उन्नत कुचों वाली स्त्री होती है।।१३८।।

पापे द्वादशकामस्थे क्षीणचन्द्रस्तु पञ्चमे।
जातश्च भार्यावश्यः स्यादिति जातिविरोधकृत्।।१३९।।

१२वें, ७वें भाव में पापग्रह हों और क्षीण चंद्रमा पाँचवें भाव में हो तो पुरुष स्त्री के वश में होता है और जाति से विरोध करने वाला होता है।।१३९।।

जामित्रे मन्दभौमे च तदीशे मन्दभूमिगे।।१४०।।
वेश्या वा जारिणी वापि तस्य भार्या न संशयः।
भौमांशकगते शुक्रे भौमक्षेत्रगतेऽथवा।।१४१।।
भौमयुक्ते च दृष्टे वा भगचुम्बनतत्परः।

सातवें भाव में शनि-भौम हों अथवा सप्तमेश शनि के गृह में हो तो उसकी स्त्री वेश्या या जारिणी होती है। यदि शुक्र-भौम के नवांश में हो वा भौम की राशि में हो अथवा भौम से युत वा दृष्ट हो तो पुरुष भगचुम्बन करने वाला होता है।।१४१।।

मन्दांशकगते शुक्रे मन्दक्षेत्रगतेऽपि वा।।१४२।।
मन्दयुक्ते च दृष्टे च शिश्नचुम्बनतत्परः।

शुक्र शनि के नवांश में अथवा शनि की राशि में हो, शनि से युत वा दृष्ट हो तो शिश्न (लिंग) का चुम्बन करने वाला होता है।।१४२।।

दारेशे स्वोच्चराशिस्थे दारे शुभसमन्विते।
दारे लग्नेशसंयुक्ते सत्कलत्रसमन्वितः।।१४३।।

सप्तमेश अपनी उच्चराशि में हो और सप्तम में शुभग्रह हों तथा लग्नेश भी सातवें हो तो अच्छी स्त्री से युक्त होता है।।१४३।।

कलत्रनाथे रिपुनीचसंस्थे मूढोऽथवा पापनिरीक्षिते वा।
कलत्रभे पापयुते च दृष्टे कलत्रहानिं प्रवदन्ति सन्तः।।१४४।।

सप्तमेश शत्रु राशि में वा अपनी नीचराशि में हो अथवा अस्तंगत हो, पापग्रह से युत वा दृष्ट हो और सप्तम भाव पापयुक्त वा पापदृष्ट हो तो स्त्री की हानि होती है।।१४४।।

षष्ठाष्टमव्ययस्थे चेन्मदेशो दुर्बलो यदि।
नीचराशिगतो वापि दारनाशं विनिर्दिशेत्।।१४५।।

सप्तमेश दुर्बल होकर ६/८/१२वें भाव मे हो वा नीचराशि में हो तो स्त्री का नाश होता है।।१४५।।

कलत्रस्थानगे चन्द्रे तदीशे व्ययराशिगे।
कारको बलहीनश्च दारसौख्यं न विद्यते।।१४६।।

सप्तम भाव में चंद्रमा हो और सप्तमेश १२वें भाव में हो और कारक निर्बल हो तो स्त्री का सुख नहीं होता है।।१४६।।

भार्याधिपे नीचगृहे च पापे पापर्क्षगे वा बहुपापयुक्ते।
क्लीबे ग्रहे सप्तमराशिसंस्थे तस्योदयांशे द्विकलत्रसिद्धिः।।

सप्तमेश नीचराशि में हो और पापग्रह हो, पापग्रह की राशि में हो वा पापग्रह से युत हो और नपुंसक ग्रह सातवें भाव में हो वा नपुंसक की राशि सातवें भाव में हो तो २ स्त्रियाँ होती हैं।।१४७।।

कलत्रस्थानगे भौमे शुक्रे जामित्रगे शनौ।
लग्नेशे रन्ध्रराशिस्थे कलत्रत्रयवान् भवेत्।।१४८।।

सातवें भाव में भौम, शुक्र, शनि हों और लग्नेश आठवें भाव में हो तो ३ स्त्रियाँ होती हैं।।१४८।।

द्विस्वभावगते शुक्रे स्वोच्चे तद्राशिनायके।
दारेशे बलसंयुक्ते बहुदारसमन्वितः।।१४९।।

शुक्र द्विस्वभाव राशि में हो, द्विस्वभाव राशि का स्वामी अपने उच्च में हो और सप्तमेश बली हो तो अनेक स्त्रियाँ होती हैं।।१४९।।

विवाहसमयमाह—

दारेशे शुभराशिस्थे स्वोच्चस्वर्क्षगतो भृगुः।
पञ्चमे नवमेऽब्दे च विवाहः प्रायशो भवेत्।।१५०।।

सप्तमेश शुभग्रह की राशि में हो, शुक्र अपने उच्च या अपनी राशि में हो तो पाँचवें या नवें वर्ष में विवाह होता है।।१५०।।

दारस्थानगते सूर्ये तदीशे भृगुसंयुते।
सप्तमैकादशे वर्षे विवाहः प्रायशो भवेत्।।१५१।।

सप्तम भाव में सूर्य हो, सप्तमेश शुक्र से युत हो तो ७वें या ११वें वर्ष में विवाह होता है।।१५१।।

कुटुम्बस्थानगे शुक्रे दारेशे लाभराशिगे।
दशमे षोडशाब्दे च विवाहः प्रायशो भवेत्।।१५२।।

दूसरे भाव में शुक्र हो और सप्तमेश ११वें भाव में हो तो १०वें या १६वें वर्ष में विवाह होता है।।१५२।।

लग्नकेन्द्रगते शुक्रे लग्नेशे मन्दराशिगे।
वत्सरैकादशे प्राप्ते विवाहं लभते नरः।।१५३।।

लग्न वा केन्द्र में शुक्र हो और लग्नेश शनि की राशि में हो तो ११वें वर्ष में विवाह होता है।।१५३।।

लग्नात्केन्द्रगते शुक्रे तस्मात्कामगते शनौ।
द्वादशैकोनविंशे च विवाहः प्रायशो भवेत्।।१५४।।

लग्न से केन्द्र में शुक्र हो, उससे सातवें भाव में शनि हो तो १२वें वा १९वें वर्ष में विवाह होता है।।१५४।।

चन्द्राज्जामित्रगे शुक्रे शुक्राज्जामित्रगे शनौ।
वत्सरेऽष्टादशे प्राप्ते विवाहं लभते नरः।।१५५।।

चन्द्रमा से ७वें भाव में शुक्र हो और शुक्र से ७वें भाव में शनि हो तो १८वें वर्ष में प्रायः विवाह होता है।।१५५।।

धनेशे लाभराशिस्थे लग्नेशे कर्मराशिभे।
अब्दे पञ्चदशे जाते विवाहं लभते नरः।।१५६।।

द्वितीयेश लाभभाव में हो और लग्नेश १०वें भाव में हो तो १५वें वर्ष में विवाह होता है।।१५६।।

धनेशे लाभराशिस्थे लाभेशे धनराशिगे।
अब्दत्रयोदशे प्राप्ते विवाहं लभते नरः।।१५७।।

धनेश (द्वितीयेश) लाभभाव में और लाभेश (११ भाव का स्वामी) धन भाव में हो तो १३वें वर्ष में विवाह होता है।।१५७।।

रन्ध्राज्जामित्रगे शुक्रे तदीशे भौमसंयुते।
द्वाविंशे सप्तविंशाब्दे विवाहो लभते नरः।।१५८।।

अष्टमभाव से सातवें भाव में शुक्र हो और सप्तमेश भौम से युत हो तो २२वें या २७वें वर्ष में विवाह होता है।।१५८।।

दारांशकगते लग्ननाथे दारेश्वरे व्यये।
त्रयोविंशे च षड्विंशे विवाहं लभते नरः।।१५९।।

सप्तम भाव के नवांश में लग्नेश हो और सप्तमेश बारहवें भाव में हो तो २३वें या २६वें वर्ष में विवाह होता है।।१५९।।

रन्ध्रांशे दारराशिस्थे लग्नांशे भृगुसंयुते।
पञ्चविंशे त्रयस्त्रिंशे विवाहं लभते नरः।।१६०।।

अष्टम भाव की नवांश राशि सातवें भाव में हो और लग्न के नवांश में शुक्र युत हो तो २५वें या ३३वें वर्ष में विवाह होता है।।१६०।।

भाग्याद्भाग्यगते शुक्रे तद्व्यये राहुसंयुते।
एकत्रिंशात्त्रयस्त्रिंशे दारलाभं विनिर्दिशेत्।।१६१।।

भाग्यस्थान से भाग्यभाव में शुक्र हो, उससे बारहवें भाव में राहु हो तो ३१वें वा ३३वें वर्ष में विवाह होता है।।१६१।।

भाग्याज्जामित्रगे शुक्रे तद्द्यूने दारनायके।
त्रिंशे वा सप्तत्रिंशाब्दे विवाहं लभते नरः।।१६२।।

भाग्यभाव से ७वें भाव में शुक्र हो, उससे बारहवें भाव में राहु हो तो ३०वें वा ३७वें वर्ष में विवाह होता है।।१६२।।

स्त्रीमृत्युसमयमाह—

दारेशे नीचराशिस्थे शुक्रे रन्ध्रारिसंयुते।
अष्टादशे त्रयस्त्रिंशे वत्सरे दारनाशनम्।।१६३।।

सप्तमेश अपनी नीच राशि में हो और शुक्र ८, ६ भाव में हो तो १८वें या ३३वें वर्ष में स्त्री का नाश होता है।।१६३।।

मदेशे नाशराशिस्थे व्ययेशे मदराशिगे।
तस्य चैकोनत्रिंशाब्दे दारनाशं विनिर्दिशेत्।।१६४।।

सप्तमेश ८वें भाव में हो और व्ययेश सातवें भाव में हो तो २९वें वर्ष में स्त्री का नाश होता है।।१६४।।

कुटुम्बस्थानगे राहुः कलत्रे भौमसंयुते।
पाणिग्रहे विवाहे च सर्पदंष्ट्रे वधूमृतिः।।१६५।।

दूसरे भाव में राहु हो और सातवें भाव में भौम हो तो विवाह के बाद ही साँप के काटने से स्त्री की मृत्यु होती है।।१६५।।

रन्ध्रस्थानगते शुक्रे तदीशे सौरिराशिगे।
द्वादशैकोनविंशाब्दे दारनाशं विनिर्दिशेत्।।१६६।।

आठवें भाव में शुक्र हो और अष्टमेश शनि की राशि में हो तो १२-वें या २९वें वर्ष में स्त्री की मृत्यु होती है।।१६६।।

लग्नेशे नीचराशिस्थे धनेशे निधनं गते।
त्रयोदशे तु सम्प्राप्ते कलत्रस्य मृतिं वदेत्।।१६७।।

लग्नेश अपनी नीचराशि में हो और धनेश आठवें भाव में हो तो १३वें वर्ष में स्त्री की मृत्यु होती है।।१६७।।

शुक्राज्जामित्रगे चन्द्रे चन्द्राज्जामित्रगे बुधे।
रन्ध्रेशे सुतभावस्थे प्रथमं दशमाब्दिकम्।।१६८।।
द्वाविंशे च द्वितीयं च त्रयस्त्रिंशं तृतीयकम्।
विवाहं लभते मर्त्यो नात्र कार्या विचारणा।।१६९।।

शुक्र से सातवें भाव में चन्द्रमा हो और चन्द्रमा से सातवें भाव में बुध हो तथा अष्टमेश पाँचवें भाव में हो तो पहला विवाह १०वें वर्ष में, दूसरा २२वें वर्ष में और तीसरा ३३वें वर्ष में होता है।।१६९।।

अथाष्टमभावफलमाह—

आयुःस्थानाधिपः पापैः सहैव यदि संस्थितः।
करोत्यल्पायुषं जातं लग्नेशोऽप्यत्र संस्थितः।।१७०।।

अष्टमेश पापग्रह और लग्नेश के साथ आठवें भाव में हो तो जातक अल्पायु होता है।।१७०।।

एवं हि शनिना चिन्ता कार्या तर्कैर्विचक्षणैः।
कर्माधिपेन च तथा चिन्तनं कार्यमायुषः।।१७१।।

इसी प्रकार तर्क द्वारा शनि और कर्मेश से भी आयु का विचार करना चाहिए।।१७१।।

षष्ठे व्ययेऽपि षष्ठेशो व्ययाधीशो रिपौ व्यये।
लग्नेऽष्टमे स्थितो वापि दीर्घमायुः प्रयच्छति।।१७२।।

षष्ठेश ६ या १२ भाव में हो और व्ययेश ६ या १२ भाव में हो अथवा लग्न वा आठवें भाव में हो तो दीर्घायु होता है।।१७२।।

स्वस्थाने स्वांशके वापि मित्रेशे मित्रमन्दिरे।
दीर्घायुषं करोत्येव लग्नेशोऽष्टमपः पुनः।।१७३।।

लग्नेश, अष्टमेश और पंचमेश अपने भाव में, अपने नवांश में वा मित्र की राशि में हो तो दीर्घायु होता है।।१७३।।

लग्नाष्टमकर्मेशमन्दाः केन्द्रत्रिकोणयोः।
लाभे वा संस्थितास्तद्वत् दिशेयुर्दीर्घमायुषम्।।१७४।।

लग्नेश, अष्टमेश, कर्मेश और शनि केन्द्र-त्रिकोण और लाभ भाव में हों तो दीर्घायु होती है।।१७४।।

अष्टमाधिपतौ केन्द्रे लग्नेशे बलवर्जिते।
विंशद्वर्षाण्यसौ जीवेद्द्वात्रिंशत्परमायुषम्।।१७५।।

अष्टमेश केन्द्र में हो और लग्नेश निर्बल हो तो २० वर्ष या ३२ वर्ष की आयु होती है।।१७५।।

रन्ध्रेशे नीचराशिस्थे रन्ध्रे पापग्रहैर्युते।
लग्नेशे दुर्बले यस्य अल्पायुर्भवति ध्रुवम्।।१७६।।

अष्टमेश अपनी नीच राशि में हो, अष्टम भाव में पापग्रह हों और लग्नेश दुर्बल हो तो अल्पायु होती है।।१७६।।

रन्ध्रेशे पापसंयुक्ते रन्ध्रे पापग्रहैर्युते।
व्यये क्रूरग्रहैर्जाते जातमात्रं मृतिर्भवेत्।।१७७।।

अष्टमेश पापग्रह से युक्त हो, आठवें भाव में पापग्रह हों और बारहवें भाव में पापग्रह हों तो उत्पन्न होते ही मृत्यु हो जाती है।।१७७।।

केन्द्रत्रिकोणपापस्थाः षष्ठाष्टेषु शुभा यदि।
लग्ने रन्ध्रेशनीचस्थे जातः सद्यो मृतो भवेत्।।१७८।।

केन्द्र-त्रिकोण में पापग्रह हों, ६/८ भाव में शुभग्रह हों, लग्न में अष्टमेश अपनी नीचराशि का हो तो शीघ्र ही मृत्यु होती है।।१७८।।

पञ्चमे पापसंयुक्ते रन्ध्रेशे पापसंयुते।
रन्ध्रे पापग्रहैर्युक्ते अल्पायुष्यः प्रजायते।।१७९।।

पाँचवें भाव में पापग्रह हो, अष्टमेश पापग्रह से युत हो और अष्टम भाव पापग्रह से युत हो तो अल्पायु होती है।।१७।।

रन्ध्रेशे रन्ध्रराशिस्थे चन्द्रे पापसमन्विते।
शुभदृग्रहिते विद्वन् मासान्ते च मृतिर्भवेत्।।१८०।।

अष्टमेश आठवें भाव में और चन्द्रमा पापयुक्त हो, शुभग्रह से न देखा जाता हो तो मास के अंत में मृत्यु होती है।।१८०।।

लग्नेशे स्वोच्चराशिस्थे चन्द्रे लाभसमन्विते।
रन्ध्रस्थानगते जीवे दीर्घायुष्यं न संशयः।।१८१।।

लग्नेश अपनी उच्चराशि में हो और चन्द्रमा लाभभाव में हो तथा आठवें भाव में गुरु हो तो दीर्घायु होती है, इसमें संशय नहीं है।।१८१।।

अथ नवमभावफलमाह—

गुरुस्थानगते जीवे तदीशे केन्द्रसंस्थिते।
लग्नेशे बलसंयुक्ते बहुभाग्याधिपो भवेत्।।१८२।।

नवम स्थान में गुरु हो, नवमेश केन्द्र में हो और लग्नेश बलवान् हो तो बड़ा ही भाग्यवान् होता है।।१८२।।

भाग्येशे बलसंयुक्ते भाग्ये भृगुसमन्विते।
लग्नात्केन्द्रगते जीवे पितृभाग्यसमन्वितः।।१८३।।

भाग्येश बलवान् हो, भाग्यस्थान में शुक्र हो, लग्न से केन्द्र में गुरु हो तो पिता भाग्यवान् होता है।।१८३।।

भाग्यस्थानाद्द्वितीये वा सुखे भौमसमन्विते।
भाग्येशे नीचराशिस्थे पिता निर्धन एव च।।१८४।।

भाग्यस्थान से दूसरे वा चौथे स्थान में भौम हो और भाग्येश नीच राशि में हो तो पिता निर्धन होता है।।१८४।।

भाग्येशे परमोच्चस्थे भाग्यांशे जीवसंयुते।
लग्नाच्चतुष्टये शुक्रे पिता दीर्घायुरादिशेत्।।१८५।।

भाग्येश परम-उच्चांश में हो, गुरु भाग्यांश में हो, लग्न से केन्द्र में शुक्र हो तो पिता दीर्घायु होता है।।१८५।।

भाग्येशे केन्द्रभावस्थे गुरुणा च निरीक्षिते।
तत्पिता वाहनैर्युक्तो राजा वा तत्समो भवेत्।।१८६।।

भाग्येश केन्द्र में गुरु से देखा जाता हो तो उसका पिता वाहन से युक्त राजा वा उसके समान होता है।।१८६।।

भाग्येशे कर्मभावस्थे कर्मेशे भाग्यराशिगे।
शुभयोगे धनाढ्यश्च कीर्तिमांस्तत्पिता भवेत्।।१८७।।

भाग्येश कर्मभाव में हो, कर्मेश भाग्यभाव में हो और शुभग्रह से किसी प्रकार का संपर्क हो तो उसका पिता धनी और कीर्त्तिमान् होता है।।१८७।।

परमोच्चांशगे सूर्ये भाग्येशे लाभसंस्थिते।
धर्मिष्ठो नृपवात्सल्यः पितृभक्तो भवेन्नरः।।१८८।।

सूर्य परम-उच्चांश में हो, भाग्येश लाभभाव में हो तो जातक धर्मिष्ठ, राजा का प्रेमपात्र और पितृभक्त होता है।।१८८।।

लग्नात्त्रिकोणगे सूर्ये भाग्येशे सप्तमस्थिते।
गुरुणा सहिते दृष्टे पितृभक्तिसमन्वितः।।१८९।।
भाग्येशे धनभावस्थे धनेशे भाग्यराशिगे।
द्वात्रिंशात्परतो भाग्यं वाहनं कीर्त्तिसम्भवः।।१९०।।

लग्न से त्रिकोण में सूर्य हो, भाग्येश धनभाव में और धनेश भाग्यभाव में हो तो ३२वें वर्ष के बाद भाग्य, वाहन और कीर्त्ति का लाभ होता है।।१९०।।

पितृवैरयोगः—

लग्नेशे भाग्यराशिस्थे षष्ठेशे भाग्यराशिगे।
अन्योऽन्यवैरं ब्रुवते जनकः कुत्सितो भवेत्।।१९१।।

लग्नेश भाग्यभाव में हो और षष्ठेश भाग्यभाव में हो तो परस्पर पिता-पुत्र में वैर होता हैं तथा पिता निन्दनीय होता है।।१९१।।

भिक्षाशनयोगः—

कर्माधिपेन सहितो विक्रमेशो च निर्बलः।
नीचास्तगो च भाग्येशो योगो भिक्षाशनप्रदः।।१९२।।

यदि निर्बल तृतीयेश कर्मेश से युक्त हो और भाग्येश नीच वा अस्त में हो तो जातक भिक्षा से उदरपूर्त्ति करने वाला होता है।।१९२।।

पितृमरणयोगमाह—

षष्ठाष्टमव्यये भानू रन्ध्रेशे भाग्यसंयुते।
व्ययेशे लग्नराशिस्थे षष्ठेशे पञ्चमे स्थिते।।१९३।।
जातस्य जननात्पूर्वं जनकस्य मृतिं वदेत्।

सूर्य ६/८/१२ भाव में हो और अष्टमेश भाग्य भाव में हो तथा व्ययेश लग्न में और षष्ठेश पाँचवें भाव में हो बालक के जन्म से पूर्व ही पिता की मृत्यु हो जाती है।।१९३।।

रन्ध्रस्थानगते सूर्ये रन्ध्रेशे भाग्यभावगे।।१९४।।
जातस्य प्रथमाब्दे च पितुर्मरणमादिशेत्।

आठवें स्थान में सूर्य हो और अष्टमेश भाग्यभाव में हो तो बालक के पहले वर्ष में ही पिता की मृत्यु होती है।।१९४।।

व्ययेशे भाग्यराशिस्थे नीचांशे भाग्यनायके।
तृतीये षोडशे वर्षे जनकस्य मृतिर्भवेत्।।१९५।।

व्ययेश भाग्यभाव में, भाग्येश नीचांश में हो तो तीसरे वा सोलहवें वर्ष में पिता की मृत्यु होती है।।१९५।।

लग्नेशे नाशराशिस्थे रन्ध्रेशे भानुसंयुते।
द्वितीये द्वादशे वर्षे पितुर्मरणमादिशेत्।।१९६।।

लग्नेश आठवें भाव में और अष्टमेश सूर्य से युत हो तो दूसरे वा १२वें वर्ष में पिता की मृत्यु होती है।।१९६।।

भाग्याद्रन्ध्रगते राहौ भाग्याद्भाग्यगते रवौ।
राहुणा सहिते सूर्ये चन्द्राद्भाग्यगते शनौ।।१९७।।
सप्तमैकोनविंशाब्दे तातस्य मरणं भवेत्।

भाग्यभाव से आठवें भाव में राहु हो, भाग्य से भाग्यभाव में रवि राहु से युक्त हो और चन्द्रमा से भाग्यभाव में शनि हो तो ७वें या १९वें वर्ष में पिता की मृत्यु होती है।।१९७।।

भाग्येशे व्ययराशिस्थे व्ययेशे भाग्यराशिगे।।१९८।।
चतुश्चत्वारिवर्षाच्च पितुर्मरणमादिशेत्।

भाग्येश १२वें भाव में और व्ययेश भाग्यभाव में हो तो ४४वें वर्ष में पिता की मृत्यु होती है।।१९८।।

रव्यंशे च स्थिते चन्द्रे लग्नेशे रन्ध्रसंयुते।।१९९।।
पञ्चत्रिंशैकचत्वारिंशद्वर्षे पितृनाशनम्।

सूर्य के नवांश में चन्द्रमा हो और लग्नेश आठवें भाव में हो तो ३५वें वा ४१वें वर्ष में पिता की मृत्यु होती है।।१९९।।

पितृस्थानाधिपे सूर्ये मन्दभौमसमन्विते।।२००।।
पञ्चाशद्वत्सरे प्राप्ते जनकस्य मृतिर्भवेत्।

पितृस्थान (१०) का स्वामी सूर्य हो और शनि-भौम से युत हो तो ५०वें वर्ष में पिता की मृत्यु होती है।।२००।।

भाग्यात्सप्तमगे सूर्ये भ्रातृसप्तमगस्तमः।।२०१।।
षष्ठे वा पञ्चविंशाब्दे पितुर्मरणमादिशेत्।

भाग्यभाव से ७वें सूर्य हो और भ्रातृभाव से ७वें राहु हो तो छठे वा २५वें वर्ष में पिता की मृत्यु होती है।।२०१।।

रन्ध्रजामित्रगे मन्दे मन्दाज्जामित्रगे रवौ।।२०२।।
त्रिंशैकविंशे षड्विंशे जनकस्य मृतिर्भवेत्।

आठवें से सातवें भाव में शनि हो और शनि से ७वें भाव में राहु हो तो ३०वें, २१वें वा २६वें वर्ष में पिता की मृत्यु होती है।।२०२।।

भाग्येशे नीचराशिस्थे तदीशे भाग्यराशिगे।।२०३।।
षड्विंशे च त्रयस्त्रिंशे पितुर्मरणमादिशेत्।
एवं तातस्य भो विद्वन् फलं ज्ञात्वा समादिशेत्।।२९४।।

भाग्येश नीच राशि में और नीच राशि का स्वामी भाग्यभाव में हो तो २६वें वा ३३वें वर्ष में पिता की मृत्यु होती है। इस प्रकार से पिता की मृत्यु का विचार कर आदेश देना चाहिए।।२०३-२०४।।

परमोच्चांशगे शुक्रे भाग्येशेन समन्विते।
भ्रातृस्थाने शनियुते बहुभाग्याधिपो भवेत्।।२०५।।

भाग्येश से युत शुक्र परम-उच्चांश में हो और मातृस्थान में शनि हो तो बड़ा भाग्यवान् होता है।।२०५।।

गुरुणा संयुते भाग्ये तदीशे केन्द्रराशिगे।
विंशद्वर्षात्परं चैव बहुभाग्यं विनिर्दिशेत्।।२०६।।

भाग्यस्थान में गुरु हो और भाग्येश केंद्र में हो तो २२ वर्ष के बाद भाग्योदय होता है।।२०६।।

परमोच्चांशगे सौम्ये भाग्येशे भाग्यराशिगे।
षट्त्रिंशाच्च परं चैव बहुभाग्यं विनिर्दिशेत्।।२०७।।

बुध परम उच्चांश में हो और भाग्येश भाग्यभाव में हो तो ३६वें वर्ष के बाद भाग्योदय होता है।।२०७।।

लग्नेशे भाग्यराशिस्थे भाग्येशे लग्नसंयुते।
गुरुणा संयुते द्यूने धनवाहनलाभकृत्।।२०८।।

लग्नेश भाग्यभाव में और भाग्येश लग्न में हो तथा गुरु सप्तम भाव में हो तो धन-वाहन से युक्त होता है।।२०८।।

भाग्यहीनयोगः

भाग्याद्भाग्यगतो राहुर्भाग्येशे निधनं गते।
भाग्येशे नीचराशिस्थे भाग्यहीनो भवेन्नरः।।२०९।।

भाग्यस्थान से नवम भाव में राहु हो तथा भाग्येश अपनी नीच राशि के आठवें भाव में हो तो मनुष्य भाग्यहीन होता है।।२०९।।

भाग्यस्थानगते मन्दे शशिना च समन्विते।
लग्नेशे नीचराशिस्थे भिक्षाशी च नरो भवेत्।।२१०।।

भाग्यस्थान में शनि चन्द्रमा के साथ हो और लग्नेश नीच राशि में हो तो भिक्षा का अन्न खाने वाला होता है।।२१०।।

अथ दशमभावफलमाह—

कर्माधिपो बलोनश्चेत्कर्मवैकल्यमादिशेत्।
सैंहिः केन्द्रत्रिकोणस्थो ज्योतिष्टोमादियागकृत्।।२११।।

कर्मेश निर्बल हो तो जातक कर्महीन होता है। राहु केन्द्र-त्रिकोण में हो तो ज्योतिष्टोम आदि यज्ञ करने वाला होता है।।२११।।

दशमे पापसंयुक्ते लाभे पापसमन्विते।
दुष्कृतिं लभते मर्त्यः स्वजनानां विदूषकः।।२१२।।

दशम भाव में पापग्रह हो और लाभ भाव में पापग्रह हो तो जातक दुष्कीर्त्ति पाता है।।२१२।।

कर्मेशे नाशराशिस्थे राहुणा संयुतेऽपि च।
जनद्वेषी महामूर्खो दुष्कृतिं लभते नरः।।२१३।।

कर्मेश राहु से संयुक्त होकर आठवें भाव में हो तो मनुष्यों से द्वेष करने वाला, महामूर्ख और दुष्कर्म में प्रवृत होता है।।२१३।।

कर्मेशे द्यूनराशिस्थे मन्दभौमसमन्विते।
द्यूनेशे पापसंयुक्ते शिश्नोदरपरायणः।।२१४।।

कर्मेश शनि-भौम से युत होकर सप्तम भाव में हो और सप्तमेश पाप से युत हो तो जातक शिश्न द्वारा उदरपूर्त्ति (जीविका) करने वाला होता है।।२१४।।

तुङ्गराशिं समाश्रित्य कर्मेशे गुरुसंयुते।
भाग्येशे कर्मराशिस्थे यानैश्वर्यप्रतापवान्।।२१५।।

अपनी उच्चराशि में कर्मेश गुरु से युत हो और भाग्येश कर्मराशि में हो तो जातक मान-ऐश्वर्य से युक्त प्रतापी होता है।।२१५।।

लाभेशे कर्मराशिस्थे कर्मेशे लग्नसंयुते।
तावुभौ केन्द्रगौ वादि सुखजीवनभाग्भवेत्।।२१६।।

लाभेश कर्मराशि में हो और कर्मेश लग्न में हो अथवा दोनों केन्द्र में हों तो सुखी जीवन वाला होता है।।२१६।।

कर्मेशे बलसंयुक्ते मीने गुरुसमन्विते।
वस्त्राभरणसौख्यादि लभते नात्र संशयः।।२१७।।

कर्मेश बलवान् होकर मीनराशि में गुरु से युत हो तो जातक वस्त्र, आभूषण सुख आदि से युक्त होता है।।२१७।।

कर्महीनयोगः—

लाभस्थानगते सूर्ये राहुभौमसमन्विते।
रविपुत्रेण संयुक्ते कर्मच्छेत्ता भवेन्नरः।।२१८।।

सूर्य लाभभाव में राहु, भौम, शनि से युत हो तो जातक कर्महीन होता है।।२१८।।

शुभकर्मयोगाः—

मीने जीवे भृगुसुते लग्नेशे बलसंयुते।
स्वोच्चराशिगते चन्द्रे सम्यग्ज्ञानार्थवान् भवेत्।।२१९।।

मीनराशि में गुरु-शुक्र हों, लग्नेश बलवान् हो और चंद्रमा अपनी उच्चराशि में हो तो ज्ञानी और धनी होता है।।२१९।।

कर्मेशे लाभराशिस्थे लाभेशे लग्नसंस्थिते।
कर्मराशिस्थिते शुक्रे रत्नवान् स नरो भवेत्।।२२०।।

कर्मेश लाभभाव में और लग्नेश लग्न में तथा शुक्र कर्मभाव में हो तो मनुष्य रत्नों से युक्त होता है।।२२०।।

केन्द्रत्रिकोणगे कर्मनाथे स्वोच्चसमाश्रिते।
गुरुणा सहिते दृष्टे स कर्मसहितो भवेत्।।२२१।।

अपनी उच्च राशि में कर्मेश केंद्र-त्रिकोण में और गुरु से युत-दृष्ट हो तो मनुष्य कर्मश्रेष्ठ होता है।।२२१।।

कर्मेशे लग्नभावस्थे लग्नेशेन समन्विते।
केन्द्रत्रिकोणगे चन्द्रे सत्कर्मनिरतो भवेत्।।२२२।।

कर्मेश लग्न में लग्नेश के साथ हो, केन्द्र- त्रिकोण में चंद्रमा हो तो पुरुष सत्कर्म में निरत होता है।।२२२।।

कर्मस्थानगते चन्द्रे तदीशे तत्त्रिकोणगे।
लग्नेशे केन्द्रभावस्थे सत्कीर्त्तिसहितो भवेत्।।२२३।।

कर्मस्थान में चंद्रमा हो और कर्मेश उससे त्रिकोण में हो तथा लग्नेश केंद्र में हो तो कीर्त्ति से युक्त होता है।।२२३।।

लाभेशे कर्मभावस्थे कर्मेशे बलसंयुते।
देवेन्द्रगुरुणा दृष्टे सत्कीर्त्तिसहितो भवेत्।।२२४।।

लाभेश कर्मभाव में हो और कर्मेश बलवान् हो, गुरु से देखा जाता हो तो सत्कीर्त्ति से युक्त होता है।।२२४।।

कर्मस्थानाधिपे भाग्ये लग्नेशे कर्मसंयुते।
लग्नात्पञ्चमगे चन्द्रे ख्यातकीर्त्तिं विनिर्दिशेत्।।२२५।।

कर्मेश भाग्यभाव में और लग्नेश कर्मभाव में हो तथा लग्न से पाँचवें भाव में चंद्रमा हो तो विख्यात कीर्त्तिवाला पुरुष होता है।।२२५।।

अशुभयोगः—

कर्मस्थानगते मन्दे नीचखेचरसंयुते।
कर्मांशे पापसंयुक्ते कर्महीनो भवेन्नरः।।२२६।।

कर्मस्थान में शनि नीचराशिस्थ ग्रह से युत हो और कर्मांश में पापग्रह हो तो जातक कर्महीन होता है।।२२६।।

कर्मेशे नाशराशिस्थे कर्मस्थे पापखेचरे।
कर्मभात्कर्मगे पापे कर्मवैकल्यमादिशेत्।।२२७।।

कर्मेश आठवें भाव में हो और कर्मभाव में पापग्रह हो तथा कर्मभाव से कर्मस्थान में पापग्रह हो तो पुरुष कर्महीन होता है।।२२७।।

अथैकादशभावफलमाह—

लाभाधिपो यदा लाभे तिष्ठेत्केन्द्रत्रिकोणयोः।
बहुलाभं तदा कुर्यादुच्चसूर्यांशगोऽपि वा।।२२८।।

लाभेश लाभभाव में वा केंद्र-त्रिकोण में हो वा अपने उच्च में वा सूर्यांश में हो तो भी फल का बहुत लाभ होता है।।२२८।।

लाभेशे धनराशिस्थे धनेशे केन्द्रसंस्थिते।
गुरुणा सहिते भावे गुरुलाभं विनिर्दिशेत्।।२२९।।

लाभेश धन राशि में हो और धनेश केंद्र में हो तथा गुरु से युत हो तो अधिक लाभ होता है।।२२९।।

लाभेशे लाभभावस्थे शुभग्रहसमन्विते।
षट्त्रिंशे वत्सरे प्राप्ते सहस्रद्वयनिष्कभाक्।।२३०।।

लाभेश लाभभाव में शुभग्रह से युत हो तो ३६वें वर्ष में २ सहस्र निष्क (मोहर) का लाभ होता है।।२३०।।

केन्द्रत्रिकोणगे भावनाथे शुभसमन्विते।
चत्वारिंशे तु सम्प्राप्ते सहस्रार्धं च निष्कभाक्।।२३१।।

लाभेश शुभग्रह से युत होकर केन्द्र-त्रिकोण में हो तो ४०वें वर्ष में पाँच सौ मोहर का लाभ होता है।।२३१।।

लाभस्थाने गुरुयुते धने चन्द्रसमन्विते।
भाग्यस्थानगते शुक्रे षट्सहस्राधिपो भवेत्।।२३२।।

लाभभाव में गुरु हो और धनस्थान में चंद्रमा हो तथा भाग्यस्थान में शुक्र हो तो ६ हजार मोहर का अधिपति होता है।।२३२।।

लाभाच्च लाभगे जीवे गुरुचन्द्रेण संयुते।
धनधान्याधिपः श्रीमान् रत्नाद्याभरणैर्युतः।।२३३।।

लाभस्थान से लाभ में गुरु चंद्रमा से युत हो तो धन-धान्य का स्वामी, श्रीमान्, रत्न आदि आभूषणों से युक्त होता है।।२३३।।

लाभेशे लग्नभावस्थे लग्नेशे लाभसंयुते।
त्रयस्त्रिंशे तु सम्प्राप्ते सहस्रनिष्कभाग्भवेत्।।२३४।।

लाभेश लग्न में हो और लग्नेश लाभभाव में हो तो ३३वें वर्ष में १ हजार मोहर का लाभ होता है।।२३४।।

धनेशे लाभराशिस्थे तदीशे धनराशिगे।
विवाहात्परतश्चैव बहुभाग्यं समादिशेत्।।२३५।।

धनेशलाभ भाव में और लाभेश धनभाव में हो तो विवाह के बाद अनेक प्रकार से भाग्योदय होता है।।२३५।।

धैर्येशे लाभराशिस्थे लाभेशे भ्रातृसंस्थिते।
भ्रातृभावाद्धनप्राप्तिर्दिव्याभरणसंयुतः।।२३६।।

तृतीय भावेश ११वें भाव में और लाभेश तीसरे भाव में हो तो भाइयों से धन का लाभ होता है।।२३६।।

अथ द्वादशभावाफलम्—

चन्द्रो व्ययाधिपो धर्मलाभमन्त्रेषु संस्थितः।
स्वोच्चस्वर्क्षनिजांशे वा लाभधर्मात्मजांशके।
दिव्यागारादिपर्यङ्को दिव्यगन्धैकभोगवान्।।२३७।।
परार्थ्यं रमणो दिव्यवस्त्रमाल्यादिभूषणः।
परार्थ्यसंयुतो वित्तो दिनानि नवतिः प्रभुः।।२३८।।

चंद्रमा व्ययेश होकर ९।११।५वें भाव में हो वा अपनी उच्चराशि, अपनी राशि धनभाव के नवांश में हो अथवा लाभ नवम-पंचम के नवांश में हो तो दिव्य मकान, शय्या, गंध, दूसरे के द्रव्य को भोगने वाला होता है।।२३७-२३८।।

एवं स्वशत्रुनीचांशेऽष्टमांशे वाष्टमे रिपौ।
संस्थितः कुरुते जातं कान्तासुखविवर्जितम्।।२३९।।

इसी प्रकार अपने शत्रु की नीचराशि के नवांश में अष्टमभाव के नवांश में, आठवें या छठे भाव में हो तो जातक को स्त्री का सुख नहीं होता है।।२३९।।

व्ययाधिक्यपरिक्लान्तं दिव्यभोगनिराकृतम्।
स हि केन्द्रत्रिकोणस्थः स्वस्त्रियालङ्कृतः स्वयम्।।२४०।।

और अधिक खर्च से खिन्न होकर दिव्य भोग आदि से रहित होता है। यदि वह केन्द्र-त्रिकोण में हो तो स्त्रीसुख से युक्त होता है।।२४०।।

लग्नस्य पूर्वार्धगतानभोगाः फलं प्रदद्युस्तु प्रत्यते।
परार्धषट्कोपगताः परोक्षं फलं वदन्तीति बुधाः पुराणाः।।२४१।।

लग्न के पूर्वार्ध (१० से ३ भाव तक) मतांतर से (७।८।९।१०।११।१२) में स्थित ग्रह प्रत्यक्ष में फल देने वाले होते हैं और परार्ध (४।५।६।७।८।९) भाव में मतांतर से (१।२।३।४।५।६) में स्थित ग्रह परोक्ष (अप्रत्यक्ष सूर्य) से फल देने वाले होते हैं।।२४१।।

व्ययस्थानगतो राहुर्भौमार्करविसंयुतः।
तदीशेऽप्यर्कसंयुक्ते नरके पतनं भवेत्।।२४२।।

बारहवें भाव में राहु भौम-सूर्य के साथ हो, व्ययेश भी सूर्य से युक्त हो तो जातक नरक में जाता है।।२४२।।

व्ययस्थानगते सौम्ये तदीशे स्वोच्चराशिगे।
शुभयुक्ते शुभैर्दृष्टे मोक्षः स्यान्नात्र संशयः।।२४३।।

बारहवें भाव में बुध हो, व्ययेश अपनी उच्च राशि में हो, शुभ ग्रह से युत और दृष्ट हो तो मोक्ष होता है।।२४३।।

व्ययेशे पापसंयुक्ते व्यये पापसमन्विते।
पापग्रहेण सन्दृष्टे देशाद्देशान्तरं गतः।।२४३।।

व्ययेश पापग्रह से युत हो और व्ययभाव में पापग्रह हो और पापग्रह से देखा जाता हो तो देश-विदेश में जाने वाला होता है।।२४४।।

व्ययेशे शुभराशिस्थे व्ययर्क्षे शुभसंयुते।
शुभग्रहेण सन्दृष्टे स्वदेशात्सञ्चरो भवेत्।।२४५।।

व्ययेश शुभराशि में हो और व्ययभाव में शुभग्रह हो, शुभग्रह से देखा जाता हो तो अपने देश से अन्य देश को जाने वाला होता है।।२४५।।

व्यये मन्दादिसंयुक्ते भूमिजेन समन्विते।
शुभदृष्टैर्न सम्प्राप्तिः पापमूलाद्धनार्जनम्।।२४६।।

व्ययभाव शनि-भौम से युत हो, शुभग्रह से न देखा जाता हो तो पाप करने से धन की हानि होती है।।२४७।।

लग्नेशे व्ययराशिस्थे व्ययेशे लग्नसंयुते।
भृगुपुत्रेण संयुक्ते धर्ममूलाद्धनव्ययम्।।२४७।।

लग्नेश बारहवें भाव में हो और व्ययेश लग्न में हो, शुक्र से युत हो तो धर्म करने में धन का व्यय होता है।।२४७।।

इति पाराशरहोरायां पूर्वखण्डे सुबोधिन्यां द्वादशभावविचारो नाम द्वादशोऽध्यायः।

अथ भावेशफलाध्यायः

अथ लग्नेशभावफलम्—

लग्नेशे लग्नगे पुंसः सुखी भुजपराक्रमी।
मनस्वी चातिचाञ्चल्यो द्विभार्यः परगोऽपि वा।।१।।

लग्नेश लग्न में हो तो जातक सुखी, पराक्रमी, मनस्वी, अत्यंत चंचल, दो स्त्रियों वाला और परस्त्रीगामी भी होता है।।१।।

लग्नेशे धनगे लाभे सलाभः पण्डितो नरः।
सुशीलो धर्मविन्मानी बहुदारगुणैर्युतः।।२।।

लग्नेश धनस्थान में या लाभस्थान में हो तो जातक लाभ से युक्त पंडित, सुशील, धर्मात्मा, ज्ञानी और अनेक स्त्रियों से युक्त होता है।।२।।

लग्नेशे सहजे षष्ठे सिंहतुल्यपराक्रमी।
सर्वसम्पद्युतो मानी द्विभार्यो मतिमान्सुखी।।३।।

लग्नेश तीसरे या छठे भाव में हो तो जातक सिंह के समान पराक्रमी, सभी सम्पत्ति से युक्त, मानी, दो स्त्रियों वाला और बुद्धिमान् एवं सुखी होता है।।३।।

लग्नेशे दशमे तुर्ये पितृमातृसुखान्वितः।
बहुभ्रातृयुतः कामी गुणसौन्दर्यसंयुतः।।४।।

लग्नेश दशम या चतुर्थ भाव में हो तो पिता-माता के सुख से युक्त, अनेक भाइयों वाला, कामी, गुण-सौंदर्य से युक्त होता है।।४।।

लग्नेशे पञ्चमे दानी सुतसौख्यं च मध्यमम्।
प्रथमापत्यनाशः स्यात्क्रोधी लोभी नृपप्रियः।।५।।

लग्नेश पाँचवें भाव में हो तो जातक दानी, मध्यम संतान सुखवाला, प्रथम संतान से हीन, क्रोधी, लोभी और राजप्रिय होता है।।५।।

लग्नेशे सप्तमे यस्य भार्या तस्य न जीवति।
विरक्तो वा प्रवासी वा दरिद्रो वा नृपोऽपि वा।।६।।

लग्नेश सातवें भाव में हो तो स्त्री का विनाश होता है। वह व्यक्ति विरक्त हो या परदेशी हो, वा दरिद्र हो या राजा होता है।।६।।

लग्नेशे व्ययगेऽष्टस्थे सिद्धविद्याविशारदः।
द्यूती चौरो महाक्रोधी परनार्यतिभोगकृत्।।७।।

लग्नेश १२वें या ८वें भाव में हो तो जातक जूआ खेलने वाला, चोर, क्रोधी और परस्त्रीगामी होता है।।८।।

लग्नेशे नवमे पुंसो भाग्यवान् जनवल्लभः।
विष्णुभक्तः पटुर्वाग्मी पुत्रदारधनैर्युतः।।८।।

लग्नेश नवम भाव में हो तो पुरुष भाग्यवान्, जनप्रिय, विष्णुभक्त, पंडित, वक्ता और पुत्र-स्त्री से युक्त होता है।।८।।

अथ धनेशभावफलम्—

धनेशे च तनौ पुत्री स्वकुटुम्बस्य कण्टकः।
धनवान्निष्ठुरः कामी परकार्येषु तत्परः।।९।।

धनेश लग्न में हो तो जातक पुत्रवान्, अपने कुटुम्ब का कंटक, धनी, निष्ठुर, कामी और दूसरे के कार्य में तत्पर होता है।।९।।

धनेशे धनगे मर्त्यः धनवान् गर्वसंयुतः।
भार्याद्वयं त्रयं वापि पुत्रहीनः प्रजायते।।१०।।

धनेश धनभाव में हो जातक धनी, धर्म से युक्त होता है। उसे २ या ३ स्त्रियाँ होती है और पुत्रहीन होता है।।१०।।

धनेशे सहजे तुर्ये विक्रमी मतिमान् गुणी।
परदाराभिमानी च लोभी वा देवनिन्दकः।।११।।

धनेश तीसरे या चौथे भाव में हो तो जातक पराक्रमी, बुद्धिमान्, गुणी, परायी स्त्री का अभिमान करने वाला, लोभी या देवनिंदक होता है।।११।।

धनेशे सुतभावस्थे पुत्रतो धनवान् भवेत्।
कृपणो दुःखभाग्जातो यशस्वी पुत्रवान् भवेत्।।१२।।

धनेश पाँचवें भाव में हो तो पुत्र से धनी, कृपण, दुःख भोगने वाला, यशस्वी और पुत्रवान् होता है।।१२।।

धनेशे शत्रुगे शत्रोर्धनं प्राप्नोति निश्चितम्।
शत्रुतो वित्तनाशः स्याज्जंघोर्वोर्भवेच्च रुक्।।१३।।

धनेश छठे भाव में हो तो शत्रु से धन प्राप्त करने वाला, पुत्र द्वारा धन नाश वाला और जंघा तथा उरु प्रदेश में रोग युक्त होता है।।११।।

धनेशे सप्तमे वैद्यः परजायाभिगामिनः।
जाया तस्य भवेद्वेश्या माता च व्यभिचारिणी।।१४।।

धनेश सातवें भाव में हो तो जातक वैद्य होता है, परस्त्रीगामी होता है। उसकी स्त्री वेश्या और माता व्यभिचारिणी होती है।।१४।।

धनेशे मृत्युगेहस्थे भूमिद्रव्यं लभेद् ध्रुवम्।
जायासौख्यं भवेत्स्वल्पं ज्येष्ठभ्रातृसुखं न हि।।१५।।

धनेश आठवें भाव में हो तो जातक को भूमिगत द्रव्य का लाभ, स्त्री का सुख अल्प और ज्येष्ठ भाई का सुख नहीं होता है।।१५।।

धनेशे नवमे लाभे धनवानुद्यमी पटुः।
बाल्ये रोगी सुखी पश्चाद्यावदायुः समाप्यते।।१६।।

धनेश नवम भाव वा लाभभाव में हो तो जातक धनी, उद्यमी, विद्वान् होता है। बाल्य अवस्था में रोगी और पीछे आयु पर्यंत सुखी होता है।।१६।।

धनेशो दशमे यस्य कामी मानी च पण्डितः।
बहुदारधनैर्युक्तः सुतहीनो प्रजायते ।।१७।।

धनेश दशम भाव में हो तो जातक कामी, मानी, पंडित, अनेक स्त्री तथा धन से युक्त और पुत्रहीन होता है।।१७।।

धनेशे व्ययगे ज्ञानी साहसी धनवर्जितः।
जीविका नृपगेहाच्च ज्येष्ठपुत्रसुखं न हि।।१८।।

धनेश बारहवें भाव में हो तो जातक ज्ञानी, साहसी, धनहीन, राजगृह से जीविकावाला और ज्येष्ठ पुत्र के सुख से हीन होता है।।१८।।

अथ सहजेशभावफलम्—

तृतीयेशे तनौ लाभे स्वभुजार्जितवित्तवान्।
मूर्खः कृशो महारोगी साहसी परसेवकः।।१९।।

तृतीयेश लग्न या लाभ भाव में हो तो जातक अपनी कमाई से धनी, मूर्ख, कृश, महारोगी अपितु साहसी, दूसरे का सेवक होता है।।१९।।

गुदाभञ्जनिकः स्थूलः परभार्याधने रुचिः।
स्वल्पारम्भी सुखी न स्यात्तृतीयेशे धनं गते।।२०।।

तृतीयेश दूसरे भाव में हो तो जातक स्त्री के स्वभाव का, स्थूल, परस्त्री के धन से कार्य आरम्भ करने वाला और सुखी नहीं होता है।।२०।।

तृतीयेशे तृतीयस्थे विक्रमी सुतसंयुतः।
धनयुक्तो महाहृष्टो भुनक्ति सुखमद्भुतम्।।२१।।

तृतीयेश तीसरे भाव में हो तो जातक पराक्रमी, पुत्रवान्, धनी, प्रसन्न और अद्भुत् सुख को भोगने वाला होता है।।२१।।

तृतीयेशे सुखे कर्मे पञ्चमे वा सुखी सदा।
अतिक्रूरा भवेद्भार्या धनाढ्यो मतिमान् भवेत्।।२२।।

तृतीयेश चौथे, दसवें और पाँचवें भाव में हो तो जातक सदा सुखी, अतिक्रूर स्त्री से युक्त, धनी और बुद्धिमान् होता है।।२२।।

तृतीयेशो रिपौ यस्य भ्राता शत्रुर्महाधनी।
मातुलानां सुखं न स्यान्मातुल्या भोगमिच्छति।।२३।।

तृतीयेश छठे भाव में हो तो जातक का भाई शत्रु होता है। जातक स्वयं महाधनी, मामा के सुख से हीन और मामी से संभोग की इच्छावाला होता है।।२३।।

तृतीयेशेऽष्टमे द्यूने राजद्वारे मृतिर्भवेत्।
चोरो वा परगामी वा बाल्ये कष्टं दिने दिने।।२४।।

तृतीयेश आठवें या सातवें भाव में हो तो जातक की मृत्यु राजद्वार में होती है, चोर, परस्त्रीगामी और बाल्य समय में कष्ट भोगने वाला होता है।।२४।।

तृतीयेशे व्यये भाग्ये स्त्रीभिर्भाग्योदयो भवेत्।
पिता तस्य महाचोरः सुखेऽपि दुःखदर्शकः।।२५।।

तृतीयेश बारहवें या भाग्यभाव में हो तो जातक का भाग्योदय स्त्री के द्वारा होता है और उसका पिता बड़ा चोर होता है।।२५।।

अथ सुखेशभावफलम्—

सुखेशे लग्नगे वापि पितृपुत्रौ च स्नेहलौ।
पितृपक्षवैरिकलितं पितृनाम्ना प्रसिद्धं च।।२६।।

सुखेश लग्न में हो तो पिता-पुत्र में स्नेह होता है, चाचा आदि से वैरभाव और पिता के नाम से प्रसिद्धि होती है।।२६।।

सर्वसम्पद्युतो मानी साहसी कुहकान्वितः।
कुटुम्बसंयुतो भोगी सुखेशे च धनस्थिते।।२७।।

सुखेश धनभाव में हो तो जातक सभी सम्पत्तियों से युक्त, मानी, साहसी, इन्द्रजाल करने वाला, कुटुम्ब से युक्त और भोगी होता है।।२७।।

सुखेशे सहजे लाभे नित्यरोगी भवेन्नरः।
उदारो गुणवान्दाता स्वभुजार्जितवित्तवान्।।२८।।

सुखेश तीसरे या ग्यारहवें भाव में हो तो जातक नित्यरोगी, उदार, गुणी, दाता और अपने परिश्रम से द्रव्य पैदा करने वाला होता है।।२८।।

तुर्येशे तुर्यगे मन्त्री भवेत्सर्वधनाधिपः।
चतुरः शीलवान् मानी धनाढ्यः स्त्रीप्रियः सुखी।।२९।।

सुखेश सुख भाव में हो तो मंत्री सभी प्रकार की संपत्ति से युक्त, चतुर, शीलवान्, मानी, धनी और स्त्रीप्रिय तथा सुखी होता है।।२९।।

तुर्येशे पञ्चमे भाग्ये सुखी सर्वजनप्रियः।
विष्णुभक्तिरतो मानी स्वभुजार्जितवित्तवान्।।३०।।

सुखेश पाँचवें वा नवम भाव में हो तो जातक सुखी, सर्वजनप्रिय, विष्णुभक्त, मानी और अपने पराक्रम से द्रव्य पैदा करने वाला होता है।।३०।।

सुखेशे शत्रुगेहस्थे सदा स्याद्बहुयातृकः।
क्रोधी चौरोऽभिचारी च दुष्टचित्तो मनस्व्यपि।।३१।।

सुखेश छठे भाव में हो तो जातक हर समय परदेश में रहनेवाला, क्रोधी, चोर, घात करने वाला, दुष्ट और मनस्वी होता है।।३१।।

सुखेशे सप्तमे लग्ने बहुविद्यासमन्वितः।
पित्रार्जितधनत्यागी सभायां मूकवद्भवेत्।।३२।।

सुखेश सातवें भाव में हो तो जातक अनेक विद्याओं से युक्त, पिता के धन को त्यागने वाला, सभा में मूक होता है।।३२।।

सुखेशे व्ययरन्ध्रस्थे सुखहीनो भवेन्नरः।
पितृसौख्यं भवेदल्पं क्लीबो वा जारजोऽपि वा।।३३।।

सुखेश बारहवें या ८वें स्थान में हो तो जातक सुखहीन होता है और उसे पिता का अल्पसुख नपुंसक अथवा जार से उत्पन्न हुआ होता है।।३३।।

सुखेशे कर्मगेहस्थे राजमान्यो भवेन्नरः।
रसायनी महाहृष्टो भुनक्ति सुखमद्भुतम्।।३४।।

सुखेश कर्मभाव में हो तो जातक राजमान्य, रसायन क्रिया को जानने वाला, प्रसन्न और सुख को भोगने वाला होता है।।३४।।

अथ सुतेशभावफलम्—

सुतेशे लग्नसहजे मायावी पिशुनो महान्।
लोष्ठं दत्तवान्नैव काचिद्द्रव्यस्य का कथा।।३५।।

पंचमेश लग्न और तीसरे भाव में हो तो जातक मायावी और कृपण होता है।।३५।।

सुतेशे चायुधि धने बहुपुत्री न संशयः।
कासश्वाससुखी न स्यात्क्रोधयुक्तो धनान्वितः।।३६।।

पंचमेश ८वें वा २सरे भाव में हो तो जातक अनेक पुत्रों से युक्त, कास-श्वासरोगी, क्रोधी और धनी होता है।।३६।।

सुतेशे मातृभवने चिरं मातृसुखं भवेत्।
लक्ष्मीयुक्तः सुबुद्धिश्च सचिवोऽप्यथवा गुरुः।।३७।।

सुतेश ४ भाव में हो तो जातक को माता का सुख अधिक, लक्ष्मीयुक्त, बुद्धिमान्, मंत्री वा गुरु होता है। मुहूर्त्त को जानने वाला, टेढ़ा बोलने वाला, धनी और बुद्धिमान् होता है।।३७।।

सुतेशे पञ्चमे यस्य तस्य पुत्रो न जीवति।
क्षणिकः क्रूरभाषी च धनिको मतिमान्भवेत्।।३८।।

सुतेश ५वें भाव में हो तो जातक का पुत्र नहीं जीता है।।३८।।

सुतेशे षष्ठरिःफस्थे पुत्रः शत्रुत्वमाप्नुयात्।
मृतापत्यो दत्तपुत्रो धनपुत्रोऽथवा भवेत्।।३९।।

सुतेश छठे, बारहवें भाव में हो तो जातक को पुत्र से शत्रुता होती है और उसके पुत्र मर जाते हैं। उसे दत्तक पुत्र या क्रीत पुत्र होता है।।३९।।

सुतेशे कामगे मानी सर्वधर्मसमन्वितः।
तुंगबष्टिस्तनुस्वामी भक्तियुक्तैकचेतसा।।४०।।

सुतेश ७वें भाव में हो तो जातक मानी, सभी धर्मों से युक्त, ऊँचे नाक वाला और भक्ति युक्त होता है।।४०।।

सुतेशे नवमे कर्मे पुत्रो भूपसमो भवेत्।
अथवा ग्रन्थकर्ता च विख्यातः कुलदीपकः।।४१।।

सुतेश ९वें या १०वें भाव में हो तो जातक का पुत्र राजा के समान होता है अथवा प्रसिद्ध ग्रंथकर्त्ता होता है।।४१।।

सुतेशे लाभभवने पण्डितो जनवल्लभः।
ग्रन्थकर्त्ता महादक्षो बहुपुत्रधनान्वितः।।४२।।

सुतेश लाभभाव में हो तो जातक पंडित, जनप्रिय, ग्रंथकर्त्ता, दक्ष, अनेक पुत्र और धन से युक्त होता है।।४२।।

अथ षष्ठेशभावफलम्—

षष्ठेशे सप्तमे लाभे लग्ने वा कीर्त्तिमान् भवेत्।
धनवान् गुणवान् मानी साहसी पुत्रवर्जितः।।४३।।

षष्ठेश सातवें, ग्यारहवें या लग्न में हो तो जातक कीर्त्तिमान्, धनवान्, गुणी, मानी, साहसी और पुत्रहीन होता है।।४३।।

षष्ठेशे कर्मवित्तस्थे साहसी कुलविश्रुतः।
परदेशे सुखी वक्ता स्वकर्मे चैकनिष्ठिकः।।४४।।

षष्ठेश दशम वा दूसरे भाव में हो तो जातक साहसी, कुल में विख्यात, परदेशी, वक्ता और अपने कर्म में निष्णात होता है।।४४।।

षष्ठेशे सहजे तुर्ये क्रोधेनारक्तलोचनः।
मनस्वी पिशुनो द्वेषी चलचित्तोऽतिवित्तवान्।।४५।।

षष्ठेश तीसरे या चौथे भाव में हो जातक का नेत्र क्रोध से रक्तवर्ण का, मनस्वी, कृपण, द्वेष करने वाला, अस्थिरचित्त और अत्यंत धनी होता है।।४५।।

षष्ठेशे पञ्चमे यस्य चलमित्रधनादिकम्।
दयायुक्तः सुखी सौम्यः स्वकार्ये चतुरो महान्।।४६।।

पाँचवें भाव में हो तो जातक के मित्र तथा धन चंचल होते हैं। दयावान्, सुखी, सौम्यमूर्त्ति और अपने कार्य में अत्यंत चतुर होता है।।४६।।

षष्ठेशे रिपुभावस्थे स्वज्ञातिः शत्रुवद्भवेत्।
परजातिर्भवेन्मित्रं भूमौ न चलति ध्रुवम्।।४७।।

षष्ठेश छठे भाव में हो जातक के जातिवाले ही उसके शत्रु होते हैं, परजाति के लोग मित्र होते हैं और हमेशा सवारी से चलता है।।४७।।

षष्ठेशेऽष्टमरिःफस्थे रोगी शत्रुर्मनीषिणाम्।
परजायाभिगामी च जीवहिंसासु तत्परः।।४८।।

षष्ठेश ८वें या १२वें भाव में हो तो जातक रोगी और अच्छे लोगों का शत्रु, परस्त्रीगामी और हिंसक होता है।।४८।।

षष्ठेशो नवमे यस्य काष्ठपाषाणविक्रयी।
व्यवहारे क्वचिद्धानिः क्वचिद्वृद्धिर्भवेत्किल।।४९।।

षष्ठेश नवंम स्थान में हो तो जातक लकड़ी, पत्थर आदि बेचने वाला, व्यापार में कभी हानि और कभी वृद्धिवाला होता है।।४९।।

अथ सप्तमेशभावफलम्—

सप्तमेशे तनौ चास्ते परजायासु लम्पटः।
दुष्टो विचक्षणो धीरो वातरुक् स्थीयते हृदि।।५०।।

सप्तमेश लग्न या सप्तम में हो तो जातक परस्त्री में आसक्त, दुष्ट, पंडित, वातरोगी होता है।।५०।।

द्यूनेशे नवमे वित्ते नानास्त्रीभिः समागमः।
आरम्भी दीर्घसूत्री च स्त्रीषु चित्तं हि केवलम्।।५१।।

सप्तमेश नवम और दूसरे भाव में हो तो अनेक स्त्रियों में आसक्त, कार्य को आरंभ करने वाला, दीर्घसूत्री और केवल स्त्री में चित्त को लगाने वाला होता है।।५१।।

द्यूनेशे सहजे लाभे मृतपुत्रः प्रजायते।
कदाचिज्जीवति सुता यत्नात्पुत्रोऽपि जायते।।५२।।

सप्तमेश ३रे या ११वें भाव में हो तो जातक के संतान नहीं जीते हैं। कदाचित् कन्या जीती है, यत्न करने से पुत्र भी जीता है।।५२।।

द्यूनेशे दशमे तुर्ये नास्य जाया पतिव्रता।
धर्मात्मा सत्यसंयुक्तः केवलं दन्तरोगवान्।।५३।।

सप्तमेश दशम या चतुर्थ भाव में हो तो जातक की स्त्री पतिव्रता नहीं होती है। जातक सर्वगुणसम्पन्न, मानी और सर्व सम्पत्तिमान् होता है।।५३।।

सर्वगुणयुतो मानी भवेत्सर्वधनाधिपः।
सदैव हर्षसंयुक्तः सप्तमेशे सुते स्थिते।।५४।।

सप्तमेश पाँचवें भाव में हो तो जातक सभी गुणों से युक्त, मानी, सभी प्रकार के धनों से युक्त, सदैव प्रसन्न रहने वाला होता है।।५४।।

जायेशे चाष्टमे षष्ठे रोगिणी कामिनी लभेत्।
क्रोधयुक्तो भवेद्वापि न सुखं लभते क्वचित्।।५५।।

सप्तमेश ६ या ८ भाव में हो तो जातक की स्त्री रोगिणी होती है। जातक क्रोधी होता है और सुखी नहीं रहता है।।५५।।

द्वादशस्थे सप्तमेशे दरिद्रः कृपणो महान्।
चारुकन्या भवेद्भार्या वस्त्राज्जीवी च निर्धनी।।५६।।

सप्तमेश १२वें भाव में हो तो जातक दरिद्र, अत्यंत कृपण, स्त्री सुंदरी, और वस्त्र से जीविका करने वाला निर्धन होता है।।५६।।

अथाष्टमेशभावफलम्—

अष्टमेशे तनौ कामे भार्यायुग्मं समादिशेत्।
विष्णुद्रोहरतो नित्यं व्रणरोगी प्रजायते।।५७।।

अष्टमेश लग्न या सातवें भाव में हो तो जातक की दो स्त्रियाँ होती हैं। सदा विष्णु का द्रोह करने वाला और व्रणरोगी होता है।।५७।।

धनं तस्य भवेत्स्वल्पं गतं वित्तं न लभ्यते।
अष्टमेशे धने बाहुबलहीनः प्रजायते।।५८।।

अष्टमेश धनस्थान में हो तो जातक अल्प धन वाला, बाहुबल से हीन और नष्ट हुए द्रव्य को न पाने वाला होता है।।५८।।

अष्टमेशे तृतीये चेत् भ्रातृहीनो भवेन्नरः।
बन्धुद्वेषी सुहृद्द्वेषी व्यङ्गो दुर्बलदेहभाक्।।५९।।

अष्टमेश तीसरे भाव में हो तो जातक भ्रातृहीन, बंधुओं से द्वेष करने वाला, अंगहीन और दुर्बल शरीर का होता है।।५९।।

अष्टमेशे सुखे कर्मपिशुनो बन्धुवर्जितः।
मातापित्रोर्भवेन्मृत्युः स्वल्पकालेन भीतियुक्।।६०।।

अष्टमेश चौथे भाव में हो तो जातक कर्महीन, बंधुहीन और थोड़ी अवस्था में ही मातृ-पितृविहीन होता है।।६०।।

अष्टमेशे सुते लाभे तस्य वृद्धिर्न जायते।
द्रव्यं न स्थीयते गेहे स्थिरबुद्धिर्भवेज्जनः।।६१।।

अष्टमेश पाँचवें या ग्यारहवें भाव में हो तो जातक बुद्धिहीन, द्रव्यहीन और मूर्ख होता है।।६१।।

अष्टमेशे व्यये षष्ठे नित्यं रोगी प्रजायते।
जलसर्पादिकाद्घातो भवेत्तस्य च शैशवे।।६२।।

अष्टमेश छठे या बारहवें भाव में हो तो जातक सदा रोगी, शैशव अवस्था में जल या सर्प भय से पीड़ित होता है।।६२।।

द्यूती चौरोऽन्यथावादी गुरुनिन्दासु तत्परः।
अष्टमेशेऽष्टमस्थाने भार्या पररता भवेत्।।६३।।

अष्टमेश अष्टम भाव में हो तो जातक की स्त्री दूसरे में आसक्त होती है और वह जुआड़ी, चोर, असत्य बोलने वाला और गुरु की निंदा करने वाला होता है।।६३।।

अष्टमेशे तपः स्थाने महापापी च नास्तिकः।
सुतहा ह्यथवा वन्ध्या परभार्याधने रुचिः।।६४।।

अष्टमेश नवम भाव में हो तो जातक महापापी, नास्तिक, पुत्रनाशक, वा वंध्या और परस्त्री एवं परधनलोलुप होता है।।६४।।

अष्टमेशे स्थिते माने नीचकर्मप्रवृत्तिवान्।
प्रेष्यो च जारजो क्रूरो मातृहीनो भवेन्नरः।।६५।।

अष्टमेश दशमभाव में हो तो जातक नीच कर्म में रत, दासकर्म करने वाला, जार से उत्पन्न, क्रूर और मातृसुख से हीन होता है।।६५।।

अथ भाग्येशभावफलम्—

भाग्येशे च मदे कल्पे गुणवान्कीर्त्तिमान्भवेत्।
कदाचिन्न भवेत्सिद्धं यत्कार्यं कर्त्तुमिच्छति।।६६।।

भाग्येश लग्न या सप्तम भाव में हो तो जातक गुणी, कीर्त्तियुक्त होता है। उसे जिस कार्य की इच्छा होती है वह कभी सिद्ध नहीं होता है।।६६।।

भाग्येशे सहजे वित्ते सदा भाग्यानुचिन्तकः।
धनवान् गुणवान्कामी पण्डितो जनवल्लभः।।६७।।

भाग्येश तीसरे या दूसरे भाव में हो तो जातक सदा भाग्यवान्, धनी, गुणी, कामी, पंडित और जनवल्लभ होता है।।६७।।

भाग्येशे दशमे तुर्ये मन्त्री सेनापतिर्भवेत्।
पुण्यवान्सुयशो वाग्मी साहसी क्रोधवर्जितः।।६८।।

भाग्येश दशम या चतुर्थ भाव में हो तो जातक मंत्री वा सेनापति, पुण्यवान्, यशस्वी, बुद्धिमान्, साहसी और क्रोध रहित होता है।।६८।।

भाग्येशे पञ्चमे लाभे भाग्यवान् जनवल्लभः।
गुरुभक्तिरतो मानी धीरो धीरगुणैर्युतः।।६९।।

भाग्येश पाँचवें या लाभ भाव में हो तो जातक भाग्यवान्, जनता का प्रेमी, गुरु की भक्ति में आसक्त, मानी तथा धीर होता है।।६९।।

भाग्येशे त्रिकभावे चेत्भाग्यहीनो भवेन्नरः।
मातुलस्य सुखं न स्याज्येष्ठभ्रातृसुखं तथा।।७०।।

भाग्येश ६, ८, १२ भावों में हो तो जातक भाग्यहीन, माता के और ज्येष्ठ भाई के सुख से हीन होता है।।७०।।

अथ कर्मेशभावफलम्—

कर्मेशाधिपतौ लग्ने कवितागुणसंयुतः।
बाल्ये रोगी सुखी पश्चाद्दर्थवृद्धिर्दिने दिने।।७१।।

कर्मेश लग्न में हो तो जातक कविता करने वाला, बाल्यकाल में रोगी, पीछे सुखी और प्रतिदिन धन में वृद्धि वाला होता है।।७१।।

धने मंदे च सहजे कर्मेशो यदि संस्थितः।
मनस्वी गुणवान् वाग्मी सत्यधर्मसमन्वितः।।७२।।

कर्मेश २, ३, ७ भावों में हो तो जातक मनस्वी, गुणी, बुद्धिमान् और सत्य बोलने वाला होता है।।७२।।

दशःपेशे सुखे कर्मे ज्ञानवान्सुखविक्रमी।
गुरुदेवार्चनरतो धर्मात्मा सत्यसंयुतः।।७३।।

कर्मेश चौथे वा दशम भाव में हो तो जातक ज्ञानी, सुखी, विक्रमी, गुरु-देवता के पूजन में रत, धर्मात्मा और सत्यवादी होता है।।७३।।

दशमेशे सुते लाभे धनवान् पुत्रवान् भवेत्।
सर्वदा हर्षसंयुक्तः सत्यवादी सुखी नरः।।७४।।

कर्मेश पाँचवें या एकादश भाव में हो तो जातक धनी, पुत्रवान्, सर्वदा प्रसन्नचित्त, सत्यवादी और सुखी होता है।।७४।।

कर्मेशोऽरिव्यये यस्य शत्रुभिः परिपीडितः।
चातुर्यगुणसम्पन्नः क्वचिच्च न सुखी नरः।।७५।।

कर्मेश छठे या बारहवें भाव में हो तो जातक शत्रुओं से पीडित, चतुर और कभी सुखी न रहने वाला होता है।।७५।।

कर्मेशो रन्ध्रगे जातो क्रूरो चौरोऽथवा धूर्त्तः।
अल्पायुरसद्वक्ता मातृसन्तापकारकः।।७६।।

कर्मेश आठवें भाव में हो तो जातक क्रूर, चोर अथवा धूर्त्त और झूठ बोलने वाला और माता को संताप देने वाला होता है।।७६।।

कर्मेशो नवमे यस्य स भवेत्कुलपालकः।
सद्बन्धुमित्रसंयुक्तः मातृभक्तोऽथ पूजकः।।७७।।

कर्मेश नवम भाव में हो तो जातक कुलपालक श्रेष्ठ, बन्धु-मित्र से युक्त और मातृभक्त होता है।।७७।।

अथ लाभेशभावफलम्—

लाभेशे संस्थिते लग्ने धनवान्सात्त्विको महान्।
समदृष्टिर्महान्वक्ता कौतुकी च भवेत्सदा।।७८।।

लाभेश लग्न में हो तो जातक धनी, सात्त्विक, समदृष्टि, वक्ता और कौतुकी होता है।।७८।।

लाभेशे च धने पुत्रे नानासुखसमन्वितः।
पुत्रवान्धार्मिकश्चैव सर्वसिद्धियुतः पुमान्।।७९।।

लाभेश दूसरे या पाँचवें भाव में हो तो जातक अनेक सुखों से युक्त, पुत्रवान्, धार्मिक और सभी पदार्थों से युक्त होता है।।७९।।

लाभेशे सहजे तुर्ये तीर्थेषु तत्परो महान्।
कुशलः सर्वकार्येषु केवलं शूलरोगवान्।।८०।।

लाभेश तीसरे या चोथे भाव में हो तो जातक तीर्थयात्रा में तत्पर, सभी कार्यों में कुशल और शूलरोग से युक्त होता है।।८०।।

लाभेशे षष्ठभवने नानारोगसमन्वितः।
सर्वं सुखं भवेत्तस्य प्रवासी परसेवकः।।८१।।

लाभेश छठे भाव में हो तो जातक अनेक रोगों से युक्त, प्रवासी और दूसरे का नौकर होता है।।८१।।

लाभेशे सप्तमे रन्ध्रे भार्या तस्य न जीवति।
उदारो गुणवान्कर्मी मूर्खो भवति निश्चितम्।।८२।।

लाभेश सातवें या आठवें भाव में हो तो जातक की स्त्री नहीं होती है। वह गुणी, उदार और मूर्ख होता है।।८२।।

लाभेशे गगने धर्मे राजपूज्यो धनाधिपः।
चतुरः सत्यवादी च निजधर्मसमन्वितः।।८३।।

लाभेश दशम या नवम भाव में हो तो जातक राजा से पूज्य, धनी, चतुर, सत्यवक्ता और अपने धर्म से युत होता है।।८३।।

लाभेशे संस्थिते लाभे स वाग्मी भवति ध्रुवम्।
पाण्डित्यं कविता चैव वर्धते च दिने दिने।।८४।।

लाभेश लाभ भाव में हो तो जातक बुद्धिमान्, पंडित और कवि होता है।।८४।।

प्राप्तिस्थानाधिपे रिःफे म्लेच्छसंसर्गकारकः।
कामुको बहुकान्तश्च क्षणिको लम्पटः सदा।।८५।।

लाभेश बारहवें भाव में हो तो जातक नीचों से संसर्ग करने वाला, कामी, अनेक स्त्रियों वाला और लम्पट होता है।।८५।।

अथ व्ययेशभावफलम्—

व्ययेशे मदने लग्ने जायासौख्यं भवेन्न हि।
दुर्बलः कफरोगी च धनविद्याविवर्जितः।।८६।।

व्ययेश सातवें या लग्न में हो तो जातक को स्त्री का सुख नहीं होता है। जातक दुर्बल, कफरोगी और धन-विद्या से हीन होता है।।८६।।

व्ययेशे च धने रन्ध्रे विष्णुभक्तिसमन्वितः।
धार्मिकः प्रियवादी च सम्पूर्णगुणसंयुतः।।८७।।

व्ययेश दूसरे या आठवें भाव में हो तो जातक विष्णुभक्त, धार्मिक, प्रियभाषी, गुणी होता है।।८७।।

भार्याद्वेषी प्रियद्वेषी गुरुद्वेषी भवेन्नरः।
व्ययेशे सहजे धर्मे स्वशरीरस्य पोषकः।।८८।।

व्ययेश तीसरे या नवम भाव में हो तो जातक अपने शरीर का पोषक, स्त्रीद्वेषी, मित्रद्रोही और गुरुद्रोही होता है।।८८।।

पुत्रहीनो महादुःखी तीर्थाटनपरो भवेत्।
कृपणो रोगयुक्तश्च व्ययेशे च सुते सुखे।।८९।।

व्ययेश पाँचवें या चौथे भाव में हो तो जातक पुत्र रहित, महादुःखी, तीर्थाटन करने वाला, कृपण और रोगी होता है।।८९।।

व्ययेशेऽरिव्यये पापी मातृमृत्युविचिन्तकः।
क्रोधी सन्तानदुःखी च परजायासु लम्पटः।।९०।।

व्ययेश छठें या बारहवें भाव में हो तो जातक पापी, माता के मृत्यु का कारण, क्रोधी, संतान से कष्ट और परस्त्रीगामी होता है।।९०।।

व्ययेशे दशमे लाभे पुत्रसौख्यं भवेन्न हि।
मणिमाणिक्यमुक्तादि धत्ते किञ्चित्समालभेत्।।९१।।

व्ययेश दशम या एकादश भाव में हो तो जातक पुत्रसुख से हीन, मणि-माणिक्य आदि के होते हुए भी सुखहीन होता है।।९१।।

एतत्ते कथितं विप्र भावेशानां तु यत् फलम्।
बलाबलविवेकेन सर्वेषां फलमादिशेत्।।९२।।

जो भावेशों के फल कहे गये हैं वे ग्रहों के बल-अबल के अनुसार ही होते हैं।।९२।।

ग्रहे पूर्णबले प्राप्ते फलं पूर्णं समादिशेत्।
अर्धमर्धबले प्राप्ते हीने पादं समादिशेत्।।९३।।

भावानां द्वादशानां च सर्वेषां फलमादिशेत्।
उक्तं भावस्थितानां च भावेशानां फलं मया।।९४।।

ग्रह पूर्णबली हो तो पूर्णबल, मध्यबली हो तो आधाबल और हीनबली हो तो चतुर्थांश फल देता है।।९४।।

इति पाराशरहोरायां पूर्वखण्डे सुबोधिन्यां भावेशफलाध्यायः त्रयोदशः।।१३।।

अथ नाभसादियोगाध्यायः

अधुना नाभसा योगाः कथयामि सविस्तरः।
अष्टादशशतगुणितास्तेषां भेदाः समासतः।।१।।

अब मैं नाभस योगों को विस्तारपूर्वक कह रहा हूँ, जिनके भेद १८०० होते हैं।।१।।

आश्रयाख्यास्त्रयो योगा दशयोगद्वयं ततः।
आकृतिर्विंशतिः संख्या योगानां सप्तकं स्मृतम्।।२।।

जिसमें आश्रय योग ३, दल योग २, आकृति योग २० और संख्या योग ७ मुख्य हैं।।२।।

तेषां नामानि—

रज्जुयोगो मूसलश्च नलो मालाभुजङ्गमौ।
गदायोगश्च शकटः शृङ्गाटकविहङ्गमौ।।३।।

हलवज्रयवाश्चैव कमलो वापि यूपकौ।
शरशक्तिदण्डनौकाकूटछत्रधनूंषि च।।४।।
अर्धेन्दुयोगश्चक्राख्यः समुद्रश्चेति विंशतिः।
वीणादामनिकायोगः पाशकेदारशूलकाः।।५।।
युगगोलौ ततः प्रोक्तौ योगा द्वात्रिंशका इमे।
तेषां च लक्षणं वक्ष्ये यथाबुद्धिविवेकतः।।६।।

रज्जु, मुशल, नल ये आश्रययोग हैं और मालासर्प ये दलयोग हैं। गदा, शकट, शृंगाटक, पक्षी, हल, वज्र, यव, कमल, वापी, यूप, शरशक्ति, दंड, नौका, कूट, छत्र, धनुष, अर्धचक्र, चक्र, समुद्र–ये २० आकृतियोग हैं। वीणा, दाम, पारा, केदार, शूल, युग, गोल ये ७ संख्या योग हैं। ये सभी मिलकर ३२ नाभस योग कहे जाते हैं। अब इनके लक्षण कह रहा हूँ।।३-६।।

अथाऽऽश्रययोगलक्षणम्–

सर्वे चरस्था अपि वा स्थिरस्था द्विदेहसंस्था यदि वा भवन्ति।
क्रमेण रज्जुर्मुशलं नलश्च योगत्रयं स्यादिदमाश्रयाख्यम्।।७।।

यदि सभी ग्रह चर राशि में हों तो रज्जुयोग, सभी स्थिर राशि में हों तो मुशल योग और सभी ग्रह द्विस्वभाव राशि में हों तो नलयोग होता है। ये तीन आश्रय योग हैं।।७।।

अथ दलयोगद्वयमाह–

केन्द्रत्रये सौम्यखगैस्तु माला खलग्रहैर्व्यालसमाह्वयः स्यात्।
इदं तु योगद्वितयं दलाख्यं मुनीश्वरेण प्रतिपादितं हि।।८।।

यदि किसी भी तीन केंद्रों में शुभग्रह हों तो माला योग होता है। यदि पापग्रह हों तो व्याल योग होता है। ये दोनों दल योग हैं।।८।।

अथ विंशत्याकृतियोगमाह–

आसन्नकेन्द्रद्वयगैर्गदाख्यो लग्नास्तसंस्थैः शकटः समस्तैः।
खबन्धुयातैर्विहगः प्रदिष्टः शृङ्गाटकं लग्ननवात्मजस्थैः।।९।।

यदि सभी ग्रह समीप के दो केंद्रों में हों तो 'गदा' योग होता है। सभी ग्रह केवल लग्न और सप्तम में हों तो शकट योग होता है। यदि सभी ग्रह दशम और चतुर्थ में हों तो 'विहग' योग होता है। सभी ग्रह लग्न नवम और पाँचवें भाव में हों तो 'शृंगाटक' योग होता है।।९।।

धनादिखस्थैस्त्रिमदायगैर्वा चतुर्थरन्ध्रव्ययसंस्थितैर्वा।
नभस्तलस्थैर्हलनाम योगः किलोदितोऽयं निखिलागमज्ञैः।।१०।।

सभी ग्रह २, ६, १०, ३, ७, ११, ४, ८, १२ हों तो 'हल' नाम का योग होता है।।१०।।

लग्नस्मरस्थानगतैः शुभाख्यैः पापैश्च मेषूरणबन्धुयातैः।
वज्राभिधस्तैर्विपरीतसंस्थैर्यवश्च मिश्रैः कमलाभिधानः।।११।।

शुभग्रह लग्न और सप्तम भाव में हों और पापग्रह दशम और चतुर्थ भाव में हों तो 'वज्र' योग होता है। इसके विपरीत यानि १, ७ भाव में पापग्रह और ४, १० भाव में शुभग्रह हों तो 'यव' योग होता है। यदि सभी केंद्रों में मिश्रित शुभ-पाप ग्रह बैठे हों तो 'कमल' योग होता है।।११।।

त्यक्त्वा केन्द्राणि चेत्खेटाः शेषस्थानेषु संस्थिताः।
वापीयोगो भवेदेवं गदितः पूर्वसूरिभिः ।।१२।।

यदि केंद्र से भिन्न स्थान (पणफर) में सभी ग्रह हों तो (वापी) योग होता है।।१२।।

लग्नाच्चतुर्थात्स्मरतः खमध्याच्चतुर्गृहस्थैर्गगनेचरेन्द्रैः।
क्रमेण यूपश्च शरश्च शक्तिर्दण्डः प्रदिष्टः खलु जातकज्ञैः।।१३।।

सभी ग्रह लग्न से चौथे भाव के अंदर ही हों तो 'यूप' योग होता है। सभी ग्रह लग्न से चौथे से सप्तम के अन्दर हों तो 'शर' योग होता है। सभी ग्रह सप्तम से दशम के अंदर हों तो 'शक्ति' योग होता है। सभी ग्रह दशम से लग्न के अंदर हों तो 'दंड' योग होता है।।१३।।

लग्नाच्चतुर्थात्स्मरतः खमध्यात्सप्तर्क्षगैर्नौरथकूटसंज्ञः।
छत्रं धनुश्चान्यगृहप्रवृत्तैर्नौपूर्वकैर्योग इहार्धचन्द्रः।।१४।।
तनोर्धनाद्यैकगृहान्तरेण स्युः स्थानषट्के गगनेचरेन्द्राः।
चक्राभिधानश्च समुद्रनामा योगा इतीहाकृतिजाश्च विंशत्।।१५।।

सभी ग्रह लग्न से सातवें भाव के अंदर हों तो 'नौका' योग होता है। सभी ग्रह चतुर्थ से दशम भाव के अंदर सात घरों में हो तो 'कूट' योग होता है। सभी ग्रह सप्तम से लग्न पर्यंत सात भावों में हो तो 'छल' योग होता है। सभी ग्रह दशम से चतुर्थ भाव के अंदर सात भावों में हों तो 'चाप' योग होता है। इससे अतिरिक्त भावों में ग्रह हों तो 'अर्धचंद्र' योग होता है।।१४-१५।।

ये योगाः कथिताः पुरा बहुतरास्तेषामभावे भवेद्
गोलश्चैकगतैर्युगं द्विगृहगैः शूलस्त्रिगेहोपगैः।
केदारश्च चतुर्गृहगतैर्ग्रहैः पाशस्तु पञ्चस्थितैः
षट्स्थैर्दामनिका च सप्तगृहगैर्वीणेति संख्या इमे।।१६।।

पूर्वोक्त योगों के अभाव में निम्नलिखित योग होते हैं। यदि सभी ग्रह एक ही राशि में हों तो 'गोल' योग, दो भावों में हों तो 'युग', तीन गृहों में हों तो 'शूल' योग, चार भावों में हों तो 'केदार' योग, पाँच राशियों में सभी ग्रह हों तो 'पाश' योग, ६ राशियों में हों तो 'दामिनी' योग और सभी ग्रह ७ राशियों में हों तो 'वीणा' नामक योग होता है।।१६।।

रज्जुयोगफलम्—

अटनप्रियाः सुरूपाः परदेशस्वास्थ्यभागिनो मनुजाः।
क्रूरा खलस्वभावा रज्जुप्रभवाः सदा कथिताः।।१७।।

रज्जु योग में उत्पन्न पुरुष भ्रमणशील, स्वरूपवान्, परदेश में स्वस्थ रहनेवाला, क्रूर और खल स्वभाव का होता है।।१७।।

मुसलयोगफलम्—

मानज्ञानधनैश्वर्यैर्युक्ता नृपप्रियाः ख्याताः।
बहुपुत्राः स्थिरचित्ता मुसलसमुत्था भवन्ति नराः।।१८।।

मुसल योग में उत्पन्न पुरुष मान, ज्ञान, धन, ऐश्वर्य से युक्त, राजा का प्रिय, प्रसिद्ध, अनेक पुत्रों वाला और स्थिरचित्त होता है।।१८।।

नलयोगफलम्—

न्यूनातिरिक्तदेहा धनसञ्चयभागिनोऽतिनिपुणाश्च।
बन्धुहिताश्च सुरूपा नलयोगे सम्प्रसूयन्ते।।१९।।

नलयोग में उत्पन्न पुरुष हीन और अधिक अंगों वाला, धनसंचय करने वाला, अत्यंत चतुर, बंधुओं का हितैषी और सुरूप होता है।।१९।।

मालायोगफलम्—

नित्यं सुखप्रधाना वाहनवस्त्रान्नभोगसम्पन्नाः।
कान्ताः सुबहुस्त्रीका मालायां सम्प्रसूताः स्युः।।२०।।

माला योग में उत्पन्न पुरुष नित्य सुखी, वाहन, वस्त्र-अन्नभोग से संपन्न, सुंदर शरीर, अनेक स्त्रियों से युक्त होता है।।२०।।

सर्पयोगफलम्—

विषमाः क्रूरा निःस्वा नित्यं दुःखार्दिताः सुदीनाश्च।
परभक्षपानविरताः सर्पप्रभवा भवन्ति नराः।।२१।।

सर्प योग में उत्पन्न पुरुष कुटिल, क्रूर, निर्धन, नित्य दुःखी, दीन और दूसरे भक्ष्य भोज्य से विरत रहने वाला होता है।।२१।।

गदायोगफलम्—

सततोद्युक्तार्थवशा यज्वानः शास्त्रगेयकुशलाश्च।
धनकनकरत्नसम्पत्संयुक्ता मानवा गदायां तु।।२२।।

गदा योग में उत्पन्न गुरुष निरंतर धन के लिए उद्योगी, यज्ञ करने वाले, शास्त्र और संगीत में कुशल, धन, सुवर्ण, रत्न से युक्त होते हैं।।२२।।

शकटयोगफलम्—

रोगार्ताः कुनखा मूर्खाः शकटानुजीविनो निःस्वाः।
मित्रस्वजनविहीनाः शकटे जाता भवन्ति नराः।।२३।।

शकट योग में उत्पन्न पुरुष रोगी, कुनखी, मूर्ख, गाड़ी से जीविका चलाने वाले और मित्र तथा स्वजनों से हीन होते हैं।।२३।।

विहगयोगफलम्—

भ्रमणरुचयो विकृष्टा दूताः सुरतानुजीविनो धृष्टाः।
कलहप्रियाश्च नित्यं विहगे योगे सदा जाताः।।२४।।

विहग 'पक्षी' योग में उत्पन्न पुरुष भ्रमणशील, परतंत्र, दूत, सुरत से जीविका वाले, ढीठ और झगड़ालू होते हैं।।२४।।

शृङ्गाटकयोगफलम्—

प्रियकलहाः समरसहाः सुखिनो नृपतेः प्रियाः शुभकलत्राः।
आढ्या युवतिद्वेष्याः शृङ्गाटकसम्भवा मनुजाः।।२५।।

शृंगाटक योग में उत्पन्न पुरुष कलहप्रिय, झगड़ालू, सुखी, राजा के प्रिय, सुंदर स्त्रियों से युक्त और स्त्री के द्वेषी होते हैं।।२५।।

हलयोगफलम्—

बह्वाशिनो दरिद्राः कृषीवला दुःखिताश्च सोद्वेगाः।
बन्धुसुहृद्भिः सक्ताः प्रेष्या हलसंज्ञके सदा पुरुषाः।।२६।।

हल योग में उत्पन्न पुरुष बहुभोजी, दरिद्र, कृषि करने वाले, दुःखी, उद्वेग से युक्त, बंधु तथा मित्रों में आसक्त और दास होते हैं।।२६।।

वज्रयोगफलम्—

आद्यन्तवयः सुखिनः शूराः सुभगा निरीहाश्च।
भाग्यविहीना वज्रे जाता खला विरुद्धाश्च।।२७।।

वज्र योग में उत्पन्न पुरुष आदि और अंत अर्थात् बाल्य और वृद्ध अवस्था में सुखी, शूर, सुंदर, निर्दय और भाग्यहीन होते हैं।।२७।।

यवयोगफलम्—

व्रतनियममङ्गलपरा वयसो मध्ये सुखार्थपुत्रयुताः।
दातारः स्थिरचित्ता यवयोगभवाः सदा पुरुषाः।।२८।।

यव योग में उत्पन्न पुरुष व्रत, नियम, मंगल को करने वाले, आयुष्य के मध्य में सुख, धन, पुत्र से युक्त, दाता और स्थिरचित्त होते हैं।।२८।।

कमलयोगफलम्—

विभवगुणाढ्याः पुरुषाः स्थिरायुषो विपुलकीर्त्तयः शुद्धाः।
शुभशतकाः पृथ्वीशाः कमलभवा मानवा नित्यम्।।२९।।

कमल योग में उत्पन्न पुरुष धन-ऐश्वर्य एवं गुणों से युक्त, दीर्घायु, अत्यंत कीर्तिमान्, सैकड़ों शुभ कार्य करने वाले राजा होते हैं।।२९।।

वापीयोगफलम्—

निधिकरणे निपुणधियः स्थिरार्थसुखसंयुताः सुतयुताश्च।
नयनसुखसम्प्रहृष्टा वापीयोगेन राजानः।।३०।।

वापी योग में उत्पन्न पुरुष धनसंग्रह में चतुर, स्थिर धन और संपत्ति से युक्त, पुत्रवान्, नेत्र को सुख देने वाले पदार्थों से युक्त राजा होते हैं।।३०।।

यूपयोगफलम्—

आत्मविदिज्यानिरतः स्त्रिया युतः सत्त्वसम्पन्नः।
व्रतयमनियमे निरतो यूपे जातो विशिष्टश्च।।३१।।

यूपयोग मे उत्पन्न पुरुष ज्ञानी, यज्ञकर्ता, स्त्री से युत, सत्त्वयुक्त, व्रत-नियम में संपृक्त और विशिष्ट व्यक्ति होता है।।३१।।

शरयोगफलम्—

इषुकरणे च समर्था मृगयाधनसेविताश्च मांसादाः।
हिंस्राः कुशिल्पकराः शरयोगे मानवाः प्रसूयन्ते।।३२।।

शरयोग में उत्पन्न पुरुष बाण बनाने वाले, आखेट के धन से सुखी, मांस खाने वाले, हिंसक, कुत्सित शिल्प करने वाले हाते हैं।।३२।।

शक्तियोगफलम्—

धनरहितविफलदुःखितनीचालसाश्चिरायुषः पुरुषाः।
संग्रामबुद्धिनिपुणाः शक्त्यां जाताः स्थिराः सुभगाः।।३३।।

शक्ति योग में उत्पन्न पुरुष दरिद्र, निष्फल, दुःखी, नीच, आलसी, दीर्घजीवी, झगड़ालू बुद्धि और निपुण होते हैं।।३३।।

दण्डयोगफलम्—

हतदारपुत्रनिःस्वाः सर्वत्र च निर्घृणाः स्वजनबाह्याः।
दुःखितनीचप्रेष्या दण्डप्रभवा भवन्ति नराः।।३४।।

दंड योग में उत्पन्न पुरुष स्त्री-पुत्र से हीन, निर्धन, निर्लज्ज, अपने स्वजनों से त्यक्त, दुःखी और नीचों के दास होते हैं।।३४।।

नौकायोगफलम्—

सलिलोपजीविविभवा बह्वाशाः ख्यातकीर्त्तयो दुष्टाः।
कृपणा मलिना लुब्धा नौसञ्जाताः खलाः पुरुषाः।।३५।।

नौका योग में उत्पन्न पुरुष जल से उत्पन्न पदार्थों से जीविका वाले, बहुत भोजन करने वाले, प्रसिद्ध कीर्त्ति वाले, दुष्ट, कृपण, मलिन और लोभी होते हैं।।३५।।

कूटयोगफलम्—

अनृतकथनवधपापा निष्किञ्चनाः शठाः क्रूराः।
कूटसमुत्था नित्यं भवन्ति गिरिदुर्गवासिनो मनुजाः।।३६।।

कूट योग में उत्पन्न पुरुष झूठ बोलने वाले, पापी, वधिक, धूर्त, क्रूर, नित्य झूठे व्यापार वाले, पहाड़ और जंगलों में रहने वाले होते हैं।।३६।।

छत्रयोगफलम्—

स्वजनाश्रयो दयावान्नानानृपवल्लभः प्रकृष्टमतिः।
प्रथमेऽन्त्ये वयसि नरः सुखवान्दीर्घायुरातपत्री स्यात्।।३७।।

छत्रयोग में उत्पन्न पुरुष अपने जनों को आश्रय देने वाला, दयावान्, अनेक राजाओं का प्रिय, उत्तमबुद्धि से युक्त, प्रथम और अंतिम अवस्था में सुखी, दीर्घायु होता है।।३७।।

चापयोगफलम्—

आनृतिकगुप्तपालाश्चौराः कितवाश्च कानने निरताः।
कार्मुकयोगे जाता भाग्यविहीनाः शुभा वयोमध्ये।।३८।।

चापयोग में उत्पन्न पुरुष झूठ बोलने वाले, जेलखाने के मालिक, चोर, धूर्त्त, जंगल के प्रेमी, भाग्यहीन और अवस्था के मध्य में सुखी होते हैं।।३८।।

अर्धचन्द्रयोगफलम्—

सेनापतयः सर्वे कान्तशरीरा नृपप्रिया बलिनः।
मणिकनकभूषणयुता भवन्ति योगे वार्धचन्द्राख्ये।।३९।।

अर्धचन्द्रयोग में उत्पन्न होने वाले सभी पुरुष सुंदर शरीर के, सेनापति, राजा के प्रिय, बली, मणि, सुवर्ण और आभूषणों से युक्त होते हैं।।३९।।

चक्रयोगफलम्—

प्रणताशेषनराधिपकिरीटरत्नप्रभास्फुरितपादः।
भवति नरेन्द्रो मनुजश्चक्रे यो जायते योगे।।४०।।

चक्र योग में उत्पन्न पुरुष अनेक राजाओं के रत्नजटित मुकुटों से नमस्कार किये जाने वाला राजा होता है।।४०।।

समुद्रयोगफलम्—

बहुरत्नधनसमृद्धा भोगयुता धनजनप्रियाः ससुताः।
उदधिसमुत्थाः पुरुषाः स्थिरविभवाः साधुशीलाश्च।।४१।।

समुद्रयोग में उत्पन्न पुरुष अनेक रत्न एवं धन से समृद्ध, भोगयुक्त, जनप्रिय, पुत्रवान्, स्थिर धनवाले और सज्जन होते हैं।।४१।।

वीणायोगफलम्—

प्रियगीतनृत्यवाद्यनिपुणाः सुखिनश्च धनवन्तः।
नेतारो बहुभृत्या वीणायां कीर्त्तिताः पुरुषाः।।४२।।

वीणा योग में उत्पन्न पुरुष गीत, नाच और बाजा के प्रेमी, निपुण, सुखी, धनी, नेता, अनेक नौकरों वाले होते हैं।।४२।।

दामिनीयोगफलम्—

दामिन्यामुपकारी नयधनयुक्तो महेश्वरः ख्यातः।
बहुसुतरत्नसमृद्धो धीरो जायेत विद्वांश्च।।४३।।

दामिनी योग में उत्पन्न पुरुष नीति और धन से युक्त, प्रभु, प्रसिद्ध, अनेक पुत्र, रत्न से समृद्ध और धीर तथा पंडित होता है।।४३।।

पाशयोगफलम्—

पाशे बन्धनभाजः कार्ये दक्षाः प्रपञ्चकाराश्च।
बहुभाषिणो विशीला बहुभृत्याः सम्प्रतानाश्च।।४४।।

पाश योग में उत्पन्न पुरुष बंधन को भोगने वाले, कार्य में चतुर, प्रपंची, बहुत बोलने वाले, दुःशील और अनेक नौकरों से युक्त तथा परिवार वाले होते हैं।।४४।।

केदारयोगफलम्—

सुबहूनामुपयोज्याः कृषीवलाः सत्यवादिनः सुखिनः।
केदारे सम्भूताश्चलस्वभावा धनैर्युक्ताः।।४५।।

केदार योग में उत्पन्न पुरुष बहुतों के उपकारी, कृषिकर्त्ता, सत्यवादी, सुखी, चंचल और धनी होते हैं।।४५।।

शूलयोगफलम्—

तीक्ष्णालसधनहीना हिंस्राः सुबहिष्कृता महाशूराः।
संग्रामे लब्धयशस्काः शूले योगे भवन्ति नराः।।४६।।

शूल योग में उत्पन्न पुरुष बड़े आलसी, निर्धन, हिंसक, जातिबहिष्कृत, शूरवीर, संग्राम में लब्धकीर्त्ति वाले होते हैं।।४६।।

युगयोगफलम्—

पाखण्डवादिनो वा धनरहिता वा बहिष्कृता लोके।
सुतमातृधर्मरहिता युगयोगे ये नरा जाताः।।४७।।

युग योग में उत्पन्न पुरुष पाखंडी, निर्धन, लोक में बहिष्कृत, पुत्र-माता के धर्म से हीन होते हैं।।४७।।

गोलयोगफलम्—

बलसंयुक्ता विधना विद्याविज्ञानवर्जिता मलिनाः।
नित्यं दुःखितदीना गोले योगे भवन्ति नराः।।४८।।

गोलयोग में उत्पन्न पुरुष बलवान्, निर्धन, विद्या से हीन, मलिन, हमेशा दुःखी और दीन होते हैं।।४८।।

सर्वास्वपि दशास्वेते भवेयुः फलदायिनः।
प्रा[illegible]मिति विज्ञेयाः प्रवदन्ति तवाग्रजाः।।४९।।

इन योगों का फल सभी ग्रहों की दशा में होता है, यह पूवजों का निर्णय है।।४९।।

इति बृहत्पाराशरहोरायां पूर्वखण्डे नाभसयोगाध्यायः चतुर्दशः।।१४।।

अथानेकयोगाध्यायः

अथ गजकेसरीयोगस्तत्फलं चाह—

केन्द्रस्थिते देवगुरौ शशाङ्काद्योगस्तदाहुर्गजकेसरीति।
दृष्टे सितार्येन्दुसुतैः शशाङ्के नीचास्तहीनैर्गजकेसरीति।।१।।

चन्द्रमा से केन्द्र में गुरु हो तो गजकेसरी योग होता है और चन्द्रमा नीच-अस्तादि में न गये हुए शुक्र, गुरु और बुध से देखा जाता हो तो गजकेसरी योग होता है।।१।।

गजकेसरिसञ्जातस्तेजस्वी धनवान् भवेत्।
मेधावी गुणसम्पन्नो राजप्रियकरो भवेत्।।२।।

इस योग में उत्पन्न पुरुष धनी, मेधावी, गुणी एवं राजा का प्रिय करने वाला होता है।।२।।

अथामलायोगस्तत्फलं चाह—

लग्नाद्वा चन्द्रलग्नाद्वा दशमे शुभसंयुते।
योगोऽयममला नाम कीर्त्तिराचन्द्रतारकी।।३।।
राजपूज्यो महाभोगी दाता बन्धुजनप्रियः।
परोपकारी गुणवानमलायोगसम्भवः।।४।।

जन्मलग्न से वा चन्द्रमा से दशम स्थान में केवल शुभग्रह हों तो अमला योग होता है। अमला योग में उत्पन्न पुरुष की कीर्त्ति जब तक चन्द्रमा आकाश में रहेगा तब तक रहती है और वह राजा से पूज्य, महाभोगी, दाता और बंधुओं का प्रिय होता है ।।३-४।।

अथ शुभाशुभयोगस्तत्फलं चाह—

शुभाशुभाढये यदि जन्मलग्ने शुभाशुभाख्यौ भवतस्तदानीम्।
व्ययस्वगैः पापशुभैर्विलग्नात्पापाख्यसौम्यग्रहकर्त्तरी च।।५।।
शुभयोगभवो वाग्मी रूपशीलगुणान्वितः।
पापयोगोद्भवः कामी पापकर्मपरार्थयुक्।।६।।

यदि लग्न में शुभग्रह युत हों तो शुभयोग और पापग्रह युत हों तो अशुभ योग होता है। १२।२ भाव में पापग्रह हों तो पापकर्त्तरी और शुभग्रह हों

तो शुभकर्त्तरी होती है। शुभ योग वा शुभ कर्त्तरी हो तो जातक बुद्धिमान्, रूप, शील, गुण से युक्त होता है। पापग्रह से उत्पन्न योग हो तो जातक कामी, पापकर्म करने वाला होता है।।५-६।।

अथ पर्वतयोगस्तत्फलं चाह—

सौम्येषु केन्द्रगृहगेषु सपत्नरंध्रे शुद्धेऽथवा शुभयुते यदि पर्वतः स्यात्।
लग्नान्त्यपौ यदि परस्परकेन्द्रयातौ मित्रेक्षितौ भवति पर्वतनामयोगः।।७।।
भाग्यान्वितः पर्वतयोगजातो विद्याविनोदाभिरतः प्रदाता।
कामो परस्त्रीजनकेलिलोलस्तेजो यशस्वी पुरनायकः स्यात्।।८।।

यदि सातवें, आठवें भाव में कोई ग्रह न हो अथवा शुभग्रह से युत हो और केन्द्रों में शुभग्रह हों तो पर्वत योग होता है। लग्नेश और व्ययेश केन्द्र में हों और मित्रग्रह से देखे जाते हों तो पर्वत योग में उत्पन्न पुरुष भाग्यवान्, विद्वान् और दाता होता है।।७-८।।

अथ काहलयोगस्तत्फलं चाह—

अन्यो न्यकेन्द्रगृहगौ गुरुबन्धुनाथौ
लग्नाधिपे बलयुते यदि काहलः स्यात्।
कर्मेश्वरेण सहिते तु विलोकिते वा
स्वोच्चे स्वके सुखपतौ यदि काहलः स्यात्।।९।।
ओजस्वी साहसी मूर्खश्चतुरङ्गबलैर्युतः।
यत्किञ्चिद् ग्रामनाथस्तु काहले जायते नरः।।१०।।

गुरु और चतुर्थेश परस्पर केन्द्र में हों और लग्नेश बली हो तो काहल योग होता है। यदि सुखेश अपने उच्च या अपनी राशि का होकर कर्मेश से युत हो तो काहल योग होता है। इस योग में उत्पन्न पुरुष तेजस्वी, साहसी, मूर्ख, सेवा के बल से युक्त, कुछ ग्रामों का स्वामी होता है।।९-१०।।

अथ चामरयोगस्तत्फलं चाह—

लग्नेश्वरे केन्द्रगते स्वतुंगे जीवेक्षिते चामरनामयोगः।
सौम्यद्वये लग्नगृहे कलत्रे नवास्पदे वा यदि चामरः स्यात्।।११।।
योगे जातश्चामरे राजपूज्यो विद्वान् वाग्मी पंडितो वा महीपः।
सर्वज्ञः स्याद्वेदशास्त्राधिकारी जीवेल्लोके सप्ततिर्वत्सराणाम्।।१२।।

लग्नेश अपनी उच्चराशि का होकर केन्द्र में हो और गुरु से देखा जाता हो तो (चामर) योग होता है। यदि लग्न सप्तम वा नवम वा दशम में दो शुभग्रह हों तो (चामर) योग होता है। चामरयोग में उत्पन्न पुरुष राजा से पूज्य, विद्वान्, वक्ता, पंडित वा राजा, सर्वज्ञ, वेद शास्त्र का अधिकारी, ७० वर्ष तक जीने वाला होता है।।११-१२।।

अथ शङ्खयोगः—

अन्योन्यकेन्द्रगृहगौ सुतशत्रुनाथौ लग्नाधिपे बलयुतेयदुशंखयोगः।
लग्नाधिपेच गगनाधिपतौ चरस्थे भाग्याधिपेबलयुते तु तथावदन्ति।।
शंखे जांतो भोगशीलो दयालुः स्त्रौपुत्रार्थक्षेत्रवान् पुण्यकर्मा।
शास्त्रज्ञानाचारसाधुक्रियावान् जीवेल्लोके वत्सराणामशीतिः।।१४।।

पंचमेश, षष्ठेश परस्पर केन्द्र में हों, लग्नेश बलवान् हो तो शंख योग होता है। लग्नेश, कर्मेश दोनों चर राशि में हों, भाग्येश बली हो तो (शंख) योग होता है। शंख योग में उत्पन्न पुरुष भोगी, दयालु, स्त्री, पुत्र, धन और क्षेत्र से युक्त पुण्य कार्य करने वाला, पंडित, सज्जन और ८० वर्ष तक जीने वाला होता है।।१३-१४।।

अथ भेरीयोगमाह—

स्वान्त्योदयास्तभवनेषु वियच्चरेषु कर्माधिपेबलयुते यदि भेरियोगः।
केन्द्रे गते सुरगुरौ सितलग्ननाथौभाग्येश्वरे बलयुतेतु तथैववाच्यम्।।
दीर्घायुषो विगतरोगभया नरेन्द्रा
बह्वर्थभूमिसुतदारयुताः प्रसिद्धाः।
आचारभूरिसुखशौर्यमहानुभावा
भेरीप्रजातमनुजा निपुणाः कुलीनाः।।१६।।

यदि २।१२।७ भाव में ग्रह हों और कर्मेश बली हो तो भेरी योग होता है। भाग्येश बली हो, गुरु, शुक्र, लग्नेश केन्द्र में हों तो भेरी योग होता है। भेरी योग में उत्पन्न पुरुष दीर्घायु, नीरोगी, निर्भय, राजा, भूमि, धन, पुत्र, स्त्री से युक्त, प्रसिद्ध, आचारवान्, सुख-पराक्रम से युक्त, निपुण और कुलीन होते हैं।।१५-१६।।

अथ मृदङ्गयोगमाह—

उच्चग्रहांशकपती यदि कोणकेन्द्रे
तुङ्गस्वकीयभवनोपगते बलाढ्ये।

लग्नाधिपे बलयुते तु मृदङ्गयोगः
कल्याणरूपनृपतुल्ययशः प्रदः स्यात्।।१७।।

जन्मकाल में ग्रह उच्चराशि का हो, उसके नवांश का स्वामी यदि केन्द्र, कोण में अपने उच्च, स्वगृह में हो, बली हो और लग्नेश बली हो तो मृदंग योग होता है। इस योग में उत्पन्न पुरुष कल्याणकारी, राजा के समान यश वाला होता है।।१७।।

अथ श्रीनाथयोगमाह—

कामेश्वरे कर्मगते स्वतुंगे कर्माधिपे भाग्यपसंयुते च।
श्रीनाथयोगः शुभदस्तदानीं जातो नरः शक्रसमो नृपालः।।१८।।

सप्तमेश दशम स्थान में हो, अपनी उच्चराशि में कर्मेश भाग्येश के साथ हो तो श्रीनाथ योग होता है। इसमें उत्पन्न पुरुष इन्द्र के समान राजा होता है।।१८।।

अथ शारदयोगः—

योगः शारदसंज्ञकः सुतगते कर्माधिपे चन्द्रजे
केन्द्रस्थे दिननायके निजगृहप्राप्तेऽतिवीर्यान्विते।
चन्द्रात्कोणगते पुरन्दरगुरौ सौम्यत्रिकोणे कुजे
लाभे वा यदि देवमन्त्रिणि बुधात्तच्छारदासंज्ञकः।।१९।।
स्त्रीपुत्रबन्धुसुखरूपगुणानुरक्ता
भूपप्रिया गुरुमहीसुरदेवभक्ताः।
विद्याविनोदरतिशीलतपोबलाढ्या
जाताः स्वधर्मनिरता भुवि शारदाख्ये।।२०।।

यदि पाँचवें भाव में कर्मेश हो, बुध केन्द्र में हो और सूर्य अपनी राशि में अत्यंत बली हो अथवा चंद्रमा से ९, ५ भाव में गुरु हो, बुध से त्रिकोण में भौम हो, बुध से लाभ भाव में गुरु हो तो शारद योग होता है। शारद योग में उत्पन्न पुरुष विद्या का विनोदी, कामी, शीलवान्, तपस्वी, अपने धर्म में निरत, स्त्री, पुत्र, बंधु के सुख से युक्त, राजा का प्रिय, गुरु, ब्राह्मण तथा देवता का भक्त होता है।।१९-२०।।

अथ मत्स्ययोगः—

लग्नधर्मगते पापे पञ्चमे सदसद्युते।
चतुरस्रगते पापे योगोऽयं मत्स्यसंज्ञकः।।
कालज्ञः करुणासिन्धुर्गुणधीबलरूपवान्।
यशोविद्यातपस्वी च मत्स्ययोगसमुद्भवः।।२१।।

लग्न से नवम भाव में पापग्रह हो, पाँचवें भाव में शुभग्रह, पापग्रह दोनों हों, चौथे या आठवें भाव में पापग्रह हों तो मत्स्य योग होता है। मत्स्ययोग में उत्पन्न पुरुष ज्योतिषी, करुणा की मूर्ति, गुणी, विद्वान्, बली, रूपवान्, यशस्वी वा तपस्वी होता है।।२१।।

अथ कूर्मयोगः—

कलत्रपुत्रारिगृहेषु सौम्याः स्वतुङ्गमित्रांशकराशियाताः।
तृतीयलाभोदयगास्त्वसौम्या मित्रोच्चसंस्था यदि कूर्मयोगः।।२२।।
विख्यातकीर्त्तिर्भुवि राज्यभोगी धर्माधिकः सत्त्वगुणप्रधानः।
धीरः सुखी वागुपकारकर्त्ता कूर्मोद्भवो मानवनायको वा।।२३।।

अपने उच्च वा मित्रांश वा अपनी राशि में शुभग्रह ७-५-६ भाव में हो और अपने मित्र वा उच्च की राशि में गये हुए पापग्रह ३-११-१ भाव में हों तो कूर्मयोग होता है। कूर्मयोग में उत्पन्न पुरुष प्रसिद्ध कीर्त्तिवाला, राज्यभोग करने वाला, धार्मिक, सात्त्विक, धीर, सुखी, वाणी से उपकार करनेवाला अथवा राजा होता है।।२२-२३।।

अथ खड्गयोगमाह—

भाग्येशे धनभावस्थे धनेशे भाग्यराशिगे।
लग्नेशे केन्द्रकोणस्थे खड्गयोग इतीरितः।।२४।।
वेदार्थशास्त्रनिखिलागमतत्त्वयुक्ति-
बुद्धिप्रतापबलवीर्यसुखानुरक्ताः।
निर्मत्सराश्च निजवीर्यमहानुभावाः
खड्गे भवन्ति पुरुषाः कुशलाः कृतज्ञाः।।२५।।

भाग्येश धनभाव में हो और धनेश भाग्यभाव में हो और लग्नेश केन्द्र-कोण में हो तो 'खड्गयोग' होता है। खड्गयोग में उत्पन्न पुरुष वेद के अर्थ को जानने वाले, शास्त्र तथा समस्त आगमशास्त्र के तत्त्व को जाननेवाले, बुद्धिमान्, प्रतापी, बलवान्, सुखी, मत्सरता से रहित, अपने पराक्रम से श्रेष्ठ, कुशल और कृतज्ञ होते हैं।।२४-२५।।

अथ लक्ष्मीयोगफलम्—

केन्द्रमूलत्रिकोणस्थे भाग्येशे परमोच्चगे।
लग्नाधिपे बलाढ्ये च लक्ष्मीयोग इतीरितः।।२६।।
गुणाभिरामो बहुदेशनाथो विद्यामहाकीर्त्तिरनङ्गरूपः।
दिगन्तविश्रान्तनृपालवन्द्यो राजाधिराजो बहुदारपुत्रः।।२७।।

भाग्येश अपने परम उच्च में होकर केन्द्र (१-४-७-१०) वा अपनी मूल त्रिकोण राशि में हो और लग्नेश बलवान् हो तो 'लक्ष्मी' योग होता है। लक्ष्मी योग में उत्पन्न पुरुष गुणों से युक्त, अनेक देशों का स्वामी, विद्या तथा महत्कीर्त्ति से युक्त, कामदेव के समान स्वरूप, दिशाओं में प्रसिद्ध, राजाओं से पूज्य, राजाओं का राजा और अनेक स्त्री-पुत्रों से युक्त होता है।।२६-२७।।

अथ कुसुमयोगस्तत्फलं चाह—

स्थिरलग्ने भृगौ केन्द्रे त्रिकोणेन्दौ शुभेतरे।
मानस्थानगते सौरे योगोऽयं कुसुमो भवेत्।।२८।।

दाता महीमण्डलनाथवन्द्यो
भोगी महावंशजराजमुख्यः।
लोके महाकीर्त्तियुतः प्रतापी
नाथो नराणां कुसुमोद्भवः स्यात्।।२९।।

स्थिरलग्न (२-५-८-११) में जन्म हो और शुक्र केंद्र में हो, चंद्रमा ५वें भाव में हो और १०वें स्थान में शनि हो तो 'कुसुम' योग होता है। कुसुम योग में उत्पन्न पुरुष दाता, राजाओं से वंद्य, भोगी, उत्तम कुल में उत्पन्न, राजाओं में मुख्य, संसार में कीर्त्तियुक्त, प्रतापी और राजा होता है।।२८-२९।।

अथ पारिजातयोगस्तत्फलं चाह—

विलग्ननाथस्थितराशिनाथः स्थानेशराशीशतदंशनाथः।
केन्द्रत्रिकोणायगतो यदि स्यात्स्वतुङ्गगो वा यदि पारिजातः।।३०।।
मध्यान्तसौख्यः क्षितिपालवन्द्यो युद्धप्रियो वारणवाजियुक्तः।
स्वकर्मधर्माभिरतो दयालुर्योगो नृपः स्याद्यदि पारिजातः।।३१।।

लग्नेश जिस राशि में हो, उसका स्वामी जिस राशि में हो, उसका स्वामी वा उसके नवांश का स्वामी यदि केन्द्र, त्रिकोण, लाभ स्थान में अथवा अपनी उच्चराशि में हो तो 'पारिजात' योग होता है। पारिजात योग में उत्पन्न पुरुष मध्य और अंतिम अवस्था में सुखी, राजा से वंदनीय, युद्धप्रिय, हाथी-घोड़ों से युक्त, अपने धर्म-कर्म में रत, दयालु होता है।।३०-३१।।

अथ कलानिधियोगस्तत्फलं चाह—

द्वितीये पञ्चमे जीवे बुधशुक्रयुतेक्षिते।
क्षेत्रे तयोर्वा सम्प्राप्ते योगः स्यात्स कलानिधिः।।३२।।

कामी कलानिधिभवा सुगुणाभिरामः
संस्तूयमानचरणो नरपालमुख्यैः।
सेनातुरङ्गमदवारणशङ्खभेरी
वाद्यान्वितो विगतरोगभयारिसङ्घः।।३३।।

दूसरे या पाँचवें स्थान में गुरु हो, बुध, शुक्र से युत वा दृष्ट हो अथवा इन्हीं की राशि में हो तो 'कलानिधि' योग होता है। कलानिधि योग में उत्पन्न पुरुष कामी, सुंदर गुणों से युक्त, राजाओं से पूज्यचरण वाला, सेना, घोड़ा, मतवाले हाथी, शंख, भेरी आदि बाजाओं से युक्त, रोग, भय और शत्रु से रहित होता है।।३२-३३।।

अथ पारिजातादियोगफलानि—

सपारिजातद्युचरः सुखानि नीरोगतामुत्तमवर्गयातः।
सगोपुरांशो यदि गोधनानि सिंहासनस्थः कुरुते विभूतिम्।।३४।।
करोति पारावतभागयुक्तो विद्यायशःश्रीविपुलं नराणाम्।
सदेवलोको बहुयानसेनामैरावतस्थो यदि भूपतित्वम्।।३५।।

अपने पारिजात भाग (पृ० ५३) में ग्रह हो तो सुख होता है। उत्तम वर्ग में हो तो नीरोग करता है। गोपुरांश में हो तो गौ और धन देता है। सिंहासनांश में हो तो विभूति अर्थात् ऐश्वर्य को देता है। पारावत भाग में हो तो विद्या, यंश, विपुल लक्ष्मी को देता है। देवलोकांश में हो तो अनेक सवारी और सेना से युक्त होता है। ऐरावत अंश में हो तो जातक राजा होता है।।३४-३५।।

अथ लग्नाधियोगस्तत्फलं चाह—

लग्नाच्च दाराष्टमगेहसंस्थैः शुभैर्न पापग्रहयोगदृष्टैः।
लग्नाधियोगो हि तथा प्रसिद्धः पापैः सुखस्थानविवर्जितैश्च।।३६।।
लग्नाधियोगे बहुशास्त्रकर्त्ता विद्याविनीतश्च बलाधिकारी।
मुख्यस्तु निष्कापटिको महात्मा लोके यशोवित्तगुणाधिकः स्यात्।।

लग्न से सातवें, आठवें भाव में शुभग्रह पापग्रह से दृष्ट-युत न हों और चौथे भाव में पापग्रह न हों तो लग्नाधियोग होता है। लग्नाधियोग में उत्पन्न जातक अनेक शास्त्रों को बनाने वाला, विद्वान्, नम्र, सेनाधिकारी, मुख्यतः निष्कपट महात्मा और संसार में यश, धन और गुण से प्रसिद्ध होता है।।३६-३७।।

अथ चन्द्रयोगानाह—

सहस्ररश्मितश्चन्द्रे कण्टकादिगते सति।
न्यूनमध्यवरिष्ठानि धनधीनैपुणानि च।।३८।।
स्वांशे वा स्वाधिमित्रांशे स्थिते चेद्दिवसे शशी।
गुरुणा दृश्यते तत्र जातो वित्तसुखान्वितः।।३९।।
स्वाधिमित्रांशगश्चन्द्रो दृष्टो दानवमन्त्रिणा।
निशासु कुरुते लक्ष्मीं छत्रध्वजसमाकुलम्।
विपर्यस्थे तु शीतांशौ जायन्तेऽल्पधना नराः।।४०।।

यदि सूर्य से चंद्रमा केन्द्र में हो तो जातक को धन, बुद्धि और निपुणता अल्प होती है। चंद्रमा पणफर में हो तो धन की निपुणता मध्यम होती है और चंद्रमा आपोक्लिम में हो तो धन आदि उत्तम होते हैं। यदि दिन में जन्म हो और चंद्रमा गुरु से देखा जाता हुआ अपने नवांश में वा अधिमित्र के अंश में हो तो जातक धनी और सुखी होता है। रात्रि का जन्म हो और चंद्रमा अपने अधिमित्रांश में होकर शुक्र से देखा जाता हो तो लक्ष्मी, छत्र, ध्वज से युक्त मनुष्य होता है। इसके विपरीत चंद्रमा हो तो अल्पधनी होता है।।३८-४०।।

अथ चन्द्राधियोगस्तत्फलं चाह—

शशिनः सौम्याः षष्ठे द्यूने वा निधनसंस्थिते।
स्यादधियोगो जाताः सौम्यैः सबलैर्धराधीशः।
मध्यबलैर्मन्त्री स्यादधमबलैः सैन्यनायकः।।४१।।
चन्द्राद्वृद्धिगतैः सौम्यैः धर्मशीलो महाधनी।
द्वाभ्यां समोऽल्पवसुमानेकेन परिकीर्त्तितः।
चन्द्राल्लग्नादृग्रहाभावे दरिद्रो दुःखितो भवेत्।।४२।।

चंद्रमा से शुभग्रह ६-७-८ भाव में हो तो 'अधियोग' होता है। यदि शुभग्रह बली हों तो अधियोग में उत्पन्न जातक राजा होता है। मध्यम बली हों तो मंत्री, अधम बली हों तो सेनानायक होता है। चंद्रमा से (३-६-११) भाव में शुभग्रह हों तो जातक धर्मशील एवं महाधनी होता है। दो शुभग्रह हों तो समधनी और एक शुभग्रह हो तो अल्पधनी होता है। यदि चंद्रमा से वा लग्न से उक्तस्थानों में ग्रह न हों तो दरिद्र होता है।।४१-४२।।

अथ सुनफाऽनफादियोगानाह—

शीतांशोर्द्रविणस्थितैश्च सुनफायोगोऽनफाऽन्त्यस्थितैः
स्वान्त्यस्थैः खचरैर्भवेद्दुरुधरा पङ्केरुहेशोज्झितैः।
चेत्वित्तव्ययगा भवन्ति न खगा केमद्रुमः स्यात्तदा
प्राचीनैर्मुनिभिः स्मृताः श्रुतिमिता योगाः शशाङ्कोद्भवाः।।४३।।

चंद्रमा से दूसरे भाव में सूर्य को छोड़कर शेष ग्रहों में से कोई हो तो 'सुनफा' योग, बारहवें भाव में हो तो 'अनफा' योग, चक्र से दूसरे बारहवें भाव में ग्रह हो तो 'दुरुधरा' योग होता है। यदि चक्र से २-१२ भाव में ग्रह न हों तो 'केमद्रुम' योग होता है। ये ४ प्रकार के चंद्रयोग मुनियों ने कहे हैं।।४३।।

अथ सुनफायोगफलम्—

भूमीपतेश्च सचिवः सुकृती कृती च
नूनं भवेन्निजभुजार्जितवित्तयुक्तः।
ख्यातः सदाखिलजनेषु विशालकीर्त्या
बुध्याधिकश्च मनुजः सुनफाभिधाने।।४४।।

सुनफा योग में उत्पन्न पुरुष राजमंत्री, सुंदर यशस्वी, अपने बाहुबल से उपार्जित धन से युक्त, प्रसिद्ध, बड़ी कीर्तिवाला, बुद्धिमान् होता है।।४४।।

अथाऽनफायोगफलम्—

प्रभुर्विनीतः शुभवाग्विलाससच्छीलशाली गुणपूर्त्तियुक्तः।
उदारकीर्त्तिः स्मरतुष्टचित्तो नित्यं नरः स्यादनफाभिधाने।।४५।।

अनफा योग में उत्पन्न पुरुष समर्थ, नम्र, सुंदर वाणी, उदार, कीर्त्तियुक्त एवं कामी होता है।।४५।।

अथ दुरुधरायोगफलम्—

सद्वित्तसद्वारणवाहधात्रीसौख्याभियुक्तः सततं हतारिः।
कान्तासुनेत्राञ्चललालसः स्याद्योगे सदा दौरधरे मनुष्यः।।४६।।

दुरुधरा योग में उत्पन्न पुरुष धन-वाहन सुख से युक्त, विजित शत्रुपक्ष वाला, स्त्री से संतुष्ट होता है।।४६।।

अथ केमद्रुमयोगफलम्—

सद्वित्तसूनुवनितात्मजनैर्विहीनः
प्रेष्यो भवेत्तु मनुजो हि विदेशवासी।
नित्यं विरुद्धधिषणो मलिनः कुवेषः
केमद्रुमे च मनुजाधिपतेः सुतोऽपि।।४७।।

केमद्रुम योग में उत्पन्न जातक धन, पुत्र, स्त्री, बंधु से हीन होता है, दास और परदेशी होता है; नित्य मलिन कुवेषधारी होता है; चाहे वह राजा का ही लड़का हो तो भी।।४७।।

अथ केमद्रुमभङ्गयोगः—

प्रालेयांशुः सूतिकाले यदा वै सर्वैः खेटैर्वीक्ष्यमाणास्तदा वै।
दीर्घायुष्यं राजयोगं मनुष्यं सत्कोशाढ्यं हन्ति केमद्रुमं च।।४८।।

यदि जन्म समय में चंद्रमा सभी ग्रहों से देखा जाता हो तो जातक के केमद्रुम योग के दुष्टफल का नाश कर दीर्घायु, धनी और राजा बनाता है।।४८।।

सर्वे खेटाः केन्द्रकोणेषु संस्था दुष्टो योगश्चापि केमद्रुमोऽयम्।
दुष्टं सर्वं स्वं फलं संविहाय कुर्युः पुंसां सत्फलं वै विचित्रम्।।४९।।

यदि सभी ग्रह केन्द्र-कोण में हों तो यह दुष्ट केमद्रुम योग का नाश कर उसके दुष्ट फलों का भी नाश कर मनुष्य को शुभफल देते हैं।।४९।।

सर्वेषु चन्द्रयोगेषु चेदं यत्नाद्विचिन्तयेत्।
केमद्रुमादिका योगाः सम्भवेऽस्य लयं ययुः।।५०।।

सभी चक्र योगों में इसका विशेष विचार करना चाहिए। क्योंकि सभी शुभ योगों के रहते यदि केमद्रुम योग हो तो उसका नाश होता है।।५०।।

अथ रवियोगानाह—

व्ययधनयुतखेटैर्वोशिवेशी दिनेशा-
दुभयचरिकयोगश्चोभयस्थानसंस्थैः।
निजगृहसुहृदुच्चस्थानयातैश्च जाता
बहुधनसुखयुक्ता राजतुल्या भवन्ति।।५१।।

सूर्य से बारहवें ग्रह हो तो 'वोशि' योग, दूसरे भाव मे हो तो 'वेशि' योग और २/१२ दोनों भावें में ग्रह हों तो 'उभयचरिक' योग होता

है। योगकर्त्ता ग्रह यदि अपने गृह वा मित्रगृह वा अपने उच्चस्थान में हो तो जातक बहुत धन-सुख से युक्त राजा के समान होता है।।५१।।

अथ वोशियोगफलम्—

स्यान्मन्ददृष्टिर्बहुकर्मकर्त्ता पश्यत्यधश्चोन्नतपूर्वकायः।
असत्यवादी यदि वोशियोगो प्रसूतिकाले मनुजस्य यस्य।।५२।।

वोशि योग में उत्पन्न पुरुष मंददृष्टिवाला, बहुत कार्य करने वाला, नीचे देखने वाला, ऊँचा शरीर और झूठ बोलने वाला होता है।।५२।।

अथ वेशियोगफलम्—

चेत् सम्भवे यस्य च वेशियोगे भवेद्दयालुः पृथुपूर्वकायः।
स्याद्वाग्विलासालसतासमेतस्तिर्यक्प्रचारः खलु तस्य दृष्टे।।५३।।

वेशि योग मे उत्पन्न जातक दयालु, मोटा शरीर, वाणी बोलने में चतुर, आलसी और तिरछी निगाह वाला होता है।।५३।।

अथो-भयचरीयोगफलम्—

सर्वंसहः स्थिरतरोऽतितरां समृद्धः
सत्त्वाधिकः समशरीरविराजमानः।
नात्युच्चकः सरलदृक् प्रबलामलश्री-
युक्तः किलोभयचरीप्रभवो नरः स्यात्।।५४।।

उभयचरी योग में उत्पन्न जातक सबका सहन करने वाला, स्थिर स्वभाव, अत्यन्त समृद्ध, अधिक बलवान् शरीर वाला, छोटा कद, एक-सी सीधी दृष्टि और अधिक लक्ष्मी से युक्त होता है।।५४।।

इति योगाध्यायः।

अथ राजयोगादिफलाध्यायः

पराशर उवाच—

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि राजयोगादिकं परम्।
ग्रहाणां स्थानभेदेन राशिदृष्टिवशात्फलम्।।१।।

पराशर ने कहा— अब मैं राजयोग आदि को कह रहा हूँ, जो कि ग्रहों के स्थानभेद और राशिदृष्टिवश से फल देने वाले होते हैं।।१।।

तपस्थानाधिपो राजा मन्त्री मन्त्राधिपो भवेत्।
उभावन्योन्यसंदृष्टौ जातश्चेदिह राज्यभाक्।।२।।

इनमें मुख्य दो ग्रह होते हैं— १. भाग्येश राजा होता है और २. पंचमेश मंत्री होता है। दोनों का परस्पर दृष्टिसंबंध हो तो जातक राजा होता है।।२।।

यत्र कुत्रापि संयुक्तौ तौ वापि समसप्तमौ।
राजवंशोद्भवो बालो राजा भवति निश्चितम्।।३।।

उक्त दोनों ग्रह कहीं पर एक साथ हों अथवा एक दूसरे के सातवें भाव में हों तो इस योग में राजा का लड़का राजा होता है।।३।।

वाहनेशस्तथा माने मानेशो वाहने स्थितः।
बुद्धिधर्माधिपाभ्यां तु दृष्टश्चेदिह राज्यभाक्।।४।।

सुखेश दशम स्थान में और कर्मेश सुख स्थान में और पंचमेश नवमेश से देखा जाता हो तो राजयोग होता है।।४।।

सुतेशकर्मेशसुखेशलग्ननाथा यदा धर्मपसंयुताश्चेत्।
नृपोत्तमश्चेदिह वारणाढ्यः स्वतेजसा व्याप्तदिगन्तरालः।।५।।

पंचमेश, कर्मेश, सुखेश, लग्नेश यदि धर्मेश से युत हों तो हाथी, घोड़े आदि से युक्त अपने तेज से दिशाओं में प्रसिद्ध उत्तम राजा होता है।।५।।

सुखकर्माधिपौ चैव मन्त्रिनाथेन संयुतौ।
धर्मेशेनाऽथ वा युक्तौ जातश्चेदिह राज्यभाक्।।६।।

सुखेश, कर्मेश यदि पंचमेश धर्मेश से युत हों तो जातक राज्य का अधिकारी होता है।।६।।

सुतेश्वरो धर्मपसंयुतश्चे-
ल्लग्नेश्वरेणापि युतो विलग्ने।
सुखेऽथवा मानगृहेऽथ वा स्याद्
राज्याभिषिक्ता यदि राजवंश्यः।।७।।

पंचमेश, धर्मेश लग्नेश से युत होकर लग्न में हों वा चतुर्थ वा दशम स्थान में हों तो यदि राजा का लड़का हो तो वह राजा होता है।।७।।

धर्मस्थाने गुरुक्षेत्रे स्वगृहे भृगुसंयुते।
पञ्चमाधिपसंयुक्ते जातश्चेदिह राज्यभाक्।।८।।

नवम स्थान में गुरु की राशि हो और अपने स्थान में शुक्र हो तथा पंचमेश से युत हो तो राजा होता है।।८।।

निशार्धाच्च दिनार्धाच्च परं सार्धद्विनाडिका।
शुभो तदुद्भवो राजा धनी वा तत्समोऽपि वा।।९।।

आधी रात के बाद और दोपहर के बाद अढ़ाई घटी २½ शुभवेला होती है। इस समय में उत्पन्न बालक धनी के समान होता है।।९।।

चन्द्रः कविं कविश्चन्द्रं पश्यति लाभतृतीयगः।
शुक्राच्चन्द्रे ततः शुक्रे तृतीये वाहनार्थवान्।।१०।।

चन्द्रमा शुक्र को और शुक्र चन्द्रमा को एकादश, तीसरे भाव में होकर परस्पर देखते हों तो वाहन और धन से पूर्ण होता है। इसमें चाहे जो तीसरे भाव में हो।।१०।।

अथ चतुर्विधसम्बन्धमाह—

प्रथमः स्थानसम्बन्धो दृष्टिजस्तु द्वितीयकः।
तृतीयस्त्वेकतो दृष्टिः स्थित्येकत्र चतुर्थकः।।११।।

योगकर्त्ता ग्रह परस्पर एक-दूसरे की राशि में हों अथवा परस्पर देखते हों, अपने-अपने स्थान में होकर देखते हों वा एक ही राशि में हों; ये चार प्रकार के संबंध ग्रहों के होते हैं।।११।।

अथ पारिजातादियोगफलम्—

तन्वीशः पारिजातस्थस्तदा दाता भवेन्न हि।
उत्तमे चोत्तमो दाता गोपुरे पुरुषत्वयुक्।।१२।।

यदि लग्नेश पारिजात अंश में हो तो जातक दाता नहीं होता है। उत्तमांश में हो तो उत्तम दाता होता है। गोपुर में हो तो पुरुषत्व से युक्त होता है।।१२।।

सिंहासने भवेन्मान्यः शूरः पारावतांशके।
सभासदो देवलोके द्वितीये च मुनिर्मतः ।।१३।।

सिंहासनांश में सर्वजनमान्य, पारावतांश में हो तो शूरवीर, देवलोकांश में हो तो सभासद् और दूसरे में हो तो मुनि-समान होता है।।१३।।

ऐरावते गजे दुष्टो दिग्योगो न भवेद् ध्रुवम्।
सुखेशो वापि जायेशो राज्येशोऽप्येवमेव हि।।१४।।

ऐरावत में दुष्ट होता है, इसी प्रकार सुखेश, सप्तमेश और कर्मेश के फल को जानना चाहिए।।१४।।

पारिजाते सुताधीशो विद्या चैव कुलोचिता।
उत्तमे चोत्तमा विद्या गोपुरे भवनाङ्किता।।१५।।

पंचमेश पारिजातांश में हो तो कुलानुसार विद्या होती है। उत्तमांश में हो तो उत्तम विद्या, गोपुरांश में हो तो कुलानुसार होती है।।१५।।

सिंहासने तथा वाच्या साचिव्येन युता तथा।
पारावते तथा वाच्यं ब्रह्मविद्यासमन्वितम्।।१६।।

सिंहासन में मंत्रित्व-योग्य विद्या और पारावत में ब्रह्मविद्या युक्त विद्या होती है।।१६।।

सुतेशे देवलोकस्थे कर्मयोगान्वितो भवेत्।
उपासना द्वितीये स्याद्भक्तिस्त्वैरावते भवेत्।।१७।।

पंचमेश देवलोकांश में हो तो जातक कर्मयोगी, दूसरे में उपासक, ऐरावत में भक्तियुक्त होता है।।१७।।

धर्मेशे पारिजातस्थे तीर्थकृत्त्वत्र जन्मनि।
पूर्वेऽपि मनुजो जातो ह्युत्तमे चोत्तमो भवेत्।।१८।।

धर्मेश पारिजातांश में हो तो इस जन्म और पूर्वजन्म दोनों में तीर्थयात्री होता है, उत्तमांश में उत्तम।।१८।।

गोपुरे मखकर्त्ता च परे चैवात्र जन्मनि।
सिंहासने भवेद्धीरः सत्यवादी जितेन्द्रियः।।१९।।

गोपुरांश में हो तो इस जन्म और दूसरे जन्म में यज्ञकर्त्ता होता है। सिंहासनांश में हो तो धीर, सत्यवादी, जितेन्द्रिय होता है।।१९।।

सर्वधर्मपरित्यागी धर्मैकपदमाश्रितः।
पारावते परे चैव हंसश्चैवात्र जन्मनि।।२०।।

सभी धर्मों को त्यागकर एक धर्म का व्यवस्थापक होता है। पारावतांश में इस जन्म और परजन्म में जातीय पुरुष होता है।।२०।।

लगुडी पितृदण्डी स्याद्देवलोके न संशयः।
द्वितीये चन्द्रपदं गच्छेत्कृत्वा वै हयमेधकम्।।२१।।

देवलोकांश में हो तो दंडधारी संन्यासी और दूसरे में अश्वमेध यज्ञ करके इन्द्रपद को पाता है।।२१।।

ऐरावते तु धर्मात्मा स्वयं धर्मो भविष्यति।
श्रीरामः कुन्तिपुत्रो वा द्वितीयो न भविष्यति।।२२।।

ऐरावतांश में हो तो स्वयं धर्माचार्य होता है, चाहे श्रीराम हों वा युधिष्ठिर होता है।।२२।।

अथ विशेषयोगफलम्—

अथ योगफलं ब्रूमो ज्ञातव्यं च विशेषतः।
पारिजातादिकानां च फलमेवैकसंस्थितम्।।२३।।

अब विशेषकर योगफल को कह रहा हूँ, पारिजातादि योगों से भिन्न इनका फल होता है।।२३।।

लक्ष्मीस्थानं त्रिकोणं च विष्णुस्थानं च केन्द्रकम्।
तयोः सम्बन्धमात्रेण राजयोगादिकं भवेत्।।२४।।

त्रिकोण (९।५) लक्ष्मी का स्थान और केन्द्र (१।४।७।१०) विष्णु का स्थान है। इन दोनों के संबंध मात्र से राजयोग होता है।।२४।।

केन्द्रपुत्रेशयोर्योगे योगोऽमात्याभिधो भवेत्।
पारिजातादिके तौ च तदा स प्रबलो भवेत्।।२५।।

केन्द्रेश और पंचमेश के योग से 'अमात्य' नाम का योग होता है। यदि योगकारक पारिजातादि वर्ग में हो तो प्रबल राजयोग होता है।।२५।।

लग्नेशेन धनेशाद्यान्नैव योगः प्रकीर्त्तितः।
मन्त्रेशोऽमात्यतां याति सप्तमाधीशयोगतः।।२६।।

लग्नेश के साथ धनेश आदि के संबंध से योग नहीं होता है। पंचमेश सप्तमेश से योग होता हो तो अमात्य योग होता है।।२६।।

कर्मेशस्य तु योगेन राजा साचिव्यतामियात्।
केन्द्रधर्मेशयोर्योगे राजा वै राजवन्दितः।।२७।।

इसी में कर्मेश योग करता हो तो राजा या मंत्री होता है। केन्द्रेश और नवमेश का योग हो तो राजा से वंदित राजा होता है।।२७।।

धर्मकर्माधिपौ चैव व्यत्यये तावुभौ स्थितौ।
युक्तश्चेद्वै तदा वाच्यः सर्वसौख्यसमन्वितः।।२८।।

धर्मेश, कर्मेश व्यत्यय से अर्थात् धर्मेश कर्म में और कर्मेश धर्म भाव में अथवा एकत्र युक्त हों तो सभी सुखों से युक्त होता है।।२८।।

पारिजाते स्थितौ तौ तु दण्डे लोकानुशिक्षकः।
उत्तमे चोत्तमो भूयो गजवाजिरथादिमान्।।२९।।

यदि धर्मेश कर्मेश पारिजात में हों तो राजा दंड का शिक्षक होता है। उत्तमांश में हो तो हाथी-घोड़े से युक्त उत्तम राजा होता है।।२९।।

गोपुरे नृपशार्दूलो पूजितांघ्रिर्नृपैर्भवेत्।
सिंहासने चक्रवर्त्ती सर्वक्षोणीशपालकः।।३०।।

गोपुरांश में हों तो राजाओं में सिंह, राजाओं से पूज्यचरण वाला राजा होता है। सिंहासनांश में हों तो सभी राजाओं का पालन करने वाला चक्रवर्त्ती राजा होता है।।३०।।

इति राजयोगादिविचारकथनम्।

अथ राजयोगाध्यायः

पराशर उवाच—

अथातः संप्रवक्ष्यामि राजयोगा द्विजोत्तम।
येषां विज्ञानमात्रेण नृपपूज्यो जनो भवेत्।।१।।

पराशर ने कहा—हे विप्र! अब मैं राजयोगों को कहता हूँ, जिनके जानने से मनुष्य राजा से पूज्य होता है।।१।।

ये ये योगाः पुरा शम्भुभाषिताः शैलजाग्रतः।
तेषां सारमहं वक्ष्ये तवाग्रे द्विजनन्दन।।२।।

पहले शंकरजी ने पार्वतीजी से जिन-जिन योगों को कहा था मैं उनके सार को तुमसे कह रहा हूँ।।२।।

चिन्तयेत्कारके लग्ने जनुर्लग्नेऽथवा द्विज।
राजयोगप्रदातारौ लग्नौ द्वौ प्रथमोदितौ।।३।।

आत्मकारकांश लग्न और जन्मलग्न यही दो लग्न मुख्यतः राजयोग-कारक होते हैं।।३।।

आत्मकारकपुत्राभ्यां राजयोगं प्रकल्पयेत्।
तनुपञ्चमनाथाभ्यां तथैव द्विजसत्तम।।४।।

आत्मकारक और पंचमेश से राजयोग को देखना चाहिए। इसी प्रकार जन्मलग्न और उससे पंचमाधिपति द्वारा राजयोग देखना चाहिए।।४।।

विलग्नात्पञ्चमाधीशः पुत्रात्माकारको द्वयः।
विप्रसम्बन्धयोगेन ज्ञेयाः वीर्यबलान्विताः।।५।।

जन्मलग्नेश तथा पंचमेश के संबंध से तथा आत्मकारक और उससे पंचमेश इन दोनों के बलाबल के अनुसार उत्तम, मध्यम और अधम राजयोग होता है।।५।।

लग्नेऽथ पञ्चमे वापि लग्नेशे पञ्चमाधिपे।
पुत्रात्मकारकौ विप्र लग्ने वा पञ्चमेऽपि च।।६।।
सम्बन्धे वीक्षिते तत्र दृष्टैवं पञ्चमाधिपे।
स्वोच्चे स्वांशे स्वभे वापि शुभग्रहनिरीक्षिते।।७।।
महाराजेति योगोऽयं सोऽत्र जातः सुखी नरः।
गजवाजिरथैर्युक्तः सेनासङ्गमनेकधा।।८।।

लग्नेश और पंचमेश लग्न में वा पंचम भाव में हों, आत्मकारक और पंचमेश लग्न वा पंचम में हो, दोनों का किसी प्रकार का संबंध हों और अपने उच्च, नवांश या राशि में हों तो 'महाराज' योग होता है। इसमें उत्पन्न पुरुष सुखी, हाथी, घोड़ा और रथ-सेना आदि से युक्त होता है।।६-८।।

भाग्येशः कारके लग्ने पञ्चमे सप्तमेऽपि वा।
राजयोगप्रदातारौ गजवाजिधनैरपि।।९।।

भाग्येश और आत्मकारक लग्न, पंचम वा सप्तम में हों तो हाथी, घोड़े और धन से युक्त राज्य को देते हैं।।९।।

कारकाद्द्विचतुर्थे च पञ्चमे भावगे द्विज।
शुभखेटो न सन्देहो राजयोगं ददाति च।।१०।।

कारक से २, ४, ५ भाव में शुभग्रह हों तो निश्चय ही राजयोग करते हैं।।१०।।

कारकात् त्रितये षष्ठे राश्योरुभयपापयुक्।
राजवंशोद्भवो विप्र राजयोगस्तथा भवेत्।।११।।

कारक से ३, ६ वा लग्न से ३, ६ भाव में पापग्रह युक्त हों तो राजयोग होता है।।११।।

लग्नाधीशाद्द्यूननाथाद्धने तुर्ये च पञ्चमे।
शुभखेटयुते विप्र राजा च भवति ध्रुवम्।।१२।।

लग्नेश से वा सप्तमेश से ४ वा ५ भाव में शुभग्रह युत हों तो निश्चय ही राजा होता है।।१२।।

कारके पञ्चमे शुक्रे सितेन्दुयुतवीक्षितः।
तन्वारूढपदे लग्ने राजवर्गो भवेन्नरः।।१३।।

कारकांश वा पाँचवें भाव में शुक्र हो और शुक्र-चन्द्रमा से युत-दृष्ट हो, लग्न वा आरूढ़ लग्न में हो तो राजा होता है।।१३।।

जग्माङ्गे च हि होराङ्गे कलाङ्गे येन केनचित्।
रव्यादि दृष्टिमात्रेण सराजा भवति ध्रुवम्।।१४।।

जन्मलग्न वा होरालग्न वा पदलग्न सूर्यादि किसी ग्रह से देखा जाता हो तो राजा होता है।।१४।।

स्वक्षेत्रे तु नवांशे वा द्रेष्काणे भानुजादयः।
लग्नं च सप्तमं विप्र पश्यन्ति राजयोगदाः।।१५।।
पूर्णदृष्टे पूर्णयोगमर्धे चार्धं विधीयते।
पादेन पादयोगं च राजयोगमिदं क्रमात्।।१६।।

अपने राशि, नवांश, द्रेष्काण में सूर्य आदि ग्रह होकर लग्न वा सप्तम को देखें तो राजयोग होता है। पूर्णदृष्टि हो तो पूर्ण, अर्धदृष्टि हो तो आधा, पाददृष्टि हो तो चौथाई राजयोग होता है।।१५-१६।।

षट्कुण्डल्यन्तरे विप्र पश्यन्ति भास्करादयः।
राजयोगप्रदातारौ निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।१७।।

षड्वर्ग कुण्डली के लग्न को सूर्य आदि ग्रह देखते हों तो राजयोग होता है।।१७।।

लग्नस्थाने पूर्णदृष्ट्या सप्तमे स्वल्पवीक्षिते।
स्वल्पराज्यप्रदो विप्र षट्लग्नेषु विचिन्तयेत्।।१८।।

यदि लग्न को पूर्णदृष्टि से और सप्तम को अल्पदृष्टि से देखते हों तो अल्प राजयोग होता है।।१८।।

एवं नवांशकुण्डल्यां द्रेष्काणेऽपि विचिन्तयेत्।
लग्नसप्तमयोः खेटो राजयोगप्रदायकः।।१९।।

इसी प्रकार नवांशकुंडली और द्रेष्काणकुंडली को भी देखना चाहिए। क्योंकि लग्न और सप्तम देखने वाला ग्रह राजयोगकारक होता है।।१९।।

उच्चग्रहे राजयोगो लग्नद्वयमथापि चेत्।
राशेर्द्रेष्काणतोंऽशाच्च राशेरंशादथापि वा।।२०।।

इन दोनों भावों को अपने उच्च में बैठा ग्रह देखता हो अथवा लग्न और दूसरे भाव को देखता हो तो राजयोग होता है।।२०।।

जन्मकालघटीलग्न एकेनैव निरीक्षिते।
उच्चारूढे तु सम्प्राप्ते चन्द्राक्रान्ते विशेषतः।।२१।।

भावलग्न, होरालग्न और घटीलग्न को कोई ग्रह देखता हो तो राजयोग होता है। इसमें भी लग्नपद वा चन्द्र के साथ कोई उच्चस्थ ग्रह हो तो विशेष राजयोग होता है।।२१।।

क्रान्ते वा गुरुशुक्राभ्यां केनाप्युच्चग्रहेण वा।
दुष्टार्गलाग्रहाभावे राजयोगो न संशयः।।२२।।

लग्नपद वा चन्द्र के साथ कोई उच्च ग्रह हो, उसमें गुरु-शुक्र का योग हो और पापग्रह कृत अर्गला योग हो तो निःसंशय राजयोग होता है।।२२।।

शुभारूढे तत्र चन्द्रे धने देवगुरुस्तथा।
राजयोगप्रदाता च निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।२३।।

अथवा पदस्थान में चन्द्रमा हो, उससे दूसरे गुरु हो तो निश्चय ही राजयोग होता है।।२३।।

शुभे लग्ने शुभे त्वर्थे तृतीये पापखेचरैः।
चतुर्थे तु शुभे प्राप्ते राजा वा तत्समोऽपि वा।।२४।।

शुभग्रह लग्न द्वितीय और चतुर्थ में हों और तीसरे भाव में पापग्रह हों तो राजा वा राजा के समान होता है।।२४।।

उच्चस्थे हरिणाङ्को वा जीवो वा शुक्र एव वा।
एको बली धनगतः श्रियं दिशति देहिनः।।२५।।

यदि चन्द्रमा, गुरु वा शुक्र में कोई अपनी उच्चराशि का बली होकर दूसरे भाव में हो तो लक्ष्मीप्राप्ति होती है।।२५।।

लग्नं पश्यति ये खेटास्ते सर्वे शुभदायिनः।
नीचखेटोऽपि लग्नं चेत्पश्येद्राजा प्रकीर्त्तितः।।२६।।

लग्न को जो ग्रह देखते हैं वे सभी शुभ देने वाले होते हैं। यदि अपनी नीच राशि में स्थित ग्रह लग्न को देखता हो तो राज्यदायक होता है।।२६।।

षष्ठाष्टमे तृतीये च लाभे सम्बन्धनीचकृत्।
यो ग्रहः पश्यते लग्नं राजयोगप्रदायकः।।२७।।

छठे, आठवें और तीसरे भाव में अपनी नीचराशि का ग्रह भी योगकारक होता है। इनमें से जो ग्रह लग्न को देखता हो वह राजयोगकारक होता है।।२७।।

राजयोगो जन्मलग्नं पश्येदुच्चग्रहो यदि।
षष्ठाष्टमगते नीचे लग्नं पश्यति योगकृत्।।२८।।

यदि अपनी उच्चराशि में स्थित ग्रह को देखता हो तो राजयोग होता है। छठे, आठवें में अपने नीच राशि में बैठा ग्रह को देखे तो राजयोग होता है।।२८।।

षष्ठाष्टमाधिपे नीचे लग्नं पश्यति वाथवा।
तृतीये लाभगे नीचे लग्नं पश्यति राज्यदः।।२९।।

अथवा षष्ठेश वा अष्टमेश अपनी नीचराशि में होकर लग्न को देखते हों अथवा तीसरे, ग्यारहवें भाव में होकर लग्न को देखते हों तो राजयोग करते हैं।।२९।।

षष्ठाष्टमाधिपौ खेटौ शुभौ नीचाश्रितौ यदा।
पश्यतो जन्मलग्नं च राजयोग उदाहृतः।।३०।।

षष्ठेश, अष्टमेश शुभग्रह हों, अपनी नीचराशि में होकर लग्न को देखते हों तो राजयोग होता है।।३०।।

इति राजयोगाध्यायः।

अथ राजप्रधानयोगाध्यायः

राज्येशोऽपि जनुर्ल्लग्नादमात्येशयुतेक्षिते।
अमात्यकारकेणापि प्रधानत्वं नृपालये।।१।।

राज्येश (दशमेश) जन्मलग्न से पंचमेश से और अमात्यकारक से युत-दृष्ट हो तो राजा के यहाँ प्रधान होता है।।१।।

लाभेशो वीक्षिते लाभे पापदृष्टिविवर्जिते।
तदा राज्यालये विप्र प्रधानत्वं कुलेऽपि च।।२।।

लाभेश लाभस्थान को देखता हो और पापग्रह से दृष्ट-युत न हो तो राजा के यहाँ प्रधान होता है।।२।।

अमात्यकारकेणापि कारकेन्द्रेशसंयुते।
तीव्रबुद्धियुतो बालः सेनाधीशोऽपि जायते।।३।।

आत्मकारक के राशीश अमात्यकारक से युत-दृष्ट हो तो बालक कड़ी तीक्ष्ण बुद्धि का सेनापति होता है।।३।।

कारके केन्द्रकोणेषु तुङ्गर्क्षे चापि संस्थिते।
भाग्यपेन युते दृष्टे राजमन्त्री प्रजायते।।४।।

आत्मकारक अपने उच्च का होकर केन्द्र (१।४।९।१०) वा कोण (९।५) में हो और भाग्येश से युत वा दृष्ट हो तो राजमंत्री होता है।।४।।

कारको यस्य राशीशे लग्नगे संयुतेक्षिते।
मन्त्रित्वमुख्ययोगोऽयं वार्धके नात्र संशयः।।४।।

आत्मकारक ही जन्मराशीश होकर लग्न में और भाग्येश से युत वा दृष्ट हो तो वृद्धावस्था में मुख्यमंत्री होता है।।५।।

कारके शुभसंयुक्ते पञ्चमे सप्तमेऽपि वा।
यत्कारके यदा प्राप्ते तत्कारके धनं लभेत्।।६।।

आत्मकारक शुभग्रह से युक्त होकर पाँचवें वा सातवें भाव में जिस भाव के कारक से युक्त होता है उसके द्वारा धन का लाभ होता है।।६।।

भाग्यारूढपदे लग्ने कारके नवमेऽपि वा।
राजयोगप्रदातारौ निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।७।।

भाग्यभाव का पद लग्न में वा आत्मकारक नवम भाव में हो तो राजसंबंधकारक होते हैं।।७।।

लाभेशो लाभभवने पापदृष्टिविवर्जितः।
कारके शुभसंयुक्ते लाभं तस्य नृपालयात्।।८।।

लाभेश लाभभाव में हो, पापग्रह से न देखा जाता हो, आत्मकारक शुभग्रह से युत हो तो राजा के यहाँ से लाभ होता है।।८।।

कारकात्तूर्यभावस्थौ सितेन्दू द्विजसत्तम।
आदावन्ते विशेषस्य राजचिह्नेन संयुतः।।८।।

कारक से चौथे भाव में शुक्र और चन्द्रमा हों तो आयु के पूर्वार्ध में और अंतिम में राजचिह्नों से युक्त होता है।।९।।

इति राजप्रधानयोगाध्यायः।

अथ धनयोगाध्यायः

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि धनयोगं विशेषतः।
पञ्चमे तु भृगोक्षेत्रे तस्मिन् शुक्रेण वीक्षिते।।१।।
लाभे शनैश्चरयुते बहुद्रव्यस्य नायकः।

अब मैं विशेष धनयोगों को कहता हूँ। पाँचवें भाव में शुक्र की राशि (२।७)हो और उसे शुक्र देखता हो तथा एकादश में शनि हो तो बहुधन का स्वामी होता है।।१।।

पञ्चमे सौम्यकक्षेत्रे तस्मिन्सौम्ययुते यदि।।२।।
लाभे तु चन्द्रभौमौऽथ बहुद्रव्यस्य नायकः।

पाँचवें भाव में बुध की राशि (३।६) हो और उसमें बुध युत हो तथा एकादश भाव में चन्द्रमा-भौम हो तो बहुत द्रव्य का स्वामी होता है।।२।।

पञ्चमे तु शनिक्षेत्रे तस्मिन्सूर्यसुतो यदि।।३।।
लाभे सोमात्मजस्थे वा बहुद्रव्यस्य नायकः।

पाँचवें भाव में शनि की राशि (१०।११) हो और उसमें शनि युत हो तथा एकादश भाव में बुध हो तो अनेक द्रव्य का स्वामी होता है।।३।।

पञ्चमे तु रविक्षेत्रे तस्मिन् रवियुते यदि।।४।।
लाभे रवीन्दुसंस्थे तु बहुद्रव्यस्य नायकः।

पाँचवें भाव में सूर्य की राशि (५) हो और उसमें सूर्य हो तथा लाभभाव में रवि-चन्द्रमा हों तो बहुत द्रव्य का स्वामी होता है।।४।।

पञ्चमे तु शनिक्षेत्रे तस्मिन् शनियुते यदि।
लाभे भौमेन संयुक्ते बहुद्रव्यस्य नायकः।।५।।

पाँचवें भाव में शनि की राशि (१०।११) हो और शनि युत हो तथा लाभभाव में भौम हो तो बहुत द्रव्य का स्वामी होता है।।५।।

पञ्चमे तु गुरुक्षेत्रे तस्मिन् गुरुयुते यदि।
लाभे तु चन्द्रभौमौ चेद्बहुद्रव्यस्य नायकः।।६।।

पाँचवें भाव में गुरु की राशि (९।१२) हो और उसमें गुरु युत हो और लाभभाव में चंद्रमा-भौम हों तो बहुत द्रव्य का स्वामी होता है।।६।।

भानुक्षेत्रगते लग्ने तस्मिन् भानौ स्थिते यदि।
भौमेन गुरुणा युक्ते दृष्टे वा स्याद्युतो धनैः।।७।।

सूर्य की राशि जन्मलग्न हो और सूर्य युत हो और मंगल गुरु से युत वा दृष्ट हो तो धनी होता है।।७।।

चन्द्रक्षेत्रगते लग्ने तस्मिंश्चन्द्रयुते यदि।
जीवभौमयुते दृष्टे जातोऽवश्यं धनी भवेत्।।८।।

चंद्रमा की राशि लग्न में हो और चंद्रमा से युत हो और गुरु-भौम से युत-दृष्ट हो तो धनी होता है।।८।।

भौमक्षेत्रगते लग्ने तस्मिन्भौमयुते यदि।
सोमशुक्रार्कजैर्दृष्टे युक्ते श्रीमान्नरो भवेत्।।९।।

मंगल की राशि लग्न में हो और उसमें भौम युत हो और बुध, शुक्र शनि से दृष्ट-युत हो तो धनी होता है।।९।।

गुरुक्षेत्रगते लग्ने तस्मिन् गुरुयुते यदि।
सौम्यभौमयुते दृष्टे यातो यस्तु धनीश्वरः।।१०।।

गुरु की राशि लग्न में हो और उसमें गुरु युत हो और बुध-भौम से दृष्ट-युत हो तो धनी होता है।।१०।।

बुधक्षेत्रगते लग्ने तस्मिन् सौम्ययुते यदि।
शनिशुक्रयुते दृष्टे जातो यस्तु धनी नरः।।११।।

बुध की राशि लग्न में हो और उसमें बुध युक्त हो और शनि-शुक्र से युत-दृष्ट हो तो धनी होता है।।११।।

भृगुक्षेत्रगते लग्ने तस्मिन् भृगुयुते यदि।
शनिसौम्ययुते दृष्टे जातो यस्तु धनी भवेत्।।१२।।

शुक्र की राशि लग्न में हो और शुक्र युत हो और शनि-बुध से युत-दृष्ट हो तो धनी होता है।।१२।।

ये ये ग्रहा धर्मपबुद्धिपाभ्यां युक्ताऽथ दृष्टाश्च सुखप्रदास्ते।
रन्ध्रेश्वरादिव्ययपैर्युताः स्युः शोकप्रदा मारकनायकैश्च।।१३।।

जो-जो ग्रह भाग्येश, पंचमेश से युत-दृष्ट होते हैं वे अपने दशा अंतर में शुभफलद होते हैं और जो अष्टमेश, षष्ठेश और व्ययेश से युत होते हैं वे तथा मारकेश अपने समय में दुःखद होते हैं।।१३।।

क्रूरसौम्यविभागेन स्वस्थानादिवशात्तथा।
ग्रहाणां स्थानभेदेन राशिदृष्टिवशात्फलम्।।१४।।

इस प्रकार क्रूर तथा शुभ ग्रह के अपने स्थानादि भेद से ग्रहों के बलाबल को विचार कर फलादेश समझना चाहिए।।१४।।

इति धनयोगाः।

अथ दरिद्रयोगाध्यायः

लग्नेशे वै रिष्फगते रिष्फेशे लग्नमागते।
मारकेशयुते दृष्टे जातः स्यान्निर्धनः पुमान्।।१।।

जन्मलग्नेश बारहवें भाव में और व्ययेश लग्न में हो, मारकेश से युत दृष्ट हो तो मनुष्य निर्धन होता है।।१।।

लग्नाधिपे शत्रुगृहं गते वा षष्ठेश्वरे लग्नगतेऽपि वा चेत्।
विलग्नपे मारकनाथदृष्टे जातो भवेन्निर्धनकोपि मुख्यः।।२।।

लग्नेश छठे भाव में हो और षष्ठेश लग्न में हो और लग्नेश मारकेश से दृष्ट हो तो निर्धन होता है।।२।।

लग्नेन्दू केतुयुक्तौ वा लग्नेशे निधनं गते।
मारकेशयुते दृष्टे जातो वै निर्धनो भवेत्।।३।।

लग्न और चंद्रमा केतु से युत हों तथा लग्नेश आठवें भाव में हो, मारकेश से युत-दृष्ट हो तो मनुष्य निर्धन होता है।।३।।

षष्ठाष्टमव्ययगते लग्नेशे पापसंयुते।
मारकेशयुते दृष्टे राजवंशोऽपि निर्धनः।।४।।

लग्नेश पापग्रह से युत होकर ६-८-१२ भाव में गया हो और मारकेश से युत-दृष्ट हो तो राजबालक भी निर्धन होता है।।४।।

विलग्ननाथेऽरिविनाशरिष्फनाथेन युक्ते यदि पापदृष्टे।
मित्रात्मजेनाथ्युतेपि दृष्टे शुभैर्न दृष्टे स भवेद्दरिद्रः।।५।।

लग्नेश ६-८-१२ भावों के स्वामी से युक्त होकर पापग्रह से दृष्ट होकर शनि से भी युत हो तथा शुभग्रह से न दृष्ट हो तो मनुष्य दरिद्र होता है।।५।।

मन्त्रेशो धर्मनाथश्च षष्ठव्ययस्थितौ क्रमात्।
दृष्टो चेन्मारकेशेन जातः स्यान्निर्धनो नरः।।६।।

पंचमेश और धर्मेश क्रम से ६/१२ भाव में हों और मारकेश से देखे जाते हों तो जातक निर्धन होता है।।६।।

पापग्रहे लग्नगते राज्यधर्माधिपौ विना।
मारकेशयुते दृष्टे जातः स्यान्निर्धनो नरः।।७।।

कर्मेश और नवमेश से अतिरिक्त अन्य पापग्रह लग्न में हों और मारकेश से युत-दृष्ट हो तो जातक निर्धन होता है।।७।।

यद्भावेशो रन्ध्ररिष्फारिसंस्थो यद्भावस्था रन्ध्ररिष्फारिभेशाः।
पापैर्दृष्टो मन्ददृष्टोऽथवा चेद्दुःखाक्रान्तश्चञ्चलो निर्धनः स्यात्।।८।।

जो भावेश (३-८-१२)में स्थित हों और जिस भाव में (६-८-१२) के स्वामी हों, पापग्रह वा शनि से दृष्ट हों तो जातक दुःखी, चंचल और दरिद्र होता है।।८।।

चन्द्राक्रान्तनवांशेशो मारकेशयुतो यदि।
मारकस्थानगो वापि जातोऽसौ निर्धनो भवेत्।।९।।

चंद्रमा के नवांश का स्वामी मारकेश से युत हो अथवा मारक स्थान में हो तो जातक निर्धन होता है।।९।।

विलग्नेशनवांशेशौ रिष्फषष्ठाष्टगौ यदि।
मारकेशयुतौ दृष्टौ जातोऽसौ निर्धनो नरः।।१०।।

लग्नेश के नवांश का स्वामी १२-६-८ भाव में हो और मारकेश से युत दृष्ट हो तो जातक निर्धन होता है।।१०।।

शुभस्थानगताः पापाः पापस्थाने गताः शुभाः।
धनार्तिर्जायते बालो भोजनेन प्रपीडितः।।११।।

शुभग्रह की राशि में पापग्रह और पापग्रह की राशि में शुभग्रह हों तो जातक को धन और अन्न दोनों का कष्ट होता है।।११।।

कारकाद्वा विलग्नाद्वा रन्ध्रे रिष्फे द्विजोत्तम।
लग्नकारकयोर्दृष्ट्या दरिद्रार्त्तियुतो नरः।।१२।।

कारक से वा लग्न से ८/१२ वें भाव को कारक और लग्नेश न देखते हों तो जातक दरिद्र होता है।।१२।।

लग्नाद्वा कारकाद्वापि द्वादशे यस्य वै द्विज।
लग्नकारकयोर्दृष्ट्या व्ययशीलो भवेन्नरः।।१३।।

लग्न वा कारक से १२वें भाव पर लग्नेश वा कारक की दृष्टि हो तो जातक अधिक व्यय करने वाला होता है।।१३।।

ये ये ग्रहा धर्मपबुद्धिपाभ्यां युक्ता न दृष्टा बहुदुःखदास्ते।
रन्ध्रादिषष्ठव्ययपैर्युतास्ते व्ययप्रदा मारकनाथकेन।।१४।।

जो-जो ग्रह त्रिकोणेश से युत-दृष्ट न होकर त्रिकेश (६-८-१२) से युत हों और मारकेश से दृष्ट हों, वे अपने दशा में दुःखदायी होते हैं।।१४।।

अथ दरिद्रभङ्गयोगाः—

धनसंस्थौ च भौमेन्दू कथितौ धननाशकौ।
बुधेक्षितौ महावित्तं कुरुतस्तत्रगः शनिः।।१५।।

धन भाव में भौम-चंद्रमा धननाशक होते हैं, किंतु बुध से देखे जाते हों तो महाधनी होता है एवं शनि हों तो भी महाधनी होता है।।१५।।

निःस्वतां कुरुते तत्र रविर्नित्यं यमेक्षितः।
महाधनयुतं ख्यातं शन्यदृष्टः करोत्यसौ।।१६।।

दूसरे भाव में रवि हो और शनि से देखा जाता हो तो दरिद्र होता है, किंतु शनि न देखता हो तो महाधनी होता है।।१६।।

धनभावगताः सौम्याः कुर्वन्त्येव धनं बहु।
बुधदृष्टो गुरुस्तत्र निर्धनं कुरुते नरम्।।१७।।

धनभाव में शुभग्रह हों तो बहुत धन होता है, किंतु उसी भाव में गुरु हो और बुध देखता हो तो निर्धन होता है।।१७।।

बुधश्चन्द्रेक्षितस्तत्र सर्वस्वं हन्ति निश्चितम्।
क्रूरखेटादियोगैश्च दारिद्र्यं सम्भवेन्नृणाम्।।१८।।

यदि बुध हो और चंद्रमा देखता हो तो सर्वस्व का नाश होता है। क्रूरग्रह आदि के योग से जातक को दरिद्रयोग होता है।।१८।।

इति दारिद्रयोगाध्यायः।

ग्रहाणामवस्थाध्यायः

मैत्रेय उवाच—

आदित्यादिग्रहाणां च ह्यवस्था च पृथक् पृथक्।
भेदाः कतिविधाः सन्ति कथय त्वं कृपानिधे!।।१।।

मैत्रेय ने कहा—हे कृपानिधि! सूर्य आदि ग्रहों की अवस्थाओं के भेद और उनकी संख्या पृथक्-पृथक् मुझसे कहें।।१।।

पराशर उवाच—

भास्करादिग्रहाणां च ह्यवस्था विविधानि च।
षण्णवत्याश्रितावस्था सारभूतं वदाम्यहम्।।२।।

पराशरजी ने कहा— सूर्य आदि ग्रहों की अनेक अवस्थायें हैं, जिनकी संख्या ९६ हैं। उनमें सारभूत प्रधान अवस्थाओं को कह रहा हूँ।।२।।

अथ जाग्रदाद्यवस्था तत्फलं चाह—

त्रिंशदंशं त्रिभागं च कल्पयित्वा पृथक् पृथक्।
विषमादिक्रमेणैव समे वै विपरीतकम्।।३।।
विज्ञानं प्रथमं पुंसां जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिकाः।
विशेषतः परीक्ष स्याज्जागरः कार्यसाधकः।।४।।

तीस अंशात्मक राशि के तीन भाग करके दश-दश अंश के एक-एक भाग का विषम राशि में जाग्रत्, स्वप्न और सुषुप्त अवस्था होती है और समराशि में विलोम(सुषुप्त, स्वप्न, जाग्रत्) अवस्था होती है। परीक्षण से यह निश्चित है कि जाग्रत् अवस्था में कार्य सिद्ध होता है।।३-४।।

स्वप्नावस्था मध्यफला उपदेष्टा गुरुर्यदि।
निष्फला चरमावस्था ज्ञातव्या मुनिसत्तम।।५।।

स्वप्नावस्था मध्यम फलदायक और सुषुप्त अवस्था निष्फल होती है।।५।।

अथ दीप्ताद्यवस्था तत्फलं चाह—

दीप्तः स्वस्थः प्रमुदितः शान्तो दीनोऽतिदुःखितः।
विकलश्च खलः क्रोधी नवधा खेचरो भवेत्।।६।।

दीप्त, स्वस्थ, मुदित, शांत, दीन, अतिदुःखी, विकल, खल और कोपी— ये नव अवस्थायें होती हैं।।६।।

उच्चस्थः खेचरो दीप्तः स्वस्थः स्यादधि[illegible]के।
मुदितो मित्रभे शान्तः समभे दीन उच्यते।।७।।

जो ग्रह अपनी उच्चराशि में होता है वह दीप्त होता है। अपने अधिमित्र के गृह में हो तो स्वस्थ, मित्र के गृह में हो तो मुदित, सम के गृह में हो तो दीन।।७।।

शत्रुभे दुःखितोऽतीवविकलः पापसंयुतः।
खलः खलग्रहे ज्ञेयः कोपी स्यादर्कसंयुतः।।८।।

शत्रु की राशि में हो तो अतिदुःखी, पापग्रह के साथ हो तो विकल, पापग्रह की राशि में हो तो खल और सूर्य के साथ हो तो कोपी होता है।।८।।

पाके प्रदीप्तस्य धराधिपत्यमुत्साहशौर्यं धनवाहने च।
स्त्रीपुत्रलाभं शुभबन्धुपूजां क्षितीश्वरान्मानमुपैति विद्याम्।।९।।

दीप्त ग्रह की राशि में पृथ्वी का लाभ, उत्साह, पराक्रम, धन, वाहन, स्त्री-पुत्र का लाभ, शुभकार्य, बंधुओं से प्रतिष्ठा और राजा से प्रतिष्ठा का लाभ होता हैं।।८।।

स्वस्थस्य खेटस्य दशाविपाके स्वस्थो नृपाल्लब्धधनादिसौख्यम्।
विद्यां यशः प्रीतिमहत्त्वमाराद्दारार्थभूम्यात्मजधर्ममेति।।१०।।

स्वस्थ ग्रह की दशा में स्वस्थता, राजा से प्राप्त धन आदि का सुख, विद्या, यश, धन-धर्म आदि का लाभ होता है।।१०।।

मुदान्वितस्यापि दशाविपाके वस्त्रादिकं गन्धसुतीर्थधैर्यम्।
पुराणधर्मश्रवणादिलाभं हयादियानाम्बरभूषणाप्तिम्।।११।।

मुदित ग्रह की दशा में वस्त्र, गंध, तीर्थयात्रा, धैर्य, पुराण आदि का श्रवण, घोड़ा आदि सवारियों का लाभ, आभूषण का लाभ होता है।।११।।

दशाविपाके सुखधर्ममेति शान्तस्य भूपुत्रकलत्रयानम्।
विद्याविनोदान्वितधर्मशास्त्रं बह्वर्थदेशाधिपपूज्यतां च।।१२।।

शांत की दशा में सुख, धर्म का लाभ, भूमि, स्त्री, सवारी, विद्या का विनोद, धर्मशास्त्र, बहुत धन तथा राजाओं से पूज्य होता है।।१२।।

स्थानच्युतिबन्धुविरोधता च दीनस्य खेटस्य दशाविपाके।
जीवत्यसौ कुत्सितहीनवृत्त्या त्यक्तो जनै रोगनिपीडितः स्यात्।१३।

दीन ग्रह की दशा में स्थानच्युति, बंधुओं से विरोध, कुत्सित वृत्ति से जीविका, लोगों से त्यागा हुआ और रोग से पीडित होता है।।१३।।

दुःखार्दितस्यापि दशाविपाके नानाविधं दुःखमुपैति नित्यम्।
विदेशगो बन्धुजनैर्विहीनश्चौराग्निभूपैर्भयमातनोति।।१४।।

अतिदुःखी ग्रह की दशा में अनेक प्रकार के दुःखों से युक्त, विदेश यात्रा, बंधुओं से त्याज्य, चोर, अग्नि और राजा से भय होता है।।१४।।

वैकल्यखेटस्य दशाविपाके वैकल्यमायाति मनोविकारम्।
मित्रादिकानां मरणं विशेषात्स्त्रीपुत्रयानाम्बरचोरपीडाम्।।१५।।

विकल ग्रह की दशा में शरीर में विकलता, मन में विकार, मित्रादिकों का मरण, स्त्री, पुत्र, सवारी आदि की पीडा होती है।।१५।।

दशाविपाके कलहं वियोगं खलस्य खेटस्य पितुर्वियोगम्।
शत्रोर्जनानां धनभूमिनाशमुपैति नित्यं स्वजनैश्च निन्दाम्।।१६।।

खल ग्रह की दशा में कलह, वियोग, पिता का वियोग, शत्रु द्वारा जन, धन, भूमि का नाश और अपने ही लोगों से नित्य निंदा होती है।।१६।।

कोपान्वितस्यापि दशाविपाके पापाः समायान्ति बहुप्रकारैः।
विद्याधनस्त्रीसुतबन्धुनाशं पुत्रादिकृच्छ्रं खलु नेत्ररोगम्।।१७।।

कोपी ग्रह की दशा में अनेक प्रकार के पापकर्म, विद्या, धन, स्त्री, पुत्र और बंधुओं का नाश, पुत्रादि को कष्ट और नेत्ररोग होता है।।१७।।

अथ बालाद्यवस्थाफलम्—

बालो रसांशैरसमे प्रदिष्टस्ततः कुमारो हि युवाथ वृद्धः।
मृतः क्रमादुत्क्रमतः समर्क्षे बालाद्यवस्था कथिता ग्रहाणाम्।।
फलं तु किञ्चिद्वितनोति बालश्चार्द्धं कुमारो यतते न पुंसाम्।
युवा समग्रं खचरोऽथ वृद्धः फलं च दुष्टं मरणं मृताख्यम्।।१९।।

एक राशि में षष्ठांश के तुल्य बाल, कुमार, युवा, वृद्ध और मृत ये पाँच अवस्थाएँ होती हैं। बाल साधारण, कुमार में आधा, युवा में कुछ, वृद्ध में संपूर्ण और मृत में मृत्यु होती है।।१८।१९।।

अथ प्रवासाद्यवस्थाफलम्—

प्रवासनष्टा च मृता जया ह्रास्या रतिर्मुदा।
[illegible] ज्वरा च [illegible] च सु[illegible] सन्निभा।।२०।।

प्रवास, नष्टा, मृत, जय, हास्य, रति, मुद, सुदा, भुक्त, ज्वर, कंप और स्थिर ये १२ अवस्थाएँ होती हैं।।२०।।

षष्ठिघ्नं गतभं भुक्तघटीयुक्तं युगाहतम्।
शराब्धिहल्लब्धतोऽर्काच्छेषावस्था द्विजोत्तम।।२१।।

गत नक्षत्र की संख्या को ६० से गुणाकर उसमें नक्षत्र की भुक्त घटी को जोड़कर ४ से गुणाकर उसमें ४५ से भाग देवे तो लब्धि तुल्य अवस्था होती है। लब्धि १२ से अधिक हो तो उसमें १२ से भाग देने से शेष गत अवस्था होती है।।२१।।

प्रवासः प्रवासोपगे जन्मकालेऽर्थनाशस्तु नष्टोपगे मृत्युभीतिः।
मृतावस्थिते स्याज्जयायां जयस्तु विलासस्तु हास्योपगे कामिनीभिः।।
रतौ स्याद्रतिः क्रीडिता सौख्यदात्री
प्रसुप्तापि निद्रां कलिं देहपीडाम्।
भयं तापहानिः सुखं स्यात्तु भुक्त्वा
ज्वराकम्पितासुस्थितासु क्रमेण।।२३।।

अवस्थाओं के नाम के अनुसार ही उनके फल होते हैं।।२२-२३।।

अथ लज्जिताद्यवस्था तत्फलं चाह–

लज्जितो गर्वितश्चैव क्षुधितस्तृषितस्तथा।
मुदितः क्षोभितश्चैव ग्रहावस्थाः प्रकीर्त्तिताः।।२४।।

लज्जित, गर्वित, क्षुधित, तृषित, मुदित, क्षोभित, ये ६ ग्रहों की अवस्थाएँ होती हैं।।२४।।

पुत्रगेहगतः खेटो राहुकेतुयुतो भवेत्।
रविमन्दकुजैर्युक्तो लज्जितो ग्रह एव च।।२५।।

पाँचवें भाव में ग्रह राहु, केतु, रवि, शनि और भौम से युक्त हो तो लज्जित होता है।।२५।।

तुङ्गस्थानगतो वापि त्रिकोणेऽपि भवेत्पुनः।
गर्वितः सोऽपि गदितो निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।२६।।

यदि अपनी उच्चराशि वा मूल त्रिकोण में हो तो गर्वित होता है।।२६।।

शत्रुगेही शत्रुयुक्तो रिपुदृष्टो भवेद्यदि।
क्षुधितः स च विज्ञेयः शनियुक्तो यथा तथा।।२७।।

शत्रु की राशि में हो, शत्रु से युक्त हो, शत्रु से देखा जाता हो अथवा शनि से युक्त हो तो क्षुधित होता है।।२७।।

जलराशौ स्थितः खेटः शत्रुणा चावलोकितः।
शुभग्रहा न पश्यन्ति तृषितः स उदाहृतः।।२८।।

ग्रह जलराशि में हो, अपने शत्रु से देखा जाता हो, शुभ ग्रह से न देखा जाता हो तो तृषित होता है।।२८।।

मित्रगेही मित्रयुक्तो मित्रेण चावलोकितः।
गुरुणा सहितो यश्च मुदितः स प्रकीर्त्तितः।।२९।।

यदि ग्रह मित्र के गृह में हो, मित्र से युक्त हो और मित्र से देखा जाता हो और गुरु से युक्त हो तो मुदित होता है।।२९।।

रविणा सहितो यश्च पापाः पश्यन्ति सर्वथा।
क्षोभितं तं विजानीयाच्छत्रुणा यदि वीक्षितः।।३०।।

रवि से युक्त हो और केवल पापग्रह से दृष्ट हो और शत्रु से देखा जाता हो तो क्षोभित होता है।।३०।।

येषु येषु च भावेषु ग्रहास्तिष्ठन्ति सर्वथा।
क्षुधितः क्षोभितो वापि स नरो दुःखभाजनः।।३१।।

जिन-जिन भावों में क्षुधित और क्षोभित ग्रह रहते हैं उन-उन भाव के फलों का नाश होता है।।३१।।

एवं क्रमेण बोद्धव्यं सर्वभावेषु पण्डितैः।
बलाबलविचारेण वक्तव्यः फलनिर्णयः।।३२।।

इसी प्रकार सभी भावों का बलाबल के विचार से फल का निर्णय करना चाहिए।।३२।।

अन्योन्यं च मुदा युक्तं फलं मिश्रं वदेत्पुनः।
बलहीने तथा हानिः सबले च महाफलम्।।३३।।

परस्पर मुदित ग्रह हों तो मिश्रित फल होता है। यदि ग्रहहीन बल हो तो हानि और बली हो तो अधिक फल होता है।।३३।।

कर्मस्थाने स्थितो यस्य लज्जितस्तृषितस्तथा।
क्षुधितः क्षोभितो वापि स नरो दुःखभाजनः।।३४।।

जिसके कर्मभाव में लज्जित वा तृषित ग्रह हो अथवा क्षुधित वा क्षोभित ग्रह हो तो वह मनुष्य दुःखी होता है।।३४।।

सुतस्थाने भवेद्यस्य लज्जितो ग्रह एव च।
सुतनाशो भवेत्तस्य एकस्तिष्ठति सर्वदा।।३५।।

जिसके पुत्रस्थान में लज्जित ग्रह हो तो उसके पुत्र का नाश होता है।।३५।।

क्षोभितस्तृषितश्चैव सप्तमे यस्य वा भवेत्।
म्रियते तस्य नारी च सत्यमाहुर्द्विजोत्तम।।३६।।

जिसके सातवें भाव में क्षोभित वा तृषित ग्रह हो तो उसकी स्त्री का नाश होता है।।३६।।

नवालयारामसुखं नृपत्वं कलापटुत्वं विदधाति पुंसाम्।
सदार्थलाभं व्यवहारवृद्धिं फलं विशेषादिह गर्वितस्य।।३७।।
भवति मुदितयोगे वासशालाविशाला
विमलवसनभूषाभूमियोषासु सौख्यम्।
स्वजनजनविलासो भूमिपागारवासो
रिपुनिवहविनाशो बुद्धिविद्याविकाशः।।३८।।

गर्वित ग्रह की दशा में नूतन मकान, बगीचा का सुख, नृपत्व, कला में पटुता, सदा धन का लाभ, व्यवहार में कुशलता, राजगृह में वास और शत्रुओं के समूह का नाश होता है।।३८।।

दिशति लज्जितभाववशाद्रतिं विगतराममतिं विमतिक्षयम्।
सुतगदागमनं गमनं वृथा कलिकथाभिरुचिं न रुचिं शुभे।।३९।।

लज्जित ग्रह की दशा में ईश्वर में अनिच्छा, सुंदर बुद्धि की हानि, पुत्र को कष्ट, व्यर्थ भ्रमण, झगड़ा आदि में रुचि और धर्म में अरुचि होती है।।३९।।

संक्षोभितस्यापि फलं विशेषाद्दरिद्रजातं कुमतिं च कष्टम्।
करोति वित्तक्षयमंघ्रिबाधां धनादिबाधामवनीशकोपात्।।४०।।
क्षुधितग्रहवशाद्वै शोकमोहादितापः
परिजनपरितापादाधिभीत्या कृशत्वम्।
कलिरपि रिपुलोकैरर्थबाधा नराणा-
मखिलबलनिरोधो बुद्धिरोधो विषादात्।।४१।।

क्षोभित ग्रह की दशा में दरिद्रता, दुर्बुद्धि, कष्ट, धन का नाश, पैर में कष्ट, राजा के कोप से धनप्राप्ति में बाधा होती है। क्षुधित ग्रह की दशा में शोक, मोह, परिजनों के कष्ट से मानसिक व्यथा, कृशता, शत्रु से विवाद, धन की हानि और विरोध से बुद्धि की हानि होती है।।४१।।

तृषितखगभवे स्यादंगनासंगमध्ये
भवति गदविकारो दुष्टकार्याधिकारः।
निजजनपरिवादादर्थहानिः कृशत्वं
खलकृतपरितापो मानहानिः सदैव।।४२।।

तृषित ग्रह की दशा में स्त्री के संसर्ग से रोग, दुष्ट कार्य का अधिकार, अपने ही लोगों के विवाद से धन की हानि, कृशता, दुष्टों से कष्ट और मानहानि होती है।।४२।।

अथ शयनाद्यवस्थानयनम्—

शयनं चोपवेशं च नेत्रपाणिप्रकाशनम्।
गमनागमनं चाथ सभायां वसतिं तथा।।४३।।
आगमं भोजनं चैव नृत्यलिप्सां च कौतुकम्।
निद्रां ग्रहाणां चेष्टां च कथयामि तवाग्रतः।।४४।।

१ शयन, २ उपवेशन, ३ नेत्रपाणि, ४ प्रकाशन, ५ गमन, ६ आगमन, ७ सभावास, ८ आगम, ९ भोजन, १० नृत्यलिप्सा, ११ कौतुक, १२ निद्रा —ये १२ अवस्था और उनकी चेष्टाओं को कहता हूँ।।४३-४४।।

यस्मिनृक्षे भवेत्खेटस्तेन तं परिपूरयेत्।
पुनरंशेन सम्पूर्य स्वनक्षत्रं नियोजयेत्।।४५।।
यातदण्डं तथा लग्नमेकीकृत्य सदा बुधः।
रविणा हरते भागं शेषं कार्ये नियोजयेत्।।४६।।

जिस नक्षत्र में ग्रह हो उसकी संख्या से ग्रहसंख्या को गुणा कर दे। गुणनफल को ग्रह की नवांश संख्या से गुणा कर दे। गुणनफल में जन्मनक्षत्र संख्या को जोड़ दे और इसमें इष्टघटी और लग्न की संख्या को जोड़ कर उसमें १२ का भाग देने से शेष के तुल्य शयन आदि अवस्था होती है।।४५-४६।।

नाक्षत्रिकदशाक्रमेण पुनः पूरणमाचरेत्।
नामाक्षरेण संयुक्ते हर्तव्यं रविणा ततः।।४७।।

फिर शेषांक को उसी से गुणा कर गुणनफल में नाम के आद्यक्षर के अनुसार स्वरांक को जोड़ दे और १२ से भाग देवे, शेष में ग्रह का ध्रुवांक जोड़ दे।।४७।।

रवौ पञ्च तथा देयं चन्द्रे दद्याद्द्वयं तथा।
कुजे द्वयं च संयुक्तं बुधे त्रीणि नियोजयेत्।।४८।।

जैसे रवि का ५, चंद्र का २, भौम का २, बुध का ३।।४८।।

गुरौ बाणाः प्रदेयाश्च त्रयं दद्याच्च भार्गवे।
शनौ त्रयमथो देयं राहौ दद्याच्चतुष्टयम्।।४९।।

गुरु का ५, शुक्र का ३, शनि का ३ और राहु का ४।।४९।।

शेषं हतं च रामेण ग्रहाणां त्रिविधं भवेत्।
दृष्टिं चेष्टां विचेष्टां च कथयामि तवाग्रतः।।५०।।

जोड़कर ३ का भाग देने से १ बचे तो दृष्टि, २ बचे तो चेष्टा और ३ या ० बचे तो विचेष्टा होती है।।५०।।

उदाहरण— जैसे सूर्य ३-१८-२६-१४ जन्मनक्षत्र पुनर्वसु, इष्टघटी ३२ और जन्मलग्न मकर है। सूर्य आश्लेषा नक्षत्र में है, उसकी संख्या ९ है, रवि की संख्या १ को गुणा किया तो ९ हुआ, रवि की नवांश संख्या ६ से गुणा करने पर ६x९=५४ हुआ। इसमें जन्मनक्षत्र संख्या ७, इष्टघटी ३२ और जन्मलग्न संख्या १० इन तीनों को जोड़ने से १०३ हुआ। इसमें १२ का भाग देने से शेष ७ बचा, अतः सातवीं सभावास अवस्था सूर्य की हुई। फिर शेष को उसी से गुणा करने से ४९ हुआ। इसमे दिनेश के आद्य अक्षर का स्वरांक ५ जोड़कर १२ से भाग देने से ६ शेष बचा। इसमें रवि का ध्रुवांक ५ जोड़कर तीन का भाग देने से २ बचा, अतः चेष्टा अवस्था हुई।

स्वराङ्कचक्र

१	२	३	४	५
अ.	इ.	उ.	ए.	ओ.
क	ख	ग	घ	च
छ	ज	झ	र	ठ
ड	ढ	त	थ	द
ध	न	प	फ	ब
भ	म	य	र	ल
व	श	ष	स	ह

दृष्ट्यादिफलम्—

दृष्टौ स्वल्पफलं ज्ञेयं चेष्टायां विपुलं धनम्।
विचेष्टायां फलं न स्यादेवं दृष्टिफलं विदुः।।५१।।

दृष्टि में ग्रहों की अवस्था का अल्पफल, चेष्टा में अधिक फल और विचेष्टा में निष्फल होता है।।५१।।

शुभाशुभं ग्रहाणां च समीक्ष्याथ बलाबलम्।
तुङ्गस्थाने विशेषेण बलं ज्ञेयं तथा बुधैः।।५२।।

ग्रहों का शुभाशुभ और बलाबल विचार कर फलादेश करना चाहिए।।५२।।

अथ रवेर्द्वादशावस्थाफलम्—

मन्दाग्निरोगो बहुधा नराणां स्थूलत्वमंघ्रेरपि पित्तकोपः।
व्रणं गुदे शूलमुरःप्रदेशे यदोष्णभानौ शयनं प्रयाते।।५३।।

यदि सूर्य शयन अवस्था में हो तो जातक को मंदाग्निरोग, चरण में स्थूलता, पित्तप्रकोप, गुदा में व्रण तथा हृदय में शूल होता है।।५३।।

दरिद्रताभारविहारशाली विवादविद्याभिरतो नरः स्यात्।
कठोरचित्तः खलु नष्टवित्तः सूर्यो यदा चेदुपवेशनस्थः।।५४।।

उपवेशन अवस्था में हो तो दरिद्रता को भोगने वाला, कठोर चित्त वाला तथा नष्ट धन वाला होता है।।५४।।

नरः सदानन्दधरः विवेकी परोपकारी बलवित्तयुक्तः।
महासुखी राजकृपाभिमानी दिवाधिनाथो यदि नेत्रपाणौ।।५५।।

नेत्रपाणि अवस्था में हो तो सदा आनंद भोगनेवाला, विवेकी, परोपकारी, बली, धनी, महासुखी, राजा की कृपा से अभिमानी होता है।।५५।।

उदारचित्तः परिपूर्णवित्तः सभासु वक्ता बहुपुण्यकर्त्ता।
महाबली सुन्दररूपशाली प्रकाशने जन्मनि पद्मनीशे।।५६।।

प्रकाशन में हो तो उदार चित्तवाला, धन से पूर्ण, सभा मे वक्ता, अनेक पुण्य करने वाला, महाबली, सुंदर रूपवाला होता है।।५६।।

प्रवासशाली किल दुःखमाली सदालसी धीधनवर्जितश्च।
भयातुरः कोपपरो विशेषाद्दिवाधिनाथे गमने मनुष्यः।।५७।।

गमन अवस्था में हो तो जातक प्रवास मे रहने वाला, दुःखी, सदा आलसी, बुद्धि-धन से रहित, भयातुर, क्रोधी होता है।।५७।।

परदाररतो जनतारहितो बहुधा गमने गमनाभिरुचिः।
कृपणः खलताकुशलो मलिनं दिवसाधिपतौ मनुजः कुमतिः।।५८।।

आगमन अवस्था में हो तो परस्त्री में आसक्त, जनमत से रहित, यात्रा में रुचि, कृपण, दुष्टता में कुशल और मलिन होता है।।५८।।

सभागते हिते नरः परोपकारतत्परः
सदार्थरत्नपूरितो दिवाकरे गुणाकरः।
वसुन्धरानवाम्बरालयान्वितो महाबली
विचित्रमित्रवत्सलः कृपाकलाधरः परः।।५९।।

सभा अवस्था में हो तो परोपकारी, सदा धन-रत्न से परिपूर्ण, गुण का भंडार, भूमि, नूतन वस्त्र, गृह से युक्त, महाबली, अनेक मित्रों से युक्त और कृपालु होता है।।५९।।

क्षोभितो रिपुगणैः सदा नरश्चञ्चलः खलमतिः कृशस्तथा।
धर्मकर्मरहितो मदोद्धतश्चागमे दिनपतौ यदा तदा।।६०।।

आगम अवस्था में सूर्य हो तो जातक शत्रुओं से क्षुभित, चंचल, दुष्टबुद्धि, कृशशरीर, धर्म-कर्म से रहित और उद्धत स्वभाव का होता है।।६०।।

सदाङ्गसन्धिवेदना पराङ्गनाधनक्षयो
बलक्षयः पदे पदे यदा तदा हि भोजने।
असत्यता शिरोव्यथा तथा वृथान्नभोजनं
रवावसत्कथारतिः कुमार्गगामिनी मतिः।।६१।।

भोजन अवस्था में हो तो जातक हमेशा संधियों में वेदना, परस्त्री से द्रव्य की हानि, बल की हानि, असत्यभाषी, शिर में पीडा, व्यर्थ अन्न और भोजन करने वाला, व्यर्थ बकवाद करने वाला, कुमार्गगामी होता है।।६१।।

विज्ञलोकैः सदा मण्डितः पण्डितः काव्यविद्यानवद्यप्रलापान्वितः।
राजपूज्यो धरामण्डले सर्वदा नृत्यलिप्सागते पद्मिनीनायके।।६२।।

नृत्यलिप्सा में हो तो सदा विज्ञजनों से आवृत, पंडित, काव्य करने वाला, राजा से पूज्य होता है।।६२।।

सर्वदानन्दधर्ता जनो ज्ञानवान्यज्ञकर्त्ता धराधीशसद्मस्थितः।
पद्मबन्धावरातेर्भयं स्वाननः काव्यविद्याप्रलापी मुदा कौतुके।।६३।।

कौतुक अवस्था में हो तो सदा आनंद करने वाला, ज्ञानी, यज्ञ करने वाला, राजगृह में रहने वाला, शत्रु से भयभीत, सुंदर मुख और काव्य करने वाला होता है।।६३।।

निद्राभरारक्तनिभे भवेतां निद्रागते लोचनपद्मयुग्मे।
रवौ विदेशे वसतिर्जनस्य कलत्रहानिः कतिधार्थनाशः।।६४।।

निद्रा अवस्था में हो तो निद्रा से भरे नेत्रों वाला, विदेशी, स्त्री की हानि और अनेक प्रकार से धन का नाशक होता है।।६४।।

अथ चन्द्रावस्थाफलम्—

जनुःकाले क्षपानाथे शयनं चेदुपागते।
मानी शीतप्रधानश्च कामी वित्तविनाशकः।।६५।।

यदि चंद्रमा शयन अवस्था में हो तो उसकी दशा में जातक मानी, शीतल स्वभाव, कामी और धन का नाश करने वाला होता है।।६५।।

रोगार्दितो मन्दमतिर्विशेषाद्वित्तेन हीनो मनुजः कठोरः।
अकार्यकारी परवित्तहारी क्षपाकरे चेदुपवेशनस्थे।।६६।।

उपवेशन अवस्था में हो तो रोगी, मंदबुद्धि, धनहीन, कठोर, कुकर्म में रत, दूसरे के धन को हरण करने वाला होता है।।६६।।

नेत्रपाणौ क्षपानाथे महारोगी नरो भवेत्।
अनल्पजल्पको धूर्त्तः कुकर्मनिरतः सदा।।६७।।

नेत्रपाणि अवस्था में हो तो महारोगी, व्यर्थ बोलने वाला, धूर्त्त और कुकर्म करने वाला होता है।।६७।।

यदा राकानाथे गतवति विकाशं च जनने
विकाराः संसारे विमलगुणराशेरवनिपात्।
नवाशामाला स्यात्करितुरगलक्ष्म्या परिवृता
विभूषा योषाभिः सुखमनुदिनं तीर्थगमनम्।।६८।।

यदि प्रकाश अवस्था में हो तो संसार में प्रसिद्ध, अपने गुणों से राजा से द्रव्य प्राप्त करने वाला, हाथी, घोड़ा, लक्ष्मी से युक्त, स्त्री से सुखी और तीर्थयात्री होता है।।६८।।

सितेतरे पापरतो निशाकरे विशेषतः क्रूरतरो नरो भवेत्।
सदाक्षिरोगैः परिपीड्यमानो बलक्षपक्षे गमने भयातुरः।।६९।।

यदि चंद्रमा कृष्णपक्ष में गमन अवस्था में हो तो पापी और क्रूर स्वभाव का, नेत्ररोगी और शुक्लपक्ष में भयभीत होता है।।६९।।

विधावागमने मानी पादरोगी नरो भवेत्।
गुप्तपापरतो दीनो मतितोषविवर्जितः।।७०।।

आगमन अवस्था में हो तो मानी, चरण में रोग युक्त, गुप्त पाप करने वाला दीन, मलिन और असंतोषी होता है।।७०।।

सकलजनवदान्यो राजराजेन्द्रमान्यो
रतिपतिसमकान्तिः शान्तिकृत्कामिनीनाम्।
सपदि सदसि याते चारुबिम्बे शशाङ्के
भवति परमरीतिप्रीतिविज्ञो गुणज्ञः।।७१।।

सभावस्था में हो तो सभी मनुष्यों में श्रेष्ठ, राजाओं का मान्य, कामदेव के समान सुंदर, स्त्रियों को सुखदाता, प्रीति के रीति को जाननेवाला होता है।।७१।।

विधावागमने मर्त्यो वाचालो धर्मपूरितः।
कृष्णपक्षे द्विभार्यः स्याद्रोगी दुष्टनरो हठी।।७२।।

आगमन अवस्था मे हो तो वक्ता, धर्मात्मा, कृष्णपक्ष हो तो दो स्त्री वाला, रोगी, दुष्ट और हठी होता है।।७२।।

भोजने जनुषि पूर्णचन्द्रमा मानयानजनतासुखं नृणाम्।
आतनोति वनितासुतासुखं सर्वमेव न सितेतरे शुभम्।।७३।।

भोजन अवस्था में हो तो मान-प्रतिष्ठा, सवारी और सुख से संपन्न, स्त्री-पुत्र से सुखी होता है। कृष्णपक्ष का चन्द्रमा हो तो उक्त फल नहीं होता है।।७३।।

नृत्यलिप्सागते चन्द्रे सबले बलवान्नरः।
गीतज्ञो हि रसज्ञश्च कृष्णो पापकरो भवेत्।।७४।।

नृत्यलिप्सा अवस्था में हो और चन्द्रमा शुक्लपक्ष का हो तो बलवान्, गीतज्ञ, रसज्ञ होता है और कृष्णपक्ष का हो तो पापी होता है।।७४।।

कौतुकभवनं गतवति चन्द्रे भवति नृपत्वं वा धनपत्वम्।
कामकलासु सदा कुशलत्वं वारवधूरतिरमणपटुत्वम्।।७५।।

कौतुक अवस्था में हो तो राजा वा धनी, कामकला में कुशल और स्त्रियों का प्रेमी होता है।।७५।।

निद्रागते जन्मनि मानवानां कलाधरे जीवयुतं महत्त्वम्।
यदाङ्गनासञ्चितवित्तनाशः शिवालये रौति विचित्रमुच्चैः।।७६।।

निद्रा अवस्था में हो, गुरु से युत हो तो प्रतिष्ठावान् होता है। गुरु से युत न हो, चन्द्रमा क्षीण हो तो स्त्री और संचित धन का नाश और सियारिन उसके घर में उच्च स्वर से रोती है।।७६।।

अथ भौमावस्थाफलम्—

शयने वसुधापुत्रे जन्तुरङ्गे व्रणो भवेत्।
बहुना कण्डुना युक्तो दद्रुणा च विशेषतः।।७७।।

शयन अवस्था में भौम हो तो जातक के शरीर में बहुधा व्रण, खुजली और दाद से पीडित रहता है।।७७।।

बली सदा पापरतो नरः स्यादसत्यवादी नितरां प्रगल्भः।
धनेन पूर्णो निजधर्महीनो धरासुतश्चेदुपवेशनस्थः।।७८।।

उपवेशन अवस्था में हो तो पापरत, असत्यभाषी, प्रगल्भ, धन से पूर्ण और अपने धर्म से हीन होता है।।७८।।

यदा भूमिसुतो लग्ने नेत्रपाणिमुपागतः।
दरिद्रता सदा पुंसामन्यभे नगरेशता।।७९।।

यदि नेत्रपाणि अवस्था में लग्न में हो तो सदा दरिद्र, अन्यभाव में हो तो नगरसेठ होता है।।७९।।

प्रकाशो गुणस्यापि वासः प्रकाशे
धराधीशभर्त्तुः सदा मानवृद्धिः।
सुते भूसुते पुत्रकान्तावियोगो
भवेद्राहुणा दारुणो वा निपातः।।८०।।

प्रकाशावस्था में हो तो गुणों का विकास, राजा से सम्मान, यदि पाँचवें भाव में भौम हो तो पुत्र-स्त्री का वियोग, राहु से युक्त हो तो घोर पतन होता है।।८०।।

गमनागमने कुरुतेऽनुदिनं व्रणजालभयं वनिताकलहः।
बहुदद्रुककण्डुभयं बहुधा वसुधातनयो वसुहानिकरः।।८१।।

गमन अवस्था में हो तों सदा यात्रा करने वाला, व्रणभय, स्त्री से कलह, दाद, खुजली का भय और धन की हानि होती है।।८१।।

आगमने गुणशाली मणिमाली वा करालकरवाली।
गजगता रिपुहन्ता परिजनसन्तापहारको भौमे।।८२।।

आगमन अवस्था में हो तो गुणी, मणियों की माला धारण करने वाला, भीषण तलवार से युक्त, हाथी पर चलने वाला, शत्रुनाशक, अपने परिजनों के संताप को हरने वाला होता है।।८२।।

तुङ्गे युद्धकलाकलापकुशलो धर्मध्वजो वित्तपः
कोणे भूमिसुते सभामुपगते विद्याविहीनः पुमान्।
अन्तेऽपत्यकलत्रमित्ररहितः प्रोक्तेतरस्थानगे-
ऽवश्यं राजसभाबुधो बहुधनी मानी च दानी जनः।।८३।।

अपनी उच्चराशि में होकर सभा अवस्था में हो तो युद्धकला में निपुण, धर्मध्वजी, धनी होता है। यदि ५-९ भाव में हो तो विद्या से रहित होता है। १२वें भाव में हो तो पुत्र, स्त्री और मित्र से रहित होता है। इनसे भिन्न स्थानों में हो तो राजसभा का पंडित, बड़ा धनी, मानी और दानी होता है।।८३।।

आगमे भवति भूमिजे जनो धर्मकर्मरहितो गदातुरः।
कर्णशूलगुरुशूलरोगवानेव कातरमतिः कुसङ्गमी।।८४।।

आगम अवस्था में भौम हो तो जातक धर्म-कर्म से हीन, रोगी, कान के दर्द एवं बड़े शूलरोग से पीडित, कातरबुद्धि और दुष्टों की संगति करने वाला होता है।।८४।।

भोजने मिष्टभोजी च जनने सबल कुजे।
नीचकर्मकरो नित्यं मनुजो मानवर्जितः।।८५।।

भोजन अवस्था में हो तो मिठाई खानेवाला, नीचकर्म करने वाला और अप्रतिष्ठित होता है।।८५।।

नृत्यलिप्सागते भूसुते जन्मिनामिन्दिराराशिरायाति भूमीपतेः।
स्वर्णरत्नप्रवालैः सदा मण्डिता वासशाला नराणां भवेत्सर्वदा।।८६।।

नृत्यलिप्सा अवस्था में हो तो राजा के यहाँ से लक्ष्मी की प्राप्ति, सदा सुवर्ण, रत्न, मूंगा आदि से युक्त गृह वाला होता है।।८६।।

कौतुकी भवति कौतुके कुजे मित्रपुत्रपरिपूरितो जनः।
उच्चगे नृपतिगेहमण्डितः पूजितो गुणवरैर्गुणाकरैः।।८७।।

कौतुक अवस्था में हो तो कौतुक करने वाला, मित्र, पुत्र से परिपूर्ण, यदि उच्च में भौम हो तो राजगृह और गुणियों से पूजित होता है।।८७।।

निद्रावस्थां गते भौमे क्रोधी धीधनवर्जितः।
धूर्तो धर्मपरिभ्रष्टो मनुष्यो गदपीडितः।।८८।।

निद्रा अवस्था में भौम हो तो क्रोधी, बुद्धि-धन से हीन, धूर्त, धर्म से भ्रष्ट और रोगी होता है।।८८।।

अथ बुधावस्थाफलम्—

क्षुधातुरो भवेदङ्गे खञ्जो गुञ्जानिभेक्षणः।
अन्यभे लम्पटो धूर्त्तो मनुजः शयने बुधे।।८९।।

बुध शयन अवस्था में होकर लग्न में हो तो भूखा, चलने में असमर्थ, गुंजा के समान (लाल) नेत्रवाला होता है। अन्य भावों में हो तो लंपट, धूर्त्त होता है।।८९।।

शशाङ्कपुत्रे जनुरङ्गगेहे यदोपवेशे गुणराशिपूर्णः।
पापेक्षिते पापयुते दरिद्रो हिते शुभे वित्तसुखी मनुष्यः।।९०।।

उपवेशन अवस्था में बुध लग्न में हो तो गुणी, पापग्रह से युत-दृष्ट हो तो दरिद्र, शुभग्रह वा मित्र से युत-दृष्ट हो तो धनी होता है।।९०।।

विद्याविवेकरहितो हिततोषहीनो
मानी जनो भवति चन्द्रसुतेऽक्षिपाणौ।
प्रजालये सुतकलत्रसुखेन हीनः
कन्याप्रजा नृपतिगेहबुधो वरार्थः।।९१।।

नेत्रपाणि अवस्था में हो तो विद्या-विवेक से रहित, मित्रतारहित, अभिमानी, ५वें भाव में बुध हो तो स्त्री-पुत्र के सुख से रहित, कन्या संततिवाला, राजा से धन प्राप्त करने वाला होता है।।९१।।

दाता दयालुः खलु पुण्यकर्त्ता विकाशने चन्द्रसुते मनुष्यः।
अनेकविद्यार्णवपारगन्ता विवेकपूर्णः खलवर्गहन्ता।।९२।।

प्रकाश अवस्था में हो तो दानी, दयालु, पुण्यात्मा, अनेक विद्याओं को जानने वाला, विवेकी और दुष्टों का दमन करने वाला होता है।।९२।।

गमनागमने भवतो गमने बहुधा वसुधाधिपतेर्भवने।
भवनं च विचित्रमलं रमया विदि नुश्च जनुः समये नितराम्।।९३।।

गमन अवस्था में हो तो राजगृह में जाने वाला, लक्ष्मी से पूर्ण गृहवाला होता है। यही फल आगमन अवस्था का भी होता है।।९३।।

सपदि विदिजनानामुच्चगे जन्मकाले
सदसि धनसमृद्धिः सर्वदा पुण्यवृद्धिः।
धनपतिसमता वा भूपता मन्त्रिता वा
हरिहरपदभक्तिः सात्त्विकी मुक्तिलब्धिः।।९४।।

सभा अवस्था में हो तो धनी, पुण्यकर्त्ता, उच्चराशि में हो तो बहुत धनी, राजा का मंत्री तथा ईश्वर का भक्त और अंत में मुक्ति पानेवाला होता है।।९४।।

आगमे जनुषि जन्मिनां यदा चन्द्रजे भवति हीनसेवया।
अर्थसिद्धिरपि पुत्रयुग्मता बालिका भवति मानदायिका।।९५।।

आगमन अवस्था में हो तो नीच सेवा से धन प्राप्त करने वाला, दो पुत्र और एक कन्या प्रतिष्ठा को देनेवाली होती है।।९५।।

भोजने चन्द्रजे जन्मकाले यदा जन्मिनामर्थहानिः सदा वादतः।
राजभीत्या कृशत्वं चलत्वं मतेरङ्गसङ्गो न जाया न मायासुखम्।।

भोजन अवस्था में हो तो वाद-विवाद (मुकदमे में) में द्रव्य की हानि, राजभय, कृशता, मन की अस्थिरता, शरीर, स्त्री तथा धन का सुख नहीं होता है।।९६।।

नृत्यलिप्सागते चन्द्रजे मानवो मानयानप्रवालव्रजैः संयुतः।
मित्रपुत्रप्रतापैः सभापण्डितः पापभे वारवामारतो लम्पटः।।९७।।

नृत्यलिप्सा अवस्था में हो तो मान, वाहन, रत्न, मित्र, पुत्र और प्रताप से युक्त होता है। पापराशि में हो तो वेश्याप्रेमी और लम्पट होता है।।९७।।

कौतुके चन्द्रजे जन्मकाले नृणामङ्गभे गीतविद्याऽनवद्या भवेत्।
सप्तमे नैधने वारवध्वा रतिः पुण्यभे पुण्ययुक्ता मतिः सद्गतिः।।

कौतुकावस्था में होकर लग्न में हो तो गीतविद्या का पंडित, सातवें आठवें भाव में हो तो वेश्यागामी, ९वें भाव में हो तो पुण्यवान् बुद्धि होती है।।९८।।

निद्राश्रिते चन्द्रसुते न निद्रासुखं सदा व्याधिसमाधियोगः।
सहोत्थवैकल्यमनल्पतापो निजेन वादो धनमाननाशः।।९९।।

निद्रावस्था में हो तो निद्रा से सुख, आधि-व्याधि से पीडित, सहोदर से हीन, अधिक संताप, अपने कुटुंब से विवाद और धन का नाश होता है।।९९।।

अथ गुरोरवस्थाफलम्—

वचसामधिपे तु जनुःसमये शयने बलवानपि हीनरवः।
अतिगौरतनुः खलु दीर्घहनुः सुतरामरिभीतियुतो मनुजः।।१००।।

यदि जन्मसमय में गुरु शयनावस्था में हो तो बलवान् होते हुए भी जातक हीन शब्द (मंदस्वर), अत्यंत गौरवर्ण, लंबी दाढ़ीवाला और निरंतर शत्रु के भय से युक्त होता है।।१००।।

उपवेशं गतवति यदि जीवे वाचालो बहुगर्वपरीतः।
क्षोणीपतिरिपुजनपरितप्तः करजङ्घास्यपदव्रणयुक्तः।।१०१।।

उपवेशन अवस्था में हो तो वक्ता, अत्यंत गर्वीला, राजा और शत्रु से संताप पानेवाला, हाथ, जंघा, मुख और पैर में घाव से युक्त होता है।।१०१।।

नेत्रपाणिं गते देवराजार्चिते रोगयुक्तो वियुक्तो वरार्थश्रिया।
गीतनृत्यप्रियः कामुकः सर्वदा गौरवर्णो विवर्णोद्भवप्रीतियुक्।।

नेत्रपाणि अवस्था में हो तो रोगी, धन से हीन, गाने-नाचने का प्रेमी, कामी, गौरवर्ण, विजातियों से प्रेम करने वाला होता है।।१०२।।

गुणानामानन्द विमलसुखकन्दं वितनुते
सदा तेजःपुञ्जं व्रजपतिनिकुञ्जं प्रतिगमम्।
प्रकाशं चेदुच्चे द्रुतमुपगतो वासवगुरु-
र्गुरुत्वं लोकानां धनपतिसमत्वं तनुभृताम्।।१०३।।

प्रकाश अवस्था में हो तो गुणों का आनंद, स्वच्छ सुख के समूहों का आनंद, तेजस्वी कृष्णचंद्र के स्थान (वृन्दावन) को जाने को उद्यत, यदि गुरु उच्चराशि का हो संसार में मान्यता और कुबेर के समान धनी होता है।।१०३।।

साहसी भवति मानवः सदा मित्रवर्गसुखपूरितो सदा।
पण्डितो विविधवित्तमण्डितो वेदविद्यादि गुरौ गमं गते।।१०४।।

यदि गमनावस्था में हो तो साहसी, मित्रवर्ग के सुख से पूर्ण, पंडित, अनेक सम्पत्तियों से युक्त और वेद को जानने वाला होता है।।१०४।।

आगमने जनता वरजाया यस्य जनुःसमये हरिमाया।
मुञ्चति नालमिहालयमद्धा देवगुरौ परितः परिविद्धा।।१०५।।

आगमन अवस्था में हो तो उसके गृह में जनता, सुंदरी स्त्री और लक्ष्मी (धन) सदा उपस्थित रहता है।।१०५।।

सुरगुरुसमवक्ता शुभ्रयुक्ता फलाढ्यः
सदसि सपदि पूर्णो वित्तमाणिक्ययानैः।
गजतुरगरथाढ्यो देवताधीशपूज्यो
जनुषि विविधविद्यागर्वितो मानवः स्यात्।।१०६।।

सभावस्था में हो तो बृहस्पति के समान वक्ता, सुंदर मोतियों से युक्त, धन, रत्न, हाथी, घोड़ा, रथ आदि सवारियों से युक्त, इन्द्र से पूज्य और अनेक विद्याओं को जानने वाला गर्वयुक्त होता है।।१०६।।

नानावाहनमानयानपटलीसौख्यं गुरावागमे-
भृत्यापत्यकलत्रमित्रजसुखं विद्यानवद्या भवेत्।
क्षोणीपालसमानतानवरतं चातीव हृद्या मतिः
काव्यानन्दरतिः सदा हितगतिः सर्वत्र मानोन्नतिः।।१०७।।

आगमन अवस्था में हो तो संसार में मान-प्रतिष्ठा से युक्त, अनेक वाहन-समूह से युक्त, नौकर, पुत्र, स्त्री, मित्र का सुख, उत्तम विद्या, राजा के समान, अत्यन्त तीक्ष्ण बुद्धिवाला, काव्यप्रेमी, अच्छे मार्ग से चलने वाला और मान-मर्यादा वाला होता है।।१०७।।

भोजने भवति देवगुरौ यस्य तस्य सततं सुभोजनम्।
नैव मुञ्चति रमालयं तदा वाजिवारणरथैश्च मण्डितम्।।१०८।।

भोजनावस्था में हो तो उसे निरंतर सुंदर भोजन मिलता है, कभी भी धन उसका साथ नहीं छोड़ता है। हमेशा घोड़ा, हाथी, रथ आदि सवारियों से घिरा रहता है।।१०८।।

नृत्यलिप्सागते राजमानी धनी देवताधीशवन्द्यः सदा धर्मवित्।
तन्त्रविज्ञो बुधैर्मण्डितः पण्डितः शब्दविद्यानवद्यो हि सद्यो जनः।।

नृत्यलिप्सा अवस्था में हो तो राजा से मान्य, धनी, धर्म को जानने वाला, तंत्रविद्या को जानने वाला, पंडितों से घिरा हुआ श्रेष्ठ पंडित और शब्दशास्त्र (व्याकरण) का पंडित होता है।।१०९।।

कुतूहली सकौतुके महाधनी जनः सदा
निजान्वये च भास्करः कृपाकलाधरः सुखी।
निलिम्पराजपूजिते सुतेन भूनयेन वा
युतो महाबली धराधिपेन्द्रसद्मपण्डितः।।११०।।

कौतुक अवस्था में हो तो कुतूहली, महाधनी, अपने घर में सूर्य के समान तेजस्वी, कृपालु, सुखी, पुत्र, भूमि से युक्त और नीतिमान्, महाबली और राजपंडित होता है।।११०।।

गुरौ निद्रागते यस्य मूर्खता सर्वकर्मणि।
दरिद्रतापरिक्रान्तं भवनं पुण्यवर्जितम्।।१११।।

निद्रावस्था में हो तो वह सभी कर्मों में मूर्खता करने वाला, दरिद्रता से युक्त और पुण्यहीन होता है।।१११।।

अथ भृगोरवस्थाफलम्—

जनो बलीयानपि दन्तरोगी भृगौ महारोषसमन्वितः स्यात्।
धनेन हीनं शयनः प्रयाते वराङ्गनासङ्गमलम्पटश्च।।११२।।

यदि जन्मसमय शुक्र शयन अवस्था में हो तो जातक बलवान् होते हुए भी दंतरोगी, महाक्रोधी, निर्धन और स्त्रीलंपट होता है।।११२।।

यदि भवेदुशना उपवेशने नवमणिव्रजकाञ्चनभूषणैः।
सुखमजस्रमरिक्षय आदरादवनिपादपि मानसमुन्नतिः।।११३।।

उपवेशन अवस्था में हो तो नूतन मणि, सुवर्ण के आभूषणों से सुखी, शत्रुओं का नाश करने वाला, राजा से आदर और प्रतिष्ठा में वृद्धि वाला होता है।।११३।।

नेत्रपाणिं गते लग्नगेहे कवौ सप्तमे मानभे यस्य तस्य ध्रुवम्।
नेत्रपाते निपातो धनानामलं चान्यभे वासशाला विशाला भवेत्।।

नेत्रपाणि अवस्था में शुक्र लग्न, सप्तम वा दशम भाव में हो तो नेत्रहीनता के कारण धन का नाश होता है व अन्य भाव में हो तो बड़ा मकान होता है।।११४।।

स्वालये तुङ्गभे मित्रभे भार्गवे तुङ्गमातङ्गलीलाकलापीजनः।
भूपतेस्तुल्य एव प्रकाशं गते काव्यविद्याकलाकौतुकी गीतवित्।।

प्रकाश अवस्था में हो और अपने उच्च, स्वगृह वा मित्रगृह में हो तो मतवाले हाथी के समान बलवान्, राजा के सदृश धनी, सुखी, काव्य और संगीत में पारंगत होता है।।११५।।

गमने जनने शुक्रे तस्य माता न जीवति।
आधियोगो वियोगश्च जनानामरिभीतितः।।११६।।

गमन अवस्था में हो तो माता नहीं जीती है, मानसिक चिन्ता, बंधुओं का वियोग और शत्रु से भय होता है।।११६।।

आगमनं भृगुपुत्रे गतवति वित्तेश्वरो मनुजः।
सत्तीर्थभ्रमशाली नित्योत्साही करांघ्रिरोगी च।।११७।।

आगमन अवस्था में हो तो महाधनी, तीर्थयात्री, उत्साही और हाथ-पैर के रोग से युक्त होता है।।११७।।

अनायासेनालं सपदि महसा याति सहसा
प्रगल्भत्वं राज्ञः सदसि गुणविज्ञः किल कवौ।
सभायामायाते रिपुनिवहहन्ता धनपतेः
समत्वं वा दाता बलतुरगगन्ता नरवरः।।११८।।

सभावस्था में हो तो अनायास ही अपने ही प्रताप से राजदरबार में प्रगल्भता होती है। स्वयं गुणी, शत्रु का नाश करने वाला, महाधनी दाता और हाथी तथा घोड़े की सवारी पर चलनेवाला होता है।।११८।।

आगमे भार्गवे नागमो जन्मिनामर्थराशेररातेरतीव क्षतिः।
पुत्रपातो निपातो जनानामपि व्याधिभीतिः प्रियाभोगहानिर्भवेत्।।

आगमन अवस्था में हो तो शत्रु द्वारा धन की अधिक हानि, पुत्र, परिजनों का वियोग, रोग का भय और स्त्री के सुख की हानि होती है।।११९।।

क्षुधातुरो व्याधिनिपीडितः स्यादनेकधारातिभयार्दितश्च।
कवौ यदा भोजनगे युवत्या महाधनो पण्डितमण्डितश्च।।१२०।।

भोजन अवस्था में हो तो भूख से व्याकुल, रोग से पीडित और बारम्बार शत्रु से पीडित होता है।।१२०।।

काव्यविद्यानवद्या च हृद्या मतिः सर्वदा नृत्यलिप्सागते भार्गवे।
शङ्खवीणामृदङ्गादिगानध्वनिव्रातनैपुण्यमेतस्य वित्तोन्नतिः।।

नृत्यलिप्सा अवस्था में हो तो काव्य करने वाला, बुद्धिमान्, वीणा, मृदंग आदि बाजों को बजाने में चतुर और धन की उन्नति करने वाला होता है।।१२१।।

कौतुकभवनं गतवति शुक्रे शक्रेशत्वं सदसि महत्त्वम्।
हृद्या विद्या भवति च पुंसः पद्मा निवसति सद्मादरतः।।१२२।।

कौतुक अवस्था में हो तो इन्द्र के समान पराक्रमी, सभा में चतुर, उत्तम विद्या और गृह मे सदा लक्ष्मी के वास वाला होता है।।१२२।।

परसेवारतो नित्यं निद्रामुपगते कवौ।
परनिन्दापरो वीरो वाचालो भ्रमते महीम्।।१२३।।

यदि निद्रावस्था में हो तो दूसरे की सेवा करने वाला, दूसरे की निंदा करने वाला; व्यर्थ बोलनेवाला और व्यर्थ घूमने वाला होता है।।१२३।।

अथ शनेरवस्थाफलम्—

क्षुत्पिपासापरिक्रान्तो विश्रान्तः शयने शनौ।
वयसि प्रथमे रोगी ततो भाग्यवतां वरः।।१२४।।

यदि शनि शयनावस्था में हो तो जातक बाल्यकाल में रोगी, भूख-प्यास से पीडित रहता है, परन्तु वृद्धावस्था में भाग्यवान् होता है।।१२४।।

भानोः सुते चेदुपवेशनस्थे करालकारातिजनानुतप्तः।
अपायशाली खलु दद्रुमाली नराऽभिमानी नृपदण्डयुक्तः।।१२५।।

उपवेशन अवस्था में हो तो प्रबल शत्रु द्वारा पीड़ित, व्यर्थ अपव्यय करने वाला, दाद-खुजली रोग वाला, अभिमानी और राजदंड से दंडित होता है।।१२५।।

नयनपाणिगते नृपनन्दने परमया रमया रमया युतः।
नृपतितो हिततो मतितोषकृद्बहुकलाकलितो विमलोक्तिकृत्।।१२६।।

नेत्रपाणि अवस्था में हो तो परम सुंदरी स्त्री और संपत्ति से युक्त, राजा और मित्रों से उपकृत, अनेक कलाओं का ज्ञाता और प्रिय बोलने वाला होता है।।१२६।।

नानागुणग्रामधनाधिशाली सदा नरो बुद्धिविनोदमाली।
प्रकाशने भानुसुते सुभानुः कृपानुरक्तो हरपादभक्तः।।१२७।।

प्रकाश अवस्था में हो तो अनेक गुण-ग्राम-धन से युक्त, बुद्धिमान्,

कृपालु और ईश्वरभक्त होता है।।१२७।।

महाधनी नन्दननन्दितः स्यादपायकारी रिपुभूमिहारी।
गमे शनौ पण्डितराजभावं धरापतेरायतने प्रयाति।।१२८।।

गमन अवस्था में हो तो महाधनी, पुत्र से युक्त, खर्चीला, शत्रु की भूमि को लेने वाला, राजा का पंडित होता है।।१२८।।

आगमने पदगर्दभयुक्तः पुत्रकलत्रसुखेन विमुक्तः।
भानुसुते भ्रमते भुवि नित्यं दीनमना विजनाश्रयभावम्।।१२९।।

आगमन अवस्था में हो तो स्थान का भय, रोगभय, पुत्र, स्त्री के सुख से रहित, दीन स्थिति में निरंतर घूमने वाला होता है।।१२९।।

रत्नावलीकाञ्चनमौक्तिकानां व्रातेन नित्यंव्रजति प्रमोदम्।
सभागते भानुसुते नितान्तं नयेन पूर्णो मनुजो महौजाः।।१३०।।

सभा अवस्था में हो तो रत्न-सुवर्ण-मुक्ता के समूह से नित्य आनंदित, नीतियुक्त, महातेजस्वी होता है।।१३०।।

आगमे गदसमागमो नृणामब्जबन्धुतनये यदा तदा।
मन्दमेव गमनं धरापतेर्याचनाविरहिता मतिः सदा।।१३१।।

आगमन अवस्था में हो तो रोग युक्त, मंदगति और राजा से लाभ पाने की बुद्धि से हीन होता है।।१३१।।

सङ्गते जनुषि भानुनन्दने भोजनं भवति भोजनं रसैः।
संयुतं नयनमन्दताननां मोहतापपरितापिता मतिः।।१३२।।

भोजन अवस्था में हो तो सरस भोजन का लाभ, नेत्रज्योति मन्द और माया-मोह से मन्द बुद्धि वाला होता है।।१३२।।

नृत्यलिप्सागते मन्दे धर्मात्मा वित्तपूरितः।
राजपूज्यो नरो धीरो महावीरो रणाङ्गणे।।१३३।।

नृत्यलिप्सा अवस्था में हों तो धर्मात्मा, मन से पूर्ण, राजा से पूज्य, धीर, महावीर होता है।।१३३।।

भवति कौतुकभावमुपागते रविसुते वसुधावसुपूरितः।
अतिसुखी सुमुखी सुखपूरितः कवितयामलया कलया नरः।।

कौतुक अवस्था में हों तो भूमि, धन से पूर्ण, अत्यंत सुखी, स्त्रीसुख से पूर्ण और कविता करने वाला होता है।।१३४।।

निद्रागते वासरनाथपुत्रे धनी सदा चारुगुणैरुपेतः।

पराक्रमी चण्डविपक्षहन्ता सुवारकान्तारतिरीतिविज्ञः।।१३५।।

निद्रा अवस्था में हो तो धनी, सुंदर गुणों से युक्त, पराक्रमी, दुष्टों का नाश करने वाला और वेश्यागामी होता है।।१३५।।

अथ राहोरवस्थाफलम्—

यदागमो जन्मनि यस्य राहौ क्लेशाधिकत्वं शयनं प्रयाते।
वृषेऽथ युग्मेऽपि च कन्यकामजे समाजो धनधान्यराशेः।।१३६।।

यदि राहु जन्मसमय में शयन अवस्था में हो तो जातक अधिक क्लेश से युक्त होता है। किन्तु वृष, मिथुन, कन्या या मेष में शयन अवस्था में हो तो धन-धान्य से पूर्ण होता है।।१३६।।

उपवेशनमिह गतवति राहौ दद्रुगदेन जनः परितप्तः।
राजसमाजयुतो बहुमानी वित्तसुखेन सदा रहितः स्यात्।।१३७।।

उपवेशन अवस्था में हो तो दाद से पीडित, राजा से सम्मानित, अभिमानी, धनसुख से हीन होता है।।१३७।।

नेत्रपाणावगौ नेत्रे भवतो रोगपीडिते।
दुष्टव्यालारिचौराणां भयं तस्य धनक्षयः।।१३८।।

नेत्रपाणि अवस्था में हो तो नेत्ररोग से पीडित, दुष्ट सर्प, शत्रु और चोर के भय से मुक्त और धन की हानि होती है।।१३८।।

प्रकाशने शुभासने स्थितिः कृतिः शुभा नृणां
धनोन्नतिर्गुणोन्नतिः सदा विदामगाविह।
धराधिपाधिकारिता यशोलता तता भवे-
न्नवीननीरदाकृतिर्विदेशतो महोन्नतिः।।१३९।।

प्रकाश अवस्था में हो तो सुंदर स्थान, सुंदर यश, धन और गुण की उन्नति, राजा से अधिकार की प्राप्ति, नूतन मेघ के समान आकृति और विदेश में उन्नति पाने वाला होता है।।१३९।।

गमने च यदा राहौ बहुसन्तानवान्नरः।
पण्डितो धनवान्दाता राजपूज्यो नरो भवेत्।।१४०।।

गमन अवस्था में राहु हो तो बहुत संतानवाला, पंडित, धनी, दाता, राजा से पूज्य होता है।।१४०।।

राहावागमने क्रोधी सदा धीधनवर्जितः।
कुटिलः कृपणः कामी नरो भवति सर्वथा।।१४१।।

आगमन अवस्था में हो तो क्रोधी, बुद्धि तथा धन से हीन, कुटिल, कृपण, कामी होता है।।१४१।।

सभागतो यदा राहुः पण्डितः कृपणो नरः।
नानागुणपरिक्रान्तो वित्तसौख्यसमन्वितः।।१४२।।

सभा अवस्था में राहु हो तो पंडित और कृपण, अनेक गुणों से युक्त, धनसुख से युक्त होता है।।१४२।।

चेदगावागमं यस्य याते तदा व्याकुलत्वं सदारातिभीत्या भयम्।
महद्बन्धुवादो जनानां निपातो भवेद्वित्तहानिः शठत्वं कृशत्वम्।।

आगमन अवस्था में हो तो हमेशा शत्रुभय से भयभीत और व्याकुल, बंधुओं से बड़ा विवाद और पतन, धन की हानि, मूर्खता और कृशता होती है।।१४३।।

भोजने भोजनेनालं विकलो मनुजो भवेत्।
मन्दबुद्धिः क्रियाभीरुः स्त्रीपुत्रसुखवर्जितः।।१४४।।

भोजन अवस्था में हो तो भोजन के बिना विकल, मन्दबुद्धि, कार्य में आलसी, स्त्री-पुत्र के सुख से रहित होता है।।१४४।।

नृत्यलिप्सागते राहौ महाव्याधिविवर्धनम्।
नेत्ररोगी रिपोर्भीतिर्धनधर्मक्षयो नृणाम्।।१४५।।

नृत्यलिप्सा अवस्था में हो तो महाव्याधि का भय, नेत्र में रोग, शत्रुभय, धन-धर्म का नाश होता है।।१४५।।

कौतुके च यदा राहौ स्थानहीनो नरो भवेत्।
परदाररतो नित्यं परवित्तापहारकः।।१४६।।

कौतुकावस्था में हो तो स्थानहीन, परस्त्रीगामी और परधन हरण करने वाला होता है।।१४६।।

निद्रावस्थां गते राहौ गुणग्रामयुतो नरः।
कान्तासन्तानवान्धीरो गर्वितो बहुवित्तवान्।।१४७।।

निद्रावस्था में हो तो गुण-समूह से युक्त, स्त्री-संतान से युक्त, धीर, गर्वीला और अधिक धनी होता है।।१४७।।

अथ केतोरवस्थाफलम्—

मेषे वृषेऽथ युग्मे वा कन्यायां शयनं गते।
केतौ धनसमृद्धिः स्यादन्यभे रोगवर्धनम्।।१४८।।

केतु शयनावस्था में मेष, वृष, मिथुन वा कन्या राशि में हो तो जातक धनी होता है। अन्य राशि में हो तो रोग की वृद्धि होती है।।१४८।।

उपवेशं गते केतौ दद्रुरोगविवर्धनम्।
अरिवातनृपव्यालचौरशङ्का समन्ततः।।१४९।।

उपवेशनावस्था में हो तो दादरोग की वृद्धि, शत्रु-वायु-राज-सर्प-चोर का भय होता है।।१४९।।

नेत्रपाणिं गते केतौ नेत्ररोगः प्रजायते।
दुष्टसर्पादिभीतिश्च रिपुराजकुलादपि।।१५०।।

नेत्रपाणि अवस्था में हो तो नेत्र-रोग, दुष्ट सर्प आदि का भय, शत्रु तथा राजकुल से भी भय होता है।।१५०।।

केतौ प्रकाशने संज्ञे धनवान्धार्मिकः सदा।
नित्यं प्रवासी चोत्साही सात्त्विको राजसेवकः।।१५१।।

प्रकाश अवस्था में हो तो धनी, धार्मिक, नित्य परदेशी, उत्साही, सात्त्विक और राजसेवक होता है।।१५१।।

गमेच्छायां भवेत्केतुर्बहुपुत्रो महाधनः।
पण्डितो गुणवान्दाता जायते च नरोत्तमः।।१५२।।

गमन अवस्था में हो तो महाधनी, पंडित, गुणी, दाता होता है।।१५२।।

आगमे च यदा केतुर्नानारोगो धनक्षयः।
दन्तघाती महारोगी पिशुनः परनिन्दकः।।१५३।।

आगमन अवस्था में हो तो अनेक रोग होते हैं, धन का नाश, दंतरोग, महारोग, कृपण, दूसरे की निंदा करने वाला होता है।।१५३।।

सभावस्थां गते केतौ वाचालो बहुगर्वितः।
कृपणो लम्पटश्चैव धूर्त्तविद्याविशारदः।।१५४।।

सभावस्था में हो तो वाचाल, गर्वीला, कृपण, लम्पट और धूर्त्तविद्या का पंडित होता है।।१५४।।

यदागमे भवेत्केतुः केतुः स्यात्पापकर्मणाम्।
बन्धुवादरतो दुष्टो रिपुरोगनिपीडितः।।१५५।।

आगम अवस्था में केतु हो तो पापकर्म करनेवालों में श्रेष्ठ, बंधुओं से विवादरत, दुष्ट और शत्रु तथा रोग से पीडित होता है।।१५५।।

भोजने तु जनो नित्यं क्षुधया परिपीडितः।
दरिद्रो रोगसन्तप्तः केतौ भ्रमति मेदिनीम्।।१५६।।

भोजन अवस्था में हो तो भूख से पीडित, दरिद्र, रोग से संतप्त होकर घूमता है।।१५६।।

नृत्यलिप्सागते केतौ व्याधिना विकलो भवेत्।
बुद्बुदाक्षो दुराधर्षो धूर्तोऽनर्थकरो नरः।।१५७।।

नृत्यलिप्सा अवस्था में हो तो व्याधि से विकल, चकाचोंध नेत्रवाला, किसी के वश में न होने वाला, धूर्त्त और अनर्थकारी होता है।।१५७।।

कौतुकी कौतुके केतौ नटवामारतिप्रियः।
स्थानभ्रष्टो दुराचारी दरिद्रो भ्रमते महीम्।।१५८।।

कौतुक अवस्था में हो तो वेश्या आदि से प्रेम करने वाला, स्थान-भ्रष्ट, दुराचारी और दरिद्र होता है।।१५८।।

निद्रावस्थां गते केतौ धनधान्यसुखं महत्।
नानागुणविनोदेन कालो गच्छति जन्मिनाम्।।१५९।।

निद्रा अवस्था में हो तो धन-धान्य का बड़ा सुख होता है। अनेक गुणों की चर्चा में समय व्यतीत करने वाला होता है।।१५९।।

अथ ग्रहावस्थानुसारेण भावफलम्—

शयने येषु भावेषु यस्य तिष्ठन्ति सद्ग्रहाः।
नित्यं तस्य शुभज्ञानं निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।१६०।।

जन्म समय शयन अवस्था में स्थित शुभ ग्रह जिन-जिन भावों में होता है तो उन-उन भावों के फलों को शुभकारक होता है।।१६०।।

भोजने येषु भावेषु पापास्तिष्ठन्ति सर्वथा।
तदा सर्वविनाशोऽपि नात्र कार्या विचारणा।।१६१।।

एवं भोजन अवस्था में गया हुआ पापग्रह जिन भावों में होता है उनके फलों का नाश करता है।।१६१।।

निद्रायां च यदा पापो जायास्थाने शुभं वदेत्।
यदि पापग्रहैर्दृष्टो न शुभं च कदाचन।।१६२।।

यदि निद्रा अवस्था में पापग्रह सातवें भाव में हो तो शुभ फल, यदि पापग्रह से दृष्ट हो तो अशुभ फल करता है।।१६३।।

सुतस्थाने स्थितः पापो निद्रायां शयनेऽपि वा।
तदा शुभं भवेत्तस्य नात्र कार्या विचारणा।।१६३।।

पाँचवें भाव मे निद्रा या शयन अवस्था में पापग्रह हो तो शुभद नहीं होता है।।१६३।।

मृत्युस्थानस्थितः पापो निद्रायां शयनेऽपि वा।
तदा तस्यापमृत्युः स्याद्राजतः परतस्तथा।।१८४।।

आठवें स्थान में पापग्रह निद्रा या शयन अवस्था में हो तो उसकी अपमृत्यु राजा के द्वारा या शत्रु के द्वारा होती है।।१६४।।

शुभग्रहैर्यदा युक्तः शुभैर्वा यदि वीक्षितः।
तदा तु मरणं तस्य गङ्गायां च विशेषतः।।१६५।।

यदि पापग्रह शुभग्रहों से युक्त वा दृष्ट हो तो गंगा नदी में मृत्यु होती है।।१६५।।

कर्मस्थाने यदा पापः शयने भोजनेऽपि वा।
तदा कर्मविपाकः स्यान्नानादुःखप्रदायकः।।१६६।।

कर्मभाव में पापग्रह शयन या भोजन अवस्था में हो तो कर्म से अनेक दुःख होते हैं।।१६६।।

दशमस्थो निशानाथो कौतुके च प्रकाशने।
तदैव राजयोगः स्यान्निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।१६७।।

दशम स्थान में चन्द्रमा कौतुक या प्रकाशन अवस्था में हो तो राजयोग होता है।।१६७।।

बलाबलविचारेण ज्ञायते च शुभाशुभम्।
एवं क्रमेण बोद्धव्यं सर्वभावेषु बुद्धिमान्।।१६८।।

ग्रहों के बल और निर्बलता को देखकर शुभ-अशुभ फलों को बुद्धिमान् को जानना चाहिए।।१६८।।

इति ग्रहाणामवस्थाध्यायः॥

आयुर्दायाध्यायः

मैत्रेय उवाच–

दरिद्रधनयोगौ च कथितौ प्राङ्महामुने!।
नराणामायुषो ज्ञानं कथं जातं महामुने!।।१।।

मैत्रेय ने कहा– हे मुने! आपने दरिद्र और धन योग को कहा। हे महामुने! मनुष्यों की आयु का ज्ञान कैसे होता है, इसे कहिए।।१।।

पराशर उवाच–

साधु पृष्टं त्वया विप्र! नराणां हितकाम्यया।
आयुर्ज्ञानं प्रवक्ष्यामि दुर्लभं यत् सुरैरपि।।२।।

पराशरजी ने कहा– हे विप्र! मनुष्यों के हित की कामना से तुमने बड़ा ही उत्तम प्रश्न किया है, अब मैं आयुष्य ज्ञान को कहता हूँ, जो कि देवताओं को भी दुर्लभ है।।२।।

अंशायुसाधनम्–

समाहता भांशकलाविलिप्ता गजाभ्रचन्द्रैर्ग्रहपर्ययेभ्यः।
विकर्त्तनैः संविहृतावशेषेऽब्दमासाद्यस्त्रादिकमायुरेवम्।।३।।

ग्रहों की राशि अंश, कला, विकला को १०८ से गुणा कर १२ से भाग देने से शेष वर्ष, मास, दिन, घटी आदि ग्रह की आयु होती है।।३।।

होरादायोप्येवमत्राधिवीर्यं लग्नं चेद्राशितुल्यैस्तथाब्दकैः।
युक्तं शेषं भागपूर्वद्विनिघ्नं बाणैर्भक्तं मासपूर्वैर्युतं तत्।।४।।

इसी प्रकार लग्न की भी आयु होती है, किन्तु लग्न अधिक बली हो तो लग्न राशि के तुल्य वर्ष और शेष अंशादि को २ से गुणाकर ५ से भाग देने से मास आदि आयु होती है।।४।।

अंशायुषि साधने विशेषः–

नीचेऽस्तगेऽर्द्धमरिभे त्रिलवं हरन्ति
नास्तङ्गतौ शनिसितौ व्ययतोऽत्र वामम्।
सर्वार्धकत्रिकचतुर्थशरर्तुभागान्
हरन्त्यशुभदाः शुभदास्तदर्धम् ।।५।।

यदि ग्रह अपनी नीचराशि में हो या अस्त हो तो आयु का आधा, शत्रु की राशि में हो तो आयु का तीसरा भाग कम आयु देता है। किन्तु शनि,

शुक्र अस्त होते हुए भी आधा हानि नहीं करते हैं। बारहवें भाव से विलोम संपूर्ण, आधा, तृतीयांश, चतुर्थांश, पंचमांश और षष्ठांश पापग्रह अपने आयु की हानि करते हैं और शुभग्रह इन्हीं भावों में आधा हानि करते हैं। अर्थात १२वें भाव में पापग्रह हों तो अपने संपूर्ण आयु का नाश, ग्यारहवें भाव में हो तो आधा इत्यादि।।५।।

एकस्थानस्थिताश्चेत्स्युर्द्वात्रयो गगनेचराः।
तदा बलयुतः खेटो हरत्यकेन चापरे।।६।।

एक ही स्थान में दो-तीन ग्रह बैठे हों तो उनमें जो बलवान् हो उसी के आयु का अपहरण होता है।।६।।

वर्गोत्तमस्वर्क्षनवांशदृक्के द्विसंगुणं तत्सकलं विधेयम्।
वक्रोच्चयोस्तत्त्रिगुणं विधेयं द्वित्रिगुणत्वे त्रिगुणं सकृच्च।।७।।

जो ग्रह वर्गोत्तम नवांश, अपनी राशि या नवांश या द्रेष्काण में हो उसके संपूर्ण आयु को दूना कर देना चाहिए। जो वक्री हो या अपनी उच्चराशि में हो तो उसकी आयु को तिगुना कर देना चाहिए। एक ही ग्रह की आयु द्विगुणित और त्रिगुणित करनी हो तो केवल त्रिगुणित ही करना चाहिए।।७।।

अंशायु-साधन का उदाहरण

पृ. २४ में दिये हुए स्पष्ट ग्रहचक्र और जन्माङ्ग को देखना चाहिए। सूर्य ३।१८।२६।३४ है।

३	१८	२६	३४ x १०८
३२४	८६४	६४८	४३२
	१०८	२१६	३२४
३२८	१९४४	२८०८	३६७२ ÷ ६०
६६	४७	६१	

३२ ÷ १२ ३९० ÷ १२ १९९१ ÷ ३० २८६९ ÷ ६०
८ शेष ६ शेष ११ शेष ४९ शेष १२ शेष

= ८।६।११।४९।१२ सूर्यायुर्दाय वर्षादि।

इसी प्रकार से लग्न सहित सभी ग्रहों के अंशायु का साधन करना चाहिए।

असंस्कृतांशायुचक्रम्

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ल.	ग्रहायु
८	०	०	१	३	७	३	६	वर्ण
६	९	९	७	१०	६	६	१	मास
११	१	३	११	७	५	१९	२९	दिन
४९	२४	५०	२२	३७	३३	५७	७	घटी
१२	३६	२४	१२	१२	०	३६	४८	पल

विशेष संस्कार

सूर्य सातवें भाव में है, अतः सूर्यायुवर्षादि ८।६।११।४९।१२ ÷६ = १।५।१।५८।१२ लब्धि वर्षादि हुई। इस लब्धि को सूर्यायु

८।६।११।४९।१२ में

लब्धि– १।५।१।५८।१२ को घटाया तो

= स्पष्टसूर्यायुवर्षादि ७।१।९।५१।० हुए।

चन्द्र में हानि-वृद्धि का कोई योग न होने के कारण स्पष्ट चन्द्रायुवर्षादि ०।९।१।२४।३६ हुए।

भौम अपने नवमांश (मेष) में होने के कारण भौमायु ०।९।३।५०।२४ x २ = ०।१८।७।४०।४८ भौम का स्पष्टायुवर्षादि हुआ।

बुध में हानि वृद्धि के कोई योग न होने से स्पष्ट बुधायुवर्षादि = १।७।११।२२।१२ हुए।

गुरु आठवें भाव में है अतः आधा भाग कम होना चाहिए, अतः गुरु की आयुवर्षादि ३।१०।७।३७।१२ ÷ २ = १।११।३।४८।३६ लब्धि को गुरु आयुर्वर्षादि ३।१०।७।३७।१२ में

लब्धि १।११।३।४८।३६ घटाया तो

शेष १।११।३।४८।३६ वर्षादि हुए।

गुरु अपने द्रेष्काण का है अतः हानिकृत गुरु आयुवर्षादि १।११।३।४८।३६ x२ = २।२२।७।३७।१२ स्पष्ट गुरु की आयु हुई।

शुक्र में कोई हानि-वृद्धि के योग न होने से स्पष्ट शुक्रायुवर्षादि ७।६।५।३३।० हुए।

शनि शत्रु राशि में है, अतः शनि के आयुवर्षादि ३।६।१९।५७।३६ ÷ ३ लब्धि १।२।५।१९।१२ को घटाना चाहिए। अतः शनि की आयुवर्षादि

३।६।१९।५७।३६ में

लब्धि १।२।५।१९।१२ को घटाया तो

स्पष्टशन्यायु २।४।१०।३८।२४ वर्षादि हुए।

लग्नायु को त्रैराशि द्वारा लाना चाहिए, जिसके लिए नीचे दी हुई तालिका से काम लेना चाहिए।

१ राशि वा ३० अंश = १ वर्ष = १२ मास

∴ १ मास = $\frac{३०}{१२}$ = २ $\frac{१}{२}$ अंश

∴ १ अंश = १२ दिन = ६० कला

∴ १ दिन = ५ कला = ६० घटी

∴ १ कला = १२ घटी = ६० विकला

∴ १ घटी = ५ विकला = ६० पल

∴ १ विकला = १२ पल

अर्थात्

१ राशि = १२ मास

१ अंश = १२ दिन

१ कला = १२ घटी

१ विकला = १२ पल

तात्पर्य यह हुआ कि अंश को २ से गुणाकर ५ से भाग देने से लब्धि मास शेष को ६ से गुणा कर देने से दिन होता है। कला को २ से गुणा कर १० से भाग देने से लब्धि दिन शेष को ६ से गुणा देने से घटी होता है। विकला को २ से गुणाकर १० से भाग देने से लब्धि घटी और शेष को ६ से गुणा करने से पल होता है।

लग्न राश्यादि ९।१५।३२।५१ बलवान् है अतः राशितुल्य वर्ष ९ प्राप्त हुआ, शेष अंशादि १५।३२।५१ का त्रैराशिक द्वारा मासादि का साधन–

अंश १५ x २ = ३० ÷ ५ = लब्धि ६ मास, शेष ० x ६ = ०
दिन कला ३२ x २ = ६४ ÷ १० = लब्धि ६ दिन, शेष ४ x ६ = २४
घटी विकला ५१ x २ = १०२ ÷ १० = लब्धि १० घटी, शेष २ x ६ = १२ पल।

राशितुल्य वर्षादि–	९।०।०।०।०
अंशोत्पन्न मासादि–	०।६।०।०।०
कलोत्पन्न दिनादि–	०।०।६।२४।०
विकलोत्पन्न घट्यादि–	०।०।६।१०।१२
योगफल–	९।६।६।३४।१२ में
पूर्वोक्त लग्नायुर्वर्षादि–	६।१।२९।९।३८ को जोड़ा तो
स्पष्ट लग्नायुवर्षादि–	१५।८।५।४२।० हुए।

संस्कृतांशायुचक्रम्

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ल.	ग्रहायु	योग
७	०	०	१	२	७	२	१९	वर्ष	४०
१	९	१८	७	२२	६	४	८	मास	४
९	१	७	१	७	९	१०	९	दिन	२९
५१	२४	४०	२२	३७	३३	३८	४२	घटी	४९
०	३६	४८	१२	२२	०	२४	०	पल	२२

अथ पिण्डायुसाधनम्—

१. तत्रादौ पिण्डायुषि वर्षाणि—

नन्देन्दवो पञ्च यमाः शरक्ष्मा भास्कराश्च पञ्चेन्दवः कुपक्षाः।
नखाश्च रव्यादिमुखग्रहाणां पिण्डायुषोऽब्दाः निजोच्चगानाम्।।

सूर्यादि ग्रह अपनी उच्चराशि में हों तो पिण्डायुसाधन में क्रम से १९, २५, १५, १२, १५, २१, २० सूर्यादि ग्रहों के वर्ष होते हैं।।७।।

निसर्गायुसाधने वर्षादिः—

कृत्येकद्व्यङ्कधृत्यश्च नखपञ्चाशदेव हि।
सूर्यादीनां क्रमादब्दाः स्वोच्चे नैसर्गिके द्विज।।८।।

सूर्यादि ग्रह अपनी उच्चराशि में हो तो क्रम से २०, १, २, ९, १८, २०, ५० वर्ष नैसर्गिक आयु में होते हैं।।८।।

पिण्ड-निसर्गायुसाधनम्—

स्वोच्चशुद्धो ग्रहः शोध्यः षड्भादूनो भमण्डलात्।
षड्भाधिको यथास्थित एव लिप्तानिघ्नो निजाब्दैः।।९।।

जिस ग्रह की पिण्डायु या निसर्गायु साधन करना हो उसके राश्यादि को उसके परमोच्च राश्यादि में घटाकर शेष ६ राशि से न्यून हो तो उसे १२ राशि में घटावे। यदि शेष ६ राशि से अधिक हो तो राश्यादि की

कला बनाकर उसे ग्रहवष्संख्या (पिण्डायुसाधन में पिण्डायु ग्रहवर्ष, निसर्गायुसाधन में नैसर्गिक ग्रहवर्ष) से गुणा कर।।९।।

खाभ्ररसभूनेत्रैर्भक्ते प्राप्यते तु यत्फलम्।
वर्षमासदिनादिकं तद्धि पिण्डायुः स्फुटं भवेत्।
एवं क्रियानिसर्गेऽपि हानिवृद्धिस्तु पूर्ववत्।।१०।।

२१६०० से भाग देने से लब्धि वर्ष, मास, दिनादि पिण्डायु या निसर्गायु होते हैं।।१०।।

पिण्डायु-साधन का उदाहरण—

सूर्योच्चांशराश्यादि = ०।१०।०।० में
सूर्य = ३।१८।२६।३४ को घटाया तो
उच्चांशान्तर ८।१२।३३।२६ हुआ।

नोट— यह ६ राशि से अधिक हैं अतः १२ राशि में नहीं घटाया गया। इसी प्रकार प्रत्येक ग्रह का चक्र शुद्ध उच्चांशान्तरचक्र नीचे लिखा है।

ग्रहोच्चांशान्तरचक्रम्—

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ग्रह
८	१०	११	१०	१०	९	११	राशि
२१	१०	५	२३	२२	२१	१८	अंश
३३	२९	२७	२२	९	९६	११	कला
२६	१३	५२	५९	६	५५	८	विकला

सूर्यपिण्डायुसाधनम्—

उदाहरण— परमोच्चांशान्तर ८।२१।३३।२६ पिण्डायु वर्ष १९
राशि ८ x १९ = मास १५२ ÷ १२ = वर्षादि १२।८
अंश २१ x १९ = दिन ३९९ ÷ ३० = मासादि १३।९
कला ३३ x १९ = घटी ६२७ ÷ ६० = दिनादि १०।२७
विकला २६ x १९ = पल ४९४ ÷ ६० = घट्यादि ८।१४
वर्षादि = १२।८।०।०।०
मासादि = ०।१३।९।०।०
दिनादि = ०।०।१०।२७।०
घट्यादि = ०।०।०।८।१४

सूर्यायुर्वर्षादि = १२।२१।१९।३५।१४ इस प्रकार प्रत्येक ग्रहों का पिंडायु एवं निसर्गायु साधन कर असंस्कृतपिण्डायु चक्र और असंस्कृतनिसर्गायु चक्र दिया जाता है।

असंस्कृतपिण्डायुचक्रम्—

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ग्रहायु
१२	२०	१३	१०	१२	१७	१८	वर्ष
२१	१८	११	९	१७	०	१६	मास
१९	२२	२१	१०	२	१०	३	दिन
३५	१०	५८	३५	१६	५५	४२	घटी
२४	२५	०	४८	३०	१५	४०	पल

असंस्कृतनिसर्गायुचक्रम्—

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ग्रहायु
१३	०	१	८	१५	१५	४६	वर्ष
१८	१०	१०	१	१३	१४	१०	मास
११	१०	१०	०	११	१८	९	दिन
२६	२९	५५	२०	४२	५८	१६	घटी
०	१३	५४	५१	४८	२०	४०	पल

विशेष— सूर्य सातवें भाव में है, अतः सूर्य का पिंडायुवर्षादि २१।२१।१९।३५।२४ ÷ ६ = २।३।१८।१५।५४ लब्धि वर्षादि हुई। इस लब्धि को सूर्यायु—

१२।२१।१९।३५।२४ में

लब्धि २।३।१८।१५।५४ को घटाया तो

शेष स्पष्टसूर्यायुवर्षादि १०।१८।१।१९।३० हुए।

चन्द्र में हानि-वृद्धि का कोई लक्षण न होने से स्पष्ट चन्द्रायुवर्षादि २०।१८।२२।१०।२५ हुए।

भौम अपने नवांश में हैं, अतः भौमायु १३।११।२१।५८।० x २ = २७।११।१३।५६।० भौमायु हुआ।

बुध में हानि-वृद्धि का कोई योग न होने से बुधायुवर्षादि १०।९।१०।३५।४८ हुआ।

गुरु आठवें भाव में है, गुरु से आयु का आधा भाग घटाकर शेष को दूना करने से गुरु के आयु में से घटाकर शेष को दूना करने से गुरु की स्पष्टायु वर्षादि ६।८।१८।१५ हुई।

शुक्र में कोई हानि-वृद्धि का योग न होने से शुक्रायुवर्षादि १७।०।१०।५५।१५ हुई।

शनि शत्रुराशि में है, शनि के आयु का तृतीय भाग १८।१६।३।४२।४० ÷ ३ = ६।५।११।१४।१३ को शन्यायु में घटाने से शेष १२।१०।२२।२८।२७ शनि की स्पष्टायु हुई।

संस्कृतपिण्डायुचक्रम्—

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ल.	योग	ग्रहायु
१०	२०	२७	१०	६	१७	१२	४	११२	वर्ष
१८	१८	११	९	८	०	१०	७	३	मास
१	२२	१३	१०	१८	१०	२२	२९	८	दिन
१९	१०	५६	३५	८	५५	२८	७	३३	घटी
३०	२५	०	४८	१५	१५	२७	४८	२८	पल

निर्सगायु में विशेष— सूर्य सातवें भाव में है, अतः नैसर्गिक सूर्यायु का छठा भाग घटाने से स्पष्ट सूर्यायु नैसर्गिक वर्षादि ९।७।१।६।१५ हुई।

चन्द्र में कोई हानि-वृद्धि नहीं हुई।

भौम अपने नवांश में है, अतः भौम की आयु दूनी हुई = २।२०।२१।५१।४८

बुध में कोई हानि-वृद्धि नहीं हुई।

गुरु आठवें भाव में है, अतः गुरु के आयु का आधा भाग घटाना चाहिए और अपने द्रेष्काण में है अतः दूना करना चाहिए। इसलिए गुरु की आयु ज्यों की त्यों रही।

शुक्र की आयु में कोई संस्कार नहीं है।

शनि शत्रु राशि में है, अतः शन्यायु का तीसरा भाग उसमें घटाने से शनि की आयु = ८।७।४।५८।५८ हुई।

संस्कृतनिसर्गायुचक्रम्—

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ल.	योग	ग्रहायु
९	०	२	८	१५	१५	८	४	६७	वर्ष
७	१०	२०	१	१३	१४	७	७	११	मास
३२	१०	२१	०	११	१८	४	२९	१०	दिन
२८	२९	५५	२०	४३	५८	५८	७	३	घटी
१५	१३	४८	५१	४८	२०	५८	४८	१	पल

अत्र लग्नायुसाधनम्—

राशीन्विहाय लग्नस्य लिप्तीकृत्य तथा द्विज।
शतद्वयेन भक्ते च फलं वर्षादिकं च यत्।
सबले लग्ने फलं त्वत्र पूर्वोक्तं नैवमत्र हि।।११।।

यहाँ बलवान् लग्न हो तो लग्न की राशि को त्याग कर अंशादि को कला बनाकर दो सौ से भाग देने से जो वर्षादि फल होता है, यही लग्न की आयु यहाँ होती है।।११।।

विशेषः—

क्रूरे लग्नस्थिते विद्वन् लग्नस्यांशसंख्यया।
निघ्नं क्रूरग्रहस्यायुः भक्ताष्टोत्तरशतेन च।
लब्धं वर्षादिकं शोध्यं ग्रहस्यायुः स्फुटो भवेत्।।१२।।

यदि लग्न में क्रूरग्रह हो तो लग्न की नवमांश संख्या से उस ग्रह की आयु को गुणाकर १०८ से भाग देने से लब्ध वर्षादि को उस ग्रह की आयु में घटाने से शेष ग्रह की स्पष्टायु होती है।।१२।।

उदाहरण— जन्मलग्न राश्यादि ९।१५।३२।५१ है, राशि का त्याग कर अंशादि १५।३२।५१ का विकला बनाया तो अंश १५ x ६०+३२=९३२ कला हुई। ९३२ x ६० + ५१ = ५५९७१ विकला हुई। इसमें १२००० से भाग देने से लब्धि ४ (वर्ष) शेष ७९७१ x १२ = ९५६५२ ÷ १२००० = लब्धि ७ मास, शेष ११६१२ x ३० = ४३४९५६ ÷ १२००० = लब्धि २९ दिन, शेष १४६० x ६० = ९३६०० ÷ १२००० = लब्धि ७ घटी, शेष ९६०० x ६० = ५७६००० ÷ १२००० लब्धि ४८ पल लग्नायु प्राप्त हुई।

आयुग्रहणे विशेषः—

अंशायुः सबले लग्ने सूर्ये ग्राह्यं तु पैण्डकम्।
चन्द्रे नैसर्गिकं ग्राह्यं बलसाम्ये द्वयोस्तथा।।१३।।

यदि लग्न बली हो तो अंशायु ही मुख्य आयु होती है। सूर्य बली हो तो पिण्डायु और चन्द्रमा बली हो तो निसर्गायु प्रधान आयु होती है।।१३।।

योगार्धमायुस्तत्र स्यादिति प्राज्ञैर्विनिश्चितम्।।
त्रयोऽप्येते बलाढ्यश्चेत्सर्वेषां योगत्र्यंशकः।
आयुर्ग्राह्यं तु सर्वेषामिति प्रोक्तं पुरातनैः।।१४।।

इनमें दो समान बली हों तो दोनों के आयु का योगार्ध मुख्य आयु होती है। यदि तीनों समान बली हों तो तीनों के आययोग का तृतीयांश स्पष्टायु होती है।।१४।।

अथ नानाजातीयमायुः—

गृध्रोलूकशुकध्वाङ्क्षसर्पाणां च सहस्रकम्।
श्येनवानरभल्लूकमण्डूकानां शतत्रयम्।।१५।।

गिद्ध-उल्लू-शुक-कौआ और सर्पों की एक हजार वर्ष की आयु होती है। बटेर-वानर-भालू-मेढक की तीन सौ वर्ष की आयु होती है।।१५।।

पञ्चाशदुत्तरशतं राक्षसानां प्रकीर्त्तितम्।
नराणां कुञ्जराणां च विंशोत्तरशतं विदुः।।१६।।

राक्षसों की १५० वर्ष की आयु होती है। मनुष्य और हाथियों की १२० वर्ष की आयु होती है।।१६।।

द्वात्रिंशदायुरश्वानां पञ्चविंशत् खरोष्ट्रयोः।
वृषमाहिषयोश्चैव चतुर्विंशतिवत्सराः।।१७।।

घोड़ों की ३२ वर्ष की आयु होती है। गधा और ऊँट की २५ वर्ष की आयु होती है। बैल और भैंसा की आयु २४ वर्ष की होती है।।१७।।

विंशत्यायुर्मयूराणां छागादीनां च षोडश।
हंसस्य पञ्चनवकं पिकानां द्वादशाब्दकाः।।१८।।

मोर की २० वर्ष की आयु होती है। बकरा आदि की १६ वर्ष की आयु होती है। हंस की १४ वर्ष की आयु होती है। कोकिल और कबूतर की १२ वर्ष की आयु होती है।।१८।।

तद्वत्पारावतानाञ्च कुक्कुटस्याष्टवत्सराः।
बुद्बुदानामण्डजानां सप्तसङ्ख्याः समाःस्मृताः।।१९।।

मुर्गों की ८ वर्ष आयु होती है। बुलबुलों की ७ वर्ष की आयु होती है।।१९।।

अथान्यत्सम्प्रवक्ष्यामि आयुर्दायगतिं तव।
यस्य विज्ञानमात्रेण कालज्ञो भवति ध्रुवम्।।२०।।

अन्य रीति से आयु जानने की रीति कह रहा हूँ, जिसके जान लेने से मनुष्य कालज्ञ हो जाता है।।२०।।

लग्नेशाष्टमेशाभ्यां योगैकः कथितो द्विज।
द्वितीयं शनिचन्द्राभ्यां चिन्तनीयं सदा द्विज।।२१।।

प्रथम लग्नेश और अष्टमेश से १ योग। द्वितीय शनि और चन्द्रमा से।।२१।।

होरालग्नलग्नाभ्यां तृतीयं च विचिन्तयेत्।
लग्नेन्दूमदने वापि चिन्तयेल्लग्नचन्द्रतः।।२२।।

तथा तीसरा होरालग्न और जन्मलग्न से होता है। दूसरे योग में यदि चन्द्रमा जन्मलग्न या सातवें भाव में हो तो लग्न और चन्द्रमा से अन्यथा शनि और चन्द्रमा से जो आयु आवे उसे लेना चाहिए।।२२।।

चरे चरे स्थिते द्वौ च लग्नरन्ध्राधिपौ यदि।
दीर्घायुर्योगो विज्ञेयो निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।२३।।

यदि लग्नेश और अष्टमेश दोनों चर राशि में हों।।२३।।

स्थिरर्क्षे लग्ननाथो हि लयेशे द्वन्द्वभे स्थिते।
तदा दीर्घायुषो योगः सम्भवेद्गणिताग्रणीः।।२४।।

अथवा एक स्थिर और दूसरा द्विस्वभाव राशि में हो तो दीर्घायु योग होता है।।२४।।

लग्नाधीशे स्थिते द्वन्द्वे स्थिरे रन्ध्राधिपे स्थिते।
दीर्घायुर्योगो विज्ञेयो निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।२५।।

यदि लग्नेश और अष्टमेश में से एक चर राशि में और दूसरा स्थिर राशि में हो तो मध्यायु योग होता है।।२५।।

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि मध्यायुर्योगमुत्तमम्।
चरे लग्नाधिपे विप्र स्थिरे रन्ध्रपतिर्यदि।।२६।।

अथवा दोनों द्विस्वभाव राशि में हों तो भी मध्यायु योग होता है।।२६।।

तदा मध्यायुषं विद्याद् द्वौ द्वन्द्वे मध्यमायुषः।
अधुनाल्पायुयोगं च तवाग्रे कथयाम्यहम्।।२७।।

लग्नेश और अष्टमेश दोनों में से एक चर राशि में तथा दूसरा द्विस्वभाव राशि में हो तो अल्पायु योग होता है।।२७।।

लग्नाधीशश्चरे यस्य द्वन्द्वभे रन्ध्रनायके।
तस्याल्पायुर्महाप्राज्ञ निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।२८।।

अथवा लग्नेश और अष्टमेश दोनों स्थिर राशि में ही हों तो भी अल्पायु योग होता है।।२८।।

स्थिरे स्थिरे स्थितौ द्वौ चेल्लग्नरन्ध्राधिपौ द्विज।
अल्पायुस्तत्र विज्ञेयं सृष्टिकर्त्रा प्रणोदितम्।।२९।।

इसी प्रकार शनि-चन्द्रमा या लग्न-चन्द्रमा तथा होरालग्न और जन्मलग्न से भी आयु लाना चाहिए।।२९।।

एकरूपत्वयोगौ द्वौ तृतीयो भिन्नरूपकः।
द्वयोर्योगेन सङ्ग्राह्यं न ग्राह्यं चैकरूपतः।।३०।।

यदि तीनों प्रकार में दो प्रकार से एक आयु और तीसरे से भिन्नायु आती हो तो दो प्रकार से आई हुई आयु को ही लेना चाहिए।।३०।।

योगत्रयं त्रयं रूपं भिन्नं भिन्नं भवेद्द्विज।
होरालग्नविलग्नाभ्यां प्राप्तायुर्योगनिश्चितम्।।३१।।

यदि तीनों प्रकार से भिन्न-भिन्न आयु आती हो तो होरालग्न और लग्न से जो आयु आती हो उसे ही लेना चाहिए।।३१।।

अथाहं सम्प्रवक्ष्यामि आयुर्वर्षाणि भो द्विज।
यस्य ज्ञानं विना विद्वन् स्पष्टायुर्नोपलभ्यते।।३२।।

हे द्विज! अब मैं आयु के वर्गों को कह रहा हूँ, जिसके ज्ञान के बिना आयु की स्पष्टता नहीं होती है।।३२।।

रसाङ्कैर्गजाभ्रेन्दुभिः शून्यमासैस्त्रिधा दीर्घमायुः कलौ सम्प्रदिष्टम्।
चतुःषष्टिबाह्वद्र्यशीति प्रमाणैर्मतं मध्यमायुर्नृणां वत्सरैः स्यात्।।

९०, १०८, १२० वर्ष ये तीन प्रकार की दीर्घायु कलियुग में होती है। ६४, ७२, ८० वर्ष की मध्यमायु होती है।।३३।।

तथा द्वित्रिषड्वह्निशून्याब्धिवर्षै-
र्भवेदल्पमायुर्नराणां युगान्ते।।३४।।

३२, ३६, ३० वर्ष की अल्पायु का प्रमाण कहा है।।३४।।

योगत्रयेण दीर्घायुस्तदा ग्राह्यं खवेदकम्।
योगद्वयेन सम्प्राप्ते ग्राह्यं षट्त्रिंशताब्दकम्।।३५।।

यदि ३ प्रकार से दीर्घायु आये तो ४० वर्ष का खंड और दो प्रकार से दीर्घायु हो तो ३६ वर्ष का।।३५।।

योगैकेन सदा ग्राह्यं द्वात्रिंशन्मिताब्दकम्।
एवमल्पायुयोगे तु प्रोक्ताच्च विपरीतकम्।।३६।।

और एक प्रकार से दीर्घायु हो तो ३२ वर्ष का खंड लेना चाहिए। इसी प्रकार अल्पायु योग में इसके विपरीत यानि ३ प्रकार से अल्पायु हो तो ३२ वर्ष, दो प्रकार से अल्पायु हो तो ३६ और एक प्रकार से अल्पायु हो तो ४० वर्ष का खंड स्पष्टायु साधन में लेना चाहिए।।३६।।

तथा लग्नेशाष्टमेशाभ्यां मध्यमायुः समागते।
ग्राह्यं चत्वारिंशन्मितं वर्षं च द्विजसत्तम।।३७।।

इसी प्रकार लग्नेश, अष्टमेश से मध्यमायु हो तो ४० वर्ष।।३७।।

लग्नेन्दुना वा चन्द्रमन्दाभ्यां मध्यायुः समागते।
खण्डं ग्राह्यं तदा विद्वन् षट्त्रिंशन्मिताब्दकम्।।३८।।

लग्नचन्द्र वा शनिचन्द्र से मध्यमायु हो तो ३६ वर्ष।।३८।।

होरालग्नलग्नाभ्यां मध्यमायुः समागते।
ग्राह्यं तत्र सदा विप्र द्वाशिंन्मिताब्दकम्।।३९।।

और होरालग्न, जन्मलग्न से मध्यमायु हो तो ३२ वर्ष का खंड लेना चाहिए।।३९।।

अथायुर्बोधकचक्रम्—

दीर्घायुः चरे लग्नेशः चरेऽष्टमेशः	दीर्घायुः स्थिरे लग्नेशः द्विस्वभावेऽष्टमेशः	दीर्घायुः द्विस्वभावे लग्नेशः स्थिरेऽष्टमेशः
मध्यायुः चरे लग्नेशः स्थिरेऽष्टमेशः	मध्यायुः स्थिरे लग्नेशः चरेऽष्टमेशः	मध्यायुः द्विस्वभावे लग्नेशः द्विस्वभावेऽष्टमेशः
हीनायुः चरे लग्नेशः द्विस्वभावेऽष्टमेशः	हीनायुः स्थिरे लग्नेशः स्थिरेऽष्टमेशः	हीनायुः द्विस्वभावे लग्नेशः चरेऽष्टमेशः

अथायुष्खण्डबोधकचक्रम्—

आयुः	प्रकारत्रयेण	खण्डम्	वर्षम्
दीर्घायुः	प्रकारत्रयेण	१	१२०
	प्रकारद्वयेन	२	१०८
	प्रकारैकेन	३	९६
मध्यायुः	प्रकारत्रयेण	१	८०
	प्रकारद्वयेन	२	७२
	प्रकारैकेन	३	६४
अल्पायुः	प्रकारत्रयेण	१	४०
	प्रकारद्वयेन	२	३६
	प्रकारैकेन	३	३२

अथ स्पष्टायुःसाधनप्रकारः—

योगकारकखेटानां राशीन्त्यक्त्वांशकस्य च।
योगं कृत्वा भजेत्तत्र योगकारकसंख्यया।।४०।।

योगकारक ग्रहों की राशियों को छोड़कर शेष अंशादिकों का योग करके योगकारक ग्रहों की संख्या (१,२,३ आदि) से भाग देवै।।४०।।

लब्धघ्नं प्राप्तखण्डेन त्रिंशता तु विभाजितम्।
लब्धं वर्षादिकं यच्च प्राप्तखण्डे तु शोधयेत्।।४१।।

भाग देने से लब्धि को आयु के अनुसार अल्पायु के प्राप्त खंड से गुणाकर गुणन फल में ३० का भाग देने से लब्ध वर्षादि को दीर्घायु वा मध्यायु के प्राप्त खंडों में घटादे।।४१।।

शेषं वर्षादिकमत्र स्पष्टायुः परिकीर्त्तितम्।
एवं स्पष्टक्रिया प्रोक्ता ब्रह्मणा शङ्करादिभिः।।४२।।

उदाहरण— पृ.२५ के जन्माङ्गचक्र और आयुर्बोधक चक्र पृ. २५६ के अनुसार—

लग्नेश शनि स्थिर (८) में }
अष्टमेश सूर्य चर (४) में } मध्यायु

शनि स्थिर (८) में }
चन्द्र द्विस्वभाव (३) में } दीर्घायु

होरालग्न पृ. (२४) स्थिर (२) में
जन्मलग्न चर (१०) में } मध्यायु

पृ. २५५ श्लोक ३३ के अनुसार दो प्रकार से मध्यायु तथा आयुखण्ड-बोधक चक्र (पृ. २५७) के अनुसार मध्यायु का दूसरा खण्ड (७२) वर्ष प्राप्त हुआ।

लग्नेश शनि	१।४८।५।२	योगकर्ता ४ हैं अतः चारों के अंशादि का योग किया गया है।
अष्टमेश सूर्य	१८।२६।३४	
होरा लग्न	१५।०।०	
जन्म लग्न	१५।२३।३७	

५०।३८।३ ÷ ४ := १२।३९।३०।४५

अंशादि १२।३९।३०।४५ x ३६ (द्वितीय खण्ड पृ. २५७)

३०) ४५५।४२।२७।० (१५ (वर्ष)
३०
१५५
१५०
५ x १२
६०
४२
१०२ (३ (मास)
९०
१२ x ३०
३६०
२७
३८७ (१२ (दिन)
३०
८७
६०
२७ x ६०
१६२०
०
१६२० (५४ (घटी)
१५०
१२०
१२०
x

लब्धि वर्षादि = १५।३।१३।५४।०

मध्यायु द्वितीय खण्ड वर्षादि ७२।०।०।०।० में
लब्धि वर्षादि = १५।३।१२।५४।० घटाने से
स्पष्टायुर्वर्षादि = ५६।८।१७।६।०

शेष स्पष्टायु होती है, शेष स्पष्ट है।।४२।।

तत्र विशेषः—

अथ योगत्रये विप्र शनियोगं करोति चेत्।
एकएकादशह्रासः कक्ष्याह्रासस्त्वयं क्रमात्।।४३।।

हे विप्र! तीनों प्रकार के आयु के योगों में यदि शनि योग करता हो तो क्रम से कक्ष्या का ह्रास होता है।।४३।।

ततः फलविशेषार्थं गुणदोषौ वदाम्यहम्।
गुणैः प्रपूरितः सौरिः कक्ष्यावृद्धिं करोति च।।४४।।

अतः उसके गुण-दोष को कह रहा हूँ। गुणों से युक्त शनि कक्ष्या वृद्धि को करता है।।४४।।

दोषयुक्ता भवेद्धानिस्ताभ्यां निर्णय उच्यते।
अत्यल्पायुर्भवेदल्पमल्पान्मध्यं प्रजायते।।४५।।

यदि दोषयुक्त हो तो कक्ष्या की हानि करता है अर्थात् अत्यंत अल्पायु हो तो मध्यायु।।४५।।

मध्यमाज्जायते दीर्घं कक्ष्यावृद्धेश्च लक्षणम्।
एवं नीचारिगः सौरिः पापदृष्टिसमन्वितः।।४६।।

मध्यायु हो तो दीर्घायु करता है। इसी प्रकार शनि अपनी नीच राशि, शत्रु की राशि में पापग्रह से दृष्ट और युत हो तो।।४६।।

कक्ष्याह्रासकृतो विप्र त्रिभागेनायुहानिकृत्।
दीर्घाद्भवति मध्यायुर्मध्यादल्पायुरेव च।।४७।।

कक्ष्या की हानि करता है। अर्थात् दीर्घायु हो तो मध्यायु, मध्यायु हो तो अल्पायु।।४७।।

अल्पादत्यल्पकं याति बाल्ये निधनसम्भवः।
लग्नेशे वापि होरेशे केवलं शनिसंयुते।।४८।।

और अल्पायु हो तो अत्यल्पायु होता है तथा बाल्यकाल में ही मरण हो जाता है। लग्नेश वा होरेश केवल शनि से युत हो।।४८।।

पापर्क्षे पापयुक्ते वा पापदृष्टिसमन्विते।
कक्ष्याह्रासं न कुर्वीत विना नीचारिगे द्विज।।४९।।

पापग्रह की राशि में वा पापयुक्त हो, पापग्रह से देखा जाता हो, यदि नीच राशि या शत्रु की राशि में न हो तो कक्ष्या का ह्रास नहीं करता है।।४९।।

एवं तुङ्गादिरहितः कक्ष्यावृद्धिं न कारयेत्।
शुभर्क्षे शुभसंयुक्ते शुभदृष्टौ च तुङ्गगे।।५०।।

इसी प्रकार उच्चादि से रहित हो तो कक्ष्यावृद्धि को नहीं करता है। यदि शनि शुभ ग्रह की राशि में शुभ ग्रह से युक्त और शुभ ग्रह से दृष्ट होकर अपने उच्च में हो।।५०।।

पापयोगेन रहिते कक्ष्यावृद्धिकरः शनिः।
एवं नीचादिदोषेण कक्ष्याह्रासः प्रजायते।।५१।।

और पापग्रह के योग से रहित हो तो कक्ष्या की वृद्धि करता है। इसी प्रकार नीचादि दोष के कारण कक्ष्या का ह्रास होता है।।५१।।

गुरुणा स्थानसम्बन्धेऽप्येवं वृद्धिर्भविष्यति।
लग्ने वा सप्तमे वापि तुङ्गादिगुणसंयुते।।५२।।

इसी प्रकार गुरु भी स्थान संबंध से आयु में वृद्धि करता है। यदि गुरु लग्न में वा सप्तम में उच्चादि गुणों से युक्त हो।।५२।।

शुभर्क्षे शुभदृग्युक्ते कक्ष्यावृद्धिकरो गुरुः।
जीवने संशयो यस्य अल्पायुर्वृद्धिकारकम्।।५३।।

शुभ राशि में शुभ ग्रह से दृष्ट और युक्त हो तो कक्ष्या की वृद्धि करता है।।५३।।

अल्पायुषि च मध्यायुर्मध्याप्ते दीर्घमायुषि।
एवं भेदानुभेदेन कथयामि तवाग्रतः।।५४।।

अल्पायु हो तो मध्यायु, मध्यायु हो तो दीर्घायु को करता है। इस प्रकार भेदानुभेद से मैंने ह्रास-वृद्धि तुमसे कहा।।५४।।

अथ अमितायुर्योगः—

गुरुचन्द्रौ च कर्काङ्गे बुधशुक्रौ च केन्द्रगौ।
शेषे लाभत्रिषष्ठस्थश्चेदमितायुस्तदा भवेत्।।५५।।

जन्मलग्न कर्क हो, उसमें गुरु चन्द्रमा हों, बुध-शुक्र केन्द्र में हों और शेष ग्रह ११।३।६ भाव में हों तो अमित आयु होती है।।५५।।

अथ मुनितुल्यायुर्योगः—

देवलोकांशके मन्दे भौमे पारावतांशके।
गुरौ सिंहासने लग्ने जातो मुनिसमो भवेत्।।५६।।

देवलोकांश में शनि हो, भौम पारावतांश में हो और गुरु सिंहासनांश में होकर लग्न में हो तो मुनि समान आयुवाला होता है।।५६।।

अथ युगान्तायुर्योगः—

गोपुरांशे गुरौ केन्द्रे शुक्रे पारावतांशके।
त्रिकोणे कर्कटे लग्ने युगान्तं स तु जीवति।।५७।।

गोपुरांश में होकर गुरु केन्द्र में हो, शुक्र पारावतांश में होकर त्रिकोण में हो और कर्क-लग्न में जन्म हो तो युगान्त पर्यन्त आयु होती है।।५७।।

अथ पूर्णायुर्योगः—

चतुष्टये शुभैर्युक्ते लग्नेशे शुभसंयुते।
गुरुणा दृष्टिसंयोगे पूर्णमायुस्तु जायते।।५८।।

यदि केन्द्र में शुभ ग्रह हों, लग्नेश शुभग्रह से युक्त हो और गुरु से देखा जाता हो तो दीर्घायु होता है।।५८।।

केन्द्रस्थिते च लग्नेशे गुरुशुक्रसमन्विते।
ताभ्यां निरीक्षिते वापि पूर्णमायुर्विनिर्दिशेत्।।५९।।

लग्नेश केन्द्र में हो और गुरु-शुक्र से युत वा दृष्ट हो तो पूर्णायु होती है।।५९।।

स्वोच्चस्थितैस्त्रिभिः खेटैर्लग्नरन्ध्रेशसंयुतैः।
रन्ध्रे पापविहीने च दीर्घमायुः समादिशेत्।।६०।।

कोई तीन ग्रह अपनी उच्च राशि में लग्नेश, अष्टमेश से युत हों और अष्टम स्थान में कोई ग्रह न हो तो दीर्घायु होता है।।६०।।

लयस्थितैस्त्रिभिः खेटैः स्वोच्चमित्रस्ववर्गगैः।
लग्नेशे बलसंयुक्ते पूर्णमायुर्विनिर्दिशेत् ।।६१।।

अपनी उच्च राशि वा मित्र की राशि में वा अपने वर्ग में होकर तीन ग्रह और लग्नेश बली हो तो पूर्ण आयु होती है।।६१।।

स्वोच्चस्थितेन केनापि खेचरेण समन्वितः।
रन्ध्रनाथो शनिर्वापि पूर्णमायुर्विनिर्दिशेत्।।६२।।

अपने उच्च में गये हुए किसी ग्रह से अष्टमेश या शनि युत हो तो पूर्ण आयु होती है।।६२।।

त्रिषडायगताः पापाः शुभाः केन्द्रत्रिकोणगाः।
लग्नेशो बलसंयुक्तः पूर्णमायुर्विनिर्दिशेत्।।६३।।

३।६।११ भाव में पापग्रह हों और शुभग्रह केन्द्र-त्रिकोण में हों तथा लग्नेश बली हो तो पूर्ण आयु होती है।।६३।।

षट्सप्तरन्ध्रभावेषु संयुक्तेषु शुभेषु च।
त्रिषडायेषु पापेषु पूर्णमायुर्विनिर्दिशेत्।।६४।।

६।७।८ भाव में शुभ ग्रह हों और ३।६।११ भाव में पापग्रह हों तो पूर्ण आयु होती है।।६४।।

अथायुर्बाधकं विप्र कथयामि तवाग्रतः।
दीर्घायुर्योगं सम्प्राप्य प्रकारशकलेष्वपि।।६५।।

आयु के बाधक योगों को कह रहा हूँ।।६५।।

अथ निधनसमयज्ञानम्—

किं दशायां च निधनमिति ज्ञातुमपेक्षया।
निर्णयं तस्य कुर्वीत तवाग्रे कथयाम्यहम्।।६६।।

तीनों प्रकार से दीर्घायु योग के प्राप्त होने पर किस दशा में मृत्यु होती है, इसके ज्ञान के लिए मै निर्णय कह रहा हूँ।।६६।।

दीर्घे द्विसप्ततिवर्षे तदूर्ध्वं तु चिन्तयेन्मृतिम्।
षट्त्रिंशदकादूर्ध्वं च चिन्तयेन्मध्यमायुषि।।६७।।

दीर्घायु योग में ७२ वर्ष के बाद और मध्यायु योग में ३६ वर्ष के बाद मृत्यु का विचार करना चाहिए।।६७।।

अथ स्पष्टं प्रवक्ष्यामि मलिने द्वारबाह्ययोः।
नवांशे निधनं तस्य त्रिशूलिभाषितं पुरा।।६८।।

द्वार राशि और बाह्य राशि के पापाक्रांत होने से उसकी दशा में मृत्यु होती है।।६८।।

द्वारद्वारेशयोर्विप्र मालिन्ये तन्नवांशके।
जातस्य हि भवेन्मृत्युः सत्यमेव न संशयः।।६९।।

अथवा द्वार राशि वा द्वारेश के पापाक्रांत होने से उसकी दशा में मृत्यु होती है।।६९।।

पाकभोगद्वये विप्र चिन्तनीयं प्रयत्नतः।
स्वयं पापः पापदृष्टे पापखेटसमन्विते।
तन्नवांशदशाकाले निधनं च भवेद्ध्रुवम्।।७०।।

दोनों दशाओं में (दशा-अंतर्दशा) में अर्थात् द्वारेश स्वयं पापी हो अथवा पापग्रह से देखा जाता हो वा पापयुक्त हो तो उसकी दशा या अंतरदशा में मृत्यु होती है।।७०।।

अथवा योगायुर्दायसमाप्तिसमयेष्वपि।
प्रोक्ते मूलाश्रयीभूते चिन्तनीयं द्विजोत्तम।।७१।।

अथवा योगज आयु की समाप्ति समय में मृत्यु काल के समीप की दशा में मृत्यु का विचार करना चाहिए।।७१।।

खण्डे वा यदि पाकस्य बाह्यस्य मलिने यदि।
दशा न हि समाप्येत तत्त्रिकोणाब्दके मृतिः।।७२।।

अथवा बाह्य राशि के मलिन होने के समय उसके खंड में यदि दशा न समाप्त हो तो उसकी त्रिकोण राशि के वर्ष में मृत्यु होती है।।७२।।

अधुना सम्प्रवक्ष्यामि मृत्युयोगापवादकम्।
शुभदृष्ट्या शुभयोगे शुभखेचरसंयुते।।७३।।

यदि द्वारबाह्य राशि वा उनके स्वामी शुभ ग्रह से युक्त वा शुभ दृष्टि से युक्त हों तो।।७३।।

न च द्वारे न बाह्ये च द्वारेशे चोपलक्षिते।
द्वारेशाश्चयनवांशभुक्तौ च निधनं भवेत्।।७४।।

उक्त द्वार बाह्य राशि वा इनके स्वामियों की दशा अंतर में मृत्यु नहीं होती है, किन्तु द्वारेश के आश्रयीभूत नवांश की दशा में मृत्यु होती है।।७४।।

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि प्रकारं वै द्वितीयकम्।
यस्य विज्ञानमात्रेण आयुर्दासूचको भवेत्।।१।।

अब मैं आयु के निर्णय का दूसरा प्रकार कह रहा हूँ, जिसके ज्ञान मात्र से आयु को जाननेवाला मनुष्य होता है।।१।।

कारकान्तत्सप्तमाद्विप्र अष्टमेशो तयोर्द्वयोः।
मध्ये चैको बली चिन्त्यः सोऽपि ह्यायुःप्रदो ग्रहः।।२।।

आत्मकारक और उससे सातवाँ भाव दोनों से जो अष्टमेश, दोनों अष्टमेशों में जो बली हो।।२।।

केन्द्रादित्रिकयोगेन दीर्घमध्याल्पतायुषि।
स विज्ञेया महाप्राज्ञ तवाग्रे प्रवदाम्यहम्।।३।।

वह यदि केंद्र में हो तो दीर्घायु, पणफर में हो तो मध्यायु और आपोक्लिम में हो तो अल्पायु होती है।।३।।

केन्द्रे स्थितेऽपि दीर्घायुर्मध्यायुः पणफरे स्थिते।
आपोक्लिमे स्थिते त्वल्पमायुर्भवति निश्चितम्।।४।।

इसी प्रकार लग्न और उससे सप्तम भाव, दोनों से अष्टमेश, इन दोनों अष्टमेशों में जो बली हो वह यदि केंद्र में हो तो दीर्घायु, पणफर में हो तो मध्यायु और आपोक्लिम में हो तो अल्पायु होती है।।४।।

लग्नात्तत्सप्तमाद्विप्र अष्टमेशो तयोर्द्वयोः।
ताभ्यां मध्ये बली चैकः स्थितः केन्द्रादि पूर्ववत्।
दीर्घमध्याल्पभेदेन आयुर्निश्चित्य पूर्ववत्।।५।।

हे विप्र! लग्न और सप्तम से जो अष्टमेश, दोनों में जो एक बली, उसके केन्द्रादि में रहने से पूर्ववत् दीर्घ, मध्य, अल्पायु का निर्णय करना चाहिए।।५।।

पूर्ववद्द्वन्द्वखण्डस्य त्रैराशिकक्रमेण च।
आयुर्दायकृते स्पष्टं प्रवक्ष्यामि इदं वचः।।६।।

इस प्रकार दीर्घ आदि में आयु का निर्णय करके पूर्व कहे हुए आयु को स्पष्ट करके निर्णय इस प्रकार करना चाहिए।।६।।

स्वस्मिन्समबले खेटेऽनधिके च बले द्विज।
न वीर्यतायां दीर्घादि विपरीतायुषि भवेत्।।७।।

यदि आयुकर्त्ता ग्रह समान बल के अथवा अल्प बल के हों तो दीर्घादि विपरीत आयु होती हैं।।७।।

दीर्घमध्ये च वाल्पं च स्वल्पं वा किञ्चिदेव च।
विपरीतं योगभङ्गे सत्यमेव न संशयः।।८।।

दीर्घ, मध्य, अल्प वा उससे कुछ कम आयु होती है। इस प्रकार योग भंग होने से विपरीत आयु होती है।।८।।

अथाग्रेऽनेकभेदानामायुषो निर्णयः कृतः।
दीर्घादित्रयरूपेण इत्युक्तं ब्रह्मणोदितम्।।९।।

आयु जानने का दूसरा प्रकार कह रहा हूँ, जिसे दीर्घादि तीनों प्रकार से ब्रह्माजी ने कहा है।।९।।

जन्मलग्नाष्टमेशौ द्वौ चिन्तयेज्जन्मपत्रके।
पञ्चमैकादशे विप्र दीर्घायुश्च प्रजायते।।१०।।

जन्मांग चक्र में लग्नेश और अष्टमेश यदि ५।११ भाव में हों तो दीर्घायु।।१०।।

लाभे तृतीयगे वापि मध्यमायुर्विचिन्तयेत्।
लाभे वित्ते त्रिकोणे वा ह्यायुरल्पं भवेद्द्विज।।११।।

११।३ भावों में हों तो मध्यमायु और ११।२।५।९ भावों में हों तो अल्पायु।।११।।

गतायुर्लाभगौ द्वौ चेज्जातकोऽपि न जीवति।
एवं समस्तजन्तूनामीदृग्योगं विचिन्तयेत्।।१२।।

और दोनों ११ भाव में हों तो गतायु होता है और जातक नहीं जीता है। इस प्रकार से सभी प्राणियों के आयुर्दाय का निर्णय करना चाहिए।।१२।।

अथैवं भिन्नमार्गेण आयुर्दायं निरूप्यते।
तनुतन्वीशतद्राशिपत्युर्भानां त्रिकोणके।।१३।।

पुनः प्रकारान्तर से आयु का निर्णय कह रहा हूँ। लग्न, लग्नेश और उनकी राशियों के स्वामि से त्रिकोण में।।१३।।

अल्पमध्यचिरायुष्यं रूपवर्णप्रमाणतः।
अष्टमेशादियोगेन निर्याणं कारयेद्ग्रहः।।१४।।

अल्प, मध्य और दीर्घायु रूप वर्ष प्रमाण से होती है। इसमें अष्टमेश आदि के युग से निर्याणकर्ता ग्रह होता है।।१४।।

लग्नत्रिकोणगेऽल्पायुर्लग्नेशस्य त्रिकोणगे।
मध्यमायुर्विजानीयान्निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।१५।।

लग्न त्रिकोण में अल्पायु, लग्नेश से त्रिकोण में मध्यमायु।।१५।।

लग्नेशात्स्वीयराशीशे त्रिकोणे रन्ध्रनायके।
दीर्घायुषि प्रदातव्यं पुरा शम्भुप्रणोदितम्।।१६।।

लग्नेश वा जन्मराशीश वा अष्टमेश त्रिकोण में हो तो दीर्घायु होता है।।१६।।

तेषां मध्ये त्रिकोणानां विभागे च नवं कथम्।
स्वल्पमध्यचिरायुष्यं द्वादशाद्वाधिकेन च।।१७।।

यहाँ पर त्रिकोण के विभाग में नव का भेद कैसे हो? यहाँ प्रत्येक त्रिकोण में अल्प, मध्य, दीर्घायु बारह (१२) वर्ष का भेद होता है।।१७।।

अल्पायुषस्त्रयो भेदास्त्रयस्थाने पृथक् पृथक्।
विलग्नेशाष्टमेशादि लग्नस्थेऽपि द्विजोत्तम।।१८।।

अल्पायु का तीन भेद तीनों स्थानों में होता है। यदि लग्नेश, अष्टमेश लग्न में हों तो।।१८।।

द्वादशाब्दं भवेदायुश्चतुर्विंशति पञ्चमे।
नवमे च षट्त्रिंशाब्दमित्येवं न तु संशयः।।१९।।

१२ वर्ष, पाँचवें भाव में हों तो २४ वर्ष और नवें भाव में हों तो ३६ वर्ष की अल्पायु होती है।।१९।।

लग्नेशराशिकोणेषु लग्नरन्ध्राधिपा यदि।
तत्र स्थितेष्टवेदाब्दं षष्ट्यब्दं पञ्चमे स्थिते।।२०।।

लग्नेश की राशि से त्रिकोण में लग्नेश अष्टमेश हों तो तीन भेद होता है। राशि में हो तो ४८ वर्ष, पाँचवें भाव में हों तो ६० वर्ष।।२०।।

नवमस्थे द्विसप्तादबं तन्नवकमिदं मतम्।
लग्नेशाश्रितराशीशात्त्रिकोणेषु स्थिते द्विज।।२१।।

और नवें भाव में हों तो ७२ वर्ष की मध्यमायु होती है। लग्नेश जिस राशि में हों उसके स्वामी से त्रिकोण में लग्नेश, अष्टमेश हों तो दीर्घायु के तीन भेद होते हैं।।२१।।

लग्नेशादष्टमेशादि त्रिभागं दीर्घमायुषि।
लग्नस्थे चतुरशीतिः पञ्चमे षट्नवात्मकः।।२२।।

लग्नेश, अष्टमेश के योग से दीर्घायु में भी तीन भेद होते हैं। लग्न में हों तो ८४ वर्ष, पाँचवें भाव में हों तो ९६ वर्ष।।२२।।

नवमेऽष्टोत्तरशतं वर्षेष्वायुर्विनिर्णयः।
द्वादशाब्दानुपाते च ह्येतच्छम्भुप्रणोदितम्।।२३।।

नवम भाव में हों तो १०८ वर्ष की दीर्घायु होती है। यही १२ वर्ष के अनुपात से शंभु ने कहा है।।२३।।

रविः कुजः शनी राहुर्मरणे बलिनः क्रमात्।
विशेषं दुर्बलं हित्वा गृह्णीयाद्बलिनः सुधीः।।२४।।

सूर्य, भौम, शनि और राहु ये प्रबल मारक होते हैं। इनमें जो विशेष दुर्बल हो उसे छोड़कर प्रबल को ही लेना चाहिए।।२४।।

केतुश्च शनिवन्मृत्युनाथसम्बद्धमादिशेत्।
शनिना राहुणा वापि युक्ते सौम्ये रवीक्षिते।।२५।।

केतु भी शनि के समान ही मारक होता है। शनि वा राहु के साथ शुभ ग्रह युत हो तथा सूर्य से देखा जाता हो तो।।२५।।

पर्यायमेकं तन्मध्ये एकराशौ मृतिं वदेत्।
तयोस्तु शुभयोगेन तद्दशामृतिमादिशेत्।।२६।।

एक पर्याय के मध्य में ही मृत्यु करता है। दोनों यदि शुभयुक्त हों तो उनकी दशा में मृत्यु होती है।।२६।।

भोगराशौ दुर्बले वा प्रबले ग्रहसंस्थिते।
तथापि निर्दिशेत्काले मरणं नात्र संशयः।।२७।।

अन्तर दशा की राशि दुर्बल हो वा प्रबल ग्रह से युक्त हो तो उसके समय में मृत्यु कहना चाहिए।।२७।।

केतौ चैवासनस्थे वा नाथे वाऽशुभवीक्षिते।
केतोर्दशान्ते मृत्युः स्याच्छुभदृष्टेन किञ्चन।।२८।।

यदि केतु अंत्य में हो अथवा उस राशि के स्वामी पापग्रह से देखा जाता हो तो केतु की दशा में मृत्यु होती है। शुभ ग्रह से दृष्ट हो तो कुछ भी नहीं होता है।।२८।।

तन्वधीशाष्टमेशाभ्यां योगेनायुः कृते द्विज।
अष्टमेशस्य स्वोच्चस्थे चर्पर्याब्दप्रमाणके।।२९।।

लग्नेश, अष्टमेश से आयु योग होता हो और अष्टमेश अपनी उच्च राशि में हो तो चर पर्याय के वर्ष में।।२९।।

अर्धाधिकाब्दं दत्वैव योजयेत्पूर्वमायुषि।
एवं नाथान्तरीत्या च चरपर्यातिरिक्तकः।।३०।।

आधे से अधिक वर्ष पूर्व आयु में जोड़कर विचार करना चाहिए। इस प्रकार राशिस्वामी तक चर पर्याय में विचार करना चाहिए।।३०।।

मर्यादयापि यदायुरष्टमेशेन दीयते।
तत्सर्वमर्धाधिक्ये च विधेयं द्विजसत्तम।।३१।।

मर्यादा के अनुसार अष्टमेश जिस आयु को देता हो उसमें अर्धाधिक्य कर देना चाहिए।।३१।।

एवं रन्ध्रपतिर्विप्र नीचराशिगतोऽपि च।
तद्ग्रहेण दीयमानमायुरर्द्धं च नाशयेत्।।३२।।

इसी प्रकार अष्टमेश नीच राशि में हो तो उससे प्राप्त आयु का आधा ह्रास हो जाता है।।३२।।

एवं रन्ध्रपतिर्विप्र नीचखेटेन संयुतः।
तद्ग्रहेण दीयमानमायुरर्द्धं विनश्यति।।३३।।

अथवा अष्टमेश किसी नीच राशि में स्थित ग्रह से युक्त हो तो भी प्राप्त आयु का आधा ह्रास होता है।।३३।।

एवं रन्ध्रपतिर्विप्र तुङ्गखेटेन संयुतः।
तद्ग्रहेण दीयमानमायुरर्द्धं च वर्धति।।३४।।

इसी प्रकार अष्टमेश उच्च स्थित ग्रह से युक्त हो तो उससे प्राप्त आयु का आधा बढ़ता है।।३४।।

एवमुक्तं च विप्रेन्द्र परमायुर्विनिश्चितम्।
लग्नेशाष्टमेशाभ्यां योगायुर्दायमागते।।३५।।

इस प्रकार मैंने आयु का निर्णय तुमसे कहा। लग्नेश, अष्टमेश के योग से आये हुए आयुर्दाय का।।३५।।

तेषु संस्कारमाज्ञेयमिदं पूर्वोक्तसंकथाम्।
लग्नेशादायुरित्येवं तत्तद्योगकलात्मकम्।।३६।।

यथोचित संस्कार करके जो फल उच्च-नीचादि के अनुसार का आवे।।३६।।

संयुक्ताश्च ग्रहा उच्चनीचादिगुणदोषतः।
वृद्धिह्रासावुक्तरीत्या कार्या वै सम्प्रदायतः।।३७।।

उसे आयु में जोड़ देना चाहिए और संप्रदाय के अनुसार ह्रास-वृद्धि भी कर देना चाहिए।।३७।।

द्वित्र्यादिमृत्युयोगश्च प्रबलः पूर्वभाषितः।
नैसर्गिकोऽपि वीर्याय तस्य पाके मृतिर्भवेत्।।३८।।

यदि पूर्व में कहे हुए दो या तीन प्रबल मृत्यु योग हों तो नैसर्गिक योग-कारक भी बलवान् होते हैं। उसी की दशा में मृत्यु कहना चाहिए।।३८।।

रव्याररराहुपंगूनां चतुःखेटान्तरे बली।
तस्य योगानुसारेण जातकस्य मृतिं वदेत्।।३९।।

रवि, भौम, राहु और शनि इन चारों में जो बलवान् हो उसी की दशा में मृत्यु होती है।।३९।।

अष्टमेशेन संयुक्तः शनिराहुः कुजो रविः।
न वीक्ष्यन्ते ग्रहैर्वापि तस्य मृत्युं विनिर्दिशेत्।।४०।।

यदि शनि, राहु, भौम और रवि में से कोई अष्टमेश से युत हो, अन्य ग्रहों से न देखे जाते हों तो उसकी दशा में मृत्यु होती है।।४०।।

एषां मध्येषु प्रबला सा तत्स्वामिकराशिगे।
पाके मृत्युं विजानीयान्निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।४१।।

इनमें जो प्रबल हों तो उसके स्वामी की राशि की दशा में निःसंशय मृत्यु होती है।।४१।।

एषां चतुर्ग्रहाणां च मध्ये चैको बली क्वचित्।
तस्य राशिदशाकाले मृतिस्थानं विनिर्दिशेत्।।४२।।

इन चारों ग्रहों में कोई एक बली ग्रह हो उस ग्रह की राशि दशा में मृत्यु होती है।।४२।।

मृत्युस्थानाभिभूतायां सिद्धायां च महादशा।
तत्तस्यापि क्रमेणैव तदनन्तरमृतिप्रदा।।४३।।

मृत्युकारक ग्रह के निर्णयानुसार उसकी अंतर्दशा में भी मृत्यु होती है।।४३।।

शुभग्रहेण सम्बन्धे शनिराहु कुजो रविः।
तत्तत्स्वामिदशाकाले मरणं च विनिर्दिशेत्।।४४।।

यदि शनि, राहु, भौम, रवि शुभग्रह से सम्बन्ध करते हों तो भी उनकी दशा में मृत्यु होती है।।४४।।

तदाश्रयराशिपाके मृत्युर्भवति निश्चितम्।
निर्विशङ्कं महाप्राज्ञ पुरा शम्भुप्रणोदितम्।।४५।।

एवं उनके आश्रयभूत राशि की दशा में भी मृत्यु होती है।।४५।।

सुखदुःखादि सन्ब्रूयात्पाकराशौ विचिन्तयेत्।
योगान्नरगता तत्तु तत्तद्वीर्यानुसारतः।।४६।।

पाकेश्वर के अनुसार सुख-दुःखादि उस ग्रह के योग और बल के अनुसार कहना चाहिए।।४६।।

सबलायां सुखं ब्रूयाद्दुर्बला दुःखदायिका।
वैषम्येन फलं वाच्यं तथा मरणमेव च।।४७।।

यदि बलवान् हो तो मृत्यु और निर्बल हो तो दुःख देने वाला होता है, वैषम्य हो तो मृत्यु होती है।।४७।।

द्वादशे दशमे वापि संस्थिते पुच्छनायके।
पापदृष्टे दशाप्राप्ते तदन्तरगते मृतिः।।४८।।

यदि केतु १२ या १० भाव में हो और पापग्रह से दृष्ट हो तो उसके दशा और अन्तर से मृत्यु होती है।।४८।।

द्वादशे दशमे केतुः शुभग्रहनिरीक्षितः।
नायं योगो महाप्राज्ञ न कष्टं न च मृत्युकृत्।।४९।।

यदि १२ या १० भाव में केतु हो और शुभग्रह से दखा जाता हो तो यह योग न तो कष्टकारक होता है और न मृत्युकारक होता है।।४९।।

प्राणिनीत्युक्तं विप्रेन्द्र प्राणानयनमुच्यते।
राश्यधीनं बलं ज्ञेयं तदुक्तं कथ्यतेऽधुना।।५०।।

पहले बल की चर्चा कर आये हैं अतः उसका विचार कह रहे हैं। राशि के अधीन ही बल का विचार होता है।।५०।।

अग्रहात्सग्रहो ज्यायान्सग्रहे त्वधिकग्रहः।
साम्ये चरस्थिरद्वन्द्वाः क्रमात्स्युर्बलशालिनः।।५१।।

जो ग्रह अकेला है उसकी अपेक्षा ग्रहयुक्त ग्रह बली होता है। ग्रहयुक्त ग्रह यदि समान ग्रहों से युक्त हो तो जो संख्या में अधिक ग्रहों से युक्त हो वह उसकी अपेक्षा बली होता है। इसमे भी समानता हो तो चर राशि में बैठे हुए की अपेक्षा स्थिर राशिवाला और इसकी अपेक्षा द्विस्वभावस्थ बली होता है।।५१।।

अथ दीर्घादियोगेषु त्रिषु च द्विजसत्तम।
कक्षाह्रासकृते योगान्दर्शयामि तवाग्रतः।।५२।।

दीर्घायु, मध्यायु और अल्यायु योगों में कक्षा के ह्रास की स्थिति को कह रहा हूँ।।५२।।

लग्नसप्तमयोर्विप्र द्विद्वादशकयोरपि।
षष्ठरन्ध्राधिपस्यापि जनुर्ल्लग्ने विचिन्तयेत्।।५३।।

लग्न सप्तम, द्वितीय-द्वादश, षष्ठ-अष्टम इनके अधिपति।।५३।।

पापाक्रान्ते पापयोगे पापमध्यत्वमागते।
कक्षाह्रासो विजानीयान्निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।५४।।

पापाक्रांत पापग्रह पापग्रह से युक्त और और पापग्रह के मध्यम में हो तो कक्षा का ह्रास होता है।।५४।।

दीर्घस्य मध्यमा याता भवेदायुषि मध्यमे।
अल्पादल्पं च विज्ञेयं कक्षाह्रासस्य लक्षणम्।।५५।।

अर्थात् दीर्घायु हो तो मध्यायु, मध्यायु हो तो अल्पायु और अल्पायु हो तो उससे भी अल्प आयु होती है। यही कक्षाह्रास का लक्षण है।।५५।।

कक्षाह्रासो यदार्थोऽपि पूर्ववज्जायते ध्रुवम्।
अथैवं लग्नकुण्डल्यां पापयोगत्रिकोणके।।५६।।

कक्षाह्रास होने से आर्थिक स्थिति में न्यूनता आ जाती है। इसी प्रकार लग्न कुंडली में भी त्रिकोण में पाप योग से कक्षाह्रास होता है।।५६।।

लग्नपञ्चमभाग्येषु पापयोगकृते द्विज।
कक्षाह्रासो भवेद्द्विप्र निर्विशङ्कं विधेः सुत।।५७।।

लग्न, पंचम और नवम भाव में पाप ग्रह का योग होने पर कक्षा का ह्रास होता है।।५७।।

अत्रास्मिन्कारके लग्ने चिन्तयेज्जनिलग्नवत्।
कारकांशे द्यूनराशेः पापमध्यत्वमेव हि।।५८।।

कारक लग्न में भी जन्मलग्न के समान ही विचार करना चाहिए। कारकांश से सप्तम भी पापमध्य में हो तो भी कक्षाह्रास होता है।।५८।।

एको योगः स विज्ञेयः कक्षाह्रासं च पूर्ववत्।
अथैककक्षाह्रासस्य चापवादं वदाम्यहम्।।५९।।

अब इसका अपवाद कह रहा हूँ।।५९।।

एकस्थकक्षाह्रासं च वित्तपे चान्यथा भवेत्।
पूर्ववच्छुभयोगेन कक्षावृद्धिर्भविष्यति।।६०।।

जिसमें शुभ योग होने से कक्षावृद्धि होती है।।६०।।

जनुर्ल्लग्ने कारके च चिन्तयेत्पूर्ववद्विज।
लग्ने द्यूने धने रिष्फे षष्ठे रंध्रे स्थलत्रये।।६१।।

लग्न, सप्तम, द्वितीय, द्वादश, षष्ठ और अष्टम इनमें किन्हीं तीन स्थान में।।६१।।

शुभखेटकृते योगे कक्षावृद्धिर्भवत्यपि।
चिन्तयेत्पूर्ववद्द्विप्र त्रिकोणेषु स्थलद्वये।।६२।।

शुभ ग्रह का योग हो तो कक्षा की वृद्धि होती है। इसी प्रकार दोनों त्रिकोणों में भी विचार करना चाहिए।।६२।।

जनुर्ल्लग्नं कारकं च शुभयोगं करोति चेत्।
कक्षावृद्धिर्न सन्देहो भविष्यति द्विजोत्तम।।६३।।

तथा जन्मलग्न और कारक शुभग्रह से योग करता हो तो कक्षा की वृद्धि होती है इसमें संदेह नहीं है।।६३।।

कारके च त्रिकोणस्थ नीचस्थाः पापखेचराः।
कक्षाह्रासो महाप्राज्ञ द्वितयेन भविष्यति।।६४।।

यदि कारक त्रिकोण में हो और पापग्रह अपनी नीचराशि में हो तो दोनों से कक्षा का ह्रास होता है।।६४।।

कारकांशात् त्रिकोणेषु शुभखेटे शुभस्थले।
कक्षावृद्धिर्भवेत्तत्र न सन्देहो द्विजोत्तम।।६५।।

कारकांश में त्रिकोण में शुभराशि में शुभग्रह हो तो कक्षा में वृद्धि होती है।।६५।।

कारके पापखेटाच्च अन्त्यगे पापसंयुते।
कक्षाह्रासो भवेत्तत्र प्रणीते द्विजसत्तम।।६६।।

पापग्रह १२वें भाव में कारक हो और पापग्रह से युक्त हो तो कक्षा का ह्रास होता है।।६६।।

कारके शुभसंयुक्ते स्वतुङ्गे शुभखेचराः।
कक्षावृद्धिर्भवेत्तत्र निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।६७।।

कारक शुभग्रह से युक्त हो और शुभग्रह अपने उच्च में हों तो कक्षावृद्धि होती है।।६७।।

पापकारकजैर्ह्रासो वृद्धिर्वा कथिता द्विज।
अथैव गुरुणा कक्षाह्रासवृद्धिं वदाम्यहम्।।६८।।

इस प्रकार पापग्रह से उत्पन्न कक्षा की ह्रास वृद्धि मैंने कहा। इसी प्रकार गुरु से कक्षा की ह्रास-वृद्धि कह रहा हूँ।।६८।।

वित्ते व्यये लग्नषष्ठे त्रिकोणे पापयोर्द्विज।
कक्षाह्रासो भवेत्तत्र पूर्ववद्द्विजसत्तम।।६९।।

गुरु से दूसरे, बारहवें, लग्न, छठे और त्रिकोण में पापग्रह हों तो कक्षा का ह्रास पूर्ववत् होता है।।६९।।

गुरौ नीचे स्वतुङ्गे च संयुक्तेऽशुभखेचरैः।
कक्षाह्रासो भवेत्तत्र निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।७०।।

गुरु अपने नीच में अथवा अपनी उच्चराशि में पापग्रहों से संयुक्त हो तो कक्षा का ह्रास होता है।।७०।।

वित्तगे च गुरौ ज्ञेयं पूर्ववन्नियमं द्विज।
प्रागुक्तार्थकृतेयं कक्षा सर्वा प्रकथ्यते।।७१।।

गुरु दूसरे भाव में हो तो पूर्ववत् कक्षाह्रास-वृद्धि को समझना चाहिए। पूर्वोक्त कक्ष क्रम के ही लिए यह सब कहा गया है।।७१।।

तथैव शुभयोगेषु चापवादं वदाम्यहम्।
उक्तस्थाने शुभैर्योगे पूर्णेन्दुशुक्रयोर्द्विज।।७२।।

उक्त स्थानों में शुभग्रह के योग का अपवाद कह रहा हूँ। उक्त स्थानों में शुभग्रह का योग पूर्णचन्द्र, शुक्र का हो तो।।७२।।

योगप्रकरणे कक्षाह्रासाय न तु वृद्धये।
तत्रैकराशिवृद्धिश्च भवत्येव न संशयः।।७३।।

कक्षा का ह्रास ही होता है, न कि वृद्धि, एक राशि की वृद्धि ही होती है।।७२।।

पूर्ववच्चोक्तपापेषु शनिना योगकारकः।
कक्षाह्रासश्च तत्रैव यत्रैको राशिह्रासकृत्।।७४।।

पूर्वोक्त पापग्रह योग में शनि योग करता हो तो वहाँ पर कक्षा ह्रास में एक राशि का ह्रास होता है।।७४।।

अथ स्थिरदशायां मृत्युसमयज्ञानम्—

अधुना सम्प्रवक्ष्यामि विशेषेण द्विजोत्तम।
आलम्ब्य स्थिरदशायां योगान्निधनमेव च।।७५।।

अब मैं स्थिर के अनुसार चार खंड के अनुसार मृत्युसमय को कह रहा हूँ।।७५।।

त्रित्रिभिराशिभिरेकं खण्डाश्चत्वार एव च।
कस्मिन्खण्डे च निधनं तस्य योगं विचिन्तयेत्।।७६।।

तीन-तीन राशियों के चार खंड होते हैं। किस खंड में मृत्यु होगी इसको कहता हूँ।।७६।।

योगत्रयमहं वक्ष्ये दीर्घमध्याल्पभेदतः।
चतुःखण्डेषु यत्रायुरागतं तत्र चिन्तयेत्।।७७।।
दीर्घायुर्योगवत्तत्तु यस्मिन्खण्डे समागते।
तस्मिन्खण्डे च निधनं भवत्यपि न सन्देहः।।७८।।

दीर्घायु, मध्यायु, अल्पायु के भेद चारों खंडों में जहाँ समाप्त हो उसी समय मृत्यु को कहना चाहिए।।७७-७८।।

वक्ष्यमाणप्रकारेण मध्यमाल्पायुषि द्विज।
निधनाश्रयंखण्डेषु लक्षणाक्रान्तया दशा।।७९।।

इसी प्रकार मध्यायु और अल्पायु के खंडों में जिस खंड के जिस दशा में मृत्यु का संदेह हो उसी खंड में उसे कहना चाहिए।।७९।।

तद्दशायां च निधनं भवत्येव द्विजोत्तम।
कदाचिन्न मृतिस्तत्र क्लेशदुःखभयानि च।।८०।।

यदि कदाचित् मृत्यु न हो तो उस समय क्लेश, दुःख और भय होता है।।८०।।

भवन्ति तत्र संस्कारं पुनरित्थं वदाम्यहम्।
पापद्वयमध्यगते राशिपाके मृतिर्भवेत्।।८१।।

पापग्रहों के मध्य में स्थित राशि की दशा में मृत्यु होती है।।८१।।

लग्नाद्वा कारकाद्विप्र पापाक्रांते त्रिकोणके।
द्वादशाष्टमराश्येवं पापाक्रांतं भवेदपि।।८२।।

लग्न से आत्मकारक से त्रिकोण में पापग्रह हों अथवा १२वीं राशि में पापग्रह हों।।८२।।

तद्दशायां च निधनं जातकस्य न संशयः।
खण्डे स्थिरदशायां च चिन्तनीयं प्रयत्नतः।।८३।।

तो उस राशि की दशा में मृत्यु कहना चाहिए।।८३।।

पापराशेस्त्रिकोणेषु द्वादशाष्टमराशिषु।
पापाक्रान्ते तद्दशायां निधनं भवति ध्रुवम्।।८४।।

पापग्रह की राशि से त्रिकोण में अथवा १२०८वीं राशि में पापग्रह हो तो उस राशि की दशा में मृत्यु होती है।।८४।।

शुभमध्ये मृतिर्नैव पापमध्ये मृतिर्भवेत्।
भूयोऽपि निधनार्थाय राशिदोषं वदाम्यहम्।।८५।।

शुभग्रह के मध्य की राशि में मृत्यु नहीं होती है और पापग्रह के मध्य की राशि की दशा में मृत्यु होती है। फिर भी निधन राशि के दोष को कह रहा हूँ।।८५।।

द्वादशाष्टमपत्योश्च दृष्टौ क्षीणेन्दुशुक्रयोः।
तद्दशायां च निधनं भवत्येव न संशयः।।८६।।

१२।८ के स्वामी क्षीणचन्द्र और शुक्र से देखे जाते हों तो उनकी दशा में निधन होता है।।८६।।

क्षीणेन्दोः केवलं दृष्टिः शुक्रदृष्टिश्च केवलम्।
दृष्टिमात्रेण निधनं स्थिरदशायां विचिन्तयेत्।।८७।।

केवल क्षीणचन्द्र और शुक्र के दृष्टि भाव से स्थिर दशा में मृत्यु होती है।।८७।।

मृत्युस्थाने तु या दृष्टिः पापमध्यर्क्षं प्रपश्यति।
तस्य दशां समालोक्य व्योमषष्ठाधिपाद्द्विज।।८८।।

पापग्रह के मध्य में स्थित अष्टम स्थान को पूर्वोक्त (क्षीण चन्द्र वा शुक्र) वा १०, ६ भाव के स्वामी देखते हों तो इसकी दशा में।।८८।।

निरीक्षते नवांशेषु द्वयोः स्थाने द्विजोत्तम।
तत्रैव निधनं ज्ञेयं भाषितं च तवाग्रके।।८९।।

अथवा १०, ६ के स्वामी से देखी जाती हुई अष्टमस्थ पापद्वयमध्यस्थित राशि की अन्तर दशा में निधन होता है।।८९।।

पूर्वोक्तनिधनस्थाने महापाकं नरेष्वपि।
व्योमषष्ठाधिपौ विप्र तयोरंशं निरीक्षिते।।९०।।
राशेरन्तर्दशाकाले निधनं भवति ध्रुवम्।
अन्तर्दशायां रूपे द्वे निधनस्थानमेव च।।९१।।

पूर्वोक्त निधन स्थान के समय महादशा मे १०, ६ भावों के नवांशराशि के अन्तर में निधन होता है।।९०-९१।।

इति आयुर्दायप्रकरणम्।

अथ मारकप्रकरणम्

पराशर उवाच—

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि निधनार्थे विशेषतः।
प्रकारान्तर्दशायास्तच्च रुद्राद्द्विजसत्तम।।१।।

अब मै विशेषकर निधन के सम्बंध में दशा-अन्तर्दशा के विषय में रुद्रग्रह द्वारा कह रहा हूँ।।१।।

लग्नद्यूनाष्टमेशौ यौ तयोर्मध्ये च यो बली।
प्राणीरुद्रः स विज्ञेयः निधनार्थे विचिन्त्यताम्।।२।।

लग्न और सप्तम से जो अष्टमेश उनमें जो बली हो वही रुद्रग्रह होता है।।२।।

तयोर्मध्ये बली चिन्त्यः शुभदृष्टेन संयुते।
दुर्बलः सोऽपि गौणाख्यो रुद्रग्रह इतीर्यते।।३।।

वह शुभ दृष्ट वा शुभ युक्त हो तो बली होता है।।३।।

तत्रैव प्राणिरुद्रस्य विशेषं गणयेत्फलम्।
प्रवक्ष्यामि तवाग्रे च शृणुष्व त्वं महामते।।४।।

जो दुर्बल है वह भी रुद्रग्रह होता है।।४।।

शुभैर्युक्ते शुभैर्दृष्टे शुभसम्बन्धकारकः।
प्राणीरुद्रः स विज्ञेयस्तत्सीमांत्तमायुरेव च।।५।।

कारक यदि शुभग्रह से युक्त हो, शुभदृष्ट हो वा संबंध करता हो, बली हो तो वह रुद्रग्रह होता है। रुद्र शूलान्त पर्यन्त आयु होती है।।५।।

रुद्रशूलान्तमायुः स्यात् त्रिकोणान्ते तथा पुनः।
लग्नान्ते पञ्चमान्ते च नवमान्ते त्रयस्थले।।६।।

अथवा उसके त्रिकोण राशि पर्यन्त आयु होती हैं। लग्नान्त, पंचमान्त और नवमांत इन्हीं तीनों को त्रिकोणान्त समझना चाहिए।।६।।

चिन्तनीयं महाप्राज्ञ तत्तद्राशिदशान्तरे।
अल्पमध्यं च दीर्घायुर्योगभेदा न संशयः।।७।।
तत्राप्यायुःसमायोगे त्रिकोणमध्यमोत्तरे।
आयुस्तत्रैव विज्ञेयं तदग्रे च क्रमेण च।।८।।
योगे मध्यायुषं प्राप्ते त्रिकोणे मध्यमान्तगे।
आयुर्दायसमाप्तिश्च निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।९।।
दीर्घायुर्योगसंलब्धे त्रिकोणे नवमान्तगे।
दशान्तरे महाप्राज्ञ आयुर्दायसमाप्तये।।१०।।

इन्हीं खंडों में अल्पायु, मध्यायु और दीर्घायु के भेदों को समझना चाहिए। लग्न से पंचमांत अल्पायु, नवमान्त पर्यन्त मध्यमायु और इसके बाद दीर्घायु को समझना चाहिए।।१०।।

अथैवं लग्नद्यूनादि आरभ्य च दशाक्रमः।
प्रवृत्तिर्जन्मतो ज्ञेया निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।११।।

इसी प्रकार लग्न सप्तमादि से आरम्भ कर दशाक्रम जन्म से ही जानना चाहिए।।११।।

यत्र रुद्रग्रहस्यापि शुभदत्वं न भाव्यते।
तत्र जीवस्य नष्टत्वान्नेदं फलमिति स्थितिः।।१२।।

जिसमें रुद्रग्रह का भी शुभदत्व नहीं होता है, वहाँ पर जीव के नष्ट हो जाने से उपरोक्त फल नहीं होता है।।१२।।

अथैव रुद्रशूलान्तमायुर्दायेति कारणे।
योगेऽस्मिंश्च समुत्कर्षात्किञ्चिद्दर्शयति द्विज।।१३।।

इसी प्रकार से रुद्रशूलान्त आयुर्दाय होने का जो कारण होता है, उसका कारण कह रहा हूँ।।१३।।

प्राणीरुद्रशुभैर्दृष्टे पूर्वोक्तफलदायकः।
शुभयोगे न सन्देहो रुद्रशूलान्तमायुषि।।१४।।

यदि रुद्रग्रह शुभ दृष्ट हो तो पूर्वोक्त फल को देने वाला होता है और शुभ युक्त हो तो रुद्रशूलान्त आयु होती है, इसमें संदेह नहीं है।।१४।।

स्थित एव फलं जन्म कथितं कारणान्तरे।
निरुक्ते शुभसंयोगे किं कीर्तयति भो द्विज।।१५।।
पूर्वमेव फलं साधो समुत्कृष्टे तदेव चेत्।
सुतरां तदेव वक्तव्यं निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।१६।।

कारणान्तर से पूर्वोक्त फल होता है किन्तु शुभयोग में कोई कारणांतर नहीं होता है।।१६।।

अनेन पूर्वयोगेन फलं किञ्चिद्धि न्यूनता।
आद्योदितादुक्तकालात्पूर्वं पश्चान्मृतिर्यदि।।१७।।
निरुक्तयोगश्च तदा ह्यपवादं वदाम्यहम्।
रविं विहाय नितरां पापयोगो भवेद्द्विज।।१८।।

इसमें भी यदि पूर्वोक्त फल यदि उत्कृष्ट हो तो वही होता है। यदि पूर्वोक्त फल में कुछ न्यूनता हो और उसके पूर्व पीछे मृत्यु हो जाय तो यह योग निष्फल होता है।।१८।।

योगोऽयं निष्फलो वाच्यः पुरा ब्रह्मप्रणोदितः।
इदं फलं न भवति योगेऽस्मिन्द्विजसत्तम।।१९।।
नाशयोगस्य वक्तव्यं फलं वापि भयङ्करम्।
अधुना सम्प्रवक्ष्यामि गौणरुद्रस्य वै द्विज।।२०।।

किन्तु नाश होने के योग का फल भयंकर होता है। अब मैं गौणरुद्र का विवेचन कर रहा हूँ।।१९-२०।।

गुणप्रकर्षेण फलं विशेषेण तवाग्रतः।
गौणरुद्रे महाप्राज्ञ मन्दारेन्दुनिरीक्षिते।।२१।।

अब मैं गुण की प्रकर्षता से फल-विशेष को कह रहा हूँ। गौणरुद्र शनि, भौम, चन्द्र से देखा जाता हो।।२१।।

अभावे शुभयोगस्य पापयोगोत्तरे तथा।
शूलान्तात्फल विप्रेन्द्र आयुर्दायं भवत्यपि।।२२।।

शुभग्रह का योग न हो, पापयोग भी न हो, वा पाप योग हो अथवा भौम, शनि, चन्द्रमा के साथ और भी शुभग्रह की दृष्टि हो तो रुद्राश्रित राशि की अग्रिम राशि की दशा में मृत्यु होती है।।२२।।

शुभदृष्टे वा शूलान्तात्परञ्चायुर्भवेदपि।
योगद्वयपरत्वेन योजनीयं न संशयः।।२३।।

शुभग्रह के योग के अभाव में पापग्रह का योग होते हुए दोनों योगों का एक के बाद दूसरे का विचार करना चाहिए।।२३।।

एतद्योगद्वयं किञ्चिन्न्यूनतायामपि द्विज।
नेदं फलं प्रवक्तव्यं मैत्रेय भाषितं पुरा।।२४।।

इन दोनों के योगों के न्यून होने से पूर्व का फल नहीं होता है।।२४।।

शुभदृष्टिभवे चैव योगे च परपूर्ववत्।
शुभदृष्टावसन्त्यां च पापयोगाद्यभावतः।।२५।।

शुभ दृष्टि होते हुए अथवा शुभ दृष्टि के अभाव में पापयोगादि के अभाव में शुभ दृष्टि के होते हुए एक योग होता है।।२५।।

कृत एको हि योगश्च पूर्वयोगजमेव च।
अशुभयोगे शुभदृष्टौ योगोऽयमपरो द्विज।।२६।।

पापग्रह के योग में शुभ दृष्टि के होते हुए दूसरा योग होता है।।२६।।

पापयोगैरभावे च शुभदृष्टौ च संयुते।
[१]कैमुतिकाख्यन्यायेन सिद्धो योगस्तृतीयकः।।२७।।

पाप योग के अभाव में शुभ दृष्टि होते हुए कैमुतिक न्याय से तीसरा योग भी होता है।।२७।।

पुरा प्रोवाच यच्छम्भुस्तवाग्रे कथयाम्यहम्।
द्वितीययोजनायां तु शुभदृष्टिसमन्विते।।२८।।

पूर्व में शम्भु ने जो कहा था उसे मैंने तुमसे कहा। दूसरे योग में पापयोग शुभदृष्टि में।।२८।।

पापयोगस्य चाभावे योगः प्रथम उच्यते।
पापयोगे महाप्राज्ञ शुभदृष्टे प्रभावके।।२९।।

---

१. कैमुतिकन्याय अर्थापत्ति को कहते है, जैसे चूहा लकड़ी को खा गया तो इससे मृदुपदार्थ मिठाई आदि को भी खा सकता है।

पापग्रह के योग के अभाव में प्रथम योग और पापग्रह योग में शुभदृष्टि में दूसरा।।२९।।

द्वितीययोगपक्षेऽहं पूर्वस्मिन् द्विजसत्तम।
पापयोगस्य चाभावे पापदृष्टिविवर्जितः।।३०।।

अथवा पापयोग के अभाव में पापदृष्टि के न होने में।।३०।।

कैमुतिकाख्यन्यायेन तृतीयो योग उच्यते।
अथैवं प्राणिरुद्रस्य ह्युक्ता पक्षान्तरे कथा।।३१।।

कैमुतिकन्याय से यह तीसरा योग हुआ। यह प्राणीरुद्र के पक्षान्तर से स्वरूप कहा है।।३१।।

तत्रैव प्रथमे योगे शुभदृष्टिविवर्जिते।
शुभयोगादियोगश्च द्वितीयोक्तेन योगकृत्।।३२।।

प्रथम योग में शुभ दृष्टि से रहित होने में शुभादि योग होने से।।३२।।

तृतीयेन द्वयस्यापि योगभङ्गं करोत्यपि।
अधुनोक्तत्रयाभावे मन्दादिदृष्टिमात्रतः।।३३।।

तीसरे से दूसरे के साथ योग होने से तथा उक्त तीनों योगों के अभाव में शन्यादि दृष्टि के भेद से निर्विशंक कह रहा हूँ।।३३।।

एवं स्थिते सुयोगश्च निःशङ्कं प्रतिपाद्यते।
अशुभैः खेचरैर्दृष्टे पापयोग इति स्थितिः।।३४।।

अशुभ ग्रह की दृष्टि और पापयोग।।३४।।

शुभयोगविहीने च मन्दारेन्दुनिरीक्षिते।
तदायुः परतो विप्र समानादिति योजयेत्।।३५।।

शुभ योग से हीन शनि, भौम, चन्द्र से दृष्ट हो तो रुद्रशूल के बाद तक आयु होती है।।३५।।

प्रथमे द्वितीये सन्तः पापयोगैरभावतः।
योगो भङ्गमपेक्षा च तृतीयोक्तमिदं वदेत्।।३६।।

प्रथम, द्वितीय योग में पापयोग के अभाव में योग भंग होने से तीसरे योग की उत्पत्ति होती है।।३६।।

पापदृष्टिमात्रमेवं योगनिर्वाहकारणे।
अपवादविहीनेन इत्येवोक्तं तृतीयके।।३७।।

क़ेवल पापग्रह मान्य की दृष्टि से योग होने के कारण तीसरा योग होता है।।३७।।

रुद्राभ्यां प्राणिगौणाभ्यां ताभ्यामाश्रितमेव च।
गुणविशेषे आयुरन्तं वक्ष्यामीह महामते।।३८।।

अब दोनों रुद्रों से और उनके आश्रित गुण-विशेष से आयु का निर्णय कर रहा हूँ।।३८।।

गौणरुद्रे शुभैर्योगेशुभदृष्टिसमन्विते।
रुद्रशूलान्तमायुश्च योजनीयं द्विजोत्तम।।३९।।

गौणरुद्र शुभ ग्रह से योग करता हो और शुभदृष्टि से युक्त हो तो रुद्रशूलान्त आयु होती है।।३९।।

पूर्वोक्त प्राणिरुद्रेण द्वियोगप्राणकेन च।
द्वाभ्यां शूलान्तमायुश्च तवाग्रे कथितं मया।।४०।।

पूर्वोक्त बली (प्राणि) रुद्र से जो दो योग कहे हैं उनमें दोनों रुद्रों की शूलान्त पर्यन्त आयु होती है।।४०।।

अधुना सम्प्रवक्ष्यामि द्वयोर्निर्वाहकारणम्।
तयो रूपं भिन्नभिन्नं शृणुष्व मुनिसत्तम।।४१।।

अब दोनों के निर्वाह के कारण कह रह हूँ। दोनों के भिन्न- भिन्न रूप होते हैं।।४१।।

प्राणिरुद्रे शुभैर्दृष्टे योगोऽयं द्विजसत्तम।
शुभयोगेति का वार्ता शूलान्तायुर्विनिश्चितम्।।४२।।

प्राणिरुद्र शुभग्रहों से देखा जाता हो और शुभयोग हो तो रुद्रशूलान्त आयु होती है।।४२।।

गौणरुद्रे शुभैर्दृष्टे योगोऽयं क्लेशदायकः।
रोगशोकभयं कर्त्ता मृत्युं नैव करोति च।।४३।।

गौणरुद्र शुभग्रहों से दृष्ट हो तो क्लेशदायक, रोग-शोकदायक तथा भयकारक होता है, न कि मृत्युकारक।।४३।।

शुभयोगे महाप्राज्ञ योगोऽयं बलवत्तरः।
तस्य शूलान्तमायुश्च निर्विशङ्कं न संशयः।।४४।।

यदि इस योग में शुभयोग भी हो तो निश्चय ही इसके शूलान्त पर्यन्त आयु होती है।।४४।।

उभौ रुद्रौ शुभैर्दृष्टावथवा योगद्वयोरपि।
शुभग्रहेण क्लेशश्च रुद्रशूलान्तमायुषि।।४५।।

दोनों रुद्र शुभ ग्रहों से दृष्ट और योग करते हों तो रुद्रशूलान्त आयु न हाकर केवल क्लेशमात्र होता है।।४५।।

प्राणी चाप्राणिरुद्राभ्यां कृतयोगद्वयेन च।
तयोर्वा सम्प्रवक्ष्यामि तवाग्रे द्विजसत्तम।।४६।।

बलवान् या निर्बल रुद्रों से दोनों योगों में जो विशेषता होती है, उसे कह रहा हूँ।।४६।।

मार्त्तण्डरहितो चान्यः पापयोगकृते द्विज।
योगद्वयं न भवति पापयुक्तं द्वयोरपि।।४७।।

दोनों रुद्रों के दोनों योगों में सूर्य को छोड़कर अन्य पापग्रह योग करते हों तो दोनों योग नहीं होते हैं।।४७।।

शुभयोगः शुभैर्दृष्टैरुभयेऽपि विना रविम्।
पापयोगकृते विप्र भययोगो विनश्यति।।४८।।

शुभयोग शुभग्रह से दृष्ट दोनों हों तो पापग्रह से उत्पन्न भययोग निवृत्त हो जाता है।।४८।।

शुभयोगः शुभर्दृष्टिरभावे न भवत्यपि।
यत्रायुः कथयाञ्चक्रुर्वक्तव्यं द्विजसत्तम।।४९।।

शुभयोग शुभदृष्टि के अभाव में भी कुछ नहीं होता है।।४९।।

उभयोः पापयोगे च कश्चिद्रोगार्तिको भवेत्।
क्लेशः शोको नृपाद्भीतिः देशपर्यटनं द्विज।।५०।।

यदि दोनों पाप योग करते हों तो कुछ रोग आदि होते हैं, क्लेश, शोक, राजा से भय, देशपर्यटन होता है।।५०।।

शुभदृष्टेरभावे च शुभयोगविवर्जिते।
पापयोगप्रभावेण मरणं सारणं दृशा।।५१।।

शुभदृष्टि के अभाव में शुभयोग के बिना पापयोग के प्रभाव से मरण होता है।।५१।।

शुभयोगदृष्ट्यभावे पापयोगे द्विजोत्तम।
शुभवर्गो पापवर्गो तवाग्रे कथयाम्यहम्।।५२।।

अब मैं शुभ वर्ग और पाप वर्ग को कह रहा हूँ।।५२।।

अर्कारमन्दफणिनः क्रमात् क्रूरायथाक्रमम्।
चन्द्रोऽपि क्रूर एवात्र क्वचिदङ्गारकाश्रयात्।।५३।।

सूर्य, भौम, शनि और राहु ये यथाक्रम से क्रूर होते हैं। चन्द्रमा भी कभी भौम के संसर्ग से क्रूर होता है।।५३।।

गुरुःकविशिखिज्ञाश्च यथापूर्वं शुभग्रहाः।
क्रूरखेटा महाप्राज्ञ चार्काद्या उत्तरोत्तरम्।।५४।।

गुरु, शुक्र, केतु और बुध ये यथाक्रम से शुभग्रह हैं। सूर्यादि ग्रह क्रूर होते हैं।।५४।।

क्रूराः क्रूरभगाश्चैव महत्क्रूरा भवन्ति च।
शुभक्षेत्रगतैः क्रूरैः क्रूरता ह्युपशाम्यति।।५५।।

क्रूर ग्रह क्रूरग्रह की राशि में हों तो बड़े क्रूर होते हैं। शुभग्रह की राशि में क्रूरग्रह हों तो उनकी क्रूरता शान्त हो जाती है।।५५।।

गुर्वादयः शुभग्रहा यथापूर्वं बुधः कविः।
कवितः केतु विज्ञेयः केतुतो वाक्पतिर्द्विज।।५६।।

गुरु आदि शुभग्रह बुध से शुक्र यथापूर्व बली होते हैं। शुक्र से केतु और केतु से गुरु क्रम से उत्तरोत्तर बली होते हैं।।५६।।

क्रमेणैव विजानीयाच्छुभखेटोत्तरोत्तरम्।
यथापूर्वं क्रूरग्रहाः क्रूराश्रयसमागते।।५७।।

इसी क्रम से क्रूरग्रह क्रूरराशि में यथाक्रम से बली होते हैं।।५७।।

एवं क्रौर्यं समापन्नं क्रौर्यं तु शोभनाश्रयः।
एवं गुर्वादि सौम्याश्च शुभाः श्रेयातिशोभनाः।।५८।।

एवं गुरु आदि शुभग्रह भी शुभराशि में अत्यंत शुभद होते हैं।।५८।।

क्रूराश्रये सौम्यखेटाः सौम्यता नश्यते क्वचित्।
एवमेवापरायुक्तिं कथयामि द्विजोत्तम।।५९।।

कभी-कभी क्रूरग्रह की राशि में गये हुए शुभग्रह अपनी शुभता को नाश कर देते हैं।।५९।।

प्रत्येकं शुभराशिस्थो उच्चस्थो वा बुधः शुभः।
गुरुशुक्रौ च सौम्यस्थौ ततोऽन्ये च शुभाः स्मृताः।।६०।।

प्रत्येक शुभराशि में वा अपनी उच्चराशि में बुध शुभद होता है एवं गुरु-शुक्र शुभराशि में अत्यंत शुभद होते हैं।।६०।।

पूर्वस्मिन् पापयोगेन योगभङ्गद्वये द्विज।
निरूपितं तवाग्रे च निर्विशङ्कं न संशयः।।६१।।

एवं पूर्वोक्त पापग्रह के योग से दोनों पूर्वोक्त भंग योग कहा गया है।।६१।।

योगद्वयेऽपि भङ्गार्थे पापदृष्टौ विशेषकम्।
न दर्शयति कदापि स्यात् तवाग्रे कथयामि वै।।६२।।

किन्तु दोनों योगों में विशेषतः पापदृष्टि अपेक्षित है।।६२।।

शुभग्रहाणामभावे मन्दारेन्दुनिरीक्षिते।
पापयोगे शुभैर्दृष्टे परतश्चायुषि द्विज।।६३।।
प्राणिरुद्रेऽप्यगौणेन शुभयोगविवर्जिते।
पापयोगेऽथवा दृष्टे तथा शुभनिरीक्षिते।।६४।।

शुभग्रहों की दृष्टि न हो, शनि,भौम, चन्द्रमा देखते हों अथवा पापग्रह का योग वा दृष्टि हो, शुभग्रह देखता हो तो पूर्ववत् तारतम्य से फल का विचार करना चाहिए।।६४।।

व्यापारतानुविज्ञेया पूर्ववद्द्विजसत्तम।
अत्रोपपदपापाच्च राहोरप्युपलक्षणम्।।६५।।

इसी प्रकार उपपद की चर्चा से राहु की चर्चा से उपलक्षण मात्र है।।६५।।

एवं सूर्यातिरिक्तोऽपि पापयोगस्तथैव च।
तस्यैवेहानुवादाच्च राहोश्चोपबृंहणात्।।६६।।

सूर्य के अतिरिक्त पापग्रह के योग से भी योग होता है।।६६।।

परिग्रहदर्शनाच्च परतो रुद्रमाश्रयात्।
शुभस्थाने आयुरन्तः शूलत्रयमलङ्घनात्।।६७।।

इन परिग्रहों के रहते हुए रुद्रग्रह के आश्रय से शूलान्त पर्यन्त आयु होती है।।६७।।

न तु शूलदशायां च आयुरन्तं द्विजोत्तम।
एवं शूले चेत्तदन्तशूलरीत्येति बाधके।।६८।।

किन्तु शूल में मृत्यु न होकर उसके अन्त में मृत्यु होती है।।६८।।

पूर्वोक्तपापयोगेन शुभयोगेन दृष्टितः।
कृतयोगद्वयस्यापि भङ्गार्थे च वदाम्यहम्।।६९।।

पूर्वोक्त दोनों योगों के भंग के लिए कह रहा हूँ। शुभग्रह का योग होने से पापग्रह का योग दुर्बल हो जाता है।।६९।।

शुभयोगेन वै विप्र पापयोगोऽतिदुर्बलः।
शुभदृष्टिकृतो योगः पापदृष्टे कथं क्षमः।।७०।।

एवं शुभ दृष्टि होते हुए पापग्रह की दृष्टि कैसे समर्थ हो सकती है।।७०।।

न भञ्जनसमर्थश्च कोटियत्ने कृते द्विज।
शुभकृद्योगभङ्गार्थे पापयोगमपेक्षितम्।।७१।।

शुभग्रहजनित योग के भंग के लिए पापग्रहजनित योग होना आवश्यक है ।।५६-७१।।

शुभयोगे दृष्टिकृते पापयोगोऽपि भञ्जकः।
शुभदृष्टिकृते योगः पापयोगो विनश्यति।।७२।।

शुभग्रह का योग वा दृष्टि होने से पापयोग का भंग हो जाता है।।७२।।

यदायुर्दायमध्यस्थं वेदितव्यं द्विजोत्तम।
पापमात्रस्य शूलत्वे प्रथमर्क्षे मृतिं वदेत्।।७३।।

केवल पापयोग की दृष्टि मात्र ही हो तो प्रथम शूल में ही मृत्यु होती है।।७३।।

द्वौ रुद्रौ पूर्ववक्ष्येऽहं यदि चैकत्र संस्थितौ।
मित्रमध्यमशूलर्क्षे शुभमात्रेऽन्तिमे मृतिः।।७४।।

पूर्वोक्त दोनों रुद्र यदि एक ही स्थान में हों तो मध्यम शूल में मृत्यु होती है।।७४।।

द्वयोः पापे च प्रथमे शूले मृत्युर्भवत्यपि।
यद्येकरुद्रः पापी च द्वितीयः शुभखेचरः।।७५।।

यदि एक रुद्र पापी हो और दूसरा शुभ हो तो मध्य शूल में मृत्यु होती है।।७५।।

मध्ये शूले मृतिर्विप्र निर्विशङ्कं भविष्यति।
शुभग्रहद्वयं विप्र एकत्र यदि तिष्ठति।।७६।।

और शुभमान्य का संबंध हो तो तीसरे शूल में मृत्यु होती है।।७६।।

अन्तशूले मृतिर्ज्ञेया शूलिना भाषितं पुरा।
एवं भेदानुभेदेन विद्यात् सर्वत्र बुद्धिमान्।।७७।।

इस प्रकार के भेदानुभेद से सर्वत्र विचार करना चाहिए। यह आवश्यक है कि दोनों रुद्र पाप वा शुभ हों।।७७।।

शूलक्षेत्रे च द्वौ रुद्रौ यदि पापोऽथवा शुभः।
मिश्रग्रहोऽथ वा विप्र चिन्तयेद्बलवत्तरः।।७८।।

वा मिश्रग्रह हैं और दोनों में बली कौन।।७८।।

दीर्घायुरायुयोगेन भङ्गाभावे द्विजोत्तम।
मृत्युः शूलदशायां च पापयोगं विना रविः।।७९।।

दीर्घायु योग में भंग के अभाव में रवि के बिना अन्य पापग्रहों के योग होने से शूल दशा में मृत्यु होती है।।७९।।

क्रूराश्च येषु क्षेत्रषु शुभानामाश्रयेषु च।
निर्याणमितरेषां तु शूलर्क्षे निर्दिशेदयम्।।८०।।

क्रूरग्रह जिस राशि में शुभग्रह के आश्रय से हों तो यह निर्याण अन्य ग्रहों के शूल में कहना चाहिए।।८०।।

शुभानामत्र पक्षे तु तथा क्रूराश्रयेषु च।
तस्मिन् जातकशूलर्क्षे मृतिं ब्रूयान्न संशयः।।८१।।

शुभग्रहों के पक्ष में क्रूरग्रहों के आश्रय में शूलर्क्ष में जातक की मृत्यु होती है।।८१।।

यद्यप्राणिरुद्रयोगे यत्किञ्चिन्न्यूनता द्विज।
तर्हि रुद्राश्रयं तच्च त्रिधा न परतोऽपि च।।८२।।

यदि निर्बल रुद्र के योग में कुछ न्यूनता हो तो रुद्राश्रय के द्वारा मृत्यु का विचार करना चाहिए।।८२।।

रुद्राश्रयेऽपि चायुर्दा समाप्तिर्भवति ध्रुवम्।
प्रायेण चिन्तयेद्विप्र पूर्वापरप्रयत्नतः।।८३।।

रुद्राश्रय में भी आयु की समाप्ति होती है।।८३।।

यद्बाह्यप्राणिरुद्रस्य योगे पूर्णे भवत्यपि।
रुद्रशूलपरत्वेन आयुर्दायसमाप्तये।।८४।।

जो बाह्य प्राणीरुद्र के योग में पूर्ण आयु होने स रुद्रशूलान्त आयु कहा है।।८४।।

रुद्राश्रयेण प्रायेण शूलमेकद्वयं त्रयम्।
उल्लङ्घनं कृतं विप्र यदि योगविशेषता।।८५।।

तथा रुद्राश्रय से प्रायः एक, दो वा तीसरे शूल का उल्लंघन योग-विशेष से किया है तो वह प्रायः रुद्राश्रय से ही होता है।।८५।।

तर्हि रुद्राश्रयेणैवं प्रायेणायुर्भवेद् ध्रुवम्।
तावद्वर्षेण कथनं जीवनं जातकस्य च।।८६।।

अतः उतना ही वर्ष जातक का जीवन कहना चाहिए।।८६।।

इत्युक्तं च प्रयाणे च पूर्वं रुद्राश्रयाद्द्विज।
आयुर्योगसमाप्तिश्च कष्टयोगादिकारकम्।।८७।।

उक्त योगादि निधन को प्रायः रुद्र के आश्रय से कहा है।।८७।।

रुद्राश्रयात्तु ह्येवं च निरुक्तं चायुषि द्विज।
किञ्चिद्विशेषरूपं च तवाग्रे दर्शयामि च।।८८।।

अब कुछ विशेष रूप से कह रहा हूँ।।८८।।

मेषलग्ने विशेषेण आयुरुद्राश्रयान्तके।
कुष्ठरोगादि कुर्वीत पूर्णायुर्न समाप्यते।।८९।।

मेष लग्न में रुद्राश्रयांत में कुष्ठरोगादि होता है और पूर्णायु को नहीं भोगता है।।८९।।

द्वन्द्वराशौ स्थितौ रुद्रौ प्राणी गौणद्वयेऽपि वा।
रुद्राश्रये तदन्ते वा आयुर्दायं भवत्यपि।।९०।।

मिथुन राशि में रुद्र हो तो रुद्राश्रय में वा उसके अंत में आयु की समाप्ति होती है।।९०।।

आयुर्वा योगभेदेन प्रथमे मध्यमोत्तमे।
दर्शयामि तवाग्रे च कथां शम्भुप्रचोदिताम्।।९१।।

पूर्व में जो अल्पायु, मध्यमायु और दीर्घायु योग कहा है।।९१।।

स्वल्पायुः प्रथमे शूले मध्यमायुर्द्वितीयके।
दीर्घायुश्च तृतीयान्ते शूले च निधनं भवेत्।।९२।।

उसमें अल्पायु हो तो प्रथम शूल में, मध्यायु हो तो द्वितीय शूल में और दीर्घायु हो तो तृतीय शूलांत तक आयु होती है।।९२।।

ततो फलविशेषार्थं माहेश्वरग्रहं द्विज।
लक्षयन्ति तवाग्रे च तस्मादायुर्विनिश्चितम्।।९३।।

ग्रह का निर्णय कह रहा हूँ।।९३।।

चिन्तयेत्कारके लग्ने ह्यष्टमेशो महेश्वरः।
अथैवान्यप्रकारेण माहेश्वरं वदाम्यहम्।।९४।।

आत्मकारक से अष्टमेश महेश्वर ग्रह होता है। अन्य प्रकार से माहेश्वर ग्रह को कह रहा हूँ।।९४।।

कारके तुङ्गराशिस्थे स ग्रहो बलवत्तरः।
रिःफरन्ध्राधिपोर्मध्ये सोऽपि माहेश्वरो ग्रहः।।९५।।
कारकाच्च ग्रहाभावे नाथो माहेश्वरो भवेत्।
रिष्फरन्ध्राधिपौ विप्र बले सामान्यतां यदि।।९६।।

आत्मकारक अपनी उच्चराशि में हो तो आत्मकारक से १२, ६ वें भाव के स्वामियों में जो बली हो वही महेश्वरग्रह होता है।।९५-९६।।

द्वयं माहेश्वरं यातो यथा रुद्रग्रहौ द्वयम्।
ताभ्यां च निर्णयार्थाय प्रकारान्यं वदाम्यहम्।।९७।।

यदि दोनों में बल की समानता हो तो दोनों माहेश्वर होते हैं।।९७।।

स्वकारकस्य योगश्चेद्राहुकेतुरवीन्विना।
माहेश्वरो भवत्येव विकल्पेन द्विजोत्तम।।९८।।

यदि आत्मकारक के साथ राहु-केतु हों।।९८।।

कारकस्याष्टमे पापग्रहो माहेश्वरो भवेत्।
रविचन्द्रौ च चान्द्रिश्च गुरुः शुक्रः शनिस्तमः।।९९।।

अथवा आत्मकारक से आठवें हों तो कारक से षष्ठेश रवि, चन्द्रमा, बुध, गुरु, शुक्र, शनि।।९९।।

शिखिना गणनायां च यः षष्ठः कारकग्रहात्।
सोऽपि माहेश्वरो ज्ञेयो नवभागसमुच्चयात्।।१००।।

तथा केतु में से जो छठे हो वह माहेश्वर होता है।।१००।।

माहेश्वरग्रहस्यापि ब्रह्मसाहित्यकेन च।
ततो ब्रह्मग्रहं वक्ष्ये विशेषेण फलाय वै।।१।।

माहेश्वर ग्रह के अनुसार ही ब्रह्मग्रह की भी परिचर्या होने के कारण ब्रह्मग्रह का विचार कह रहा हूँ।।१।।

लग्नाद्वा सप्तमाद्वापि रिपुरन्ध्रव्ययाधिपाः।
एतेषु बलवान्विप्र मेषादिविषमस्थिते।।२।।

लग्न वा उससे सप्तम इन दोनों में जो बलवान् हो, उससे ६।८।१२ भाव के स्वामियों में जो बलवान् हो, वह मेषादि विषम राशियों में हो।।२।।

लग्नसप्तमयोर्मध्ये राशेश्च बलवान्भवेत्।
उच्चैरपृष्ठभागाद्यः संयोगो विद्यमानतः।।३।।

और लग्न वा सप्तम के पृष्ठभाग में उक्त तीनों गुणों से युक्त हो तो वह ब्रह्मग्रह होता है।।३।।

एतद् गुणत्रयाद् युक्तः सोऽपि ब्रह्माग्रहः स्मृतः।
लग्नस्य पृष्ठभागं च द्यूनाल्लग्नावधिर्द्विज।।४।।

सप्तम से लग्न पर्यन्त ६ भाव लग्न का पृष्ठ भाग।।४।।

सप्तमस्य पृष्ठभागं षट्कलग्नादिकं द्विज।
बलवान्विषमस्थोऽपि ब्रह्माखेटः स उच्यते।।५।।

और लग्न से सप्तम भाव के अन्दर सप्तम का पृष्ठभाग होता है।।५।।

ब्रह्मणालक्षणाक्रान्ते बलवान्वापि पातयोः।
शनिराहुरथो केतुर्यदि षष्ठो ग्रहो द्विज।।६।।

यदि ब्रह्मग्रह के लक्षण से युक्त शनि, राहु वा केतु हो तो इनमें जो बलवान् हो इनसे षष्ठेश ब्रह्मा होता है।।६।।

रव्यादिगणनायां च शन्यादौ तृतीयो ग्रहः।
स्थानात्षष्ठराशिगे च षष्ठराश्यधिपोऽथवा।।७।।

सूर्यादि गणना से शनि आदि शनि से तीसरा ग्रह स्थान से ६ठा अथवा षष्ठेश।।७।।

सोऽपि ब्रह्माग्रहो ज्ञेयो निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।
बहुना ब्रह्मणाक्रान्ते को ग्रहो ग्राह्यमाणकः।।८।।

यदि बहुत से ग्रह ब्रह्मा के लक्षण के हों तो वही ब्रह्मग्रह होता है, जिसका।।८।।

सन्देहे निर्णयं चात्र तवाग्रे कथयामि च।
द्वित्र्यादिकः ग्रहाणां च योगो ब्रह्मेति लक्षितः।।९।।
योगः स्वजातिर्यो ग्राह्यः कारकं याति यो ग्रहः।
बहूनामधिको भामः सोऽपि ब्रह्मा ग्रहोच्यते।।१०।।

अधिक अंश होता है वही ब्रह्मा होता है।।१०।।

राहुर्ब्रह्मत्वयोगेन अधिकारी यदा भवेत्।
विपरीतं विजानीयात्सर्वेषु न्यूनभागकम्।।११।।

यदि राहु ब्रह्मयोग का अधिकारी हो तो वहाँ विपरीत समझना चाहिए अर्थात् न्यूनांश वाला ही ब्रह्मा होता है।।११।।

इत्येकपापे पूर्वोक्तं ब्रह्मणा ग्रहकारकात्।
रन्ध्राधीशोऽष्टमस्थो वा जात्यप्राणैक्यवाक्यतः।।१२।।

अथवा आत्मकारक से अष्टमस्थ ग्रह वा अष्टमेश ब्रह्मा होता है।।१२।।

द्वौ ब्रह्मा विपरीतार्थे ह्यथवा बहुब्रह्मणा।
सामान्यभागान्तरे हि कतमो ग्राह्यमाणकः।।१३।।

यदि पूर्वोक्त लक्षण से युक्त दो ब्रह्मा हों और अंशों में साधारण न्यूनाधिकता हो तो कौन-सा ग्रह ब्रह्मा होगा।।१३।।

सर्वे भागसमानास्तु अग्रहात्सग्रहो बली।
इति न्यायेन विज्ञेयं बलवान् ब्रह्मणोच्यते।।१४।।
ब्रह्मत्वेन प्रधानेन ब्रह्मकार्यं करोत्यपि।
स च ब्रह्मग्रहो ग्राह्यः पुरा शम्भुप्रचोदितः।।१५।।

अथवा सभी के अंश समान हों तो जो ग्रह युक्त हो वही बली होता है, इत्यादि रीति से जो बलवान् हो वही ब्रह्मा होता है।।१४-१५।।

अधुना सम्प्रवक्ष्यामि ब्रह्ममाहेश्वरस्य च।
विशेषेण फलं सम्यग्तवाग्रे द्विजनन्दन।।१६।।

हे द्विजनंदन! अब मै विशेष रूप से ब्रह्म और माहेश्वर ग्रहों के फल को तुमसे कह रहा हूँ।।१६।।

ब्रह्मग्रहाश्रितेशस्य दशादिः परिचिन्तयेत्।
माहेश्वरर्क्षपर्यन्तं जातकस्यायुषि द्विज।।१७।।

ब्रह्मग्रहाश्रित राशि की दशा और माहेश्वर ग्रह की राशि की दशा को बनाना चाहिए। ब्रह्मग्रह की राशिदशा से माहेश्वर ग्रह की राशि दशा पर्यन्त ही जातक की आयु होती है।।१७।।

तत्तद्राशित्रिकोणेषु राशिरन्तर्गते मृतिः।
चराच्च स्थिरपर्यन्तं दशायां चिन्तयेद्द्विज।।१८।।

दशाओं के त्रिकोण राशियों की अंतर्दशा में मृत्यु होती है। अतः चर से स्थिर राशि की दशा पर्यन्त यह विचार करना चाहिए।।१८।।

तथा महादशायां च आयुर्दायं विलोकयेत्।
विंशोत्तर्यादिकं चैव यथान्यायेषु योजयेत्।।१९।।

तथा विंशोत्तरी महादशा और अंतर्दशा में भी आयु का विचार करना चाहिए।।१९।।

माहेश्वरस्य यो राशिरष्टमेशाश्रयी द्विज।
तत्तद्राशित्रिकोणेषु राशावन्तर्गते मृतिः।।२०।।

अथवा माहेश्वर से अष्टमेश के आश्रयीभूत जो राशि हो उस राशि से त्रिकोण राशि की अन्तर्दशा में मृत्यु होती है।।२०।।

अत्राब्द इति निर्देशात्तत्तद्राशिदशाक्रमः।
अब्दो द्वादशधाभागे अन्तरैकेकराशि च।।२०।।

यहाँ पर वर्ष दशाकम से लेना चाहिए और वर्ष में १२ का भाग देने से अन्तर्दशा का वर्ष होता है।।२१।।

षष्ठाष्टमेशौ भवतो मारकावष्टमेश्वरः।
प्रायेण मारको राशिदशास्त्वत्र विशेषतः।।२२।।

षष्ठेश और अष्टमेश मारक होते हैं, किन्तु प्रायः अष्टमेश ही मुख्य मारक होता है।।२२।।

षष्ठभे पापभूयिष्ठे षष्ठेशो मुख्यमारकः।
षष्ठात् त्रिकोणगो वापि मुख्यमारक इष्यते।।२३।।

छठे स्थान में अधिक पापग्रह हों तो षष्ठेश ही मुख्य मारक होता है अथव षष्ठेश से त्रिकोण राशि मारक होती है।।२३।।

मध्यायुषि मृतिः षष्ठदशायामष्टमस्य वा।
षष्ठात् त्रिकोणस्य पुनर्दीर्घाल्पविषये भवेत्।।२४।।

यदि मध्यायु हो तो छठी वा आठवीं दशा में मृत्यु होती है। दीर्घायु और अल्पायु हो तो छठे से त्रिकोण की दशा में मृत्यु होती है।।२४।।

षष्ठे बलयुते तस्य त्रिकोणे मृतिमादिशेत्।
षष्ठेशश्चेद्बलाढ्यः स्यात् तत्त्रिकोणे मृतिं वदेत्।।२५।।

यदि छठा स्थान बली हो तो उसके त्रिकोण में मृत्यु होती है। यदि षष्ठेश बलवान् हो तो उसके त्रिकोण में मृत्यु होती है।।२५।।

व्यवस्थेयं समस्तापि कारकादिदशास्वपि।
बलिनः शुक्रशशिनोर्ग्राह्यं षष्ठाष्टमादिकम्।।२६।।

यह व्यवस्था सभी कारक दशाओं में होती है। शुक्र-चन्द्रमा बली हों तो छठे, आठवें को लेना चाहिए।।२६।।

इति रुद्रमाहेश्वरब्रह्मग्रहादि मारकाध्यायः।

अथ पित्रादिनिर्याणाध्यायः

अधुना सम्प्रवक्ष्यामि पित्रादेश्च द्विजोत्तम।
योगं निर्याणकाख्यातं यथा शम्भुप्रणोदितम्।।१।।

हे द्विजोत्तम! अब मै पित्रादिकों के मरण समय को कह रहा हूँ, जैसा कि शंकरजी ने कहा है।।१।।

लग्नसप्तमयोर्मध्ये यो राशिर्बलवान्द्विज।
तस्य राशेः समारभ्य क्रमेण पूर्ववद्द्विज।।२।।

लग्न और सप्तम में जो राशि बलवान् हो उस राशि के अनुसार ।।२।।

प्रवर्त्तकदशारीत्या रुद्रशूलदशान्तरे।
भविष्यति पितुर्मृत्युर्निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।३।।

प्रवर्तमान दशा से रुद्रशूल की दशा अन्तर में निश्चय ही पिता की मृत्यु होती है।।३।।

लग्नाद्वा सप्तमाद्वापि नवराशिर्बली द्विज।
निर्विशंकं भवेत्तस्य शम्भुना कथितं पुरा।।४।।

लग्न और सप्तम में जो बली राशि हो उससे नवम राशि वह पितृकारक होती है।।४।।

मातापित्रोः कारकाभ्यां चिन्तयेत्पूर्ववद्द्विज।
तदायुर्निधनं चापि दीर्घादीनां प्रभेदतः।।५।।

एवं माता- पिता के कारकों से पूर्ववत् उनकी आयु का विचार करना चाहिए।।५।।

भानुभार्गवयोर्मध्ये सद्वीर्याधिक्यतो द्विज।
ग्रहादित्यादिरीत्या च सखेटः पितृकारकः।।६।।

सूर्य और शुक्र में जो बली हो वह सूर्यादि ग्रहों में पितृकारक होता है।।६।।

चन्द्रमङ्गलयोर्मध्ये तथैव रविशुक्रयोः।
बलेन रहितः सोऽपि पापग्रहनिरीक्षितः।।७।।

चन्द्र- भौम में जो बलवान् हो वह मातृकारक होता है। इन चारों ग्रहों में निर्बल भी कारक होता है, किन्तु वह निर्बल पापग्रह से देखा जाता हो तो।।७।।

पित्रादिकर्त्ता भजते यथाक्रम द्विजोत्तम।
उभयोर्बलसाम्ये च उभौ पित्रादिकारकौ।।८।।

दोनों के बल समान हों तो दोनों पित्रादि कारक होते हैं। यहाँ दो प्रकार से बली और निर्बल लेना चाहिए।।८।।

द्विविदं चिन्तयेत्तत्र प्राण्यप्राणिविभेदतः।
पित्रादिकारकस्यैवं प्राणिफलं वदाम्यहम्।।९।।

इस प्रकार दो तरह के बली और निर्बल कारक होते हैं, जिसमें बलवान् पित्रादि कारक के फल को कह रहा हूँ।।९।।

पित्रादिकारके विप्र शुभग्रहनिरीक्षिते।
मातृकारकाश्रयीभूतराशिरेतत् त्रिकोणके।।१०।।

पित्रादि कारक शुभग्रह से देखा जाता हो एवं मातृकारक भी शुभ ग्रह से देखा जाता हो तो उनकी आश्रयीभूत राशि के त्रिकोण राशि की।।१०।।

दशायां निधनं वाच्यं मातापित्रोरथ त्रयम्।
इति प्राणिकारकस्य तवाग्रे कथितं फलम्।।११।।

दशा में माता- पिता की मृत्यु कहना चाहिए। इस प्रकार बली कारक से फल को कहा।।११।।

अप्राणिकारकस्यैवमष्टमेशो बलान्वितः।
तस्याश्रयीभूतराशित्रिकोणे निधनं भवेत्।।१२।।

तथा निर्बल कारक से अष्टमेश बली हो तो उसकी आश्रयीभूत राशि के त्रिकोण राशि की दशा में मृत्यु होती है।।१२।।

यदा रन्ध्रेश वीर्याढ्यं तच्छूले निधनं भवेत्।
पितृमातृकारकयोः शूले निधनमेव च।।१३।।

यदि अष्टमेश बली हो तो उसके शूल में अथवा पितृ-मातृकारक के शूल में मृत्यु होती है।।१३।।

अथ बाल्ये पितृमरणयोगमाह—

पित्रोः कारकयोर्विप्र प्राण्यप्राणिहीनोऽपि च।
अर्कहीने पापयोगे शुभयोगविवर्जिते।।१४।।

पितृकारक और मातृकारक के बली और निर्बल होते हुए भी यदि कारक रवि को छोड़कर अन्य पापग्रहों के साथ हो तथा शुभग्रह से योग न होता हो तो।।१४।।

द्वादशाब्दान्न्यूनवर्षे पित्रोर्मृत्युर्यथाक्रमम्।
रविदृष्टावशुभयोगे नायं योगो द्विजोत्तम।।१५।।

बारह वर्ष की अवस्था के अन्दर ही बालक के माता-पिता की मृत्यु हो जाती है। सूर्य देखता हो और पापग्रह का योग होता हो तो यह योग नहीं होता है।।१५।।

रव्यारूढविलग्नेऽपि पित्रोर्भावं विचारयेत्।
तद्दशायां फलं वाच्यं पित्रोर्दुःखसुखादिकम्।।१६।।

रवि के आरूढ़ लग्न से भी पितृभाव का विचार कर उनकी दशा में माता-पिता के दुःख-सुख का विचार करना चाहिए।।१६।।

अथ मातुर्निर्याणम्—

लग्नाद्वा सप्तमाद्वापि बली राशिचतुर्थकः।
तस्याः शूलदशायां च मातुर्मृत्युर्न संशयः।।१७।।

लग्न वा सप्तम में जो बली हो उससे चौथी राशि की शूलदशा में माता की मृत्यु होती है।।१७।।

अथ भ्रातृनिर्याणम्—

लग्नाद्वा सप्तमाद्वापि बली वीक्षेत्तृतीयकम्।
तस्याः शूलदशायां च भ्रातृनिर्याणमेव च।।१८।।

लग्न और सप्तम में जो बली हो, उससे तृतीय राशि की शूलदशा में भाई का निधन होता है।।१८।।

अथ ज्येष्ठभ्रातुर्निर्याणम्—

लग्नाद्वा सप्तमाद्वापि लाभराशिर्बली द्विज।
तस्याः शूलदशायां च निर्याणमग्रजस्य च।।१९।।

लग्न वा सप्तम में जो बली हो, उससे ११वीं राशि की शूल दशा में ज्येष्ठ भाई की मृत्यु होती है।।१९।।

भगिनी-पुत्रयोर्निर्याणम्—

लग्नाद्वा सप्तमाद्वापि राशिपञ्चमके बली।
तस्याः शूलदशायां च निर्याणं भगिनीपुत्रयोः।।२०।।

लग्न और सप्तम में जो बली हो, उससे पाँचवीं राशि की शूलदशा में भगिनी और पुत्र का निर्याण होता है।।२०।।

अथ कलत्रनिर्याणमाह—

कलत्रकारकः खेटस्तथा स्त्रीराशिचिन्तनम्।
तत्त्रिकोणदशायां च कलत्रनिधनं भवेत्।।२१।।

स्त्रीकारक और सप्तम में जो बली हो, उससे त्रिकोण राशि की दशा में स्त्री का निधन होता है।।२१।।

अथान्येषां निर्याणमाह—

तत्तत्कारकाश्च ये ये च त्रिकोणदशान्तरे।
तेषां च मातुलादीनां निधनं भवति ध्रुवम्।।२२।।

इससे अतिरिक्त जिसके निधन का विचार करना हो उसके कारकों की आश्रयीभूत राशि की दशा अंतर में उन लोगों का (मामा आदि का) निधन कहना चाहिए।।२२।।

अथ मृत्युसमये कष्टादिज्ञानमाह—

लग्नाद्वा कारकाच्चापि तृतीये पापखेचरे।
युते दृष्टेऽथ वा विप्र दुष्टं मरणमुच्यते।।२३।।

लग्न वा कारक से तीसरे स्थान में पापग्रह युत हों वा देखते हों तो जातक का दुर्मरण कष्ट से होता है।।२३।।

तत्तत्कारकतदीशात्तृतीये पापयोगकृत्।
तेषां तेषां प्रवक्तव्यं दुष्टं मरणमेव च।।२४।।

जिन लोगों के कारक और भावेश से तीसरे भाव में पापग्रह का योग हो, उनका दुष्ट मरण कहना चाहिए।।२४।।

तत्तद्भावात्कारकेशात्तृतीये शुभदृष्टियुक्।
तेषां तेषां प्रवक्तव्यं मरणं शुभमेव च।।२५।।

जिन-जिन भावों वा कारकेशों से तीसरे भाव में शुभग्रह का योग और दृष्टि हो तो उनका मरण सुख से होता है।।२५।।

शुभाशुभद्वये योगे दृष्टौ वापि तृतीयके।
शुभाऽशुभात्मकं विप्र मरणं भवति ध्रुवम्।।२६।।

यदि शुभ-पाप दोनों युत वा देखते हों तो सुख-दुःख दोनों मरण के समय होता है।।२६।।

अथ मरणनिमित्तान्याह—

तृतीये भानुना दृष्टे तथा युक्ते बलाढ्यके।
राजहेतोश्च मरणं निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।२७।।

तृतीय भाव बलवान् सूर्य से युत वा दृष्ट हो तो राजा के कारण मृत्यु होती है।।२७।।

सहजे शशिना युक्ते दृष्टे वा यक्ष्मया मृतिः।
तृतीये शनिराहुभ्यां दृष्टे वापि युतेन वा।।२८।।

तीसरे भाव को चन्द्रमा देखता हो वा उसमें युत हो तो यक्ष्मारोग से मृत्यु होती है। तीसरा भाव शनि-राहु से युत वा दृष्ट हो तो।।२८।।

विषार्त्तिमरणं वाच्यं जलाद्वा वह्निपीडनात्।
गर्तादुच्चाच्च पतनं बन्धनाद्वा मृतिर्भवेत्।।२९।।

विष से वा जल से अथवा अग्निपीड़ा से मृत्यु होती है। अथवा ऊँचाई से गिरने वा बंधन से मृत्यु होती है।।२९।।

तृतीये चन्द्रमान्दी च षष्ठे वापि युते द्विज।
कृमिकुष्ठादिना तस्य मरणं च विनिर्दिशेत्।।३०।।

तीसरे भाव में वा छठे भाव में चन्द्रमा तथा गुलिक हों वा देखते हों तो कृमि वा कुष्ठ रोग से मृत्यु होती है।।३०।।

तृतीये गुरुणा दृष्टे युक्ते शोकादिना मृतिः।
तृतीये भृगुयुग्दृष्टे मेहरोगेण वै मृतिः।।३१।।

तीसरे भाव को गुरु देखता हो वा उसमें युत हो तो शोफरोग से मृत्यु होती है।।३१।।

बहुयुक्ते तृतीये च बहुरोगयुता मृतिः।
तृतीये केतु सत्खेटैर्योगे दृष्टेऽथवा द्विज।।३२।।

यदि बहुत से ग्रह तीसरे भाव में हों तो बहुत रोगों से मृत्यु होती है। तीसरे भाव में शुभ ग्रह हों वा देखते हों।।३२।।

तत्रैव चन्द्रयोगे च तत्तद्रोगेण वै मृतिः।
कुजेन व्रणशस्त्राग्निदाहाद्यैर्मृत्युमादिशेत्।।३३।।

और चंद्रमा का भी योग हो तो उनके रोग से मृत्यु होती है। तीसरे भाव में मंगल हो, या उसे देखता हो तो व्रण-शस्त्र-अग्नि से जलने आदि से मृत्यु होती है।।३३।।

तृतीये सौम्यसंयुक्ते दृष्टे वापि तथा द्विज।
ज्वरेण तस्य मृत्युः स्यान्निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।३४।।

तीसरे भाव में बुध हो अथवा उसे देखता हो तो ज्वर से मृत्यु होती है।।३४।।

अथ मरणप्रदेशज्ञानमाह—

तृतीये शुभयोगेन शुभदेशे मृतिर्भवेत्।
पापेन कीकटे देशे मिश्रे मिश्रस्थले मृतिः।।३५।।

तीसरे भाव में शुभग्रह का योग हो तो शुभ प्रदेश में मृत्यु होती है। पापग्रह का योग हो तो दुष्ट स्थान में और शुभ-पाप दोनों हों तो मिश्र स्थान में मृत्यु होती है।।३५।।

अथ ज्ञानपूर्वकं मृत्युमाह—

तृतीये गुरुशुक्राभ्यां योगे ज्ञानेन वै मृतिः।
गुरुशुक्रातिरिक्तानां योगे शिथिलता मृतौ।।३६।।

तीसरे भाव में गुरु-शुक्र हों तो ज्ञानपूर्वक मृत्यु होती है। इन दोनों से भिन्न ग्रह हों तो मृत्यु समय में अज्ञानता होती है।।३६।।

इति निधनप्रकरणम्।

अथ मारकभेदाध्यायः

त्रिविधाश्चायुषो योगाः स्वल्पायुर्मध्यमोत्तमाः।
द्वात्रिंशात्पूर्वमल्पायुर्मध्यमायुस्ततो भवेत्।
चतुःषष्ट्याः पुरस्तात्तु ततो दीर्घमुदाहृतम्।।१।।

तीन प्रकार के आयु के योग कहे गये हैं, जो कि अल्पायु, मध्यमायु और उत्तमायु वा दीर्घायु के नाम से प्रसिद्ध हैं। ३२ वर्ष से पूर्व अल्पायु होती है। इसके बाद ६४ वर्ष की अवस्था तक मध्यमायु होती है। इसके बाद दीर्घायु होती है।।१।।

उत्तमायुः शतादूर्ध्वं ज्ञातव्यं मुनिसत्तम।
चतुर्विंशतिवर्षान्तमायुर्ज्ञातुं न शक्यते।।२।।

इसके बाद १०० वर्ष तक दीर्घायु और इसके ऊपर उत्तमायु होती है। जन्म से २४ वर्ष पर्यन्त आयु का ज्ञान नहीं होता है अर्थात् उक्त समय तक आयु के ऊपर निर्भर नहीं रहना चाहिए।।२।।

जपहोमचिकित्साद्यैर्बालरक्षां तु कारयेत्।
पितृदोषैर्मृताः केचित्केचिन्मातृग्रहैरपि।।३।।

तब तक यानि २४ वर्ष की अवस्था पर्यन्त जप, होम, चिकित्सा आदि से बालकों की रक्षा करनी चाहिए। उक्त वर्ष के अंदर कोई पिता के ग्रहों से, कोई माता के ग्रहों से।।३।।

अपरेऽरिष्टयोगाच्च त्रिविधा बालमृत्यवः।
अल्पायुर्योगजातस्य विपत्तारां मृतिं वदेत्।।४।।

और कोई अरिष्ट योग से मर जाते हैं। इस तरह तीन प्रकार से बालकों की मृत्यु होती है। जिनकी अल्पायु होती है उनकी विपत्तारा की दशा में।।४।।

जातस्य मध्यमायुष्ये प्रत्यरौ च मृतिर्भवेत्।
दीर्घायुर्योगजातानां वधभे तु मृतिर्भवेत्।।५।।

मध्यमायु योग वाले की प्रत्यरि तारा की दशा में और दीर्घायु योग वाले की वध तारा की दशा में मृत्यु होती है।।५।।

अष्टमर्क्षं तृतीयं च लग्नादायुरुदाहृतम्।
द्वितीयं सप्तमस्थानं मारकस्थानमुच्यते।।६।।

जन्मलग्न से तीसरा और आठवाँ स्थान आयु का होता है और दूसरा तथा सातवाँ मारक स्थान होता है।।६।।

महामारकसंज्ञौ तौ मान्दिकेतू इति स्मृतौ।
जायाकुटुम्बकाधीशौ मारकावष्टमेश्वरौ।।७।।

मांदि और केतु महामारक होते हैं और सप्तम, द्वितीय और आठवें भाव के स्वामी मारकेश होते हैं।।७।।

प्रायेण मारको राशिदशास्तत्राविशेषतः।
षष्ठभे पापभूयिष्ठे षष्ठेशो मुख्यमारकः।।८।।

प्रायः इन स्थानों की राशियाँ मारक होती हैं। छठे स्थान में अधिक पाप ग्रह हों तो षष्ठेश मुख्य मारक होता है।।८।।

षष्ठत्रिकोणगो वापि मुख्यमारक इष्यते।
मध्यायुषि मृतिः षष्ठदशायामष्टमस्य वा।।९।।

छठे से त्रिकोण भी मारक होता है। मध्यायु में छठे या आठवीं दशा में मृत्यु होती है।।९।।

षष्ठात् त्रिकोणस्य पुनर्दीर्घाल्पविषयो भवेत्।
षष्ठे बलयुते तस्य त्रिकोणे मृतिमादिशेत्।।१०।।

दीर्घायु में षष्ठ से त्रिकोण की दशा में मृत्यु होती है। षष्ठ स्थान वा षष्ठेश बली हो तो उसके त्रिकोण की दशा में मृत्यु होती है।।१०।।

षष्ठेशश्चेद्बलाढ्यः स्यात्तत्त्रिकोणे मृतिं वदेत्।
व्यवस्थेयं समस्तापि कारकादिदशास्वपि।।११।।

यह व्यवस्था सम्पूर्ण मारक दशा के लिए हैं।।११।।

मारकेशदशाकाले मारकस्थस्य पापिनः।
पाके पापयुजां पाके सम्भवे निधनं भवेत्।।१२।।

मारकेश की दशा में मारक स्थानं स्थित पापग्रह की अन्तर्दशा में संभावना हो तो मृत्यु होती है।।१२।।

असम्भवे व्ययाधीशदशायां मरणं नृणाम्।
अभावे व्ययभावेशसम्बन्धिग्रहभुक्तिषु।।१३।।

यदि असंभव हो तो व्ययेश की दशा में मृत्यु होती है। इसके अभाव में व्ययेश के संबंधी ग्रह के अंतर में मृत्यु होती है।।१३।।

तदभावेऽष्टमेशस्य दशायां निधनं पुनः।
मन्दश्चेत्पापसंयुक्तो मारकग्रहयोगतः।।१४।।

इसके अभाव में अष्टमेश की दशा में मृत्यु होती है। शनि पापग्रह से युक्त हो और मारकेश के साथ योग करता हो तो।।१४।।

तिरस्कृत्य ग्रहान्सर्वान्निहन्ता पापकृच्छनिः।
मारकग्रहसम्बन्धी पापकर्त्ता शनिस्तदा।
तिरस्कृत्य ग्रहान्सर्वान्निहन्ता भवति ध्रुवम्।।१५।।

सभी ग्रहों को छोड़कर वही मारक हो जाता है।।१५।।

एतद्दशान्तभुक्त्यादौ विचार्य्यैव मृतिं वदेत्।
षष्ठद्रेष्काणपश्चैव तथा वैनाशिकाधिपः।।१६।।

छठे द्रेष्काण (लग्न से २२वें द्रेष्काण) का स्वामी और २३वें नक्षत्र का स्वामी।।१६।।

विपत्ताराप्रत्यरीशौ वधमेशस्तथैव च।
आद्यन्तपौ च विज्ञेयौ चन्द्राक्रान्तगृहात्तथा।।१७।।

विपत्तारा, प्रत्यरितारा, वधतारा का स्वामी, चन्द्र राशि से द्वितीय, द्वादश के स्वामी।।१७।।

दशाक्षिप्तेषु कालेषु मारको मरणप्रदः।
दुष्टतारापतेः पाके निर्याणं कथितं बुधैः।।१८।।

अपनी-अपनी दशाकाल मे मारक होते हैं अथवा पूर्वोक्त दुष्ट ताराओं के स्वामी की दशा में मृत्यु होती है।।१८।।

मारकग्रहाश्रितो राशिर्मारकस्वामिनोऽथवा।
ताभ्यां महादशाकाले विंशोत्तर्याः स्थिरादिकः।।१९।।

मारकेश के आश्रित राशि वा मारकेश जिस भाव में बैठा हो, उस राशि की महादशा में पापग्रह के अंतर में विंशोत्तरी के अनुसार मृत्यु होती है।।१९।।

पापे मृत्युर्विजानीयान्निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।
मारका बहवः खेटा यदि वीर्यसमन्विताः।।२०।।

यदि बलवान् बहुत से ग्रह हों तो सबसे बली होता है।।२०।।

तत्तद्दशान्तरे विप्ररोगकष्टादिसम्भवः।
षष्ठाधिपदशायां च निधनं भवति ध्रुवम्।।२१।।

वही मारक होता है, किन्तु उन लोगों की दशा-अन्तर के समय कष्टादि होता है तथा षष्ठेश की दशा में मृत्यु होती है।।२१।।

न्यूनातिरिक्तभेदेन बहुखेटास्तु मारकाः।
दुर्बलाश्रयराशीशदशास्वल्पार्तिदा भवेत्।।२२।।

न्यूनातिरिक्त अधिक मारक हों तो दुर्बल राशीश की दशा में अल्प कष्ट होता है।।२२।।

प्रबलस्य दशायां च महारोगार्त्तिमृत्युवत्।
भयशोकमृताद्भीतिस्तस्कराग्निभयं भवेत्।।२३।।
मारकस्य दशायां च महत्या निधनाश्रयी।
भूतामन्तर्दशामाह तवाग्रे कथयामि भोः।।२४।।

प्रबल की दशा में महारोग से कष्ट और मृत्यु होती है और भय, शोक, मृत्युभय, चोरभय तथा अग्निभय होता है।।२४।।

मारकग्रहाश्रयीभूतमहापाके विचिन्तयेत्।
कारकाच्च विलग्नाद्वा सप्तमाद्वा द्वितीयकम्।।२५।।

मारकेश के आश्रित राशि की दशा-अंतर्दशा काल में उपरोक्त सभी बातों का विचार करना चाहिए। कारक से अथवा लग्न से सप्तम से दूसरे।।२५।।

षष्ठाष्टरिःफनाथान्तमपहाराष्टके मृतिः।
तेषामन्तर्दशाधीशास्तेषां मध्ये बलाढ्यकः।।२६।।
तदीयान्तर्दशाकाले निधनं भवति ध्रुवम्।
अपरा पापकाले तु रोगदुःखार्तिवान्द्विज।।२७।।

छठे, आठवें, बारहवें इन आठों के स्वामियों की दशादि में मृत्यु कहना चाहिए। इनमें भी बलवान् अंतर्दशेश के समय में मृत्यु होती है और अन्य लोगों की अंतर्दशा आदि में रोग-दुःख आदि होता है।।२७।।

इति मारकभेदाध्यायः।

अथाष्टकवर्गाध्यायः

ज्ञात्वादौ करणस्थानं विन्दुरेखे च वर्गणाम्।
क्रमादष्टकवर्गस्य पृथक्कृत्य फलं वदेत्।।१।।

पहले भाव और ग्रहों के करण (शून्य) स्थान (रेखा) अर्थात् बिन्दु और रेखाओं का भलीभाँति ज्ञान करके तब अष्टकवर्ग के फल को-

कहना चाहिए। (इसका विस्तृत विवरण उत्तरार्ध में देखना चाहिए)।।१।।

अथ रवेरष्टकवर्गः—

स्वारार्किभ्यो दिनेशः स्वसुखमृतितपःखास्तलाभाद्ययातः
शुक्रादस्तारिरिष्फे अरितनयतपोलाभवर्त्तीसुरेज्यात्।
चन्द्राल्लाभारिकर्मत्रिषु शशितनयात्सान्त्यधर्मात्मजेषु
प्रोक्तो लग्नाद्व्ययाम्बूपचयगृहगतः सुप्रशस्तोऽष्टवर्गात्।।२।।

अपने स्थान से तथा भौम और शनि से १,२,४,८,९,१०,७ और ११ इन स्थानों में सूर्य शुभफलदायक होता है। शुक्र से ७,६,१२ स्थानों में, गुरु से ६,५,९,११ स्थानों में, चन्द्रमा से ११,६,१०,३, स्थानों में, बुध से पूर्वोक्त स्थानों (११।६।३।१०) के साथ ११,९ स्थानों में और जन्मलग्न से १२,४,३,६,१०,११ स्थानों में शुभफल देता है अर्थात् रेखाप्रद होता है।।२।।

रवेरष्टकवर्गाङ्काः

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ल.
१	३	१	३	५	६	१	३
२	६	२	५	६	७	२	४
४	१०	४	६	९	१२	४	६
७	११	७	९	११		७	१०
८		८	१०			८	११
९		९	११			९	१२
१०		१०	१२			१०	
११		११				११	

अथ चन्द्राष्टकवर्गः—

इन्दुर्ल्लग्नात्षडायत्रिदशषु कुसुतात्सस्वधर्मात्मजेषु
स्वात्सास्ताद्येषु सूर्यात्समदनमृतिषु त्र्यायधीषट्सुमन्दात्।
ज्ञात्केन्द्रात्मजाष्टत्रिषु विबुधगुरोः केन्द्ररन्ध्रान्त्यलाभे
शुक्राद्धीधर्मबन्धुस्मरसहजनभो लाभगश्च प्रशस्तः।।३।।

जन्मलग्न से ६,११,३,१० स्थानों में चन्द्रमा शुभफल देता है। भौम से २,३,५,६,९,१०,११ स्थानों में, अपने स्थान से १,३,६,७,१०,११ स्थानों में, सूर्य से ३,६ ,७,८,१०,११ स्थानों में; शनि से ३,११,५,६ स्थानों

अथ गुर्वष्टकवर्गचक्रम्—

बृ.	शु.	श.	सू.	चं.	मं.	बु.	ल.
१	२	३	१	२	१	१	१
२	५	५	२	५	२	२	२
३	६	६	४	७	४	४	४
४	९	१२	५	९	७	५	५
७	१०		७	११	८	६	६
८	११		८		१०	९	७
१०			९		१२	१०	९
११			१०			११	१०
			११				११

अथ शुक्राष्टकवर्गः—

चन्द्रो व्यस्तारिखेषु व्यरिमदननभोऽन्त्येषु लग्नात्प्रशस्तो।
व्यन्तास्ताराातिषु स्वाद्व्ययनिधनभवेष्वर्कतो दैत्यमन्त्री।।
धीधर्माष्टाप्तिबन्धुत्रिदशसु रविजाद्धीतपःस्वाष्टलाभे।
जीवात् ज्ञाद्धीत्रिलाभक्षतनवसुकुजाद्धीभवापोक्लिनेषु।।७।।

शुक्र चन्द्रमा से ७,६,१० स्थानों को छोड़कर शेष १,२,३,४,५,८,९,१०,११,१२ स्थानों में शुभफल देता है। लग्न से ६,७,१०,१२ को छोड़कर शेष स्थानों में, अपने स्थान से १२,६,७, को छोड़कर शेष स्थानों में, सूर्य से १२,८,११ स्थानों में, शनि से ५,९,८,११,४,३,१० स्थानों में, गुरु से ५,९,२,८,११, स्थानों में, बुध से ५,३ ,११,६,९ स्थानों में और भौम से ५,११,३,६,९,१२ स्थानों में शुभफल देता है।।७।।

अथ शुक्राष्टकवर्गचक्रम्—

शु.	श.	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	ल.
१	३	८	१	३	३	५	१
२	४	११	२	५	५	८	२
३	५	१२	३	६	६	९	३
४	८		४	९	९	१०	४
५	९		५	११	११	११	५
८	१०		८	१२			८
९	११		९				९
१०			११				११
११			१२				

अथ बुधाष्टकवर्गः—

ज्ञः शुक्रात्स्वाद्यलाभाष्टमनवमसुखेसत्रिपुत्रेकुजार्क्याः।
साज्ञादारेऽथ जीवाद्व्ययरिपुनिधनायेषुशस्तो दिनेशात्।।
धीधर्मान्त्यारिलाभे त्रितनुदशयुते स्वात्सषडाप्तिरन्ध्रे।
व्योमाम्बुधिरिन्दुतोऽरिस्वमृतितनुव्योमलाभाब्धिलग्नात्।।५।।

बुध शुक्र से २,१,११,८,९,४,३,५ स्थानों में शुभफल देता है। शनि से १,२,३,४ ,५,६,७,८,९,१०,११ स्थानों में, गुरु से १२,६,८,११ स्थांनों में, सूर्य से ५,९,१२ ,६,११ स्थानों में, अपने स्थान से ५,९,१२,६,३,१,१० स्थानों में, चन्द्रमा से २,४ ,६,८,१०,११ और लग्न से ६,२,८,१,१०,११,४ स्थानों में शुभफल देता है।।५।।

अथ बुधाष्टकवर्गचक्रम्—

बु.	बृ.	शु.	श.	सू.	चं.	मं.	ल.
१	६	१	१	५	२	१	१
३	८	२	२	६	४	२	२
५	११	३	४	९	६	४	४
६	१२	४	७	११	८	७	६
९		५	८	१२	१०	८	८
१०		८	९		११	९	१०
११		९	१०			१०	११
१२		११	११			११	

अथ गुर्वष्टकवर्गः—

जीवो भौमात्स्वकेन्द्रागममृतिषु रवेः सधीधर्मेष्वथश्वात्।
स्वत्रिष्विन्दुजात्षट्स्वसुखसुततनुव्योमधर्मागमेषु ।।
लग्नात्सास्तेषु चन्द्रात्स्मरगुरुधनधीप्राप्तिभेष्वर्कपुत्रात्।
धीषट्त्र्यन्तेषु शुक्रात्स्वसुतशुभमतोलाभविद्वेषिभेषु।।६।।

गुरु भौम से २,१,४,७,१०,११,८ स्थानों में शुभफल देता है, सूर्य से १,२,४,५,८ ,९,१०,११ स्थानों में, बुध से ६,२,४,५,१,१०,९,११ स्थानों में, लग्न से १,२,३ ,४,५,६,७,९,१०,११ स्थानों में, चन्द्रमा से ७,९,२,५,११ स्थानों में, शनि से ५,६ ,३,१२ स्थानों में, शुक्र से २,५,९,११,६ स्थानों में शुभफल देता है।।६।।

अथ गुर्वष्टकवर्गचक्रम्—

बृ.	शु.	श.	सू.	चं.	मं.	बु.	ल.
१	२	३	१	२	१	१	१
२	५	५	२	५	२	२	२
३	६	६	४	७	४	४	४
४	९	१२	५	९	७	५	५
७	१०		७	११	८	६	६
८	११		८		१०	९	७
१०			९		१२	१०	९
११			१०			११	१०
			११				११

अथ शुक्राष्टकवर्गः—

चन्द्रो व्यस्तारिखेषु व्यरिमदननभोऽन्त्येषु लग्नात्प्रशस्तो।
व्यन्तास्तारातिषु स्वाद्व्ययनिधनभवेष्वर्कतो दैत्यमन्त्री।।
धीधर्माष्टाप्तिबन्धुत्रिदशसु रविजाद्धीतपःस्वाष्टलाभे।
जीवात् ज्ञाद्धीत्रिलाभक्षतनवसुकुजाद्धीभवापोक्लिनेषु।।७।।

शुक्र चन्द्रमा से ७,६,१० स्थानों को छोड़कर शेष १,२,३,४,५,८,९,१०,११,१२ स्थानों में शुभफल देता है। लग्न से ६,७,१०,१२ को छोड़कर शेष स्थानों में, अपने स्थान से १२,६,७, को छोड़कर शेष स्थानों में, सूर्य से १२,८,११ स्थानों में, शनि से ५,९,८,११,४,३,१० स्थानों में, गुरु से ५,९,२,८,११, स्थानों में, बुध से ५,३ ,११,६,९ स्थानों में और भौम से ५,११,३,६,९,१२ स्थानों में शुभफल देता है।।७।।

अथ शुक्राष्टकवर्गचक्रम्—

शु.	श.	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	ल.
१	३	८	१	३	३	५	१
२	४	११	२	५	५	८	२
३	५	१२	३	६	६	९	३
४	८		४	९	९	१०	४
५	९		५	११	११	११	५
८	१०		८	१२			८
९	११		९				९
१०			११				११
११			१२				

अथ शनेरष्टकवर्गः

स्वात्सौरिस्त्र्यायपुत्रारिषु धरणिसुतात्सव्ययाज्ञेषु।
सूर्यात्केन्द्रेस्वावाष्टसु ज्ञाद्वायमृतिस्वभवारातिधर्मेषु।
चन्द्रात्षट्त्र्यायस्थोविलग्नादुपचयहिबुकाद्येषुषट्त्र्याप्ति-
रिष्फेषुशुक्राद्वाचस्पतेश्चव्ययतनयभवारातिषु सुप्रशस्तः।।८।।

शनि अपने स्थान से ३,११,५,६, स्थानों में शुभफल देता है। **भौम से ३,५,६,१२,१० स्थानों में,** सूर्य से १,४,७,१०,२,११,८ स्थानों में, **बुध से १२,८,२,११,८** स्थानों में, चन्द्रमा से ६,३,११ स्थानों में, लग्न **से ३,६,१०,११,१ स्थानों में,** शुक्र से ६,३, ११,१२ स्थानों में, गुरु **से १२,५,११,६ स्थानों में शुभफल** देता है।।८।।

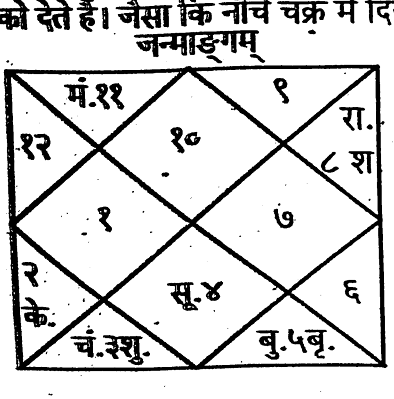
अथ शनेरष्टकवर्गचक्रम्—

श.	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	ल.
३	१	३	३	६	५	६	१
५	२	६	५	८	६	११	३
६	४	११	६	९	११	१२	४
११	७		१०	०	१२	३	९
	८		११	११			१०
	१०		१२	१२			११
	११						

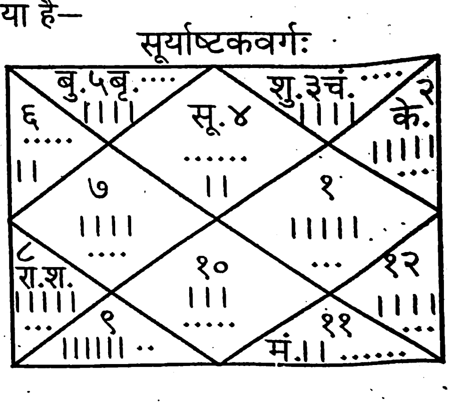
अष्टकवर्गसाधन—

सूर्याष्टकवर्ग में सूर्य अपने स्थान से (जन्म के समय जिस राशि में **है**) १।२।४।७।८।९।१०।११ स्थान में शुभ फल देता है; अन्यत्र स्थानों में **अशुभ फल देता है। जैसे** निम्नलिखित जन्मांगचक्र में सूर्य कर्क राशि **में है, अतः** ४।५।७।१०।११।१२।१।२ राशियों में शुभ फलसूचक रेखा **देगा, अन्य राशियों में** बिन्दु रूप अशुभसूचक रेखा को देगा। इसी प्रकार **सभी ग्रह अपने-अपने स्थान** से शुभ और अशुभ सूचक रेखा और बिन्दु **को देते हैं। जैसा कि नीचे** चक्र में दिया है—

जन्माङ्गम्



सूर्याष्टकवर्गः



सूर्याष्टकवर्गः ४८   चन्द्राष्टकवर्गः ४९

ग्रह	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ल.		ग्रह	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	सू.	ल.	
रा.	४	३	११	५	५	३	८	१०		रा.	३	११	५	५	३	८	४	१०	
४	।			।			।		३	३	।	।	।	।				।	५
५	।	।	।				।		४	४		।		।					२
६			।				।		२	५	।		।	।	।				४
७	।		।	।				।	४	६					।	।	।		३
८		।	।			।	।	।	५	७		।	।		।			।	४
९			।	।	।	।	।	।	६	८	।	।	।	।				।	५
१०	।			।	।				३	९	।	।	।		।		।		५
११	।		।				।		३	१०	२					।	।		२
१२	।	।	।					।	४	११			।	।	।		।		४
१	।	।		।	।			।	५	१२	।	।	।	।	।	।		।	७
	।		।	।		।	।		५	१	।	।			।	।	।		५
३				।	।		।	।	४	२			।	।			।		६

भौमाष्टकवर्गः   बुधाष्टकवर्गः

ग्र.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	सू.	चं.	ल.		ग्र.	बु.	बृ.	शु.	श.	सू.	चं.	मं.	ल.	
रा.	११	५	५	३	८	४	३	१०		रा.	५	५	३	८	४	३	११	१०	
११	।								२	५	।		।	।			।	।	५
१२	।							।	२	६			।	।		।	।		४
१				।		।	।		३	७	।		।				।	।	४
२	।		।	।	।	।			५	८				।	।	।	।	।	५
३		।	।		।			।	४	९	।			।	।		।		४
४			।		।				२	१०	।	।	।			।		।	५
५	।				।		।		३	११			।	।			।	।	४
६	।				।	।			३	१२		।			।	।	।		४
७		।						।	२	१	।		।			।		।	४
८	।			।	।	।	।	।	६	२	।			।	।		।		४
९	।	।				।			३	३	।	।	।	।	।			।	६
१०		।	।	।				।	४	४	।	।	।	।		।			५

गुर्वष्टकवर्गः

ग्र.	बृ.	शु.	श.	सू.	चं.	मं.	बु.	ल.	
रा.	५	३	८	४	३	११	५	१०	
५	।			।		।	।		४
६	।					।	।	।	४
७	।	।	।	।	।			।	६
८	।	।		।		।	।	।	६
९					।	।	।		३
१०			।	।			।	।	४
११	।	।		।	।	।		।	६
१२	।	।	।	।		।			५
१		।	।	।	।		।	।	६
२	।			।		।	।	।	५
३	।						।	।	३
४		।		।	।			।	४

शुक्राष्टकवर्गः

ग्र.	शु.	श.	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	ल.	
रा.	३	८	४	३	११	५	५	१०	
३	।	।	।	।	।	।	।		७
४	।	।		।	।				४
५	।	।		।				।	४
६	।	।		।				।	४
७	।			।	।	।			४
३								।	१
९					।	।	।		८
१०	।	।		।	।	।		।	६
११	।	।	।	।				।	५
१२	।	।					।	।	४
१	।			।	।	।	।	।	६
२			।	।			।	।	४

शन्यष्टकवर्गः

ग्र.	श.	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	ल.	
रा.	८	४	३	११	५	५	३	१०	
८			।	।				।	४
९				।					१
१०	।	।		।	।	।		।	६
११		।							१
१२	।				।			।	३
१	।	।	।	।	।	।	।	।	८
२		।			।		।		३
३				।	।	।		।	४
४		।		।	।	।			४
५		।	।						२
६	।								१
७		।						।	२

लग्नाष्टकवर्गः

ग्र.	ल.	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	
रा.	१०	४	३	११	५	५	३	८	
१०					।	।	।	।	४
११				।		।	।	।	४
१२	।		।		।				३
१		।	।	।		।	।	।	६
२		।			।	।			३
३	।	।			।	।	।		५
४				।			।		२
५			।		।	।	।	।	५
६		।			।	।	।	।	५
७	।	।					।		३
८	।		।	।	।	।		।	६
९		।		।		।			३

त्रिकोणशोधनम्—

त्रिकोणं तु चतुःप्रोक्तं मेषसिंहधनुस्तथा।
वृषकन्यामृगाख्येषु तुलाकुम्भयुगेषु च।।९।।

सम्पूर्ण राशिचक्र (१२ राशि) में चार (४) त्रिकोण हैं। त्रिकोण का अर्थ है— प्रथम, पंचम और नवम राशि। प्रत्येक त्रिकोण की प्रथम राशि क्रम से मेष, वृष, मिथुन और कर्क हैं। इसके अनुसार मेष, सिंह, धन प्रथम त्रिकोण; वृष, कन्या, मकर दूसरा; मिथुन, तुला, कुम्भ तीसरा और कर्क, वृश्चिक, मीन चौथा त्रिकोण है।।९।।

कर्कवृश्चिकमीनास्ते त्रिकोणाः स्युः परस्परम्।
त्रिकोणेषु च यन्न्यूनं तत्तुल्यं त्रिषु शोधयेत्।।१०।।

प्रत्येक त्रिकोण की तीनों राशियों में जिस राशि की रेखा संख्या कम हो उसे त्रिकोण की अन्य दो राशि के रेखा की संख्या में घटावे। शेष उसी राशि के नीचे रख दे।।१०।।

एकस्मिन्भवने शून्यं तत्त्रिकोणं न शोभयेत्।
समत्वे सर्वगेहेषु सर्वं संशोध्य बुद्धिमान्।।११।।

अल्प संख्या वाली राशि के नीचे शून्य रखे। यदि त्रिकोण की एक राशि के नीचे शून्य हो तो उसमें त्रिकोण-शोधन न करे अर्थात् ज्यों की त्यों रख दे। यदि त्रिकोण की तीनों राशिय्रों के नीचे रेखा बराबर हों तो त्रिकोण शोधन न कर तीनों राशियों के नीचे शून्य (०) ही रख देवें।।११।।

विशेष— इस प्रकार त्रिकोण-शोधन के तीन नियम हुए—

१. त्रिकोण की तीन राशियों में किसी राशि की रेखायें कम हों तो उस कम वाली संख्या को तीनों स्थान की संख्याओं में घटा दे।

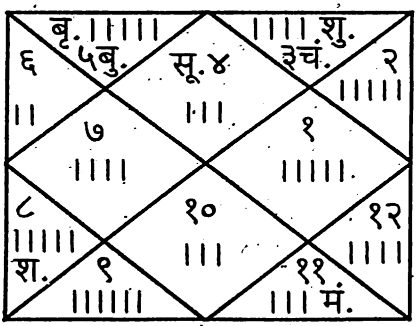
२. यदि त्रिकोण की किसी एक राशि में शून्य रेखा हो तो ज्यों का त्यों रहने दे।

३. एवं यदि त्रिकोण की तीनों राशियों में बराबर रेखायें हों तो तीनों स्थानों में शून्य फल होगा।

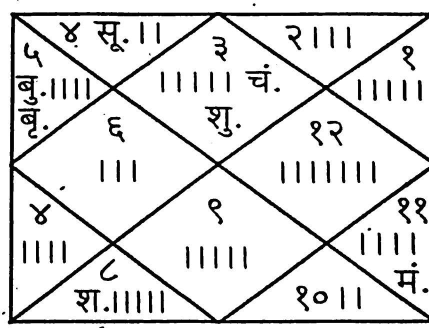
उदाहरण— जैसे सूर्याष्टक वर्ग में मेष राशि में ५, सिंह में ४ और धन में ६ रेखायें हैं इन तीनों में सबसे कम ४ है अतः नियमानुसार मेष की ५ रेखाओं में से ४ घटाने से मेष राशि में १ स्थापना करनी होगी।

सिंह की ४ रेखाओं में से ४ घटाने से सिंह राशि में ० शून्य रहेगा एवं धनराशि की ६ रेखाओं में से ४ घटाने से धन राशि में २ रहेगा। अर्थात् त्रिकोण-शोधन के बाद मेष में १, सिंह में शून्य एवं धन में २ फल आया। इसी प्रकार उपर्युक्त नियम के अनुसार सूर्यादि सात ग्रहों और लग्न के अष्टक वर्ग का त्रिकोण-शोधन करना चाहिए। कहीं २ निम्नलिखित प्रकार से भी अष्टक वर्ग लिखने की प्रथा है—

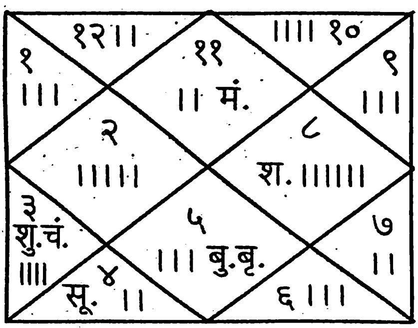
सूर्याष्टकवर्गः ४८



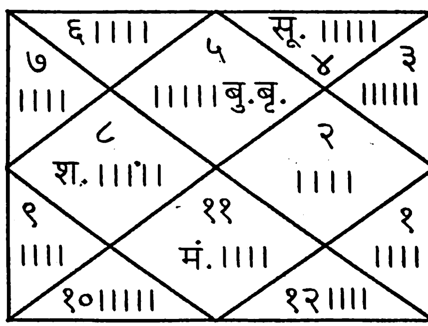
चन्द्राष्टकवर्गः ४९



भौमाष्टकवर्गः ३९



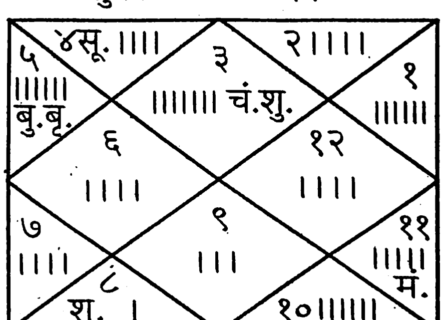
बुधाष्टकवर्गः ५४



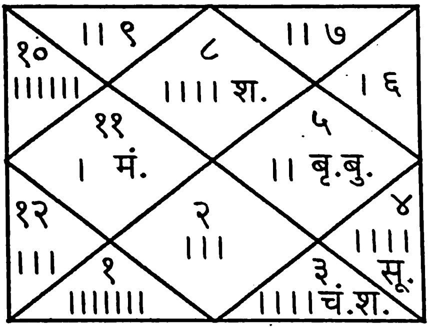
गुर्वष्टकवर्गः ५६



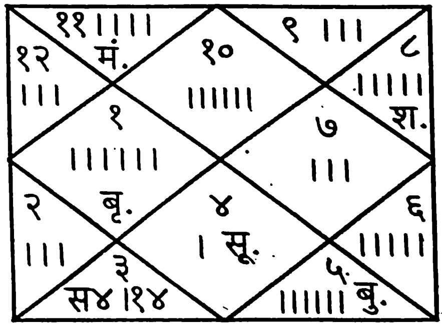
शुक्राष्टकवर्गः ५२



शन्यष्टकवर्गः ३९



लग्नाष्टकवर्गः ४९



अथैकाधिपत्यशोधनम्—

एवं त्रिकोणं संशोध्य पश्चादेकाधिपत्यता।
क्षेत्रद्वये फलानि स्युस्तदा संशोधयेद्बुधः।।१२।।

इस प्रकार त्रिकोण शोधन के बाद एकाधिपत्य शोधन करे। एक ग्रह की दो राशियों में त्रिकोण-शोधन के फलों से एकाधिपत्य शोधन होता है।।१२।।

क्षीणेन सह चान्यस्मिञ्छोधयेद्ग्रहवर्जिते।
ग्रहयुक्ते फले हीने ग्रहाभावे फलाधिके।।१३।।
अनेन सह चान्यस्मिञ्छोधयेद्ग्रहवर्जिते।
फलाधिके ग्रहैर्युक्ते चान्यस्मिन् सर्वमुत्सृजेत्।।१४।।
उभयोर्ग्रहसंयुक्ते न संशोध्यः कदाचन।
उभयोर्ग्रहहीनाभ्यां समत्वे सकलं त्यजेत्।।१५।।
सग्रहा ग्रहतुल्यत्वात्सर्वं संशोध्यमग्रहात्।
एकत्र नास्ति चेत् सर्वहानिरन्यत्र कीर्त्तिता।
कुलीरसिंहयो राश्योः पृथक् क्षेत्रं पृथक् फलम्।।१६।।

यदि एक ग्रह की दोनों राशियों में कोई ग्रह न हो तो अल्प संख्या को अधिक संख्या में घटाकर शेष को अधिक संख्या के नीचे रख दे और अल्पसंख्या को ज्यों का त्यों रख दे (१)। यदि एक राशि में ग्रह हो और दूसरी राशि में ग्रह न हो और जिस राशि में ग्रह हो उसकी संख्या ग्रहहीन राशि की संख्या से अल्प हो तो ग्रहहीन राशि की संख्या में अल्प संख्या को घटाकर शेष ग्रहहीन के नीचे रख दे और अल्प संख्या यथावत्

रख दे (२)। यदि ग्रहयुक्त राशि की संख्या अधिक हो और ग्रहहीन राशि में अल्प संख्या हो तो ग्रहहीन राशि में शून्य और ग्रहयुक्त राशि की संख्या यथावत् रखनी चाहिए (३)। यदि दोनों राशियाँ ग्रहयुक्त हों तो संशोधन नहीं करना चाहिए, यानि दोनों जगह यथावत् अंक रहने दे (४)। यदि एक ग्रहयुक्त हो और दूसरी राशि ग्रहहीन तथा दोनों की संख्या बराबर हो तो ग्रहहीन राशि के नीचे शून्य और ग्रहयुक्त राशि के नीचे वही संख्या रहेगी (५)। यदि दोनों ग्रहयुक्त वा ग्रहहीन हों अथवा दोनों में एक ग्रहयुक्त और एक ग्रहहीन हो किन्तु त्रिकोण-शोधन में किसी एक में शून्य हो तो दोनों में शून्य ही होगा (६)। कर्क और सिंह राशि के फल ज्यों के त्यों रहते हैं, इनमें एकाधिपत्य शोधन नहीं किया जाता है।।१२-१६।।

इति एकाधिपत्यशोधनम्।

अथ पिण्डोत्पत्याध्यायः

शोध्यावशेषं संस्थाप्य राशिमानेन वर्धयेत्।
ग्रहयुक्तेऽपि तद्राशौ ग्रहमानेन वर्धयेत्।।१।।

एकाधिपत्य शोधन के उपरान्त जिस राशि के नीचे जो संख्या हो उसे उस राशि के नीचे रखकर उस राशि के गुणक से गुणा करे। यदि राशि में ग्रह हो तब भी उस संख्या को उस ग्रह के गुणक से गुणा कर फल को उसके नीचे रख दे।।१।।

अथ राशि-ग्रहगुणकध्रुवाङ्कानाह—

गोसिंहौ दशगुणितौ दशभिर्मिथुनालिनौ।
वणिग्मेषौ तु मुनिभिः कन्यकामकरौ शरैः।।२।।

वृष-सिंह राशि को १० से, मिथुन-वृश्चिक को १० से, तुला और मेष को ७ से, कन्या-मकर को ५ से।।२।।

शेषाः स्वमानतो गण्या ग्रहगुणकमथोच्यते।
जीतारशुक्रसौम्यानां दशाष्टमुनिसायकाः।।३।।

और शेष राशियों को उनकी संख्या से (एकाधिपत्य शोधन के उपरान्त जो अंक जिस राशि के नीचे है उसे गुणाकर गुणन फल को राशि के नीचे रखना चाहिए। इसी प्रकार जिस राशि में जो ग्रह हो उस ग्रह के गुणक से राशि के नीचे वाले की संख्या (एकाधिपत्य शोधनोपरान्त

शेष अंक को) गुणाकर गणन फल को उस राशि के नीचे रख दे। यदि एक राशि में दो-तीन ग्रह हों तो उनके गुणकों से अलग-अलग उस संख्या को गुणाकर सभी का योगकर उस राशि के नीचे रखना चाहिए। गुरु, भौम, शुक्र और बुध का क्रम से १०,८,७,५, गुणक है।।३।।

बुधस्य संख्या शेषाणां ग्रहगुणैर्गुणयेत्क्रमात्।
सर्वेषां फलयोगोऽपि पिण्डमानं प्रकथ्यते।।४।।

इस प्रकार गुरु का १०, भौम का ८, शुक्र का ७, बुध का ५ और शेष ग्रहों का ५ गुणक है। सभी फलों के योग को पिण्ड कहते हैं।।४।।

राशि	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	मं.	कुं.	मी.
गुणक	७	१०	८	४	१०	५	७	८	९	५	११	१२

ग्रह	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
गुणक	५	५	८	५	१०	७	५

सूर्याष्टकवर्गशोधनम्

जन्मकालीन ग्रहाः			चं. शु.	सू.	बु. बृ.			श.			मं.		योग		
राशयः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२			
रेखा	५	५	४	३	४	२	४	५	६	३	३	४	४८		
त्रिकोण शोधन	१	३	१	०	०	०	१	२	२	१	०	१	१२		
एकाधिपत्य शोधन	१	२	०	०	०	०	१	१	१	०	०	१	७		
राशिगुणन फल	७	२०	०	०	०	०	७	८	९	०	०	१२	६३	राशिपिंड	[illegible]
ग्रहगुणन फल	०	०	०	०	०	०	०	५	०	०	०	०	५	ग्रहपिंड	[illegible]

चन्द्राष्टवर्गशोधनम्

जन्मकालीन ग्रहाः			चं. शु.	सू.	बु. बृ.			श.			मं.		ल.		
राशयः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२			
रेखाः	५	३	५	२	४	३	४	५	५	२	४	७	४९		
त्रिकोण शोधन	१०	१	१	०	०	१	०	३	१	०	०	५	१३		
एकाधिपत्य शोधन	०	०	०	०	०	०	०	३	०	०	०	४	७		
राशिगुणन फल	०	०	०	०	०	०	०	४२	०	०	०	४८	७२	राशिपिंड	योग पिंड
ग्रहगुणन फल	०	०	०	०	०	०	०	१५	०	०	०	०	१५	ग्रहपिंड	८७

भौमाष्टकवर्गशोधनम्

जन्मकालीन ग्रहाः			चं. शु.	सू.	बु. बृ.			श.			मं.		ल.		
राशयः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२			
रेखाः	३	५	४	२	३	३	२	६	३	४	२	२	३९		
त्रिकोण-शोधन	०	२	२	०	०	०	०	४	०	१	०	०	९		
एकाधिपत्य शोधन	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०		
राशिगुणन फल	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	राशिपिंड	योग पिंड
ग्रहगुणन फल	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०		ग्रहपिंड	०

बुधाष्टकवर्गशोधनम्

जन्मकालीन ग्रहाः	.	.	चं. शु.	सू.	बु. बृ.			श.			मं.		ल.		
राशयः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२			
रेखाः	४	४	६	५	५	४	४	५	४	५	४	४	५४		
त्रिकोण-शोधन	०	०	२	१	१	०	०	१	०	१	०	०	६		
एकाधिपत्य फल	०	०	०	१	१	०	०	०	०	०	०	०	२		
राशिगुणन शोधन	०	०	०	४	१०	०	०	०	०	०	०	०	१४	राशिपिंड	योग पिंड
ग्रहगुणन फल	०	०	०	५	१५	०	०	०	०	०	०	०	२०	ग्रहपिंड	३४

गुर्वष्टकवर्गशोधनम्

जन्मकालीन ग्रहाः			चं. शु.	सू.	बु. बृ.			श.			मं.		ल.		
राशयः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२			
रेखाः	६	५	३	३	५	४	६	५	४	४	६	५	५६		
त्रिकोण-शोधन	२	१	०	०	१	०	३	२	०	०	३	२	१४		
एकाधिपत्य शोधन	०	१	०	०	१	०	२	२	०	०	०	०	६		
राशिगुणन फल	०	१०	०	०	१०	०	१४	१६	०	०	०	०	५०	राशिपिंड	यो[illegible] पि[illegible]
ग्रहगुणन फल			०	०	१५	०	०	१०	०	०	०	०	२५	ग्रहपिंड	[illegible]

शुक्राष्टकवर्गशोधनम्

जन्मकालीन ग्रहाः	१	२	चं. शु.	सू.	बु. बृ.			श.			मं.		लग्न		
राशयः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२			
रेखाः	६	४	७	४	४	४	४	१	३	६	५	४	५२		
त्रिकोण-शोधन	३	०	३	३	१	०	०	०	०	२	१	३	१६		
एकाधिपत्य शोधन	०	०	०	३	१	०	०	०	०	१	१	०	६		
राशिगुणन फल	०	०	०	१२	१०	०	०	०	०	५	११	०	३८	राशिपिंड	योग पिंड
ग्रहगुणन फल	०	०	०	१५	१५	०	०	०	०	०	८	०	३५	ग्रहपिंड	७३

शन्यष्टकवर्गशोधनम्

जन्मकालीन ग्रहाः			चं. शु.	सू.	बु. बृ.			श.			मं.		लग्न		
राशयः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२			
रेखाः	७	३	४	४	२	१	२	४	५	६	१	३	४२		
त्रिकोण-शोधन	५	२	३	१	०	०	१	१	०	५	०	०	१८		
एकाधिपत्य शोधन	४	१	०	१	०	०	१	१	०	०	०	०	८		
राशिगुणन फल	२८	१०	०	४	०	०	७	८	०	०	०	०	५७	राशिपिंड	योग पिंड
ग्रहगुणन फल			०	५	०	०	०	५	०	०	०	०	१०	ग्रहपिंड	६७

लग्नाष्टकवर्गशोधम्

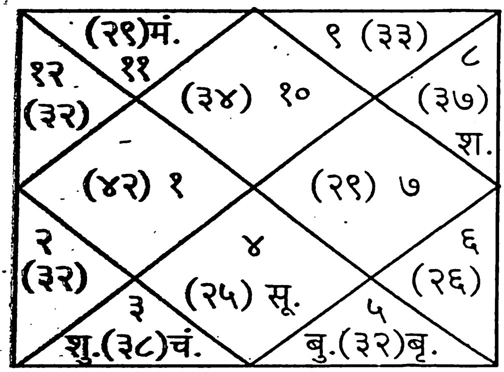
जन्मकालीन ग्रहाः			चं. शु.	सू.	बु. बृ.			श.			मं.		योग		
राशयः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२			
रेखाः	६	३	५	२	५	५	३	६	३	४	४	३	४९		
त्रिकोण-शोधन	३	०	२	०	२	२	०	४	०	१	१	१	१६		
एकाधिपत्य शोधन	०	०	०	०	२	८	०	४	०	०	१	१	८		
राशिगुणन फल	०	०	०	०	२०	०	०	३२	०	०	११	१२		राशिपिंड ७५	योग पिंड
ग्रहगुणन फल			०		१०			२०			८			ग्रहपिंड ३८	११३

प्रत्येक अष्टकवर्गों में मेषादि राशियों में कितनी-कितनी रेखायें प्राप्त हुई हैं और उनका योग क्या हुआ इत्यादि बांतों को जानने के लिए सर्वाष्टक-वर्ग चक्र दिया जाता है—

सर्वाष्टकवर्गचक्रम्

राशयः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	योग
सूर्याष्टकवर्ग	५	५	४	३	४	२	४	५	६	३	३	४	४८
चन्द्राष्टकवर्ग	५	३	५	२	४	३	४	५	५	२	४	७	४९
भौमाष्टकवर्ग	३	५	४	२	३	३	२	६	३	४	२	२	३९
बुधाष्टकवर्ग	४	४	६	५	५	४	४	५	४	५	४	४	५४
गुर्वष्टकवर्ग	६	५	३	३	५	४	६	५	४	४	६	५	५६
शुक्राष्टकवर्ग	६	४	७	४	४	४	४	१	३	६	५	४	५२
शन्यष्टकवर्ग	७	३	४	४	२	१	२	४	५	६	१	३	३९
लग्नाष्टकवर्ग	६	३	५	२	५	५	३	६	३	४	४	३	४९
ग्रह			चं. शु.	सू.	बु. बृ.			श.			मं.		
योग	४२	३२	३८	२५	३२	२६	२९	३७	३३	३४	२९	३२	३८९

अष्टकवर्गयुक्तजन्माङ्गम्



इति पिंडोत्पत्याध्यायः।

अथाष्टकवर्गफलाध्यायः

आत्मस्वभावशक्तिश्च पितृचिन्ता रवेः फलम्।
मनोबुद्धिंप्रसादश्च मातृचिन्ता मृगाङ्कतः।।१।।

आत्मा, स्वभाव, शक्ति और पिता का विचार सूर्य से करना चाहिए। मन, बुद्धि, प्रभाव और माता का विचार चन्द्रमा से करना चाहिए।।१।।

भ्रातृसत्त्वं गुणं भूमिं भौमेन तु विचिन्तयेत्।
वाणिज्यकर्मवृत्तिश्च बुधेन तु विचिन्तयेत्।।२।।

भाई, सत्त्वगुण, भूमि का विचार भौम से करना चाहिए। व्यापार वृत्ति का विचार बुध से करना चाहिए।।२।।

गुरुणा देहपुष्टिश्च बुद्धिपुत्रार्थसम्पदः।
भृगोर्विवाहकर्माणि भोगस्थानं च वाहनम्।।३।।

गुरु से शरीर की पुष्टता, बुद्धि और पुत्र का विचार करना चाहिए। शुक्र से विवाह, भोगस्थान, वाहन।।३।।

वेश्यास्त्रीजनगात्राणि शुक्रेणैव निरीक्षयेत्।
आयुष्यं जीवनोपायं दुःखशोकं महद्भयम्।।४।।

वेश्या का विचार करना चाहिए। आयुष्य, जीविका, दुःख, शोक, भय।।४।।

सर्वक्षयं च मरणं मन्देनैव निरीक्षयेत्।
रविः पिता शशी माता भ्राता भौमो बुधः सुहृत् ।।५।।

सर्वनाश और मृत्यु का विचार शनि से करना चाहिए। रवि पिता कारक बुध है।।५।।

मातुलेयः स्मृतो जीवो ज्ञानपुण्ये स्त्रियः सितः।
एषामृक्षे च तत्काले मरणं कुरुते शनिः।।६।।

ज्ञान, गुण का कारक गुरु और स्त्री (पत्नी) का कारक शुक्र है। इनकी राशि में जब शनि जाता है तो इन लोगों को कष्ट होता है।।६।।

तत्तद्भावजफलेन च गुणितं योगैक्यपिण्डं फलम्।
विंशत्या सह सप्तभिश्च विहृतं तच्छेषताराशनौ।।७।।

जिन भावों का विचार करना हो उन २ भावों के फल (अष्टक वर्ग की रेखा) को उस ग्रह के योगपिंड को गुणाकर गुणनफल में २७ का भाग देने से जो शेष बचे तत्तुल्य अश्विनी से गिनने से जो नक्षत्र आवे उस पर जब शनि आता है।।७।।

तातः स्याज्जननीं सहोदरजवो बन्धुःसुतः स्त्री स्वयम्।
तत्तुल्यं विलयं प्रयाति विपुलं श्रीनाथहेतुश्च वा।।८।।

तब पिता, माता, भाई, बंधु, पुत्र, स्त्री आदि को कष्ट होता है अथवा लक्ष्मी की प्राप्ति होती है।।८।।

सूर्याष्टकवर्गफलम्—

आदित्याष्टकवर्गं च निक्षिप्याकाशचारिषु।
अर्कस्थितात्तु नवमो राशिः पितृगृहं स्मृतम्।।९।।

सूर्याष्टक वर्ग का व्यास ग्रह सहित करे। सूर्य से नवम स्थान पिता का होता है।।९।।

तद्राशिफलसंख्याभिर्वर्धयेद्योगपिण्डकम्।
सप्तविंशोद्धृतं शेषं नक्षत्रं याति भानुज।।१०।।

उस राशि के फल को (रेखा को) योगपिंड से गुणाकर गुणनफल में २७ का भाग देने से जो शेष हो, तत्संख्या के तुल्य अश्विनी से गिनने से जो नक्षत्र हो उस नक्षत्र पर जब शनि जाता है।।१०।।

तस्मिन् काले पितृकष्टो भवतीति न संशयः।
तत्त्रिकोणगते वापि पितापितृसमोऽपि वा।
मरणं तस्य जानीयाद्दशा छिद्रेषु कल्पयेत्।।११।।

तो उस समय पिता को कष्ट होता है, इसमे संदेह नहीं। अथवा उस नक्षत्र से त्रिकोण में (१०वें, ९वें नक्षत्र) जब शनि होता है तब पिता या पिता के तुल्य (चाचा आदि) का मरण होता है। उस समय की दशा को छिद्रदशा कहते हैं।।११।।

अथ पित्रोररिष्टकालमाह—

अर्कभात्तु तुर्यगे राहौ मन्दे वा भूमिनन्दने।
गुरुशुक्रेक्षणमृते पितृहा जायते नरः।।१२।।

सूर्य से चौथे स्थान में राहु, शनि, भौम में से कोई हो और गुरु-शुक्र से न देखा जाता हो तो पिता को अरिष्टकारक होता है।।१२।।

लग्नाच्चन्द्राद्गुरुस्थाने याते सूर्यसुते यदि।
पित्रोर्नाशं तदा काले वीक्षिते पापसंयुते।।१३।।

लग्न वा चन्द्रमा से नवम स्थान में जिस समय शनि हो और पापग्रह से युत तथा देखा जाता हो तो उस समय पिता का मरण कहे।।१३।।

दशानुकूलकालेन योजयेत्कालवित्तमः।
लग्नात्सुखेश्वरानिष्टदशायां च पितृक्षयः।।१४।।

यदि अनुकूल दशा हो तो अरिष्ट नहीं होता है। लग्न से सुखेश (चतुर्थेश) की अनिष्ट दशा में भी पिता का नाश होता है।।१४।।

पितृकर्मकर्त्ता योगः—

पितृजन्माष्टभे जातस्तदीशे लग्नगेऽपि वा।
तेनैव पितृकर्माणि कारयेन्नात्र संशयः।।१५।।

पिता के जन्मलग्न से आठवीं राशि में जन्म हो और उस राशि के स्वामी लग्न में हों तो वह पिता के कर्म को करने वाला होता है।।१५।।

अथ पितृसुखयोगः—

सुखनाथदशायं तु बहुप्राप्तेश्च सम्भवः।
सुखेशे लाभलग्नस्थे चन्द्रलग्नाद्विशेषतः।।१६।।

सुखेश की दशा में अधिक सुख पाने की संभावना होती है। सुखेश ११ वें भाव में हो अथवा चन्द्रमा से ११वें वा दशम भाव में हो तो जातक पिता के वश में रहने वाला होता है।।१६।।

पितृगृहे समायुक्ते जातः पितृवशानुगः।
पितृजन्मतृतीयर्क्षे जातः पितृधनाश्रितः।।१७।।

पिता के जन्मलग्न से तीसरी राशि में जन्म हो तो वह पिता के धन का आश्रित होता है।।१७।।

पितृकर्मगृहे जातः पितृतुल्यगुणान्वितः।
तदीशे लग्नसंस्थेऽपि पितृश्रेष्ठो भवेन्नरः।।१८।।

पिता के जन्मलग्न से १०वीं राशि में उत्पन्न हो तो जातक पिता के गुणों के सदृश गुण वाला होता है और दशम राशि का स्वामी लग्न में हो तो पिता से श्रेष्ठ होता है।।१८।।

अथ विशेषफलमाह—

सूर्याष्टवर्गे यच्छून्यं मासे तद्दिवसेऽपि वा।
विवाहव्यवहारादि मासेऽस्मिन्वर्जयेत्सदा।।१९।।

सूर्याष्टक वर्ग में जिस राशि में शून्य हो उस राशि संबंधी मास और दिन में विवाह आदि शुभ कार्य, व्यवहार आदि न करे।।१९।।

कलहोत्पातदुःखानि शून्यमासे भवन्ति च।
संशोध्यपिण्डं सूर्यस्य रन्ध्रमानेन वर्धयेत्।।२०।।

शून्य वाले मास में कलह, उत्पात आदि दुःख होते हैं। सूर्य के पिंड का शोधन कर अष्टम स्थान की फल रेखा से योगपिंड को गुणाकर।।२०।।

द्वादशहृतावशेषं मेषादिगणयेत्पुनः।
तस्मिन्मासे मृतिं विद्यात्तत्त्रिकोणगतेऽपि वा।।२१।।

उसमे १२ से भाग दे, शेष मेषादि से गिनने से जो राशि हो उस राशि के मास में अरिष्ट होता है अथवा उससे त्रिकोण राशि के मास में अरिष्ट होता है।।२१।।

इति सूर्याष्टकवर्गफलविचारः।

अथ चन्द्राष्टकवर्गफलविचारः—

चन्द्राच्चतुर्थगे मातुः प्रासादग्रामचिन्तनम्।
चन्द्राष्टवर्गे यच्छून्यं तत्र राशिगते विधौ।।२२।।

चन्द्रमा से चौथे माता, गृह, ग्राम का विचार करना चाहिए। चन्द्राष्टक वर्ग में जिस राशि में शून्य हो उस राशि में जब चन्द्रमा हो।।२२।।

तन्नक्षत्रं परित्यज्य शुभकर्माणि कारयेत्।
चन्द्राष्टमेशनक्षत्रे त्रितयेषु विशेषतः।।२३।।

अथवा वह राशि जिन २ नक्षत्रों से बनती है उन २ नक्षत्रों पर जब चन्द्रमा हो तो शुभ कर्म नहीं करना चाहिए। चन्द्रमा से अष्टमेश जिस नक्षत्र पर हो, उससे त्रिकोण के दो नक्षत्र अर्थात् इन तीनों नक्षत्रों पर।।२३।।

आयामव्याधिदुःखानि लभते नात्र संशयः।
चन्द्रात्सुखफलात्पिण्डं वर्धयेत्सप्तद्विभाजयेत्।।२४।।

आयाम- व्याधि और दुःख की प्राप्ति होती है। चन्द्रमा से चौथे स्थान के फल को चन्द्राष्टक वर्ग के पिंड को गुणाकर गुणन फल में २७ का भाग देने से।।२४।।

शेषमृक्षे शनौ याने मातृहानिं विनिर्दिशेत्।
तत्त्रिकोणेषु वा केचिन्मातृकष्टं समादिशेत्।।२५।।

शेष तुल्य अश्विन्यादि नक्षत्र में शनि के रहने से माता की हानि होती है अथवा उससे त्रिकोण के नक्षत्रों पर शनि के रहने से माता को कष्ट होता है।।२५।।

उदाहरण– जैसे चन्द्रमा मिथुन राशि में है, उससे अष्टम मकर राशि के स्वामी शनि विशाखा नक्षत्र के चौथे चरण में वृश्चिक राशि में हैं, अतः विशाखा, शतभिषा और पुनर्वसु में आयामादि फल होंगे। चन्द्रमा से चौथे स्थान में फल ३ है, इससे योगपिंड ८७ को गुणने से २६१ हुआ। इसमें २७ का भाग देने से १८ शेष हुआ। अश्विनी से गिनने से १८वाँ ज्येष्ठा नक्षत्र हुआ, अतः ज्येष्ठा नक्षत्र पर जब शनि आयेगा तो माता की हानि होगी।

इति चन्द्राष्टकवर्गफलम्।

अथ भौमाष्टकवर्गफलम्—

भौमाष्टवर्गे सञ्चिन्त्यं भ्रातृविक्रमधैर्यकम्।
भौमस्थितस्य सहजो राशिर्भ्रातृगृहं स्मृतम्।।२६।।

भौम के अष्टक वर्ग से भाई, पराक्रम, धैर्य का विचार करना चाहिए। भौम जिस राशि पर हो उससे तीसरी राशि भाई की होती है।।२६।।

त्रिकोणशोधनं कृत्वा यत्र भूयांसि वै फलम्।
भूमेर्भवति भार्याया भ्रातृगेहसुखं तथा।।२७।।

त्रिकोण-शोधन के उपरान्त जिस राशि के नीचे अधिक फल हो उस राशि पर जब भौम जाता है तब भूमि, स्त्री, भाई और गृह का सुख होता है।।२७।।

भौमो बलविहीनश्चेद्दीर्घायुर्भ्रातृको भवेत्।
फलानि यत्र क्षीयन्ते तत्र भौमे स्थिते क्षतिः।।२८।।

यदि भौम निर्बल हो तो भाई दीर्घायु होते हैं। जिस राशि में फल शून्य हो उस राशि में भौम के रहते समय भाई को कष्ट होता है।।२८।।

तद्राशिफलसंख्याभिर्वर्धयेत्पिण्डं च पूर्ववत्।
शेषमृक्षं शनौ याते भ्रातृहानिर्विनिर्दिशेत्।।२९।।

भौम से तीसरी राशि के रेखा से योगपिंड को गुणाकर २७ से भाग देने से जो शेष नक्षत्र हो उस पर शनि के रहने से भाई को कष्ट होता है।।२९।।

उदाहरण— मंगल कुम्भ राशि में है, उससे तीसरी राशि मेष है, उसमें ३ रेखा है, उससे योगपिंड शून्य ० को गुणाकर २७ का भाग देने से शून्य शेष बचा। अतः रेवती नक्षत्र पर शनि के रहने से वा इससे त्रिकोण (५,९) नक्षत्र पर शनि के रहने से भाई को कष्ट होगा। इसी प्रकार १२ से भाग देने से शेष ० अर्थात् मीन राशि पर अथवा उससे त्रिकोण कर्क, वृश्चिक पर शनि के होने से भाई को कष्ट होगा।

इति भौमाष्टकवर्गफलम्।

अथ बुधाष्टकवर्गफलम्—

बुधात्तुर्ये कुटुम्बं च धनमित्रादिमातुलाः।
तत्पञ्चमे मन्त्रविद्यालिपिबुध्यादि चिन्तयेत्।।३०।।

बुध से चौथे भाव में कुटुम्ब, धन, मित्र, मामा का विचार और उससे पाँचवें भाव में मन्त्रणा, विद्या, लेख और बुद्धि का विचार करना चाहिए।।३०।।

बुधाष्टवर्गं संशोध्य शेषमृक्षगते शनौ।
लभते कुटुम्बकादीनां विनाशं नात्र संशयः।।३१।।

बुधाष्टक वर्ग का संशोधन करके पूर्ववत् योगपिंड द्वारा नक्षत्र एवं राशि का ज्ञान कर कुटुम्बादि के दुःख-सुख आदि को समझना चाहिए।।३१।।

उदाहरण– बुध सिंह राशि में है, इससे चौथी वृश्चिक राशि में ५ रेखा है। इसे योगपिंड ३४ से गुणा कर २७ का भाग देने से शेष ८वाँ पुष्य नक्षत्र पर अथवा इससे त्रिकोण (५-९) नक्षत्र पर शनि के रहने से कुटुम्बादि को दुःख होगा। वा गुणनफल में १२ से भाग देने पर शेष २ वृष राशि अथवा इससे त्रिकोण पर शनि के रहने से कुटुम्बादि को दुःख होगा।

इति बुधाष्टकवर्गफलम्।

अथ गुर्वष्टकवर्गफलम्—

जीवात्पञ्चमतो ज्ञानं पुत्रधर्मधनादिकम्।
गुरुस्थितं सुतस्थाने यावन्च विद्यते फलम्।
शत्रुनीचगृहं त्यक्त्वा तावन्तः सन्ततिर्भवेत्।।३२।।

गुरु से पाँचवें भाव में ज्ञान, पुत्र, धर्म, धन आदि का विचार करना चाहिए। गुरु से पाँचवें भाव में जो फल (रेखा) है यदि वह राशि (पाँचवीं) गुरु के शत्रु वा नीच की न हो तो उतनी ही संतान होती है।।३२।।

संख्या नवांशतुल्या वा तदीशस्था नवा पुनः।
सुतमेशनवांशैश्च समानावपि कल्पयेत्।।३३।।

अथवा पंचमेश स्थित भाव के नवांश की संख्या तुल्य वा पंचमेश के नवांश की संख्या तुल्य संतान होती है।।३३।।

गुरोः सुतात्फलेनैव पिण्डात्संवर्ध्य पूर्ववत्।
शेषभं च गते सौरे पुत्रकष्टं न संशयः।।३४।।

गुरु से पाँचवें भाव के फल से गुरु के योगपिंड को गुणाकर २७ से भाग देने से शेष तुल्य नक्षत्र पर वा उससे त्रिकोण के नक्षत्र पर शनि के होने से पुत्र को कष्ट होता है।।३४।।

इति गुर्वष्टकवर्गफलम्।

अथ शुक्राष्टकवर्गफलम्—

मृगोरष्टकवर्गं च निक्षिप्याकाशचारिषु।
येषु येषु फलानि स्युर्भूयांसि किल तत्र तु।।३५।।

ग्रहों के सहित शुक्र के अष्टकवर्ग को रखकर जिन-जिन राशियों में अधिक फल हों।।३५।।

भूमिं कलत्रं वित्तं च तद्देशे निर्दिशेन्नृणाम्।
शुक्राज्जामित्रतो लब्धिं दारेशान्वितदिग्भवा।।३६।।

उसके अनुसार मनुष्यों को भूमि, स्त्री, धन और देश का आदेश करना चाहिए। शुक्र से ७वें स्थान के देश में वा सप्तमेश के देश में स्त्री का लाभ होता है।।३६।।

दाराधिपस्थितं क्षेत्रं दाराजन्मर्क्षकं विदुः।
तस्यांशके त्रिकोणे वा दाराजन्मर्क्षकं विदुः।।३७।।
मन्दांशे मन्दसंयुक्ते मन्दक्षेत्रेऽथवा भृगौ।
नीचांशे मन्दसंयुक्ते नीचस्त्रीभोगमिच्छति।।३८।।

दारेश जिस राशि में हो वही राशि स्त्री की होती है। अथवा उसके नवांश की राशि वा उसके त्रिकोण की राशि स्त्री की राशि होती है।।३८।।

भौमांशकगते शुक्रे भौमक्षेत्रगतेऽपि वा।
भौमेन युतदृष्टे च परस्त्रीभोगमिच्छति।।३९।।

शुक्र शनि के नवांश में हो और शनि से युत हो अथवा शनि की राशि में हो, अपने नीचांश में पापग्रह से युक्त हो तो नीच स्त्री की इच्छा होती है। शुक्र भौम के नवांश में हो अथवा भौम की राशि में हो और भौम से युत वा देखा जाता हो तो परस्त्रीगामी होता है।।३९।।

जामित्रे मन्दभौमांशे तदीशे मन्दभौमभे।
वेश्या वा जारिणी वापि तस्य भार्या न संशयः।।४०।।

सप्तम स्थान में शनि वा भौम का अंश हो और उसके स्वामी शनि वा भौम की राशि में हो तो उसकी स्त्री वेश्या वा जारिणी होती है।।४०।।

शुक्रजामित्रतो लब्धिस्त्रिकोणा द्देशदिक्स्त्रियः।
भृगुदारेशयुक्तर्क्षे फलसंख्या स्त्रियो विदुः।।४१।।

शुक्र से सातवें स्थान के अनुसार वा उससे त्रिकोण राशि के अनुसार देश, दिशा, स्त्री का कहना चाहिए। शुक्र से सप्तमेश से युत राशि के फल की संख्या तुल्य स्त्री की संख्या कहनी चाहिए।।४१।।

शुक्रांशकसमाना स्त्री वर्णरूपगुणान्विता।
भवेच्छशाङ्कतुल्या वा दारेशस्य गुणान्विता।।४२।।

शुक्र के नवांश के सदृश वर्ण-रूप-गुण के युक्त वा चन्द्रमा के नवांश सदृश वा सप्तमेश के गुण के अनुरूप स्त्री होती है।।४२।।

शुक्रान्मन्दे त्रिकोणस्थे नेष्टं जीवे सुखप्रदम्।
तेषां बलविवेकेन भार्याया लक्षणं वदेत्।।४३।।

शुक्र से शनि त्रिकोण में हो तो स्त्री का सुख नहीं होता है और गुरु हो तो स्त्री का सुख होता है। इनके बल के अनुसार ही स्त्री के सुख-दुःख का विवेचन करना चाहिए।।४३।।

शुक्राज्जामित्रफलैः संवर्ध्य पिण्डञ्च पूर्ववत्।
स्त्रियः दुःखं सुखं ज्ञेयं पूर्वरीत्यनुसारतः।।४४।।

शुक्र से सातवें भाव के फल को पूर्ववत् शुक्र के योगपिंड से गुणा कर गुणनफल में २७ का भाग देने से शेष नक्षत्र पर जब शनि जावे तो स्त्री को कष्ट कहना।।४४।।

इति शुक्राष्टकवर्गफलम्।

अथ शन्यषटकवर्गफलम्—

शनैश्चरस्थितस्थानादष्टमं मृतिरुच्यते।
शनेरष्टकवर्गे च स्वस्यायुष्यं विनिर्दिशेत्।।४५।।

शनि जिस भाव में हो उससे आठवें स्थान में आयु का विचार करना चाहिए।।४४।।

लग्नात्प्रभृति मन्दान्तं फलान्येकत्र कारयेत्।
लग्नादिफलतुल्याब्दे व्याधिवैरं समादिशेत्।।४६।।

लग्न से आरम्भ कर शनि पर्यन्त रेखाओं का योग करे। योग तुल्य वर्ष में शरीर में व्याधि और लोगों से वैर, विदेश यात्रा, धन की हानि होती है।।४६।।

मन्दाद्विलग्नपर्यन्तं फलान्येकत्र संयुतम्।
मन्दादिफलतुल्याब्दे व्याधिं तस्य समादिशेत्।।४७।।

शनि से लग्न पर्यन्त रेखाओं का योग करे। योग तुल्य वर्ष में पूर्व के तुल्य ही वर्ष में व्याधि आदि फल होते हैं।।४७।।

तयोर्योगसमाङ्के तु मृत्युयोगं प्रचक्षते।
शोध्यादि गुणनं कृत्वा पिण्डं संस्थाप्य यत्नतः।।४८।।

अष्टमस्य फलैर्हत्वा सप्तविंशतिभाजितम्।
शतादूर्ध्वं तत्पिण्डं शतमेवाग्रतस्त्यजेत्।।४९।।

दोनों के योग तुल्य वर्ष में मृत्युयोग वा व्याधि आदि फल होते हैं। शनि के त्रिकोणादि शोधन से उत्पन्न योगपिंड लग्न से अष्टम स्थान के फल से गुणाकर २७ से भाग देने पर शेष १०० से अधिक बचे तो उसमें से १०० घटाकर शेष तुल्य आयु होती है।।४९।।

आयुः पिण्डं तु जानीयात्प्राग्वद्वेलां तु कल्पयेत्।
त्रिकोणैकाधिपत्यादि शोधनं विरचय्य च।।५०।।
पिण्डं संस्थाप्य गुणयेल्लग्नादष्टमगैः फलैः।
सप्तविंशतिहृच्छेषं मृत्युकालं वदेद्बुधः।।५१।।
समूलाष्टकवर्गे च यत्र नास्ति फलं गृहे।
तत्र नास्ति फलं तस्य यदायाति शनैश्चरः।।५२।।

इस प्रकार आयुपिंड को जानकर समय का निश्चय करे। एकाधिपत्य आदि शोधन बनाकर शनि के सम्पूर्ण अष्टकवर्ग में जिस राशि का फल न हो अर्थात् शून्य हो तो उस राशि में जब शनि होता है तो उसका कोई फल नहीं होता है।।५०-५२।।

तद्गृहे रविचन्द्रौ चेद्दशाछिद्रे मृतिं वदेत्।
दशाछिद्रसमायोगे मृत्युरेव न संशयः।।५३।।

तथा उस राशि में जब सूर्य-चन्द्र होते हैं और अनिष्टकारी दशा होती है तो मृत्यु होती है, इसमें सन्देह नहीं।।५३।।

विलग्नशनिमध्यगानि च फलानि सन्ताडयेन्नगै-
र्भविहृतानि शेषमितर्क्षे खले याति चेत्।
तदा धनसुखक्षतिं तदनु चाङ्गभादष्टमस्थितै-
र्विगुणयेत्पिण्डं भपरिशेषभस्थे शनौ।।५४।।

लग्न से शनि पर्यन्त फलों को सात ७ से गुणाकर २७ से भाग देने पर शेष तुल्य नक्षत्र पर पापग्रह के रहने से सुख की हानि होती है। लग्न से अष्टम स्थान के फल से शनि के योगपिंड को गुणाकर २७ का भाग देने से शेष तुल्य नक्षत्र अथवा कोण नक्षत्र (५।९) पर शनि के होने से सुख-धन की हानि होती है।।५४।।

उदाहरण— लग्न से शनि पर्यन्त क्रम से ६+१+३+७+३+४+२+१+२=२९ रेखाओं का योग २९ हुआ। तत्तुल्य वर्ष अर्थात् २९वें वर्ष में शरीर में व्याधि, विदेशयात्रा, धन की हानि होगी एवं शनि से लग्न पर्यन्त रेखाओं के योग ४+५=९ तुल्य वर्ष में पूर्ववत् कष्ट आदि फल होगा। दोनों के योग तुल्य ३८वें वर्ष में पूर्ववत् कष्ट आदि फल होंगे। अथवा शनि के योगपिंड ६७ को लग्न से आठवें भाव की रेखा संख्या ५ से गुणने पर ३३५ हुआ। इसमें २७ का भाग देने पर शेष ११ हुआ, अश्विनी से गिनने से पूर्वाफाल्गुनी वा इससे त्रिकोण स्वाती, मूल नक्षत्र पर जब शनि होंगे तो कष्ट होगा। लग्न से शनि पर्यन्त रेखा की संख्या २९ इसे ७ से गुणने से २०३ हुआ। इसमें २७ का भाग देने से शेष १४ के तुल्य चित्रा नक्षत्र हुआ। इस पर पापग्रह के रहने से धन-सुख की हानि होगी।

इति शनेरष्टकवर्गफलम्।

सर्वाष्टकवर्ग (समुदायाष्टकवर्ग) फलम्—

सर्वाष्टकग्रहफलैश्च नियोज्यचक्रं
मूर्त्यादिभावमशुभं शुभमेव तत्र।
जन्मादितः फलसमानदशा समीक्ष्य
यात्राविवाहसमये बहुमूलयुक्ता।।५५।।

सभी ग्रहों के अष्टक वर्ग की रेखाओं के योग से सर्वाष्टक वर्ग बनता है (पृ. ३१८ में देखिए)। इसमें लग्न से द्वादश भाव की राशियों को देखना चाहिए। जिस राशि में रेखा अधिक हो उसकी दशा में यात्रा, विवाह आदि करने से अधिक शुभफल होता है।।५५।।

मेषादिभानां सकलाष्टवर्गे
उत्पन्नरेखागणमेव कुर्यात्।
धृत्यादि तत्त्वान्तमितं कनिष्ठं
त्रिंशावसानं किल मध्यवीर्याः।।५६।।

सर्वाष्टकवर्ग में जिस राशि में १८ से कम रेखा हो वह कष्टप्रद और २५ तक रेखा हो तो कनिष्ठ फल, ३० पर्यन्त मध्यफल।।५६।।

त्रिंशाधिकं तूत्तमवीर्यदाः स्युः
शरीरसौख्यार्थयशो विशेषाः।

स्वस्वाष्टवर्गे यदि वेदहीनाः
क्लेशाय सौख्याय च वेदपुष्टाः।।५७।।

और इसके बाद जितनी रेखा हो वह शुभप्रद राशि होती है। उस राशि की दशा में शरीर का सुख, यश और धन का विशेष लाभ होता है। अपने-अपने अष्टकवर्ग में जिस राशि में ४ से कम रेखा होती है वह राशि कष्टप्रद और ४ से अधिक रेखावाली राशि सुखप्रद होती है।।५७।।

दशमभवनरेखाभ्योऽधिकं लाभमानं
भवति यदि विहीनं स्याद्व्ययाख्यं ततोऽपि।
अधिकतरविलग्नं भोगसम्पत्तिभूयः
विनिमयवशतस्तद्वैपरीत्यं जनस्य।।५८।।

दशम भाव की रेखा से अधिक लाभ भाव में रेखा हो और लाभ भाव से अल्प द्वादशभाव में तथा इससे अधिक लग्न भाव में रेखा हो तो वह जातक अधिक धन-संपत्तिवाला होता है। यदि इससे विपरीत हो तो विपरीत फल होता है।।५८।।

प्राग्दाक्षिण्यादिभानां सकलफलयुतिं दिक्चतुष्कक्रमेण
कृत्वा तद्भागतो यः समधिकफलतः शोभनं हानिमल्पात्।
सौम्याः स्वोच्चस्वगेहोदितखचरयुते दिग्विभागे स्वकार्ये
वित्तेशाशासु वित्तं मृतिपतिगतदिग्भागगे देहनाशः।।५९।।

लग्नादि भावों को प्राग्दक्षिण क्रम से अर्थात् लग्न, द्वादश, एकादश भाव की पूर्वदिशा; दशम, नवम, अष्टम भाव की दक्षिणदिशा; सप्तम, षष्ठ, पंचम भाव की पश्चिम दिशा और चतुर्थ, तृतीय और द्वितीय भाव की उत्तर दिशा कल्पना करें। दिशा के प्रत्येक भावों की रेखाओं का योग करके एकत्र रख दे। जिस दिशा में अधिक रेखा हो और उसमे शुभग्रह युत हों, अपनी उच्च राशि में हों तो उस दिशा से धन का लाभादि होता है। धनेश की दिशा से धन का लाभ और अष्टमेश की दिशा में शरीर में क्लेश होता है, यह यात्रा में देखना चाहिए।।५९।।

अथ भावफलम्—

भावं विलोक्य सदसत्फलदायकंयत्तद्राशिसम्भवफलैश्चतदुक्तपिण्डम्।
पिण्डेरेखाताडिते भावशेषे राशौ यदायाति सौरिः समायाम्।।६०।।

शुभ-अशुभ भावों को देखकर उनकी राशियों के रेखापिंड को रेखा से गुणाकर १२ का भाग देने से शेष तुल्य राशि पर जब शनि जाता है।।५९।।

यस्यां तत्तद्भावहानिं च विद्यात्
पूर्वे अंशे वाथवा तत्त्रिकोणे।
कृत्वा बिन्दुभ्यस्तु कालं सुधीमां-
स्तस्मात् वाच्यः प्राप्तिकालः शुभत्वे।।६१।।

उस वर्ष में राशि संबंधी भाव की हानि होती है अथवा उस राशि से त्रिकोण राशि में जब शनि जाता है तब भी उस भाव को हानि होती है। यदि भाव शुभ है तो रेखा से भिन्न भाव के बिन्दुओं से उस भाव के शुभ फल की प्राप्ति के समय को कहना चाहिए।।६०।।

अथारिष्टसमयज्ञानमाह—

मृत्युभावेशभात्कोणनिघ्नं फलं मृत्युजं सूर्यशेषर्क्षयुक्ते रवौ।
तत्त्रिकोणेऽथवारिष्टमासं वदेत्तातमातुर्गृहाद्येऽथवा कल्पयेत्।।६२।।

अष्टमेश जिस राशि में है उस राशि के त्रिकोण-शोधन से उत्पन्न फल को अष्टम भाव स्थित फल से गुणाकर उसमें १२ का भाग देने से शेषतुल्य राशि पर अथवा उससे त्रिकोण राशि पर सूर्य के आने से उस मास में अरिष्ट होता है।।६२।।

अवस्थापरत्वेन शुभाशुभविचारः—

मीनाद्यं मिथुनान्तकं प्रथमकं प्रोक्तं वयः प्राक्तनैः
कर्काद्यं वणिजान्तकं तरुणता संज्ञं च मध्यं बुधैः।
कुम्भान्तं स्थविराह्वयं च बहुभिर्यत्तत्फलैः संयुतं
तत्सौख्यार्थविशेषकं बलयुतेनैतद्विशेषाच्छुभम्।।६३।।

मीन राशि से मिथुन पर्यन्त चार राशियों की प्रथम (बाल्यावस्था) अवस्था होती है। कर्क राशि से तुला पर्यन्त चार राशियों की तरुण (युवावस्था) अवस्था होती है। वृश्चिक राशि से कुम्भ पर्यन्त चार राशियों की स्थविर (वृद्धावस्था) अवस्था होती है। जिन-जिन अवस्था के रेखाओं का योग अधिक हो उन-उन अवस्थाओं में सुख होता है।।६३।।

विशेष— जैसे सर्वाष्टकवर्गचक्र में—

	राशयः	फलानि	योगः
(१)	१२+१+२+३	=३२+४२+३२+३८	=१४४
(२)	४+५+६+७	=२५+३२+२६+२९	=११२
(३)	८+९+१०+११	=३७+३४+३।४+२९	=१३३
			३८९

प्रथम अवस्था में १४४ रेखा है, अतः प्रथम अवस्था सुखमय व्यतीत होगी। क्योंकि लग्न सहित सप्तग्रहों की सम्पूर्ण रेखाओं का योग ३८९ है, इसका खंडत्रय करने से १२९ होता है। इससे अल्प रेखा में कष्ट आदि की संभावना होती है। इसी प्रकार युवावस्था में ११२ रेखा है, अतः कुछ कष्ट से व्यतीत होगा। वृद्धावस्था में १३३ रेखायें हैं, अतः वृद्धावस्था सुखमय व्यतीत होगी।

अथ राहुयुक्तगुरुफलम्—

राहुयुक्तगुरुराशिगे गुरौ तत्त्रिकोणमथ रिष्टकारकम्।
अल्पमृत्युरिपुभावनाथको योगकृत्तदिह मृत्युसम्भव।।६४।।

राहु से युक्त गुरु की राशि में गुरु हो अथवा उससे त्रिकोण की राशि में हो तो अरिष्टकारक होता है। यदि षष्ठेश योग करता हो तो मृत्यु होती है।।६४।।

अथ निधनार्कमाह—

मृत्युपद्वादशांशत्रिकोणेऽसुरो मृत्युनाथत्रिकोणस्थसूर्ये मृतिः।
अर्कलिप्ताहतो राहुलिप्तागणश्चक्रलिप्ताप्तयुक्तो रविर्मृत्युदः।।६५।।

अष्टम स्थान का स्वामी जिस द्वादशांश में हो उससे त्रिकोण राशि में जब राहु जाये तो उससे (अष्टमेश राशि के) त्रिकोण राशि में सूर्य के जाने से मृत्यु होती है। सूर्य की कला-विकला को राहु की कला-विकला से गुणाकर गुणनफल में चक्रकला (२१६००) से भाग दें, जो लब्ध हो उसे सूर्य की कला में जोड़ दें। उसका राश्यादि बनावे, उसके तुल्य सूर्य जिस मास में हो उस मास में मृत्यु होती है।।६५।।

भौममार्त्तण्डलिप्ताहतिः कारयेच्चक्रलिप्ताहताल्लब्धयुक्तो रविः।
यातियस्मिंस्तदातत्त्रिकोणेऽपिवाक्लेशमाहुःक्षयंमासिधीमान्वदेत्।।

भौम की कला को सूर्य की कला से गुणा कर दे, गुणनफल में २१६०० से भाग दें, लब्ध को सूर्य की कला में जोड़ दे। योगफल का राश्यादि

बनावे, उस राश्यादि के तुल्य सूर्य जिस मास में हों, उस मास में क्लेश अथवा मृत्यु कहना।।६५।।

उदाहरण— सूर्य ३।१८।२६ इसका कला बनानें से ६५०६ हुआ। राहु ७।१३।२७ इसका कला १३४०७ हुआ। सूर्य के कला से राहु के कला को गुणने से गुणनफल ८७२२५९४२ हुआ। इसमें २१६०० का भाग देने से लब्ध ४०३८ हुआ। इसे सूर्य की कला में जोड़ने से १०५४४ हुआ। इसमें ६० का भाग देने से लब्ध १७५ अंश और शेष ४४ कला हुआ। अंश में ३० का भाग देने से ५ राशि २५ अंश और ४४ कला हुआ। इसके तुल्य राश्यादि सूर्य जब जिस मास में होगा उस मास में मृत्यु होगी।

मंगल राश्यादि १०।२२।३२ इसका कला १९३२० हुआ। इसे सूर्य के कला ६५०६ से गुण दिया तो गुणनफल १२५६९५९२० हुआ। इसमें २१६०० से भाग देने से लब्धि ५८१९ हुई। इसे सूर्य के कला में जोड़ देने से १२३२५ कला हुआ। इसका राश्यादि बनाने से ६।२५।२५ हुआ। इसके तुल्य सूर्य जब होवें उस समय कष्ट वा मृत्यु कहना।

अथ निधनचन्द्रमाह—

अष्टमेशत्रिकोणे विधुः स्याद्यदा योगमिन्दौ तथा तन्नवांशेऽपि वा।
तत्त्रिकोणे प्रयाते मृतिं निर्दिशेन्निश्चयात्स्वल्परेखोद्भवेवासरे।।

अष्टमेश जिस राशि में है उससे त्रिकोण राशि में जब चन्द्रमा होता है अथवा अष्टमेश जिस नवांश में है उससे त्रिकोण राशि में जब चन्द्रमा हो और उस दिन अल्प रेखा हो तो उस दिन मृत्यु होती है।।६६।।

अथ सशान्तिकरेखाफलम्—

रेखाभिः सप्तभिर्युक्ते मासे मृत्युर्नृणां भवेत्।
सुवर्णं विंशतिपलं दद्याद् द्वौ तिलपर्वतौ।।६७।।

जिस राशि में सात रेखायें हों उस राशि के सूर्य में जातक को कष्ट होता है। इसकी शान्ति के लिए २० तोला सोना और २ तिल के पर्वत दान करना चाहिए।।६७।।

रेखाभिर्वसुभिर्जाते शीघ्रं मृत्युवशो नरः।
असत्फलविनाशाय दद्यात्कर्पूरजां तुलाम्।।६८।।

जिस राशि में ८ रेखायें हों उस मास में मृत्यु तुल्य कष्ट होता है। इसकी शान्ति के लिए कपूर का तुलादान करना चाहिए।।६८।।

रेखाभिर्नवभिः सर्पान्म्रियते मनुजो ध्रुवम्।
अश्वैश्चतुर्भिः संयुक्तं रथं दद्याच्छुभाप्तये।।६९।।

नव रेखाएँ जिस राशि में हों उस मास में सर्प का भय होता है। इसकी शान्ति के लिए ४ घोड़ों के सहित रथ का दान करना चाहिए।।६९।।

रेखाभिर्दशभिः शस्त्रात्प्राणांस्त्यजति मानवः।
दद्याच्छुभफलावाप्त्यै कवचं वज्रसंयुतम्।।७०।।

जिस राशि में दस रेखाएँ हों तो उस मास में शस्त्र से भय होता है। इसकी शान्ति के लिए वज्र ही से युक्त कवच का दान करना चाहिए।।७०।।

रुद्रैः प्राप्याभिशापं च प्राणैर्युक्तो भवेन्नरः।
दिक्पलैः स्वर्णघटितां प्रदद्यात्प्रतिमां विधोः।।७१।।

जिस राशि में ११ रेखाएँ हों तो उस मास में अभिशाप से मृत्युभय होता है। उससे बचने के लिए १० तोले सुवर्ण की चन्द्रमा की प्रतिमा को दान करें।।७१।।

आदित्यैर्जलदोषेण मानवस्य मृतिं वदेत्।
भूमिं दद्यात्ब्राह्मणाय दाने शुभफलं भवेत्।।७२।।

जिस राशि में १२ रेखायें हों उस मास में जल से मृत्युभय होता है। उसकी शान्ति के लिए भूमि का दान करना चाहिए।।७२।।

त्रयोदशमितैर्व्याघ्रान्मानवो मृत्युमाप्नुयात्।
विष्णोर्हिरण्यगर्भस्य दानं कुर्याच्छुभाप्तये।।७३।।

जिस राशि में १३ रेखायें हों उस मास में व्याघ्र का भय होता है। इसकी शान्ति के लिए विष्णु की हिरण्यगर्भ प्रतिमा (शालिग्राम) का दान करना चाहिए।।७३।।

अचिराज्जीवितं जह्याच्छक्रैः कालेन भक्षितः।
वराहप्रतिमां दद्यात्कनकेन विनिर्मिताम्।।७४।।

जिस राशि में १४ रेखाएँ हों तो उस मास में अधिक कष्ट होता है। उसकी शान्ति के लिए सुवर्ण की वाराह की प्रतिमा का दान करना चाहिए।।७४।।

राज्ञो भयं तिथिमितैस्तत्र हस्ती प्रदीयते।
रिष्टं भूपैः कल्पतरोः प्रतिमां च निवेदयेत्।।७५।।

जिस राशि में १५ रेखाएँ हों उस मास में राजभय की संभावना होती है। इसकी शान्ति के लिए हाथी का दान करना चाहिए। जिस राशि में १६ रेखा हों उस मास में कष्ट होता है। इसकी शान्ति के लिए कल्पतरु की प्रतिमा का दान करे।।७५।।

कृषिचक्रैर्व्याधिभयं गुडधेनुं निवेदयेत्।
कलाहोऽष्टेन्दुभिर्दद्याद्रत्नगोभूहिरण्यकम्।।७६।।

जिस राशि में १७ रेखा हों उस मास में व्याधि का भय होता है। उसके शान्त्यर्थ गुड़ के धेनु का दान करें। जिस राशि में १८ रेखा हों उस मास में कलह होने का भय होता है। उसकी शान्ति के लिए गौ, भूमि, रत्न और सुवर्ण का दान करना चाहिए।।७६।।

देशत्यागोऽङ्कचन्द्रैः स्याच्छान्तिं कुर्याद्विधानतः।
विंशत्या बुद्धिनाशः स्यात्कुर्याल्लक्षमितं जपम्।।७७।।

जिस राशि में १९ रेखा हों उस मास में देश के त्यागने का भय होता है। इसकी शान्ति के लिए विधिपूर्वक शान्ति करनी चाहिए। जिस राशि में २० रेखा हों उस मास में बुद्धि का नाश होता है। इसकी शान्ति के लिए १ लक्ष जप करना चाहिए।।७७।।

भूमिपक्षै रोगपीडा दद्यात् धान्यस्य पर्वतम्।
यमाश्विभिर्बन्धुपीडा दद्यादादर्शकं बुधः।।७८।।

जिस राशि में २१ रेखा हों उस मास के रवि में रोग और पीड़ा होती है। उसकी शान्ति के लिए धान्य का पर्वत देना चाहिए। जिस राशि में २२ रेखा हों उस राशि के सूर्य में बन्धुओं को पीडा होती है। उसकी शान्ति के लिए आदर्श (ऐनक) का दान करना चाहिए।।७८।।

रामपक्षयुते मासे नानाक्लेशान्प्रपद्यते।
सौवर्णी प्रतिमां दद्याद्रवेः सप्तपलैः क्रमात्।।७९।।

जिस राशि में २३ रेखा हों उस राशि के रवि में अनेक प्रकार के कष्ट होते हैं। उसकी शान्ति के लिए सूर्य की सोने की सात तोले की प्रतिमा देनी चाहिए।।७९।।

वेदाश्विभिर्बन्धुहीनो दद्याद्गोदानकं दश।
सर्वरोगादिनाशार्थं जपहोमादि कारयेत्।।८०।।

जिस राशि में २४ रेखा हों उस राशि के सूर्य में बन्धुओं का नाश होता है। उसके शान्त्यर्थ १० गोदान करना चाहिए और सभी रोगों के शान्त्यर्थ जप-होम आदि करना चाहिए।।८०।।

शराश्विभिस्तथा विद्वन्प्रज्ञा मन्दोऽभिजायते।
ऋतुपक्षैर्बुद्धिहीनः पूज्या वागीश्वरी तथा।
धनक्षयः स्यान्नक्षत्रैः श्रीसूक्तं तत्र संजपेत्।।८१।।

जिस राशि में २५ या २६ रेखा हों उस राशि के सूर्य में बुद्धि मंद होती है। इसके शान्त्यर्थ वागीश्वरी देवी की उपासना करनी चाहिए। जिस राशि में २७ रेखा हों उस राशि के सूर्य में धन की हानि होती है। उसकी शान्ति के लिए श्रीसूक्त का जप करना चाहिए।।८१।।

वसुपक्षयुते मासे न लाभो हानि खेचरैः।
सूर्यहोमश्च विधिना कर्त्तव्यः शुभकांक्षिभिः।।८२।।

जिस राशि में २८ रेखा हों उस राशि के सूर्य में किसी प्रकार का लाभ नहीं होता है। इसके शान्त्यर्थ विधिवत् सूर्य का हवन कराना चाहिए।।८२।।

एकोनत्रिंशता चापि चिन्ता व्याकुलितो भवेत्।
घृतवस्त्रसुवर्णानि तत्र दद्याद्विचक्षणः।।८३।।

जिस राशि में २९ रेखा हों उस राशि के सूर्य में मनुष्य चिन्ता से व्याकुल होता है। उसके शान्त्यर्थ घी, वस्त्र-सुवर्ण का दान करना चाहिए।।८३।।

त्रिंशता धनधान्याप्तिरिति जातकनिर्णयः।
भूवह्निभिर्महोद्योगः पुत्रसम्पद्गुणाग्निभिः।।८४।।

जिस राशि में ३० रेखा हों उस राशि के सूर्य में धन-धान्य का लाभ होता है। जिस राशि में ३१ रेखा हों उस मास में बड़े उद्योग की तथा पुत्र और सम्पत्ति का लाभ होता है।।८४।।

सहेमवस्त्रलाभश्च चतुस्त्रिंशत्समन्विते।
पञ्चरामैर्भवेद्धीमान्षट्त्रिंशत्सुतवित्तदा।।८५।।

जिस राशि में ३४ रेखा होती है उस मास में सुवर्ण, वस्त्र आदि का लाभ होता है। जिस राशि में ३५ रेखा हों उस मास में बुद्धि में प्रखरता और जिसमें ३६ रेखा हों उस राशि में पुत्र-धन का लाभ होता है।।८५।।

सप्तत्रिंशद्धनस्याप्तिरष्टत्रिंशत्सुखार्थदा।
द्रव्यरत्नाप्तिरेकोनचत्वारिंशाच्च विद्यते।।८६।।

जिस राशि में ३७ रेखा हों उस मास में धन का लाभ होता है। जिस राशि में ३८ रेखा हों उस मास में धनसुख होता है। जिस राशि में ३९ रेखा हों उसमें द्रव्य-रत्न का लाभ होता है।।८६।।

धनवान्कीर्तिमांश्चैव चत्वारिंशति वर्धते।
अत ऊर्ध्वं यशोऽर्थाप्तिः पुण्यश्रीरुपचीयते।।८७।।

जिस राशि में ४० रेखा हों उस मास में धन-कीर्ति में वृद्धि होती है। इसके बाद जितनी ही अधिक रेखा होती है उतना ही अधिक यश-धन का लाभ उत्तरोत्तर होता है।।८७।।

अथ शुभाशुभफलमाह—

शुभखचरफलैक्यं प्राप्तवर्षे नितान्तं
धनतनयसुखानां भाजनं स्यान्मनुष्यः।
धरणितनयवर्गे विन्दुसंज्ञांतयोगे
तनुलयमिह वर्षे पापगे मृत्युभीतिः।।८८।।

शुभग्रह की रेखाओं के योगतुल्य वर्ष में धन, पुत्र, सुख को भोगने वाला मनुष्य होता है। भौमाष्टक वर्ग में भौम से लग्नांत फलों के योगतुल्य वर्ष और लग्न से भौमांत रेखाओं के योगतुल्य वर्ष में पापग्रह का योग होने से कष्ट होता है।।८८।।

इति बृहत्पाराशरहोरायाम् अष्टकवर्गफलाध्यायः।

अथ पूर्वजन्मशापद्योतकाध्यायः

पार्वत्युवाच—

देवदेव जगन्नाथ शूलपाणे वृषध्वज।
केन योगेन मर्त्यानां जायते शिशुनाशनम्।।१।।

पार्वतीजी ने कहा— हे देवों के देव, जगत् के स्वामी, शूलपाणि, वृषध्वज! किस दुर्योग के कारण मनुष्यों की सन्तानों का नाश होता है।।१।।

तत्सर्वमत्र योगेन ब्रूहि मे शशिशेखर।
शापमोक्षं च कृपया प्राणिनामल्पमेधसाम्।।२।।

और हे शशिशेखर! उन सभी योगों को मुझे बताइये और उस शाप से कैसे मनुष्य मुक्त हो सकता है इसे भी बताने की कृपा करें।।२।।

शङ्कर उवाच—

साधु पृष्टं त्वया देवि कथयामि सविस्तरात्।
शृणुष्वेकमना भूत्वा बलाबलवशादपि।।३।।

शंकरजी ने कहा— तुमने बड़ा ही अच्छा प्रश्न किया है। हे देवि! मैं उसे विस्तार से कहूँगा, तुम एकाग्रचित्त से सुनो।।३।।

ज्ञेयं सुनिश्चितं सर्वं राशिचक्रे विशेषतः।
मेषादि मीनपर्यन्तं मूर्त्यादिद्वादशक्रमात्।।४।।

यह सब राशिचक्र में निश्चित है।।४।।

भावं च भावजं ज्ञात्वा फलं ब्रूयाद्विचक्षणः।
तनुर्वित्तं बन्धुमातृपुत्रशत्रुस्मरो मृतिः।।५।।

मेषादि राशियों के बारह भाव तनु, धन, सहज, सुख, सुत, रिपु, जाया, मृत्यु।।५।।

पितृकर्म च लाभं च व्ययान्ता भावसंज्ञकाः।
गुरुलग्नेशदारेशपुत्रस्थानाधिपेषु च ।।६।।

धर्म, कर्म, आय और व्यय होते हैं। इसमें गुरु, लग्नेश, दारेश और पंचमेश।।६।।

सर्वेषु बलहीनेषु वक्तव्या त्वनपत्यता।
रव्याररराहुशनयः पुत्रस्था बलसंयुताः।
कारकाख्यात्क्षीणबलादनपत्यत्वमादिशेत्।।७।।

ये सभी निर्बल हों तो अनपत्य योग होता है। सूर्य, भौम, राहु, शनि पुत्रस्थान में हों और बली हों तथा पुत्रकारक (गुरु) निर्बल हो तो अनपत्य (निःसन्तान) योग होता है।।७।।

अथ शापज्ञानमाह—

पुत्रस्थानगते राहौ कुजेनापि निरीक्षिते।
कुजक्षेत्रगते वापि सर्पशापात्सुतक्षयः।।८।।

यदि पाँचवें भाव में राहु हो तथा भौम से देखा जाता हो अथवा भौम की राशि में हो तो सर्प के शाप से संतान की हानि होती है।।८।।

पुत्रेशे राहुसंयुक्ते पुत्रस्थे भानुनन्दने।
चन्द्रदृष्टे युते वापि सर्पशापात्सुतक्षयः।।९।।

पंचमेश राहु से युक्त हो, पंचम में शनि हो और चन्द्रमा से युत वा दृष्ट हो तो सर्प के शाप से संतान नष्ट होते हैं।।९।।

कारके राहुसंयुक्ते पुत्रेशे बलवर्जिते।
विलग्नेशे भौमयुते सर्पशापात्सुतक्षयः।।१०।।

कारक (गुरु) राहु से युक्त हो, पंचमेश बलहीन से लग्नेश भौम से युत हो तो सर्प के शाप से संतान नष्ट होते हैं।।१०।।

कारके भौमसंयुक्ते लग्ने च राहुसंयुते।
पुत्रस्थानेश्वरे दुःस्थे सर्पशापात्सुतक्षयः।।११।।

कारक (गुरु) भौम से युक्त हो, लग्न में राहु हो और पंचमेश ६।८।१२ भाव में हो तो सर्प के शाप से संतान की हानि होती है।।११।।

भौमांशे भौमसंयुक्ते पुत्रेशे सोमनन्दने।
राहुमान्दियुते लग्ने सर्पशापात्सुतक्षयः।।१२।।

भौम के अंश में भौम से युक्त पंचमेश बुध हो और लग्न, राहु, मान्दि (गुलिक) हो तो सर्ग के शाप से संतान की हानि होती है।।१२।।

पुत्रस्थाने कुजक्षेत्रे पुत्रे राहुसमन्विते।
सौम्यदृष्टे युते वापि सर्पशापात्सुतक्षयः।।१३।।

यदि पंचम भाव मंगल की राशि (७, ८) हो और पंचम में राहु युत हो, बुध से युत वा दृष्ट हो तो सर्प के शाप से संतान की हानि होती है।।१३।।

पुत्रस्था भानुमन्दाराः स्वर्भानुः शशिजोऽङ्गिराः।
निर्बलौ पुत्रलग्नेशौ सर्पशापात्सुतक्षयः।।१४।।

पंचम भाव में सूर्य, शनि, मंगल, राहु, बुध, गुरु हों और पंचमेश, लग्नेश निर्बल हों तो सर्प के शाप से संतान की हानि होती है।।१४।।

लग्नेशे राहुसंयुक्ते पुत्रेशे भौमसंयुते।
कारके राहुसन्दृष्टे सर्पशापात्सुतक्षयः।।१५।।

लग्नेश राहु से युत हो, पंचमेश मंगल से युत हो, कारक (गुरु) राहु से युत हो तो सर्प के शाप से सन्तान की हानि होती है।।

अथ शान्तिमाह—

ग्रहयोगवशादेवं योगं ज्ञात्वा सुधीमता।
तद्दोषपरिहारार्थं नागपूजां समारभेत्।।१६।।

इस प्रकार ग्रहयोगवश शाप को ज़ानकर उस दोष के शान्त्यर्थ नाग की पूजा करे।।१६।।

स्वगुह्योक्तविधानेन प्रतिष्ठां कारयेत्सुधीः।
नागमूर्तिं सुवर्णेन कृत्वा पूजां समाचरेत्।।१७।।

अपने वेदोक्त गृह्यसूत्र के अनुसार विधानपूर्वक सुवर्ण की नागमूर्त्ति बनाकर उसकी प्रतिष्ठा करे और उसका यथोक्त रीति से पूजन करे।।१७।।

गोभूतिलहिरण्यादि दद्याद्वित्तानुसारतः।
एवं कृते तु नागेन्द्रप्रसादाद्वर्धते कुलम्।।१८।।

गौ, भूमि, तिल, सुवर्णादि का दान अपनी शक्ति के अनुसार करे। ऐसा करने से नागदेव प्रसन्न होकर कुल की वृद्धि करते हैं।।१८।।

अथ पितृशापात्सुतक्षययोगम्—

पुत्रस्थानगते भानौ नीचे मन्दांशकस्थिते।
पार्श्वयोः क्रूरसम्बन्धे पितृशापात्सुतक्षयः।।२०।।

पंचम स्थान में सूर्य अपनी नीच राशि में शनि के अंश में हों और उसके आगे तथा पीछे पापग्रह हों तो पिता के शाप से संतान की हानि होती है।।१९।।

पुत्रस्थानाधिपे भानौ त्रिकोणे पापसंयुते।
क्रूरेऽन्तरे पापदृष्टे पितृशापात्सुतक्षयः।।२०।।

पुत्रस्थानेश सूर्य हो, क्रूरग्रहों के मध्य में त्रिकोण में पापग्रह हों, पापग्रह से देखे जाते हों तो पिता के शाप से वंश की क्षति होती है।।२०।।

भानुराशिस्थिते जीवे पुत्रेषु भानसंयुते।
पुत्रे लग्ने पापयुते पितृशापात्सुतक्षयः।।२१।।

सूर्य की राशि में गुरु हो और पंचमेश सूर्य से युत हो तथा पंचम और लग्न में पापग्रह हों तो पिता के शाप से सन्तान की हानि होती है।।२१।।

लग्नेशे दुर्बले पुत्रे पुत्रेशे भानुसंयुते।
पुत्रे लग्ने पापयुते पितृशापात्सुतक्षयः।।२२।।

लग्नेश दुर्बल होकर पंचम भाव में हो और पंचमेश सूर्य से युत हो तथा पंचम और लग्न में पापग्रह हों तो पिता के शाप से संतान की हानि होती है।।२२।।

पितृस्थानाधिपे पुत्रे पुत्रेशे वा तथा स्थिते।
लग्ने पुत्रे पापयुते पितृशापात्सुतक्षयः।।२३।।

पितृस्थानेश (१०वें भाव का स्वामी) पाँचवें भाव में हो और पंचमेश १०वें भाव में हो तथा लग्न और पाँचवें भाव में पापग्रह हों तो पिता के शाप से संतान की हानि होती है।।२३।।

पितुःस्थानाधिपो भौमः पुत्रेशेन समन्वितः।
लग्ने पुत्रे पितृस्थाने पापात्सन्ततिनाशनम्।।२४।।

पितृस्थान (१०) का स्वामी होकर भौम पंचमेश से युत हो और लग्न, पंचम तथा दशम में पापग्रह हों तो पिता के शाप से संतान की हानि होती है।।२४।।

पितृस्थानाधिपे दुःस्थे कारके पापराशिगे।
सपापे पुत्रलग्नेशे पितृशापात्सुतक्षयः।।२५।।

पितृस्थान (१०) का स्वामी ६, ८, १२ भाव में हो तथा कारक (गुरु) पापग्रह की राशि में हो और पंचमेश तथा लग्नेश पापयुत हों तो पिता के शाप से संतान की हानि होती है।।२५।।

लग्नपञ्चमभावस्था भानुभौमशनैश्चराः।
रन्ध्रे रिःफे राहुजीवौ पितृशापात्सुतक्षयः।।२६।।

लग्न तथा पंचम भाव में सूर्य, भौम, शनि हों और ८, १२ स्थान में राहु तथा गुरु हों तथा लग्न में पापग्रह हों तो पिता के शाप से संतान की हानि होती है।।२६।।

लग्नाष्टमगे भानौ पुत्रस्थे भानुनन्दने।
पुत्रेशे राहुसंयुक्ते लग्ने पापे सुतक्षयः।।२७।।

बारहवें लग्न से आठवें में सूर्य हों,पाँचवें भौम में शनि हो, पंचमेश राहु से युत हो और लग्न में पापग्रह हों तो पितृशाप से संतान की हानि होती है।।२७।।

व्ययेशे लग्नभावस्थे रन्ध्रेशे पुत्रराशिगे।
पितृस्थानाधिपे रन्ध्रे पितृशापात्सुतक्षयः।।२८।।

व्यय भाव के स्वामी लग्न में हो और अष्टमेश पाँचवें भाव में हो तथा पितृस्थानेश आठवें भाव में हो तो पिता के शाप से संतानहीन होता है।।२८।।

रोगेशे पुत्रभावस्थे पितृस्थानाधिपे तथा।
कारके राहुसंयुक्ते पितृशापात्सुतक्षयः।।२९।।

रोगेश पंचम भाव में पितृभावेश के साथ हो और कारक (गुरु) राहु से युत हो तो पिता के साप से संतान की हानि होती है।।२९।।

तद्दोषपरिहारार्थं गयाश्राद्धं च कारयेत्।
ब्राह्मणान् भोजयेत्तत्र अयुतं वा सहस्त्रकम्।।३०।।
कन्यादानं ततः कृत्वा गां च दद्यात्सवत्सकाम्।
एवं कृते पितुः शापान्मुच्यते नात्र संशयः।।३१।।

इस दोष के शान्त्यर्थ गयाश्राद्ध करे और एक हजार वा दस हजार ब्राह्मणों को भोजन करावे। इसके बाद कन्यादान और सवत्सा गौ का दान करे। इतना करने से पिता प्रसन्न होकर।।३१।।

वर्धते च कुलं तस्य पुत्रपौत्रादिभिस्तदा।
दृष्टियोगपदैः सर्वं फलं ब्रूयाद्विचक्षणः।।३२।।

उसे पुत्र-पौत्र से संपन्न कर कुल की वृद्धि करते हैं। इस प्रकार दृष्टि तथा योगवश पंडित लोग फल का विचार करें।।३२।।

अथ मातृशापात्सुतक्षययोगः—

पुत्रस्थानाधिपे चन्द्रे नीचे वा पापमध्यगे।
हिबुके पञ्चमे वापि मातृशापात्सुतक्षयः।।३३।।

पंचमेश चन्द्रमा अपनी नीच राशि में वा पापग्रह के मध्य में हो और ४,५ भाव में पापग्रह हों तो माता के शाप से संतान की हानि होती है।।३३।।

लाभे मन्दसमायोगे मातृस्थाने शुभेतरे।
नीचे पञ्चमगे चन्द्रे मातृशापात्सुतक्षयः।।३४।।

एकादश स्थान में शनि हो और चौथे भाव में पापग्रह हो तथा अपने नीच में चन्द्रमा पाँचवें भाव में हो तो माता के शाप से संतान की हानि होती है।।३४।।

पुत्रस्थानाधिपे दुःस्थे लग्नेशे नीचराशिगे।
चन्द्रपापसमायोगे मातृशापात्सुतक्षयः।।३५।।

पंचमेश ६,८,१२ भाव में हो, लग्नेश अपनी नीच राशि में हो तथा चन्द्रमा पाप से युत हो तो माता के शाप से संतान की हानि होती है।।३५।।

पुत्रस्थानाधिपे दुःस्थे चन्द्रे पापांशसंयुते।
लग्ने पुत्रे पापयुते मातृशापात्सुतक्षयः।।३६।।

पंचमेश ६, ८, १२ भाव में हो, चन्द्रमा पापांश में हो, लग्न और पंचम में पापग्रह हों तो माता के शाप से संतान की हानि होती है।।३६।।

पुत्रस्थानाधिपे चन्द्रे मन्दराह्वारसंयुते।
भाग्ये वा पुत्रराशौ वा कारके पुत्रनाशनम्।।३७।।

पंचमेश चन्द्रमा शनि, राहु, भौम से युत हो, कारक (गुरु) भाग्य वा पाँचवें भाव में हो तो संतान की हानि होती है।।३७।।

मातृस्थानाधिपे भौमे शनिराहुसमन्विते।
भानुचन्द्रयुते पुत्रे लग्ने सन्ततिनाशनम्।।३८।।

चौथे भाव का स्वामी भौम, शनि, राहु से युत हो, संतान भाव और लग्न सूर्य-चन्द्र से युत हों तो संतान की हानि होती है।।३८।।

लग्नात्मजेशौ शत्रुस्थौ रन्ध्रे मात्राधिपे स्थितौ।
पितृनाशाधिपौ लग्ने मातृशापात्सुतक्षयः।।३९।।

लग्नेश, पंचमेश छठे भाव में, आठवें भाव में मातृभावेश हों और दशम, अष्टम भाव के स्वामी लग्न में हों तो माता के शाप से संतान की हानि होती है।।३९।।

षष्ठाष्टमेशौ लग्नस्थौ व्यये मात्राधिपे सुते।
चन्द्रे जीवे पापयुते मातृशापात्सुतक्षयः।।४०।।

६, ८ भाव के स्वामी लग्न में, १२वें भाव में सुखेश और चन्द्रमा-गुरु पाप से युक्त होकर पाँचवें भाव में हों तो माता के शाप से संतान की हानि होती है।।४०।।

पापमध्यगते लग्ने क्षीणे चन्द्रे च सप्तमे।
मातृपुत्रे राहुमन्दौ मातृशापात्सुतक्षयः।।४१।।

लग्न पापग्रहों के मध्य में हो, क्षीण चन्द्रमा सातवें भाव में हो, ४, ५ भाव में राहु-शनि हों तो माता के शाप से सन्तान की हानि होती है।।४१।।

नाशस्थानाधिपे पुत्रे पुत्रेशे नाशराशिभे।
चन्द्रमातृपतौ दुःस्थे मातृशापात्सुतक्षयः।।४२।।

अष्टमेश पाँचवें भाव में और पंचमेश आठवें भाव में हो और चन्द्रमा तथा सुखेश ६, ८, १२ भाव में हो तो माता के शाप से संतान की हानि होती है।।४२।।

चन्द्रक्षेत्रे यदा लग्ने कुजराहुसमन्विते।
चन्द्रमन्दौ पुत्रसंस्थौ मातृशापात्सुतक्षयः।।४३।।

यदि कर्क राशि लग्न में हो तथा भौम-राहु से युत हो, चन्द्र-शनि पाँचवें भाव में हों तो माता के शाप से संतान की हानि होती है।।४३।।

लग्ने पुत्रे रन्ध्ररिःफे आरराहुरविः शनिः।
मातृलग्नाधिपौ दुःस्थौ मातृशापात्सुतक्षयः।।४४।।

लग्न, पंचम, आठवें, बारहवें भाव में भौम, राहु, रवि और शनि हों तथा मातृभावेश ६, ८, १२ में हो तो माता के शाप से संतान की हानि होती है।।४४।।

नाशस्थानं गते जीवे कुजराहुसमन्विते।
पुत्रस्थाने मन्दचन्द्रौ मातृशापात्सुतक्षयः।।४५।।

आठवें भाव में भौम-राहु से युक्त गुरु हो और पाँचवें भाव में शनि-चन्द्र हों तो माता के शाप से संतान की हानि होती है।।४५।।

ग्रहयोगपदैः सर्वं फलं ब्रूयाद्विचक्षणः।
शुभे सौख्यं विनिर्दिष्टं मिश्रे मिश्रं प्रकीर्त्तितम्।।४६।।

ग्रहयोगवश सभी फलों को करे। शुभयोग से शुभ फल, पापयोग से पापफल तथा मिश्रयोग से मिश्रित फल कहना चाहिए।।४६।।

अथास्य शान्तिमाह—

सेतुस्नानं प्रकुर्वीत गायत्री लक्षसंज्ञके।
ग्रहदानं च कर्त्तव्यं रौप्यपात्रे पयःस्थितिः।।४७।।

एक लक्ष गायत्री का जप कराके वा करके सेतुस्नान करे। ग्रहदान और चाँदी के पात्र में दूध का दान करे।।४७।।

ब्राह्मणान् भोजयेत्तद्वदश्वस्थस्य प्रदक्षिणम्।
कर्तव्यं भक्तियुक्तेन चाष्टविंशसहस्रकम्।।४८।।

ब्राह्मणों को भोजन करावे और भक्ति से युक्त होकर २८ हजार पीपल की प्रदक्षिणा करे।।४८।।

एवं कृते तदा देवि शापान्मोक्षो भविष्यति।
सत्पुत्रं लभते पश्चात्वृद्धिः स्यात्तस्य सन्ततेः।।४९।।

ऐसा करने से शाप से मुक्ति मिल जाती है और अच्छे पुत्र का लाभ होता है तथा संतान की वृद्धि होती है।।४९।।

अथ भ्रातृशापात्सुतक्षययोगः—

भ्रातृस्थानाधिपे पुत्रे कुजराहुसमन्विते।
पुत्रलग्नेश्वरौ रन्ध्रे भ्रातृशापात्सुतक्षयः।।५०।।

भ्रातृस्थान (३) के स्वामी भौम-राहु से युत होकर पाँचवें भाव में हों और पंचमेश, लग्नेश आठवें भाव में हों तो भाई के शाप से संतान की हानि होती है।।५०।।

लग्ने सुते कुजे मन्दे भ्रातृपे भाग्यराशिगे।
कारके नाशराशिस्थे भ्रातृशापात्सुतक्षयः।।५१।।

लग्न पंचम भाव में भौम-शनि हों, भ्रातृभावेश भाग्य भाव में हो तथा कारक (भौम) आठवें भाव में हों तो भाई के शाप से संतान की हानि होती है।।५१।।

भ्रातृस्थाने गुरौ नीचे मन्दः पञ्चमगो यदि।
नाशस्थौ तु चन्द्रारौ भ्रातृशापात्सुतक्षयः।।५२।।

भ्रातृस्थान (३) में नीच राशि में गुरु हो और शनि पाँचवें भाव में हो और आठवें भाव में चन्द्र-शनि हों तो भाई के शाप से संतान की हानि होती है।।५२।।

मूर्त्तिस्थानाधिपे रिःफे भौमः पञ्चमगो यदि।
पुत्रेशे रन्ध्रभावस्थे भ्रातृशापात्सुतक्षयः।।५३।।

लग्नेश बारहवें भाव में, पंचम भाव में भौम हो और पंचमेश आठवें भाव में हो तो भाई के शाप से संतान की हानि होती है।।५३।।

पापमध्यगते लग्ने सुतभे पापमध्यगे।
नाथौ च कारकौ दुःस्थौ भ्रातृशापात्सुतक्षयः।।५४।।

पापग्रह के मध्य में लग्न हो और पंचम भाव भी पापग्रह के मध्य में हो, दोनों के स्वामी और कारक ६, ८, १२ भाव में हो तो भाई के शाप से संतान की हानि होती है।।५४।।

कर्मेशे भ्रातृभावस्थे पापयुक्ते तथा शुभे।
पुत्रे च कुजसंयुक्ते भ्रातृशापात्सुतक्षयः।।५५।।

कर्मेश पापग्रह से युत होकर भ्रातृस्थान में हो और पाँचवें भाव में भौम युत हो तो भाई के शाप से संतान की हानि होती है।।५५।।

पुत्रस्थाने बुधक्षेत्रे शनिराहुसमन्विते।
रिःफे विदारौ वर्त्तेते भ्रातृशापात्सुतक्षयः।।५६।।

पंचम भाव में बुध की राशि (३।६) हो और उसमें शनि-राहु युक्त हों तथा बारहवें भाव में बुध-भौम हों तो भाई के शाप से संतान की हानि होती है।।५६।।

लग्नेशे भ्रातृराशिस्थे भ्रातृस्थानाधिपे सुते।
लग्नभ्रातृसुते पापे भ्रातृशापात्सुतक्षयः।।५७।।

लग्नेश भ्रातृभाव में, भ्रातृभावेश पाँचवें भाव में हो तथा लग्न भ्रातृ पाँचवें भाव में पापग्रह हो तो भाई के शाप से संतान की हानि होती है।।५७।।

भ्रात्रीशे नाशराशिस्थे पुत्रस्थे कारके तथा।
राहुमान्दियुते दृष्टे भ्रातृशापात्सुतक्षयः।।५८।।

तृतीय भाव का स्वामी ८वें भाव में और पाँचवें भाव में कारक राहु-मांदि (गुलिक) से युत वा दृष्ट हो तो भाई के शाप से संतान को कष्ट होता है।।५८।।

नाशस्थानाधिपे पुत्रे भ्रातृनाथेन संयुते।
रन्ध्रे आरार्किसंयुक्ते भ्रातृशापात्सुतक्षयः।।५९।।

अष्टमेश पाँचवें भाव में तृतीयेश से युक्त हो, आठवें भाव में भौम-शनि हों तो भाई के शाप से संतान की हानि होती है।।५९।।

अस्य शान्तिमाह—

भ्रातृशापविमोक्षार्थं श्रवणं विष्णुकीर्त्तनम्।
चान्द्रायणं चरेत्पश्चात्कावेर्य्यां विष्णुसन्निधौ।।६०।।

भाई के शाप की शान्त्यर्थ विष्णु का कीर्त्तन सुनना चाहिए। चान्द्रायण व्रत करे। बाद में कावेरी नदी के किनारे विष्णु के सन्निकट।।६०।।

अस्वत्थस्थापनं कार्यं दशधेनूः प्रदापयेत्।
प्राजापत्यं चरेत्तत्र भूमिं दद्यात्फलान्विताम्।
एवं यः कुरुते भक्त्या पुत्रवृद्धिः प्रजायते।।६१।।

पीपल के वृक्ष की स्थापना कर दस गौ का दान करे, इसके बाद प्राजापत्य करके भूमि का दान करे। इस प्रकार भक्तिपूर्वक करने से पुत्र की वृद्धि होती है।।६१।।

अथ मातुलात्सुतक्षययोगः—

पुत्रस्थाने बुधे जीवे कुजराहुसमन्विते।
लग्ने मन्दसमायोगे मातुलात्सुतनाशनम्।।६२।।

यदि पाँचवें भाव में बुध, गुरु, भौम, राहु हों, लग्न में शनि हो तो मामा के शाप से सन्तान की हानि होती है।।६२।।

लग्नपुत्रेश्वरौ पुत्रे शनिभौमबुधान्विते।
ज्ञेयो मातुलशापत्वात्पुत्रसन्ततिनाशनम्।।६३।।

लग्नेश और पंचमेश शनि, भौम, बुध के साथ एकत्र हों तो मामा के शाप से संतान की हानि होती है।।६३।।

लुप्ते पुत्राधिपे लग्ने सप्तमे भानुनन्दने।
लग्नेशे बुधसंयुक्ते तस्य सन्ततिनाशनम्।।६४।।

लग्नेश अस्त होकर लग्न में हो और सातवें भाव में शनि हो और लग्नेश बुध के साथ हो तो मामा के शाप से संतान की हानि होती है।।६४।।

ज्ञातिस्थानाधिपे लग्ने व्ययेशेन समन्विते।
शशिसौम्यकुजे पुत्रे तस्य सन्ततिनाशनम्।।६५।।

व्ययेश से युत होकर सुखेश लग्न में हो और चन्द्रमा, बुध, भौम संतान भाव में हों तो मामा के शाप से संतान की हानि होती है।।६५।।

अस्य शान्तिमाह—

तद्दोषपरिहारार्थं विष्णुस्थापनमुच्यते।
वापीकूपतडागादेर्निर्माणं सेतुबन्धनम्।।६६।।

उपर्युक्त दोष की शान्ति के लिए विष्णु की स्थापना करे। बावली, कूआँ, तालाब को बनवाये।।६६।।

पुत्रवृद्धिर्भवेत्तस्य सम्पद्वृद्धिः प्रजायते।
एवं योगग्रहेणैव फलं ब्रूयाद्विचक्षणैः।।६७।।

पुल का निर्माण करावे तो पुत्र की वृद्धि, संपत्ति की भी वृद्धि होती है। इस प्रकार ग्रहयोगवश पंडित लोग फल का विचार करें।।६७।।

ब्राह्मणशापात्सुतक्षययोगः—

गुरुक्षेत्रे यदा राहुः पुत्रे जीवारभानुजाः।
धर्मस्थानाधिपे नाशे ब्रह्मशापात्सुतक्षयः।।६८।।

यदि गुरु की राशि (९, १२) में राहु हो, पाँचवें भाव में गुरु, भौम, शनि हों और धर्मेश आठवें भाव में हो तो ब्रह्म (ब्राह्मण) के शाप से संतान का अभाव होता है।।६८।।

विद्याबलेन यो मर्त्यो ब्राह्मणानवमन्यते।
तद्दोषाद्ब्रह्मशापाच्च तस्य सन्ततिनाशनम्।।६९।।

विद्या वा बलप्रयोग से जो कोई ब्राह्मण का अपमान करता है, उसके दोष और ब्राह्मण के शाप से वह संतानहीन होता है।।६९।।

धर्मेशे पुत्रभावस्थे पुत्रेशे नाशराशिगे।
जीवारराहुमृत्युस्थे ब्रह्मशापात्सुतक्षयः।।७०।।

धर्मेश पाँचवें भाव में हो और पंचमेश धर्म भाव में हो तथा गुरु, भौम, राहु आठवें भाव में हों तो ब्रह्मशाप से संतान का अभाव होता है।।७०।।

धर्माधिपे नीचगते व्ययेशे पुत्रराशिगे।
राहुयुक्तेक्षिते वापि ब्रह्मशापात्सुतक्षयः।।७१।।

धर्मेश अपनी नीचराशि में हो और व्ययेश पंचम भाव में हो, राहु से युत वा दृष्ट हो तो ब्रह्मशाप से संतान का अभाव होता है।।७१।।

जीवे नीचगते राहुर्लग्ने वा पुत्रराशिगे।
पुत्रस्थानाधिपे दुःस्थे ब्रह्मशापात्सुतक्षयः।।७२।।

गुरु नीचराशि में हो, राहु लग्न वा पंचम भाव में हो और पंचमेश ६, ८, १२ भाव में हो तो ब्रह्मशाप से संतान का अभाव होता है।।७२।।

पुत्रस्थानाधिपे जीवे रन्ध्रे पापसमन्विते।
पुत्रेशावर्कचन्द्रौ वा ब्रह्मशापात्सुतक्षयः।।७३।।

पंचमेश गुरु आठवें भाव में पापग्रह से युक्त हो अथवा पंचमेश रवि-चन्द्र हों तो भी ब्रह्मशाप से संतान का अभाव होता है।।७३।।

मन्दांशे मन्दसंयुक्ते जीवे भौमसमन्विते।
पुत्रेशे व्ययराशिस्थे ब्रह्मशापात्सुतक्षयः।।७४।।

शनि के अंश में शनि-भौम संयुक्त गुरु हो, पंचमेश बारहवें भाव में हो तो ब्रह्मशाप से संतान का अभाव होता है।।७४।।

लग्ने गुरुयुते मन्दे भाग्ये राहुसमन्विते।
व्यये गुरुसमायुक्ते ब्रह्मशापात्सुतक्षयः।।७५।।

लग्न में गुरु हो, शनि-राहु से युक्त हो, भाग्यभाव में और गुरु व्यय भाव में हो तो ब्रह्मशाप से संतान का अभाव होता है।।७५।।

अस्य शान्तिमाह—

तस्य दोषस्य शान्त्यर्थं कुर्याच्चान्द्रायणं नरः।
ब्रह्मकूर्चत्रयं कृत्वा धेनुर्दद्यात्सदक्षिणाम्।।७६।।

उस दोष की शान्ति के लिए चान्द्रायण एवं ब्रह्मकूर्च व्रत (प्रायश्चित्त) करके दक्षिणा सहित गोदान।।७६।।

पञ्चरत्नानि देयानि सुवर्णेन समन्वितम्।
अन्नदानं ततः कुर्यादयुतं च सहस्रकम्।।७७।।

और पंचरत्न सोने के साथ दान करके दस हजार वा एक हजार का अन्नदान करें।।७७।।

एवं कृते तु सत्पुत्रं लभते नात्र संशयः।
मुक्तशापो विशुद्धात्मा स पुत्रसुखमेधते।।७८।।

ऐसा करने से मनुष्य शाप से मुक्त होकर पुत्र को प्राप्त करता है और शापमुक्त होकर शुद्धात्मा होकर सुख को भोगता है।।७८।।

पत्नीशापात्सुतक्षययोगः—

दारेशे पुत्रभावस्थे दारेशस्थांशपे शनौ।
पुत्रेशे नाशराशिस्थे पत्नीशापात्सुतक्षयः।।७९।।

सप्तमेश पंचम भाव में हो तथा सप्तमेश के नवांश का स्वामी शनि हो, पंचमेश आठवें भाव में हो तो स्त्री के शाप से संतान की हानि होती है।।७९।।

कलत्रेशे नाशसंस्थे रिःफेशे पुत्रराशिगे।
कारके पापसंयुक्ते पत्नीशापात्सुतक्षयः।।८०।।

सप्तमेश आठवें भाव में और व्ययेश पाँचवें भाव में हो, कारक (शुक्र) पापयुक्त हो तो स्त्री के शाप से संतान का अभाव होता है।।८०।।

पुत्रस्थानगते शुक्रे कामपे रन्ध्रमाश्रिते।
कारके पापसंयुक्ते पत्नीशापात्सुतक्षयः।।८१।।

पंचम स्थान में शुक्र हो, सप्तमेश आठवें भाव में हो तथा कारक पापयुक्त हो तो स्त्रीशाप से संतान का अभाव होता है।।८१।।

कुटुम्बे पापसम्बन्धे कामेशे नाशराशिगे।
पुत्रे पापग्रहैर्युक्ते पत्नीशापात्सुतक्षयः।।८२।।

दूसरे भाव में पापग्रह हो, सप्तमेश आठवें भाव में हो और पाँचवें भाव में पापग्रह युत हों तो स्त्री के शाप से संतान का अभाव होता है।।८२।।

भाग्यस्थानगते शुक्रे दारेशे नाशराशिगे।
लग्ने पापे सुते पापे पत्नीशापात्सुतक्षयः।।८३।।

नवम भाव में शुक्र, पंचमेश आठवें भाव में तथा लग्न और पाँचवें में पापग्रह हों तो स्त्री के शाप से संतान का अभाव होता है।।८३।।

भाग्यस्थानाधिपे शुक्रे पुत्रेशे शत्रुराशिगे।
गुरुलग्नेशदारेशा दुःस्थाः सन्ततिनाशनम्।।८४।।

भाग्येश शुक्र हो, पंचमेश छठे स्थान में हो और गुरु, लग्नेश, दारेश ६, ८, १२ भावों में हों तो स्त्रीशाप से संतान का अभाव होता है।।८४।।

पुत्रस्थाने भृगुक्षेत्रे राहुचन्द्रसमन्विते।
व्यये लग्ने धने पापे स्त्रीशापात्सुतक्षयः।।८५।।

पंचम भाव में शुक्र की राशि (२,७) राहु-चन्द्र से युक्त हो और १२, १, २ भावों में पापग्रह हों तो स्त्रीशाप से संतान का अभाव होता है।।८५।।

सप्तमे मन्दशुक्रौ च रन्ध्रेशे पुत्रभे रवौ।
लग्ने राहुसमायोगे पत्नीशापात्सुतक्षयः।।८६।।

सातवें भाव में शनि-शुक्र हों, अष्टमेश पाँचवें भाव में हो रवि राहु लग्न में हों तो स्त्रीशाप से संतान का अभाव होता है।।८

धने कुजे व्यये जीवे पुत्रस्थे भृगुनन्दने।
राहुयुक्तेक्षिते वापि पत्नीशापात्सुतक्षयः।।८७।।

दूसरे भाव में भौम, बारहवें भाव में गुरु, पाँचवें भाव में शुक्र हों, दाहयुक्त वा दृष्ट हों तो स्त्रीशाप से पुत्र का अभाव होता है।।८७।।

नाशस्थौ वित्तदारेशौ पुत्रलग्ने कुजे शनौ।
कारके पापसंयुक्ते पत्नीशापात्सुतक्षयः।।८८।।

आठवें भाव में धनेश, सप्तमेश हों, पाँचवें और लग्न में भौम-शनि हों तथा कारक पापयुक्त हो तो स्त्रीशाप से संतान का अभाव होता है।।८८।।

लग्नपञ्चमभाग्यस्था राहुमन्दकुजाः क्रमात्।
रन्ध्रस्थौ पुत्रदारेशौ पत्नीशापात्सुतक्षयः।।८९।।

लग्न पंचम, नवम में राहु, शनि, भौम हों और आठवें भाव में पंचमेश, सप्तमेश हों तो स्त्री के शाप से संतान का अभाव होता है।।८९।।

अस्य शान्तिमाह—

तस्य दोषस्य शान्त्यर्थं कन्यादानं समाचरेत्।
लक्ष्मीनारायणं देयं सर्वाभरणभूषितम्।।९०।।

इस दोष के शान्त्यर्थ कन्यादान करे। लक्ष्मीनारायण की मूर्त्ति सभी आभरणों से युक्त।।९०।।

मूर्त्तिदानं च कर्त्तव्यं दशधेनूः प्रदापयेत्।
शय्यां च भूषणं चैव दम्पत्योर्दापयेत्सुधीः।
पुत्रं प्रसूयते तस्य भाग्यवृद्धिश्च जायते।।९१।।

दान करे, दश धेनु का दान करें, शय्या-आभूषण सपत्नीक ब्राह्मण को दे। ऐसा करने से पुत्र होता है तथा भाग्यवृद्धि भी होती है।।९१।।

प्रेतशापात्सुतक्षययोगः—

मन्त्रशापमिदं मर्त्यः पिशाचं बाध्यते सदा।
कर्मलोपं पितृभ्यश्च तच्छापाद्वंशनाशनम्।।९२।।

जब पितरों के कर्म का लोप होता है अर्थात् उनके श्राद्धादि ठीक से नहीं होते हैं तो पिशाच (प्रेत) हो जाते हैं तथा वे वंशवृद्धि को नहीं होने देते।।९२।।

पुत्रस्थितौ मन्दसूर्यौ क्षीणचन्द्रस्तु सप्तमे।
लग्ने व्यये राहुजीवौ प्रेतशापात्सुतक्षयः।।९३।।

पाँचवें भाव में शनि-सूर्य हों और सातवें भाव में क्षीण चन्द्र हो तथा लग्न और बारहवें भाव में राहु तथा गुरु हों तो प्रेतेशाप से वंश का अभाव होता है।।९३।।

पुत्रस्थानाधिपे मन्दे नाशस्थे लग्नगे कुजे।
कारके नाशराशिस्थे प्रेतशापात्सुतक्षयः।।९४।।

पंचमेश शनि आठवें भाव में, लग्न में भौम और कारक आठवें भाव में हो तो प्रेतशाप से वंश का अभाव होता है।।९४।।

लग्ने पापे व्यये भानौ सुते चारार्किसोमजाः।
पुत्रेशे रन्ध्रभावस्थे प्रेतशापात्सुतक्षयः।।९५।।

लग्न में पापग्रह हों तथा बारहवें भाव में सूर्य हो और पाँचवें भाव में भौम, शनि, बुध हों और पंचमेश आठवें भाव में हो तो प्रेतशाप से संतान का अभाव होता है।।९५।।

लग्ने राहुसमायोगे पुत्रस्थे भानुनन्दने।
कारके नाशराशिस्थे प्रेतशापात्सुतक्षयः।।९६।।

लग्न में राहु, पाँचवें भाव में शनि और कारक आठवें भाव में हों तो प्रेतशाप से वंश का अभाव होता है।।९६।।

लग्ने राहौ च शुक्रेज्ये चन्द्रे मन्दयुते तथा।
लग्नेशे मृत्युराशिस्थे प्रेतशापात्सुतक्षयः।।९७।।

लग्न में राहु, शुक्र, गुरु हों, चन्द्रमा शनि से युत हो, लग्नेश आठवें भाव में हो तो प्रेतशाप से पुत्र का अभाव होता है।।९७।।

लग्ने राहुसमायोगे पुत्रस्थे भानुनन्दने।
कुजदृष्टे युते वापि प्रेतशापात्सुतक्षयः।।९८।।

लग्न में राहु तथा पाँचवें भाव में शनि हो, भौम से युत वा दृष्ट हो तो प्रेतशाप से पुत्र का अभाव होता है।।९८।।

कारके नीचराशिस्थे पुत्रस्थानाधिपे तथा।
नीचदृष्टे नीचयुते प्रेतशापात्सुतक्षयः।।९९।।

कारक नीचराशि में हो और पंचमेश भी अपने नीच में हो तथा नीचराशिस्थ ग्रह से युत वा दृष्ट हो तो प्रेतशाप से वंश का अभाव होता है।।९९।।

लग्ने मन्दे सुते राहौ रन्ध्रे भानुसमन्विते।
व्यये भौमसमायोगे प्रेतशापात्सुतक्षयः।।१००।।

लग्न में शनि, पाँचवें भाव में राहु, आठवें भाव में सूर्य युक्त हो और बारहवें भाव में भौम हो तो प्रेतशाप से वंश का अभाव होता है।।१००।।

कामस्थानाधिपे दुःस्थे पुत्रे चन्द्रसमन्विते।
मन्दमान्दियुते लग्ने प्रेतशापात्सुतक्षयः।।१०१।।

सप्तमेश ६, ८, १२ भाव में भौम हो, पाँचवें भाव में चन्द्रमा हो, लग्न में शनि और गुलिक हो तो प्रेतशाप से संतान का अभाव होता है।।१०१।।

बाधास्थानाधिपे पुत्रे शनिशुक्रसमन्विते।
कारके नाशराशिस्थे प्रेतशापात्सुतक्षयः।।१०२।।

अष्टमेश शनि-शुक्र से युत होकर पाँचवें भाव में हो और कारक आठवें भाव में हो तो प्रेतशाप से संतान का अभाव होता है।।१०२।।

अस्य शान्तिमाह—

तद्दोषस्य शान्त्यर्थं विष्णुश्राद्धं समाचरेत्।
रुद्राभिषेकं कुर्वीत ब्रह्ममूर्तिं प्रदापयेत्।।१०३।।

उपर्युक्त प्रेतशाप के निवृत्त्यर्थ विष्णुपद (गया) में श्राद्ध करना चाहिए और रुद्राभिषेक करके ब्रह्म की मूर्त्ति का दान।।१०३।।

धेनुं रजतपात्रं च नीलं चैव प्रदापयेत्।
एतत्कर्मकृते तत्र शापमोक्षः प्रजायते।।१०४।।

तथा धेनु तथा चाँदी के पात्र और नीलमणि का दान करना चाहिए। इतने कर्मों के करने से मुक्ति हो जाती हैं और कुलवृद्धि होती है।।१०४।।

अथ बहुपुत्रयोगः—

पुत्रे राहुरविः सौम्याः कारके शुभसंयुते।
शुभेन वीक्षिते वापि बहुपुत्रं समादिशेत्।।१०५।।

पंचम भाव में राहु, सूर्य, बुध हों, कारक (गुरु) शुभग्रह से युत हो और शुभग्रह से देखा जाता हो तो बहुत-से पुत्र होते हैं।।१०५।।

पुत्रेशे शुभराशिस्थे शुभदृष्टिसमन्विते।
कारके केन्द्रभावस्थे बहुपुत्रं समादिशेत्।।१०६।।

पंचमेश शुभग्रह की राशि में शुभग्रह की दृष्टि से युक्त हो, कारक केन्द्र में हो तो बहुत पुत्र होते हैं।।१०६।।

लग्नेशे पुत्रराशिस्थे पुत्रेशे लग्नमाश्रिते।
केन्द्रत्रिकोणगे जीवे बहुपुत्रं समादिशेत्।।१०७।।

लग्नेश पाँचवें भाव में, पंचमेश लग्न में, केन्द्र (१,४,७,१०), त्रिकोण (९,५) भाव में गुरु हो तो अनेक पुत्र होते हैं।।१०७।।

पुत्रस्थानगते राहौ मन्दांशकविवर्जिते।
बहुपुत्रं नरं विद्याच्छुभग्रहनिरीक्षिते।।१०८।।

पाँचवें भाव में राहु शनि के नवांश में न हो, यदि शुभग्रह देखता हो तो अनेक पुत्र होते हैं।।१०८।।

पुत्रस्थानाधिपे स्वोच्चे लग्नेशे शुभसंयुते।
कारके शुभसंयुक्ते बहुपुत्रं समादिशेत्।।१०९।।

पंचमेश अपने उच्च में हो, लग्नेश शुभग्रह से युत हो और कारक शुभग्रह हो तो अनेक पुत्र होते हैं।।१०९।।

पुत्रस्थाने तदीशे वा गुरौ वा शुभवीक्षिते।
शुभेन सहिते वापि बहुपुत्रं समादिशेत्।।११०।।

पंचम स्थान में पंचमेश वा गुरु हो, शुभग्रह से दृष्ट हो या शुभग्रह से युक्त हो तो अनेक पुत्र होते हैं।।११०।।

परिपूर्णबले जीवे लग्नेशे पुत्रराशिगे।
पुत्रेशे बलसंयुक्ते बहुपुत्रं समादिशेत्।।१११।।

गुरु पूर्ण बली हो तथा लग्नेश पाँचवें भाव में हो और पंचमेश बली हो तो अनेक पुत्र होते हैं।।१११।।

पुत्रस्थानगते जीवे परिपूर्णबलान्विते।
लग्नेशे बलयुक्ते पुत्रयोगा इमे स्मृताः।।११२।।

पाँचवें पूर्ण बली गुरु हो, लग्नेश बली हो तो अनेक पुत्र होते हैं।।११२।।

वर्गोत्तमांशगे जीवे लग्नेशस्यांशपे शुभे।
पुत्रेंशेन युते दृष्टे पुत्रयोगा इमे स्मृताः।।११२।।

गुरु वर्गोत्तम नवांश में हो, लग्नेश के नवांश में शुभग्रह हो, पंचमेश से युत वा दृष्ट हो तो बहुत पुत्र होते हैं।।११३।।

वित्तेशे पुत्रभावस्थे परिपूर्णबलान्विते।
वैशेषिकांशके जीवे पुत्रयोगा इमे स्मृताः।।११४।।

धनेश पूर्णबली होकर पाँचवें भाव में हो, गुरु वैशेषिकांश में हो तो अनेक पुत्र होते हैं।।११४।।

लग्नपुत्राधिपौ स्वोच्चे अन्योऽन्यं चापि वीक्षितौ।
परस्परस्थानगतौ पुत्रयोगा इमे स्मृताः।।११५।।

लग्नेश और पंचमेश अपनी उच्चराशि में हों, परस्पर देखते हों और परस्पर स्थान में हों तो अनेक पुत्र होते हैं।।११५।।

पुत्रस्थानाधिपस्यांशराशीशे शुभसंयुते।
शुभेन वीक्षिते वापि पुत्रयोगा इमे स्मृताः।।११६।।

पंचमेश जिस नवांश में हो, उसका स्वामी शुभग्रह से युत हो वा शुभग्रह से दृष्ट हो तो अनेक संतान होती हैं।।११६।।

लग्नपुत्राधिपौ केन्द्रे शुभग्रहसमन्वितौ।
कुटुम्बेशे बलाढ्ये तु पुत्रयोगा इमे स्मृताः।।११७।।

लग्नेश और पंचमेश केन्द्र में शुभ ग्रह से युत हों, धनेश बलवान् हो तो अनेक पुत्र होते हैं।।११७।।

लग्नेशे दारभावस्थे दारेशे लग्नमाश्रिते।
द्वितीयेशे बलाढ्ये तु पुत्रयोगा इमे स्मृताः।।११८।।

लग्नेश सातवें भाव में, सप्तमेश लग्न में हो और धनेश बली हो तो अनेक पुत्र होते हैं।।११८।।

दारेशग्रहसंयुक्तनवांशभवनाधिपे।
पुत्रवित्तविलग्नेशैर्दृष्टे तु बहुपुत्रता।।११९।।

दारेश से युत ग्रह का नवमांशेश पंचमेश, धनेश तथा लग्नेश से देखा जाता हो तो अनेक पुत्र होते हैं।।११९।।

इति बहुपुत्रयोगाः।

अथानपत्ययोगः—

पुत्रवित्तकलत्रेशसंयुक्तनवभागपाः।
पापांशकाः पापयुता अनपत्यत्वमादिशेत्।।१२०।।

पंचम, धन, सप्तम के स्वामियों से युक्त नवमांशेश का नवांश पापग्रह का हो अथवा पापयुत हो तो अनपत्य योग होता है।।१२०।।

व्ययेशसंयुतांशेशे मृत्युराशौ स्थिते सति।
पुत्रेशे क्रूरषष्ठ्यंशे अनपत्यत्वमादिशेत्।।१२१।।

लग्नेश से युत अंशेश आठवें भाव में हो और पंचमेश क्रूरग्रह से षष्ठ्यंश में हो तो अनपत्य योग होता है।।१२१।।

गुरुलग्नेशदारेशपुत्रस्थानाधिपेषु च।
सर्वेषु बलहीनेषु वक्तव्या त्वनपत्यता।।१२२।।

गुरु, लग्नेश, सप्तमेश और पंचमेश निर्बल हों तो अनपत्य योग होता है।।१२२।।

लग्नपुत्रेश्वरौ दुःस्थौ कारके नीचराशिगे।
अनपत्यग्रहे पुत्रे अनपत्यत्वमादिशेत्।।१२३।।

लग्नेश और पंचमेश ६, ८, १२ भाव में हों, कारक नीच राशि में हो, कोई अनपत्यग्रह (पापग्रह) पाँचवें भाव में हो तो अनपत्य योग होता है।।१२३।।

क्रूरषष्ठ्यंशके जीवे पुत्रस्थे नाशराशिपे।
पुत्रेशे नाशराशिस्थे अनपत्यत्वमादिशेत्।।१२४।।

गुरु क्रूरग्रह के षष्ठ्यंश में हो, पाँचवें भाव में अष्टमेश हो और पंचमेश आठवें भाव में हो तो अनपत्य योग होता है।।१२४।।

इत्यनपत्ययोगाः।

अथ चिरकालात्पुत्रप्राप्तियोगः—

लग्नाधिपे कुजे स्वोच्चे रन्ध्रे मन्दयुते रवौ।
शुभदृष्टिसमायोगे चिरात्पुत्रमुपैति सः।।१२५।।

लग्नेश भौम अपनी उच्चराशि में, आठवें भाव में शनि से युत रवि हो और शुभग्रह से देखा जाता हो तो अधिक दिन में संतान होती है।।१२५।।

लग्ने मन्दे गुरौ रन्ध्रे व्यये भौमसमन्विते।
शुभदृष्टे स्वतुङ्गे वा चिरात्पुत्रमुपैति सः।।१२६।।

लग्न भाव में शनि, गुरु आठवें भाव में, बारहवें भाव में भौम हो वा शुभदृष्ट अपने उच्च में हो तो बहुत दिनों में संतान होती है।।१२६।।

पुत्रस्था मन्दजीवज्ञा लग्ने पुत्राधिपे शुभे।
पुत्रेशे शुभराशिस्थे चिरात्पुत्रमुपैति सः।।१२७।।

संतान भाव में शनि, गुरु और बुध हों, पंचमेश शुभग्रह हो, पंचमेश शुभग्रह की राशि में हो तो अधिक समय में संतान होती है।।१२७।।

सुते राह्वर्कशुक्रेज्याः शुभर्क्षे शुभवीक्षिते।
पुत्रेशे शुभराशिस्थे चिरात्पुत्रमुपैति सः।।१२८।।

पाँचवें भाव में शुभग्रह की राशि में राहु, सूर्य, शुक्र, गुरु हों, शुभग्रह से देखे जाते हों और पंचमेश शुभ राशि में हो तो बहुत दिनों में संतान होती है।।१२८।।

लग्ने सौम्ये धने पापे तृतीये पापखेचरे।
पुत्रेशे शुभराशिस्थे चिरात्पुत्रमुपैति सः।।१२९।।

लग्न में शुभग्रह, दूसरे भाव में पापग्रह, तीसरे में पापग्रह और पंचमेश शुभराशि में हो तो बहुत समय में संतान होती है।।१२९।।

अथ दत्तकपुत्रयोगः—

पुत्रस्थाने कुजे मन्दे बुधक्षेत्रे विलग्नगे।
बुधदृष्टे युते वापि तदा दत्तसुतादयः।।१३०।।

पंचम भाव में भौम, शनि हों, जन्मलग्न में बुध की राशि हो और बुध से दृष्ट वा युत हो तो दत्तक पुत्र होता है।।१३०।।

पुत्रस्थाने बुधक्षेत्रे मन्दक्षेत्रेऽथवा भवेत्।
मन्दमान्दियुते दृष्टे तदा दत्तादयः सुताः।।१३१।।

पंचम भाव में बुध वा शनि की राशि हो और शनि तथा गुलिक से युत वा दृष्ट हो तो दत्तक पुत्र होते हैं।।१३१।।

पुत्रेशे मन्दसंयुक्ते कुजे सौम्यनिरीक्षिते।
लग्नाधिपे बुधांशे वा दत्तपुत्रा भवन्ति हि।।१३२।।

पंचमेश शनि से युत हो, भौम-बुध से देखा जाता हो, लग्नेश बुध के नवांश में हो तो दत्तक पुत्र होता है।।१३३।।

कामेशे लाभभावस्थे पुत्रेशे शुभसंयुते।
पुत्रे मन्दे बुधे वापि दत्तपुत्रा भवन्ति हि।।१३३।।

सप्तमेश एकादश भाव में, पंचमेश शुभग्रह से युक्त हो, पाँचवें भाव में शनि वा बुध हो तो दत्तक संतति होती है।।१३३।।

पुत्रेशे भाग्यभावस्थे भाग्येशे कर्मराशिगे।
पुत्रे मन्देन संदृष्टे दत्तपुत्रेण सन्ततिः।।१३४।।

पंचमेश भाग्यभाव में, भाग्येश कर्मभाव में, पाँचवें भाव को शनि देखता हो तो दत्तक पुत्र होता है।।१३४।।

लग्नाधिपे भृगुः स्वोच्चे पुत्रे मन्दसमन्विते।
कारके बलसंयुक्ते दत्तपुत्रा तु सन्ततिः।।१३५।।

लग्नेश और शुक्र उच्च में हो, पाँचवें भाव में शनि हो और कारक बली हो तो दत्तक पुत्र होता है।।१३५।।

पुत्रस्थानाधिपे चन्द्रे लग्ने पुत्रे शनैश्चरे।
परिपूर्णबले जीवे दत्तपुत्रात्सुतो भवेत्।।१३६।।

पंचमेश चन्द्र लग्न में, पाँचवें भाव में शनि हो, गुरु बलवान् हो तो दत्तक पुत्र होता है।।१३६।।

पुत्राधिपे रवौ लग्ने पुत्रस्थौ शनिसोमजौ।
पुत्राधिपे बलयुते दत्तपुत्रात्सुतो भवेत्।।१३७।।

पंचमेश रवि लग्न में और पंचम में शनि-बुध हों, पंचमेश बली हो तो दत्तक पुत्र होता है।।१३७।।

लग्नाधिपे बुधे पुत्रे कुजदृष्टिसमन्विते।
कारके लाभराशिस्थे दत्तपुत्रात्सुतो भवेत्।।१३८।।

लग्नेश बुध पाँचवें भाव में भौम से देखा जाता हो और कारक लाभभाव में हो तो दत्तक पुत्र होता है।।१३८।।

लग्नाधिपे गुरौ पुत्रे शनिदृष्टिसमन्विते।
पुत्रेशे भौमराशिस्थे दत्तपुत्रा भवन्ति हि।।१३९।।

लग्नेश गुरु पाँचवें भाव में शनि से देखा जाता हो और पंचमेश भौम की राशि में हो तो दत्तक पुत्र होता है।।१३९।।

अस्य शान्तिमाह—

वंशान्तो हरिरुष्णगो त्रिपुरहाऽब्जे भूसुते रुद्रियं
सौम्ये सम्पुटकांस्यपात्रविधिवज्जीवेन पैत्र्यातिथिः।
शुक्रे गोप्रतिपालनं च कथितं मन्दे च मृत्युञ्जयः
कन्यादानभुजङ्गकेतुकपिलाः सन्तानसौख्यप्रदाः।।१४०।।

यदि संतान के बाधक सूर्य हो तो हरिवंशपुराण सुनना चाहिए। चन्द्रमा के लिए शिवपूजन, भौम हो तो रुद्राभिषेक, बुध हो तो विधिवत् कांस्यपात्र और संपुट, गुरु हो तो पितृपूजन (गयाश्राद्ध), शुक्र हो तो गो-सेवा, शनि हो तो मृत्युञ्जय का जप, राहु हो तो कन्यादान और केतु हो तो कपिला गौ का दान करने से सन्तान का सुख होता है।।१४०।।

यावत्संख्या भवेद्राशिस्तावद्वारं विनिर्दिशेत्।
शिवविष्णुस्थापनाद्वा लक्षजापात्सुखं भवेत्।।१४१।।

पाँचवें भाव की राशिसंख्या के समान वार हरिवंश सुनना चाहिए। अथवा शिव-विष्णु की मूर्त्ति की स्थापना करे और लक्ष जप करावें तो अवश्य संतान का सुख होता है।।१४१।।

इति पूर्वजन्मशापद्योतकाध्यायः।

अथ दशाध्यायः

अथ दशाभेदमाह—

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि दशाभेदाननेकशः।
विंशोत्तरी दशा चोक्ता षोडशोत्तरी तथैव च।।२।।

पराशरजी बोले— मैं अनेक प्रकार के दशा के भेदों को कह रहा हूँ, उसे सुनो। विंशोत्तरी दशा, षोडशोत्तरी दशा।।२।।

द्वादशोत्तरिका ज्ञेया तथैवाष्टोत्तरी दशा।
पञ्चोत्तरी दशा तद्वद्दशा शतसमा स्मृता।।३।।

द्वादशोत्तरी दशा, अष्टोत्तरी दशा, पंचोत्तरी दशा, शतसमा दशा।।३।।

दशा हि चतुरशीतिः प्राह चाथ द्विसप्ततिः।
तथा षष्टिसमा चोक्ता दशा षड्विंशतिः समा।।४।।

चतुरशीतिसमा दशा, द्विसप्ततिसमा दशा, षष्टिसमा दशा, षड्विंशतिसमा दशा।।४।।

नवमांशनवदशा राश्यंशकदशाः स्मृताः।
दशा कालाभिधा चक्रदशा चक्र मुनीश्वरैः।।५।।

नवमांशनव दशा, राश्यंशक दशा, काल दशा, कालचक्र दशा, चक्र दशा।।५।।

चरपर्या दशा चाथ स्थिरदशा च द्विजोत्तम।
अथोत्तरदशा विप्र ब्रह्मता चापरा दशा।।६।।

चरपर्याय दशा, स्थिर दशा, उत्तर दशा, ब्रह्मग्रह दशा।।६।।

केन्द्राद्या च दशा ज्ञेया कारकादि दशा मता।
माण्डूकी च दशा प्रोक्ता तथा शूलदशापि च।।७।।

केन्द्रादि दशा, कारकादि दशा, मांडूकी दशा, शूल दशा।।७।।

योगार्धजा दशा विप्र दृग्दशां कथयाम्यहम्।
दशा त्रिकोणनामा वै राशीनां च दशा तथा।।८।।

योगार्धदशा, दृग्दशा, त्रिकोण दशा, राशि दशा।।८।।

तारा दशा तथा ज्ञेया दशा रोगा च वर्णदा।
पञ्चस्वरदशा विप्र योगिनी च दशा स्मृता।।९।।

तारा दशा, वर्णद दशा, पंचस्वर दशा, योगिनी दशा।।९।।

ततः पैण्ड्यदशा ज्ञेया तथांशकदशा द्विज।
नैसर्गिकदशा विप्र अष्टवर्गदशा स्मृता।।१०।।

पिंड दशा, अंश दशा, नैसर्गिक दशा, अष्टवर्ग दशा।।१०।।

सन्ध्या दशा च ज्ञातव्या पाचका च दशा द्विज।
द्विचत्वारिंशद्भेदाः स्युः कथयामि तवाग्रतः।।११।।

सन्ध्या दशा और पाचक दशा— इस प्रकार ४२ प्रकार की दशा होती है।।११।।

अथ विंशोत्तरीदशामाह—

आनयनप्रकारं च श्रृणुष्व द्विजपुङ्गव।
नामनक्षत्रपर्यन्तमाक्षादि कृत्तिकादितः।।१२।।

हे द्विजश्रेष्ठ! उसके आनयन प्रकार को कह रहा हूँ। कृत्तिका से राशिनाम पर्यन्त ही गिनना चाहिए।।१२।।

सैषा कृष्णोऽर्कहोरायां चन्द्रहोरागते सिते।
दहनात्स्वर्क्षपर्यन्तं गणयेन्नवभिर्हरेत्।।१३।।

कृष्णपक्ष में रवि के होरा में और शुक्लपक्ष में चन्द्रमा की होरा में कृत्तिका से कृत्तिका नक्षत्र से अपने जन्मनक्षत्र तक गिन कर ९ से भाग देने पर शेष तुल्य।।१३।।

सूर्येन्दुक्ष्माजतमसो वाक्पतिर्मन्दचन्द्रजा।
केतुशुक्रौ क्रमादेते विज्ञेयाश्च दशाधिपाः।।१४।।

क्रम से सूर्य, चन्द्र, भौम, राहु, गुरु, शनि, बुध, केतु, शुक्र की दशा होती है।।१४।।

रसाशामुनिधृत्यब्दा भूपविधृतिवत्सराः।
सप्तेन्दवो नगा व्योमबाहवो क्रमतो मताः।।१५।।

और क्रम से ६,१०,७,१८,१६,१९,१७,७,२० वर्ष इन की दशा के वर्ष होते हैं।।१५।।

अथ दशायाः भुक्तभोग्यानयनम्—

दशामानं भयातघ्नं भभोगेनोद्धृतं फलम्।
भुक्तवर्षादिकं ज्ञेयं दशावर्षाच्च संशोध्यम्।
शेषं वर्षादिकं भोग्यं दशायाः भवति ध्रुवम्।।१६।।

जिस ग्रह की दशा में जन्म हो, उसके वर्षमान से भयात को गुणाकर गुणन फल में भभोग से भाग देने से लब्धि वर्ष- मास- दिन- घटी- पल भुक्त दशा होती है। इसे दशा के सम्पूर्ण वर्ष में घटा देने से भाग्यदशा शेष होती है।।१६।।

स्फुटतरो हि मगुः कलिकात्मकः खखगजैर्विभजेद्गत ऋक्षकम्।
तदुडुवर्षगुणं च समादिकं खखगजैर्विभजेत्फलमत्र हि।।१७।।

अथवा स्पष्ट चन्द्रमा की कला बनाकर ८०० से भाग देने से लब्धि गत नक्षत्र होता है। उससे दशा का ज्ञान कर दशावर्ष से शेष को गुणा कर ८०० से भाग देने से मास आदि भुक्त होते हैं। उसे दशावर्ष में घटाने से शेष भोग्य वर्षादि होता है।।१७।।

अथ विंशोत्तरीदशाज्ञानर्थं चक्रम्—

सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	ग्रहाः
६	१०	७	१८	१६	१९	१७	७	२०	दशावर्षाणि
कृ.	रो.	मृ.	आ.	पुन.	पु.	श्ले.	म.	पू.फा.	नक्षत्राणि
उ.फा.	ह.	चि.	स्वा.	वि.	अनु.	ज्ये.	मू.	पू.षा.	
उ.षा.	श्र.	ध.	शत.	पू.भा.	उ.भा.	रे.	अ.	भ.	

उदाहरण— पुनर्वसु नक्षत्र के प्रथम चरण का भयात १०।३२ भभोग ५५।५३ है। कृतिका से गिनने से गुरु की दशा में जन्म हुआ। गुरु के दशा वर्ष १६ से भयात के पल ६३२ को गुणाकर गुणनफल १०११२ में पलात्मक भभोग ३३५३ से भाग देने से लब्धि ३ वर्ष हुआ। शेष ५३ को १२ से गुणाकर गुणनफल ६३६ में भभोग का भाग देने से

लब्धि शून्य मास और शेष ६३६ को ३० से गुणाकर गुणनफल १९०८० में भभोग का भाग देने से लब्ध ५· दिन हुआ। शेष २३१५ को ६० से गुणाकर गुणनफल १३८९०० में भभोग का भाग देने से लब्धि ४१ घटी हुआ। शेष १४२७ को ६० से गुणाकर गुणनफल ८५६२० में भभोग से भाग देने से लब्धि २५ पल हुआ। इस प्रकार ज़न्म के पूर्व गुरु की दशा ३ वर्ष मास ५ दिन ४१ घटी और २५ पल भुक्त हो चुकी। इसे गुरु के दशावर्ष १६ में घटाने से भोग्य अर्थात् शेष दशावर्ष १२, मास ११, दिन २४, घटी १८ और ३५ पल भोग्य था।

विंशोत्तरीदशाचक्रम्—

बृ.	श.	बृ.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	ग्रहाः
१२	१९	१७	७	२०	६	१०	७	१८	वर्ष
११									मा.
२४									दि.
१८									घ.
३५									प.
२०१३	२०२६	२०४५	२०६२	२०६९	२०८९	२०९५	२१०५	२११२	२१३०
३	३	३							
१८	१२	१२							
२६	४४	४४							
१४	४९	४९							

इति विंशोत्तरीदशाक्रमः।

अथ षोडशोत्तरीदशाक्रम—

एकोपचयते रुद्राद्धृत्यन्तं वत्सराः क्रमात्।
रविर्भौमो गुरुर्मन्दः केतुश्चन्द्रो बुधो भृगुः।।१८।।

११ में एक-एक १८ तक जोड़ने से दशावर्ष ११।१२।१३।१४।१५।१६।१७।१८ क्रम से सूर्य, भौम, गुरु, शनि, केतु, चन्द्रमा, बुध और शुक्र का होता है।।१८।।

अष्टौ दशाधिपाः प्रोक्ता राहुहीना नवग्रहाः।
पुष्यभाज्जन्मभं यावद्गणयेद्वसुभिर्हरेत्।।१९।।

राहु को छोड़कर नवग्रह में आठ ही ग्रह दशेश होते हैं। पुष्य से जन्म-नक्षत्र तक गिनने से जो संख्या हो उसमें ८ से भाग देने पर शेषांक तुल्य सूर्य आदि की दशा होती है।।१९।।

सूर्यहोरागते शुक्ले चन्द्रस्य कृष्णपक्षके।
तदा नृणां फलार्थाय विचिन्त्या षोडशोत्तरी।।२०।।

शुक्लपक्ष में जन्म हो और लग्न में सूर्य की होरा हो अथवा कृष्णपक्ष में जन्म हो और लग्न में चन्द्रमा की होरा हो तो दशाफल जानने के लिए षोडशोत्तरी दशा लेना चाहिए।।२०।।

अथ षोडशोत्तरीदशाज्ञानाय चक्रम्—

सू.	मं.	बृ.	श.	के.	चं.	बु.	शु.	ग्रहाः
११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	वर्षाणि
पु.	श्ले.	म.	पू.फा.	उ.फा.	ह.	चि.	स्वा.	नक्षत्राणि
स्वा.	वि.	अनु.	ज्ये.	मू.	पू.षा.	उ.षा.	श्र.	
ध.	शत.	पू.भा.	उ.भा.	रे.	अ.	भ.	कृ.	
रो.	मृ.	आ.	पुन.	×	×	×	×	

नोट— इस दशा का भुक्त-भोग्य विंशोत्तरी दशा के समान ही भयात भोग द्वारा लाना चाहिए।

इति षोडशोत्तरीदशाक्रमः।

अथ द्वादशोत्तरीदशाक्रमम्—

सूर्यो गुरुः शिखी ज्ञोऽगुः कुजो मन्दो निशाकरः।
शुक्रहीना दशा ह्येतद्विचयात्सप्तमात्समाः।।२१।।

सूर्य, गुरु, केतु, बुध, राहु, भौम, शनि और चन्द्रमा ये ही शुक्र को छोड़कर दशेश होते हैं और सात से दो-दो जोड़ने से इनके दशा वर्ष भी होते हैं।।२१।।

जन्मभात्पौष्णपर्यन्तं गणयेदष्टभिर्भजेत्।
नवामांशे यदा जाता शुकस्य द्वादशोत्तरी।।२२।।

जन्मनक्षत्र से रेवती पर्यन्त गिनकर जो संख्या हो उसमें ८ का भाग देने से शेष तुल्य दशेश होते हैं। यदि शुक्र के नवमांश में जन्म हो तो द्वादशोत्तरी दशा से फल कहना चाहिए।।२२।।

नोट— यहाँ भी विंशोत्तरी दशा के समान ही भुक्त-भोग्य लाना चाहिए।

अथ द्वादशोत्तरीदशाचक्रम्—

सू.	बृ.	के.	बु.	रा.	मं.	श.	चं.	ग्रहाः
७	९	११	१३	१५	१७	१९	२१	वर्षाणि

इति द्वादशोत्तरीदशाक्रमः।

अथाष्टोत्तरीदशामाह—

सूर्यश्चन्द्रः कुजः सौम्यः शनिर्जीवस्तमो भृगुः।
एते दशाधिपाः प्रोक्ता विकेतुश्च नवग्रहाः।।२३।।

केतु को छोड़कर नवग्रहों में सूर्य, चन्द्र, भौम, बुध, शनि, गुरु, राहु और शुक्र दशा के स्वामी होते हैं।।२३।।

रसाः पञ्चेन्दवो नागाः शैलचन्द्रनभेन्दवः।
गोब्जाः सूर्यकुनेत्राश्च समाः प्रद्योतनादयः।।२४।।

इनके ६, १५, ८, १७, १०, १९, १२, २१ ये क्रम से सूर्यादि के दशावर्ष होते हैं।।२४।।

लग्नेशात्केन्द्रकोणस्थे राहौ लग्ने सितं विना।
अष्टोत्तरी दशा प्रोक्ता शिवाद्या द्विजसत्तम।।२५।।

यदि लग्नेश से केन्द्र-त्रिकोण में राहु हो और लग्न में शुक्र हो तो अष्टोत्तरी दशा लेनी चाहिए। इसका आरम्भ आर्द्रा नक्षत्र से आरम्भ कर अपने जन्मनक्षत्र तक गिनना चाहिए।।२५।।

चतुष्कं त्रितयं तस्माच्चतुष्कं त्रितयं पुनः।
यावत्स्वजन्मभं तावद्गणयेच्च यथाक्रमात्।।२६।।

आर्द्रा से चार नक्षत्र के अन्तर्गत अपना जन्मनक्षत्र हो तो सूर्य की दशा, इसके बाद ३ नक्षत्र में चन्द्रमा की, इसके बाद के चार नक्षत्रों में भौम की, इसके बाद ३ नक्षत्र में बुध की, इसके बाद ४ नक्षत्र में शनि की, इसके बाद ३ नक्षत्र में गुरु की, इसके बाद ४ नक्षत्र में राहु की और शेष ४ नक्षत्र में शुक्र की दशा होती है।।२६।।

अष्टोत्तरी द्विधा प्रोक्ता शिवादि कृत्तिकादितः।
लग्ने सग्रहे शैवाद् विग्रहे कृत्तिकादितः।।२७।।

अष्टोत्तरी दशा दो प्रकार की होती है। यदि लग्न में कोई ग्रह हो तो आर्द्रा नक्षत्र से और यदि कोई ग्रह न हो तो कृत्तिका से गणना करना चाहिए।।२७।।

नोट— दशा का भुक्त-भोग्य साधन पूर्ववत् करना चाहिए।

अष्टोत्तरीदशाज्ञानाय चक्रम्—

सू.	चं.	मं.	बु.	श.	बृ.	रा.	शु.	ग्रहाः
६	१५	८	१७	१०	१९	१२	२१	वर्षाणि
आर्द्रा. पु. पु. श्ले.	म. पू.फा. उ.फा.	ह. चि. स्वा. वि.	अनु. ज्ये. मू.	पू.षा. उ.षा. ध. श्र.	ध. श. पू.भा.	उ.भा. रो. अ. भ.	कृ. रो. मृ.	
७२	१८०	९६	२०४	१२०	२२८	१४४	२५२	मासाः

विशेष— यहाँ दशा के भुक्त-भोग्य के लाने में भभोग और दशा वर्ष का मान इस प्रकार लेना चाहिए। नक्षत्र का जितना चरण बीत गया हो उतना भभोग में से घटाकर शेष को भभोग मानना चाहिए। जैसे किसी का जन्म नक्षत्र के दूसरे चरण में है और भभोग ६४।१६ है और भभोग का चतुर्थांश १६।४ एक चरण का मान हुआ। इसे भभोग में घटा देने से ४८।१२ यही भभोग हुआ, क्योंकि एक चरण बीतने के बाद जन्म हुआ है। इसी प्रकार जिस ग्रह की दशा में जन्म हो उसके वर्ष का भी ४ या ३ भाग करके अर्थात् उस ग्रह की दशा ४ नक्षत्रों की हो तो ४ भाग अन्यथा ३ भाग कर दशावर्ष लेना चाहिए। जैसे सूर्य की दशा चार नक्षत्रों की है और उसका दशावर्ष ६ है, अतः एक नक्षत्र का दशामान १८ मास हुआ, इससे भयात को गुणा कर भभोग का भाग देने से भुक्त वर्षादि आते हैं।

अथ पञ्चोत्तरीदशामाह—

पातौ विनानुराधादि विज्ञेयं जन्मभावधि।
गणयेत्सप्तभिर्भक्ते शेषे कल्प्या दशा शुभाः।।२८।।

पात (राहु-केतु) को छोड़कर अनुराधा से जन्मनक्षत्र तक गिनकर ७ से भाग देने से शेष तुल्य क्रम से।।२८।।

रविज्ञार्कसुतो भौमो भार्गवो रजनीकरः।
वाक्पतिश्च कर्काङ्गे तस्यैव द्वादशाङ्गके।।२९।।

सूर्य, बुध, शनि, भौम, शुक्र, चन्द्रमा और गुरु की दशा होती है। किन्तु कर्क लग्न और उसी के द्वादशांश में जन्म हो तो पंचोत्तरी दशा लेनी चाहिए।।२९।।

द्वादशारभ्य धृत्यन्ताः एकोत्तरदशा समाः।
क्रमात्सदा ग्रहाणां च राहुकेतू विना दशा।।३०।।

१२ से आरम्भ कर एक-२ बढ़ाने से १८ पर्यन्त क्रम से इनके दशा वर्ष होते हैं। यह दशा राहु-केतु को छोड़कर सात ही ग्रह की होती है।।३०।।

पञ्चोत्तरी दशा चिन्त्या निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।
बलाबलविवेकेन यथान्यायेन योजयेत्।।३१।।

बलाबल के विचार से शुभ-अशुभ समझना चाहिए।।३१।।

अथ पञ्चोत्तरीदशाज्ञानाय चक्रम्—

सू.	बु.	श.	मं.	शु.	चं.	बृ.	ग्रहाः
१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	वर्षाणि
अनु. शत. रो. पू.फा.	ज्ये. पू.भा. मृ. उ.फा.	मू. उ.भा. आ. ह.	पू.षा. रे. पुन. चि.	उ.षा. अ. पु. स्वा.	श्र. भ. श्ले. वि.	ध. कृ. म.	नक्षत्राणि

इति पञ्चोत्तरी दशा।

अथ शताब्दिकां दशामाह—

वर्गोत्तमगते लग्ने दशा चिन्त्या शताब्दिका।
पौष्णभाज्जन्मभं यावत् गणयेत्सप्तभिर्भजेत्।।३२।।

यदि लग्न में वर्गोत्तम नवांश हो तो शताब्दिका (१०० वर्ष की) दशा को लेना चाहिए। रेवती से जन्मनक्षत्र तक गिनकर सात से भाग देने पर शेष तुल्य।।३२।।

शेषाङ्के रवितो ज्ञेया दशा शतसमाभिधा।
रविश्चन्द्रो भृगुश्चान्द्रिर्जीवो विश्वम्भरात्मजः।।३३।।

सूर्य से गिनकर शताब्दिका दशा में दशेश होते हैं। रवि, चन्द्र, शुक्र, बुध, गुरु, भौम।।३३।।

दैवाकरिः क्रमादेते बाणा बाणा दिशो दश।
नखा नखाः खरामाश्च वर्षाणि दिनपादितः।।३४।।

और शनि— ये दशेश और क्रम से ५, ५, १०, १०, २०, २० और तीस वर्ष इनकी दशा होती है।।३४।।

नोट— दशा का भुक्त-भोग्य पूर्ववत् निकालना चाहिए।

अथ शताब्दिकादशाज्ञानाय चक्रम्—

सू.	चं.	शु.	बु.	बृ.	मं.	श.	ग्रहाः
५	५	१०	१०	२०	२०	३०	वर्षाणि
रे. पुन. चि. उ.षा.	अ. पु. स्वा. श्र.	भ. श्ले. वि. ध.	कृ. म. अनु. श.	रो. पू.फा. ज्ये. पू.भा.	मृ. उ.फा. मू. उ.भा.	आ. ह. पू.षा. +	नक्षत्राणि

इति शताब्दिका दशा।

अथ चतुरशीत्यब्दिकां दशामाह—

रविश्चन्द्रः कुजः सौम्यो जीवः शुक्रः शनिश्चरः।
तमध्वजौ विना सर्वे ग्रहा द्वादश हायनाः।।३५।।

रवि, चन्द्र, भौम, बुध, गुरु, शुक्र और शनि की राहु-केतु को छोड़कर १२ बारह वर्ष की दशा होती है।।३५।।

षवनाज्जन्मभं यावत्सप्ततष्टे दशा भवेत्।
चतुरशीतिका ज्ञेया कर्मेशे कर्मसंस्थिते।।३६।।

स्वाती से जन्मनक्षत्र तक गिनकर सात से भाग दें, शेष तुल्य सूर्यादि की दशा होती है। इसे चतुरशीत्यब्दिका (८४ वर्ष की) दशा कहते हैं। यदि कर्मेश कर्मस्थान में हो तो उस समय इस दशा को लेना चाहिए।।३६।।

अथ चतुरशीत्यब्दिकादशाचक्रम्—

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ग्रहाः
१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	वर्षाणि
स्वा. श्र. भ. श्ले.	वि. ध. कृ. म.	अनु. श. रो. पू.फा.	ज्ये. पू.भा. मृ. उ.फा.	मू. उ.भा. आ. ह.	पू.षा. रे. पुन. चि.	उ.षा. श्र. पु. +	नक्षत्राणि

इति चतुरशीत्यब्दिका दशा।

अथ द्विसप्ततिकां दशामाह—

लग्नेशे सप्तमे यत्र लग्ने वै मदनाधिपे।
चिन्तनीया दशा तत्र द्व्यधिका सप्ततिः समाः।।३७।।

यदि लग्नेश सप्तम में हो और सप्तमेश लग्न में हो तो द्विसप्ततिका (७२ वर्ष की) दशा से फल विचारना चाहिए।।३७।।

नव वर्षाणि सर्वेषां विकेतूनां ग्रहात्मनाम्।
मूलाज्जन्मर्क्षपर्यन्तं गणयेदष्टभिर्हरेत्।
शेषे दशा विचिन्त्या च फलं तस्माद्विचारयेत्।।३८।।

मूल नक्षत्र से जन्मनक्षत्र तक गिनकर ८ से भाग देने से शेष तुल्य केतू को छोड़कर सूर्यादि ग्रहों की ९ नव वर्ष की दशा होती है।।३८।।

अथ द्विसप्ततिकादशाचक्रम्—

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	रा.	ग्रहाः
९	९	९	९	९	९	९	९	वर्षाणि
मू. रे. पु. वि.	पू.षा. अ. श्ले. अनु.	उ.षा. भ. म. ज्ये.	श्र. कृ. पू.फा.	ध. रो. उ.फा.	श. मृ. ह.	पू.भा. आ. चि.	उ.भा. पुन. स्वा.	नक्षत्राणि

इति द्विसप्ततिका दशा।

अथ षष्ट्यब्दिकां दशामाह—

यदार्को लग्नराशिस्थश्चिन्त्या षष्टिसमा दशा।
दास्रास्त्रयं चतुष्कं च त्रयं वेदं पुनः पुनः।।३९।।

यदि सूर्य जन्मलग्न में हो तो षष्टिहायनी (६० वर्ष की) दशा का विचार करना चाहिए। अश्विनी नक्षत्र से ४ नक्षत्र के बाद ३ नक्षत्र, पुनः ४ नक्षत्र, फिर ३ नक्षत्र इस क्रम से।।३९।।

गुर्वर्कभूसुतानां च वर्षाणि दिङ्मितानि च।
ततः शशिज्ञशुक्रार्कपुत्रागूनां समाश्च षट्।।४०।।

गुरु, सूर्य, भौम, दश-दश वर्ष, इसके बाद चन्द्रमा, बुध, शुक्र, शनि, और राहु की ६-६ वर्ष की दशा होती है।।४०।।

अथ षष्टिहायनीदशाचक्रम्—

सू.	सू.	मं.	चं.	बु.	शु.	श.	रा.	ग्रहाः
१०	१०	१०	६	६	६	६	६	वर्षाणि
श्र. भ. कृ.	रो. मृ. आ. पुन.	श्ले. म.	फा. उ.फा. ह. चि.	स्वा. वि. ध.	ज्ये. मू. पू.षा. उ.षा.	श्र. ध. श.	पू.भा. उ.भा. रे.	नक्षत्राणि

इति षष्टिहायनी दशा।

अथ षट्त्रिंशतिकां दशामाह—

श्रवणाज्जन्मभं यावद्गणयेदष्टभिर्भजेत्।
शशाङ्कार्कसुरेज्यारज्ञार्कजौशुक्रराहवः ।।४१।।

श्रवण नक्षत्र से जन्मनक्षत्र तक गिनकर ८ से भाग देने से शेषतुल्य क्रम से चन्द्र, सूर्य, गुरु, भौम, बुध, शनि, शुक्र, राहु की दशा होती है।।४१।।

एकोपचयतश्चैकाद्वर्षाण्येषां क्रमात्स्मृताः।
दिवसे सूर्यहोरायां रात्रौ वै चन्द्रहोरके।।४२।।

और १ से एक अंक के वृद्धि तुल्य इनकी दशा का वर्ष होता है। दिन में सूर्य की होरा में और रात में चन्द्र की होरा में जन्म हो तो यह दशा लेनी चाहिए।।४२।।

अथ षट्त्रिंशदब्दिकां दशाचक्रम्—

चं.	सू.	बृ.	मं.	बु.	श.	शु.	रा.	ग्रहाः
१	२	३	४	५	६	७	८	वर्षाणि
श्र. कृ. पू.फा. मू.	ध. रो. उ.फा. पू.षा.	श. मृ. ह. उ.षा.	पू.भा. आ. चि. +	उ.भा. पुन. स्वा. +	रे. पु. वि. +	अ. श्ले. अनु. +	भ. म. ज्ये. +	नक्षत्राणि

इति षट्त्रिंशदब्दिका दशा।

अथ कालदशामाह—

सन्ध्या पञ्चघटी प्रोक्ता दिनषष्ट्यंशनाडिका।
सूर्यबिम्बादधः पूर्वं परस्तादुदयादपि।।४३।।

दिन-रात्रि का मान ६० घटी होता है, इसका चार विभाग किया गया, सूर्य के बिम्ब के आधा उदय के पहले ५ घटी और बाद में ५ घटी; यों दोनों मिलाकर १० घटी की प्रातः सन्ध्या एवं अर्धास्त सूर्यबिम्ब के पूर्व ५ घटी तथा इसके पश्चात् ५ घटी अर्थात् १० घटी की सायं सन्ध्या होती है।।४३।।

सन्ध्याद्वयं विंशत्याघटिकाभिः प्रकीर्त्तितम्।
दिनस्य विंशतिर्घट्यः पूर्णसंज्ञा उदाहृता।।४४।।

इस प्रकार से दोनों संध्यायें २० घटी की होती हैं। शेष दिन के २० घटी की पूर्ण संज्ञा।।४४।।

निशायाम्मुग्धसंज्ञाश्च घटिका विंशतिश्च याः।।४५।।
सूर्योदयस्य या सन्ध्या खण्डाख्या दशनाडिकाः।।४५।।

और इसी प्रकार रात्रि के २० घटी की मुग्धा संज्ञा होती है। सूर्योदय के सन्ध्या की खण्ड संज्ञा।।४५।।

अस्तकालस्य या सन्ध्या सुधाख्या दशनाडिकाः।
पूर्णमुग्धे गतघटीषड्गुणे नवधा लिखेत्।।४६।।

और सायंकाल की संध्या को सुधा कहा है। यदि पूर्णा या मुग्धा में जन्म हो तो दोनों के गतघटी को ६ से गुणा कर एकत्र रख दें।।४६।।

तथा खण्डसुधासूर्ये हते तु नवधा लिखेत्।
विभक्तानीन्द्रिययुगैर्मानख्यानफलानि च।।४७।।

यदि खंड या सुधा में जन्म हो तो १२ से गुणाकर एकत्र रखकर दोनों जगह ४५ से भाग देने से जो फल आवे उसें नव जगह रखकर।।४७।।

क्रमात्सूर्यादिकानां च मानमुक्तं मुनीश्वरैः।
स्वस्वमानं स्वसंख्याभिर्गुणिते स्युःसमादयः।।४८।।

सूर्यादि ग्रहों की संख्या १,२ आदि से गुणा कर देने से उनके दशावर्षादि होते हैं।।४८।।

उदाहरण— जैसे किसी का दिन इष्टकाल २।२६ है, इसमें से सूर्योदय के संध्यामान घटी में घटा देने से शेष ७।४४ बचा, अतः खण्ड

दशा में जन्म हुआ। इसे ६ से गुणा करने से गुणनफल ४६।२४ हुआ। इसमें ४५ से भाग देने से १।०।२४।०।१० इसे ९ जगह लिखकर १,२,३,४,५,६,७,८,९ से गुणा करने से सूर्य आदि ग्रहों के क्रम से दशा वर्ष हुए।

इति कालदशा।

अथ चक्रदशामाह—

राशीश्वराद्दशा ज्ञेया सूर्यादीनां क्रमात्पुनः।
दिवारात्रिस्तथा सन्ध्यात्रिकाले त्रिविधा दशा।।४९।।

दिन, रात और संध्या के अनुसार राशी और राशीस्वर के अनुसार ३ प्रकार की दशा होती है।।४९।।

दिवालग्नेशस्थिताद्भाच्च रात्रौ लग्नश्रितात्तथा।।५०।।
सन्ध्यायां धनभावस्थाद् ज्ञेया चक्रदशा बुधैः।।५०।।

दिन में जन्म हो तो लग्नेश ज़िस राशि में हो उस राशि से, रात में जन्म हो तो लंग्न में जो राशि हो उससे और संध्या में जन्म हो तो द्वितीय भाव की राशि से सूर्यादि ग्रहों की दशा होती है।।५०।।

राशीनां दश वर्षाण्येकैकस्य दशा भवेत्।
क्रमाद् द्वादशराशीनां विज्ञातव्या द्विजोत्तम।।५१।।

क्रम से १२ राशियों की प्रत्येक का दश-दश वर्ष दशा का प्रमाण होता है, इसे चक्रदशा कहते हैं।।५१।।

उदाहरण— दिन में जन्म है (पृ. २४ का चक्र देखो), लग्नेश शनि वृश्चिक राशि में है, अतः वृश्चिक राशि से दशा का आरम्भ हुआ। स्पष्टार्थ चक्र देखिए।

वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.
१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
२०१३	२३	३३	४३	५३	६३	७३	८३	९३	२१०३	१३	२३
३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३
१८	१८	१८	१८	१८	१८	१८	१८	१८	१८	१८	१८

इति चक्रदशा।

मतान्तर से चक्रदशा—

चक्राख्याथ दशां वक्ष्ये तवाग्रे द्विजनन्दन।
लग्नस्थस्य दशा चादौ ततो वित्तस्थितादयः।।१।।

यह दशा दो प्रकार की होती है। प्रथम भावस्थ ग्रह की और दूसरी भावों की। हे द्विजनंदन! मैं तुमसे चक्रदशा को कहता हूँ। पहले जन्मलग्न में बैठे ग्रह की, उसके बाद धन आदि भावों में बैठे हुए ग्रहों की दशा होती है।।१।।

द्वित्र्यादयो यदैकस्था तदा भागादयोऽधिकात्।
तत्रापि तुल्ये नैसर्गाद्बलात्सर्वाधिकस्य च।।२।।

यदि एक ही भाव में दो या तीन ग्रह हों तो उनमें जिसका अधिक अंश हो उसका पहले, इसके बाद उससे न्यूनांश की दशा होती है। यदि अंशादि भी समान हों तो नैसर्गिक बल जिसका अधिक हो उसी की पहले दशा होगी।।२।।

राशिप्रमितवर्षाणि भागाह्नश्चानुपाततः।
भावानामपि लग्नाच्च वर्षाणि दिङ्मितानि च।।३।।

जिस भाव में ग्रह है उस भाव की राशि से संख्या तुल्य वर्ष प्रमाण दशा वर्ष और अंश से अनुपात द्वारा मासादि लेना चाहिए। भावों की दशा जन्मलग्न से आरम्भ कर प्रत्येक भावों की दशा होती है। इनका दशा वर्ष प्रत्येक भाव का दश-दश वर्ष का होता है।।३।।

भुक्ता दशाऽनुयाताद्वा विज्ञेया स्वस्वकल्पनात्।
अन्तर्दशापि सुधिया सूक्ष्मादेशाय चिन्तयेत्।।४।।

दशा का भुक्त अनुपात द्वारा लाना चाहिए। इसी प्रकार सूक्ष्म फल कहने के लिए अन्तर्दशा का भी साधन करना चाहिए।।४।।

अथ कालचक्रदशामाह—

वन्देऽहं गोपिकानाथं भारतीं गणनायकम्।
पार्वत्यै कथिता पूर्वं कालचक्रं पिनाकिना।।५२।।

श्रीकृष्ण, सरस्वती एवं गणेशजी को प्रणाम कर जो कि शंकरजी ने पार्वती से पूर्व में कालचक्र को कहा था।।५२।।

तच्चक्रसारमुद्धृत्य लघुमार्गेण कथ्यते।
शुभाशुभं मनुष्याणां भूतभव्यं च भावि तत्।।५३।।

उसके तत्त्व को लेकर लाघव से मैं कालचक्र को कह रहा हूँ, जो

मनुष्यों के भूत, वर्तमान और भविष्य के शुभ-अशुभ को बताने वाला है।।५३।।

द्वादशारं लिखेच्चक्रं तिर्यगूर्ध्वं समानकम्।
गृहा द्वादश जायन्ते सव्यचक्रे यथाक्रमम्।।५४।।

खड़ी और आड़ी रेखाओं से १२ कोष्ठ का चक्र बना के।।५४।।

द्वितीयादिषु कोष्ठेषु राशीन्मेषादिकाँल्लिखेत्।
एवं द्वादशराश्याख्यं कालचक्रमुदीरितम्।।५५।।

उसके दूसरे आदि कोष्ठ में मेषादि राशियों को लिखे। उनके आगे कहे अनुसार नक्षत्रों का न्यास करे। इसी प्रकार एक दूसरा चक्र भी बनावे। दोनों में एक की सव्य और दूसरे की अपसव्य कल्पना कर आगे कहे हुए रीति के अनुसार राशि तथा नक्षत्रों का न्यास करे। इसी को १२ राशि का कालचक्र कहते हैं।।५५।।

चक्रे नक्षत्रन्यासविधिः—

अश्विन्यादित्रयं चैव सव्यमार्गे प्रतिष्ठितम्।
रोहिण्यादि त्रयं चैव अपसव्ये यथाक्रमम्।।५६।।

अश्विनी से तीन नक्षत्र सव्य चक्र में, रोहिणी से ३ नक्षत्र अपसव्य चक्र में।।५६।।

अश्विन्यादितिहस्तर्क्षमूलवाताहिवह्नयः।
विश्वर्क्षपूर्वाभाद्रं च रेवती सव्यतारकाः।।५७।।

पुनर्वसु से ३-३ नक्षत्र सव्य-अपसव्य चक्र में लिखने से सव्य चक्र में अश्विनी, पुनर्वसु, हस्त, मूल, स्वाती, श्लेषा, कृत्तिका, उत्तराषाढ़, पूर्वाभाद्रपद और रेवती— ये १० नक्षत्र सव्य चक्र में हुए।।५७।।

एतद्दशोडुपादानामश्विन्यादौ च वीक्षयेत्।
विशदस्तत्प्रकारस्तु कथ्यते शृणु पार्वती।।५८।।

इन नक्षत्रों के चरणों को अश्विनी के चरणों के समान ही देखना चाहिए। इसका विशद प्रकार आगे कह रहा हूँ।।५८।।

देहजीवज्ञानप्रकारमाह—

देहजीवौ मेषचापौ दास्रादाद्यचरणस्य च।
मेषादि चापपर्यन्तं राशिपाश्च दशाधिपाः।।५९।।

अश्विनी नक्षत्र के पहले चरण मेष देह और धनराशि जीव संज्ञक होती है और मेष से धन पर्यन्त नव राशियाँ (मेष, वृष, मिथुन, कर्क,

सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धन) और इनके स्वामी क्रम से दशाधीश होते हैं।।५९।।

देहजीवौ नक्रयुग्मौ दिगीशार्काष्टभूधराः।
षड्वेदशरलोकानां राशिपाश्च दशाधिपाः।।६०।।

अश्विनी के दूसरे चरण में मकर देह और मिथुन जीव संज्ञक होता है और १०, ११, १२, ८, ७, ६, ४, ५, ३ राशियों अर्थात् मकर, कुम्भ, मीन, वृश्चिक, तुला, कन्या, कर्क, सिंह और मिथुन के स्वामी दशाधिपति होते हैं।।६०।।

दास्रादि दशताराणां तृतीयचरणेषु च।
गौर्देहो मिथुनं जीवो द्वेकार्केशदशाङ्कका।।६१।।
क्वक्षिरामाख्यनाथास्ते दशाधिपतयः क्रमात्।
अश्विन्यादिदशोडूनां चतुर्थचरणेषु च।।६२।।

अश्विनी आदि १० नक्षत्रों के ३ रे चरण में वृष देह और मिथुन राशि जीव संज्ञक होती है और २, १, १२, ११, १०, ९, १, २, ३ राशियों के स्वामी क्रम से दशा के स्वामी होते हैं। अश्विनी आदि १० नक्षत्रों के चौथे चरण में।।६२।।

कर्कमीनौ देहजीवौ कर्कादिनवमेश्वराः।
दशाधिपाश्च विज्ञेया शृणु पार्वति निश्चितम्।।६३।।

कर्क देह और मीन राशि जीव संज्ञक होती है और कर्क से मीन पर्यन्त ९ राशियों के स्वामी दशेश होते हैं।।६३।।

याम्येज्यचित्रातोयर्क्ष उत्तराभाद्रपदास्तथा।
एतत्पञ्चजोडुपादानां भरण्यादौ च वीक्षयेत्।।६४।।

भरणी, पुष्य, चित्रा, पूर्वाषाढ़, उत्तराभाद्रपद इन पाँच नक्षत्रों के चरणों का भरणी नक्षत्र के समान ही विचार करना चाहिए।।६४।।

याम्यप्रथमपादस्य देहजीवावलिर्झषः।
नागागर्तुपयोधीषु रामाक्षीन्द्वर्कभेश्वराः।।६५।।

भरणी के प्रथम चरण में वृश्चिक देह और मीन राशि जीव संज्ञक हैं। ८।७।६।४।५।३।२।१।१२ राशियों के स्वामी क्रम से दशेश होते हैं।।६५।।

याम्यद्वितीयपादस्य देहजीवौ घटाङ्गने।
रुद्रदिङ्नन्दचन्द्राक्षिरामाब्धीषु दशेश्वराः।।६६।।

भरणी के दूसरे चरण में कुम्भ देह और कन्या जीव संज्ञक है। ११।१०।९।१।२।३।४।५।६ राशियों के स्वामी क्रम से दशेश होते हैं।।६६।।

याम्यतृतीयपादस्य देहजीवौ तुलाङ्गने।
सप्ताष्टाङ्कदिगीशार्कगजाद्रिरसराशिपाः।।६७।।

भरणी के तीसरे चरण में तुला देह और कन्या जीव संज्ञक होते हैं। ७।८।९।१०।११।१२।८।७।६ राशियों के स्वामी क्रम से दशेश होते हैं।।६७।।

देहजीवौ कर्कचापौ चतुर्थचरणे स्मृतौ।
वेदबाणाग्निनेत्रेन्दुसूर्येशदशनन्दपाः ।।६८।।

भरणी के चौथे चरण में कर्क देह और धन राशि जीवसंज्ञक है। ४।५।३।२।१।१२।११।१०।९ राशियों के स्वामी क्रम से दशेश होते हैं।।६८।।

सव्यमेवं विजानीयादपसव्यं तु कथ्यते।
द्वादशारं लिखेच्चक्रं तिर्यगूर्ध्वं समानकम्।।६९।।

उपर्युक्त सव्य चक्र को कहा, अब अपसव्य चक्र को कह रहा हूँ। १२ कोष्ठ का ऊपर-नीचे चक्र को लिखकर।।६९।।

द्वितीयादिषु कोष्ठेषु वृश्चिकाद्व्यस्तमालिखेत्।
प्राजापत्यमघेन्द्राग्निं श्रवणं च चतुष्टयम्।।७०।।

दूसरे आदि कोष्ठ में वृश्चिकादि उलटे राशियों को लिखे। उसमें रोहिणी, मघा, विशाखा और श्रवण इन चार नक्षत्रों को लिखे।।७०।।

धातृवद्वीक्षयेद्देहजीवौ कर्कधनुर्धरौ।
नवदिग्रुद्रसूर्येन्दुनेत्राङ्गीष्वब्धिराशिपाः।।७१।।

उपर्युक्त चार नक्षत्रों में रोहिणी के समान ही देह-जीव का विचार करना चाहिए। यथा रोहिणी के प्रथम चरण में कर्क देह और धन राशि जीवसंज्ञक है। ९।१०।११।१२।१ ।२।३।५।४ राशियों के स्वामी दशेश होते हैं।।७१।।

धातृद्वितीयचरणे तुलास्त्रीदेहजीवकौ।
षष्ठसप्ताष्टार्करुद्रा दिगङ्कवसुसप्तपाः।।७२।।

रोहिणी के दूसरे चरण में तुला देह और कन्या जीव संज्ञक हैं। ६।७।८।१२।११।१०।९।८।७ राशियों के स्वामी दशेश होते हैं।।७२।।

धातृतृतीयचरणे देहजीवौ कुम्भाङ्गने।
षट्बाणाब्धिगुणाक्षीन्दुनन्ददिग्रुद्रराशिपाः।।७३।।

रोहिणी के तीसरे चरण में कुम्भ देह और कन्या जीव संज्ञक है। ६।५।४।३।२।१।९।१०।११ राशियों के स्वामी क्रम से दशेश होते हैं।।७३।।

रोहिण्यन्तपदे देहजीवालिझषौ स्मृतौ।
सूर्येन्दुद्विगुणेष्वब्धितर्कशैलाष्टराशिपाः।।७४।।

रोहिणी के चौथे चरण में वृश्चिक देह और मीन जीव संज्ञक हैं। १२।१।२।३।५।४।६।७।८ राशियों के स्वामी क्रम से दशेश होते हैं।।७४।।

चान्द्ररौद्रभगार्यम्णमित्रेन्द्रवसुवारुणम्।
एतत्ताराष्टकं चैव विज्ञेयं चान्द्रवत्क्रमात्।।७५।।

मृगशिरा, आर्द्रा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, अनुराधा, जेष्ठा, धनिष्ठा और शतभिषा— इन आठ नक्षत्रों के देह-जीवादि को मृगशिरा के समान समझना।।७५।।

देहजीवौ कर्कमीनौ मृगाद्यचरणस्य च।
व्यस्तमीनादि कर्कान्तं राशिपाश्च दशाधिपाः।।७६।।

मृगशिरा के प्रथम चरण में कर्क देह और मीन राशि जीव संज्ञक हैं। मीन से उलटे कर्क पर्यन्त (१२।११।१०।९।८।७।७।६।५।४) राशियों के स्वामी दशेश होते हैं।।७६।।

गौर्देहो मिथुनं जीवो इन्दुभस्य द्वितीयके।
त्रिद्वेकाङ्कदिगीशार्कचन्द्रद्विभवनाधिपाः।।७७।।

मृगशिरा के दूसरे चरण में वृष देह और मिथुन राशि जीव संज्ञक होती हैं। ३।२।१।९।१०।११।१२।१।२ राशियों के स्वामी दशेश होते हैं।।७७।।

देहजीवौ नक्रयुग्मे मृगपादे तृतीयके।
त्रिबाणाब्धिरसागाष्टसूर्येशदशराशिपाः।।७८।।

मृगशिरा के तीसरे चरण में मकर देह और मिथुन राशि जीव संज्ञक होती है। ३।५।४।६।७।८।१२।११।१० राशियों के स्वामी दशेश होते हैं।।७८।।

मेषचापौ देहजीवाविन्दुभस्य चतुर्थके।
व्यस्तं चापादि मेषान्तं राशिपाश्च दशाधिपाः।।७९।।

मृगशिरा के चौथे चरण में मेष देह और धन जीव संज्ञक हैं। धन राशि से मेष पर्यन्त विलोम (९।८।७।६।५।४।३।२।१) राशियों के स्वामी दशेश होते हैं।।७९।।

एवं व्यस्ततरे ज्ञेयं देहजीवदशादिकम्।
स्पष्टं तवाग्रे कथितं पार्वति प्राणवल्लभे।।८०।।

हे पार्वति! यह अपसव्य चक्र के देह-जीव आदि को तुम्हारे सामने कहा।।८०।।

अथ दशावर्षाणि—

भूतैकविंशगिरयो नवदिक् षोडशाब्धयः।।८१।।
सूर्यादीनां क्रमादब्दाः राशीनां स्वामिनो वशात्।।८१।।

५।१२।७।९।१०।१६।४ यह क्रम से सूर्यादि ग्रहों के दशावर्ष राशियों के अधिपति के क्रम से हैं। विशेष चक्र को देखिए।।८१।।

चक्रम्—

मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	राशयः
मं.	शु.	बु.	चं.	सू.	बु.	शु.	मं.	बृ.	श.	श.	बृ.	अधिपाः
७	१६	९	२१	५	९	१६	७	१०	४	४	१०	दशावर्षाणि

दशाज्ञानप्रकारमाह—

नरस्य जन्मकाले वा प्रश्नकाले यदंशकः।
तदादि नवपर्यन्तमायुषं परिचक्षते।।८२।।

मनुष्य के जन्मकाल वा प्रश्नकाल में नक्षत्र का जो अंश (चरण) हो उससे आरम्भ करके नव (९) राशियों के वर्ष संख्या तुल्य उस मनुष्य की आयु होती है।।८२।।

सम्पूर्णायुर्भवेदादावर्धमंशस्य मध्यमम्।
अपमृत्युसमं कष्टमंशान्ते चापरे जगुः।।८३।।

अन्य विद्वानों का कहना है कि नक्षत्र के चरण के आदि में जन्म हो तो पूर्णायु, मध्य में आधी और अन्त में कष्ट वा अल्पायु होती है।।८३।।

नक्षत्रचरणतः नवांशज्ञानम्—

ज्ञात्वैवं स्फुटसिद्धान्तं राश्यंशं गणयेद्बुधः।
अनुपातेन वक्ष्यामि तदुपायंमतः परम्।।८४।।

इस सिद्धान्त को जानकर राशि के अंश की गणना करना चाहिए। अब मैं अनुपात द्वारा उसके जानने का उपाय कह रहा हूँ।।८४।।

गततारा त्रिभिर्भक्ता शेषं चत्वारि संगुणम्।
वर्तमानपदेनाढ्यं राशीनामंशको भवेत्।।८५।।

गतनक्षत्र संख्या (अश्विनी से जन्मनक्षत्र के पूर्व नक्षत्र की संख्या) को ३ से भाग देने से जो शेष बचे उसे ४ से गुणाकर गुणनफल में जन्मनक्षत्र वा वर्तमान नक्षत्र के वर्तमान चरण संख्या को जोड़ दे। जो संख्या हो वही मेष से गिनने से नवांश होता है।।८५।।

उदाहरण— जैसे पुनर्वसु के प्रथम चरण में जन्म है तो गतनक्षत्र (आर्द्रा) संख्या ६ में तीन से भाग देने पर शेष को ४ से गुणाकर उसमें पुनर्वसु के प्रथम चरण की संख्या १ जोड़ने से १० मेष से गिनने से मेष ही का नवांश हुआ।

चक्रे राशीनां वर्षयोगसंख्यामाह—

मेषगोयमकुलीरराशिषुस्वांशकेषु परमायुरुच्यते।
ज्ञानकं १०० मद ८५ गज ८३ स्तदा ८६ क्रमात्त-
त्त्रिकोणभवनेषु तद्भवेत्।।८६।।

कालचक्र में स्थित मेषादि राशियों से मेषांश में १००, वृषांश में ८५, मिथुनांश में ८३ और कर्कांश में ८६ वर्ष योग वा परमायु होता है। इन राशियों के त्रिकोण (५।९) राशियों में भी यही वर्ष योग होते हैं।।८६।।

स्पष्टार्थ चक्रम्—

मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	अंशकाः
१००	८५	८३	८६	१००	८५	८३	८६	१००	८५	८३	८६	वर्षयोगः

विशेष— यहाँ ज्ञानकं मदगज आदि शब्दों से 'कटपयवर्गभवैरिह अंकाः' इत्यादि के अनुसार अंकों को समझना चाहिए।

दशारम्भज्ञानप्रकारमाह—

ये जीवा अंशके जाता गतनाडीपलेन तु।
तदंशस्य हताङ्कस्तु पञ्चभूमिविभाजिताः।।८७।।

मनुष्य का जन्म नक्षत्र के जिस चरण में हो उसके गत घटी-पल को उसके वर्ष संख्या से गुणाकर गुणन फल में १५ का भाग देने से।।८७।।

एवं महादशारम्भे सूर्यादीनां यथाक्रमात्।
गणयेन्नवपर्यन्तमायुष्यं तत्प्रकीर्त्तितम्।।८८।।

लब्धि दशा का भुक्त वर्षादि होता है। इसे दशावर्ष में घटाने से भोग्य वर्षादि होता है। इस प्रकार से दशा का आरम्भ होता है।।८८।।

उदाहरण— किसी का पुनर्वसु नक्षत्र के तृतीय चरण में जन्म है। पुनर्वसु सव्य नक्षत्र है। उसका देहाधिपति भौम और जीवाधिपति गुरु है। पुनर्वसु का भभोग ५५।५२ भयात ३२।१० है। भभोग का चार भाग करने से एक भाग घट्यादि १३।४८।१५ हुआ। यही एक चरण का मान है। इसे दूना कर भयात से घटाने से शेष ४।१३।३० यह पुनर्वसु के तीसरे चरण की भुक्त घट्यादि है। इसका दशा वर्ष १०० है, इससे शेष घट्यादि को गुणा करने से ४००।१३००।३००० सवर्णन करने से ४२२।३०।१० हुआ। इसमें १५ का भाग देने से २८।३।१८ वर्षादि जन्मकाल में भुक्त हुआ। पुनर्वसु सव्य गणना में है, देहादि जीव पर्यन्त गणना होगी। अतः पुनर्वसु प्रथम चरण में देह मेष और जीव धनु है। अतः भुक्त वर्षादि २८।३।१८ में मेष से वृष पर्यंत के योग-वर्ष २३ को घटाने से ५।३।१८ यह वर्षादि मिथुन के भुक्त वर्षादि हुए। अतः इसे बुध के वर्षमान ९ से घटाने से ३।८।४२ वर्षादि भोग्य हुआ। अतः विंशोत्तरी दशा के समान ही मिथुन आदि दशा का क्रम हुआ। शेष चक्र से स्पष्ट है।

कालचक्रदशा—

मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	मे.	वृ.	
५ ३ १८	२१	५	९	१६	७	१०	७	१६	
२०१३	२०१८	२०३९	२०४४	२०५१	२०६२	२०७४	२०८४	२०९१	२१०७
३ १८	७ ०६	७ १६	७ १६	७ १६	७ १६	७ १६	७ १६	७ १६	७ १६

दशानां नक्षत्राणि तत्पादानि च					नक्ष.	पा.	जीवाधिपाः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	परमा. वर्षा.	देहाधिपाः	राश. अंशा
	मृ. १च.	अ. १च.	पू. १च.	ध. १च.	मृगशिरा, पूर्वाफाल्गुनी, अनुराधा, धनिष्ठा	१	बृ.	बृ.= १०व.	श.= ४व.	श.= ४व.	बृ.= १०व.	मं.= ७व.	शु.= १६व.	बु.= ९व.	सू.= ५व.	चं.= २१व.	८६	चं.	क.
	मृ. २च.	अ. २च.	पू. २च.	ध. २च.		२	बु.	बु.= ९व.	शु.= १६व.	मं.= ७व.	बृ.= १०व.	श.= ४व.	श.= ४व.	बृ.= १०व.	मं.= ७व.	शु.= १६व.	८३	शु.	मि.
	मृ. ३च.	अ. ३च.	पू. ३च.	ध. ३च.		३	बु.	बु.= ९व.	सू.= ५व.	चं.= २१व.	बु.= ९व.	शु.= १६व.	मं.= ७व.	बृ.= १०व.	श.= ४व.	श.= ४व.	८५	श.	वृ.
	मृ. ४च.	अ. ४च.	पू. ४च.	ध. ४च.		४	बृ.	बृ.= १०व.	मं.= ७व.	शु.= १६व.	बु.= ९व.	सू.= ५व.	चं.= २१व.	बु.= ९व.	शु.= १६व.	मं.= ७व.	१००	मं.	मे.
	आ. १च.	ज्ये. १च.	उ. १च.	शत. १च.	आर्द्रा, उत्तराफाल्गुनी, ज्येष्ठा, शतभिषा	१	बृ.	बृ.= १०व.	श.= ४व.	श.= ४व.	बृ.= १०व.	मं.= ७व.	शु.= १६व.	बु.= ९व.	सू.= ५व.	चं.= २१व.	८६	चं.	मी.
	आ. २च.	ज्ये. २च.	उ. २च.	शत. २च.		२	बु.	बु.= ९व.	शु.= १६व.	मं.= ७व.	बृ.= १०व.	श.= ४व.	श.= ४व.	बृ.= १०व.	मं.= ७व.	शु.= १६व.	८३	शु.	कुं.
	आ. ३च.	ज्ये. ३च.	उ. ३च.	शत. ३च.		३	बु.	बु.= ९व.	सू.= ५व.	चं.= २१व.	वु.= ९व.	शु.= १६व.	मं.= ७व.	बृ.= १०व.	श.= ४व.	श.= ४व.	८५	श.	म.
	आ. ४च.	ज्ये. ४च.	उ. ४च.	शत. ४च.		४	बृ.	वृ.= १०व.	मं.= ७व.	शु.= १६व.	बु.= ९व.	सू.= ५व.	चं.= २१व.	बु.= ९व.	शु.= १६व.	मं.= ७व.	१००	मं.	ध.

अथ कालचक्रदशायां सव्यमार्गचक्रम्

दशानां नक्षत्राणि तत्पादानि च					नक्ष.	पा.	देहा-धी.	१	२	३	४	५	६	७	८	९	परमा. वर्षा.	जीवा-धिपाः	राश. अंशाः
अ. १च.	मू. १च.	पुन. १च.	पू. १च.	ह. १च.	अश्विनी, पुनर्वसु, हस्त, मूल, पूर्वाभाद्रपद	१	मं.	मं.= ७व.	शु.= १६व.	बु.= ९व.	चं.= २१व.	सू.= ५व.	बु.= ९व.	शु.= १६व.	मं.= ७व.	बृ.= १०व.	१०० वर्ष	बृ.	मे.
अ. २च.	मू. २च.	पुन. २च.	पू. २च.	ह. २च.		२	श.	श.= ४व.	श.= ४व.	बृ.= १०व.	मं.= ७व.	शु.= १६व.	बु.= ९व.	चं.= २१व.	सू.= ५व.	बु.= ९व.	८५ वर्ष	बृ.	बृ.
अ. ३च.	मू. ३च.	पुन. ३च.	पू. ३च.	ह. ३च.		३	शु.	शु.= १६व.	मं.= ७व.	बृ.= १०व.	श.= ४व.	श.= ४व.	बृ.= १०व.	मं.= ७व.	शु.= १६व.	बु.= ९व.	८३ वर्ष	बृ.	मि.
अ. ४च.	मू. ४च.	पुन. ४च.	पू. ४च.	ह. ४च.		४	चं.	चं.= २१व.	सू.= ५व.	बु.= ९व.	शु.= १६व.	मं.= ७व.	बृ.= १०व.	श.= ४व.	श.= ४व.	बृ.= १०व.	८६ वर्ष	बृ.	कं.
भ. १च.	चि. १च.	पु. १च.	पू.षा. १च.	उ.भा. १च.	भरणी, पुष्य, चित्रा, पूर्वाषाढ़, उत्तराभाद्रपद	१	मं.	मं.= ७व.	शु.= १६व.	बु.= ९व.	चं.= २१व.	सू.= ५व.	बु.= ९व.	शु.= १६व.	मं.= ७व.	बृ.= १०व.	१०० वर्ष	बृ.	सिं.
भ. २च.	चि. २च.	पु. २च.	पू.षा. २च.	उ.भा. २च.		२	श.	श.= ४व.	श.= ४व.	बृ.= १०व.	मं.= ७व.	शु.= १६व.	बु.= ९व.	चं.= २१व.	सू.= ५व.	बु.= ९व.	८५ वर्ष	बु.	कं.
भ. ३च.	चि. ३च.	पु. ३च.	पू.षा. ३च.	उ.भा. ३च.		३	शु.	शु.= १६व.	मं.= ७व.	बृ.= १०व.	श.= ४व.	श.= ४व.	बृ.= १०व.	मं.= ७व.	शु.= १६व.	बु.= ९व.	८३ वर्ष	बु.	तु.
भ. ४च.	चि. ४च.	पु. ४च.	पू.षा. ४च.	उ.भा. ४च.		४	चं.	चं.= २१व.	सू.= ५व.	बु.= ९व.	शु.= १६व.	मं.= ७व.	बृ.= १०व.	श.= ४व.	श.= ४व.	बृ.= १०व.	८६ वर्ष	बृ.	वृ.

अथ कालचक्रदशायां सव्यमार्गचक्रम्

दशानां नक्षत्राणि तत्पादानि च					नक्ष.	पा.	जीवाधिपाः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	परमा. वर्षा.	देहाधिपाः	राश. अंशाः
कृ. १च.	उ.षा. १च.	श्ले. १च.	रे. १च.	स्वा. १च.	कृत्तिका, श्लेषा, स्वाती, उत्तराषाढ़, रेवती	१	मं.	मं.= ७व.	शु.= १६व.	बु.= ९व.	चं.= २१व.	सू.= ५व.	बु.= ९व.	शु.= १६व.	मं.= ७व.	बृ.= १०व.	१०० वर्ष	बृ.	ध.
कृ. २च.	उ.षा. २च.	श्ले. २च.	रे. २च.	स्वा. २च.		२	श.	श.= ४व.	श.= ४व.	बृ.= १०व.	मं.= ७व.	शु.= १६व.	बु.= ९व.	चं.= २१व.	सू.= ५व.	बु.= ९व.	८५ वर्ष	बु.	म.
कृ. ३च.	उ.षा. ३च.	श्ले. ३च.	रे. ३च.	स्वा. ३च.		३	शु.	शु.= १६व.	मं.= ७व.	बृ.= १०व.	श.= ४व.	श.= ४व.	बृ.= १०व.	मं.= ७व.	शु.= १६व.	बु.= ९व.	८३ वर्ष	बु.	कुं.
कृ. ४च.	उ.षा. ४च.	श्ले. ४च.	रे. ४च.	स्वा. ४च.		४	चं.	चं.= २१व.	सू.= ५व.	बु.= ९व.	शु.= १६व.	मं.= ७व.	बृ.= १०व.	श.= ४व.	श.= ४व.	बृ.= १०व.	८६ वर्ष	बृ.	मी.

अथ कालचक्रदशायामपसव्यमार्गचक्रम्

	रो. १च.	वि. १च.	म. १च.	श्र. १च.	रोहिणी, मघा, विशाखा, श्रवण	१	बृ.	बृ.= १०व.	श.= ४व.	श.= ४व.	बृ.= १०व.	मं.= ७व.	शु.= १६व.	बु.= ९व.	सू.= ५व.	चं.= २१व.	८६	चं.	बृ.
	रो. २च.	वि. २च.	म. २च.	श्र. २च.		२	बु.	बु.= ९व.	शु.= १६व.	मं.= ७व.	बृ.= १०व.	श.= ४व.	श.= ४व.	बृ.= १०व.	मं.= ७व.	शु.= १६व.	८३	शु.	तु.
	रो. ३च.	वि. ३च.	म. ३च.	श्र. ३च.		३	बु.	बु.= ९व.	सू.= ५व.	चं.= २१व.	बु.= ९व.	शु.= १६व.	मं.= ७व.	बृ.= १०व.	श.= ४व.	श.= ४व.	८५	श.	कं.
	रो. ४च.	वि. ४च.	म. ४च.	श्र. ४च.		४	बृ.	बृ.= १०व.	मं.= ७व.	शु.= १६व.	बु.= ९व.	सू.= ५व.	चं.= २१व.	बु.= ९व.	शु.= १६व.	मं.= ७व.	१००	मं.	सिं.

अथ कालचक्रगतिभेदमाह—

प्रथमा गति मण्डूकी द्वितीया मर्कटी तथा।
बाणाच्च नवपर्यन्तं गतिः सिंहावलोकनम्।।८८।।

कालचक्र की गति ३ प्रकार की होती है। पहली गति का नाम मण्डूकी है, दूसरी का नाम मर्कटी और तीसरी का नाम सिंहावलोकन है।।८८।।

कन्यायां कर्कटे वापि सिंहभे मिथुनेऽपि च।
माण्डूकी गति विज्ञेया भवेद्रोगस्य कारणम्।।८९।।

कन्या से कर्क में और सिंह से मिथुन में जाने को मण्डूकी गति कहते हैं। इसमें रोग होता है।।८९।।

मीनवृश्चिकयोर्विप्र चापमेषस्तथैव च।
सिंहावलोकनं चैव तादृशं च फलं भवेत्।
सिंहावगतिमार्गे च मर्कटीगतिसम्भवः।।९०।।

मीन से वृश्चिक में और धन से मेष में जाने को सिंहावलोकन गति कहते हैं। नाम सदृश ही इसका फल होता है। सिंह से कर्क में जाने को मर्कटी गति कहते हैं।।९०।।

गतिफलञ्चाह—

मीनात्तु वृश्चिके याते ज्वरो भवति निश्चितम्।
कन्यातः कर्कटे याते भ्रातृबन्धुविनाशनम्।।९१।।

मीन से वृश्चिक प्राप्त हो तो उस दशा में निश्चय ही ज्वर होता है। कन्या से कर्क प्राप्त हो तो उस दशा में माता और बन्धु का नाश होता है।।९१।।

सिंहात्तु मिथुने याते स्त्रिया व्याधिर्भवेद् ध्रुवम्।
कर्कटाच्च हरौ याते वधो भवति देहिनाम्।
पितृबन्धुमृतिं विद्याच्चापान्मेषगते पुनः।।९२।।

सिंह से मिथुन प्राप्त हो तो इस दशा में स्त्री को रोग होता है। कर्क से सिंह प्राप्त हो तो उस दशा में मनुष्य का वध होता है। धन से मेष प्राप्त हो तो पिता के भाई (चाचा) की मृत्यु होती है।।९२।।

पुनः गतिफलमाह—

कन्यातः कर्कटे याते पूर्वभागे महत्फलम्।
उत्तरे देशमाश्रित्य शुभा यात्रा भविष्यति।।९३।।

कन्या से कर्क में जाने के समय पूर्वभाग से लाभ और उत्तर देश की शुभकर यात्रा होती है।।९३।।

सिंहात्तु मिथुने याते पूर्वभागं विसृज्यते।
कार्यान्तेऽपि च नैर्ऋत्यां सुखं यात्रा भविष्यति।।९४।।

सिंह से मिथुन में जाने के समय पूर्व दिशा को त्याग देना चाहिए। कार्य हो जाने पर भी नैर्ऋत्य कोण की यात्रा से सुख होता है।।९४।।

कर्कटात्तु गते सिंहे कार्यहानिश्च जायते।
दक्षिणां दिशमाश्रित्य प्रत्यगामनं भवेत्।।९५।।

कर्क से सिंह में जाने के समय दक्षिण दिशा में यात्रा करने से कार्य की हानि होती है और दक्षिण से पश्चिम की यात्रा होती है।।९५।।

मीनात्तु वृश्चिके याते उदग्गच्छति सङ्कटम्।
चापाच्च मकरे विप्र दुःखं सङ्कटमुच्यते।।९६।।

मीन से वृश्चिक में जाने के समय उत्तर की यात्रा से संकट होता है। धन से मकर में जाने से दुःख और संकट होता है।।९६।।

चापान्मेषे तु यात्रायां वधबन्धो मृतिर्भवेत्।
तुला सम्पद्विवाहश्च स्त्रीप्राप्तिर्वृश्चिके गतिः।।९७।।

धन से मेष में जाने के समय वध, बंधन और मृत्यु होती है। तुला से वृश्चिक में जाने के समय सम्पत्ति, स्त्री की प्राप्ति होती है।।९७।।

अथ कालचक्रांशफलम्—

मेषांशे चोरको विन्द्याच्छ्रीमाञ्छुक्रांशके भवेत्।
बुधांशे ज्ञानसम्पन्नश्चन्द्रे च नृपतिर्भवेत्।।९८।।

यदि कालचक्र की दशा में मेषांश में जन्म हो तो चोर होता है। वृषांश में लक्ष्मीवान्, मिथुनांश में ज्ञानी, कर्कांश में राजा।।९८।।

सिंहांशे भूपतिः प्रोक्तः सौम्यांशे पण्डितो भवेत्।
तुलांशे राजमन्त्री च भौमांशे निर्धनो भवेत्।।९९।।

सिंहाश में राजा, कन्यांश में पंडित, तुलांश में राजमन्त्री, वृश्चिकांश में दरिद्र।।९९।।

चापांशे ज्ञानसंयुक्तो मकरांशे च पापकृत्।
कुम्भांशे च वणिक्कर्मा मीनांशे किल धान्यवान्।।१००।।

धन्वंश में बुद्धिमान्, मकरांश में पापी, कुम्भांश में व्यापारी और मीनांश में धान्य से युक्त होता है।।१००।।

अथ देहजीवफलम्—

देहजीवसमायोगे भौमार्करविजादिभिः।
एकैकयोगे मरणं बहुयोगे तु का कथा।।१।।

यदि देह या जीव में कोई भी भौम, सूर्य, शनि में से किसी से युत हो तो मरण होता है। यदि सभी से युक्त हो तो क्या कहना है।।१।।

देहयोगे महाबाधा जीवयोगे तु मृत्युदः।
द्वाभ्यां संयोगमात्रेण हन्यते नात्र संशयः।।२।।

देह में पापग्रह का योग हो तो महाबाधा होती है और जीव में पापयोग हो तो मृत्यु होती है। यदि दोनों में पापयोग हो तो अवश्य मृत्यु होती है।।२।।

देहे जीवे यदा राहुः सौरिर्वक्रो रविः स्थितः।
मृत्युकालगतिं ज्ञात्वा शान्तिं कुर्याद्यथाविधि।।३।।

देह-जीव में जब राहु, शनि, भौम, सूर्य स्थित हों उस समय मृत्यु का भय होता है। इसे जानकर शान्ति करनी चाहिए।।३।।

देहे जीवे यदि सोमे सौम्यजीवसितः स्थितः।
तदा सौख्यं प्रकुर्वन्ति रोगमृत्युविनाशनम्।।४।।

देह-जीव में जब चन्द्रमा, बुध, गुरु, शुक्र होते हैं उस समय रोग तथा मृत्यु का नाश कर सुख देते हैं।।४।।

पापक्षेत्रे दशायोगे देहजीवौ तु दुःखदौ।
शुभक्षेत्रे दशायोगे शुभयोगे शुभं भवेत्।।५।।

देह-जीव पापक्षेत्र में हों और पापयुक्त हों तो उसकी दशा में दुःख होता है। देह-जीव शुभक्षेत्र में हों और शुभयुक्त हों तो उसकी दशा में शुभ फल होता है।।५।।

देहे शुभग्रहैर्युक्ते भूषणादि ध्रुवं भवेत्।
जीवे शुभग्रहैर्युक्ते पुत्रदारादिकाँल्लभेत्।।६।।

देह में शुभग्रह युक्त हों तो भूषण आदि का लाभ होता है। जीव शुभग्रह से युक्त हो तो पुत्र-स्त्री आदि का लाभ होता है।।६।।

इति कालचक्रदशाज्ञानम्।

अथ चरदशानयनम्—

लग्नादि व्ययपर्यन्तं राशयो द्वादशो द्विज।
आयुर्वर्षप्रदातार एभिश्चरदशा मता।।७।।

लग्न से १२वें भाव पर्यन्त १२ राशियाँ होती हैं। ये आयु के वर्ष को देने वाली होती हैं और इन्हीं से चरदशा भी होती है।।७।।

ओजर्क्षाणां क्रमाद्विप्र समानां व्युत्क्रमात्पुनः।
नाथान्तेन समाज्ञेया निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।८।।

ओज (विषम) राशियों का क्रम से और सम राशियों का व्युत्क्रम से उस राशि के स्वामी पर्यन्त गिनने से दशा के वर्ष का मान होता है।।८।।

मेषो वृषोऽथ मिथुनो तुलालिश्च धनुर्धरः।
एतेषामोजसंज्ञा स्यादब्दानां गणनाक्रमात्।।९।।

मेष, वृष, मिथुन, तुला, वृश्चिक, धन राशियों की ओज संज्ञा है और इसमें वर्ष के गणना क्रम से गिनना चाहिए।।९।।

कर्कः सिंहश्च कन्या च नक्रकुम्भझषा द्विज।
एतेषां समसंज्ञा स्याद्वर्षाणां व्युत्क्रमाद्द्विज।।१०।।

कर्क, सिंह, कन्या, मकर, कुंभ और मीन इन राशियों की सम संज्ञा है। इनमें व्युत्क्रम गणना से वर्ष की संख्या को जानना चाहिए।।१०।।

स्वर्क्षसंस्थितखेटस्य वर्षाणि द्वादशैव हि।
धनस्थे चैकवर्षं हि तृतीये हायनद्वयम्।।११।।

ग्रह (राशीश) अपनी राशि में हो तो १२ वर्ष की दशा होती है। अपनी राशि से धन भाव में हो तो १ वर्ष, तीसरे भाव में हो तो २ वर्ष।।११।।

तुर्ये वर्षत्रयं विप्र पञ्चमे तुर्यहायनम्।
रिपुस्थे पञ्चवर्षाणि षड्वर्षाणि च सप्तमे।।१२।।

चौथे में हो तो ३ वर्ष, पाँचवें में हो तो ४ वर्ष, छठे में हो तो ५ वर्ष, सातवें में हो तो ६ वर्ष, आठवें में हो तो ७ वर्ष।।१२।।

रन्ध्रस्थे नगवर्षाणि चाष्टवर्षाणि पुण्यभे।
नभस्थे चाङ्कवर्षाणि दिग्वर्षाणि तु लाभगे।
व्ययस्थे रुद्रवर्षाणि राश्यङ्काश्च तथानघ।।१३।।

नवम में हो तो ८ वर्ष, दशम में हो तो ९ वर्ष, एकादश में हो तो १० वर्ष और बारहवें भाव में हो तो ११ वर्ष की दशा होती है। यह पूर्व में कहे हुए प्रकार से जानना।।१३।।

द्विराश्यधिपतौ विशेषः—

वृश्चिकाधिपती द्वौ च कुजकेतू द्विजोत्तम।
स्वर्भानुपङ्गू कुम्भस्य पती द्वौ चिन्तयेद्द्विज।।१४।।

वृश्चिक राशि के भौम और केतु ये दो स्वामी हैं और कुम्भ राशि के राहु तथा शनि ये दो स्वामी हैं।।१४।।

स्वर्क्षे यदि स्थितौ द्वौ च भानुवर्षप्रदायकौ।
परर्क्षे सङ्गतौ द्वौ च नाथान्ते न विचिन्तयेत्।।१५।।

यदि दोनों स्वामी अपनी राशि में हों तो १२ वर्ष की दशा होती है। यदि दोनों भिन्न राशि में हो तो स्वामी पर्यन्त दशा की गणना नहीं करना चाहिए।।१५।।

परर्क्षे भिन्नभिन्नस्थौ द्वयोर्मध्ये तु यो बली।
तस्य नाथान्तरीत्या च वर्षाणि संलिखेद्द्विज।।१६।।

भिन्न राशि में दोनों अलग-अलग हों तो दोनों में जो बली हो उसी के साथ पर्यन्त रीति से दशावर्ष लेना चाहिए।।१६।।

अग्रहात्सग्रहः प्राणी सग्रहादधिकग्रहः।
साम्ये चरस्थिरद्वन्द्वाः क्रमात्स्युर्बलिनो द्विज।।१७।।

बल विचार में ग्रहहीन से ग्रह युक्त बली होता है। यदि दोनों ग्रह युक्त हों तो जिसके साथ अधिक ग्रह हों वह बली होता है। यदि ग्रह में समानता हो तो चर, स्थिर, द्विस्वभाव क्रम से बल का विचार करना चाहिए।।१७।।

राशिसाम्ये सदा विप्र बहुवर्षप्रदो बली।
तद्बाधादुच्चगः खेटो बलवान्भवति द्विज।।१८।।

यदि राशि में भी समानता हो तो जिसका अधिक वर्ष हो वह बली होता है। इसमें भी उच्चस्थ ग्रह बली होता है।।१८।।

यद्यप्यल्पवर्षदो विप्र तदापि तुङ्गगो बली।
नाथान्तेन समाज्ञेया पूर्वोक्तेन क्रमेण हि।।१९।।

यद्यपि उच्चस्थ ग्रह अल्पवर्ष देने वाला हो तथापि वही बली होता है। वहाँ स्वामी पर्यन्त दशावर्ष लेना चाहिए।।१९।।

उच्चखेटस्य सद्भावे वर्षमेकं तु निःक्षिपेत्।
तथैव नीचखेटस्य वर्षमेकं त्यजेद्द्विज।।२०।।

उच्चस्थ ग्रह के वर्ष में १ जोड़ देना चाहिए और नीचस्थ ग्रह में १ वर्ष कम करना चाहिए।।२०।।

एकः स्वक्षेत्रगो अन्यस्तु परत्र यदि संस्थितः।
तदान्यत्र स्थितं नाथं परिगृह्य दशां नयेत्।।२१।।

यदि एक ग्रह अपनी राशि में हो और दूसरा अन्य राशि में हो तो वहाँ अन्यत्र स्थित ग्रह के स्वामी से दशावर्ष लेना चाहिए।।२१।।

एकः स्वोच्चगतस्त्वन्यः परत्र यदि संस्थितः।
ग्राहयेदुच्चखेटस्थं राशिमन्यं विहाय वै।।२२।।

एक ग्रह अपने उच्च में हो और दूसरा अन्यत्र हो तो वहाँ उच्चस्थ ग्रह की राशि को अन्य ग्रह की राशि को छोड़कर लेना चाहिए।।२२।।

चरदशाफलमाह—

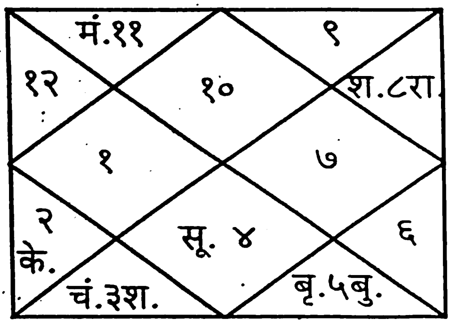
एवं सर्वं समालोच्य दशायां निधनं वदेत्।
पापयोगे पापदृष्ट्या यस्य पापत्रिकोणगाः।।२३।।

इस प्रकार सभी पदार्थों का विचार कर निधन को कहना। जिस दशा की राशि में पापग्रह का योग हो अथवा दृष्टि हो वा पापग्रह से त्रिकोण में हो तो।।२३।।

निधनं तद्दशायां वै भाषितं ब्रह्मणा यथा।
चरमुख्यदशायास्ते कथयिष्याम्यहं फलम्।।२४।।

उस दशा में अवश्य मृत्यु होती है, ऐसा ब्रह्मा ने कहा है। इस प्रकार चर दशा का फल मैंने कहा।।२४।।

उदाहरण— जन्मांग के अनुसार जन्मलग्न मकर सम राशि है, अतः ६ उत्क्रम गणनां से मकर से दशा का आरम्भ हुआ और उसका दशावर्ष ३ हुआ। कुम्भ का शनिपर्यन्त ३ वर्ष, मीन का ७ वर्ष, मेष ओज राशि है, अतः क्रम गणना से मेष का १० वर्ष, वृष का १ वर्ष, मिथुन का २ वर्ष। इसी प्रकार अन्य राशियों के दशावर्ष भी लाना चाहिए, शेष चक्र से स्पष्ट है।



चरदशाचक्रम्

म.	ध.	वृ.	तु.	क.	सिं.	कं.	मि.	वृ.	मे.	मी.	कुं.	राशि
२	८	९	४	११	११	१०	२	१	१०	७	३	वर्ष
२०१५	२०२३	२०३२	२०३६	२०४७	२०५८	२०६८	२०७०	२०७१	२०८१	२०८८	२०९१	संवत्
३ १८	३ १८	३ १८	३ १८	३ १८	३ १८	३ १८	३ १८	३ १८	३ १८	३ १८	३ १८	सूर्य

अथ नवांशस्थिरदशा—

अधुना सम्प्रवक्ष्यामि दशास्थिरविशेषतः।
नवांशकदशामानं तवाग्रे द्विजनन्दन।।२५।।

पराशरजी ने कहा— हे द्विजोत्तम! अब मैं तुमसे स्थिर दशा के मध्य में नवांशक दशा को कहता हूँ।।२५।।

प्रतिराशिप्रदिष्टैवमङ्काङ्का च दशा स्थिरा।
तन्वादिव्ययभावानां स्पष्टीकृत्वा द्विजोत्तम।।२६।।

लग्नादि द्वादश भावों को स्पष्ट करना चाहिए। प्रत्येक राशि में नव नवमांश होते हैं, इन्हीं की दशा को स्थिर दशा कहते हैं।।२६।।

ग्रहनवांशायुरीत्या दशातुल्या नवांशका।
अस्थिरा इति विज्ञेया परपक्षमिदं क्रमात्।।२७।।

इसे दो प्रकार की कोई-२ कहते हैं। एक राशि से और दूसरी ग्रह नवांश से दशा होती है।।२७।।

पक्षद्वयं प्रवक्ष्यामि चरस्थिरं द्विजोत्तम।
पूर्वं चरदशां वक्ष्ये तवाग्रे द्विजनन्दन।।२८।।

इसमें भी दो प्रकार है, पहला चर और दूसरा स्थिर दशा। उसमें प्रथम प्रकार को कहता हूँ।।२८।।

ओजलग्ने जनुर्यस्य नवांशकदशा द्विज।
लग्नादिकं समारभ्य तस्य चांशदशा मता।।२९।।

जिसका जन्म विषम राशिलग्न में हो उसकी नवांश दशा लग्न से क्रम गणना के अनुसार होती है।।२९।।

समराशौ जनुर्यस्य नवांशकदशा द्विज।
व्युत्क्रमाच्च समारभ्य पुरा शम्भुप्रचोदितम्।।३०।।

और जिसका जन्म लग्न समराशि हो उसकी दशा उत्क्रम गणना के अनुसार होती है।।३०।।

दशाप्रवर्त्तको राशिः विषमर्क्षं समोऽपि वा।
राशिप्रतिनवाङ्कानां सर्वेषां गणयेत्क्रमात्।।३१।।
अष्टोत्तरशताङ्कानां संख्यापूर्वं तदंशकाः।
ख्याता स्थिरदशा विप्र निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।३२।।

दशाप्रवर्त्तक राशियों का दशावर्ग ९ वर्ष ही होता है, चाहे वे विषम हों वा सम हों। इस प्रकार सभी वर्षों का योग १०८ वर्ष होता है।।३२।।

उदाहरण— पूर्वोक्त जन्मकुंडली में जन्मलग्न मकर समराशि है, अतः उत्क्रम गणना द्वारा दशा होगी। चक्र देखिए।

नवांशकस्थिरदशाचक्रम्

म.	ध.	वृ.	तु.	क.	सिं.	कं.	मि.	वृ.	मे.	मी.	कुं.	रा.
९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	व.
२०१३	२२	३१	४०	४९	५८	६७	७६	८५	९४	२१०३	१२	२१
३ १८	३ १८	३ १८	३ १८	३ १८	३ १८	३ १८	३ १८	३ १८	३ १८	३ १८	१८	३ १८

अथ स्थिरदशामाह—

अधुना सम्प्रवक्ष्यामि स्थिरदशां द्विजोत्तम।
चरस्थिरद्विस्वभावा राशयो त्रिविधाः क्रमात्।।३३।।

हे द्विजोत्तम! अब मैं स्थिर दशा को कह रहा हूँ। चर, स्थिर, द्विस्वभाव ये तीन प्रकार की राशियाँ हैं।।३३।।

सप्ताष्टनवाङ्काभ्याम् आनयीत दशां स्थिराम्।।३४।।

इसमें क्रम से ७, ८, ९ वर्ष के प्रमाण से दशा लानी चाहिए।।३४।।

मेषे सप्ताङ्कं विज्ञेया वृषे वसुसमा द्विज।
मिथुने नव वर्षाणि कर्केत्यादि यथाक्रमम्।।३५।।

जैसे मेष का ७ वर्ष, वृष का ८ वर्ष और मिथुन का ९ वर्ष प्रमाण होता है। इसी प्रकार आगे भी कर्क आदि का जानना।।३५।।

द्वादशराशिपर्यन्तं ज्ञायतेऽङ्का द्विजोत्तम।
षण्णवति समासंख्या जायते द्विजसत्तम।।३६।।

बारह राशियों के वर्षों का योग ९६ वर्ष होता है।।३६।।

एषा स्थिरदशा प्रोक्ता तस्या चापि प्रवर्त्तकम्।
ब्रह्मग्रहाश्रितारम्भस्तदग्रे पूर्ववत्क्रमः।।३७।।

यह स्थिर दशा है और ब्रह्मग्रह से आरम्भ होती है।।३७।।

अथ ब्रह्मग्रहलक्षणमाह—

षष्ठाष्टमव्ययेशानां मध्ये यश्च बली ग्रहः।
स चेद्विषमर्क्षे स्तः सैव ब्रह्मा भविष्यति।।३८।।

छठे, आठवें और बारहवें भावों के स्वामियों में जो बलवान् हो वह यदि विषमराशि में हो तो वही ब्रह्मग्रह होता है।।३८।।

लग्नसप्तमयोर्मध्ये यो राशिः बलवान्भवेत्।
तस्यानुचरराशीशो ओजे ब्रह्मग्रहो भवेत्।।३९।।

लग्न और सातवें भाव में जो बली हो उसका अनुचर (अर्थात् उस भाव से पीछे ६ राशि के अन्दर जो ग्रह हो, वह) यदि विषमराशि में हो तो वही ब्रह्मा होता है।।३९।।

मध्ये शनिपातानां च यदि ब्रह्मस्य सम्भवः।
तदा तस्माच्च षष्ठेशो ब्रह्मग्रहःसुनिश्चितम्।।४०।।

शनि, राहु और केतु में से कोई भी ब्रह्मा होता हो तो उससे षष्ठेश ब्रह्मा होता है।।४०।।

बहूनां ब्रह्मसद्भावेऽधिकांशो भवेद्विधिः।
तत्र राहुसमायोगेऽल्पांशो ब्रह्मणो भवेत्।।४१।।

यदि बहुत से ब्रह्मा होते हों तो सबमें जिसका अधिक अंश हो वही ब्रह्मा होता है। यदि उसके साथ राहु हो तो अल्प अंश वाला ही ब्रह्मा होता है।।४१।।

कारकादष्टमस्थस्तथा चाष्टमेश्वरो ग्रहः।
तयोर्मध्ये च बलवान्ब्रह्मग्रहः सुनिश्चितम्।।४२।।

कारक से आठवें भाव में वा अष्टमेश दोनों में जो बली हो वही ब्रह्मा होता है।।४२।।

उदाहरण— पीछे दिये हुए जन्मांग में षष्ठेश, अष्टमेश और व्ययेश, बुध, सूर्य और गुरु में बली गुरु ही है, अतः वही ब्रह्मग्रह हुआ। ब्रह्मग्रह विषमराशि सिंह में है, अतः सिंह से क्रम गणना के अनुसार दशा का आरम्भ हुआ। यदि कारक से अष्टमेश ले तो आत्मकारक भौम (पृ. ९७ देखो) से अष्टमेश बुध भी सिंह ही राशि विषम में है, अतः सिंह से ही क्रम गणना से दशा का आरम्भ हुआ। यहाँ आत्मकारक से दशा का आरम्भ लेना चाहिए।

अथ स्थिरदशाचक्रम्—

बृ. बु.			श.		ल.	मं.				शु. चं.	सू.	ग्रहाः
५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	राशयः
८	९	७	८	९	७	८	९	७	८	९	७	वर्षाणि
२०१३	२१	२७	३४	४२	५१	६१	७२	८४	८५	८७	९०	२-९४
३ १८	३ १८	३ १८	३ १८	३ १८	३ १८	३ १८	३ १८	३ १८	३ १८	३ १८	३ १८	सूर्यः

इति स्थिरदशा।

अथ ब्रह्मदशामाह—

ओजलग्ने यदा जन्म विधेराश्रितराशितः।
स्वराशेः षष्ठेशपर्यन्तमङ्कास्तु सदा द्विज।।४३।।

यदि विषमलग्न में जन्म हो तो ब्रह्मग्रहाश्रित राशि से दशा का आरम्भ क्रम से होता है और राशियों के दशा का वर्ष उस राशि से छठी राशि के स्वामी पर्यन्त संख्या होती है।।४३।।

समलग्ने यदा जन्म विधेः सप्तमराशितः।
व्युत्क्रमाच्च दशानेया एषा ब्रह्मदशा मता।।४४।।

यदि समलग्न में जन्म हो तो ब्रह्मग्रहाश्रित राशि से जो सातवीं राशि है उससे विलोम राशियों की दशा होती है। यहाँ भी वर्षसंख्या पूर्ववत् ही लेना चाहिए। इसे ब्रह्मग्रहदशा कहते हैं।।४४।।

उदाहरण— पूर्वोक्त कुंडली में जन्मलग्न सम है, अतः ब्रह्मग्रह गुरु से सातवीं राशि कुम्भ है, उसी से विलोम राशियों की कुंभ, मकर, धन आदि की दशा होगी। दशा वर्ष के विचार से कुम्भ से छठी राशि कर्क है, इसके स्वामीं चन्द्रमा हैं जो कि छठे भाव में है, अतः कुंभ से गणना करने से ५ वर्ष कुंभ के हुए। इसी प्रकार मकर से छठी राशि मिथुन है, इसके स्वामी बुध आठवें भाव में हैं, यहाँ तक गिनने से ७ वर्ष मकर के हुए। इसी प्रकार शेष राशियों के वर्ष को भी जानना। शेष चक्र से स्पष्ट है।

ब्रह्मदशाचक्रम्—

मं.	ल.		श.			बु. बृ.	सू.	चं. शु.				ग्रहाः
कुं.	म.	ध.	वृ.	तु.	क.	सिं.	कं.	मि.	वृ.	मे.	मी.	राशयः
५	७	६	३	१०	३	३	१	८	१	४	५	वर्षाणि
२०१३	१८	२५	३१	३४	४४	४७	५०	५१	५९	६०	६४	२०६९
३ १८	३ १८	३ १८	३ १८	३ १८	३ १८	३ १८	३ १८	३ १८	३ १८	३ १८	३ १८	३ १८

अथ केन्द्रदशामाह—

लग्नास्तभावयोर्मध्ये यो राशिर्बलवान् द्विज।
ततः केन्द्रादिस्थितानां राशीनां च बलक्रमात्।।४५।।

लग्न और सप्तम में जो बली राशि हो उससे आरम्भ कर पहले केन्द्रस्थ राशियों की उनके बल के अनुसार, इसके बाद पणफरस्थ राशियों की, इसके बाद आपोक्लिमस्थ राशियों की दशा होती है।।४५।।

केन्द्रादिस्थितराशीनां दशा ज्ञेया द्विजोत्तम।
दशाब्दाश्चात्र भो विप्र चरवच्च समादिशेत्।।४६।।

यहाँ राशियों का दशावर्ष चरदशा के समान ही लेना चाहिए।।४६।।

गहेन्द्राणामप्येवं स्वकारकाच्च दशां नयेत्।
ओजसमविभेदाच्च गणनात्रापि कारयेत्।।४७।।

यह लग्न की केन्द्रादि दशा हुई। इसी प्रकार आत्मकारक ग्रह से भी केन्द्रादि राशियों की दशा होती है, किन्तु विषम-सम राशि के अनुसार क्रम-उत्क्रम से गणना होती है। अर्थात् कारक ग्रह यदि विषम राशिं में हो तो केन्द्र, पणफर, आपोक्लिम की और समराशि में हो तो केन्द्र, आपोक्लिम, पणफर की दशा क्रम से होती है। इसी प्रकार भावों में बैठे हुए ग्रहों की भी दशा होती हैं।।४७।।

विशेष– केन्द्र दशा के दो भेद हैं। प्रथम लग्न से केन्द्रस्थित राशियों का और दूसरा कारक से केन्द्रस्थित राशियों का। इसमें भी प्रथम प्रकार में लग्न से केन्द्र स्थित राशियों में जो सबसे बलवान् हो उसकी सर्वप्रथम, उसके बाद उत्तरोत्तर न्यूनवबी की दशा होती है। इसके बाद पणफरस्थ राशि की इसके बाद आपोक्लिमस्थ राशि की दशा होती है। यहाँ भी विषम-समराशि के अनुसार ही क्रम-उत्क्रम गणना केन्द्रादि में करनी चाहिए। राशियों के वर्ष क्रम दशा के समान ही लेना चाहिए। दूसरे प्रकार में यदि कारक विषम राशि में हो तो कारक से केन्द्र, पणफर और आपोक्लिम की और समराशि में हो तो केन्द्र, आपोक्लिम और पणफर की स्थित राशियों की दशा होती है।

उदाहरण– पीछे दिये हुए उदाहरण के जन्मांग में आत्मकारक भौम कुम्भ राशि में और उससे सप्तम सिंह राशि, दोनों में बली कुम्भ राशि है, अतः कुम्भराशि से ही दशा आरम्भ होगी। इसके बाद कारक से केन्द्रस्थित राशि कुम्भ, वृष, सिंह, वृश्चिक में बलक्रम से दशा होगी, इसके बाद पणफरस्थ मकर, मेष, कर्क, तुला राशि की, इसके बाद धन, मीन, मिथुन और कन्या राशि की बलक्रम से दशा होगी।

कारककेन्द्रदशाचक्रम्–

कुं.	वृ.	सिं.	वृ.	म.	मे.	तु.	क.	ध.	मी.	मि.	कं.	
३	९१	११	९	२	१०	४	१०	८	७	२	११	
२०१५	१८	१९	३०	३९	४१	५१	५५	६५	७३	८०	८२	९३
३ १८												३ १८

कारककेन्द्रग्रहदशामाह—

लग्नाद्वा सप्तमाद्विप्र गणनीयः क्रमोत्क्रमात्।।४८।।
कारकावधिराशिश्च संख्या तत्रात्मिकाः समाः।।४८।।

लग्न या सप्तम से क्रम वा उत्क्रम रीति से गणना करना चाहिए। कारक पर्यन्त राशियों का दशावर्ष होता है।।४८।।

कारकग्रहदशा विप्र अन्येषां तु व्यतिक्रमः।
ग्रहात्कारकपर्यन्तं विषमसमविरोधतः।।४९।।

कारक ग्रह की दशा इस प्रकार होती है। ग्रह से कारक पर्यन्त विषम-सम के विरोध से क्रम-उत्क्रम के भेद से दशावर्ष को जानना चाहिए।।४९।।

क्रमव्युत्क्रमभेदेन गणनीयं प्रयत्नतः।
संख्या समा इहाब्दाश्च पुरा शम्भुप्रणोदिताः।।५०।।

कारक से युक्त ग्रह की दशा की संख्या कारक के तुल्य ही होती है। अन्य कारकों के दशावर्ष लग्न से कारक पर्यन्त संख्या को लेना चाहिए।।५०।।

कारकयुक्तग्रहाणां तु कारकतुल्याङ्कसंख्यया।
संग्राह्याश्च समा विप्र पूर्वोक्तेन दशाक्रमः।।५१।।

उनके साथ जो ग्रह हों उनका दशावर्ष भी उन्हीं के तुल्य लेना चाहिए।।५१।।

लग्नात्कारकपर्यन्तं संख्यां न्यस्य दशा भवेत्।
गणनीयं प्रयत्नेन समालब्धदशां नयेत्।।५२।।

दोनों में जो अधिक संख्या हो वही कारक के दशावर्ष की संख्या होती है।।५२।।

तद्युक्तानां तुल्याङ्काः प्रत्येकं स्युर्दशाक्रमात्।
उभयोरधिकं संख्या कारकस्य दशासमाः।।५३।।
कारकस्य युतश्चादौ तत्केन्द्रादिस्थितस्ततः।
दशाक्रमेण विज्ञेयाः शुभाशुभफलप्रदाः।।५४।।

पहले कारक की, उसके बाद उससे युत ग्रह की, उसके बाद उससे पणफरस्थ की, उसके बाद उससे आपोक्लिमस्थ की दशा होती है।।५४।।

विशेष— उपर्युक्त श्लोकों में दो प्रकार की दशा का संकेत है। एक कारक से केन्द्रादि में स्थित ग्रहों की और दूसरा आत्मादि सात कारकों की दशा का है। किन्तु दशा के वर्ष की गणना ग्रह की राशि पर्यन्त ही क्रम-उत्क्रम से लेना चाहिए। जिस ग्रह की दो राशियाँ हैं उनमें जिस राशि से अधिक दशा वर्ष आवे उसी को लेना चाहिए। सात कारकों के दशावर्ष लग्न से उन-२ कारकों के दशावर्ष लग्न से उन-उन कारकों तक गिनने से जो संख्या हो उतने ही वर्ष दशा का लेना चाहिए।

अथ कारककेन्द्रदशाचक्रम्—

मं.	के.	बृ.	शु.	श.	रा.	चं.	शु.	सू.
९	६	७	१३	३	९	१	११	१
२०१५	२४	३०	३७	४०	४३	५२	५३	६४ २०६५
३ १८								३ १८

अथ मण्डूकदशा—

मण्डूक इति विख्याता त्रिकूटाख्या दशा द्विज।
लग्नसप्तमयोर्मध्ये बलवद्राशितो भवेत्।।५५।।

त्रिकूट दशा को ही मंडूक दशा कहते हैं। लग्न सप्तम में जो बलवान् राशि हो।।५५।।

क्रमव्युत्क्रमभेदेन दशाश्चिन्त्या द्विजोत्तम।
चरस्थिरद्विस्वभावे सप्ताष्टनवसंख्यया।।५६।।

वहाँ (ओज-सम के अनुसार) क्रम-उत्क्रम भेद से चर आदि राशियों की दशा होती है। चर राशियों की ७ वर्ष, स्थिर राशियों की ८ वर्ष और द्विस्वभाव राशियों की ९ वर्ष की दशा होती है।।५६।।

क्रमेण प्रोक्तरीत्या च प्रवृत्तः स्यात् त्रिकूटका।
मण्डूकेति समाख्याता पुरा शम्भुप्रणोदितम्।।५७।।

इस प्रकार चर-स्थिर-द्विस्वभाव राशियों की त्रिकूट दशा के मध्य में २ राशियों का अन्तर होने से इसे मंडूक गति के समान होने से मंडूक दशा कहते हैं।।५७।।

उदाहरण— पूर्वोक्त जन्मकुंडली में लग्न और सप्तम में बली लग्न सम राशि की है, अतः उत्क्रम से ९,१२,३,६,१०,१,४,७,११,२,८,५ इन राशियों की दशा होगी। शेष चक्र में स्पष्ट है।

मण्डूकदशाचक्रम्—

३ध.	मी.	मि.	क.	म.	मे.	कं.	तु.	कुं.	वृ.	सिं.	वृ.
९	९	९	९	७	७	७	७	८	८	८	८
२०१३	२२	३१	४०	४९	५६	६३	७०	७७	८५	९३	२००१ २००९
३ १८											३ १८

इति मण्डूकदशा।

अथ शूलदशामाह—

दशाशूलं प्रवक्तव्यं फलनिर्याणराशितः।
प्रवक्ति सप्तमाद्द्विप्र निर्देशे शूलमात्रतः।।५८।।

निर्याण की राशि से शूलदशा का फल कहना चाहिए। वह सप्तम से शूल का विचार करना चाहिए।।५८।।

माहेश्वरर्क्षादि दशा निर्याणस्थानशूलभम्।
बलेन शूलसंग्राह्या मृत्युरस्य द्विजोत्तम।।५९।।

माहेश्वर ग्रह की राशि से निर्याण राशि को शूल राशि कहते हैं।।५९।।

दशानेकविधा विप्र सप्ताष्टनवभिः समाः।
अत्र ग्राह्या महाप्राज्ञ शूले निर्याणनिश्चितम्।।६०।।

लग्न और सप्तम से आठवीं राशि को निर्याण राशि कहते हैं। इसमें दशा वर्ष (स्थिर दशा के समान ही) ७, ८, ९ वर्ष की होती है।।६०।।

लग्नसप्तमयोर्विप्र क्रमोत्क्रमगणनया।
तयोस्तु रन्ध्रमं विप्र शूलराशिश्च निश्चितम्।।६१।।

लग्न और सप्तम से क्रम और उत्क्रम (विषम-सम) के अनुसार आठवीं राशियों में जो बली हो वही शूल वा निर्याण राशि होती है।।६१।।

रन्ध्रेशयोर्बली विप्र रुद्रसंज्ञो भवेत्किल।
रुद्रशूलान्तमायुः स्यादिति पूर्वैश्च भाषितम्।।६२।।

दोनों के स्वामियों में जो बली होता है वही रुद्रग्रह होता है। रुद्रशूलान्त ही आयु होती है।।६२।।

उदाहरण— जन्मांग में लग्न से अष्टम सिंह राशि में बुध-गुरु हैं और सप्तम से अष्टम में कुम्भ राशि है उसमें मंगल है, अतः दोनों में बली सिंह राशि से क्रम गणना के अनुसार ही शूलदशा होगी।

शूलदशाचक्रम्—

सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	मे.	वृ.	मि.	क.
८	९	७	८	९	७	८	९	७	८	९	७
२०१३	२१	३०	३७	४५	५४	६१	६९	७८	८५	९३	२१०२ २१०९
३ १८											३ १८

इति शूलदशा।

अथ योगार्धदशामाह—

चरस्थिरदशायाश्च योगं विप्र समाचरेत्।
तस्यार्धञ्च समा विप्र योगार्धाख्या तु सा दशा।।६३।।

चरदशा और स्थिरदशा की राशियों के दशावर्ष के योग के आधे तुल्य योगार्ध दशा में राशियों का दशावर्ष होता है।।६३।।

लग्नसप्तमयोर्मध्ये चिन्तयेत्तु बलाधिकम्।
लग्ने बलयुते लग्नाद्दशारम्भं प्रकाशयेत्।।६४।।

लग्न और सप्तम में जो राशि बलवान् हो उसी से दशा का प्रारम्भ होता है।।६४।।

तस्मात्सप्तमवीर्याढ्ये दशारम्भं प्रकल्पयेत्।
बली लग्नास्तयोर्विप्र ओजसमक्रमेण वै।
क्रमव्युत्क्रममार्गेण दशा लेख्या द्विजोत्तम।।६५।।

लग्न सप्तम में बली राशि विषम हो तो क्रम से, समराशि हों तो उत्क्रम से गणना होती है।।६५।।

उदाहरण— जैसे कुंडली में लग्न राशि बली है और सम राशि है, अतः जन्मलग्न से उत्क्रम गणना से दशा का आरम्भ होगा। जन्मलग्न

मकर है, चर दशा में इसका दशावर्ष २ है और स्थिर दशा में ७ वर्ष, दोनों का योगार्ध ४ वर्ष ६ मास हुआ; यह मकर का दशावर्ष हुआ। इसी प्रकार शेष राशियों के दशावर्ष को निकालना चाहिए।

अथ योगार्धदशाचक्रम्—

म.	ध.	वृ.	तु.	क.	सिं.	कं.	मि.	वृ.	मे.	मी.	कुं.	
४ ६	८ ६	८ ६	५ ६	१० ०	९ ६	८ ६	५ ६	४ ६	८ ६	८ ०	५ ६	
२०१३	१७	२६	३४	४०	५०	५९	६८	७३	७८	८६	९४	२१००
३ १८	९ १८	३ १८	९ १८	३ १८	९ १८	३ १८	९ १८	३ १८	९ १८	३ १८	९ १८	३ १८

इति योगार्धदशा।

अथ दृग्दशामाह—

कुजादिति स विज्ञेया विलग्ननवमादितः।
क्रमत्रये कूटपदं नाम्ना वै दृग्दशा द्विज।।६६।।

लग्न से आरम्भ कर नवम राशि से ९, १०, ११ राशियों से दशा का आरम्भ होता है। इन तीन राशियों को त्रिकूट कहते हैं।।६६।।

दृष्टिचक्रे सम्मुखश्च राश्यादौ नवमस्य च।
कुत्रचित्क्रमरीत्या च कुत्रचित्व्युत्क्रमेण च।।६७।।

इन्हीं तीन राशियों को देखने वाली तीन-तीन राशियों की दशा होती है, अतः इसे दृग्दशा कहते हैं। नवम की और नवम की दृष्ट राशियों की दशा होगी; इसी प्रकार दशम और उसके दृष्ट राशियों की, पुनः एकादश राशि और उसके दृष्ट राशियों की दशा होगी। कहीं क्रम गणना और कहीं उत्क्रम गणना होगी।।६७।।

ततोऽपि पञ्चमस्यैवं क्रमेण कुत्रचिद्द्विज।
कुत्रचिद् व्युत्क्रमेणैव राश्यैकादशसम्मुखम्।।६८।।

उसमें भी पाँचवीं (सिंह राशि) और उसके सम्मुख ग्यारहवीं।।६८।।

तस्याभावप्रमाणो हि न ग्राह्यं द्विजसत्तम।
संग्राह्यं पञ्चमस्यैव दृष्टिचक्रे विशेषतः।।६९।।

(कुंभ) राशि की क्रम गणना करनी चाहिए।।६९।।

अभिपश्यन्ति ऋक्षाणि पार्श्वभे द्विजसत्तम।
पूर्वोक्तरीत्या तदेव त्रिकूटपदमुच्यते।।७०।।
त्रिराश्यात्मकूटपदं ततोऽपि दशमस्य च।
दृग्दशैकादशे ज्ञेया नवमस्यापि दृग्दशा।।७१।।

इसी प्रकार दशम राशि से दृष्टिचक्र के अनुसार गणना करनी चाहिए।।७१।।

फलार्थे दृग्दशा विप्र संगृह्यैकादशेऽपि च।
तस्याः प्रकारं वक्ष्येऽहं पुनरुक्तं विशेषतः।।७२।।

अब मैं पुनः ओज (विषम) समराशि के अनुसार गणना को कह रहा हूँ।।७२।।

अथोजयुग्मभेदेन गणनाक्रममिहोच्यते।
यथासामान्यसंज्ञेयं युग्मेषु मातृधर्मयोः।।७२।।

सिंह और कुम्भ राशियों में विषम होते हुए भी सामान्य अर्थात् क्रम गणना।।७२।।

गणनायां च सामान्यं पञ्चमैकादशे द्विज।
क्वचिद्द्विव्यात्मकं ज्ञेयं सामान्यत्रयकूटके।।७४।।
अथोजपदयोर्विप्र संज्ञेयं विपरीततः।
युग्मे युग्मपदयोश्च यथासामान्ययोजकम्।।७५।।
क्रमाद्वृषे वृश्चिके च इत्युक्तेन द्विजोत्तम।
अत्रापि ओजकूटस्थे पञ्चमैकादशे क्रमात्।।७६।।

समपदीय राशि होते हुए भी और ओजपदीय मेष, वृष और तुला वृश्चिक में मेष तुला की विषम होते हुए भी उत्क्रम और वृष-वृश्चिक की सम होते हुए भी क्रम गणना करनी चाहिए।।७४-७६।।

दृग्योग्यं च भवेद्विप्र दृग्दशा बलदायिका।
युग्मकूटस्थसामान्यं व्युत्क्रमात्सिंहकुम्भयोः।।७७।।

बलवान् दृग्दशा दृग्योग्य होती है। युग्म (सम) कूट में सामान्य गणना होते हुए भी सिंह और कुम्भ राशियों में उत्क्रम गणना करनी चाहिए।।७७।।

पञ्चमैकादशौ विप्र दृग्योग्यौ भवतस्तथा।
पुंराशिर्द्विस्वभावस्य ज्ञेया तस्य क्रमेण च।।७८।।

द्विस्वभाव राशि यदि विषम है तो क्रम से और स्त्री राशि (सम) में उत्क्रम से गणना करना चाहिए। इनमें पार्श्व चौथी और दशम राशि होती है।।७८।।

स्त्रीराशिर्द्विस्वभावेऽपि व्युत्क्रमेण द्विजोत्तम।
चतुर्थदशमौ ग्राह्यौ पार्श्वभं तु न संशयः।।७९।।

विषम राशि में क्रम से चौथी और दशम राशि तथा सम में उत्क्रम से क्रम से चौथी और दशम राशि लेनी चाहिए।।७९।।

ओजसंज्ञा द्विस्वभावे क्रमेण तुर्यव्योमके।
समे व्युत्क्रमतो ज्ञेया सा ग्राह्या व्योमतुर्यकौ।
राशीनां तु समा ज्ञेया स्थिरवत्तु द्विजोत्तम।।८०।।

राशियों का दशावर्ष स्थिर दशा के समान ही लेना चाहिए।।८०।।

उदाहरण— जन्मकुंडली में लग्न से नवम कन्या राशि है, द्विस्वभाव विषम है, अतः क्रम से इसकी दृष्ट राशि धन, मीन और मिथुन की दशा होगी। पुनः दशम तुला राशि की और इसकी दृष्ट राशियों की उत्क्रम से सिंह, वृष, कुम्भ की दशा, इसके बाद एकादश वृश्चिक की और क्रमगणना से इससे दृष्ट राशि मकर, मेष, कर्क की दशा होगी। शेष चक्र से स्पष्ट है।

दृग्दशाचक्रम्—

क.	ध.	मी.	मि.	तु.	सिं.	वृ.	कुं.	वृ.	म.	मे.	कं.	
९	९	९	९	७	८	८	८	८	७	७	७	
२०१३	२२	३१	४०	४९	५६	६४	७२	८०	८८	९५	२००२	२००९
३ १८											३ १८	३ १८

इति दृग्दशा।

अथ त्रिकोणदशा—

दशात्रिकोणनाम्नाया यथान्यायप्रकल्पना।
चरपर्यायरीत्यादि श्लोकोक्तेन प्रदर्शितः।।८१।।

त्रिकोण दशा की यथान्याय कल्पना की गई है। वह चरपर्याय दशा की रीति से है।।८२।।

लग्नत्रिकोणयोर्मध्ये यो राशिर्बलवान्द्विज।
तदारभ्योन्नयेद्धीमान् चरपर्या भवेद्दशा।।८२।।

लग्न से त्रिकोण ५।९ की राशियों में अर्थात् लग्न, पंचम और नवम राशियों में जो बलवान् राशि हो वहीं से चरपर्याय के समान ही दशा का आरम्भ होता है।।८२।।

क्रमोत्क्रमेण गणयेदोजयुग्मेषु राशिषु ।
चरर्यायरीत्था च समाकल्पया द्विजोत्तम ।।८३।।

ओज राशि में क्रम से और सम राशि में उत्क्रम से चरपर्याय के समान ही दशा का वर्ष भी होता है।।८३।।

उदाहरण–जन्म कुण्डली में मकर लग्न से त्रिकोण में वृष और कन्या राशि में लग्न की राशि बली है अत: वहीं में आरम्भ कर समराशि होने के कारण उत्क्रम से त्रिकोण राशियों कन्या और वृष की दशा होगी फिर कुम्भ, तुला, मिथुन की इसके बाद मीन, वृश्चिक, कर्क की, फिर मेष, धन सिंह की दशा होगी, इनका दशा वर्ष चरदशा के समान ही होगा।

त्रिकोणदशाचक्र–

म.	क.	वृ.	कुं.	तु.	मि.	मी.	बृ.	कं.	मे.	ध.	सिं.	
२	११	१	३	४	२	७	९	१०	१०	८	११	
२०१५	१७	२८	२९	३२	३६	३८	४५	५४	६४	७४	८२	२०९३
३												३
१८												१८

इति त्रिकोणदशा।

अथनक्षत्रदशा–

जन्मादौ चन्द्रनक्षत्रे सर्वथा घटिकौघके ।
भानुना दीयते भागं शेषनाडी प्रकल्पयेत् ।।८४।।

जन्म समय जन्मनक्षत्र के भभोग घटी में १२ से भाग देने से जो घट्यादि फल आवे।।८४।।

प्रथमं खंडमारम्य द्वादशे खंडके द्विज ।
लग्नादद्वादशराशीनां गणनीयं क्रमेण च ।।८५।।

उस खंड से आरम्भ कर १२ खंडों का लग्न से १२ राशियों की दशा होती है।।८५।।

या घटी कर्मवत्खंडे जन्मखंडश्च आदितः ।
आरभ्य गणनायां च जन्मलग्नादितो द्विज ।।८६।।

उक्त घटी के अनुसार भयात के घटी के तुल्य जो खंड हो।।८६।।

लग्नाद्द्वादशराशीशमारभ्य द्विजसत्तम ।
क्रमव्युत्क्रमभेदेन द्वादशदशा मता ।।८७।।

वहाँ तक लग्न से आरम्भ कर १२ राशियों के स्वामियों से आरम्भ कर क्रम उत्क्रम गणना से दशा होती है।।८६।।

अथवा–

भभोगं रविभिर्भक्ते यल्लब्धं घटिकादिकम् ।
तेन भक्ते भयातंच यल्लब्धं भादिकं फलम् ।।८८।।

भभोग को १२ से भाग देने से जो घट्यादि लब्धि हो उसमें भयात से भाग देने से जो राश्यादि फल मिले।।८८।।

तेनयुक्तं जन्मलग्नं तमारभ्य दशामितिः ।
स्थिरवच्चसमामानं क्रमोत्क्रम विभेदतः ।।८९।।

उसमें जन्मलग्न को जोड़ देने से जो राश्यादि आवे वहीं से (विषम-सम) के अनुसार दशा का आरम्भ होता है। यहाँ दशा का वर्ष स्थिर दशा के समान ही लेना चाहिये।।८९।।

उदाहरण–पूर्वोक्त जन्म नक्षत्र पुनर्वसु का भभोग ५५।५३ है और भयात १०।३२ तथा जन्म लग्न ९।१५।३२।५१ है। भभोग ३३५३ में १२ से भाग देने से लब्ध घटिकादि २७९।२५ प्राप्त हुआ। इससे पलात्मक भयात ६३२ में भाग देने से लब्धि राश्यादि २।७।५१।२० हुआ इसमें जन्मलग्न को जोड़ देने से ११।२३।२४।११ हुआ अर्थात् मीन राशि से उत्कम गणना से दशा का आरम्भ हुआ।

नक्षत्रदशाचक्रम् –

मी.	कुं.	म.	ध.	बृ.	तु.	कं.	सिं.	क.	मि.	वृ.	मे.
९	८	७	९	८	७	९	८	७	९	८	७
२०१३	२२	३०	३७	४६	५४	६२	७०	७८	८५	९४	२१०२
३											३
१८											१८

इतिनक्षत्रदशा।

अथ तारादशा–

जन्मसम्पद्विपत्क्षेमप्रत्यरीसाधका वधः ।
मैत्रातिमैत्रमित्येवं दशा ज्ञेया द्विजोत्तम ।।९०।।

जन्म, सम्पत्, विपत्, क्षेम, प्रत्यरी, साधक, वध, मैत्र, अतिमैत्र इन ९ ताराओं की भी दशा होती है।।९०।।

विंशोत्तर्याः क्रमेणैवमंकानिह विजानतः ।
आदौ केन्द्रग्रहाद्यस्य विज्ञेया तारकादशा ।।९१।।

जिस प्रकार विंशोत्तरी दशा में ग्रहों के वर्ष कहे गये हैं वही यहां पर भी लेना चाहिये। यहां जन्म कुण्डली में जो ग्रह केन्द्र में हो वहीं से दशा का आरम्भ होता है।।९१।।

उदाहरण–केन्द्र में ग्रहों के रहने से यह दशा होती है अन्यथा नहीं होती है। जैसे जन्मकुण्डली में केन्द्र में सूर्य है अतः जन्मतारा से दशा का आरम्भ होगा। इसका भुक्त भोग्य विंशोत्तरी दशा के समान ही निकालना चाहिये।

तारादशाचक्रम् –

ज.	स.	वि.	क्षे.	प्र.	सा.	ब.	मै.	अतिमै.
सू.	चं.	मं.	श.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.
४	१०	७	१८	१६	१९	१७	७	२०
१० १२ ५१ ५२								
२०१८	२८	३५	५३	६९	८८	२१०५	१२	३२
२ १ १८ २२								२ १ १८ २२

इति तारादशा।

अथ वर्णददशामाह।

जन्महोरातनूयोगो विषमो वर्णदो भवेत् ।
समस्तुः चक्रतः शुद्धो वर्णदो कथ्यते बुधैः ।।९२।।

जन्मलग्न और होरालग्न का योग करने से योग राशि विषम हो तो वही वर्णद राशि होती है यदि योग सम हो तो १२ राशि में घटाने से शेष वर्णद होती है।।९२।।

एवं द्वादशभावानां वर्णदं लग्नमानयेत् ।
ग्रहाणां वर्णदा नैव राशीनां वर्णदा दशा ।।९३।।

इसी प्रकार १२ भावों के वर्णद राशि को लाना। ग्रहों की वर्णद दशा नहीं होती है राशियों की वर्णद दशा होती है।।९३।।

होरालग्नभयोर्नेया सवलाद् वर्णदा दशा ।
यत्संख्यो वर्णदो लग्नात्तत्संख्या क्रमेणतु ।।९४।।
क्रमव्युत्क्रमभेदेन दशा स्यात्पुरुषस्त्रियोः ।
वर्षसंख्यां विजानीयाच्चरदशा प्रमाणतः ।।९५।।

होरालग्न और जन्मालग्न दोनों में जो बली हो, और विषम हो तो क्रमगणना से यदि सम हो तो उत्क्रम गणना से वर्णद दशा होती है। यहां राशियों का वर्ष चर दशा के समान ही लेना चाहिये।।९४-९५।।

अथपंचस्वरदशामाह–

पञ्चाङ्कान्प्रथमे दत्वा स्वरान्वर्णाश्च विन्यसेत् ।
आदावकछडाद्याश्च अन्ते ओचटवादयः ।।९६।।
कादिहांताल्लिखेद्वर्णान्स्वराधोङञणोज्झितान्।
तिर्यक्पंक्तिक्रमेणैव पञ्च पञ्च विभागतः ।।९७।।

पहले १ से ५ तक के अंकों को लिखकर उनके नीचे अकारादि स्वरों को और उनके नीचे ककारादि वर्णों को लिखने से किन्तु ङ. ञ. ण. वर्णों को छोड़कर प्रत्येक पंक्ति में ५ पांच वर्णों को लिखे।।९६-९७।।

न प्रोक्ता ङञणावर्णा नामादौ सन्ति ते नहि ।
चेद्भवन्ति तदा ज्ञेया गजडास्ते यथा क्रमात् ।।९८।।

ङ. ञ. ण. वर्ण का उच्चारण इस चक्र में नहीं होता है क्योंकि किसी के नामके आदि में ये वर्ण नहीं होते हैं यदि कदाचित् हो तो ङ. ञ. ण. के स्थान में क्रम से ग. ज. उ. को मानना चाहिये।।९८।।

यदि नाम्नि भवेद्वर्णो संयोगाक्षरलक्षितः ।
ग्राह्यस्तदादिमोवर्णः इत्युक्तं ब्रह्मणापुरा ।।९९।।

यदि नाम के आदि में संयोगाक्षर हो तो वहां संयुक्ताक्षर के प्रथम अंक को लेना चाहिये।।९९।।

अकाराद्याः स्वराः पञ्च ब्रह्माद्याः पञ्चदेवताः ।
निवृत्ताद्याः कलाः पञ्च इच्छाद्या शक्तिपञ्चकम् ।।१००।।

अकारादि पांच स्वरों के ब्रह्मा आदि (ब्रह्मा विष्णु शंकर-गणेश सूर्य) ये देवता हैं। निवृत्ति आदि (निवृत्ति, उपेक्षा, आदान, उपादान, प्रवृत्ति) पांच कलायें, इच्छा

आदि (इच्छा, राग, द्वेष, अभिनिवेश, अहंकार) पांच शक्तियां।।१००।।

मायाद्याश्चक्रभेदाश्च धराद्या भूतपञ्चकम् ।
शकादि विषयास्ते च कामवाणा इतीरिताः ।।१०१।।
प्रभवादि क्रमेणैषां स्वराणामश्वरादिकः ।
उदयोद्वादशाब्दानां प्रत्येकं द्वादशाब्दकाः ।।१०२।।

माया आदि (माया, अविद्या, तामिस्त्र अंधतामिस्त्र, मोह) पांच चक्र, धरा आदि (पृथ्वी, जल, तेल, वायु, आकाश) पांच महाभूत, और शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध, पांच विषय ये सभी पञ्चक काम के बाण हैं। इसी प्रकार से प्रभवादि संवत्सर भी १२ वर्ष भोग तुल्य पांच स्वरों के होते हैं। प्रत्येक स्वरों का १२ वर्ष होता है।।१०१-१०२।।

उदाहरण–पुनर्वसु नक्षत्र के प्रथम चरण में जन्म होने से नाम का प्रथम अक्षर ककार है वह चक्र में अकार स्वर के नीचे है अतः अकार स्वर से दशा आरम्भ होगा। शेष चक्र से स्पष्ट है।

अथपंचस्वरचक्रम्

अ.	इ.	उ.	ऐ.	ओ	स्वराः
१२	१२	१२	१२	१२	वर्ष
क.	ख.	ग.	घ.	च.	
छ.	ज.	झ.	ट.	ठ.	
ड.	ढ.	त.	थ.	द.	वर्षाः
ध.	न.	प.	फ.	ब.	
भ.	म.	य.	र.	ल.	
व.	श.	ष.	स.	ह.	

पंचस्वरदशाचक्रम्

अ.	इ.	उ.	ए.	ओ	स्वराः
१२	१२	१२	१२	१२	वर्ष
२०१३	२५	३७	४९	६१	७३
३					३
१८					१८

इतिपंचस्वरदशा।

अथयोगिनीदशामाह–

मङ्गला पिङ्गला धान्या भ्रामरी भद्रिका तथा ।
योगिन्यष्टौ समाख्याताउल्का सिद्धाच संकटा ।।१०३।।

मङ्गला, पिङ्गला, धान्या, भ्रमरी, भद्रिका, उल्का, सिद्धा, संकटा, ये आठ योगिनी होती हैं।।१०३।।

पिङ्गलातो भवेत्सूर्यो मङ्गलातो निशाकरः ।
भ्रामरीतो भवेद्भौमो भद्रिकातो बुधस्तथा ।।१०४।।

पिङ्गला से सूर्य, मङ्गला से चन्द्रमा, भ्रामरी से भौम, भद्रिका से बुध।।१०४।।

धन्यकातो गुरुरभूत्सिद्धातः कविसम्भवः ।
उल्कातो भानुतनथः संकटातस्तमोऽभवत् ।।१०५।।

धान्या से गुरु, सिद्धा से शुक्र, उल्का से शनि और संकटा से राहु हुये हैं।।१०५।।

स्वर्क्षं शिखिना संयुक्तं वसुभिर्भागमाहरेत् ।
शेषेण योगिनी ज्ञेया शून्यपातेन संकटा ।।१०६।।

जन्म नक्षत्र में ३ जोड़कर ८ से भाग देने से एकादि शेष से योगिनी को जानना शून्य शेष बचे तो संकटा होती है।।१०६।।

एकाभिवृध्या वर्षाणि मङ्गला प्रमुखासुच ।
भुक्तं भोग्यं च संसाध्यं पुरावद्गणकोत्तमैः ।।१०७।।

इनका दशा वर्ष १ से आरम्भ कर एक वृद्धि करने से क्रम से १, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८ वर्ष होता है। इनका भुक्त भोग्य पूर्ववत् साधन करना चाहिये।।१०७।।

उदाहरण–जन्मनक्षत्र घुनर्वसु की संख्या ७ इसमें ३ और जोड़ने से १० हुआ इसमें ८ का भाग देने से २ शेष रहा अत: पिङ्गला से दशा का आरम्भ हुआ। इसका भुक्त भोग्य पूर्ववत् भयात भभोग द्वारा निकालने से भुक्त वर्षादि ०, ४, १६, २१, १९ हुआ।

अथ योगिनीदशाचक्रम् –

पि.	धा.	भ्रा.	भ.	उ.	सिं.	सं.	मं.	यो.
१ ७ १३ ३८ ४१	३	४	५	६	७	८	१	
२०१३	२०१४	१७	२१	२६	३२	३९	४७	२०४८
३ १८ २६ ३४	११ २ ५ १५	११ २ ५ १५						

इतियोगीनीदशा।

अथ पिंडांशादिदशामाह–

पैंड्यांशनैसर्गिकदशामायुः परिचिंतयेत् ।
तथाह्यष्टकवर्गे च विजानीहि द्विजोत्तम ।।१०८।।

पिंडायु, अंशायु नैसर्गिकायु और अष्टकवर्गायु पर से इनके दशा को लाना चाहिये।।१०८।।

अथ सन्ध्यादशामाह–

परमायुर्द्वादशांशाः स्फुटं सन्ध्याभवेत्ततः ।
स्वलग्नाधिपतेरादौ क्रमेणान्यग्रहेषु च ।।१०९।।

परमायु १२० का १२ वां भाग सन्ध्या होता है उसी के तुल्य पहले लग्नेश की दशा इसके बाद क्रम से अन्य ग्रहों की दशा उतने ही वर्ष की होती है।।१०९।।

उदाहरण–परमायु १२० का १२ वां भाग १० वर्ष यह लग्नेश शनि की दशा हुई इसी के तुल्य सभी सूर्य, चन्द्र, भौम, बुध, गुरु, शुक्र, राहु और केतु की दशा होगी।

सन्ध्यादशाचक्रम्–

श.	रा.	के.	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	ग्रह
१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	वर्ष
२०१३	२३	३३	४३	५३	६३	७३	८३	९३	२१०३
३									३
१८									१८

अथ पाचकदशामाह–

सन्ध्या रसगुणा कार्या चन्द्रवह्निहृता फलम् ।
संस्थाप्य प्रथमे कोष्ठे ह्यर्धमर्धत्रिकोष्ठके ।।११०।।

सन्ध्या को ६ से गुणाकर गुणनफल में ३१ का भाग देने से जो वर्षादि फल मिले उसे प्रथम कोष्ठ में लिखे। इसके आधे को अगले तीन कोष्ठों में लिखे।।११०।।

त्रिभागं वसुकोष्ठेषु लिखेद्विद्वन्प्रयत्नतः ।
एवं द्वादशभावेषु पाचकानि प्रकल्पयेत् ।।१११।।

फिर लब्ध के तीसरे भाग को आगे के आठ कोष्ठों में लिखने से १२ भावों की पाचक दशा होती है।।१११।।

उदाहरण-संध्या का दशा वर्ष १० इसको ६ से गुणा किया तो ६० हुये इसमें ३१ से भाग देने से वर्षादि १, ११, ६, ४६, २७ हुआ इसे पहले कोष्ठ में रखकर इसका आधा ०, ११, १८, २३, १३ आगे के तीन कोष्ठों में रख दिया इसके बाद लब्ध (१, ११, ६, ४६, २७) का तीसरा भाग ०, ७, २२, १५, २९ को शेष ८ कोष्ठों में रखने से १२ भावों के पाचक दशा चक्र होता है।

पाचकदशाचक्रम् –

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	भावाः
१	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	
११	११	११	११	७	७	७	७	७	७	७	७	
६	१८	१८	१८	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	
४६	२३	२३	२३	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	
२७	१३	१३	१३	२९	२९	२९	२९	२९	२९	२९	२९	
२०१३	१५	१६	१७	१८	१८	१९	२०	२०	२१	२२	२२	२०२३
३	२	२	२	१	९	५	०	८	४	०	७	३
१८	२५	१३	१	२०	१२	४	२७	१९	११	३	२६	१८
२६	१३	३६	५९	२२	३८	५३	९	२४	४०	५५	११	२६
३४	१	१४	२७	४०	९	३८	७	३६	५	३४	३	३२

इतिपाचकदशा।

अथ नवांशकनवदशामाह–

अथ राशिक्रमं वक्ष्ये शृणुष्व द्विजपुङ्गव ।
ग्रहे राश्यादिकं चाल्पे दशा तस्यादिमाभवेत् ।।११२।।

हे द्विजपुङ्गव! अब मैं राशियों के क्रम को कहता हूँ, ग्रहों में जिस ग्रह का राश्यादि सभी ग्रहों से अल्प हो उसकी प्रथम दशा।।११२।।

ततस्तदधिकस्यैवं तुल्ये नैसर्गिकाद्बलात् ।
राशीशात्सप्तमांगेशाच्चिन्त्या राशिक्रमाद्दशा ।।११३।।

इसके बाद उससे अधिक अंशादि की फिर इससे अधिक अंशादि वाले की इसी भाव से ९ ग्रहों की दशा होती है।।११३।।

यस्मिन्नवांशकस्थेऽङ्गे दशा तस्यादिमा मता ।
अग्रादब्जाच्च येखेटाः केत्वंताः संस्थिताः क्रमात् ।।११४।।

यह प्रथम प्रकार हुआ। इसके बाद सभी ग्रहों में जो सबसे अधिक अंशवाला हो उसकी प्रथम दशा इसके बाद इससे न्यूनांश की इसी क्रम से नवों ग्रहों की दशा होती है। यह दूसरा प्रकार है। सभी ग्रहों में नैसर्गिक बल में न्यून बलवाले की प्रथम दशा इसके बाद इससे अधिक बलवाले की इसी क्रम से सभी ग्रहों की दशा लिखना। यह तीसरा प्रकार हुआ। जन्म राशींश से दशा का आरम्भ करना। यहां दशा वर्ष ९ वर्षक ही सबका होता है। यह चौथा प्रकार है। लग्न से सप्तमेश के राशि से दशा का आरम्भकरना, यह पांचवां प्रकार है। इसी प्रकार लग्नेश का प्रथम, द्वितीयेश का दूसरा इसी क्रम से सभी भावों के राशीशों के राशि से दशा लिखना यह छठां प्रकार है। जिस नवांश में लग्न है उस नवांश के स्वामी से दशा का आरम्भ करना यह सातवां प्रकार है। अंतिम नवांश के स्वामी से क्रमशः ग्रहों का दशा आरम्भ करना, यह आठवां प्रकार है। चन्द्रमा से आरम्भ कर रवि पर्यन्त सभी ग्रहों के दशा को लिखना, यह नवां प्रकार है।।११४।।

दशामानं प्रवक्ष्यादि यथोक्तं ब्रह्मणापुरा ।
लिप्तीकृत्वा ग्रहं व्योमखाश्विभिर्भाजिते फलम् ।।११५।।

ग्रहों की कला बनाकर २०० का भाग देने से जो फल मिले।।११५।।

पुनः सूर्ये हृते लब्धं समाद्यांशकला दशा ।
सर्वेषां मानवानां च दशास्त्वेता विचिंतयेत् ।।११६।।

उसमें १२ से भाग देने से वर्षादि लब्ध होगा वही दशा का मान होता है।।११६।।

इतिनवांशनवदशा।

अथ राश्यंशकदशामाह–

तन्वादिभावाः संस्पष्टाः प्रोक्तमार्गेणचानयेत् ।
लग्नेशसंस्थितो यत्र दशास्तस्यादिमो स्मृताः ।।११७।।

लग्नादि द्वादशभावों को स्पष्ट करने लग्न और लग्नेश में जो बली हो उसके नवांश राशि की प्रथम दशा।।११७।।

द्वितीयेशादितश्चाग्रे ज्ञेया राश्ययंशका दशा ।
चिन्त्या लग्ने बलवती लग्नेशे वा बलान्विते ।।११८।।

इसके द्वितीयादि भावों के स्वामियों के नवांश राशि की दशा होती है।।११८।।

इति राश्यंशकदशा।

अथ नक्षत्रदशामाह–

नक्षत्रायुर्महाप्राज्ञ पूर्णमग्रे प्रभाषितम् ।
विंशोत्तरी पंचधा द्विधा चाष्टोत्तरी मता ।।११९।।

नक्षत्रायु के अनुसार ५ प्रकार की विंशोत्तरी दशा और दो प्रकार की अष्टोत्तरी दशा कहा गया है।।११९।।

अष्टवर्गोपरि दशा सर्वेषां चिंतयेद्द्विज ।
ततो निर्याणमालेख्यं निर्विशंकं भविष्यति ।।१२०।।

इन सभी का फल अष्ठक वर्ग के ऊपर विचार कर निर्याण दशा को लिखना यही नक्षत्र दशा होगी।।१२०।।

वलावलविवेकेन फलं ज्ञेयं दशासुच ।
विपरीतं फलं वाच्यं खेटे वक्रगते सदा ।।१२१।।

ग्रहों के बल और निर्वलता के अनुसार ही दशा का फल कहना चाहिये यदि ग्रह बक्री हो तो विपरीत (वली ग्रह में अशुभ और दुर्बल में शुभ) फल कहना चाहिये।।१२१।।

आदिद्रेष्के स्थिते खेटे दशारम्भे फलं वदेत् ।
दशामध्ये फलं वाच्यं मध्यद्रेष्काणके स्थिते ।।१२२।।

यदि दशेश प्रथम द्रेष्काशा में हो तो अपना शुभ अशुभ फल दशा के आरम्भ में दूसरे द्रेष्कारा में हो तो दशा के मध्य में।।१२२।।

अन्ते फलं तृतीयस्थे व्यस्तं खेटे च वक्रिणि ।
इति ते कथिता विप्र दशाभेदा अनेकशः ।
यस्मै कस्मै न दातव्यं ज्ञानमेतत्सुदुर्लभम् ।।१२३।।

और तीसरे द्रेष्काण में हो तो दशा के अंत में अपने फल को देता है। यदि ग्रह वक्री हो तो इससे विपरीत फल देता है। हे विप्र: यह अनेक प्रकार के दशा के भेदों को कहा इस दुर्लभ ज्ञान को जिस किसी को नहीं देना चाहिये।।१२३।।

इति दशाभेदाध्यायः।

अथ दशाफलाध्यायः।

तत्रादौ विंशोत्तरीमतेन सूर्यमहादशाफलम् –

सूर्योत्कृष्टदशा करोति सुतधीप्रज्ञाधिकारोच्छ्रय-
ज्ञानार्थागमकीर्त्तिपौरुषसुखप्राप्तीश्वरानुग्रहात् ।

भानोः पापदशा करोति विफलोद्योगार्थह्वान्यामया-
त्राजक्षोभमहीशकोपजनकारिष्टाग्निवाधोदयात् ।।१।।

उत्तमवली सूर्य की दशा में पुत्र, बुद्धि, अधिकार, ऊचेंज्ञान, धन का लाभ, यश, पौरुष, सुख की प्राप्ति होती है। सूर्य की निकृष्ट दशा में उद्योग में विफलता, द्रव्य की हानि, व्याधि, राजा की अप्रसन्नता से कष्ट, अरिष्ट, अग्नि से भय होता है।।१।।

मूलत्रिकोणे स्वक्षेत्रं स्वोच्चे वापरमोच्चके ।
केन्द्रत्रिकोणलाभस्थे भाग्यकर्माधिपैर्युते ।।२।।

यदि सूर्य अपने मूलत्रिकोण राशि, स्वराशि, अपने उच्च वा परमोच्च में होकर केन्द्र वा त्रिकोण वा एकादश भाव में भाग्येश कर्मेश से युत हो।।२।।

बलं सूर्ये समायुक्ते निजवर्गे वलैर्युते ।
तस्मिन्दाये महासौख्यं धनलाभादिकं शुभम् ।।३।।

और अपने वर्ग में हो तो इसके दशा में अत्यंत सुख, धन का लाभ आदि शुभ फल होता है।।३।।

अत्यंतं राजसन्मानमश्वांदोल्यादिकं शुभम् ।
सुताधिप समायुक्ते पुत्रलाभं च विदंति ।।४।।

पंचमेश से युत हो तो राजा से सन्मान घोड़ा आदि सवारियों का सुख तथा पुत्र का लाभ होता है।।४।।

धनेशस्य च संबंधे गजांतैश्वर्यमादिशेत् ।
वाहनाधिप सम्बंधे वाहनत्रयलाभकृत् ।।५।।

धनेश से युत हो तो हाथी घोड़ा आदि ऐश्वर्य से संपन्न होता है। वाहनेश से युत हो तो वाहनों का लाभ होता है।।५।।

नृपालतुष्टिर्वित्ताढ्यः सेनाधीशः सुखीनरः ।
वस्त्रवाहनलाभश्च इतिदाये रवौवली ।।६।।

तथा राजा की प्रसन्नता से धनी, सेनाधीश और सुखी होता है।।६।।

नीचे षडष्टके रिष्फे दुर्बले पापसंयुते ।
राहु केतु समायुक्ते दुःस्थानाधिपसंयुते ।।७।।

यदि सूर्य अपने नीच राशि में ६, ८, १२ भाव में हो दुर्बल हो पापग्रह से युत हो वा राहु केतु से युत हो वा ६, ८, १२ वें भावों के स्वामी से युत हो तो।।७।।

तस्मिन्दाये महापीडा धनधान्य विनाशकृत् ।
राजकोपं प्रवासं च राजदंडाद्धनक्षयम् ।।८।।

उसकी दशा में महापीड़ा, धन, धान्यकी हानि राजकोप, विदेश यात्रा, राजदंड से धन की हानि।।८।।

ज्वरपीडा यशोहानिर्वन्धुमित्र विरोधकृत् ।
प्रवासं रोगविद्वेषं ह्यपमृत्युभयं भवेत् ।।९।।

ज्वर, यश की हानि, बन्धुओं मित्रों से विरोध, प्रवास, रोग, शत्रुता अकाल मृत्यु का भय।।९।।

चौराहिव्रणभीतिश्च ज्वरवाधा भविष्यति ।
पितृक्षयभय चैव गृहे त्वशुभमेव च ।।१०।।

चौर का भय, घोड़ा आदि का भय, पिता को अरिष्ट, चाचा आदि से मन में संताप, लोगों से द्वेष होता हैं।।१०।।

पितृवर्गे मनस्तापं जनद्वेषं च विंदति ।
शुभदृष्टि युते सूर्ये मध्ये तस्मिन्क्वचित्सुखम् ।
पापग्रहेण संदृष्टे वदेत्पापफलं नरः ।।११।।

सूर्य शुभ दृष्ट हो तो मध्य में शुभफल भी होता है और पापदृष्ट हो तो पापफल ही होता है।।११।।

इति रविदशाफलम्।

अथ चन्द्रदशाफलम् –

चन्द्रोत्कृष्टदशा करोति जननीश्रेयस्तडागादिकं
क्षेत्रारामगृहासनद्विजवरश्रीशोभनांदोलिका ।
इन्दोः पापदशान्नहीनकृपणानंतार्थनाशामय-
प्रज्ञाहीनजुगुप्सुमातुमरणक्षोभातिशीतज्वरान् ।।१२।।

चन्द्रमा के उत्तम दशा में माता का सुख, तालाब, खेत, बगीचा, गृह आसन, ब्राह्मण, लक्ष्मी, यश, सवारी का सुख होता है। चन्द्रमा के पापदशा में धन की क्षति, कृपण बुद्धि, धन की हानि, द्रव्य की हानि, माता को कष्ट, शीतज्वर से कष्ट होता है।।१२।।

स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे चैव केन्द्रेलाभत्रिकोणगे ।
शुभग्रहेण संयुक्ते वृद्धिचन्द्रेवलैर्युते ।।१३।।

यदि चन्द्रमा अपने उच्चराशि में होकर केन्द्र व त्रिकोण में हो शुभग्रह से युक्त शुक्लपक्षीय चन्द्र हो और वली हो।।१३।।

कर्मभाग्याधिपे चन्द्रेसुखेशेन वलैर्युते ।
आद्यन्तैश्चोरुभाग्येन धन धान्यादिलाभकृत् ।।१४।।

कर्मेश वा भाग्येश हो और बली चौथे भाव के स्वामी से युत हो तो प्रथम अवस्था और अन्तिम अवस्था में अत्यंत भाग्योदय, धन, का लाभ होता है।।१४।।

गृहे तु शुभकार्याणि वाहनं राजदर्शनम् ।
यत्नकार्यार्थसिद्धिःस्याद्गृहे लक्ष्मीकटाक्षकृत्।।१५।।

गृह में शुभकार्य होते हैं, वाहन का लाभ, राजा का दर्शन, यत्न, कार्य और धन की सिद्धि, गृह में लक्ष्मी की प्रसन्नता।।१५।।

मित्रप्रभुवशाद्भाग्यं राज्यलाभं महत्सुखम् ।
अश्वांदोल्यादिलाभं च श्वेतवस्त्रादिलाभकृत् ।।१६।।

मित्र और स्वामी के द्वारा भाग्योदय राज्यसुख का लाभ, अश्व, सवारी का लाभ, सफेदवस्त्र का लाभ।।१६।।

पुत्रलाभादिसंतोषं गृहगोधनसंकुलम् ।
धनस्थानगते चन्द्रे तुंगे स्वक्षेत्रगेऽपि वा ।।१७।।

पुत्रलाभ, गौओं की वृद्धि होती है। यदि चन्द्रमा अपने उच्च वा अपनी राशि का होकर दूसरे भाव में हो तो।।१७।।

अनेकधनलाभंच भाग्यवृद्धिर्महत्सुखम् ।
निक्षेपराजसन्मानं विद्यालाभं च विंदति ।।१८।।

अनेक प्रकार के धन का लाभ, भाग्योदय और अत्यंत सुख, राजा से सम्मान और विद्या का लाभ होता है।।१८।।

नीचे वा क्षीणचन्द्रे वा धनहानिर्भविष्यति ।
दुश्चिक्ये बलसंयुक्ते क्वचित्सौख्यं क्वचिद्धनम्।।१९।।
दुर्बले पापसंयुक्ते देहजाड्यं मनोरुजम् ।
भृत्यपीडा वित्तहानिर्मातृवर्गजनाद्वधः ।।२०।।

यदि चन्द्रमा नीच राशि में हो वा क्षीण हो तो धन की हानि होती है। यदि तीसरे स्थान में चन्द्रमा बली हो तो कभी सुख और कभी धन का लाभ होता है।।२०।।

षष्ठाष्ठमव्यये चन्द्रे दुर्बले पापसंयुते ।
राजद्वेषो मनोदुःखं धनधान्यादिनाशनम् ।।२१।।

यदि चन्द्रमा दुर्बल और पापयुक्त हो तो देह में जड़ता और मानसिक दुःख होता है। नौकर को कष्ट, धन की हानि, माता को कष्ट होता है।।२१।।

मातृक्लेशं मनस्तापं देहजाड्यं मनोरुजम् ।
दुःस्थे चन्द्रेवलैर्युक्ते क्वचिल्लाभं क्वाचित्सुखम्।।२२।।

यदि दुर्बल चन्द्रमा ६, ८, १२ भाव में पापयुक्त हो तो राजा से द्वेष, मानसिक दुःख, धन, धान्य का नाश।।२२।।

माता को कष्ट, मन में संताप, देह में जड़ता होती है। दुःस्थान में चन्द्रमा बली हो तो कभी लाभ और कभी सुख होता है।।२२।।

इति चन्द्रदशाफलम्।

अथ भौमदशाफलम्–

परमोच्चगते भौमे स्वोच्चे मूलत्रिकोणगे ।
स्वर्क्षे केन्द्रत्रिकोणे वा लाभे वा धनगेऽपि वा ।।२३।।

मंगल परमोच्च में वा उच्च में अथवा मूलत्रिकोण में वा अपनी राशि में होकर केन्द्र त्रिकोण में वा एकादश वा धन भाव में।।२३।।

सम्पूर्णबल संयुक्ते शुभदृष्टे शुभांशके ।
राज्यलाभं भूमिलाभं धनधान्यादिलाभकृत् ।।२४।।

पूर्ण बली हो शुभग्रह से युत दृष्ट हो और शुभग्रह के नवांश में हो तो राज्य लाभ, भुमि लाभ, धन, धान्यादि का लाभ होता है।।२४।।

आधिक्यं राजसन्मानं वाहनाम्बरभूषणम् ।
विदेशे स्थानलाभं च सोदराणां सुखं लभेत् ।।२५।।

राजसन्मान में वृद्धि, वाहन, वस्त्र, आभूषण का लाभ होता है। विदेश में स्थान का लाभ और भाइयों से सुख होता है।।२५।।

केन्द्रं गते सदा भौमे दुश्चिक्ये बलसंयुते ।
पराक्रमाद्वित्तलाभो युद्धे शत्रुक्षयो भवेत् ।।२६।।

यदि बली भौम केन्द्र में वा तीसरे भाव में हो तो पराक्रम से धन का लाभ और युद्ध में विजय होती है शत्रुओं का नाश होता है।।२६।।

कलत्रपुत्रविभवं राजसन्मानमेव च ।
दशादौ सुखमाप्नोति दशांते कष्टमादिशेत् ।।२७।।

स्त्री, पुत्र, धन का लाभ, राजा से सम्मान की प्राप्ति होती है। दशा के आदि में सुख का लाभ और दशा के अंत में कष्ट होता है।।२७।।

नीचादिदुःस्थगे भौमे शुभवलविवर्जिते ।
पापयुक्ते पापदृष्टे सा दशा नेष्टदायिका ।।२८।।

मंगल नीच में दुष्टस्थान (६, ८, १२) में हो शुभग्रह के सम्पर्क से रहित हो, पापयुक्त, पाप दृष्ट हो तो भौम की दशा कष्टप्रद होती है।।२८।।

इतिभौमदशाफलम्।

अथ राहुदशाफलम् –

राहोश्च वृषभं केतोर्वृश्चिकं तुङ्गसंज्ञकम् ।
मूलत्रिकोण कर्कं च युग्मचापं तथैव च ।।२९।।

राहु का वृष और केतु का वृश्चिक राशि उच्च राशि है। राहु का कर्क और केतु का मिथुन धन राशि मूल त्रिकोण है।।२९।।

कन्या च स्वगृहं प्रोक्तं मीनं च स्वगृहंस्मृतम् ।
तद्दाये बहुसौख्यं च धनधान्यादिसम्पदाम् ।।३०।।

राहु का कन्या और केतु का मीन स्वराशि है। स्वगृहादि में स्थित राहु की दशा में अनेक सुख, धन, धान्य आदि संपत्ति का लाभ होता है।।३०।।

मित्रप्रभुवशादिष्टं वाहनं पुत्रसम्भवः ।
नूतनगृहनिर्माणं धर्मचिन्ता महोत्सवः ।।३१।।

मित्र और स्वामी से इष्ट सिद्धि, वाहन का सुख पुत्र का लाभ, नये नये मकान का निर्माण, धार्मिक कार्य होता है।।३१।।

विदेशे राजसन्मानं वस्त्रालंकार भूषणम् ।
शुभयुक्ते शुभैर्दृष्टे योगकारकसंयुते ।।३२।।

विदेश यात्रा और राजा से सम्मान की प्राप्ति वस्त्र आभूषण का लाभ।।३२।।

केन्द्रत्रिकोणलाभे वा दुश्चिक्ये शुभराशिगे ।
महाराजप्रसादेन सर्वसम्पत्सुखावहम् ।।३३।।

यदि राहु शुभग्रह से देखा जाता हो वा शुभयुक्त हो योग कारक ग्रह से देख जाता हो केन्द्र त्रिकोण में वा क्रूर भाव में हो तो राजा की कृपा से सभी प्रकार के सुखों की प्राप्ति।।३३।।

यवनप्रभुसन्मानं गृहे कल्याणसम्भवम् ।
रन्ध्रे वा व्ययगे राहौ तद्दाये कष्टमालभेत् ।।३४।।

म्लेक्ष राजा से सम्मान और गृह में सुख का प्रादुर्भाव होता है। यदि राहु आठवें वा बारहवें भाव में हो तो उसके दशा में कष्ट की प्राप्ति होती है।।३४।।

पापग्रहेण सम्बन्धे मारकग्रह संयुते ।
नीचराशिगते वापि स्थानभ्रंशं मनोरुजम् ।।३५।।

पापग्रह से सम्बंध करता हो और मारकेश से युक्त हो वा नीचाशि में गया हो तो स्थान भ्रष्ट और मानसिक कष्ट होता है।।३५।।

विनश्येद्दारपुत्राणां कुत्सितानां च भोजनम् ।
दशादौ देहपीडा च धनधान्य परिच्युतिः ।।३६।।

स्त्री पुत्र के सुख की हानि, खराब भोजन मिलता है। दशा के आरम्भ में शरीर में पीड़ा, धन, धान्य की हानि।।३६।।

दशामध्ये च सौख्यं स्यात्स्वदेशे धनलाभकृत् ।
दशान्ते कष्टमाप्रोति स्थानभ्रंशो मनोव्यथा ।।३७।।

दशा के मध्य में सुख और स्वेदश में धन का लाभ होता है। दशा के अन्त में कष्ट, स्थानच्युति और मानसिक कष्ट होता है।।३७।।

इति राहुदशाफलम्।

अथ गुरुदशाफलम् –

स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे जीवे केन्द्रे लाभत्रिकोणगे ।
मूलत्रिकोणलाभे वा तुङ्गांशे स्वांशगेऽपि वा ।।३८।।

यदि गुरु अपने उच्चराशि में, अपने राशि में केन्द्र, लाभ वा त्रिकोण में, अपने मूलत्रिकोण राशि में, उच्चांश में वा अपने नवांश में हो।।३८।।

राज्यलाभं महत्सौख्यं राजसन्मानकीर्तनम् ।
गजवाजिसमायुक्तं देवब्राह्मणपूजनम् ।।३९।।

तो उसकी दशा में राज्य का लाभ, सुख, राजा से सम्मान और कीर्ति हाथी घोड़े का सुख, देवता ब्राह्मण का पूजन।।३९।।

दारपुत्रादि सौख्यं च वाहनाम्बरलाभदम् ।
यज्ञादिकर्मसिद्धिः स्याद्वेदान्तश्रवणादिकम् ।।४०।।

यज्ञ आदि कार्यों की सिद्धि, वेदादि का श्रवण कीर्त्तन।।४०।।

महाराज प्रसादेन इष्टसिद्धिः सुखावहा ।
आंदोलिकादिलाभश्च कल्याणं च महत्सुखम् ।।४१।।

राजा की प्रसन्नता से इष्ट सिद्धि और सुख का लाभ, सवारी का लाभ कल्याण और सुख।।४१।।

पुत्रदारादिलाभश्च अन्नदानं महत्प्रियम् ।
नीचास्तपापसंयुक्ते जावे रिष्फाष्टसंयुते ।।४२।।

पुत्र स्त्री का लाभ और अन्नदान आदि कर्म होते हैं। यदि गुरु नीच राशि में, अस्तंगत, पापयुक्त और ६, ८, १२ भाव में हो तो।।४२।।

स्थानभ्रंश मनस्तापं पुत्रपीडा महद्भयम् ।
पश्वादिधनहानिश्च तीर्थयात्रादिकं लभेत् ।।४३।।

स्थान भ्रष्ट, मन में संताप, पुत्र को पीडा, भय, पशु आदि की हानि तीर्थयात्रा आदि होती है।।४३।।

आदौ कष्टफलं चैव चतुष्पाज्जीव लाभकृत् ।
मध्यान्ते सुखमाप्नोति राजसन्मान वैभवम् ।।४४।।

दशा के आदि में कष्ट चतुष्पद आदि का लाभ, और मध्य तथा अंत्य में सुख राजा से सन्मान की प्राप्ति होती है।।४४।।

इति गुरुदशाफलम्।

अथ शनिदशाफलम् –

स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे मन्दे मित्रक्षेत्रेऽथवा यदि ।
मूलत्रिकोणे भाग्ये वा तुङ्गांशेस्वांशगेऽपिवा ।।४५।।

यदि शनि अपनी उच्च राशि, अपनी राशि, मित्र की राशि, अपनी मूलत्रिकोण राशि, भाग्यभाव, अपने उच्चांश में, अपने नवांश में।।४५।।

दुश्चिक्ये लाभगे चैव राजसन्मानवैभवम् ।
सत्कीर्त्तिर्धनंलाभश्च विद्यावादविनोदकृत् ।।४६।।

तीसरे वा लाभ भाव में हो तो राजा से सम्मान और वैभव का लाभ, कीर्त्ति, धन का लाभ, विद्या का विनोद।।४६।।

महाराजप्रसादेन गजवाहनभूषणम् ।
राजयोगं प्रकुर्वीत सेनाधीशान्महत्सुखम् ।।४७।।

राजा की प्रसन्नता से हाथी आदि वाहन का सुख, आभूषण का लाभ, राजयोग, सेनाधीश होने से सुख।।४७।।

लक्ष्मीकटाक्षचिन्हानि राज्यलाभं करोति च ।
गृहे कल्याणसम्पत्तिर्दारपुत्रादिलाभकृत् ।।४८।।

लक्ष्मी की प्रसन्नता से राज का लाभ, गृह में कल्याण, सम्पत्ति का लाभ, स्त्री पुत्रादि का सुख होता है।।४८।।

षष्ठाष्टमव्यये मंदे नीचेवास्तङ्गतेऽपि वा ।
विषशस्त्रादिपीडा च स्थानभ्रंशं महद्भयम् ।।४९।।

यदि शनि ६, ८, १२ भाव में हो नीच राशि में वा अस्तंगत हो तो विष, शस्त्र आदि से पीड़ा होती है, स्थानच्युति और भय होता है।।४९।।

पितृमातृवियोगं च दारपुत्रादिपीडनम् ।
राजवैषम्य कार्याणि ह्यनिष्टं बंधनं तथा ।।५०।।

पिता माता से वियोग, स्त्री पुत्र आदि को पीडा, राज के विलोम कार्य अनिष्ट और बंधन होता है।।५०।।

शुभयुक्तेक्षिते मंदे योगकारक संयुते ।
केन्द्रत्रिकोणलाभे वा मीनगे कार्मुके शनौ ।।५१।।

शनि शुभग्रह से युत हो केन्द्र त्रिकोण वा लाभ भाव में हो मीन वा धन राशि में हो तो।।५१।।

राज्यलाभं महोत्साहं गजाश्वाम्बरसंकुलम् ।।५२।।

राज्य लाभ, उत्साह हाथी तथा प्रभूत वस्त्रादि का लाभ होता है।।५२।।

इति शनिदशाफलम्।

अथ बुधदशाफलम् –

स्वोच्चे स्वक्षेत्रसंयुक्ते केन्द्रलाभत्रिकोणगे ।
मित्रक्षेत्रसमायुक्ते सौम्यदाये महत्सुखम् ।।५३।।

बुद्ध अपनी उच्चराशि अपनी राशि में हो, केतु त्रिकोण में, मित्र की राशि में हो तो इसकी दशा में अत्यन्त सुख।।५३।।

धनधान्यादिलाभश्च सत्कीर्त्तिधनसम्पदाम् ।
ज्ञानाधिक्यं नृपप्रीति सत्कर्मगुणवर्धनम् ।।५४।।

धन, धान्य आदि का लाभ, कीर्त्ति, धन सम्पत्ति की वृद्धि, ज्ञान की वृद्धि, राजा से प्रीति, अच्छे कर्म और गुण में वृद्धि।।५४।।

पुत्रदारादिसौख्यंच देहारोग्यं महत्सुखम् ।
क्षीरेण भोजनं सौख्यं व्यापारेण धनागमम् ।।५५।।

पुत्र-स्त्री का सुख, शरीर की आरोग्यता, सुख, दूध का भोजन, सुख व्यापार से लाभ होता है।।५५।।

शुभदृष्टियुते सौम्ये भाग्ये कर्माधिपे यदा ।
आधिपत्ये बलवती सम्पूर्ण फलदायिका ।।५६।।

बुध शुभग्रह से दृष्ट युत हो, भाग्य स्थान में हो, कर्मेश हो तो प्रवेक्ति सभी फल सम्पूर्ण होते हैं।।५६।।

पापग्रहयुतेदृष्टे राजद्वेषं मनोरुजम् ।
वन्धुजन विरोधं च विदेशगमनं तथा ।।५७।।

बुध पापग्रह से युत दृष्ट हो तो राजा से द्वेष, मानसिक कष्ट, बन्धुओं से विरोध, विदेशयात्रा।।५७।।

परप्रेष्यं च कलहं मूत्रकृच्छ्रान्महद्भयम् ।
षष्ठाष्टमव्यये सौम्ये लाभभोगविनाशनम् ।।५८।।

दूसरे की दासता, कलह मूत्रकृच्छ्र (सुजाक) का भय होता है। ३, ८, १२ भाव में बुध हो तो लाभ आदि की हानि होती है।।५८।।

वातपीडां धनं चैव पाण्डुरोगं तथैव च ।
नृपचौराग्निभीतिंच कृषिगोभूमिनाशनम् ।।५९।।

वात पीडा, पाण्डुरोग, राजा, चोर से भय, कृषि, गौ तथा भूमि की हानि होती है।।५९।।

दशादौ धनधान्यं च विद्यालाभं महत्सुखम् ।
पुत्रकल्याणसम्पत्तिः सन्मार्गे धनलाभकृत् ।
मध्ये नरेन्द्रसन्मानंमंते दुःखं भविष्यति ।।६०।।

दशा के आदि में धन, धान्य, विद्या का लाभ और सुख होता है। पुत्र प्राप्ति होती है सन्मार्ग में धन का व्यय होता है। मध्य में राजा से सन्मान का लाभ और अंत में दुःख होता है।।६०।।

इति बुधदशाफलम्।

अथ केतुदशाफलम् –

केन्द्रलाभत्रिकोणे वा शुभराशौ शुभेक्षिते ।
स्वोच्चे वा शुभवर्गे वा राजप्रीतिंमनोत्साहम् ।।६१।।

केतु केन्द्र, लाभ, त्रिकोण में हो वा शुभ ग्रह की राशि में शुभ दृष्ट से अथवा अपने उच्च राशि में वा शुभ ग्रह के वर्ग में हो तो उसकी दशा में राजा से प्रेम, मन में उत्साह।।६१।।

देशग्रामाधिपत्यं च वाहनं पुत्रसम्भवम् ।
देशान्तरेप्रयाणं च अन्यदेशे सुखावहम् ।।६२।।

देश ग्राम का आधिपत्य, वाहन, और पुत्र का लाभ, देशान्तर की यात्रा और वहाँ सुख का लाभ।।६२।।

पुत्रदारसुखंचैव चतुष्पाज्जीवलाभकृत् ।
दुश्चिक्ये षष्ठलाभे वा केतोर्दाये सुखंभवेत् ।।६३।।

पुत्र-स्त्री का सुख, चतुष्पद का सुख होता है। ३, ६, ११ भाव में केतु हो तो इसकी दशा में सुख होता है।।६३।।

राज्यं करोति मित्रांशे गजवाजिसमन्वितम् ।
दशादौ राजयोगाश्च दशामध्ये महद्भयम् ।।६४।।

मित्र के अंश में हो तो राज्य का लाभ और हाथी घोड़े से युक्त होता है। दशा के आरम्भ में राजयोग का सुख, मध्य में बड़ा भय।।६४।।

अंते दूराटनं चैव देहविश्रवणं तथा ।
धने रंध्रेव्यये केतौ पापदृष्टियुतेक्षिते ।।६५।।

और अंत में दूरयात्रा देह पीडा यदि केतु २, ८, १२ भाव हो तो और पापग्रह से दृष्टयुत हो तो।।६५।।

निगडं बन्धुनाशं च स्थानभ्रंशं मनोरुजम् ।
शूद्रक्षूद्रादिलाभं च नानारोगाकुलं भवेत् ।।६६।।

बन्धन, बन्धुओं की हानि, स्थानच्युति और मानसिक कष्ट होता है। शुद्र द्वारा क्षुद्र लाभ और अनेक रोग से मनुष्य भ्यग्र होता है।।६६।।

इति केतुदशाफलम्।

अथ शुक्रदशाफलम्।

परमोच्चगतै शुक्रे स्वोच्चे स्वक्षेत्रकेन्द्रगे ।
नृयाभिषेक सम्प्राप्तिर्वाहनाम्वरभूषणम् ।।६७।।

शक्र परमोच्च में वा उच्च में वा अपने राशि में केन्द्र में हो तो इसकी दशा में राज्याभिषेक का लाभ, वाहन, वस्त्र और आभूषण का लाभ।।६७।।

गजाश्वपशुलाभं च नित्यं मिष्ठान्नभोजनम् ।
अखंडमंडलाधीशराजसन्मानवैभवम् ।।६८।।

हाथी घोड़े का लाभ, नित्य मिष्टान्न भोजन, अखंड राज्य का लाभ, राजसम्मान और वैभव का लाभ।।६८।।

मृदङ्गवाद्ययोगं च गृहेलक्ष्मीकटाक्षकृत् ।
त्रिकोणस्थे मीन शुक्रे राज्वार्थगृहसम्पदः ।।६९।।

मृदङ्ग आदि बाजा का सुख, गृह में लक्ष्मी का वास होता है यदि मीन राशि में शुक्र त्रिकोण में हो तो राज्य धन, गृह, संपत्ति।।६९।।

विवाहोत्सवकार्याणि पुत्रकल्याणवैभवम् ।
सेनाधिपत्यं कुरुते इष्टवन्धु समागमम् ।।७०।।

विवाहादि उत्सव, पुत्र प्राप्ति, सेनाधिपत्य और मित्र, बन्धुओं का समागम।।७०।।

नष्टराज्याद्धनप्राप्तिर्गृहे गोधनसंग्रहम् ।
षष्ठाष्टमव्यये शुक्रे नीचे वा व्ययराशिगे ।।७१।।

और नष्ट राज्य से धन का लाभ और गोधन से सुख होता है। ६।८।१२ भाव में अथवा अपने नीच राशि में वा बारहें भाव में शुक हो तो।।७१।।

आत्मवन्धुजनद्वेषं दाश्वर्गादिपीडनम् ।
व्यवसायात्फलं नष्टं गोमहिष्यादि हानिकृत् ।।७२।।

उसकी दशा में अपने बन्धुओं से द्वेष स्त्री वर्ग से पीड़ा, व्यवसाय में हानि, गौ, भैंस आदि को पीड़ा।।७२।।

दारपुत्रादिपीडा वा आत्मवन्धु वियोगकृत् ।
भाग्यकर्माधिपत्येन लग्नवाहनराशिगे ।।७३।।

स्त्री पुत्रादि को कष्ट और आत्मीय लोगों से वियोग होता है। शुक्र भाग्येश वा कर्मेश होकर लग्न वा चतुर्थ स्थान में हो तो।।७३।।

तद्दशायां महत्सौख्यं देशग्रामाधिपत्यताम् ।
देवालयतडागादि पुण्यकर्मसु संग्रहम् ।।७४।।

उसकी दशा में बहुत ही सुख, देश वा ग्राम का आधिपत्य, देवालय तालाब आदि पुण्य कार्य होते हैं।।७४।।

अन्नदाने महत्सौख्यं नित्यं मिष्ठान्नभोजनम् ।
उत्साहः कीर्त्तिसम्पत्ती स्त्रीपुत्रधनसंपदः ।।७५।।

अन्नदान, सुख, नित्य मिष्ठान्न का भोजन, उत्साह, कीर्त्ति में वृद्धि, संपत्ति, स्त्री, पुत्र धन का लाभ होता है।।७५।।

स्वभुक्तौ फलमेवं स्याद्बलान्यानि भुक्तिषु ।
द्वितीयद्यूननाथेतु देहपीडा भविष्यति ।।७६।।

इसी प्रकार अपने अन्तर में भी फल को देता है। शुक्र दूसरे, सातवें भाव का स्वामी हो तो शरीर में पीड़ा होती है।।७६।।

तद्दोष परिहारार्थं रुद्रं वा त्र्यम्वकं जपेत् ।
श्वेतां गां महिषष्टीं दद्यादारोग्यं च भविष्यति ।।७७।।

इस दोष के शान्त्यर्थ रुद्राभिषेक वा त्र्यम्बक मन्त्र का जप कराने से रोगादि निवृत्त हो जाते है।।७७।।

लग्नेशस्य दशा वलं वहुधनं वित्तेशितुः
पंचतां कष्टं वेति सहोदरालयपतेः पापंफलं प्रावशः ।
तुर्यस्वामिनि आलयं किल सुज्ञाधीशस्य विद्यासुखं-
रोगागारपतेररातिजभयं जायापतेः शोकताम् ।।७८।।

लग्नेश की दशा में बल पौरुष की वृद्धि, धन का लाभ होता है, धनेश की दशा में मृत्यु अथवा कष्ट, तृतीयेश की दशा में प्रायः कष्ट ही होता है। सुखेश की दशा में गृह सुख, सुतेश की दशा में विद्या का लाभ। षष्ठेश की दशा में शत्रुभय, सप्तमेश की दशा में शोक।।७८।।

मृत्युं मृत्युपतेः करोति नियतं धर्मेशितुः सत्क्रियाम्-
वित्तं राजपतेर्नृपाश्रयमथोलाभं हिलाभेशितुः ।
रोगं द्रव्यविनाशनं च वहुधा कष्टं व्ययेशस्य
वै-पूर्वैरङ्गभृतामुदीरितमिदं तन्वादिभावेशजम् ।।७९।।

अष्टमेश की दशा में राजा के आश्रय से धन का लाभ, लाभेश की दशा में लाभ और व्ययेश की दशा में रोग द्रव्य की हानि और अनेक कष्ट होते हैं।।७९।।

भावाधिपो बलयुतो निजगेहगामी
तुङ्गत्रिकोण शुभवर्गगतोऽपिपूर्णम् ।

जंतोः फलं खलु करोति

यदारिनीचस्थानस्थितोऽशुभफलं विबलो विशेषात्।।८०।।

यदि भावेश वली हो अपने गृह वा उच्च वा मूलत्रिकोण में वा शुभग्रह के वर्ग में हो तो पूर्ण फल देता है। यदि शत्रुगृह, नीचराशि में हो तो अशुभ फल करता है।।८०।।

आहुः शुभाशुभफलं नृणां कालविदोजनाः ।

एतद्बलं विनिर्णीतमायुषां निश्चयो नृणाम् ।।८१।।

शुभग्रह यदि शुभद है तो शुभ फल देता है इस प्रकार दशा के वश आयु का निर्णय करना चाहिये।।८१।।

पंचमेशयुतस्यापि धर्मेशस्य दशातुया ।

अतीव शुभदा प्रोक्ता कालविद्भिर्मुनीश्वरैः ।।८२।।

स पंचमेशस्य तपोधिपस्य दशा भवेद्राज्यसुखार्थलाभदा ।

तथैव मानाधिपसंयुतस्य सुतेश्वरस्यापि दशाशुभास्यात् ।।८३।।

पंचमेश से युक्त धर्मेश की दशा अत्यंत शुभद होती है। पंचमेश से युक्त धर्मेश की दशा राज्य, सुख, धन का लाभ करती है। उसी प्रकार कर्मेश से युत पंचमेश की दशा भी शुभद होती है।।८३।।

षष्ठाष्टमव्ययाधीशाः पंचमाधिप संयुताः ।

तेषां दशा च शुभदा प्रोच्यते कालवित्तमैः ।।८४।।

६।८।१२ भाव के स्वामी पंचमेश से युत हों तो उनकी दशा शुभद होती है।।८४।।

सुखेशो मानभावस्थो मानेशो सुखराशिगः ।

तयोर्दशां शुभां प्राहुर्ज्योतिः शास्त्रविदोजनाः ।।८५।।

सुखेश दशम भाव में हो और कर्मेश चौथे भाव में हो तो दोनों दशा शुभद होती है।।८५।।

सुतेशमानेशसुखेशधर्मपा एकत्र युक्ता यदियत्रकुत्र ।

तेषां दशा राज्यफलप्रदा वै तैर्युक्तग्रहाणामपिवै वदेत्तथा ।।८६।।

पंचमेश, कर्मेश, सुखेश, धर्मेश एक ही भाव में हो तो इनकी दशा राज्य देने वाली होती है।।८६।।

वाहन स्थान संयुक्त मंत्रनाथदशा शुभा ।

सुखराशिस्थकर्मेशदशा राज्यप्रदायिनी ।।८७।।

चौथे भाव में स्थित पंचमेश की दशा शुभद होती है। चौथे भाव में बैठे हुये कर्मेश की दशा राज्यदायिनी होती है।।८७।।

ताभ्यां युक्तस्य खेटस्य दृष्टियुक्तस्य चैतयोः ।
राज्यप्रदां दशां प्राहुर्विद्वांसो दैवचिन्तकाः ।।८८।।

इन दोनों से युक्त वा दृष्ट ग्रह की दशा भी राज्यदायिनी होती है।।८८।।

कर्मस्थानस्थ बुद्धीशदशा सम्पत्करी भवेत् ।
मानस्ति तपोधीश दशा राज्यप्रदायिनी ।।८९।।

कर्म भाव में बैठे हुये पंचमेश की दशा सम्पत्ति देने वाली होती है। दशमस्थित धर्मेश की दशा राज्य देने वाली होती है।।८९।।

यस्माद्व्ययगतोयस्तु तद्दशायां धनक्षयम् ।
यस्मात्त्रिकोणगा पापातत्रात्मशमनाशनम् ।।९०।।

जिससे (भाव से) जो बारह स्थान में हो उसके दशा में धन की हानि होती है। जिससे त्रिकोण स्थान में पापग्रह हों उसकी दशा में आत्मीय पुरुषार्थ का नाश।।९०।।

पुत्रहानिः पितुः पीडा मनस्तापो महान्भवेत् ।
यस्मात्त्रिकोणगाः रिःफरन्ध्रेशार्केन्दुसूर्यजाः ।।९१।।

पुत्र की हानि, पिता को पीड़ा, मन को संताप होता है जिससे त्रिकोण में अष्टमेश, व्ययेश और सूर्य चन्द्रमा शनि हों।।९१।।

पुत्रपीडा द्रव्यहानिस्तत्र केत्वहि संगमे ।
विदेशभ्रमणं क्लेशो भयं चैव पदे पदे ।।९२।।

तो विदेश की यात्रा तथा क्लेश और केतु राहु युत हों तो पद पद पर भय होता है।।९२।।

यस्मात्षष्ठाष्टमे क्रूरनीचखेटाश्च संस्थिताः ।
रोगशत्रुनृपाद्वास्यान्मुहुः पीडासुदुःसहा ।।९३।।

जिससे ३।८ भाव में क्रूरग्रह हो नीच आदि स्थानगत ग्रह हो तो उसकी दशा में रोग, शत्रु, राज से दुःसह पीड़ा होती है।।९३।।

यस्माच्चतुर्थगः क्रूरः स्याद्भूगृहक्षेत्रनाशनम् ।
पशुहानिस्तत्र भौमे गृहदाहप्रमादतः ।।९४।।

जिससे चौथे भाव में क्रूरग्रह हो तो उसकी दशा में भूमि, गृह, खेत का नाश

होता है और पशु की हानि होती है। यदि भौम हो तो प्रमाद से घर जल जाता है।।९४।।

शनौ हृदयशूत्वं स्यात्सूर्ये राजप्रकोपनम्।
सर्वस्वहरणं राहौ विषचौरादिजंभयम्।।९५।।

चौथे शनि हो तो हृदय में शूल होता है। सूर्य हो तो राजा के कोप से सर्वस्व नाश और राहु हो तो विष तथा चोर से भय होता है।।९५।।

यस्माद्दशमभे राहुः पुण्यतीर्थाटनं भवेत्।
यस्मात्कर्मायभाग्यर्क्षगताः शोभनखेचराः।।९६।।

जिससे १० वें स्थान में राहु हो तो उसकी दशा में पुण्यतीर्थों का भ्रमण होता है। जिससे १०, ११, ९ स्थान में शुभ ग्रह गये हों उसकी दशा में।।९६।।

विद्यार्थधर्मसत्कर्मख्यातिपौरूषसिद्धयः।
यतः पंचमकामारिगताः स्वोच्चे शुभग्रहाः।।९७।।

विद्या, धन, धर्म और सत्कर्म तथा पुरुषार्थ की सिद्धि होती है जिससे ५।७।६ स्थान में अपने उच्चराशि में शुभग्रह गये हों।।९७।।

पुत्रदारादि संप्रातिर्नृपपूजा महत्तरा।
यस्मिन्विद्यायकर्माम्बुनवलग्नाधिपाः स्थिताः।।९८।।

तो उसकी दशा में पुत्र, स्त्री आदि का लाभ और राज्य से पूजित होता है।।९८।।

तत्तद्भावार्थसिद्धिः स्याच्छ्रेयो योगानुसारतः।
यस्मिन् गुरुर्वा शुक्रो वा शुभेशोवापिसंस्थितः।।९९।।

जिन-जिन भावों में ५।११।१०।४।९ और लग्न के स्वामी बैठे हों। उन-उन भावों के फल में पुष्टता होती है तथा योगानुसार विशेष फल भी होता है।।९९।।

कल्याणोत्सवसम्पत्तिर्देवब्राह्मणपूजनम्।
यच्चतुर्थे तुङ्गखेटाः शुभस्वामी ग्रहश्च वा।।१००।।

जिस भाव में गुरु वा शुक्र वा ९ भाव के स्वामी बैठे हों तो उसकी दशा में कल्याण, उत्सव, सम्पत्ति, देवता और ब्राह्मण का पूजन होता है। जिससे चौथे भाव में कोई उच्चराशि का ग्रह हो वा शुभ ग्रह हो तो उसकी दशा में।।१००।।

वाहनग्रामलाभश्च पशुवृद्धिश्च भूयसी।
तत्र चन्द्रेष्टलाभः स्याद्बहुधान्यरसान्युतः।।१०१।।

वाहन, ग्राम का लाभ और पशुओं की वृद्धि होती है। यदि चन्द्रमा हो तो इष्ट की सिद्धि और रसयुक्त धान्य का लाभ होता है।।१०१।।

पूर्णेविधौ निधिप्राप्तिर्लभेद्वा मणिसंचयम् ।
तत्र शुक्रे मृदङ्गादि वाद्यमान पुरष्कृतः ।।१०२।।

यदि चन्द्रमा पूर्ण हो तो निधि (गड़े हुये धन) का नाश वा मणि का लाभ होता है। यदि शुक्र हो तो मृदङ्ग आदि बाजे का लाभ और मानपत्र से पुरस्कृत होता है।।१०२।।

आंदोलिकाप्तिर्जीवे तु कनकांदोलिकाध्रुवम् ।
लग्नकर्मेशभाग्येश तुंङ्गस्थ शुभयोगतः ।।१०३।।

गुरु हो तो सुवर्ण की पालकी का लाभ होता है। लग्नेश कर्मेश भाग्येश यदि अपने उच्च राशि में हो तो शुभ योग होता है।।१०३।।

सर्वोत्कर्षमहैश्वर्यसाम्राज्यादि महत्फलम् ।
एवं तत्तद्भावबलदायफलं यत्स्याद्विचिंतयेत् ।।
एकैवोडुदशा स्वीया गुणैरष्टादशात्मना ।
भिन्ना फलविपाकस्तु कुर्याद्वैचित्रसंयुतम् ।।१०४।।

इसमें सभी प्रकार की उन्नति, ऐश्वर्य राज्य आदि का लाभ होता है। इसी प्रकार से सभी भावों से फल का विचार करना चाहिये। एक एक राशि को वा ग्रह की दशा अपने १८ गुणों से भिन्न भिन्न फलों को देने वाली होती है।।१०४।।

परमोच्चे तुङ्गमात्रे तदर्वाक्तदुपर्यपि ।
मूलत्रिकोणभे स्वर्क्षे स्वाधिमित्रग्रहस्यभे ।।१०५।।

वे १८ गुण इस प्रकार हैं— परमोच्च केवल उच्च में, इसके पूर्व या आगे, मूलत्रिकोण, स्वराशि अधिमित्र की राशि।।१०५।।

तत्कालसुहृदो गेहे उदासीनस्य भे तथा ।
शत्रोर्भेऽधिरिपोर्भे च नीचान्तादूर्ध्व देशभे ।।१०६।।

तात्कालिक मित्रराशि, सम की राशि शत्रु की राशि, अधिशत्रु की राशि, नीचराशि या उससे पूर्व या आगे।।१०६।।

तस्मादर्वाङ् नीचमात्रे नीचान्ते परमांशके ।
नीचारिवर्गे सखले स्ववर्गे केन्द्रकोणभे ।।१०७।।

नीच परमनीच में, नीच वा शत्रुवर्ग में, पापयुक्त, अपने वर्ग में, केन्द्रकोण में।।१०७।।

व्यवस्थितस्य खेटस्य समरे पीडितस्य च ।
गाढ़मूढ़स्य च दशापचिति स्वगुणैः फलम् ।।१०८।।

युद्ध में पीडित, परमअस्त में गये हुये ग्रहों की दशा अपने गुण के अनुसार फलदायक होती है।।१०८।।

परमोच्चगतो यस्तु योऽतिवीर्यचरित्रवान् ।
सम्पूर्णाख्या च तद्दशा राज्यभोग्यशुभप्रदा ।।१०९।।

जो ग्रह परमोच्च में हो और अत्यंत बली हो उसकी दशा को सम्पूर्ण कहते हैं, उसकी दशा में राज्य का सुख और शुभफल होते हैं।।१०९।।

लक्ष्मीकटाक्षचिन्हानां चिदावासगृहप्रदा ।
तुङ्गमात्रगतस्यापि तथा वीर्याधिकस्य च ।।११०।।

और लक्ष्मी की कृपा होती है तथा गृह की प्राप्ति होती है। जो केवल उच्चराशि में हो और अधिक बली हो।।११०।।

पूर्णाख्या बहुधैश्वर्यदान्यपि रुजप्रदा ।
अतिनीचगतस्यापि दुर्बलस्य ग्रहस्य तु ।।१११।।

उसकी दशा को पूर्णा कहते हैं, वह ऐश्वर्य को देने वाली होते हुये भी रोगप्रद होती है। अस्तंगत नीच में गये हुये दुर्बलग्रह की दशा को।।१११।।

रिक्तासानिष्टफलदा व्याध्यनर्थमृतिप्रदा ।
अत्युच्चेऽप्यतिनीचगे मध्यगस्यावरोहिणी ।।११२।।

रिक्ता कहते हैं इस दशा में अनिष्ट फल, व्याधि, अनेक अनर्थ होते हैं। अत्यंत उच्च और अत्यंत नीच के मध्य में गये हुये ग्रह की दशा को अवरोहिणी कहते हैं।।११२।।

मित्रोच्चभावप्राप्तस्य मध्याख्याह्यर्थदा दशा ।
नीचान्तादुच्चभागान्तं भषट्के मध्यमस्य च ।।११३।।

जो ग्रह मित्र की राशि या उच्चराशि में हो उसकी दशा का नाम मध्या होता है वह ध्यान देने वाली होती है। नीचे से उच्च तक ६ राशि के मध्य में रहने वाले ग्रह की।।११३।।

दशाचारोहिणी नीचरिपुभांशगतस्य च ।
अधमाख्या भयक्लेश व्याधिदुःखविवर्धिनी ।।११४।।

तथा दशा आरोहिणी कहते हैं, नीच शत्रु की राशि या नवांशगत ग्रह ग्रह की दशा को अधम दशा कहते हैं यह दशा भय, कष्ट व्याधि दु:ख को बढ़ाने वाली होती है।।११४।।

नामानुरुपफलदाः पाककाले दशाक्रमात् ।
भाग्येशगुरुसम्बन्धो योगदृक्केन्द्रभादिभिः ।।११५।।

अपने-अपने नाम के अनुरूप ही अपने-अपने दशा का फल होता है। यदि अन्य ग्रह के साथ भाग्येश, गुरु का योग, दृष्टि, केन्द्र आदि में कोई सम्बन्ध होता है।।११५।।

परेषामपि दायेषु भाग्योपक्रममुन्नयेत् ।
जातको यस्तु फलदो भाग्यप्रदोऽथ यः ।।११६।।

तो उस ग्रह की दशा में भी भाग्य वृद्धि होती है। जन्म समय भाग्योदय आदि फल देने वाला ग्रह हो।।११६।।

सफलो वक्रिमादूर्ध्वमन्यानपि च खेचरात् ।
दुर्वला न समर्थाश्च फलदानेषु योगतः ।।११७।।

वह वक्रगति को छोड़ने के बाद फलप्रंद होता है। इसी प्रकार जो दुर्बल और असमर्थ है वह भी योग होने से फल देने में समर्थ हो जाता है।।११७।।

तारतम्यात्सुसम्बन्धा दशा ह्येताः फलप्रदाः ।
स्वकेन्द्रादिजुषां तेषां पूर्णार्द्धांघ्रिव्यवस्थया ।।११८।।

इस प्रकार तारतम्य से अच्छे सम्बन्ध से दशा फलप्रद होती है। तथा दशेश के केन्द्र, पणफर, आवोक्लिम में रहने से पूर्ण, आधा और चौथाई दशा का फल तारतम्य से होता है।।११८।।

शीर्षोदयस्थिताः स्वस्वदशादौ स्वफलप्रदा ।
उभयोदयराशिस्थः मध्यफलप्रदा ।।११९।।

शीर्षोदय राशि में बैठा हुआ ग्रह अपनी दशा के आदि में अपने शुभ अशुभ फल को देता है, द्विस्वभाव राशिगत ग्रह दशा के मध्य में।।११९।।

पृष्ठोदयर्क्षगाः खेटाः स्वदशान्ते फलप्रदाः ।
निसर्गतश्च तत्काले सुहृदां हरणेशुभम् ।।१२०।।

अपने शुभ अशुभ फल को देता है। पृष्टोदय राशि में गया हुआ ग्रह अपनी दशा के अन्त में अपने शुभ अशुभ फल को देता है। नैसर्गिक वा तत्काल में मित्र ग्रह के अन्तरदशा में शुभ फल होता है।।१२०।।

सम्पादयेत्तदा कष्टं तद्विपर्ययगामिनाम् ।
दशेशाक्रांत भावाच्चारभ्य द्वादशर्क्षभम् ।।१२१।।

और शत्रुग्रह की अन्तरदशा में अशुभ फल होता है (दशेश जिस भाव में हो वहाँ से आरम्भ कर १२ राशियों की अन्तरदशा होती है।।१२१।।

भुक्त्वा द्वादशराशीनां दशाभुक्तिं प्रकल्पयेत् ।
एकैकराशेर्या तत्र सुहृऽस्वक्षेत्रगामिनी ।।१२२।।

उसमें भी जो राशि मित्र राशिस्थ वा अपने राशिस्थ ग्रह से युत हो उसकी अन्तरदशा में राव्यादि सम्पत्ति पूर्वक शुभ फल होता है।।१२२।।

तस्यां राज्यादिसम्प्यत्तिपूर्वकं शुभमीरयेत् ।
दुःस्थानरिपुनीचस्थनीचक्रूरयुता च या ।।१२३।।

जो राशि शत्रुराशिस्थ, नीचस्थ, नीचक्रूरयुक्त ग्रह से युत हो उसके।।१२३।।

तस्यामनर्थकलहं रोगमृत्युभयादिकम् ।
बिन्दुभूयस्त्वशून्यत्ववशात् स्वीयाष्टवर्गके ।।१२४।।

अन्तरदशा में अनर्थ, कलह, रोग, मृत्युभय आदि दुष्ट फल होते हैं, अष्टकवर्ग के अनुसार।।१२४।।

वृद्धिं हानिं च तद्राशियावस्य स्वगृहात्क्रमात् ।
भावयोजनया विद्यात्सुताद्यादि शुभाशुभम् ।।१२५।।
धात्वादिराशिभेदाच्च धात्वादिग्रहयोगतः ।
शुभपापदशाभेदाच्छुभपापयुतैरपि ।।१२६।।

जिस राशि में रेखा या बिन्दु अधिक हो उसमें शुभफल और जिसमें रेखा वा बिन्दु अल्प हो उसमें हानि होती है। (यहाँ कोई आचार्य अष्टकवर्ग में शुभद्योतक रेखा और कोई शुभद्योतक शून्य को मानते हैं)। भाव के योजना के अनुसार (अर्थात् लग्न आदि भावों से जिस भाव का विचार करना हो उसी को लग्न मानकर उससे अन्य भावों से उनके शुभ अशुभ का विचार करना चाहिये) जैसे भाई के सुभ दुःखादि का विचार करना है तो तीसरे भाव को लग्न मानकर उससे दूसरे भाव से भाई के धन आदि का विचार करना चाहिये।।१२५।।

राशियों के धातु आदि के भेद से और ग्रहों के धातु आदि के भेद से उन-उन राशियों वा शुभ पापदशा भेद और शुभ पाप के योग से।।१२६।।

इष्टानिष्टस्थानभेदात् फलभेदात्समुन्नयेत् ।
एवं सर्वग्रहाणां च स्वां स्वामन्तर्दशामपि ।।१२७।।

अन्तरदशा काल में अशुभ स्थान भेद से सभी ग्रहों के अन्तर्दशा का शुभ पापफल का विचार करना चाहिये।।१२७।।

स्वराशितो राशिभुक्तिं प्रकल्प्य फलमीरयेत् ।
अन्तरन्तर्दशां स्वीयां विभज्यैवं पुनः पुनः ।।१२८।।

एवं राशि से राशि की अन्तर्दशा की कल्पना कर फल कहना चाहिये तथा अन्तर्दशा में पुनः अन्तर्दशा कल्पना कर उससे भी सूक्ष्म फल कहना चाहिये।।१२८।।

गुर्जरे कच्छ सौराष्ट्रे पांचाले सिन्धुपर्वते ।
एते अष्टोत्तरी श्रेष्ठा अन्ये विंशोत्तरी मता ।।१२९।।

गुजरात, कच्छ, सौराष्ट्र, पांचाल, सिन्धु, पर्वत में अष्टोत्तरी दशा लेनी चाहिये और अन्यत्र विंशोत्तरी दशा लेनी चाहिये।।१२९।।

इति वृहत्पाराशर होरायां पूर्वार्धे दशाफल कथनाध्यायः।

अथान्तर्दशादिफलविचाराध्यायः।

तत्रादौ अन्तर्दशाऽऽनयनप्रकारमाह–

दशादशाहता कार्या दशभिर्भागमाहरेत् ।
लब्धं मासास्तथा शेषं त्रिंशघ्नं च दिनानिच ।।१।।

जिस ग्रह की दशा में जिस ग्रह का अन्तर निकालना हो उसके दशा वर्ष को दशेश के वर्ष से गुणाकर गुणनफल में १० का भाग देने से लब्धि मास और शेष को ३०.से गुणा कर १० से भाग देने से लब्ध दिन होता है।।१।।

उदाहरण–जैसे सूर्य के दशा में सूर्य का अन्तर निकालना है तो सूर्य के दशा वर्ष संख्या ६ को ६ से गुणने से ३६ हुआ इसमें १० का भाग देने से लब्धि ३ मास शेष ६ को ३० से गुणा कर १० का भाग देने से १८ दिन आया। अर्थात् सूर्य की दशा में ३ मास १८ दिन सूर्य का ही अन्तर रहैगा। इसी प्रकार चन्द्रमा के दशा वर्ष १० से सूर्य के दशा वर्ष का गुणा कर १० का भाग देने से लब्धि ६ मास चन्द्रमा का अन्तर हुआ।।

अन्तर्दशा लिखने का क्रम–

शन्यन्तर्दशाचक्रम् –

श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	ग्रहाः
३	२	१	३	०	१	१	२	२	व.
०	८	१	२	११	७	१	१०	६	मा.
३	९	९	०	१२	०	९	६	१२	दि.
२०२५	२८	३१	३२	३५	३६	३७	३८	४१	२०४४
३	३	०	१	३	२	९	११	९	३
१२	१५	४	१३	१३	२५	२५	४	१०	२२

सूर्यदशा वर्ष ६ अन्तर्दशा										चन्द्रदशा वर्ष १० अन्तर्दशा								
सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	ग्र.	चं.	म.	रा.	वृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.
०	०	०	०	०	०	०	०	१	व:	०	०	१	१	१	१	०	१	०
३	६	४	१०	९	११	१०	४	०	मा.	१०	७	६	४	७	५	७	८	६
१८	०	६	२४	१८	१२	६	६	०	दि.	०	०	०	०	०	७	०	०	०

भौमदशा वर्ष ७ अन्तर्दशा										राहुदशा वर्ष १८ अन्तर्दशा								
मं.	रा.	वृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	ग्र.	रा.	वृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.
०	१	०	१	०	०	१	०	०	ब.	२	२	२	२	१	३	०	१	१
२४	०	११	१	११	४	२	४	७	मा	८	४	१०	६	०	०	१०	६	०
७	१८	६	९	२७	२७	०	६	०	दि.	१२	२४	६	१८	१८	०	२४	०	१८

गुरुदशा वर्ष १६ अन्तर्दशा										शनिदशावर्ष १९ अन्तर्दशा								
बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	ग्र.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	वृ.
२	२	२	०	२	०	१	०	२	ब.	३	२	१	३	०	१	१	२	२
१	६	३	११	८	९	४	११	४	मा	०	८	१	२	११	७	१	१०	६
१८	१२	६	६	०	१८	०	६	२४	दि.	३	९	९	०	१२	०	९	६	१२

बुधदशावर्ष १७ अन्तर्दशा										केतुदशावर्ष ७ अन्तर्दशा								
बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	ग्र.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.
२	०	२	०	१	०	२	२	२	व.	०	१	०	०	०	१	०	१	०
४	११	१०	१०	५	११	६	३	८	ना.	४	२	४	७	४	०	११	१	११
२७	२७	०	६	०	२७	१८	६	९	दि.	२७	०	६	०	२७	१८	६	९	२७

शुक्रदशावर्ष २० अन्तर्दशा

शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	ग्र.
३	१	१	१	३	२	३	२	१	व.
४	०	८	२	०	८	२	१०	२	मा.
०	०	०	०	०	०	०	०	०	दि.

फलमाह—

स्वद्वादशांशके लग्न नाथे वा स्वदृकाणगे ।
तस्य भुक्तिं शुभामाहुर्मुनयः कालचिंतकाः ।।२।।

अपने द्वादशांश में लग्नेश हो अथवा अपने द्रेष्काण में हो तो उसका अन्तर शुभद होता है ऐसा दैवज्ञ कहते हैं।।२।।

स्वत्रिंशांशेऽथवा मित्र त्रिंशाशकेऽपिवा ।
तस्य भुक्तिः शुभाः प्रोक्ताकालविद्भिर्मनीषिभेः।।३।।

अपने त्रिशांश में अथवा मित्र के त्रिशांश में ग्रह हो तो उसका अन्तर भी शुभद होता है।।३।।

मित्रक्षेत्रे नवांशस्थे मित्रस्य द्वादशांशके ।
तस्यभुक्तिः शुभाप्रोक्ता कालविद्भिर्मनीषिभिः ।।४।।

मित्र की राशि में अथवा नवांश में वा द्वादशांश में ग्रह हो तो उसका अन्तर भी शुभद होता है।।४।।

बुद्धिक्षेत्रनवांशस्थे पुत्रस्य द्वादशांशके ।
मित्रद्रेष्काणगेवापि तस्यभुक्तिः शुभावहा ।।५।।

पंचम भाव के नवांश में वा पंचम भाव के द्वादशांश में वा मित्र के द्रेष्काण में हो तो उसका अन्तर भी शुभद होता है।।५।।

तयोः राशिनवांशस्थे धर्मस्य द्विरसांशके ।
गुरु द्रेष्काणमे वापि तस्य भुक्तिः शुभावहा ।।६।।

नवम भाव की राशि या नवांश में वा नवम भाव के द्वादशांश में ग्रह हो अथवा गुरु के द्रेष्काण में हो तो उसका अन्तर शुभद होता है।।६।।

सुखराशिनवांस्थे बाहनद्विरसांशके ।
सुखद्रेष्काणगे वापि तस्यभुक्तिः शुभावहा ।।७।।

सुख भाव की राशि वा नवांश में वा द्वादशांश का सुख भाव के द्रेष्काण में हो तो उसका अन्तर शुभद होता है।।७।।

विलग्नवाथस्थितमांशनाथे मित्रांशगे मित्रखगेन दृष्टे।
सुहृद्दृकाणस्यनवांशके वा तदास्य भुक्तिं शुभदा वदंति।।८।।

लग्नेश जिस राशि नवांश में है उसका स्वामी अपने मित्र के नवांश में हो और मित्र ग्रह से देखा जाता हो अथवा अपने मित्र के द्रेष्काण वा नवांश में हो तो उसका अन्तर शुभद होता है।।८।।

अथ वक्ष्ये विशेषण दशा कष्टप्रदा नृणाम् ।
षष्ठाष्टमव्ययेशानां दशा कष्ट प्रदायिनी ।।९।।

अब विशेषत: कष्टप्रद दशा और अन्तर को कह रहा हूँ। ६।८।१२ भावों के स्वामियों की दशा कष्टप्रद होती है।।९।।

एषां भुक्तिर्हि कष्टा स्यान्मारकस्य दशायदि ।
मारकेशेन षष्ठेशे युक्ते लग्नाधिपे यदि ।।१०।।

यदि ये मारकेश की दशा में इनका अंतर भी कष्ट देनेवाला होता है। मारकेश के लग्नेश युत हो तो।।१०।।

तस्य भुक्तौ ज्वरप्राप्तिं प्राहु: कालविदोजना: ।
सरोगेश शरीरेशश्चन्द्रषड्वर्गगो यदि ।।११।।

इसके अन्तर में ज्वर होता है। षष्ठेशयुक्त लग्नेश चन्द्रमा के वर्ग में हो तो।।११।।

जलदोषस्तस्य भुक्तौ स्यादजीर्णो न संशय: ।
षष्ठेशयुतलग्नेशो बुध षड्वर्गगो यदि ।।१२।।

इसके अन्तर में जलंधर या अजीर्ण रोग से कष्ट होता है।।१२।।

तस्य भुक्तौ भवेद्वायुर्वातो वा देहजाड्यकृत् ।
सारिनाथविलग्नेशो गुरु षड्वर्गगो यदि ।।
तस्य भुक्तौ भवेद्रोग: पीडा वा ब्राह्मणेन तु ।।१३।।

षष्ठेश से युत लग्नेश बुध के षड्वर्ग में हो तो।।१३।।

सषष्ठेश विलग्नेशो भृगु षड्वर्गगो यदि ।
तस्य भुक्तौ भवेत्पीडा रोगस्त्रीसंगमेन च ।।१४।।

इसके अन्तर में वायु वा बात से शरीर जकड़ जाता है। षष्ठेश से युत लग्नेश गुरु के षड्वर्ग में हो तो इसके अन्तर में रोग वा ब्राह्मण से पीड़ा होती है। षष्ठेश से युक्त लग्नेश शुक्र के षड्वर्ग में हो तो इसके अन्तर में पीड़ा या स्त्री प्रसंग से रोग होता है।।१४।।

सरोगेशविलग्नेशः शनिषड्वर्गगो यदि ।
तस्य भुक्तौ भवेद्वातः सन्निपातोऽथवानृणाम् ।।१५।।

रोगेश से युत लग्नेश शनि के षड्वर्ग में हो तो इसके अन्तर में वातरोग वा सन्निपात रोग होता है।।१५।।

मृत्युस्थितैःसैंहिकमन्दकेतुभिर्मनोह्विकाश्वासविषूचिकाभिः।
रोगोनराणामथ तस्यभुक्तौ भवेद्यदामारक संयुतिश्च।।१६।।

यदि आठवें भाव में राहु, शनि, केतु और मारकेश से युत हों तो इनके अन्तर में कासश्वास रोग वा विषूचिका होता है।।१६।।

एवं भ्रात्रादि भावानां नायको यत्र संस्थितः ।
तत्तत्षड्वर्गयोगेन तत्तद्भावफलं वदेत् ।।१७।।

भ्रातृ आदि स्थानों के स्वामी और उनके षड्वर्ग के अनुसार उनकी दशा अन्तर में उनके फलों को कहना चाहिये।।१७।।

उच्चक्षेत्रगते सूर्ये केन्द्रलाभत्रिकोणगे ।
स्वदाये च स्वभुक्तौ च धनधान्यादिलाभकृत ।।१८।।

यदि सूर्य अपनी उच्च राशि में अथवा अपनी राशि में होकर केन्द्र वा त्रिकोण में हो तो उसकी दशा व अन्तर में धन धान्य का लाभ होता है।।१८।।

दहेरोगं वित्तलाभं राजप्रीतिकरं शुभम् ।
सर्वकार्यार्थसिद्धिः स्याद् विवाहं राजदर्शनम् ।।१९।।

देह में रोग, धन का लाभ, राजा से प्रिन्यता होती है, सभी कार्य और धन की सिद्धि, विवाह और राजा का दर्शन होता है।।१९।।

द्वितीयद्यूमनाथे तु अपमृत्युर्भविष्यति ।
तद्दोषपरिहारार्थं मृत्युञ्जयजपं चरेत् ।।
सूर्यप्रीतिकरीं शान्तिं कुर्यादारोग्यप्राप्तये ।।२०।।

यदि सूर्य दूसरे और सातवें भाव का स्वामी हो उसकी दशा और अन्तर में अकाल मृत्युभय होता है अनिष्ट फल की शान्ति के लिये मृत्युंजय मन्त्र का जप और सूर्य के प्रसन्नार्थ शान्ति करने से आरोग्यता होती है।।२०।।

सूर्यस्यान्तर्गते चन्द्रे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ।
विवाहं शुभकार्यं च धनधान्यसमृद्धिकृत् ।।२१।।

सूर्य की दशा में लग्न से केन्द्र वा त्रिकोण में बैठे हुये चन्द्रमा के अन्तर में विवाह, शुभ कार्य, धन, धान्य और समृद्धि का लाभ।।२१।।

गृहक्षेत्राभिवृद्धिं च पशुवाहनसम्पदाम् ।
तुङ्गे वा स्वर्क्षगे वापि दारसौख्यं धनागमम् ।।२२।।

गृह क्षेत्र की वृद्धि, पशु वाहन और सम्पत्ति की वृद्धि होती है।।२२।।

पुत्रलाभसुखं चैव सौख्यं राजसमागमम् ।
महाराज प्रसादेन इष्टसिद्धि सुखावहम् ।।२३।।

चन्द्रमा अपने उच्च अपनी राशि में हो तो स्त्री का सुख, धन का आगम और महाराजा की कृपा से अभीष्ट सिद्ध होता है।।२३।।

क्षीणे वा पापसंयुक्ते दारपुत्रादि पीडनम् ।
वैषम्य जन सम्वादं भृत्यवर्गविनाशनम् ।।२४।।

यदि चन्द्रमा क्षीण हो वा पापग्रह से युक्त हो तो उसके अन्तर में स्त्री पुत्रादि को कष्ट, लोगों से झगड़ा, नौकरों की हानि होती है।।२४।।

विरोधं राजकलहं धनधान्यपशुक्षयम् ।
षष्ठाष्टमव्यये चन्द्रे जलभीतिं मनोरुजम् ।।२५।।

राजा से कलह, धन धान्य और पशु की हानि होती है। ६।८।१२ भाव में चन्द्रमा हो तो जल भय, मानसिक कष्ट।।२५।।

बन्धनं रोगपीडां च स्थानविच्युतिकारकम् ।
दुःस्थानं चापि चित्तेन दायादजनविग्रहम् ।।२६।।

बन्धन, रोग पीड़ा, स्थान च्युति, दुष्ट स्थान की यात्रा, दायादों से विग्रह।।२६।।

निर्धनं कुत्सितान्नं च चौरादिनृपपीडनम् ।
मूत्रकृच्छ्रादिरोगश्च देहपीडा क्षयो भवेत् ।।२७।।

निर्धनता, खराब अन्न का भोजन, चोर तथा राजा से पीड़ा, मूत्रकृच्छ्र (सूजाक) रोग और क्षयरोग से कष्ट होता है।।२७।।

दायेशाल्लाभभाग्ये च केन्द्रे वा शुभसंयुते ।
भोगभाग्यादिसंतोषदारपुत्रादिवर्धनम् ।।२८।।

दशा के स्वामी से ११ वा ९ भाव में चन्द्रमा हो अथवा केन्द्र में वा शुभग्रह से युत हो तो अपने अन्तर में भोग, भाग्य, संतोष स्त्री आदि की वृद्धि करता है।।२८।।

राज्यप्राप्तिं महत्सौख्यं स्थानप्राप्तिं च शास्वतीम्।
विवाहं यज्ञदीक्षां च सुधान्याम्बरभूषणम् ।।२९।।

राज्य का लाभ, अपार सुख, स्थान की प्राप्ति, विवाह, यश, दीक्षा, सुन्दर अन्न, वस्त्र, आभूषण।।२९।।

वाहनं पुत्रपौत्रादि लभते सुखवर्द्धनम् ।
दायेशाद्रिपुरंध्रस्थे व्यये वा बलवर्जिते ।।३०।।

वाहन और पुत्र पौत्रादि जन्य सुख को देता है। दशेश से ६।८।१२ भाव में चन्द्रमा हो और निर्बल हो तो।।३०।।

अकाले भोजनं चैव देशाद्देशं गमिष्यति ।
द्वितीयद्यूननाथे तु अपमृत्युर्भविष्यति ।
श्वेतां गां महिषीं दद्याच्छान्तिं कुर्यात्सुखंलभेत् ।।३१।।

उसके अन्तर में असमय भोजन, एक देश से दूसरे देश की यात्रा होती है। यदि चन्द्रमा २।७ भाव का स्वामी हो तो अकाल मृत्यु होती है। शान्ति के लिये सफेद गौ और भैंस का दान करने से सुख की प्राप्ति होती है।।३१।।

अथ रविदशायांभौमान्तर्दशाफलम्–

सूर्यस्थान्तर्गते भौमे स्वोच्चे स्वक्षेत्रलाभगे ।
लग्नात्केन्द्रत्रिकोणे वा शुभकार्यशुभादिकम् ।।३२।।

सूर्य की दशा में अपने उच्च वा अपनी राशि में गया हुआ लग्न से ११ भाव वा केन्द्र वा त्रिकोण में गये हुये भौम का अन्तर हो तो शुभ कार्य।।३२।।

भूलाभं कृषिलाभं च धनधान्यादिवृद्धिदम् ।
गृहक्षेत्रादिलाभं च रक्तवस्त्रादिलाभकृत् ।।३३।।

भूमि का लाभ, कृषि से लाभ, धन धान्य की वृद्धि गृह क्षेत्र का लाभ और रक्तवस्त्र आदि का लाभ होता है।।३३।।

लग्नाधिपेन संयुक्ते सौख्यं राजप्रियं सुखम् ।
भाग्यलाभाधिपैर्युक्ते लाभश्चैव भविष्यति ।।३४।।

लग्नेश से युत हो तो सुख और राजा का प्रिय पात्र बनाता है। भाग्येश लाभेश से युक्त हो तो लाभ होता है।।३४।।

बहुसेनाधिपत्यं च शत्रुनांश मनोदृढ़म् ।
आत्मवंधुसुखं चैव भातृवर्धनकं तथा ।।३५।।

सेनापति पद का लाभ, शत्रु का नाश आत्मीय बन्धुओं का सुख और भाइयों की वृद्धि होती है।।३५।।

दायेशाद्रिपुरन्ध्रस्थे पापयुक्ते च वीक्षिते ।
आधिपत्यवलैर्हीने क्रूरबुद्धिं मनोरुजम् ।।३६।।

दशा के स्वामी से ६।८ भाव में पापग्रह से युक्त और दृष्ट तथा बलहीन भौम हो तो दुष्टबुद्धि, मानसिक कष्ट।।३६।।

कारागृहे प्रवेशं च निर्गलं बन्धुनाशनम् ।
भ्रातृवर्गविरोधं च कर्मनाशमथापि वा ।।३७।।

जेलयात्रा अनायास बन्धु का नाश, भाइयों से विरोध, कर्म का नाश होता है।।३७।।

नीचेवा दुर्बले भौमे राजमूलाद्धनक्षयः ।
द्वितीयद्यूनन्नाथे तु देहेजाड्यं मनोरुजम् ।।३८।।

अपनी नीचराशि में दुर्बल भौम हो तो राजा के कोप से धन की हानि होती है। यदि २।७ भाव का स्वामी हो तो देह में जड़ता और मानसिक कष्ट होता है।।३८।।

सुब्रह्मजपदानं च अनड्वाहं तथैव च ।
शान्तिं कुर्वीत विधिवदायुरारोग्य सिद्धिदम् ।।३९।।

इसकी शान्ति के लिये वेदपाठ, गायत्री का जप, दान, बैल का दान आदि करने से आयु, आरोग्यता आदि की सिद्धि होती है।।३९।।

अथ रविदशायांराह्वन्तर्दशाफलम्–

सूर्यस्यान्तर्गते राहौ लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ।
आदौ द्विमासपर्यन्तं धननाशं महद्भयम् ।।४०।।

सूर्य की दशा में लग्न से केन्द्र वा त्रिकोण में गये हुये राहु की अन्तर्दशा हो तो पहले २ मास पर्यन्त धन का नाश और महाभय होता है।।४०।।

चौरादिव्रणभीतिश्च दारपुत्रादिपीडनम् ।
तत्परं सुखमाप्नोति शुभयुक्ते शुभांशके ।।४१।।

चोर आदि तथा फोड़ा आदि का भय स्त्री पुत्रादि को कष्ट होता है। इसके बाद सुख होता है। राहु शुभग्रह से युक्त और शुभग्रह के अंश में हो तो।।४१।।

देहारोग्यं मनस्तुष्टी राजप्रीतिकरं सुखम्।
लग्नादुपचये राहौ योगकारकसंयुते।।४२।।

शरीर में आरोग्यता, मन को संतोष, राजा से मित्रता और सुख होता है। लग्न से उपचय (३।६।११) स्थान में योगकारक ग्रह से युक्त हो।।४२।।

दायेशाच्छुभराशिस्थे राजसन्मानकीर्त्तिदम्।
भाग्यवृद्धिं यशोलाभं दारपुत्रादिपीडनम्।।४३।।

और दशेश से शुभ स्थान में हो तो राजा से सम्मान और कीर्त्ति में वृद्धि, भाग्य वृद्धि, यश का लाभ, स्त्री पुत्रादि को पीड़ा।।४३।।

पुत्रोत्सवादिसन्तोषं गृहे कल्याणशोभनम्।
दायेशार्त्षष्टरिःफस्थे रंध्रे वा बलवर्जिते।।४४।।

पुत्रोत्सव आदि उत्सव गृह में होते हैं। दशेश से ६।१२।१८ भाव में राहु हो और निर्बल हो तो।।४४।।

बंधनं स्थाननाशश्च कारागृह निवेशनम्।
चौराहिब्रणाभीतिश्च दारपुत्रादिवर्द्धनम्।।४५।।

बंधन स्थान हानि, जेलखाना, चोर, सूर्य, फोड़ा से भय, स्त्री पुत्रादि को सुख।।४५।।

चतुष्पाज्जीवनाशश्च गृहक्षेत्रादिनाशनम्।
गुल्मक्षयादिरोगश्च अतिसारादिपीडनम्।।४६।।

चौपाये जानवर की हानि, गृह क्षेत्र की हानि, गुल्म, क्षय और अतिसार रोग से पीड़ा होती है।।४६।।

द्विसप्तस्थे तथा राहौ तत्स्थानाधिपसंयुते ।
अपमृत्युभयं चैव सर्वभीतिश्च सम्भवेत् ।।४७।।

२।७ भाव में इन स्थानों के स्वामी से युत राहु हो तो अपमृत्यु का भय तथा अनेक विपत्तियों का सामना करना पड़ता है।।४७।।

दुर्गाजपं च कुर्वीत छागदानं समाचरेत् ।
कृष्णागां महिषीं दद्याच्छान्तिमाप्नोत्यसंशयम् ।।४८।।

इसकी शाति के लिये दुर्गापाठ, वकरी, काली गौ, भैंस का दान करना चाहिये इससे आराम होता है।।४८।।

रविदशायांगुर्वन्तर्दशाफलम् –

सूर्यस्थान्तर्गते जीवे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ।
स्वोच्चमित्रस्य वर्गस्थे विवाहं राजदर्शनम् ।।४९।।

सूर्य की दशा में अपने उच्च वा अपने मित्र के वर्ग में स्थित केन्द्र वा त्रिकोण में रहने वाले गुरु के अंतर में विवाह राजा का दर्शन।।४९।।

धनधान्यादिलाभं च पुत्रलाभं महत्सुखम् ।
महाराजप्रसादेन इष्टकामार्थलाभकृत् ।।५०।।

धन, धान्य का लाभ, पुत्र सुख, बड़ा सुख, राजा की प्रसन्नता से इष्ट कार्य, धन का लाभ।।५०।।

ब्राह्मणप्रियसन्मानं प्रियवस्त्रादिलाभकृत् ।
भाग्यकर्माधिपवशाद्राज्यलाभं महोत्सवम् ।।५१।।

ब्राह्मण और मित्रों से सम्मान, प्रियवस्त्रादि का लाभ होता है। भाग्येश और कर्मेश हो तो राज्य का लाभ, बड़ा उत्सव।।५१।।

नरवाहनयोगश्च स्थानाधिक्यं महत्सुखम् ।
दायेशाच्छुभराशिस्थे भाग्यवृद्धिः सुखावहा ।।५२।।

मनुष्य की सवारी (पालकी) स्थान लाभ, सुख होता है। दशेश से शुभ राशि में हो तो भाग्यवृद्धि, सुख।

दानधर्मक्रियायुक्तो देवताराधनप्रियः ।
गुरुभक्तिः मनः सिद्धिःपुण्यकर्मादिसंग्रहः ।।५३।।

दान आदि धार्मिक क्रिया में प्रवृत्त देवता का आराधन, गुरु की भक्ति और पुण्य कर्मों का संग्रह होती है।।५३।।

दायेशाद्रिपुरन्ध्रस्थे नीचे वा पापसंयुते ।
दारपुत्रादिपीडाच देहपीडा महद्भयम् ।।५४।।

दशेश से ६।८ स्थान में अपने नीचराशि में पापग्रह से युत हो तो स्त्री पुत्र आदि को पीड़ा, शरीर में पीड़ा, बड़ा भय।।५४।।

राजकोपं प्रकुरुते इष्टवस्तुविनाशनम् ।
पापमूलादद्रव्यनाशं देहभ्रष्टं मनोरुजम् ।।५५।।

राजकोप, इष्टवस्तु का नाश, पापमूल से धन का नाश देह में कष्ट और मानसिक कष्ट होता है।।५५।।

स्वर्णदानं प्रकुर्वीत इष्टजाप्यं च कारयेत् ।
गवां कपिलवर्णानां दानेनारोग्यमादिशेत् ।।५६।।

शान्ति के लिये सोना का और कपिला गौ का दान करना चाहिये। इष्टदेव (गुरु) का जप कराने से आरोग्यता प्राप्ति होती है।।५६।।

अथ रविदशायांशन्यन्तर्दशाफलम् –

सूर्यस्यान्तर्गते मन्दे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ।
शत्रुनाशं महत्सौख्यं स्वल्पधान्यार्थलाभकृत् ।।५७।।

सूर्य की दशा में लग्न से केन्द्र त्रिकोण में गये हुये शनि के अतर में शत्रुओं का नाश, सुख, अल्प धन धान्य आदि का लाभ।।५७।।

विवाहोत्सव कार्याणि शुभकार्य शुभावहम् ।
स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे मन्दे सुहृद्ग्रहसमन्विते ।।५८।।

विवाहोत्सव आदि कार्य, शुभ क्रियायें होती हैं। यदि शनि अपने उच्च, अपनी राशि में हो अपने मित्र ग्रह से युत हो तो।।५८।।

गृहेकल्याणसम्पत्तिर्विवाहादि च सत्कियाम् ।
राजसन्मानकीर्त्तिश्च नानावस्त्रधनागमः ।।५९।।

गृह में कल्याण, सम्पत्ति, विवाहादि अच्छी क्रियायें, राजा से सम्मान, कीर्त्ति और अनेक प्रकार के वस्त्र तथा धन का लाभ होता है।।५९।।

दायेशाद्रिपुरन्ध्रस्थे व्यये वा पापसंयुते ।
वातशूलमहाव्याधिज्वरातीसारपीडनम् ।।६०।।

दशेश से ६।८।१२ भाव में पापग्रह से युत हो तो वात, शूल, महाव्याधि, ज्वर, अतिसार की पीड़ा।।६०।।

बन्धनं कार्यहानिश्च वित्तनाशं महद्भयम् ।
अकस्मात्कलहश्चैव दायादजनविग्रहम् ।।६१।।

बन्धन, कार्य की हानि, धन का नाश, बड़ा भय, अकस्मात् झगड़ा, दायादों से विग्रह होता है।।६१।।

भुक्त्यादौ मित्रहानिः स्यान्मध्ये किंचित्सुखावहम्।
अन्ते क्लेशकरं चैव नीचे तेषां तथैव च ।।६२।।

अन्तर के आदि में मित्रों की हानि, मध्य में कुछ सुख और अन्त में क्लेश होता है, इसी प्रकार नीच राशि में रहने से भी होता है।।६२।।

पितृमातृवियोगं च गमनागमनं तथा ।
द्वितीयद्यूननाथेतु अपमृत्युभयं भवेत् ।।६३।।

यदि शनि २।७ भावों का स्वामी हो तो अपमृत्यु का भय होता है। पिता माता का वियोग और आनाजाना लगा रहता है।।६३।।

कृष्णां गां महिषीं दद्यात्मृत्युञ्जय जपं चरेत् ।
छागदानं प्रकुर्वीत सर्वसम्पत्प्रदायकम् ।।६४।।

शान्ति के लिये काली गौ, भैंस का दान करना चाहिये और मृत्युञ्जय का जप करना चाहिये और बकरी का दान करने से सभी सुख का लाभ होता है।।६४।।

अथ रविदशायांबुधान्तर्दशाफलम् –

सूर्यस्यान्तर्गते सौम्ये स्वोच्चे वास्वर्क्षगेऽपिवा ।
केन्द्रत्रिकोणलाभस्थे बुधे वर्गवलैर्युते ।।६५।।

सूर्य की दशा में अपने उच्च राशि वा अपनी राशि में केन्द्र वा त्रिकोण वा ११ में गये हुये अपने वर्ग में बली बुध के अन्तर में।।६५।।

राज्यलाभं महोत्साहं दारपुत्रादि सौख्यकृत् ।
महाराजप्रसादेन वाहनाम्बरभूषणम् ।।६६।।

राज्य का लाभ बड़ा उत्साह स्त्री पुत्रादि को सुख, राजा की प्रसन्नता से वाहन, वस्त्र आभूषण।।६६।।

पुण्यतीर्थकलावाप्तिर्गृहे गोधनसंकुलम् ।
भाग्यलाभाधिपैर्युक्ते लाभवृद्धिकरोभवेत् ।।६७।।

पुण्यतीर्थ, कला के ज्ञान की प्राप्ति, गृह में गोधन की वृद्धि होती है। यदि ९।११ भाव के स्वामी से युत हो तो लाभ में वृद्धि करता है।।६७।।

भाग्यपंचमकर्मस्थे स्नमानो भवति ध्रुवम् ।
स्वकर्मद्यर्मबुद्धिश्च गुरुपित्रद्विजार्चनम् ।।६८।।

यदि बुध ९।५।१० भाव में हो तो सम्मान होता है। अपने धर्मकर्म में वृद्धि गुरु, पिता ब्राह्मण का पूजन।।६८।।

धनधान्यादिसंयुक्तं विवाहं पुत्रसम्भवम् ।
दायेशाच्छुभराशिस्थे सौम्यभुक्तौ महत्सुखम् ।।६९।।

धन, धान्य से युक्त, विवाह और पुत्र का लाभ होता है। दशेश से शुभ राशि में हो तो बड़ा सुख।।६९।।

वैवाहिकं यज्ञकर्म दान धर्म जपादिकम् ।
स्वनामांकितपद्यानि नामद्वयमथापि वा ।।७०।।

वैवाहिक यज्ञ धर्म, जप आदि होते हैं, नामांकित पद्य बनते हैं।।७०।।

भोजनाम्बरभूषाप्तिरमरेशो भवेन्नरः ।
दायेशाद्रिपुरन्ध्रस्थे रिष्फगे नीचगेऽपिवा ।।७१।।

भोजन वस्त्र की प्राप्ति और इन्द्र के समान सुख देता है। दशेश से ६।८।१२ भाव में वा नीचराशि में हो तो।।७१।।

देहपीडा मनस्तापो दारपुत्रादिपीडनम् ।
भुक्त्यादौ दुःखमाप्नोति मध्येकिञ्चित्सुखावहम् ।।७२।।

शरीर में पीड़ा मन में सन्ताप, स्त्री पुत्रादि को कष्ट होता है। तथा अन्तर के आरम्भ में दुःख मध्य में कुछ सुख।।७२।।

अन्ते तु राजभीतिश्च गमनागमनं तथा ।
द्वितीयद्यूननाथे तु देहजाड्यं ज्वरादिकम् ।।७३।।

और अन्त में राजभय और गमनागमन होता है। २।७ भाव के स्वामी हो तो देह में जड़ता और ज्वर आदि से कष्ट होता है।।७३।।

विष्णुनामसहस्रंच ह्यन्नदानं च कारयेत् ।
रजतप्रतिमादानं कुर्यादारोग्य प्राप्तये ।।७४।।

आरोग्यता के लिये विष्णुसहस्र स्तोत्र का पाठ, अन्नदान और चाँदी की प्रतिमा का दान करना चाहिये।।७४।।

अथ रविदशायाकेत्वन्तर्दशाफलम् –

सूर्यस्यान्तर्गते केतौ देहपीडा मनोव्यथा ।
अर्थव्ययं राजकोपं स्वजनादिरुपद्रवम् ।।७५।।

सूर्य की दशा में केतु के अन्तर में शरीर में पीड़ा, मन में कष्ट धन का व्यय, राजभय, अपने ही लोगों से उपद्रव होता है।।७५।।

लग्नाधिपेन संयुक्ते आद्ये सौख्यं धनागमम् ।
मध्ये तत्क्लेशमाप्नोति मृतवार्तागमं वदेत् ।।७६।।

लग्नेश से युत हो तो पहले सुख धन का लाभ होता है, मध्य में उन्हीं क्लेशों

को पाता है और अन्त में मरण सन्देश को सुनता है।।७६।।

षष्ठाष्टमव्ययेचैवं दायेशात्पापसंयुते ।
कपोलदंतरोगश्च मूत्रकृच्छ्रस्य संभवम् ।।७७।।

दाशेश से ६।८।१२ भाव में पापग्रह से युत हो तो कपोल और दांत का रोग और मूत्रकृच्छ्र रोग की संभावना होती है।।७७।।

स्थानविच्युतिरर्थस्य मित्रहानिः पितुर्मृतिः ।
विदेशगमनं चैव शत्रुपीड़ा महद्भयम् ।।७८।।

स्थान और धन की हानि, मित्र की हानि, पिता की मृत्यु, विदेश यात्रा शत्रुपीड़ा और वड़ा भय होता है।।७८।।

लग्नादुपचये केतौ योगकारकसंयुते ।
शुभांशे शुभवर्गे च शुभकर्म फलप्रदम् ।।७९।।

लग्न से उपचय (३।६।१०।११) स्थान में केतु योगकारक ग्रह से युत हो शुभांश से शुभ राशि में हो तो शुभकर्म होते हैं।।७९।।

पुत्रदारादिसौख्यं च सन्तोषं प्रियवर्द्धनम् ।
विचित्रवस्त्रलाभं च यशोवृद्धिः सुखावहा ।।८०।।

पुत्र स्त्री आदि को सुख, संतोष और प्रिय वस्तुओं की वृद्धि, विचित्र वस्त्रों का लाभ, यश की वृद्धि और सुख होता है।।८०।।

द्वितीयद्यूननाथे वा ह्यपमृत्युभयं वदेत् ।
दुर्गाजपं च कुर्वीत छागदानं तथैव च ।
महामृत्युंजय जपं कुर्याच्छान्तिमवाप्नुयात् ।।८१।।

द्वितीयेश वा सप्तमेश हो तो अपमृत्यु का भय होता है! शान्ति के लिये दुर्गापाठ, बकरी का दान और महामृत्युंजय का जप कराना चाहिये।।८१।।

अथ रविदशायांशुक्रान्तर्दशाफलम् –

सूर्यस्यान्तगते शुक्रे त्रिकोणे केन्द्रगेऽपिवा ।
स्वोच्चे मित्रस्ववर्गस्थे हृष्टस्त्री भोगसम्पदाम् ।।८२।।

सूर्य की दशा में त्रिकोण वा केन्द्र में गये हुये वा अपने उच्च वा मित्र वा अपने वर्ग में गये हुये शुक्र के अन्तर में प्रसन्न स्त्री का भोग, सम्पत्ति।।८२।।

ग्रामान्तरप्रयाणं च ब्राह्मणप्रभुदर्शनम् ।
राज्यलाभं महोत्साहं छत्रचामरवैभवम् ।।८३।।

ग्रामांतर की यात्रा, ब्राह्मण, राजा का दर्शन, राज्य का लाभ, महाउत्सव, छत्र, चामर आदि वैभव का लाभ।।८३।।

गृहे कल्याण सम्पत्तिर्नित्यं मिष्ठान्नभोजनम् ।
विद्रुमादिरत्नलाभं मुक्तावस्त्रादिलाभकृत् ।।८४।।

गृह में नित्य कल्याण और सम्पत्ति तथा मिष्ठान्न का भोजन होता है। मूंगा आदि रत्न का लाभ, मोती, वस्त्र का लाभ।।८४।।

चतुष्पाज्जीवलाभः स्याद्बहुधान्यधनादिकम् ।
उत्साहं कीर्त्तिसम्पत्तिर्नरवाहनसम्पदाम् ।।८५।।

चतुष्पद जीव का लाभ, बहुत धन, धान्य का लाभ, उत्साह, कीर्त्ति, सम्पत्ति, मनुष्य की सवारी का लाभ होता है।।८५।।

षष्ठाष्टमव्यये शुक्रे दायेशाद्बलवर्जिते ।
राजकोपं मनः क्लेशं पुत्रस्त्रीधननाशनम् ।।८६।।

दशेश से ६।८।१२ वें शुक्र हो और निर्बल हो तो राजकोप, मनमें कष्ट, पुत्र, स्त्री और धन का नाश होता है।।८६।।

भुक्त्यादौ मध्यमं मध्ये लाभः शुभकरोभवेत् ।
अन्तेयशोनाशनं च स्थानभ्रंशमथापिवा ।।८७।।

अन्तर के आरम्भ में मध्यम फल, मध्य में लाभ और शुभ तथा अन्त में यश की हानि, स्थान की हानि होती है।।८७।।

वन्धुद्वेषमनन्तं च श्वकुलाद्भोग नाशनम् ।
भार्गवे द्यूननाथेतु देहे जाड्यं मनोरुजम् ।।८८।।

बन्धुओं से द्वेष, अपने ही कुल से सुख की हानि होती है शुक्र सातवें भाव का स्वामी हो तो देह में जड़ता होती है और मानसिक कष्ट होता है।।८८।।

रन्ध्ररिष्फसमायुक्ते अपमृत्युर्भविष्यति ।
तद्दोषपरिहारार्थं मृत्युञ्जयजपं चरेत् ।
श्वेतां गां महिषीं दद्याद्रुद्र जाप्यं च कारयेत् ।।८९।।

यदि ८।१२ वें में हो तो अपमृत्यु का भय होता है। शान्ति के लिये सफेद गौं, भैंस का दान, मृत्युंजय का और रुद्राध्याय का जप कराना चाहिये।।८९।।

इति सूर्यान्तरर्दशाफलम्।

अथ चन्द्रदशायांचन्द्रान्र्दशाफलम् -

स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे चन्द्रे त्रिकोणे लाभगेऽपिवा ।
भाग्यकर्माधिपैर्युक्ते गोजाश्वाम्बरसंकुलम् ।।९०।।

चन्द्रमा की दशा में अपनी उच्चराशि वा अपनी राशि में गये हुये केन्द्र वा त्रिकोण में वा लाभस्थानगत भाग्येश कर्मेश से युक्त चन्द्रमा का अन्तर हो तो गौ, बकरी, घोड़ा वस्त्र का लाभ।।९०।।

देवतागुरुभक्तिश्च पुण्यश्लोकादि कीर्त्तनम् ।
राज्यलाभं महत्सौख्यं यशोवृद्धिः सुखावहा ।।९१।।

देवता गुरु की भक्ति, पुण्यप्रद श्लोकों का पाठ, राज्यलाभ, सुखयश में वृद्धि होती है।।९१।।

पूर्णचन्द्रे पूर्णबले सेनाधिपमहत्सुखम् ।
पापयुक्तेऽथवा चन्द्रे नीचे वा रिष्फषष्ठगे ।।९२।।

चन्द्रमा पूर्ण हो और पूर्णबली हो तो सेनाधिपति ऐसा अधिकार और बड़ा सुख होता है।।९२।।

चन्द्रमा पापग्रह से युक्त हो वा नीच राशि में हो वा १२।८ भाव में हो तो।।९२।।

तत्काले धननाशः स्यात्स्थानच्युतिमथापिवा ।
देहालस्यं मनस्तापं राजमन्त्रिविरोधकृत् ।।९३।।

धन का नाश और स्थानच्युति देह में आलस्य, मन में सन्ताप, राजमन्त्री से विरोध।।९३।।

मातृक्लेशं मनोदुःखं निगडं बन्धुनाशनम् ।
द्वितीयद्यूननाथेतु रन्ध्ररिष्फसमन्विते ।।९४।।

माता को कष्ट, दुख, बन्धन और बन्धुओं की हानि होती है। चन्द्रमा २ वा ७ भाव का स्वामी हो और ८ या १२ भाव में हो तो।।९४।।

देहजाड्यं महाभङ्गमपमृत्योर्भयं भवेत् ।
श्वेतांगां महिषीं दद्याद्दानेनारोग्यताभवेत् ।।९५।।

शरीर में जड़ता, और अप मृत्यु का भय होता है। आरोग्यता के लिये सफेद गौ, भैंस का दान करना चाहिये।।९५।।

अथचन्द्रदशायां भौमान्तरदशाफलम् –

चन्द्रस्यान्तर्गते भौमे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ।
सौभाग्यं राजसन्मानं वस्त्राभरणभूषणम् ।।९६।।

चन्द्रमा की दशा में लग्न से केन्द्र वा त्रिकोण में गये हुये भौम के अन्तर में सौभाग्य, राजा से सम्मान, वस्त्र, आभूषण का लाभ।।९६।।

यत्नात्कार्यार्थसंसिद्धिः भविष्यति न संशयः ।
गृहक्षेत्राभिवृद्धिश्च व्यवहारे जयोभवेत् ।।९७।।

प्रयत्न से कार्य और धन का लाभ होता है। गृह, खेत की वृद्धि, व्यवहार में विजय।।९७।।

कार्यलाभं महत्सौख्यं स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे फलम्।
षष्ठाष्टमव्यये भौमे पापयुक्तेऽथवा यदि ।।९८।।

कार्य में लाभ, बड़ा सुख होता है यदि भौम अपने उच्च वा अपनी राशि में हो भौम ६।८।१२ भाव में पापग्रह से।।९८।।

दायेशादशुभस्थाने देहार्त्तिः शत्रुवीक्षिते ।
गृहक्षेत्रादिहानिश्च व्यवहारे तथैव च ।।९९।।

अथवा दशेश से अशुभ स्थान में हो शत्रु से देखा जाता हो तो शरीर में पीड़ा, गृह, खेती आदि की हानि, व्यवहार में भी हानि।।९९।।

भृत्यवर्गेषु कलहं भूपालस्य विरोधनम् ।
आत्मबन्धुवियोगं च नित्यं निष्ठुरभाषणम् ।।१००।।

नौकरों से कलह, राजा से विरोध, अपने कुटुम्बियों से विक्षोभ और नित्य निष्ठुर वचन सुनने को मिलता है।।१००।।

द्वितीयद्यूननाथेतु रन्ध्रे रन्ध्राधिपोयदा ।
तद्दोष परिहारार्थं ब्राह्मणस्यार्चनं चरेत् ।।१०१।।

यदि २।१२ भावों का स्वामी हो और अष्टमेश में हो तो इस दोष की शान्ति के लिये ब्राह्मण का पूजन करना चाहिये।।१०१।।

अथचन्द्रदशायांराह्वन्तर्दशाफलम्–

चन्द्रस्यान्तर्गते राहौ लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ।
आदौ स्वल्पफलं ज्ञेयं शत्रुपीडा महद्भयम् ।।१०२।।

चन्द्रमा की दशा में लग्न से केन्द्र या त्रिकोण में गये हुये राहु के अन्तर में

पहले अल्पफल होता है, शत्रुपीड़ा, भय, चौर, सर्प और राजभय होता है।।१०२।।

चौराहिराजभीतिश्च चतुष्पाज्जीवपीडनम् ।
वन्धुनाशं मित्रहानिं मानहानिं मनोव्यथाम् ।।१०३।।

चौपायों को कष्ट, बन्धुओं की हानि मित्र की हानि, मानहानि और मन में कष्ट होता है।।१०३।।

शुभयुक्ते शुभैर्दृष्टे लग्नादुपचयेऽपि वा ।
योगकारकसम्बन्धे इष्टकार्यार्थसिद्धिदम् ।।१०४।।

राहु शुभग्रह से युक्त शुभग्रह से दृष्ट हो और लग्न से ३।६।१०।११ भाव में हो योगकारक से सम्बन्ध करता हो तो अभीष्ट कार्य और धन का लाभ होता है।।१०४।।

नैर्ऋत्ये पश्चिमेभागे कृचित्प्रभुसमागमः ।
वाहनाम्बरलाभं च इष्टकार्यार्थसिद्धिकृत् ।।१०५।।

नैर्ऋत्य वा पश्चिम दिशा में किसी श्रेष्ठ से समागम, वाहन, वस्त्र का लाभ, इष्टसिद्धि होती है।।१०५।।

दायेशाद्रिपुरन्ध्रस्थे व्यये वा वलवर्जिते ।
स्थानभ्रष्टं मनोदुःखं पुत्रक्लेशं महद्भयम् ।।१०६।।

दशेश से ६।८।१२ भाव में निर्बल हो तो स्थानभ्रष्ट, मन में दुःख, पुत्र को कष्ट, भय।।१०६।।

राजकार्यप्रलापं च दारपीड़ा महद्भयम् ।
वृश्चिकादिविषाद्भीतिश्चौराहिनृपपीडनम् ।।१०७।।

राजकार्य में प्रलाप, स्त्री को कष्ट, महाभय, बिच्छू आदि के विष का भय, चौर, सर्प, राजा से पीड़ा होती है।।१०७।।

दायेशात्केन्द्रकोणे वा दुश्चिक्येलाभगेऽपिवा ।
पुण्यतीर्थकलावाप्तिर्देवतादर्शनं महत् ।।१०८।।

दशेश से केन्द्र वा त्रिकोण वा ३।११ भाव में राहु हो तो पुण्यतीर्थ कला का लाभ, देवता का दर्शन होता है धर्म आदि के संग्रह होते हैं।।१०८।।

परोपकारकर्मादि पुण्यधर्मादिसंग्रहः ।
द्वितीयद्यूनराशिस्थे देहबाधा भविष्यति ।
छागदानं प्रकुर्वीत देहारोग्यं प्रजायते ।।१०९।।

२ वा ७ भाव में हो तो शरीर को कष्ट होता है। इससे शान्ति के लिये बकरी का दान करना चाहिये।।१०९।।

अथचन्द्रदशायांगुर्वन्तर्दशाफलम् –

चन्द्रस्यान्तर्गते जीवे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ।
स्वगेहे लाभस्वोच्चे वा राज्यलाभं महोत्सवम् ।।११०।।

चन्द्र की दशा में लग्न से केन्द्र वा त्रिकोण में गये हुये स्वगृह, लाभ स्थान वा अपने उच्च में गये हुये गुरु के अन्तर में राज्य का लाभ, वड़ा उत्सव।।११०।।

वस्त्रालङ्कारभूषादि राजप्रीतिं धनागमम् ।
इष्टदेवप्रसादेन गर्भाधानादिकं फलम् ।।१११।।

वस्त्र, आभूषण, राज्य प्राप्ति, राजा की प्रसन्नता से धन का लाभ, इष्टदेव की प्रसन्नता से गर्भाधानादि फल होते हैं।।१११।।

शुभशोभनकार्याणि गृहेलक्ष्मीकटाक्षकृत् ।
राजाश्रयं धनं भूमिगजवाजिसमन्वितम् ।।११२।।

और राजा की प्रसन्नता से सुखकर इष्टसिद्धि होती है। शुभ शोभन कर्म, लक्ष्मी का लाभ, राजा के आश्रय से धन भूमि आदि का लाभ।।११२।।

महाराज प्रसादेन इष्टसिद्धिः सुखावहा ।
षष्ठाष्टमव्ययेजीवे नीचे वास्तंगते यदि ।।११३।।

६।८।१२ भाव में गुरु हों वा नीचे राशि में वा अस्त हों वा पापयुक्त हों तो।।११३।।

पापयुक्तेऽशुभं कर्म गुरुपुत्रादिनाशनम् ।
स्थानभ्रंशं मनोदुःखमकस्मात्कलहं ध्रुवम् ।।११४।।

अशुभ कार्य माता पिता पुत्र का नाश स्थान की हानि मन को दुःख अकस्मात् कलह होता है।।११४।।

गृहक्षेत्रादिनाशं च वाहनाम्बरनाशनम् ।
दायेशाद्रिपुरन्ध्रस्थे व्यये वा वलवर्जिते ।।११५।।

गृह-भूमि की हानि, वाहन की हानि होती है। दशेश से ६।८।१२ वें में हो निर्बल हो तो।।११५।।

करोति कुत्सितान्नं च विदेशगमनं तथा ।
भुक्त्यादौ शोभनं प्रोक्तमन्ते क्लेशकरं भवेत्।।११६।।

खराब अन्न का भोजन, विदेश-यात्रा होती है, अन्तर के आदि में शुभफल और अन्त में कष्ट कारक होता है।।११६।।

द्वितीयद्यूननाथे च ह्यपमृत्युर्भविष्यति ।
तद्दोषपरिहारार्थं शिवसाहस्त्रकं जपेत् ।।११७।।

दूसरे वा सप्तम का स्वामी हो तो अपमृत्यु का भय होता है। इस दोष की शान्ति के लिये शिव सहस्त्र नाम का जप।।११७।।

स्वर्णदानमिति प्रोक्तं सर्वसम्पत्प्रदायकम् ।
दायेशात्केन्द्र कोणे वा दुश्चिक्येलाभगेऽपिवा ।।११८।।

सुवर्ण का दान करने से सभी सम्पत्तियों का लाभ होता है दशेश से केन्द्र वा त्रिकोण वा तीसरे या लाभ स्थान में हों तो।।११८।।

भोजनाम्बरपश्वादि महोत्साहं करोति च ।
भ्रात्रादिसुखसम्पत्तिर्धैर्य वीर्यपराक्रमम् ।।११९।।

भोजन, वस्त्र आदि का लाभ बड़ा उत्सव होता है। भाई आदि से सुख, सम्पत्ति, धैर्य, बल और पराक्रम में वृद्धि।।११९।।

यज्ञदीक्षा विवाहश्च राज्यश्रीधनसम्पदः ।
चन्द्रस्यान्तर्गते मन्दे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ।।१२०।।

यज्ञ, दीक्षा, विवाह, राज्य, लक्ष्मी आदि की प्राप्ति होती है चन्द्रमा की दशा में लग्न से केन्द्र वा त्रिकोण में गये हुये।।१२०।।

अथचन्द्रदशायांशन्यन्तर्दशाफलम् -

स्वर्क्षेवा स्वांशगे चैव मन्दे तुङ्गांशगेऽथवा ।
शुभदृष्टियुते वापि लाभे वा बलसंयुते ।।१२१।।

अपनी राशि वा अपने नवांश वा अपने उच्चांश में गये हुये शुभग्रह से दृष्ट वा युत ११ भाव में बलवान शनि के अन्तर में।।१२१।।

पुत्रमित्रार्थसम्पत्तिः शूद्रप्रभुसमागमम् ।
व्यवसायात्फलाधिक्यं गृहक्षेत्रादिवृद्धिकृत् ।।१२२।।

पुत्र मित्र धन सम्पत्ति का लाभ, शूद्रवर्ण के राजा से संगति, व्यवसाय से लाभ, गृह, भूमि का लाभ।।१२२।।

पुत्रलाभं च कल्याणं राजानुग्रह वैभवम् ।
षष्ठाष्टमव्यये मन्दे नीचे वा धनगेऽपि वा ।।१२३।।

पुत्र का लाभ कल्याण तथा राजा के अनुग्रह से वैभव का लाभ होता है ६।८।१२ स्थान में अपनी नीच राशि वा २ रे भाव में शनि हो तो।।१२३।।

तद्भुक्त्यादौ पुण्यतीर्थे स्नानं चैव तु दर्शनम् ।
अनेकजनत्रासश्च शस्त्रपीडा भविष्यति ।।१२४।।

उसके अन्तर के आरम्भ में पुण्यतीर्थ का स्नान और दर्शन होता है। अनेक लोगों का भय तथा हथियार से पीड़ा होती है।।१२४।।

दायेशात्केन्द्रराशिस्थे त्रिकोण वलगेऽपि वा ।
क्वचित्सौख्यं धनाप्तिश्चदारपुत्रविरोधकृत् ।।१२५।।

दशेश से केन्द्र या त्रिकोण में बली हो तो कभी सुख धन का लाभ, स्त्री पुत्रादि से विरोध होता है।।१२५।।

द्वितीयद्यूनरन्ध्रस्थे देहबाधा भविष्यति ।
तद्दोषपरिहारार्थं मृत्युंजयजपं चरेत् ।
कृष्णां गां महिषीं दद्याद्दानेनारोग्यमादिशेत् ।।१२६।।

२।७।८ भाव में हो तो देह में रोगादि का भय होता है। इस दोष के शान्त्यर्थ मृत्युंजय का जप, काली गौ, भैंस का दान करने से आरोग्यता होती है।।१२६।।

अथचन्द्रदशायांबुधान्तर्दशाफलम् –

चन्द्रस्थान्तर्गते सौम्ये केन्द्रलाभत्रिकोणगे ।
स्वर्क्षे नवांशके सौम्ये तुङ्गे वा बलसंयुते ।।१२७।।

चन्द्रमा की दशा में अपनी राशि, वा अपने नवांश वा अपनी उच्चराशि में बलवान्। बुध केन्द्र वा त्रिकोण में हो तो उसके अन्तर में।।१२७।।

धनागमं राजमानं प्रियवस्त्रादिलाभकृत् ।
विद्याविनोदसङ्गोष्ठी ज्ञानवृद्धिः सुखावहा ।।१२८।।

धन का आगमन, राज्यलाभ, प्रियवस्त्रों का लाभ होता है। विद्या विनोद, अच्छी सभा, ज्ञान में वृद्धि, सुख।।१२८।।

सन्तानप्राप्ति सन्तोषं वाणिज्याद्धनलाभकृत् ।
वाहनच्छत्रसंयुक्तं नानालंकारभूषितम् ।।१२९।।

सन्तान का लाभ, सन्तोष, व्यापार से धन का लाभ, वाहन, छत्र से युक्त अनेक आभूषणों का लाभ होता है।।१२९।।

दायेशात्केन्द्रकोणे वा लाभे वा धनगेऽपि वा ।
विवाहं यज्ञदीक्षां च दानधर्मशुभादिकम् ।।१३०।।

दशेश से केन्द्र वा त्रिकोण वा लाभ स्थान में वा धन स्थान में बुध हो तो विवाह यज्ञ, दीक्षा, दान, धर्म आदि शुभकार्य।।१३०।।

राजप्रीतिकरं चैव विद्वज्जन समागमम् ।
मुक्तामणिप्रवालानि बाहनाम्बरभूषणम् ।।१३१।।

राजा से प्रेम, विद्वानों का समागम, मुक्ता, मणि, मूंगा, वाहन, वस्त्र, आभूषण का लाभ होता है।।१३१।।

आरोग्यप्रीतिसौख्यं च सोमपानादिकं सुखम् ।
दायेशाद्रिपुरन्ध्रस्थे व्यये वा नीचगेऽपि वा ।।१३२।।

आरोग्यता, प्रसन्नता, सुख और सोमपान आदि का लाभ होता है। दशेश से ६।८।१२ भाव में वा अपनी नीच राशि में बुध हो तो।।१३२।।

तद्भुक्तो देहबाधा च कृषिगोभूमिनाशनम् ।
कारागृहप्रवेशं च दारपुत्रादि पीडनम् ।।१३३।।

उसके अन्तर में शरीर में बाधा, कृषि, गौ, भूमि का नाश जेल यात्रा, स्त्री पुत्र आदि को कष्ट होता है।।१३३।।

द्वितीयद्यूननाथे च ज्वरपीडां महद्भयम् ।
छागदानं प्रकुर्वीत विष्णुसाहस्रकं जपेत् ।।१३४।।

२ वा ७ भाव का स्वामी हो तो ज्वर से पीड़ा और बड़ा भय होता है। शान्त्यर्थ बकरी का दान और विष्णु सहस्र नाम का जप कराना चाहिये।।१३४।।

अथचन्द्रदशायांकेत्वनार्दशाफलम्–

चन्द्रस्यान्तर्गते केतौ केन्द्रलाभ त्रिकोणगे ।
दुश्चिक्ये बलसंयुक्ते धनलाभं महत्सुखम् ।।१३५।।

चन्द्रमा की दशा में केन्द्र वा त्रिकोण में वा ३ रे भाव में बलवान् केतु के अन्तर में धन का लाभ, बड़ा सुख होता है।।१३५।।

पुत्रदारादि सौख्यं च मित्रकर्म करोति च ।
भुक्त्यादौ धनहानिः स्यान्मध्यगे सुखमाप्नुयात् ।।१३६।।

पुत्र, स्त्री को सुख, मित्रों के कार्य को करता है। अन्तर के आरम्भ में धन की हानि और मध्य में सुख होता है।।१३६।।

दायेशात्केन्द्रलाभे वा त्रिकोणे वलसंयुते।
क्वचित्फलं दशादौ तु दारसौख्यंसुखावहम् ।।१३७।।

दशेश से केन्द्र या एकादश वा त्रिकोण में बलवान् हो तो कभी दशा के आरम्भ में ही स्त्री को सुख आदि शुभ फल होते हैं।।१३७।।

गोमहिष्यादिलाभं च भुक्त्यन्ते चाथनाशनम्।
पापयुक्तेऽथवा दृष्टे दायेशाद्रन्ध्ररिष्फगे ।।१३८।।

गौ भैंस आदि का लाभ तथा दशा के अन्त में धन की हानि होती है। पापग्रह से युक्त वा दृष्ट हो और दशेश से २ या १२ भाव में हो तो।।१३८।।

हीनशत्रुत्वकार्याणि अकस्मात्कलहं ध्रुवम्।
द्वितीयद्यूनराशिस्थे अनारोग्यं महद्भयम्।
मृत्युञ्जयजपं प्रकुवीते सर्वसम्पत्प्रदायकम् ।।१३९।।

हीन कार्य शत्रुता करने वाले कार्य को करता है और अकस्मात् झगड़ा होता है। २ रे ये ७ वें भाव में हो तो कष्ट और बड़ा भय होता है। मृत्युंजय का जप कराने से सब प्रकार के सुख का अनुभव होता है।।१३९।।

चन्द्रस्यान्तर्गते शुक्रे केन्द्रलाभत्रिकोणगे।
स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे वापि राज्यलाभं करोति च ।।१४०।।

यदि चन्द्रमा की दशा में केन्द्र या त्रिकोण वा अपने उच्चराशि अपने राशि में गये हुये शुक्र का अन्तर हो तो राज्यलाभ होता है।।१४०।।

महाराजप्रसादेन वाहनाम्बरभूषणम्।
चतुष्पाज्जीवलाभं स्याद्दारपुत्रादिवर्धनम् ।।१४१।।
नूतनागारनिर्माणं नित्यं मिष्ठान्नभोजनम्।
सुगन्धपुष्पदायादिरम्यस्त्र्यारोग्यसम्पदाम् ।।१४२।।

महाराजा की प्रसन्नता से वाहन, वस्त्र, आभूषण का लाभ, चतुष्पद जीव का लाभ, स्त्री पुत्रादि की वृद्धि। नूतन मकान का निर्माण होता है, नित्य मिठाई खाने को प्राप्त होती है। सुगन्धित पुष्प, दायाद, सुन्दर स्त्री, आरोग्यता और सम्पत्ति का लाभ होता है।।१४२।।

दशाधिपेन संयुक्ते देहसौख्यं महत्सुखम्।
सत्कीर्त्तिसुखसम्पत्तिर्गृहक्षेत्रादि वृद्धिकृत् ।।१४३।।

दशेश के साथ शुक्र हो तो देह का सुख, बड़ा हर्ष, अच्छी कीर्त्ति, सुख सम्पत्ति का लाभ, गृह, भूमि की वृद्धिं होती है।।१४३।।

धनस्थानगते शुक्रे स्वोच्चे स्वक्षेत्रसंयुते ।
निधिलाभं महत्सौख्यं भूलाभं पुत्रसम्भवम् ।।१४४।।

यदि शुक्र धन स्थान में अपनी उच्चराशि वा अपनी राशि में हो तो निधि (गड़ा धुन) का लाभ, सुख, भूमि का लाभ, पुत्र का लाभ होता है।।१४४।।

भाग्यलाभाधिपैर्युक्ते भाग्यवृद्धिकरो भवेत् ।
महाराजप्रसादेन इष्टसिद्धिः सुखावहः ।।१४५।।

यदि भाग्येश वा लाभेश से युक्त हो तो भाग्य की वृद्धि करता है महाराज की प्रसन्नता से इष्ट की सिद्धि होती है।।१४५।।

देवब्राह्मणभक्तिश्च मुक्ताविद्रुमलाभकृत् ।
दायेशाल्लाभगे शुक्रे त्रिकोणे केन्द्रगेऽपिवा ।।१४६।।

देवता ब्राह्मण में भक्ति होती है। मोती-मूंगा का लाभ होता है। दशेश से लाभ स्थान में शुक्र हो वा त्रिकोण वा केन्द्र में हो तो।।१४६।।

गृहक्षेत्राभिवृद्धिश्च वित्तलाभं महत्सुखम् ।
नीचेवास्तंगते शुक्रे पापग्रहयुतेक्षिते ।।१४७।।

गृह-भूमि में वृद्धि, धन का लाभ और सुख होता है। यदि शुक्र अपनी नीची राशि वा अस्त हो, पापग्रह से युत वा दृष्ट हो।।१४७।।

भूनाशं पुत्रमित्रादिनाशनं पत्निनाशनम् ।
दायेशाद्रिपुरन्ध्रस्थेव्यये वा पापसंयुते ।।१४८।।

तो भूमि का नाश, पुत्र मित्र आदि का नाश और स्त्री का नाश होता है। दशेश से ६।८।१२ वें पापग्रह से युत हो तो।।१४८।।

विदेशवास दुःखार्त्ति मृत्युचौरादिपीडनम् ।
द्वितीयद्यूननाथे तु अपमृत्युभयं भवेत् ।।१४९।।

विदेश में वास, दुःख, पीड़ा, मृत्यु, चौरादि से पीड़ा होती है। २।७ भाव का स्वामी हो तो अपमृत्यु का भय होता है।।१४९।।

तद्दोषोपशान्त्यर्थं रुद्रजाप्यं च कारयेत् ।
श्वेतां गां रजतं दद्याच्छान्तिं प्राप्नोत्यसंशयः ।।१५०।।

इस दोष के शान्त्यर्थ रुद्र जप, सफेद गौ, चाँदी का दान करने से निश्चय ही शान्ति प्राप्त होती है।।१५०।।

अथ चन्द्रदशायांसूर्यान्तर्दशाफलम्–

चन्द्रस्यान्तर्गते सूर्ये स्वोच्चे स्वक्षेत्रसंयुते ।
केन्द्रत्रिकोणलाभे वा धने वा सोदरे बले ।।१५१।।

चन्द्रमा की दशा में अपने उच्च या अपने राशि में गये हुये केन्द्र या त्रिकोण या लाभ में वा धन वा तीसरे भाव में बैठे हुये बली सूर्य के अन्तर में।।१५१।।

नष्टराज्य धनप्राप्तिं गृहे कल्याण शोभनम् ।
मित्रराजप्रसादेन ग्रामभूम्यादिलाभकृत् ।।१५२।।

नष्ट हुये राज्य और धन का लाभ, गृह में कल्याण का अनुभव होता है तथा मित्र और राजा की प्रसन्नता से ग्राम भूमि आदि का लाभ।।१५२।।

गर्भाधानकलत्राप्तिर्गृहे लक्ष्मीकटाक्षकृत् ।
भुक्त्यन्ते देहजाड्यत्वं ज्वरपीडा भविष्यति ।।१५३।।

स्त्री की प्राप्ति और गर्भ की संभावना होती है; गृह में लक्ष्मी का वास होता है। दशा के अन्त में शरीर में जड़ता और ज्वर से पीड़ा होती है।।१५३।।

दायेशाद्रिपुरन्ध्रस्थे व्ययेवा पापसंयुते ।
नृपचौराग्निभीतिश्च ज्वररोगादिसम्भवम् ।।१५४।।

दशेश से ६।८।१२ वें भाव में पापग्रह से युत हो तो राजा, चोर अग्नि का भय, ज्वररोग की सम्भावना।।१५४।।

विदेशगमनंचार्त्तिः लभते फल वैभयम् ।
द्वितीयद्यूननाथे तु ज्वरपीडा भविष्यति ।
तद्दोषपरिहारार्थं शिवपूजां च कारयेत् ।।१५५।।

विदेश यात्रा और कष्ट तथा भय होता है। यदि २।७ भाव का स्वामी हो तो ज्वर पीड़ा होती है। इस दोष के शान्त्यर्थ शिवजी का पूजन करना चाहिये।।१५५।।

इति चन्द्रान्तर्दशाफलम्।

अथ भौमदशायांभौमान्तर्दशाफलम् –

कुजस्यान्तर्गते भौमे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ।
लाभे वा धन संयुक्ते दुस्चिक्ये शुभसंयुते ।।१५६।।

भौम की दशा में लग्न से केन्द्र वा त्रिकोण वा लाभ वा धन वा ३रे भाव में शुभग्रह से युत।।१५६।।

लग्नाधिपेन संयुक्ते राजानुग्रहवैभवम् ।
लक्ष्मीकटाक्षचिन्हानि नष्टराज्यार्थलाभकृत् ।।१५७।।

वा लग्नेश से युत भौम के अन्तर में राजा की कृपा से वैभव, लक्ष्मी के आगमन का चिह्न, नष्ट हुये राज्य की प्राप्ति।।१५७।।

पुत्रोत्सवादिसन्तोषं गृहे गोक्षीरसंकुलम् ।
स्वोच्चे वा स्वर्क्षगे भौमे स्वांशे वा वलसंयुते ।।१५८।।

पुत्रोत्पत्ति का उत्सव, सन्तोष, गृह में गौ, दूध आदि का संग्रह, यदि अपने उच्च वा अपने राशि वा अपने नवांश में बली भौम हो।।१५८।।

गृहक्षेत्राभिवृद्धिश्च गोमहिष्यादि लाभकृत् ।
महाराजप्रसादेन इष्टसिद्धिः सुखावहा ।।१५९।।

गृह, खेत, भूमि में वृद्धि, गौ, भैंस आदि का लाभ और महाराजा की प्रसन्नता से इष्ट की सिद्धि और सुख होता है।।१५९।।

षष्ठाष्टमव्यये भौमे पापदृग्योगसंयुते ।
मूत्रकृच्छ्रादिरोगश्च मेहाधिक्यं ब्रणाद्भयम् ।।१६०।।

यदि ६।८।१२ भाव में पापग्रह से दृष्टयुत भौम हो तो मूत्रकृच्छ्र (सुजाक), प्रमेह और फोड़ा से भय।।१६०।।

चौराहिराजपीडाच धनधान्यपशुक्षयम् ।
द्वितीयद्यूननाथे तु देहजाड्यं मनोरुजम् ।।१६१।।

चोर, सर्प राजा से कष्ट, धनधान्य और पशु की हानि होती है। द्वितीय, सप्तम का स्वामी हो तो शरीर में जड़ता और मानसिक कष्ट होता है।।१६१।।

तद्दोषपरिहारार्थं रुद्रजाप्यं च कारयेत् ।
अनड्वाहं प्रदद्याच्च कुजदोष निवृत्तये ।
आरोग्यं कुरुते तस्य सर्वसम्पात्तिदायकम् ।।१६२।।

इस दोष की शान्ति के लिये रुद्रजप करावे, बैल का दान करे इससे भौम के दोष की निवृत्ति होकर शरीर आरोग्य होता है और सभी सम्पत्ति का लाभ होता है।।१६२।।

अथ भौमदशायांराह्वन्तर्दशाफलम् –

भौमस्थान्तर्गते राहौ स्वोच्चे मूलत्रिकोणगे ।
शुभयुक्ते शुभैर्दृष्टे केन्द्रलाभत्रिकोणगे ।।१६३।।

भौंम की दशा में अपने उच्च, मूलत्रिकोण में शुभग्रह से युत वा दृष्ट केन्द्र वा त्रिकोण में गये हुये राहु के अन्तर में।।१६३।।

तत्काले राजसन्मानं गृहभूम्यादिलाभकृत् ।
कलत्रपुत्रलाभः स्यात्व्यवसायात्फलाधिकम् ।।१६४।।

राजा के सम्मानं, गृह, भूमि आदि का लाभ, स्त्री, पुत्र का लाभ तथा रोजगार से अधिक लाभ होता है।।१६४।।

गङ्गास्नानफलावाप्तिं विदेशगमनं तथा ।
षष्ठाष्टमव्यये राहौ पापयुक्तेऽथ वीक्षिते ।।१६५।।

गंगा स्नान का लाभ और विदेश की यात्रा होती है। यदि भौम ६।८।१२ भाव में पापयुक्त वा पापदृष्ट हो तो।।१६५।।

चौरादिव्रणभीतिश्च चतुष्पाज्जीवनाशनम् ।
वातपित्तक्षयं चैव कारागृह निवेशनम् ।।१६६।।

चोर, फोड़ा आदि का भय, चतुष्पद की हानिं, बात, पित्त की हानि, जेल यात्रा।।१६६।।

धनस्थानगते राहौ धननाशं महद्भयम् ।
द्वितीये द्यूनगेवापि ह्यपमृत्युभयं महत् ।।१६७।।

धन स्थान में राहु हो तो धन का नाश और भय होता है २।७ भाव में हो तो अपमृत्यु का भय होता है।।१६७।।

नागदानं प्रकुर्वीत देवब्राह्मण भोजनम् ।
मृत्युंजयं जपं कुर्यादायुरारोग्य प्राप्तये ।।१६८।।

इसके शान्त्यर्थ नाग की मूर्त्ति का दान, ब्राह्मण भोजन, मृत्युंजय का जप कराना चाहिये।।१६८।।

अथ भौमदशायांगुर्वन्तर्दशाफलम् –

भौमस्यान्तर्गते जीवे त्रिकोणे केन्द्रमेऽपि वा ।
लाभे वा धनसंयुक्ते तुङ्गांशे स्वांशभेऽपि वा ।।१६९।।

मंगल की दशा में गुरु का अन्तर हो और यदि गुरु त्रिकोण में वा केन्द्र में

वा एकादश भाव वा द्वितीय भाव में अपने उच्चांश में वा अपने अंश में हो तो।।१६९।।

सत्कीर्त्ति राजसन्मानं धनधान्यस्यवृद्धिकृत् ।
गृहेकल्याणसम्पत्तिर्दारपुत्रादिलाभकृत् ।।१७०।।

श्रेष्ठ कीर्त्ति, राजा से सम्मान, धनधान्य की वृद्धि होती है। और गृह में कल्याण, सम्पत्ति, स्त्री पुत्र आदि का लाभ होता है।।१७०।।

दायेशात्केन्द्रराशिस्थे त्रिकोणेलाभगेऽपि वा ।
भाग्यकर्माधिपैर्युक्ते वाहनाधिपसंयुते ।।१७१।।

यदि गुरु दशेश से केन्द्र वा त्रिकोण वा लाभ में भाग्येश कर्मेश से युत हो वा सुखेश से युत हो।।१७१।।

लग्नाधिपसमायुक्ते शुभांशे शुभवर्गगे ।
गृहक्षेत्राभिवृद्धिश्च गृहे कल्याणसम्पदः ।।१७२।।

वा लग्नेश से युत हो शुभग्रह के अंश में शुभग्रह के वर्ग में हो तो गृह क्षेत्र आदि की वृद्धि गृह में कल्याण सम्पत्तिं।।१७२।।

देहारोग्यं महत्कीर्त्तिगेहे गोकुलसंग्रहः ।
चतुष्पाज्जीवलाभ स्याद्व्यवसायात्फलाधिकम् ।।१७३।।

शरीर में आरोग्यता, महान कीर्त्ति, गौओं की बृद्धि, व्यवसाय करने से अधिक लाभ।।१७३।।

कलत्रपुत्रविभवं राजसन्मान वैभवम् ।
षष्ठाष्टमव्यये जीवे नीचे वास्तंगते यदि ।।१७४।।

स्त्री पुत्रादि का सुख और राजा से सम्मान और वैभव की प्राप्ति होती है। यदि गुरु ६।८।१२ स्थान में अपनी नीच राशि में वा अस्तंगत हो।।१७४।।

पापग्रहेणसंयुक्ते दृष्टे वा दुर्बले यदि ।
चौरादिनृपभीतिश्च पित्तरोगादि सम्भवम् ।।१७५।।

पापग्रह से युक्त दृष्ट हो वा दुर्बल हो तो चौरादिकों से और राजा से भय होता हैं, पित्त के रोगों की संभावना होती है।।१७५।।

प्रेतवाधां भृत्यनाशं सोदराणां विनाशनम् ।
द्वितीयद्यूननाथे तु अपमृत्युज्वरादिकम् ।
तद्दोषपरिहारार्थं शिवसाहस्रकं जपेत् ।।१७६।।

प्रेतबाधा का भय, नौकर की हानि, भाइयों की हानि होती है। २।७ भाव के स्वामी हों तो अपमृत्यु का भय होता है, इस दोष की शान्ति के लिये शिवसहस्रनाम का जप करना चाहिये।।१७६।।

अथ भौमदशायांशन्यन्तर्दशाफलम् –

कुजस्यान्तर्गते मन्दे स्वर्क्षे केन्द्रत्रिकोणगे ।
मूलत्रिकोणे केन्द्रे वा तुङ्गांशे स्वांशगेऽथवा ।।१७७।।

भौम की दशा में अपनी राशि में केन्द्र वा त्रिकोण में वा अपने मूलत्रिकोण में होकर केन्द्र में वा उच्चांश में वा अपने नवांश में हो।।१७७।।

लग्नाधिपतिना वापि शुभदृष्टियुते बले ।
राज्यसौख्यं यशोवृद्धिं स्वग्रामे धान्यवृद्धिकृत् ।।१७८।।

लग्नेश के साथ शुभग्रह से दृष्टयुत शनि हो तो इसके अन्तर में राजसुख यश की वृद्धि, अपने ग्राम में धान्य की वृद्धि।।१७८।।

पुत्रपौत्र समायुक्तो गृहे गोधनसंग्रहः ।
स्ववारे राजसन्मानं स्वमासे पुत्रवृद्धिकृत् ।।१७९।।

पुत्र पौत्र से युक्त गौं आदि के सुख से पूर्ण होता है। शनि के दिन राजा से सम्मान और शनि के मास में पुत्र की वृद्धि होती है।।१७९।।

नीचादि क्षेत्रगे मन्दे षष्ठाष्टव्ययराशिगे ।
म्लेक्षवर्गप्रभुभयं धनधान्यादिनाशनम् ।।१८०।।

यदि शनि अपने नीच आदि में हो ६।८।१२ भाव में हो तो म्लेक्ष राजा से भय, धन धान्य की हानि।।१८०।।

निगडं बन्धनं रोगमंते क्षेत्रविनाशकृत् ।
द्वितीयद्यूननाथे तु पापयुक्ते महद्भयम् ।।१८१।।

हथकड़ी बेड़ी का बधन, रोग और अन्त में विनाश होता है। यदि शनि २।१२ भाव का स्वामी हो और पापग्रह से युक्त हो तो महाभय।।१८१।।

धननाशं च संचारं राजद्वेषं मनोरुजम् ।
चौराग्निनृपपीडा च सहोदर विनाशनम् ।।१८२।।

धन का नाश, यात्रा, राजा से द्वेष, मानसिक कष्ट, चोर अग्नि तथा राजा से पीडा, सहोदर की हानि।।१८२।।

बन्धुद्वेषकरश्चैव जीवहानिश्च जायते ।
अकस्माच्च मृतेर्भीतिः पुत्रदारादिपीडनम् ।।१८३।।

बन्धुओं से द्वेष, किसी जीव की हानि, अकस्मात् मृत्यु भय, पुत्र, स्त्री आदि को पीडा।।१८३।।

कारागृहादिभीतिश्च राजदण्डो महद्भयम् ।
दायेशात्केन्द्रराशिस्थे लाभस्थे वा त्रिकोणगे ।।१८४।।

जेलयात्रा का भय राजदण्ड का भय होता है। दशेश से केन्द्र वा लाभ स्थान वा त्रिकोण में हो तो।।१८४।।

विदेशयानं लभते दुष्कीर्त्तिर्विविधा तथा ।
पापकर्मरतो नित्यं बहुजीवादिहिंसकः ।।१८५।।

विदेश यात्रा, अनेक प्रकार के अपयश, निरन्तर पापकर्म में संलग्न अनेक जीवों की हिंसा।।१८५।।

विग्रहः क्षेत्रहानिश्च स्थानभ्रंशो मनोव्यथा ।
युद्धेष्वपजयं चैव मूत्रकृच्छ्रान्महद्भयम् ।।१८६।।

आपस में विग्रह, क्षेत्रादि की हानि, स्थान-च्युति और मूत्रकृच्छ्र (सूजाक) का भय होता है।।१८६।।

दायेशात्षष्ठरंध्रे वा व्यये वा पापसंयुते ।
तद्भुक्तौ मरणं ज्ञेयं नृपचौरादिपीडनम् ।।१८७।।

दशेश से ६।८।१२ में पापग्रह से युत हो तो अपने अन्तर में मृत्यु और राजा चोर आदि की पीड़ा से युक्त।।१८७।।

वातपीडा च शूलादिज्ञातिशत्रुभयं भवेत् ।
तद्दोषपरिहारार्थं मृत्युंजयजपं चरेत् ।।१८८।

वात रोग से कष्ट, शूल रोग और जातीय लोगों तथा शत्रु का भय होता है। इसकी शान्ति के लिये मृत्युंजय मंत्र का जप कराना चाहिये।।१८८।।

अथभौमदशायांबुधान्तर्दशाफलम्–

कुजस्यान्तर्गते सौम्ये लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ।
सत्कथाश्चाजपादानं धर्मबुद्धिर्महद्यशः ।।१८९।।

भौम की दशा में लग्न से केन्द्र वा त्रिकोण में गये हुये बुध के अन्तर में अच्छे लोगों से सत्संग, अजपा जप, धर्म में प्रवीणता, यश का लाभ।।१८९।।

नीतिमार्गप्रसङ्गश्च नित्यं मिष्ठान्नभोजनम् ।
वाहनाम्बरपश्वादिराजकर्म सुखानि च ।।१९०।।

नीति मार्ग का अवलम्बन और नित्य मिष्ठान्न का भोजन, वाहन, वस्त्र, पशु का लाभ, राजकार्य में व्यस्त और सुख।।१९०।।

कृषिकर्मफलं सिद्धिर्वारणाम्बरभूषणम् ।
नीचे वास्तंगते वापि षष्ठाष्टव्ययगेऽपि वा ।।१९१।।

कृषि कर्म में प्रवृत्ति और भूषणादि तथा वाहन की प्राप्ति होती है। यदि बुध नीच वा अस्त हो अथवा ६।८।१२ भाव में हो तो।।१९१।।

हृद्रोगं मानहानिश्च निगडं बन्धुनाशनम् ।
दारपुत्रार्थनाशः स्याच्चतुष्पाज्जीवनाशनम् ।।१९२।।

हृदय रोग, धन की हानि, बंधन, बन्धुओं की हानि, स्त्री पुत्र चतुष्पद का नाश होता है।।१९२।।

दशाधिपेन संयुक्ते शत्रुबुद्धिर्महद्भयम् ।
विदेशगमनं चैव नानारोगस्तथैव च ।।१९३।।

दशेश से युक्त हो तो शत्रुता की बृद्धि, और भय, विदेशयात्रा, अनेक रोग।।१९३।।

राजद्वारे विरोधश्च कलहः सौम्यमुक्तिषु ।
दायेशात्केन्द्रकोणे वा स्वोच्चे युक्तार्थलाभकृत् ।।१९४।।

राजा से विरोध और कलह होता है। दशेश से केन्द्र वा अपने उच्च में हो तो धन का लाभ।।१९४।।

अनेकधननाथत्वं राजसन्मानमेव च ।
भूपालयोगं कुरुते धनाम्बरविभूषणम् ।।१९५।।

अनेक धनी संस्थाओं का स्वामी। राजा से सम्मान, राजयोग का सुख, धन-वस्त्र आभूषण का लाभ।।१९५।।

भूरिवाद्यमृदङ्गादि सेनापत्यं महत्सुखम् ।
विद्याविनोदविमला वस्त्रवाहनभूषणम् ।।१९६।।

बहुत से बाजों मृदङ्ग आदि का सुख सेनापतित्व और बड़ा सुख, विद्या का विनोद, वस्त्र, वाहन आभूषण।।१९६।।

दारपुत्रादिविभवं गृहेलक्ष्मीकटाक्षकृत् ।
दायेशात्षष्ठरिःफस्थे रन्ध्रे वा पापसंयुते ।।१९७।।

स्त्री, पुत्र आदि का सुख और गृह में लक्ष्मी का प्रवेश होता है। दशेश से ६।१२।८ स्थान में पापग्रह से युत हो तो।।१९७।।

तद्दाये मानहानिस्याल्क्रूरबुद्धिस्तु क्रूरवाक् ।
चौराग्निनृपपीडा च मार्गे चौरभयादिकम् ।।१९८।।

बुध के अन्तर में मानहानि, दुष्टबुद्धि होती है कटुवचन, चोर, अग्नि, राजा से पीडा, मार्ग में चोरों का भय।।१९८।।

अकस्मात्कलहश्चैव बुधभुक्तौ न संशयः ।
द्वितोयद्यूननाथेतु महाव्याधिर्भयंकरा ।।१९९।।

अकस्मात् कलह होता है इसमें संशय नहीं है। यदि बुध २।१२ भाव का स्वामी हो तो महाभयंकर व्याधि होती है।।१९९।।

अश्वदानं प्रकुर्वीत विष्णोर्नामसहस्त्रकम् ।
सर्वसम्पत्प्रदं सौख्यं सर्वारिष्टप्रशांतिदम् ।।२००।।

इसके शान्त्यर्थ अश्वदान करना चाहिये और विष्णुसहस्त्रनाम का पाठ करने से सभी प्रकार की सम्पत्तियों का लाभ और सभी अरिष्टों का नाश होता है।।२००।।

अथ भौमदशायांकेन्वन्तदशाफलम्–

कृजस्यान्तर्गते केतौ त्रिकोणे केन्द्रगेऽपि वा ।
दुश्चिक्ये लाभगे वापि शुभयुक्ते शुभेक्षिते ।।२०१।।

भौम की दशा में त्रिकोण वा ३ वा ११ भाव में गये हुये शुभग्रह से युक्त दृष्ट केतु के अन्तर में।।२०१।।

राजानुग्रहशान्तिश्च बहुसौख्यं धनागमम् ।
किञ्चित्फलं दशादौ तु भूलाभं पुत्र लाभकृत् ।।२०२।।

राजा की कृपा से शान्ति और बहुत सुख की प्राप्ति, धन का आगमन होता है। कुछ फल दशा के आदि में होता है बाद में भूमि लाभ, पुत्र का लाभ होता है।।२०२।।

राजसंलाभकार्याणि चतुष्पाज्जीवलाभकृत् ।
योगकारकसंस्थाने बलवीर्यसमन्विते ।।२०३।।

राज्य लाभकारी कार्यों में संलग्न चतुष्पद जीवों का लाभ होता है योगकारक के स्थान में बलवान् केतु के रहने से।।२०३।।

पुत्रलाभो यशोवृद्धिर्गृहे लक्ष्मीकटाक्षकृत् ।
भृत्यवर्गधनप्राप्तिः सेनापत्यं महत्सुखम् ।।२०४।।

पुत्र का लाभ, यश की वृद्धि, गृह में लक्ष्मी का प्रवेश, नौकरों द्वारा भी धन का लाभ।।२०४।।

भूपालमित्रं कुरुते यानाम्बर विभूषणम् ।
दायेशात्षष्टरिःफस्थे रन्ध्रे वा पापसंयुते ।।२०५।।

राजा से मित्रता और यज्ञ आदि से वस्त्र आभूषण का लाभ होता है। दशेश से ६।१२।८ स्थान में पापग्रह से युत हो तो।।२०५।।

कलहो दंतरोगश्च चौरव्याघ्रादिपीडनम् ।
ज्वरातिसारकुष्ठादिदारपुत्रादिपीडनम् ।।२०६।।

कलह दांत में रोग, चोर व्याघ्र से पीड़ा होती है। ज्वरातिसार और कुष्ठ रोग होता है, स्त्री पुत्रादि को पीड़ा होती है।।२०६।।

द्वितीयसप्तमस्थाने देहे व्याधिर्भविष्यति ।
सन्मानं धनसन्तापं धनधान्यस्य प्रच्युतिम् ।
मृत्युंजयं प्रकुर्वीत सर्वसम्पत्प्रदायकम् ।।२०७।।

२।७ स्थान में हो तो शरीर में व्याधि का भय, धन का संताप, धन-धान्य की हानि होती है। इसके शान्त्यर्थ भी सम्पत्ति को देंने वाले मृत्युंजय मंत्र का जप कराना चाहिये।।२०७।।

अथभौमदशायांशुक्रान्तर्दशाफलम्–

कुजस्यान्तर्गते शुक्रे केन्द्रलाभत्रिकोणगे ।
स्वोच्चे वा स्वर्क्षगे वापि शुभस्थानाधिपेऽथवा ।।२०८।।

भौम की दशा में केन्द्र, लाभ, त्रिकोण वा अपने उच्च, अपनी राशि में गये हुये शुक्र के अन्तर में वा शुभ स्थान के स्वामी शुक्र के अन्तर में।।२०८।।

राज्यलाभं महत्सौख्यं गजाश्वाम्बरभूषणम् ।
लग्नाधिपेन सम्बंधे पुत्रदारादिवर्धनम् ।।२०९।।

राज्य का लाभ, बड़ा सुख, हाथी, घोड़ा, वस्त्र, आभूषण का सुख होता है। लग्नेश से संबन्ध करता हो तो पुत्र, स्त्री आदि की वृद्धि।।२०९।।

आयुषो वृद्धिरैश्वर्यं भाग्यवृद्धिसुखं भवेत् ।
दायेशात्केन्द्रलाभस्थे कोणेवा धनगेऽपि वा ।।२१०।।

आयुष्य की वृद्धि, ऐश्वर्य और भाग्यवृद्धि तथा सुख होता है। दशेश से केन्द्र लाभ, त्रिकोण वा धन स्थान में हो तो।।२१०।।

तत्काले श्रियमाप्नोति पुत्रलाभं महत्सुखम् ।
स्वप्रभोश्च महत्सौख्यं श्वेतवस्त्रादिलाभकृत् ।।२११।।

तत्काल लक्ष्मी की प्राप्ति पुत्र का लाभ और बहुत सुख होता है। अपने स्वामी की कृपा से बड़ा सुख सफेद वस्त्र आदि का लाभ होता है।।२११।।

महाराजप्रसादेन ग्रामभूम्यादिलाभदम् ।
मुक्त्यन्ते फलमाप्नोतिगीतनृत्यादिलाभकृत् ।।२१२।।

राजा की कृपा से ग्राम, भूमि आदि का लाभ होता है, दशा के अन्त में गती, नृत्य आदि का सुख।।२१२।।

पुण्यतीर्थस्नानलाभं कर्माधिपसमन्विते ।
दानधर्मदयापुण्यं तडागं कारयिष्यति ।।२१३।।

पुण्यतीर्थ में स्नान का लाभ होता है। कर्मेश से युक्त हो तो दान, धर्म, दया, पुण्य होता है और तालाब आदि को बनवाता है।।२१३।।

दायेशाद्रन्ध्ररिःफस्थे षष्ठे वा पापसंयुते ।
करोति दुःखबाहुल्यं देहपीडां धनक्षयम् ।।२१४।।

दशेश से ८।१२।६ स्थान में पापग्रह से युत हो तो अत्यन्त दुःख, शरीर में पीड़ा, धन का नाश।।२१४।।

राजचौरादिभीतिश्च गृहे कलहमेव च ।
दारपुत्रादिपीडा च गोमहिष्यादिनाशकृत् ।।२१५।।

राजा, चोर का भय, घर का कलह, स्त्री पुत्रादि को कष्ट, गौ, भैंस आदि का नाश होता है।।२१५।।

द्वितीयद्यूननाथे तु देहबाधा भविष्यति ।
श्वेतां गां महीषीं दद्यादायुरारोग्यप्राप्तये ।।२१६।।

२।७ भाव का स्वामी हो तो शरीर की बाधा होती है। इसकी शान्ति के लिये सफेद गौ सफेद भैंस का दान करना चाहिये।।२१६।।

अथभौमदशायांसूर्यान्तर्दशाफलम्–

कुजस्यान्तर्गते सूर्ये स्वोच्चे स्वक्षेत्रकेन्द्रगे ।
मूलत्रिकोणलाभे वा भाग्यकर्मेशसंयुते ।।२१७।।

भौम की दशा में अपने उच्च वा अपनी राशि में वा केन्द्र वा मूलत्रिकोण वा लाभ स्थान में गये हुये भाग्येश कर्मेश से युत सूर्य के अन्तर में।।२१७।।

तद्भुक्तौ वाहनं कीर्त्तिः पुत्रलाभं च विंदति ।
धनधान्यसमृद्धिः स्याद्गृहे कल्याणसम्पदः ।।२१८।।

वाहन, यश और पुत्र का लाभ होता है। धन धान्य आदि समृद्धि का लाभ, गृह में कल्याण।।२१८।।

क्षेमारोग्यं महैश्वर्य राजपूज्यं महत्सुखम् ।
व्यवसायात्फलाधिक्यं विदेशे राजदर्शनम् ।।२१९।।

कुशल आरोग्यता, महाऐश्वर्य, राजा से पूजा, सुख, विदेश में रोजगार से लाभ और राजा का दर्शन होता हैं।।२१९।।

दायेशात्षष्ठरिःफेवा रन्ध्रे वा पापसंयुते ।
देहपीडा मनस्तापः कार्यहानिर्महद्भयम् ।।२२०।।

दशेश से ६।१२।८ स्थान में पापग्रह से युत हो तो शरीर में पीड़ा मन में संताप, कार्य की हानि, भय।।२२०।।

शिरोरोगं ज्वरादिश्च अतीसारमथापि वा ।
द्वितीयद्यूतननाथे तु सर्पज्वरविषाद्भयम् ।।२२१।।

शिर में रोग, ज्वर और अतिसार होता है। २।७ भाव के स्वामी हों तो सर्प, ज्वर, विष से भय।।२२१।।

सुतपीडाकरं चैव शान्तिं कुर्याद्यथाविधि ।
देहारोग्यं प्रकुरुते धनधान्य समृद्धिदम् ।।२२२।।

पुत्र को पीड़ा होती हैं। इसकी यथाविधि शान्ति करने से देह में आरोग्यता और धन धान्य की वृद्धि होती है।।२२२।।

कुजस्यानन्तर्गते चन्द्रे स्वोच्चे स्वक्षेत्रकेन्द्रगे ।
भाग्यवाहनकर्मेशलग्नाधिपसमन्विते ।।२२३।।

भौम की दशा में अपने उच्च वा अपनी राशि में केन्द्र में गये हुये भाग्य चतुर्थ, दशम, और लग्नेश से युक्त चन्द्रमा के अन्तर में।।२२३।।

करोति विपुलं राज्यं गन्धमाल्याम्बरीदिकम् ।
तडागं गोपुरादीनां पुण्यधर्मादिसंग्रहम् ।।२२४।।

बड़े राज्य का गंध, माल्य वस्त्रादि के साथ लाभ होता है, तालाब किला आदि का निर्माण होता है, पुण्य धर्म आदि होते हैं।।२२४।।

विवाहोत्सवकर्माणि दारपुत्रादिसौख्यकृत् ।
पितृमातृसुखप्राप्तिं गृहे लक्ष्मीकटाक्षकृत् ।।२२५।।

विवाहादि उत्सव होता है। स्त्री पुत्रादि का सुख होता है, पिता-माता का सुख होता है और गृह में लक्ष्मी का वास होता है।।२२५।।

महाराजप्रसादेन इष्टसिद्धिसुखादिकम् ।
पूर्णचन्द्रे पूर्णफलं क्षीणे स्वल्पफलं भवेत् ।।२२६।।

राजा की प्रसन्नता से अभीष्ट की सिद्धि होती हैं पूर्ण चन्द्रमा हो तो पूर्णफल और क्षीणचन्द्र हो तो अल्प फल होता है।।२२६।।

नीचारिस्थेऽष्टमे व्यये दायेशाद्रिपुरंध्रके ।
मरणं दारपुत्राणां कष्टं भूमतिनाशनम् ।।२२७।।

यदि चन्द्रमा नीच राशि में ६।८।१२ भाव में वा दशेश से ६।८ भाव में हो तो अपने अन्तर में स्त्री पुत्र का मरण और भूमि की हानि होती है।।२२७।।

पशुधान्यक्षयं चैव चौरादिरणभीतिकृत् ।
द्वितीयद्यूननाथे तु ह्यपमृत्युर्भविष्यति ।।२२८।।

पशु, धान्य का नाश चौर आदि का और संग्राम का भय होता है। २।७ भाव का स्वामी हो तो अकाल मृत्यु होती है।।२२८।।

देहजाड्यं मनोदुःखं दुर्गालक्ष्मीजपं चरेत् ।
श्वेतां गां महिषीं दद्याद्दानेनारोग्यमादिशेत् ।।२२९।।

देह जड़ता और मानसिक दुःख होता है। शान्ति के लिये दुर्गा और लक्ष्मी का जप, सफेद गौ और भैंस का दान कराना चाहिये इसके करने से आरोग्यता होती है।।२२९।।

इतिकुजदशायामन्तर्दशाफलम्।

अथ राहुदशायांराह्वन्तर्दशाफलम्–

कुलीरे वृश्चिके चैव कन्यायां वा चापगेहगेऽगौ ।
तद्भुक्तौ राजसन्मानं वस्त्रवाहनभूषणम् ।।२३०।।

कर्क वा वृश्चिक वा कन्या वा धन में राहु हो तो राहु की दशा में राहु के ही अन्तर में राजा से सम्मान, वस्त्र, वाहन का लाभ होता है।।२३०।।

व्यवसायात्फलाधिक्यं चतुष्पाज्जीवलाभकृत् ।
प्रयाणं पश्चिमे भागे वाहनाम्बरलाभकृत् ।।२३१।।

व्यवसाय (रोजगार) से अधिक लाभ, चतुष्पद का लाभ होता है। पश्चिम दिशा की यात्रा होती है और उससे वाहन, वस्त्र का लाभ होता है।।२३१।।

लग्नादुपचये राहौ शुभग्रहयुतेक्षिते ।
मित्रांशेतुङ्गलाभेंशे योगकारकसंयुते ।।२३२।।

लग्न से उपचय (३।६।१०।११) भाव में राहु शुभग्रह से युत दृष्ट हो वा मित्रांश में वा उच्चांश में लाभ दशम के अंश में हो और योगकारक से युत हो तो।।२३२।।

राज्यलाभं महोत्साहं राजप्रीतिं शुभावहाम् ।
गृहे कल्याणसम्पत्तिर्दारपुत्रादिवर्धनम् ।।२३३।।

राज्य का लाभ, उत्साह, और राजा से प्रेम होता है। गृह में कल्याण, सम्पत्ति, स्त्री पुत्र आदि की वृद्धि होती है।।२३३।।

षष्ठाष्टमव्यये राहौ पापयुक्तेऽथवीक्षिते ।
चौरादिव्रणपीडाच सर्वत्र जनपीडनम् ।।२३४।।

यदि राहु ६।८।१२ भाव में पापग्रह से युत दृष्ट हो तो चोर आदि से, फोड़ा आदि से पीड़ा और परिवार के लोगों को कष्ट होता है।।२३४।।

राजद्वारजनद्वेष इष्टबन्धुविनाशनम् ।
दारपुत्रादिपीडा च सर्वत्र जनपीडनम् ।।२३५।।

राजकर्मचारियों से शत्रुता अभीष्ट बंधु का नाश होता है, स्त्री पुत्रादि को पीड़ा और अपने लोगों को कष्ट होता है।।२३५।।

द्वितीयद्यूननाथेतु सप्तमस्थानमाश्रितः ।
सदा रोगं महाकष्टं शांतिंकुर्याद्यथाविधि ।
आरोग्यं सम्पदश्चैव भविष्यति न संशयः ।।२३६।।

२।७ भाव का स्वामी हो और ७ वें भाव में बैठा हो तो सदा रोग और महाकष्ट होता है। इसकी शान्ति यथाविधि करने से आरोग्य और सम्पत्ति का लाभ होता है इसमें संशय नहीं।।२३६।।

अथराहुदशायांगुर्वन्तरफलम्-

राहोरन्तर्गते जीवे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ।
स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे वापिसुङ्गांशेस्वांशगेपिवा ।।२३७।।

राहु की दशा में लग्न से केन्द्र वा त्रिकोण में वा अपनी उच्चराशि वा अपनी राशि में वा उच्चांश वा अपने नवांश में गये हुये गुरु के अन्तर में।।२३७।।

स्थानलाभं मनोधैर्यं शत्रुनाशं महत्सुखम् ।
राजप्रीतिकरं सौख्यं महतीव समश्नुते ।।२३८।।

स्थान का लाभ, मन में धैर्य, शत्रु का नाश, अत्यंत सुख, राजा से प्रीति, सुख होता है।।२३८।।

दिने दिने वृद्धिरपि शुक्लपक्षे शशी यथा ।
वाहनादि धनं भूरि गृहे गोधनसंकुलम् ।।२३९।।

दिन दिन शुक्लपक्ष के चन्द्रमा के समान वृद्धि होती है। वाहनादि धन का लाभ और घर में गोधन की वृद्धि होती है।।२३९।।

नैऋत्यां पश्चिमे भागे प्रयाणं राजदर्शनम् ।
इष्टकार्यार्थसिद्धिः स्यात्स्वदेशे पुनरेष्यति ।।२४०।।

नैऋत्य वा पश्चिम की यात्रा और राजा का दर्शन होता है। इष्टकार्य की सिद्धि हो जाने से पुनः स्वदेश को लौट आता है।।२४०।।

उपकारो ब्राह्मणानां तीर्थयात्रादिकर्मणाम् ।
वाहनग्रामलाभश्च देवब्राह्मणपूजनम् ।।२४१।।

ब्राह्मणों का उपकार तीर्थ यात्रादि कर्म होते हैं। वाहन, ग्राम का लाभ और देवता ब्राह्मण का पूजन होता है।।२४१।।

पुत्रोत्सवादिसंतोषं नित्यं मिष्ठान्नभोजनम् ।
नीचे वास्तंगते वापि षष्ठाष्टव्ययराशिगे ।।२४२।।

पुत्रोत्सव आदि से सन्तोष और नित्यमिष्ठान्न का भोजन होता है। यदि गुरु नीच में हो वा अस्त हो वा ६।८।१२ भाव में हो।।२४२।।

शत्रुक्षेत्रे पापयुक्ते धनहानिर्भविष्यति ।
कर्मविघ्नो मानहानिः धनहानिर्भविष्यति ।।२४३।।

अथवा शत्रु राशि में पापयुत हो तो धन की हानि होती है कार्य में विघ्न, मानहानि, धन की हानि होती है।।२४३।।

कलत्रपुत्रपीडा च हृद्रोगं राजकार्यकृत् ।
दायेशात्केन्द्रकोणे वा लाभे वा धनगेऽपिवा ।।२४४।।

स्त्री-पुत्र को पीड़ा, हृदय का रोग होता है। दशेश से केन्द्र, कोण में हो वा एकादश वा धन स्थान में हो।।२४४।।

दुश्चिक्ये बलसम्पूर्णे गृहक्षेत्रादिवृद्धिकृत् ।
भोजनाम्बरपश्वादिदानधर्मजपादिकम् ।।२४५।।

वा तीसरे भाव में हो बली हो तो गृह, क्षेत्र आदि की वृद्धि करता है भोजन, वस्त्र, पशु आदि का लाभ, दान, धर्म, जप आदि होते हैं।।२४५।।

भुक्त्यंते राजकोपाच्च द्विमासं देहपीडनम् ।
ज्येष्ठभ्रातुर्विनाशं च भ्रातृपित्रादिपीडनम् ।।२४६।।

अन्तर दशा के अन्त में २ मास शरीर में पीड़ा होती है। ज्येष्ठ भाई का नाश और भाई, पिता आदि को कष्ट होता है।।२४६।।

दायेशात्षष्ठरन्ध्रे वा रिःफे वा पापसंयुते ।
तद्भुक्तौ धनहानिः स्याद्देहपीडा भविष्यति ।।२४७।।

दशेश से ६।८।१२ भाव में पापग्रह से युत हो उसके अन्तर में धन की हानि शरीर में पीड़ा होती है।।२४७।।

द्वितीयद्यूननाथे वा ह्यपमृत्युर्भविष्यति ।
स्वर्णस्य प्रतिमादानं शिवपूजां च कारयेत् ।
देहारोग्यं प्रकुरुते शान्तिंकुर्याद्विचक्षणः ।।२४८।।

२।७ भाव का स्वामी हो तो अपमृत्यु होती है। सुवर्ण की गुरु की प्रतिमा (मूर्त्ति) का दान और शिव की पूजा करने से शरीर आरोग्य होता है अतः शान्ति कराना चाहिये।।२४८।।

अथराहुदशायांशन्यन्तर्दशाफलम्—

राहोरन्तर्गते मन्दे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ।
स्वोच्चे मूलत्रिकोणे वा दुश्चिक्ये लाभराशिगे ।।२४९।।

राहु की दशा में लग्न से केन्द्र वा त्रिकोण में वा अपने उच्च वा मूल त्रिकोण में वा तीसरे भाव में एकदाशभाव में गये हुये।।२४९।।

तद्भुक्तौ वाहनं सेवा राजप्रीतिकरं शुभम् ।
विवाहोत्सव कार्याणि कृत्वापुण्यानिभूरिशः ।।२५०।।

शनि के अन्तर में वाहन, नौकरी राजा से प्रीति होती है। विवाह आदि अनेक पुण्य कार्यों को मनुष्य करता है।।२५०।।

आरामकरणे दक्षो तडागं कारयिष्यति ।
शूद्रप्रभुवशादिष्टलाभं गोधनसंग्रहम् ।।२५१।।

बगीचा और तालाब बनाने को उत्सुक होता है। शूद्र स्वामी से गोधन का संग्रह।।२५१।।

प्रयाण पश्चिमगेभागे प्रभुमूलाद्धनक्षयः ।
देहायासं फलाल्पत्वं स्वदेशे पुनरेष्यति ।।२५२।।

और लाभ होता है। पश्चिम दिशा की यात्रा से स्वामी द्वारा धन की हानि, देह में शिथिलता अल्पफल को प्राप्त हो पुनः स्वदेश को आता है।।२५२।।

नीचारिक्षेत्रगे मन्दे रन्ध्रे वा व्ययगेऽपिवा ।
नीचारिराजभीतिश्च दारपुत्रादि पीडनम् ।।२५३।।

यदि शनि नीच वा शत्रु गृह में हो वा ८।१२ भाव में हो तो नीचशत्रु और राजा से भय होता है और स्त्री-पुत्र को पीड़ा होती है।।२५३।।

आत्मबन्धुमनस्तापं दायादजनविग्रहम् ।
व्यवहारे च कलहमकस्माद्भूषणं लभेत् ।।२५४।।

आत्मीय बन्धुओं के मनमें सन्ताप और दायादों से शत्रुता होती है। व्यवहार में कलह और अकस्मात् आभूषण का लाभ होता है।।२५४।।

दायेशात्षष्ठरिःफे वा रन्ध्रे वा पापसंयुते ।
हृद्रोगं मानहानिश्च विवादः शत्रुपीडनम् ।।२५५।।

दशेश से ६।१२।८ भाव में पापग्रह से युत्त हो तो हृदय का रोग, मानहानि, विवाद और शत्रु से पीड़ा होती है।।२५५।।

अन्यदेशप्रयाणं च गुल्मवद्व्याधिभाग्भवेत् ।
कुभोजनं कोद्रवादि जातिदुःखाद्भयं भवेत् ।।२५६।।

विदेश की यात्रा होती है। गुल्मरोग के समानव्याधि कोद्रव आदि कुत्सित भोजन और जातीय लोगों से दुःख का भय होता है।।२५६।।

द्वितीयद्यूननाथे तु ह्यपमृत्युर्भविष्यति ।
कृष्णां गां महिषीं दद्याद्दानेनारोग्यमादिशेत् ।।२५७।।

२।७ भाव का स्वामी हो तो अपमृत्यु का भय होता है। काली गौ और भैंस के दान करने से आरोग्यता का लाभ होता है।।२५७।।

अथराहुदशायांबुधान्तर्दशाफलम्–

राहोरन्तर्गते सौम्ये भाग्ये वा स्वर्क्षगेऽपिवा ।
तुङ्गे वा केन्द्रराशिस्थे पुत्रे वा लाभगेऽपिवा ।।२५८।।

राहु की दशा में भाग्य (९) वा अपनी राशि, अपने उच्च, केन्द्र, पंचम वा एकादश में गये हुये।।२५८।।

राजयोगं प्रकुरुते गृहे कल्याणवर्धनम् ।
व्यापारेण धनप्राप्तिर्विद्यावाहनमुत्तमम् ।।२५९।।

बुध के अन्तर में राजयोग का उदय, नित्य कल्याण की वृद्धि, व्यापार से धन लाभ, विद्या और वाहन का लाभ, विवाहोत्सव आदि कार्य, चतुष्पदों का लाभ होता है।।२५९।।

विवाहोत्सवकार्याणि चतुष्पाज्जीवलाभकृत् ।
सौम्यमासे महत्सौख्यं स्ववारे राजदर्शनम् ।।२६०।।

बुध के मास में महासुख और बुध के दिन राजा का दर्शन।।२६०।।

सुगन्धपुष्पशय्यादिस्त्रीसौख्यं चातिशोभनम् ।
महाराजप्रसादेन धनलाभो महद्यशः ।।२६१।।

सुगन्ध पुष्प, शय्या, और स्त्री का सुख होता है, महाराज के प्रसाद से धन का लाभ और बड़ा यश होता है।।२६१।।

दायेशात्केन्द्रलाभे वा दुश्चिक्ये: भाग्यकर्मगे ।
देहारोग्यं हृदुत्साहं इष्टसिद्धिः सुखावहा ।।२६२।।

दशेश से केन्द्र वा लाभ वा तीसरे वा ९।१० भाव में बुध शरीरारोग्यता, हृदय में उत्साह, इष्टसिद्धि और सुख होता है।।२६२।।

पुण्यश्लोकादिकीर्त्तिश्च पुराणश्रवणादिकम् ।
विवाहो यज्ञदीक्षा च दानधर्मदयादिकम् ।।२६३।।

पुण्य-श्लोक, कीर्त्ति और पुराण श्रवण, विवाह, यज्ञ-दीक्षा दान-धर्म दया आदि होता है।।२६३।।

षष्ठाष्टमव्यये सौम्ये मन्दराशियुतेक्षिते ।
दायेशात्षष्ठरि:फे वा रंध्रे वा पापसंयुते ।।२६४।।

६।८।१२ वें भाव में बुध हो और शनि की राशि में शनि से दृष्ट हो अथवा दशेश से ६।१२।८ भाव में पापग्रह से युत हो तो।।२६४।।

देवब्राह्मणनिन्दा च भोगभाग्यविहीनभाक् ।
सत्यहीनश्च दुर्बुद्धिश्चौराहिनृपपींडनम् ।।२६५।।

देवता-ब्राह्मण की निन्दा, भोगादि से विहीन, सत्य से हीन, दुर्बुद्धि का उदय, चोर, सर्प राजा से पीड़ा होती है।।२६५।।

अकस्मात्कलहश्चैव गुरुपुत्रादि नाशनम् ।
अर्थव्ययो राजकोपो दारपुत्रादिपीडनम् ।।२६६।।

अकस्मात् कलह, गुरु पुत्र आदि का नाश, होता है। द्रव्य का व्यय, राजा का कोप, स्त्री पुत्र आदि को पीड़ा होता है।।२६६।।

द्वितीयद्यूननाथे वा ह्यपमृत्युं तयाऽश्रियम् ।
तद्दोषपरिहारार्थं विष्णुसाहस्त्रकं जपेत् ।
स्वगृह्योक्तविधानेन शान्तिं कुर्याद्विचक्षणः ।।२६७।।

२।७ भाव का स्वामी हो तो अपमृत्यु और दरिद्रता होती है। इस दोष के शान्त्यर्थ विष्णुसहस्त्र नाम का जप और अपने शाखा के अनुसार शान्ति करना चाहिये।।२६७।।

अथराहुदशायांकेत्वन्तर्दशाफलम्-

राहोरन्तर्गते केतौ भ्रमणं राजकृद्धनम् ।
वातज्वरादिरोगश्च चतुष्पाज्जीवहानिकृद् ।।२६८।।

राहु की दशा में केतु की अन्तर्दशा में भ्रमण और राजा से धन प्राप्ति और वातज्वर आदि रोग, चतुष्पदजीवों की हानि होती है।।२६८।।

अष्टमाधिपसंयुक्ते देहजाड्यं मनोरुजम् ।
शुभयुक्ते शुभैर्दृष्टे देहसौख्यं धनागमः ।।२६९।।

अष्टमेश से युत हो तो शरीर में जड़ता और मानसिक कष्ट होता है। शुभग्रह से युत और दृष्ट हो तो सुख और धन का लाभ होता है।।२६९।।

राजसन्मानभूप्राप्तिर्गृहे शुभकरो भवेत् ।
लग्नाधिपेन सम्बन्धे इष्टसिद्धिः सुखावहा ।।२७०।।

राजा से सन्मान, धन भूमि का लाभ और गृह में शुभ कार्य होंगे लग्नेश हो सम्बंध होने से इष्ट सिद्धि होती है।।२७०।।

लग्नाधिपसमायुक्ते लाभोवा भवति ध्रुवम् ।
चतुष्पाज्जीवलाभः स्यात्केन्द्रे वाथ त्रिकोणगे ।।२७१।।

लग्नेश से सम्बन्ध हो तो अभीष्ट की सिद्धि और सुख होता है। यदि लग्नेश से युत हो तो धन का लाभ होता है। केन्द्र त्रिकोण में रहने से चतुष्पद का लाभ होता है।।२७१।।

रंध्रस्थानगते केतौ व्यये वा वलवर्जित ।
तद्भुक्तौ बहुरोगः स्याच्चौराग्निव्रणपीडनम् ।।२७२।।

८।१२ स्थान में निर्बल केतु हो तो उसके अन्तर में अनेक रोग, चोर, अग्नि और फोड़ा से पीड़ा।।२७२।।

पितृमातृवियोगश्च भ्रातृद्वेषं मनोरुजम् ।
स्वप्रभोश्च महाकष्टं वैषम्यं चित्तहिंसकम् ।।२७३।।

पिता माता से वियोग, भाई से द्वेष, मानसिक कष्ट होता है और अपने मालिक से बैर और उससे कष्ट होता है।।२७३।।

द्वितीयद्युननाथे तु देहवाधा भविष्यति ।
तद्दोषपरिहारार्थं छागदानं च कारयेत् ।।२७४।।

२।७ भाव का स्वामी हो तो शरीर में बाधा होती है। इसके शान्त्यर्थ बकरी का दान करना चाहिये।।२७४।।

अथराहुदशायांशुक्रान्तर्दशाफलम्–

राहोरर्न्तगते शुक्रे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ।
लाभे वा वलसंयुक्ते योगप्रावल्यमादिशेत् ।।२७५।।

राहु की दशा में लग्न से केन्द्र वा त्रिकोण वा एकादश स्थान में बलवान शुक्र हो तो प्रबल योग होता है।।२७५।।

विप्रमूलाद्धनप्राप्तिर्गोमहिष्यादिलाभकृत् ।
पुत्रोत्सवादिसन्तोषं गृहे कल्याणसम्भवम् ।।२७६।।

इसके अन्तर में ब्राह्मण द्वारा धन का लाभ, गौ भैंस का लाभ, पुत्रोत्सव, गृह में कल्याण।।२७६।।

सम्मानं राजसन्मानं राज्यलाभं महत्सुखम् ।
स्वोच्चे वा स्वर्क्षगे वापि तुङ्गांशे स्वांशगेऽपिवा ।।२७७।।

सम्मान, राजा से आदर, राज्य सुख का लाभ होता है। यदि शुक्र अपने उच्च वा अपनी राशि में, उच्चांश में वा अपने नवांश में हो तो।।२७८।।

नूतनगृहनिर्माणं नित्यं मिष्ठान्नभोजनम् ।
कलत्रपुत्रविभवं मित्रसंयुक्तभोजनम् ।।२७८।।

नूतन गृह का निर्माण, नित्य मिठाई का भोजन, स्त्री, पुत्र वैभव और मित्रों के साथ भोजन होता है।।२७८।।

अन्नदानप्रियं नित्यं दानधर्मादिसंग्रहम् ।
महाराजप्रसादेन वाहनाम्बरभूषणम् ।।२७९।।

अन्नदान तथा अन्य धार्मिक क्रियायें और महाराज की प्रसन्नता से वाहन-वस्त्र आभूषण का लाभ।।२७९।।

व्यवसायात्फलाधिक्यं विवाहो मौंजिबंधनम् ।
षष्ठाष्टमव्यये शुक्रे नीचे शत्रुगृहेस्थिते ।।२८०।।

व्यवसाय से अधिक लाभ और विवाह यज्ञोपवीत आदि उत्सव होते हैं। यदि शुक्र ६।८।१२ भाव में हो नीच में वा शत्रु गृह में हो।।२८०।।

मन्दारफणिसंयुक्ते तद्भुक्तौ रोगमादिशेत् ।
अकस्मात्कलहं चैव पितृपुत्रवियोगकृत् ।।२८१।।

शनि, भौम राहु से युत हो तो इसके अन्तर में रोग, अकस्मात् कलह पिता-पुत्र से वियोग।।२८१।।

स्वबंधुजनहानिश्च सर्वत्र जनपीडनम् ।
दायादि कलहं चैव स्वप्रभोः स्वस्यमृत्युकृत् ।।२८२।।

अपने बन्धुओं की हानि, सभी जनों को कष्ट, दायादों से कलह, अपने स्वामी तथा अपने को मृत्युतुल्य कष्ट।।२८२।।

कलत्रपुत्रपीडां च शूलरोगादि सम्भवम् ।
दायेशात्केन्द्रराशिस्थे त्रिकोणे वा समन्विते ।।२८४।।

स्त्री पुत्र को कष्ट और शूल रोग की सम्भावना होती है। दशेश से केन्द्र वा त्रिकोण में वा युत हो।।२८४।।

लाभे वा धर्मराशिस्थे क्षेत्रपालान्महत्सुखम् ।
सुगंधवस्त्रशय्यादि गानविद्यापरिश्रमम् ।।२८५।।

लाभ या नवम भाव में शुक्र हो तो क्षेत्रपाल से सुख होता है।।२८५।।

छत्रचामरवाद्यादिगंधपद्मसमन्वितम् ।
दायेशाद्रिपुरंध्रस्थे व्यये वा पापसंयुते ।।२८६।।

और छत्र, चामर, बाजा आदि गंधादि से युक्त होता है। दशेश से ६।८।१२ भाव में पापग्रह से मुत शुक्र हो तो।।२८६।।

विषाहिनृपचौरादिमूत्रकृच्छ्रकान्महद्भयम् ।
प्रमेहाद्रुधिरं रोग कुत्सितान्नं शिरोरुजम् ।।२८७।।

उसके अन्तर में विष-सर्प-राजा-चोर आदि से तथा कृच्छ्र (सुजाक) रोग से भय होता है। प्रमेह से रक्त का रोग और खराब अन्न का भोजन तथा शिर में रोग होता है।।२८७।।

कारागृहप्रवेशं च राजदंडाद्धनक्षयम् ।
द्वितीयद्यूननाथे वा दारपुत्रादिनाशनम् ।।२८८।।

कारागाह (जेल) में प्रवेश, स्त्री पुत्रादि का नाश होता है। २।७ भाव का स्वामी हो तो अपमृत्यु का भय होता है।।२८८।।

आत्मपीडा भयं चैवह्यपमृत्युस्तथाभवेत् ।
दुर्गालक्ष्मीजपं कुर्यान्मृत्युनाशकरो भवेत् ।।२८९।।

दुर्गा और लक्ष्मी का जय करने से मृत्यु का नाश होकर सुख होता है।।२८९।।

अथराहुदशायांसूर्यान्तर्दशाफलम्–

राहोरन्तर्गते सूर्ये स्वोच्चे स्वक्षेत्रकेन्द्रगे ।
त्रिकोणे लाभगे वापि तुंगांशेस्वांशमेऽपिवा ।।२९०।।

राहु की दशा में अपने उच्च में वा अपनी राशि में केन्द्र त्रिकोण, ग्यारहवें वा अपने उच्चांश वा अपने नवांश में गये हुये।।२९०।।

शुभग्रहेण संदृष्टे राजप्रीतिकरं शुभम् ।
धनधान्यसमृद्धिश्च ह्यल्पसौख्यं सुखावहम् ।।२९१।।

शुभग्रह से देखे जाते हुये सूर्य के अन्तर में राजा से प्रेम, धन धान्य समृद्धि की प्राप्ति, अल्पसुख।।२९१।।

अल्पग्रामाधिपत्यं च स्वल्पलाभो भविष्यति ।
भाग्यलग्नेशसंयुक्ते कर्मेशेन निरीक्षिते ।।२९२।।

छोटे ग्राम का आधिपत्य, अल्पलाभ होता है। भाग्येश और लग्नेश से युक्त हो और कर्मेश से देखा जाता हो तो।।२९२।।

राजाश्रयो महत्कीर्त्तिर्विदेशगमनं महत् ।
देशाधिपत्ययोगं च गजाश्वाम्बरभूषणम् ।।२९३।।

राजा से आश्रय की प्राप्ति, बड़ा यश, विदेशयात्रा होती है। यह देश का अधिपति योग होता है इसमें ग्राम का अधिकार हाथी, घोड़ा वस्त्र आभूषण की प्राप्ति।।२९३।।

मनोभीष्टप्रदानं च पुत्रकल्याणसम्भवम् ।
दायेशाद्रिःफरन्ध्रस्थे षष्ठे वा नीचगेऽपि वा ।।२९४।।

मन के अनुकूल इष्टसिद्धि, पुत्र के लाभ का सम्भव होता है यदि दशेश १२।८।६ स्थान में सूर्य हों वा नीच राशि में हों तो।।२९४।।

ज्वरातिसाररोगं च कलहंराजविद्विषम् ।
प्रयाणं शत्रुवृद्धिश्च नृपचौराग्निपीडनम् ।।२९५।।

ज्वरातिसार रोग, कलह, राजा से विद्वेष, यात्रा, शत्रुओं की वृद्धि, राजा चोर अग्नि से पीड़ा होती है।।२९५।।

दायेशात्केन्द्रकोणे वा दुश्चिक्ये लाभगेऽपिवा ।
विदेशे राजसन्मानं कल्याणं च शुभावहम् ।।२९६।।

दशेश से केन्द्र वा त्रिकोण वा तीसरे वा लाभ स्थान में हो तो विदेश में राजा से सम्मान, कल्याण और शुभ होता है।।२९६।।

द्वितीयद्यूननाथेतु महारोगो भविष्यति ।
सूर्यप्रसन्नशान्ति च कुर्यादारोग्यसम्भवाम् ।।२९७।।

२।७ भाव का स्वामी हो तो महारोग होता है। सूर्य की प्रसन्नता की शान्ति करने से आरोग्यता होती है।।२९७।।

अथराहुदशायांचन्द्रान्तर्दशाफलम्–

राहोरन्तर्गते चन्द्रे स्वक्षेत्रे स्वर्क्षगेऽपि वा ।
केन्द्रत्रिकोणलाभे वा मित्रर्क्षे शुभसंयुते ।।२९८।।

राहु की दशा में अपनी राशि, उच्चराशि में केन्द्रत्रिकोण, वा लाभ में वा मित्र की राशि में शुभग्रह से युत चन्द्रमा हो तो उसके अन्तर में।।२९८।।

राज्यत्वं राजपूज्यत्वं ध्नार्थं धनलाभकृत् ।
आरोग्यभूषणं चैव मित्रस्त्रीपुत्रसंपदः ।।२९९।।

राज्ञा होता है अथवा राजा से पूज्य होता है, धन के लिये धनका लाभ होता है, आरोग्यता, आभूषण, मित्र, स्त्री, पुत्र, सम्पत्ति का लाभ होता है।।२९९।।

पूर्णचन्द्रे पूर्णफलं राजप्रीत्या शुभावहम् ।
अश्ववाहनलाभः स्यात्गृहक्षेत्रादिवृद्धिकृत् ।।३००।।

पूर्ण चन्द्रमा हो तो पूर्णफल होता है और राजा की प्रसन्नता से शुभद फल होते हैं और घोड़ा आदि वाहनों का लाभ और गृह क्षेत्र आदि की वृद्धि होती है।।३००।।

दायेशात्सुखभाग्यस्थे केन्द्रे वा लाभगेऽपिवा ।
लक्ष्मीकटाक्षचिन्हानि गृहे कल्याणसम्भवम् ।।३०१।।

दशेश से चौथे नवें, केन्द्र वा लाभ स्थान में हो तो लक्ष्मी की कृपा के चिह्न दिखाई देते हैं, गृह में कल्याण होता है।।३०१।।

पूर्णकार्यार्थसिद्धिः स्याद्धनधान्यसुखावहम् ।
सत्कीर्त्तिर्लाभसन्मानं देव्याराधनमाचरेत् ।।३०२।।

पूर्णकार्य और धन का लाभ, कीर्त्ति वृद्धि और सन्मान होता है। देवाराधन करना चाहिये।।३०२।।

दायेशात्षष्ठरंध्रस्थे व्यये वा वलसंयुते ।
पिशाचक्षुद्रव्याघ्रादिगृहक्षेत्रार्थनाशनम् ।।३०३।।

दशेश से ६।८।१२ वें भाव में बलवान् हो तो पिशाच, क्षुद्रजन्तु- व्याघ्र आदि से गृह-खेती और धन का नाश होता है।।३०३।।

मार्गेचौरभयं चैव ब्रणाधिक्यं महाभयम् ।
द्वितीयद्यूननाथेतु अपमृत्युस्तदा भवेत् ।
श्वेतांगा महिषीं दद्याद्दानेनारोग्यता भवेत् ।।३०४।।

मार्ग में चोर का भय और ब्रण (फोड़ा) से बड़ा भय होता है। २।७ भाव के स्वामी हो तो अपमृत्यु का भय होता है। सफेद गौ भैंस के दान से आरोग्यता होती है।।३०४।।

अथराहुदशायांभौमान्तर्दशाफलम्–

राहोरन्तर्गतेभौमे लग्नाल्लाभत्रिकोणगे ।
केन्द्रे वा शुभसंयुक्ते स्वोच्चे स्वक्षेत्रमेऽपि वा ।।३०५।।

राहु की दशा में लग्न से लाभ वा त्रिकोण वा केन्द्र में शुभग्रह से अपने उच्च वा अपनी राशि में गये हुये भौम के अन्तर में।।३०५।।

नष्टराज्यधनप्राप्तिः गृहक्षेत्राभिवृद्धिकृत् ।
इष्टदेवप्रसादेन सन्तानसुखभोजनम् ।।३०६।।

नष्टराज्य की प्राप्ति गृह क्षेत्र की वृद्धि होती है। इष्टदेव की प्रसन्नता से सन्तान का सुख, भोजन का सुख होता है।।३०६।।

क्षिप्रभोज्यान्महत्सौख्यं भूषणाम्बरलाभकृत् ।
दायेशात्केन्द्रकोणेवा दुश्चिक्येलाभगेऽपिवा ।।३०७।।

शीघ्र भोजन महासुख, भूषग, वस्त्रादि का लाभ होता है। दशेश से केन्द्र वा कोण में वा तीसरे वा लाभ स्थान में हो तो।।३०७।।

रक्तवस्त्रादिलाभः स्यात्प्रयाणं राजदर्शनम् ।
पुत्रवर्गेषुकल्याणं स्वप्रभोश्च महत्सुखम् ।।३०८।।

लाल वस्त्रादि का लाभ, यात्रा और राजा का दर्शन, पुत्र वर्ग में कल्याण, महासुख।।३०८।।

सेनापत्यं महोत्साहं भ्रातृवर्गधनागमम् ।
दायेशाद्रिःफरंध्रे वा षष्ठे पापसमन्विते ।।३०९।।

सेनापतिपद का लाभ बड़ा उत्साह और भाइयों से धन का लाभ होता है। दशेश से १२।८।६ भाव में पापग्रह से युक्त हो तो।।३०९।।

पुत्रदारादिहानिश्च सोदराणां च पीडनम् ।
स्थानभ्रंशं बंधुवर्गदारपुत्रविरोधनम् ।।३१०।।

पुत्र स्त्री की हानि, भाइयों को पीड़ा, स्थान भ्रष्ट, बंधुओं से तथा स्त्री, पुत्र से विरोध होता है।।३१०।।

चौरादिब्रणभीतिश्च सोदराणां च पीडनम् ।
आदौ क्लेशकरंचैवमध्यान्ते सौख्यमाप्नुयात् ।।३११।।

चौर तथा ब्रण से भय और भाइयों को कष्ट होता है। अन्तर पहले कष्ट और मध्य तथा अन्त में सुख होता है।।३११।।

द्वितीयद्यूननाथेतु देहालस्यं महद्भयम् ।
अनड्वाहं च गांदद्याद्देहारोग्यंभविष्यति ।।३१२।।

यदि २।७ भाव का स्वामी हो तो देह में आलस्य और बड़ा भय होता है। बैल और गौ का दान करने से आरोग्यता होती है।।३१२।।

इतिराहुदशायामन्तर्दशाफलम्।

अथगुरुदशायांगुर्वन्तर्दशाफलम्–

स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे जीवे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ।
अनेकराज्याधीशश्च सम्पन्नो राजपूजितः ।।१।।

गुरु की दशा में अपने उच्च, अपनी राशि में लग्न से केन्द्र वा त्रिकोण में गये हुये गुरु के अन्तर में अनेक राज्यों का स्वामित्व सम्पन्नता और राजा से पूजनीय।।१।।

गोमहिष्यादिलाभश्च वस्त्रवाहनभूषणम् ।
नूतनस्थाननिर्माणं हर्म्यप्राकारसंयुतम् ।।२।।

गौ, भैंस आदि का तथा वस्त्र आभूषण का लाभ होता है। नये स्थान का निर्माण गृह आदि का लाभ होता है।।२।।

गजान्तैश्वर्यसम्पत्तिर्भाग्यकर्मणिसंयुते ।
ब्राह्मणप्रभुसन्मानं समानप्रभुदर्शनम् ।।३।।

यदि गुरु भाग्य वा कर्म में हो तो हाथी आदि के ऐश्वर्य से युक्त।।३।।

स्वप्रभोः स्वफलाधिक्यं दारपुत्रादिलाभकृत् ।
नीचांशे नीचराशिस्थे षष्ठाष्टव्ययराशिगे ।।४।।

और अपने स्वामी से अधिक लाभ, स्त्री आदि का लाभ होता है। यदि गुरु नीचांश वा नीच राशि में ६।८।१२ भाव में हो तो।।४।।

नीचसङ्गं महादुःखं दायादजनविग्रहम् ।
कलहो न विचारोस्य स्वप्रभुह्यपमृत्युकृत् ।।५।।

नीचों की सङ्गति महादुःख, दायादों से विरोध, कलह, अपमृत्यु का भय।।५।।

पुत्रदारवियोगं च धनधान्यार्थहानिकृत् ।
सप्तमाधिपदोषेण देहबाधा भविष्यति ।।६।।

पुत्र-स्त्री से वियोग, धन धर्म का नाश होता है। सप्तमेश होने से शरीर में रोग होता है।।६।।

तद्दोषपरिहारार्थं शिवसाहस्रकं जपेत् ।
रुद्रजाप्यं च गोदानं कुर्यादिष्टस्य प्राप्तये ।।७।।

इस दोष की शान्ति के लिये शिवसहस्र नाम का जप, रुद्राष्टाध्यायी का जप, गोदान करने से अभीष्ट की प्राप्ति होती है।।७।।

अथगुरुदशायांशन्यन्तर्दशाफलम्–

जीवस्यान्तर्गते स्वोच्चे स्वक्षेत्रमित्रगे ।
लग्नात्केन्द्रत्रिकोणस्थे लाभे वा वलसंयुते ।।८।।

गरु की दशा में अपने उच्च, अपने गृह वा अपने मित्र की राशि में लग्न से केन्द्र वा त्रिकोण वा लाभ में बलवान् शनि के अन्तर में।।८।।

राज्यलाभं महत्सौख्यं वस्त्राभरणसंयुतम् ।
धनधान्यादिलाभं च स्त्रीलाभं बहुसौख्यकृत् ।।९।।

राज्य का लाभ, महान् सुख, वस्त्र आभूषण का लाभ, धन धान्य का लाभ, स्त्री का लाभ अनेक सुख।।९।।

वाहनाम्बरपश्वादिभूलाभं स्थानलाभदम् ।
पुत्रमित्रादिसौख्यं च नरवाहनयोगकृत् ।।१०।।

वाहन, वस्त्र, पशु आदि तथा भूमि का लाभ और स्थान का लाभ होता है। पुत्र मित्र आदि का सुख और मनुष्य की सवारी का लाभ होता है।।१०।।

नीलवस्त्रादिलाभश्च नीलाश्वं लभते च सः ।
पश्चिमां दिशमाश्रित्य प्रयाणं राजदर्शनम् ।।११।।

नीले वस्त्र, नीले घोड़े का लाभ, पश्चिम दिशा की यात्रा और राजा का दर्शन।।११।।

अनेकयानलाभं च निर्दिशेन्मन्दभुक्तिषु ।
लग्नात्षष्ठाष्टमे मंदेव्यये नीचेऽस्तगेऽप्यरौ ।।१२।।

और अनेक प्रकार की सवारी का लाभ होता है लग्न से ६।८।१२ स्थान में शनि वा अस्त हो तो नीच वा शत्रु राशि में।।१२।।

धनधान्यादिनाशश्च ज्वरपीडा मनोरुजम् ।
स्त्रीपुत्रादिषु पीडा वा व्रणात्यादिकयुग्भवेत् ।।१३।।

धन धान्य का नाश ज्वर से पीड़ा-मानसिक कष्ट, स्त्री पुत्रादि को कष्ट व्रण का दुःख।।१३।।

गृहेत्वशुभकार्याणि भृत्यवर्गादिपीडनम् ।
गोमहिष्यादिहानिश्च बन्धुद्वेष्यो भविष्यति ।।१४।।

घर में अशुभ कार्य, नौकरों को कष्ट, गौ, भैंस आदि को कष्ट बन्धुओं से द्वेष होता है।।१४।।

दायेशात्केन्द्रकोणस्थे लाभे वा धनगेऽपिवा ।
भूलाभश्चार्थलाभश्च पुत्रलाभसुखंभवेत् ।।१५।।

दशेश से केन्द्र वा कोण वा लाभ वा धन स्थान में हो तो भूमि का लाभ, पुत्र का लाभ सुख।।१५।।

गोमहिष्यादिलाभश्च शुद्रमूलाद्धनंभवेत् ।
दायेशाद्रिपुरन्ध्रस्थेव्यये वा पापसंयुते ।।१६।।

गौ, भैंस का लाभ और शूद्र के द्वारा धन का लाभ होता है। दशेश से ६।८।१२ वें स्थान में पापग्रह से युत हो तो।।१६।।

धनधान्यादिनाशश्च बंधुमित्र विरोधकृत् ।
उद्योगभङ्गो देहार्तिः स्वजनानां महद्भयम् ।।१७।।

धन धान्य का नाश, बंधु मित्रादि से विरोध, उद्योगहीन, शरीर में कष्ट, और स्वजनों से भय होता है।।१७।।

द्विसप्तमाधिपे मंदे ह्यपमृत्युर्भविष्यति ।
तद्दोषपरिहारार्थं विष्णुसाहस्रकं जपेत् ।
कृष्णां गां महिषीं दद्याद्दानेनारोग्यमादिशेत् ।।१८।।

२।७ भाव का स्वामी शनि हो तो अपमृत्यु का भय होता है।।१८।।

इसकी शान्ति के लिये विष्णु सहस्र नाम का जप काली गौ और भैंस का दान करने से आरोग्यता प्राप्त होती है।।१९।।

अथगुरुदशायांबुधान्तर्दशाफलम्–

जीवस्यान्तर्गति सौम्ये केन्द्रलाभत्रिकोणगे ।
स्वोच्चे वा स्वर्क्षगे वापि दशाधिपसमन्विते ।।२०।।

गुरु की दशा में केन्द्र वा त्रिकोण में गये हुये अपने उच्च वा अपनी राशि में वा दशेश से युत बुध के अन्तर में।।२०।।

अर्थलाभं देहसौख्यं राज्यलाभं महत्सुखम् ।
महाराजप्रसादेन इष्टसिद्धिः सुखावहा ।।२१।।

धन का लाभ, अत्यंत सुख, राज्य का लाभ और देह का सुख महाराज की प्रसन्नता से इष्ट की सिद्धि सुख होता है।।२१।।

वाहनाम्बरपश्वादिगोधनैः संकुलं गृहम् ।
दायेशाद्भाग्यकोणे वा केन्द्रे वा तुङ्गगेऽथवा ।।२२।।

वाहन, वस्त्र, पशु आदि से पूर्णता होती है। दशेश से केन्द्र वा त्रिकोण स्थान में अपने उच्च में हो तो।।२२।।

स्वदेशेधनलाभश्च पितृमातृसुखावहम् ।
गजवाजिसमायुक्तो राजमित्रप्रसादकः ।।२३।।

स्वदेश में ही धन का लाभ, पिता माता को सुख हाथी-घोड़ा से युक्त और राजा से मित्रता होती है।।२३।।

शुभदृष्टौ शुभैर्युक्ते दारसौख्यं धनागमम् ।
आदौ शुभं देहसौख्यं वाहनाम्बरलाभदम् ।।२४।।

शुभग्रह से दृष्ट और युत हो तो देह सुख, वाहन, वस्त्र का लाभ होता है।।२४।।

अन्तेतु धनहानिः स्यात्स्वात्मसौख्यं च जायते ।
महीसुतेन संदृष्टे शत्रुवृद्धिः सुखक्षयम् ।।२५।।

अन्त में धन की हानि और आत्मसुख होता है। मंगल से दृष्ट हो तो शत्रुओं की वृद्धि और सुख की हानि होती है।।२५।।

व्यवसायात्फलं नेष्टं ज्वरातीसारपीडनम् ।
दायेशात्षष्ठरन्ध्रस्थे व्यये वा पापसंयुते ।।२६।।
शुभदृष्टिविहीनश्चेद्धनधान्यपरिच्युतिः ।
विदेशगमनं चैव मार्गे चौरभयं तथा ।।२७।।

दशेश से ६।८।१२ वें भाव में हो और पापग्रह से युत हो तो रोजगार में हानि, ज्वर और अतिसार से कष्ट होता है। शुभग्रह से न देखा जाता हो तो धन धान्य का नाश और बंधु मित्रों से विरोध, उद्योग की हानि देह में पीड़ा, स्वजनों को पीड़ा, बड़ा भय।।२६-२७।।

व्रणदाहाक्षिरोगश्च नानादेशपरिभ्रमम् ।
लग्नात्षष्ठाष्टरिःफे वा लाभे वा पापसंयुते ।।२८।।

व्रणा, दाह, नेत्र का रोग अनेक देशों का भ्रमण होता है। लग्न से ६।८।१२।११ भाव में पापग्रह से युक्त हो तो।।२८।।

अकस्मात्कलहश्चैव गृहे निष्ठुरभाषणम् ।
चतुष्पाज्जीवहानिश्च व्यवहारस्तथैव च ।।२९।।

अकस्मात् कलह-गृहकलह चतुष्पदों को हानि, व्यवहार में क्षति, अपमृत्यु का भय शत्रुओं से कलह होता है।।२९।।

अपमृत्युभयं चैव शत्रूणां कलहो भवेत् ।
द्वितीयद्यूननाथे वा ह्यपमृत्युर्भविष्यति ।।३०।।

२।७ भाव के अधिपति हो तो अकालमृत्यु का भय होता है।।३०।।

तद्दोषपरिहारार्थं विष्णुसाहस्रकं जपेत् ।
बुधप्रीतिकरं चैव दानं शान्तिं च कारयेत् ।
आयुवृद्धिकरं चैव सर्वं सौभाग्यसंपदम् ।।३१।।

विष्णु सहस्र नाम स्तोत्र का जप, बुध की प्रसन्नता की शान्ति करने से सभी सौभाग्य और सम्पत्ति होंती है।।३०।।

अथगुरुदशायांकेत्वन्तर्दशाफलम् –

जीवस्थान्तर्गते केतौ शुभग्रह समन्विते ।
अल्पसौख्यधनावाप्तिर्कुत्सितान्नस्यभोजनम् ।।३२।।

गुरु की दशा में शुभग्रह से युक्त केतु के अन्तर में अल्प सुख धन का लाभ होता है। कुत्सित अन्न का भोजन।।३२।।

परान्नं चैव श्राद्धान्नं पापमूलाद्धनानि च ।
दायेशात्सुतभाग्यस्थे वाहनेकर्मगेऽपि वा ।।३३।।

परान्न, वा श्राद्धान्न का भोजन, पापूमल से धन का लाभ होता है। दशेश से ५।६।४।१० भाव में हो तो।।३३।।

नरवाहनयोगश्च गजाश्वाम्बरसंकुलम् ।
महाराज प्रसादेन इष्टकार्यार्थलाभकृत् ।।३४।।

मनुष्य की सवारी का योग हाथी-घोड़ा वस्त्र और व्यवसाय से अधिक लाभ, महाराज की प्रसन्नता से इष्टकार्य की सिद्धि।।३४।।

व्यवसायात्फलाधिक्यंगोमहिष्यादिलाभकृत् ।
यवनप्रभुमूलाद्वा द्रव्यवस्त्रादिलाभकृत् ।।३५।।

और गौ, भैंस आदि का लाभ, नीच जातीय राजा से द्रव्य-वस्त्रादि का लाभ होता है।।३५।।

दायेशाद्रिपुरन्ध्रस्थे व्यये वा पापसंयुते ।
राजकोपं धनच्छेदं बंधनं बन्धुपीडनम्।।३६।।

दशेश से ६।८।१२ भाव में पापग्रह से युत हो तो राजा के कोप से धन की हानि, वंधुओं को कष्ट।।३६।।

बलहानिः पितृद्वेषो भ्रातृद्वेषो मनोरुजः ।
द्वितीयद्यूननाथे तु देहबाधा भविष्यति ।।३७।।

पिता से द्वेष, भाई से द्वेष, मानसिक कष्ट होता है। २ वा ७ भाव का स्वामी हो तो देहबाधा होती है।।३७।।

छागदानं प्रकुर्वीत मृत्युंजय जपं चरेत् ।
सर्वदोषोपशमनीं शान्तिं कुर्याद्विधानतः ।।३८।।

बकरी का दान और मृत्युंजय का जप कराना चाहिये। सभी दोषों के शमन करने वाली शान्ति को विधानपूर्वक करना चाहिये।।३८।।

अथगुरुदशायांशुक्रान्तर्दशाफलम्–

जीवस्यानार्गते शुक्रे भाग्यकेन्द्रेशसंयुतें ।।३९।।
लाभे वा सुतराशिस्थे स्वक्षेत्रेशुभसंयुते ।

गुरु की दशा में भाग्येश केन्द्रेश से युत वा लाभ स्थान वा पांचवें स्थान में अपनी राशि में शुभग्रह से युत शुक्र के अन्तर में।।३९।।

महाराजप्रसादेन देशाधिक्यं महत्सुखम ।।४०।।

महाराजा की प्रसन्नता से देश का लाभ और सुख।।४०।।

नीलाम्बराणिशस्त्राणिलाभश्चैव भविष्यति ।
पूर्वस्यां दिशि आश्रित्य प्रयाणं धनलाभदम् ।।४१।।

नीले रंग के वस्त्र, शस्त्र, का लाभ, पूर्व दिशा की यात्रा से धन का लाभ होता है।।४१।।

कल्याणं च महाभीतिः पितृमातृ सुखावहा ।
देवतागुरुभक्तिश्च अन्नदानं महत्तथा ।।४२।।

कल्याण, महाभय, पिता-माता को सुख, देवता-गुरु में भक्ति और बड़े पैमाने पर अन्न का दान।।४२।।

तडागगोपुरादीनि कृत्वा पुण्यानि भूरिशः ।
षष्ठाष्टमव्यये नीचे दायेशाद्वा तथैव च ।।४३।।

ताडाग-गोपुर आदि पुण्यदायक अनेक कार्य होते हैं। यदि शुक्र लग्न से वा दशेश से ६।८।१२ स्थान में वा नीच में हो तो।।४३।।

कलहो बंधुवैषम्यः दारपुत्रादिपीडनम् ।
मन्दारराहुसंयुक्ते कलहो राजविड्वरम् ।।४४।।

उसके अन्तर में कलह, बंधुओं से बैर, स्त्री पुत्र आदि को पीड़ा होती है। शनि भौम राहु से युत हो तो कलह, राजा से शत्रुता।।४४।।

स्त्रीमूलात्कलहं चैव श्वशुरात्कलहं तथा ।
सोदरेण विवादः स्याद्धनधान्यपरिच्युतिः ।।४५।।

स्त्री के कारण कलह श्वसुर से कलह, भाई से झगड़ा और धन धान्य की हानि होती है।।४५।।

दायेशात्केन्द्रराशिस्थे धने वा भाग्यगेऽपिवा ।
धनधान्यादिलाभश्च स्त्रीलाभं राजदर्शनम् ।।४६।।

दशेश से केन्द्र वा धन, वा भाग्य में हो तो धन धान्य का लाभ, स्त्री का लाभ, राजा का दर्शन।।४६।।

वाहनं पुत्रलाभं च पशुवृद्धिमहत्सुखम् ।
गीतवाद्यप्रसंगादिविद्वज्जनसमागमम् ।।४७।।

वाहन और पुत्र का लाभ, पशुओं की वृद्धि और सुख, गीत बाजा का प्रसंग, विद्वानों का समागम।।४७।।

दिव्यान्न भोजनं सौख्यं स्वबन्धुजनपोषकम् ।
द्विसप्तमाधिपे शुक्रे तद्दशायां यशक्षतिः ।।४८।।

दिव्य पदार्थ का भोजन सुख और अपने बंधुओं का भरणपोषण होता है। यदि शुक्र २ वा ७ भाव का स्वामी हो तो उसके अन्तर में यश की हानि होती है।।४८।।

अपमृत्युभयं तस्य स्त्रीमूलादौषधादिभिः ।
तस्य रोगस्य शान्त्यर्थं शान्तिकर्मसमाचरेत् ।
श्वेतां गां महिषींदद्यादायुरारोग्यवृद्धिकृत् ।।४९।।

स्त्री के कारण औषधि आदि से अपमृत्यु का भय होता है उस रोग की शान्ति के लिये शान्तिकर्म करना चाहिये और आयु आरोग्यता के लिये श्वेत (सफेद) गौ भैंस का दान करना चाहिये।।४९।।

अथगुरुदशायांसूर्यान्तर्दशाफलम्–

जीवस्यान्तर्गते सूर्ये स्वोच्चे स्वक्षेत्रगेऽपिवा ।
केन्द्रेवाथ त्रिकोणे च दुश्चिक्येलाभगेऽपिवा ।।५०।।

गुरु की दशा में अपने उच्च वा अपनी राशि में केन्द्र वा त्रिकोण वा तीसरे वा लाभ स्थान में।।५०।।

भाग्ये वा बलसंयुक्ते दायेशाद्वा तथैव च ।
तत्काले धनलाभः स्याद्राजसन्मानवैभवम् ।।५१।।

वा भाग्य स्थान में गये हुये बलवान् ग्रह से युक्त, इसी प्रकार दशेश से भी हों तो सूर्य के अन्तर में धन का लाभ, राजा से सन्मान, वैभव की प्राप्ति।।५१।।

बाहनाम्वरपश्वादिभूषणम् पुत्रसम्भवम् ।
मित्रप्रभुवशादिष्टं सर्वकार्ये शुभावहम् ।।५२।।

मित्र और राजा के द्वारा इष्ट की सिद्धि और सभी कार्य में सफलता की प्राप्ति होती है।।५२।।

षष्ठाष्टमव्यये सूर्ये दायेशाद्वा तथैव च ।
शिरोरोगादिपीडा च ज्वरपीडा तथैव च ।।५३।।

लग्न से वा दशेश से ६।८।१२ भाव में सूर्य हो तो शिर में रोग, ज्वर आदि से कष्ट।।५३।।

सत्कर्मणि विहीनत्वं पापकर्म तथैव च ।
सर्वत्रजनविद्वेषो ह्यात्मबन्धुवियोगकृत् ।।५४।।

अच्छे कर्मो से विरक्ति, पापकर्म में तल्लीनता सभी लोगों से विरोध, आत्मीय बंधुओं से वियोग।।५४।।

अकस्मात्कलहं चैव जीवस्यान्तर्गते रवौ ।
द्वितीयद्यूननाथे तु देहपीडा भविष्यति ।।५५।।

अकस्मात् कलह होता है। यदि सूर्य २ वा ७ भाव का स्वामी हो तो गुरु दशा में इसके अन्तर में देह में पीड़ा होती है।।५५।।

तद्दोषपरिहारार्थमादित्यहृदयं जपेत् ।
सर्वपीडोपशमनं सूर्यप्रीतिं च कारयेत् ।।५६।।

इस दोष के शान्त्यर्थ आदित्य हृदय का जप कराना चाहिये और सभी पीड़ाओं के शान्त्र्थ सूर्य को प्रसन्न करना चाहिये।।५६।।

अथगुरुदशायांचन्द्रान्तर्दशाफलम् –

जीवस्यान्तर्गते चन्द्रे केन्द्रेलाभत्रिकोणगे ।
स्वोच्चे वा स्वक्षर्राशिस्थे पूर्णचन्द्रवलैयुते ।।५७।।

गुरु की दशा में केन्द्र वा लाभ वा त्रिकोण में अपने उच्च वा अपनी राशि में गया हुआ पूर्णचन्द्र बली हो।।५७।।

दायेशाच्छुभराशिस्थे राजसन्मानवैभवम् ।
दारपुत्रादिसौख्यं च क्षीराणां भोजनं तथा ।।५८।।

वा दशेश से उक्त भावों में शुभ राशि में हो तो चन्द्रमा के अन्तर में राजा से सन्मान और वैभव का लाभ, स्त्री पुत्र आदि को सुख, दूध का भोजन।।५८।।

सत्कर्म च तथा कीर्त्तिः पुत्रपौत्रादि वृद्धिदम् ।
महाराजप्रसादेन सर्वसौख्यं धनागमम् ।।५९।।

अच्छे कर्म, यश, पुत्र पौत्र की वृद्धि, महाराज की प्रसन्नता से सभी सुख, धन का आगम।।५९।।

अनेकजनसौख्यं च दानधर्मादिसंग्रहः ।
षष्ठाष्टमव्यये चन्द्रे संस्थिते पापसंयुते ।।६०।।

अनेक लोगों से सुख और दान धर्मादि कृत्यों का संग्रह होता है।।६०।।

दायेशात्षष्ठरंध्रे वा व्यये वा बलवर्जिते ।
मानार्थबन्धुहानिश्च विदेशपरिविच्युतिः ।।६१।।

यदि चन्द्रमा ६।८।१२ भाव में पापग्रह से युत हो वा दशेश से ६।८।१२ भाव में निर्बल हो तो इसके अन्तर में मान, धन, बन्धु की हानि, विदेश में हानि।।६१।।

नृपचौरादिपीडा च दायादजन विद्विषम् ।
मातुलादिवियोगश्च मातृपीडा तथैव च ।।६२।।

राजा, चोर आदि से कष्ट, दायादों से विग्रह, मामा आदि का वियोग और माता को कंष्ट होता है।।६२।।

द्वितीयषष्ठयोरीशे देहपीडा भविष्यति ।
तद्दोषपरिहारार्थं दुर्गापाठं च कारयेत् ।।६३।।

२ वा ६ भाव का स्वामी हो तो शरीर में पीड़ा होती है। इस दोष के शान्त्यर्थ दुर्गापाठ को कराना चाहिये।।६३।।

अथगुरुदशायांभौमान्तर्दशाफलम्–

जीवस्यान्तर्गते भौमे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ।
स्वोच्चे वा स्वक्षेत्रगे वापितुङ्गांशे स्वांशमेऽपिवा ।।६४।।

गुरु की दशा में लग्न से केन्द्र वा त्रिकोण वा अपने उच्च वा अपनी राशि वा उच्चांश वा अपने नवांश में गये हुये भौम के अन्तर में।।६४।।

विद्याविवाहकार्याणि ग्रामभूम्यादिलाभकृत् ।
जनसामर्थ्यमाप्नोति सर्वकार्यार्थसिद्धिदम् ।।६५।।

विद्या, विवाह आदि कार्य, ग्राम भूमि आदि की प्राप्ति, लोगों से सम्पर्क और सभी कार्य की सफलता और धन का लाभ होता है।।६५।।

दायेशात्केन्द्रकोणेवा लाभे वा धनगेऽपिवा ।
शुभयुक्ते शुभैर्दृष्टे धनधान्यादिसम्पदम् ।।६६।।

दशेश से केन्द्र कोण में वा लाभ स्थान वा धन स्थान में शुभग्रह से युक्त शुभग्रह से दृष्ट हो तो धन धान्य आदि सम्पत्ति का लाभ।।६६।।

मिष्ठान्नदानविभवं राजप्रीतिकरं शुभम् ।
स्त्रीसौख्यं च सुतावाप्तिः पुण्यतीर्थफलप्रदम् ।।६७।।

मिष्ठान्न का दान, वैभव का लाभ, राजा से प्रेम, स्त्री को सुख, पुत्र का लाभ और पुण्यतीर्थ का लाभ होता है।।६७।।

दायेशात्षष्ठरंध्रे वा व्ययेवा नीचगेऽपिवा ।
पापयुक्तेक्षिते वापि धान्यार्थगृहनाशनम् ।।६८।।

दशेश से ६।८।१२ भाव में वा नीच राशि में पापग्रह से युत दृष्ट हो तो धन धान्य गृह नाश।।६८।।

नानारोगभय दुःखं नेत्ररोगादिसम्भवम् ।
पूर्वार्धे क्लेशमधिकमपरार्धे महत्सुखम् ।।६९।।

अनेक रोगों का भय, दुःख, नेत्ररोग की सम्भावना होती है। अन्तर के पूर्वार्ध में अधिक कष्ट और उत्तरार्ध में बड़ा सुख होता है।।६९।।

द्वितीयद्यूननाथेतु देहजाड्यं मनोरुजम् ।
अनड्वाहं प्रकुर्वीत सर्वसम्पत्प्रदायकम् ।।७०।।

२ वा ७ भाव का स्वामी हो तो देह में जड़ता होती है और मन में विकार होता है। वृष का दान करने से सभी सम्पत्तियों का लाभ होता है।।७०।।

अथगुरुदशायांराह्वन्तर्दशाफलम् –

जीवस्यान्तर्गते राहौ स्वोच्चे वा केन्द्रगेऽपिवा ।
मूलत्रिकोणभाग्ये च केन्द्राधिपसमन्विते ।।७१।।

गुरु की दशा में अपनी उच्चराशि में वा केन्द्र में वा मूलत्रिकोण वा भाग्य में केन्द्रेश से युत वा।।७१।।

शुभयुक्तेक्षिते वापि योगप्रीतिं समादिशेत् ।
भुक्त्यादौ शरमासांश्च धनधान्य परिश्रमम् ।।७२।।

शुभग्रह से युक्त दृष्ट राहु के अन्तर में योग की प्रखरता होती है, अन्तर के आदि में ५ मास धन-धान्य और परिश्रम।।७२।।

देशग्रामाधिकारं च यवनप्रभुदर्शनम् ।
गृहे कल्याणसम्पर्त्तिवहुसेनाधिपत्यताम् ।।७३।।

देश-ग्राम की स्वामिता, यवन राजा का दर्शन, गृह में कल्याण कार्य, सम्पत्ति की प्राप्ति और अनेक अधिकार।।७३।।

दूरयात्राभिगमनं पुण्यधर्मादिसंग्रहः ।
सेतुस्नानफलावाप्तिरिष्टसिद्धिसुखावहम् ।।७४।।

दूर की यात्रा, पुण्य-धर्म आदि का संग्रह, समुद्र स्नान का लाभ और सुखकर इष्टसिद्धि होती है।।७४।।

दायेशात्षष्ठरन्ध्रे वा व्यये वा पापसंयुते ।
चौरादिव्रणभीतिश्च राजवैषम्यमेव च ।।७५।।

दशेश से ६।८।१२ भाव में पापग्रह से युत हो तो चौर आदि से तथा व्रण से भय, राज से विरोध।।७५।।

गृहे कर्मकलापने व्याकुलो भवति ध्रुवम् ।
सोदरेण विरोधः स्याद्दायादजनविग्रहम् ।।७६।।

गृह में कर्म कलाप से व्याकुलता, पुत्र से विरोध दायादों से विग्रह।।७६।।

गृहेत्वशुभकार्याणि दुःस्वप्नादिभयं ध्रुवम् ।
अकस्मात्कलहश्चैव क्षुद्रशून्यादिरोगकृत् ।।७७।।

घर में अशुभ कार्य, दुःस्वप्न से भय, अकस्मात् कलह, क्षुद्र, लकवा आदि रोग का भय होता है।।७७।।

द्विसप्तमस्थिते राहौ देहबाधां विनिर्दिशेत् ।
तद्दोषपरिहारार्थं मृत्युंजय जपं चरेत् ।
छागदानं प्रकुर्वीत सर्वसौख्यादिमादिशेत् ।।७८।।

२ वा ७ भाव में हो तो शरीर बाधा होती है। इस दोष के शान्त्यर्थ मृत्युंजय का जप और बकरी का दान करने से सभी सुख की प्राप्ति होती है।।७८।।

इति गुर्वन्तर्दशाफलम्।

अथशनिदशायांशन्यन्तर्दशाफलम्–

मूलत्रिकोण स्वर्क्षे वा तुलायामुच्चगेऽपिवा ।
केन्द्रत्रिकोणलाभे वा राजयोगादिसंयुते ।।१।।

शनि की दशा में अपने मूलत्रिकोण, अपनी राशि, तुला राशि में परमोच्च में केन्द्र त्रिकोण वा लाभ में गये राजयोग से पूर्ण शनि के अन्तर में।।१।।

राज्यलाभं महत्सौख्यं दारपुत्रादिवर्धनम् ।
वाहनत्रयसंयुक्तं गजाश्वाम्बरसंकुलम् ।।२।।

राज्य का लाभ, अधिक सुख, स्त्री पुत्र आदि की वृद्धि होती है। तीनों वाहनों का सुख, घोड़ा हाथी वस्त्र का सुख होता है।।२।।

महाराजप्रसादेन अश्वदौत्यादिलाभकृत् ।
चतुष्पाज्जीवलाभः स्याद्ग्रामभूम्यादिलाभकृत् ।।३।।

महाराजा के प्रसाद से घोड़ा सवारी और दूत का लाभ, चौपाये-जीव का लाभ और ग्राम तथा भूमि का लाभ होता है।।३।।

षष्ठाष्टमव्यये मन्दे नीचे वा पापसंयुते ।
तद्भुक्त्यादौ राजप्रीतिर्विषशस्त्रादिपीडनम् ।।४।।

यदि शनि ६।८।१२ भाव में वा अपनी नीच राशि में पापग्रह से युत हो तो, अन्तर में राजा से प्रेम, विष-शस्त्र आदि से पीड़ा।।४।।

रक्तस्त्रावं गुल्मरोगातिसारादिपीडनम् ।
मध्ये चौरादिभीतिश्च देशत्यागं मनोरुजम् ।।५।।

रक्त स्त्राव, गुल्मरोग, अतिसार से पीड़ा होत्ती है। अन्तर के मध्य में चौरआदि से भय, देशत्याग, मानसिक कष्ट।।५।।

अंते शुभकरं चैव ग्रामभूम्यादिलाभकृत् ।
द्वितीयद्यूननाथे तु ह्यपमृत्युर्भविष्यति ।
तद्दोष परिहारार्थं मृत्युंजय जपं चरेत् ।।६।।

और अन्त में शुभफल, ग्राम, भूमि, आदि का लाभ होता है। २ वा ७ भाव का स्वामी हो तो अपमृत्यु का भय होता है इस दोष की शान्ति के लिये मृत्युंजय का जप करना चाहिये।।६।।

अथशनिदशायांबुधान्तर्दशाफलम्–

मन्दस्यान्तर्गते सौम्ये त्रिकोणे केन्द्रगेऽपिवा ।
सन्मानं च यशः कीर्त्तिर्विद्यालाभं धनागमम् ।।७।।

शनि की दशा में त्रिकोण वा केन्द्र में गये हुये बुध के अन्तर में सम्मान, यश, कीर्त्ति, विद्या और धन का लाभ होता है।।७।।

स्वदेशे सुखमाप्नोति वाहनादिफलैर्युतम् ।
यज्ञादिकर्मसिद्धिश्च राजयोगादिसम्भवम् ।।८।।

अपने देश में सुख का लाभ वाहन आदि से युक्त होता है। यश आदि कर्मों की सिद्धि, राजयोग की सम्भावना।।८।।

देहसौख्यं हृदुत्साहं गृहे कल्याण सम्भवम् ।
सेतुस्नानफलावाप्तिः तीर्थयात्रादिकर्मणा ।।९।।

देह में सुख, हृदय में उत्साह, गृह में कल्याण, समुद्रस्नान और पुण्यतीर्थ की यात्रा का अवसर प्राप्त होता है।।९।।

वाणिज्याद्धनलाभश्च पुराणश्रवणादिकम् ।
अन्नदानफलं चैव नित्यं मिष्टान्न भोजनम् ।।१०।।

व्यापार से धन का लाभ और पुराण आदि का श्रवण, अन्नदान का फल और नित्यमिष्ठान्न भोजन होता है।।१०।।

षष्ठाष्टमव्यये सौम्ये नीचे वास्तंगतेसति ।
रव्यारफणिसंयुक्ते दायेशाद्वातथैव च ।।११।।

यदि बुध ६।८।१२ भाव में वा नीच राशि में वा अस्त हो और बुध ६।८।१२ भाव में नीच राशि में वा अस्त हो और रवि, भौम राहु से युक्त हो इसी प्रकार दशेश से भी स्थित हो तो अपने अन्तर में।।११।।

नृपाभिषेकमर्थाप्तिदेशग्रामाधिपत्यता ।
फलमीदृशमादौ तु मध्यान्ते रोगपीडनम् ।।१२।।

राज्याभिषेक, धन का लाभ और देश वा ग्राम का आधिपत्य होता है। ऐसा

फल अन्तर में आरम्भ में होता है, मध्य और अन्त में रोग और पीड़ा होती है।।१२।।

नष्टानि सर्वकार्याणि व्याकुलत्वं महद्भयम् ।
द्वितीयसप्तमाधीशे देहबाधा भविष्यति ।।१३।।

सभी कार्य नष्ट ही जाते हैं; व्याकुलता और बड़ा भय होता है। दूसरे या सातवें भाव के अधिपति हो तो शरीर में बाधा होती है।।१३।।

तद्दोषपरिहारार्थं विष्णुसाहस्रकं जपेत् ।
अन्नदानं प्रकुर्वीत सर्वसम्पत्प्रदायकम् ।।१४।।

इस दोष की शान्ति के लिये विष्णु सहस्र नाम स्तोत्र का जप और अन्नदान करना चाहिये इसके करने से सभी सम्पत्तियों का लाभ होता है।।१४।।

अथशनिदशायांकेत्वन्तर्दशाफलम्–

मन्दस्यान्तर्गते केतौ शुभदृष्टियुतेक्षिते ।
स्वोच्चे वा शुभराशिस्थे योगकारकसंयुते ।।१५।।

शनि की दशा में शुभग्रह से युत दृष्ट वा अपने उच्च वा शुभराशि में गये हुये योग कारक ग्रह से युक्त।।१५।।

मंदस्यान्तर्गते केतौ स्थानभ्रंशं महद्भयम् ।
दरिद्रबंधनं भीतिः पुत्रदारादिनाशनम् ।।१६।।

केतु के अन्तर में स्थानभ्रष्टता; महाभय, दरिद्रता, बंधन, भय, पुत्र, स्त्री का नाश।।१६।।

स्वप्रभोश्च महाक्लेशं विदेशगमनं तथा ।
लग्नाधिपेन संयुक्तं आदौ सौख्यं धनागमम् ।।१७।।

अपने स्वामी को कष्ट, विदेश यात्रा होती है। लग्नेश युक्त हो तो अन्तर के आदि में सुख, धन का आगम।।१७।।

गङ्गादिसर्वतीर्थेषु स्थानदैवतदर्शनम् ।
दायेशात्केन्द्रकोणे वा दुश्चिक्येधन राशिगे ।।१८।।

गंगा आदि तीर्थों में देवताओं का दर्शन होता है। दशेश से केन्द्र वा कोण में वा ३।२ भाव में हो समर्थ, धार्मिक बुद्धि, सुख, राजा से समागम होता है।।१८।।

समर्थो धर्मबुद्धिश्च सौख्यं नृपसमागमम् ।
षष्ठाष्टमव्यये केतौ दायेशाद्वा तथैव च ।।१९।।

६।८।१२ भाव में केतु हो इसी प्रकार दशेश से भी इन्हीं भावों में हो तो।।१९।।

अपमृत्युभयं चैव कुत्सितान्नस्य भोजनम् ।
शीतज्वरातिसारश्च ब्रणचौरादिपीडनम् ।।२०।।

अपमृत्यु का भय खराब अन्न का भोजन, शीतज्वर, अतिसार, ब्रण, चौर आदि से कष्ट होता है।।२०।।

दारपुत्रवियोगश्च संसारे भवति ध्रुवम् ।
द्वितीयद्यूनराशिस्थे देहपीडा भविष्यति ।
छागदानं प्रकुर्वीत ह्यपमृत्युभयं हरेत् ।।२१।।

स्त्री-पुत्र आदि से वियोग निश्चयरूप से होता है। यदि २ वा ७ भाव में हो तो शरीर में पीड़ा होती है इसके शान्त्यर्थ बकरी का दान करना चाहिये जिससे अपमृत्यु का भय नहीं होता है।।२१।।

अथशनिदशायांशुक्रान्तर्दशाफलम् –

मन्दस्यान्तर्गते शुक्रे स्वोच्चे स्वक्षेत्रगेऽपिवा ।
केन्द्रे वा शुभसंयुक्ते त्रिकोणे लाभगेऽपिवा ।।२२।।

शनि की दशा में अपने उच्च वा राशि में वा केन्द्र में वा शुभयुक्त वा त्रिकोण वा लाभ स्थान में गये हुये शुक्र के अन्तर में।।२२।।

दारपुत्रधनप्राप्तिर्देहारोग्यं महोत्सवः ।
गृहे कल्याणसम्पत्ती राज्यलाभं महत्सुखम् ।।२३।।

स्त्री-पुत्र-धन का लाभ, देह में आरोग्यता, बड़ा उत्सव, गृह में कल्याण, धन-धान्य सम्पत्ति का लाभ, राज्य का लाभ और बड़ा सुख।।२३।।

महाराजप्रसादेन इष्टसिद्धिः सुखावहा ।
सन्मानः आत्मसन्तोषः प्रियवस्त्रादिलाभकृत् ।।२४।।

और महाराज की प्रसन्नता से सुखकर इष्टसिद्धि, सम्मान, आत्मसंतोष, प्रियवस्त्रों का लाभ।।२४।।

द्वीपान्तराद्वस्त्रलाभः श्वेताश्वो महिषी तथा ।
गुरुचारवशाद्भाग्यं सौख्यं च धनसम्पदः ।।२५।।

द्वीपान्तर (परदेश) से वस्त्र का लाभ, सफेद घोड़ा, भैंस का लाभ होता है। गुरु के संचार से भाग्य, सुख और धन सम्पत्ति का लाभ होता है।।२५।।

शनिचारान्मनुष्योऽसौ योगमाप्नोत्यसंशयम् ।
दायेशाद्भाग्यगेनैव केन्द्रे वा लाभसंयुते ।।२६।।

और शनि के संचार होने से निःसंशय योग को पाता है। दशेश से भाग्य वा केन्द्र वा लाभ में हो तो।।२६।।

राज्यप्रीतिकरं चैव मनोभीष्टप्रदायकम् ।
दानधर्मदयायुक्तस्तीर्थयात्रादिकं फलम् ।।२७।।

मनोनुकूल अभीष्ट की सिद्धि होती है। दान धर्म दया से युक्त हो तीर्थ यात्रा आदि करता है।।२७।।

शास्त्रार्थकाव्यराचनां वेदांतश्रवणादिकम् ।
दारपुत्रादिसौख्यं च वाहनछत्रलाभदम् ।।२८।।

शास्त्रार्थ और काव्य रचना और वेदांत को सुनता है। स्त्री पुत्र आदि का सुख और वाहन छत्र आदि का लाभ होता है।।२८।।

शत्रुनीचास्तगे शुक्रे षष्ठाष्टव्ययराशिगे ।
दारनाशं मनःक्लेशं स्थाननाशं मनोरुजम् ।।२९।।

यदि शुक्र शत्रु राशि वा नीचराशि वा ६।८।१२ भाव में हो तो स्त्री का नाश, मन को कष्ट, स्थान का नाश, मन में कष्ट।।२९।।

दारनाशं स्वजनक्लेशः सन्तापो जनविग्रहः ।
दायेशाद्व्ययगेशुक्रे षष्ठे वाह्यष्टमेऽपिवा ।।३०।।

स्वजनों को कष्ट सन्ताप, जनसमूह से वैर होता है। दशेश से बारहें वा छठें वा आठवें भाव में शुक्र हो तो।।३०।।

नेत्रपीडाज्वरभयं स्वकुलाचारवर्जितः ।
कपोले दन्तशूलादि हृदिगुह्ये च पीडनम् ।।३१।।

नेत्र में पीड़ा, ज्वर, भय, आचारभ्रष्ट, कपोल तथा दांत में पीड़ा और हृदय तथा गुह्य स्थान में पीड़ा।।३१।।

जलभीतिर्मनस्तापो वृक्षात्पतनसम्भवः ।
राजद्वारे जयद्वेषः सोदरेण विरोधनम् ।।३२।।

जल से भय, मन में संताप, वृक्ष से गिरने की संभावना, राजद्वार में विजय होने से द्वेष अपने भाइयों से विरोध होता है।।३२।।

द्वितीयसप्तमाधीशे आत्मक्लेशो भविष्यति ।
तद्दोषपरिहारार्थं दुर्गादिव्याजपंचरेत् ।
श्वेतां गां महिषीं दद्यादायुरारोग्यवृद्धिदम् ।।३३।।

यदि २ वा ७ भाव का स्वामी हो तो आत्मा को कष्ट होता है। इस दोष के शान्त्यर्थ दुर्गादेवी का जप करना चाहिये और सफेद गौ, भैंस का दान करने से आयु, आरोग्यता की प्राप्ति होती है।।३३।।

अथशनिदशायांसूर्यान्तर्दशाफलम्–

मन्दस्यान्तर्गते सूर्ये स्वोच्चे स्वक्षेत्रगेऽपि वा ।
भाग्याधिपेन संयुक्ते केन्द्रलाभत्रिकोणके ।।३४।।

शनि की दशा में अपने उच्च वा अपनी राशि में भाग्येश युक्त अथवा केन्द्र लाभ-त्रिकोण में।।३४।।

शुभदृष्टियुते वापि स्वप्रभोश्च महत्सुखम् ।
गृहे कल्याणसम्पत्तिः पुत्रादि सुखबर्धनम् ।।३५।।

शुभग्रह से दृष्ट युत सूर्य के अन्तर में अपने मालिक से सुख गृह में कल्याण और सम्पत्ति, पुत्र आदि के सुख की वृद्धि।।३५।।

वाहनाम्बरपश्वादिगोक्षीरैः संकुलम् गृहम् ।
षष्ठाष्टमव्यये सूर्ये दायेशाद्वा तथैव च ।।३६।।

वाहन-वस्त्र पशु आदि की वृद्धि और गौ के दूध से घर भरा रहता है यदि सूर्य लग्न वा दशेश ६।८।१२ भाव में हो तो।।३६।।

हृद्रोगो मानहानिश्च स्थानभ्रंशो मनोरुजा ।
इष्टबंधुवियोगश्च उद्योगस्य विनाशनम् ।।३७।।

हृदय का रोग मानहानि, स्थान हानि, मानसिक कष्ट, इष्ट बन्धु का वियोग, उद्योग (व्यवसाय) की हानि।।३७।।

तापज्वरादिपीडा च व्याकुलत्वं भयं तथा ।
आत्मसम्बन्धिमरणमिष्टबन्धुवियागकृत् ।।३८।।

तापज्वर से पीड़ा, व्याकुलता और भय होता है आत्मीय सम्बंधि का मृत्यु, प्रियबन्धु का वियोग होता है।।३८।।

द्वितीयद्यूननाथे तु देहबाधा भविष्यति ।
तद्दोषपरिहारार्थं सूर्यपूजां च कारयेत् ।।३९।।

२ वा ७ भाव का स्वामी हो तो शरीर बाधा होती है। इसके शान्त्यर्थ सूर्य की पूजा करनी चाहिये।।३६-३९।।

अथशनिदशायांचन्द्रान्तर्दशाफलम् –

मन्दस्यांन्तर्गते चन्द्रे जीवदृष्टि समन्विते ।
स्वोच्चे स्वक्षेत्रकेन्द्रस्थेत्रिकोणेलाभगेऽपि वा ।।४०।।

शनि की दशा में गुरु की दृष्टि से युक्त अपने उच्च वा अपनी राशि में केन्द्र-त्रिकोण वा लाभ में।।४०।।

पूर्णचन्द्रे सौम्ययुक्ते राजप्रीति समागमम् ।
महाराजप्रसादेन वाहनाम्बर भूषणम् ।।४१।।

पूर्णचन्द्र शुभग्रह से युत हो तो इसके अन्तर में राजा से प्रेम और समागम होता है। महाराजा की प्रसन्नता से वाहन वस्त्र आभूषण।।४१।।

सौभाग्यं सुखवृद्धिं च भृत्योश्च परिपालनम् ।
पितृमातृकुले सौख्यं पशुवृद्धिः सुखावहा ।।४२।।

सौभाग्य, सुख में वृद्धि, भृत्यों का पालन, पिता-माता के कुल में सुख देने वाली पशु वृद्धि होती है।।४२।।

दायेशात्केन्द्रराशिस्थे त्रिकोणे लाभगेऽपिवा ।
वाहनाम्बरपश्वादि भ्रातृवृद्धिः सुखावहा ।।४३।।

दशेश से केन्द्र राशि में वा त्रिकोण में वा लाभ स्थान में हो तो वाहन, वस्त्र, पशु, भाई की वृद्धि सुखद होती है।।४३।।

पितृमातृसुखावाप्तिः स्त्रीसौख्यं च धनागमम् ।
मित्रप्रभुवशादिष्टं सर्वसौख्यं शुभावहम् ।।४४।।

पिता-माता के सुख की प्राप्ति, स्त्री का सुख, धन का आगम, मित्र और स्वामी की कृपा से इष्ट सिद्धि, और सभी कल्याण देने वाले सुख होते हैं।।४४।।

क्षीणो वा पापसंयुक्ते पापदृष्टौ विनीचगे ।
क्रूरांशकगते वापि क्रूरक्षेत्रगतेऽपि वा ।।४५।।

यदि चन्द्रमा क्षीण वा पापग्रह से युक्त पापग्रह दृष्टा वा नीचराशि में हो अथवा क्रूरग्रह के अंश में वा क्रूरग्रह की राशि में हो तो।।४५।।

जातकस्य महत्कष्टं राजकोपाद्धनक्षयः ।
पितृमातृवियोगश्च पुत्रीपुत्रादिरोगकृत् ।।४६।।

जातक को महाकष्ट, राजकोप से धन का नाश पिता माता से वियोग, पुत्रादि को रोग होता है।।४६।।

व्यवसायात्फलं नेष्टं नानामार्गे धनव्ययम् ।
अकाले भोजनं चैवऔषधस्य च भक्षणम् ।।४७।।

व्यवसाय में हानि, अनेक कार्यों में धनव्यय, कुसमय में भोजन, औषध सेवन, होता है।।४७।।

फलाधिक्याद्विवादं च आदौ सौख्यं धनागमम् ।
दायेशात्षष्ठरिष्फे वा रन्ध्रे वा बलवर्जिते ।।४८।।

कला अधिक होने से विवाद, प्रथम धन का आगम और सुख होता है। दशेश से ६।१२।८ भाव में निर्बल हो।।४८।।

शयनं रोगमालस्यं स्थानभ्रष्टं सुखावहम् ।
शत्रुवृद्धिविरोधं च इष्टबन्धुवियोगकृत् ।।४९।।

अधिक निद्रा, आलस्य स्थान की हानि, सुख, शत्रु वृद्धि, विरोध, और अभीष्ट बंधुका वियोग होता है।।४९।।

द्वितीयद्यूननाथे तु देहालस्यो भविष्यति ।
तद्दोषशमनार्थं च तिलहोमादिकं चरेत् ।।५०।।

२ वा ७ भाव का स्वामी हो तो शरीर में अधिक आलस्य होता है। इस दोष के शान्त्यर्थ तिल का हवन आदि करना चाहिये।।५०।।

गुडं घृतं च दध्याक्तं तांडुलं च यथाविधि ।
श्वेतां गां महिषीं दद्याद्दायुरारोग्य वृद्धिकृत् ।।५१।।

गुड़, घी, दही मिला हुआ चावल, सफेद गौ, भैंस को यथाविधि दान करने से आयु, आरोग्यता की प्राप्ति होती है।।५१।।

अथशनिदशायांभौमान्तर्दशाफलम्–

मन्दस्यान्तर्गते भौमे केन्द्रलाभत्रिकोणगे ।
तुङ्गे स्वक्षेत्रगे वापि दशाधिपसमन्विते ।।५२।।

शनि की दशा में केन्द्र वा लाभ वा त्रिकोण वा उच्च वा स्वराशि में दशेश वा।।५२।।

लग्नाधिपेन संयुक्ते आदौ सौख्यं धनागमम् ।
राजप्रीतिकरं सौख्यं वाहनाम्बरभूषणम् ।।५३।।

लग्नेश से युक्त भौम के अन्तर में पहले सुख, धन का आगमम, राजा से प्रीति, सुख, वाहन, वस्त्र, आभूषण का लाभ होता है।।५३।।

सेनाधिपत्यं नृपप्रीतिः कृषिगोधान्यसंग्रहः ।
नूतनस्थाननिर्माणं भ्रातृवर्गेष्टसौख्यकृत् ।।५४।।

सेनाधिपति का अधिकार, राजा से प्रेम, कृषि गौ धान्य का संग्रह, नवीन स्थान का निर्माण, भाइयों से अभीष्ट सुख का लाभ होता है।।५४।।

नीचे चास्तंगते भौमे षष्ठाष्टव्ययराशिगे ।
पापदृष्टियुते वापि धनहानिर्भविष्यति ।।५५।।

यदि भौम अपने नीच में वा अस्त हो वा ६।८।१२ भाव में हो तो धन की हानि होती है।।५५।।

चौराहिब्रणशस्त्रादिग्रंथिरोगादिपीडनम् ।
भ्रातृपुत्रादिपीडा च दायादजनविग्रहम् ।।५६।।

चोर-सर्प-फोड़ा, हथियार, ग्रंथि रोगादि से पीड़ा होती है, भाई पुत्र को पीड़ा, दायादों से विग्रह।।५६।।

चतुष्पाज्जीवहानिश्च कुत्सितान्नस्यभोजनम् ।
विदेशगमनं चैव नानामार्गे धनव्ययः ।।५७।।

चौपाये जानवर की हानि, खराब अन्न का भोजन, विदेश यात्रा, अनेक प्रकार से धन व्यय होता है।।५७।।

अष्टमद्यूननाथे तु द्वितीयस्थेऽथवायदि ।
अपमृत्युभयं चैव नानाकष्टपराभवम् ।।५८।।

आठवें वा दूसरे भाव का स्वामी हो तो अनेक कष्ट और पराभव होता है।।५८।।

तद्दोषपरिहारार्थं शान्तिहोमं च कारयेत् ।
अनड्वाहं प्रकुर्वीत सर्वारिष्ट प्रशान्तये ।।५९।।

इस दोष के शान्त्यर्थ शान्ति और हवन करना चाहिये। और सभी अरिष्टों के शान्त्यर्थ बैल का दान करना चाहिये।।५९।।

अथशनिदशायांराह्वन्तर्दशाफलम् –

मन्दस्यान्तर्भते राहौ कलहश्च मनोव्यथा ।
देहपीडा मनस्तापः पुत्रद्वेषो मनोरूजः ।।६०।।

शनि की दशा में राहु की अन्तर्दशा में कलह, मानसिक कष्ट, शरीर में पीड़ा, मन में सन्ताप, पुत्र से द्वेष, मन में पीड़ा।।६०।।

अर्थव्ययं राजभयं स्वजनादि ह्युपद्रवम् ।
विदेशगमनं चैव गृहक्षेत्रादिनाशनम् ।।६१।।

धन का व्यय, राजभय, आपस के लोगों का उपद्रव, विदेश यात्रा और गृह क्षेत्र आदि का विनाश होता है।।६१।।

लग्नाधिपेन संयुक्ते योगकारकसंयुते ।
स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे केन्द्रे दायेशाल्लाभराशिमे ।।६२।।

यदि राहु लग्नेश से वा योगकारक से युत हो तो अपने उच्च, अपने क्षेत्र, केन्द्र में वा दशेश से लाभ स्थान में हो।।६२।।

आदौ सौख्यं धनावाप्तिं गृहक्षेत्रादिसंपदम् ।
देवब्राह्मणभक्तिं च तीर्थयात्रादिकं लभेत् ।।६३।।

आदि में सुख धन का लाभ, गृह क्षेत्र आदि का सुख, देवता, ब्राह्मण की भक्ति, तीर्थ यात्रा आदि का लाभ।।६३।।

चतुष्पाज्जीवलाभः स्याद्गृहे कल्याणवर्धनम् ।
मध्ये तु राजभीतिश्च पुत्रमित्र विरोधनम् ।।६४।।

चतुष्तपद जीव का लाभ, गृह में कल्याण की वृद्धि होती है। मध्य में राजभय, पुत्रमित्र आदि से विरोध होता है।।६४।।

मेषादौ कन्यकां चैव कुलीरे वृषभेतथा ।
मीनकोदंडसिंहेषु गजांतैश्वर्यमादिशेत् ।।६५।।

मेष-कन्या, कर्क, वृष, मीन, धन सिंह राशि में हो तो गजांत ऐश्वर्य का लाभ।।६५।।

राजसन्मानभूषाप्तिं मृदुलाम्बरसौख्यकृत् ।
द्विसप्तमाधिपैर्युक्ते देहबाधाभविष्यति ।।६६।।

राजा से सन्मान, आभूषण का लाभ, कोमल वस्त्र से सुख होता है। यदि दूसरे वा सातवें भाव के स्वामी से युक्त हो तो शरीर में बाधा होने की सम्भावना होती है।।६६।।

मृत्युंजय प्रकुर्वीत छागदानं च कारयेत् ।
अनड्वाहं प्रकुर्वीत सर्वसम्पत्प्रदायकम् ।।६७।।

इसकी शान्ति के लिये मृत्युंजय का जप, बकरी और बैल का दान करने से सभी सम्पत्तियों का लाभ होता है।।६७।।

अथशनिदशायांगुर्वन्तर्दशाफलम्–

मन्दसस्यान्तर्गतेजीवे केन्द्रे लाभत्रिकोणभे ।
लग्नाधिपेन संयुक्ते स्वोच्चे स्वक्षेत्रगेऽपिवा ।।६८।।

शनि की दशा में केन्द्र, लाभ वा त्रिकोण में गये हुये लग्नेश से युत अपने उच्च वा अपनी राशि में गये हुये गुरु के अन्तर में।।६८।।

सर्वकार्यार्थसिद्धिः स्याच्छोभनं भवतिध्रुवम् ।
महाराजप्रसादेन धनवाहनभूषणम् ।।६९।।

सभी प्रकार के कार्यों की सिद्धि तथा धन का लाभ, होता है। महाराजा की प्रसन्नता से धन वाहन आभूषण का लाभ।।६९।।

देवतागुरुभक्तिश्च विद्वज्जनसमागमः ।
दारपुत्रादिलाभश्च पुत्रकल्याणवैभवम् ।।७०।।

देवता-गुरु में भक्ति विद्वानों का समागम, स्त्री पुत्र आदि का लाभ पुत्र को सुख और वैभव की प्राप्ति होती है।।७०।।

दायेशात्केन्द्रकोणे वा धने वा लाभगेऽपि वा ।
विभवं दारसौभाग्यं राजश्री धनसम्पदः ।।७१।।

दशेश से केन्द्र-कोण वा दूसरे वा लाभ में हो तो वैभव, स्त्री का सुख, राज्यलक्ष्मी, धन सम्पत्ति।।७१।।

भोजनाम्बर सौख्यं च दानधर्मादिकं लभेत् ।
ब्रह्मप्रतिष्ठासिद्धिश्च ॠतुकर्मफलप्रदम् ।।७२।।

भोजन वस्त्र का सुख, दान, धर्मादि क्रियायें, प्रतिष्ठा का लाभ, यज्ञकर्म का फल।।७२।।

अन्नदानं महाकीर्त्तिर्वेदांतश्रवणादिकम् ।
षष्ठाष्टमव्यये जीवे नीचे वा पापसंयुते ।।७३।।

अन्नदान, अत्यन्त कीर्त्ति और वेदांत का श्रवण होता है। यदि गुरु ६।८।१२ भाव में हो वा नीच में वा पापयुत हो तो।।७३।।

आत्मसम्बंधि मरणं धनधान्यविनाशनम् ।
राजस्थानजनद्वेषः कार्यहानिर्भविष्यति ।।७४।।

आत्मीय संबंधी का मरण, धन धान्य का नाश, राजकीय पुरुषों से द्वेष कार्य की हानि होती है।।७४।।

विदेशगमनं चैव कुष्ठरोगादिसम्भवः ।
दायेशात्षष्ठरंध्रे वा व्यये वा बलवर्जिते ।।७५।।

विदेश यात्रा और कुष्टरोग की सम्भावना होती है। दशेश से ६ वा ८ वा १२ भाव में निर्बल हो तो।।७५।।

बंधुद्वेषं मनोदुःखं कलहं पदविच्युतिम् ।
कुभोजनं कर्महानिर्राजमूलाद्धनव्ययम् ।।७६।।

बंधुओं से द्वेष, मन को दुःख, कलह और पद की हानि, कुभोजन, कार्य की हानि, राजमूल से धन का व्यय।।७६।।

कारागृहप्रवेशं च पुत्रदारादिपीडनम् ।
द्वितीयद्यूननाथे तु देहबाधा भविष्यति ।।७७।।

जेलयात्रा, पुत्र स्त्री को कष्ट होता है। २।७ भाव का स्वामी हो तो शशीर में बाधा होती है।।७७।।

आत्मसन्बन्धिमरणं भविष्यति न संशयः ।
तद्दोषपरिहारार्थं शिवसाहस्रकं जपेत् ।
स्वर्णदानं प्रकुर्वीत आरोग्यं भवति ध्रुवम् ।।७८।।

आत्मीय सन्बन्धि का मरण होता है। इस दोष में शान्ति के लिये शिवसहस्रनाम का जप और सुवर्ण का दान करने से आरोग्यता होती है।।७८।।

इति शनिदशायामन्तर्दशाफलम्।

अथबुधदशायांबुधान्तर्दशाफलम्–

मुक्ताविद्रुमलाभश्च ज्ञानकर्मसुखादिकम् ।
विद्यामहत्वं कीर्त्तिश्च नूतनप्रभुदर्शनम् ।।१।।

बुध की दशा में बुध के अन्तर में मुक्ता (मोती) मूङा का लाभ, ज्ञान, सत्कर्म, लाभादि, विद्या का महत्व, कीर्त्ति, नये स्वामी का दर्शन।।१।।

विभवं दारपुत्रादिपितृमातृसुखोवहम् ।
नीचोग्रखेटसंयुक्ते षष्ठाष्टव्ययराशिगे ।।२।।

वैभव और स्त्री, पुत्र पिता का सुख होता हैं। यदि अपनी नीचराशि उग्रग्रह से युक्त हो वा ६।८।१२ राशि में हो।।२।।

पापयुक्तेऽथवा दृष्टे धनधान्यपशुक्षयम् ।
आत्मबन्धुविरोधं च शूलरोगादिसम्भवम् ।।३।।

पापयुक्त वा पापदृष्ट हो तो धन धान्य पशु का नाश, आत्मीय बन्धु से विरोध, शूलरोगादि की सम्भावना।।३।।

राजकार्यकलापेन व्याकुलो भवति ध्रुवम् ।
द्वितीयद्यूननाथे तु दारक्लेशो भविष्यति ।।४।।

और राजकार्य के सम्बन्ध से व्याकुलता होती है। २ वा ७ भाव का स्वामी हो तो स्त्री को कष्ट।।४।।

आत्मसम्बंधिमरणं वातशूलादिसम्भवम् ।
तद्दोषपरिहारार्थं विष्णुसाहस्त्रकं जपेत् ।।५।।

आत्मीय सम्बन्धी की मृत्यु आरै बातशूलादि रोगों की सम्भावना होती है। इस दोष की शान्ति के लिये विष्णु सहस्र नाम का जप करना चाहिये।।५।।

बुधस्यान्तर्गते केतौ लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ।
शुभयुक्ते शुभैर्दृष्टे लग्नाधिपसमन्विते ।।६।।

बुध की दशा में लग्न से केन्द्र वा त्रिकोण में शुभंग्रह से युक्त वा दृष्ट वा लग्नेश से युक्त।।६।।

यीगकारकसम्बन्धे दायेशात्केन्द्रलाभगे ।
देहसौख्यं धनाल्पत्वं बन्धुस्नेहसहायकृत् ।।७।।

वा योगकारक से सम्बन्ध करते हुये दशेश से केन्द्र वा लाभ भाव में स्थित केतु के अन्तर में देह का सुख, धन की अल्पता, बन्धुओं का स्नेह और सहायता।।७।।

चतुष्पाज्जीवलाभः स्यात्संसारे देहसौख्यभाक् ।
विद्याकीर्त्तिप्रसंगश्च समानप्रभुदर्शनम् ।।८।।

चतुष्पद जीव का लाभ, देह सुखं, विद्या, और यश का प्रसंग अपने समान स्वामी का दर्शन।।८।।

भोजनाम्बरसौख्यं च ह्यादौ मध्ये सुखावहम् ।
दायेशाद्रिपुरन्ध्रस्थे व्ययेवा पापसंयुते ।।९।।

भोजन-वस्त्र, सुख पहले होता है मध्य में सुख होता है। दशेश से ६।८।१२ भाव में पापग्रह से युत हो तो।।९।।

वाहनात्पतनं चैव पुत्रक्लेश समायुतम् ।
चौरादिराजभीतिश्च पापकर्मरतः सदा ।।१०।।

वाहन से पतन, पुत्र कष्ट से युक्त, चौर आदि से तथा राजा से भय, सदा पापकर्म में रत।।१०।।

वृश्चिकादिविषाद्भीतिर्नीचैः कलहसंयुतः ।
शोकरोगादि दुःखं च संसाराद्विचलं भवेत् ।।११।।

वृश्चिक (बिच्छू) आदि जहरीले जानवरों के विष से भय, नीचों से झगड़ा, शोक-रोग आदि दुःखों से युक्त और संसार से विचलित होता है।।११।।

द्वितीयद्यूननाथे तु देहजाड्यं भविष्यति ।
तद्दोषपरिहारार्थं छागदानं तु कारयेत् ।।१२।।

२ वा ७ भाव का स्वामी हो तो शरीर में जड़ता होती है। इसके शान्त्यर्थ बकरी का दान करना चाहिये।।१२।।

अथबुधदशायांशुक्रान्तर्दशाफलम् –

सौम्यस्यान्तर्मते शुक्रे केन्द्रे लाभत्रिकोणगे ।
सत्कथापुण्य धर्मादिसंग्रहः पुण्यकर्मकृत् ।।१३।।

बुध की दशा में केन्द्र वा लाभ वा त्रिकोण में गये हुये शुक्र के अन्तर में अच्छी कथा, पुण्य धर्मादि का संग्रह, पुण्य कर्म।।१३।।

मित्रप्रभुवशादिष्टं क्षेत्रलाभः सुखं भवेत् ।
दशाधिपात्केन्द्रगतस्त्रिकोणे लाभगेऽपिवा ।।१४।।

मित्र और स्वामी के इष्ट की सिद्धि, क्षेत्र का लाभ, सुख दशेश से केन्द्र वा लाभ वा त्रिकोण में हो तो।।१४।।

तत्काले त्रियमाप्नोति राजश्री धनसम्पदः ।
वापीकूपतडागादि दानधर्मादिसंग्रहः ।।१५।।

तत्काल धन का लाभ, राज्यलक्ष्मी की प्राप्ति, वापी, कूप, तालाब, दान, धर्म आदि का संग्रह।।१५।।

व्यवसायात्फलाधिक्यं धनधान्यसमृद्धिकृत् ।
दायेशात्षष्ठरंध्रस्तेव्यये वा बलवर्जिते ।।१६।।

व्यवसाय से अधिक लाभ और धन-धान्य समृद्धि का लाभ होता है। दशेश से ६।८।१२ भाव में निर्बल हो तो।।१६।।

हृद्रोगो मानहानिश्च ज्वरातीसारपीडनम् ।
आत्मबन्धुवियोगश्च संसारे देहनिष्प्रभम् ।।१७।।

हृदय का रोग, मानहानि, ज्वर अतिसार की पीड़ा, आत्मीय बन्धु का वियोग, संसार से विरूपता।।१७।।

आत्मक्लेशं मनस्तापमापदादि विपत्तयः ।
द्वितीयद्यूननाथे तु ह्यपमृत्युर्भविष्यति ।
तद्दोषपरिहारार्थं दुर्गादेवी जपं चरेत् ।।१८।।

अपने को क्लेश, मनमें संताप आदि विपत्तियाँ होती हैं। दूसरे वा सातवें भाव का स्वामी हो तो अपमृत्यु का भय होता है। इस दोष के शान्त्यर्थ दुर्गा देवी का जप कराना चाहिये।।१८।।

अथ बुधदशायांसूर्यान्तर्दशाफलम्–

सौम्यस्यान्तर्गते सूर्ये स्वोच्चे स्वक्षेत्रकेन्द्रगे ।
त्रिकोणे धनलाभेतु तुङ्गांशे स्वांशगेऽपिवा ।।१९।।

बुध की दशा में अपनी उच्च, अपनी राशि, त्रिकोण वा धन वा लाभ वा उच्चांश वा अपने नवांश में गये हुये सूर्य के अन्तर में।।१९।।

राजप्रसादसौभाग्यं मित्रप्रभुवशात्सुखम् ।
भूम्यात्मजेन संदृष्टे आदौ भूलाभमेव च ।।२०।।

राजा की प्रसन्नता का सौभाग्य, मित्र और स्वामी के द्वारा महासुख का लाभ होता है। भौम से देखा जाता हो तो प्रथम भूमि का लाभ होता है।।२०।।

लग्नाधिपेन संदृष्टे बहुसौख्यं धनागमम् ।
ग्रामभूम्यादिलाभं च भोजनाम्बरसौख्यकृत् ।।२१।।

लग्नेश से दृष्ट हो तो बहुत सुख और धन का आगम, ग्राम, भूमि का लाभ और भोजन वस्त्र का सुख होता है।।२१।।

षष्ठाष्टमव्यये वापि शन्यारफणिसंयुते ।
दायेशाद्रिपुरंध्रस्थे व्यये वा बलवर्जिते ।।२२।।

यदि सूर्य ६।८।१२ भाव में शनि भौम राहु से युत हो वा दशेश से ६।८।१२ भाव में निर्बल होतो।।२२।।

चौराग्निशस्त्रपीडा च पित्ताधिक्यं भविष्यति ।
शिरोरूङ्मनसस्तापं इष्टबंधु वियोगकृत् ।।२३।।

चोर, अग्नि, शस्त्र से पीड़ा और अधिक पित्त होता है। शिर में रोग, मनमें संताप, इष्ट बंधु का वियोग होता है।।२३।।

द्वितीयसप्तमाधीशे ह्यपमृत्युर्भविष्यति ।
तद्दोषपरिहारार्थं शान्तिं कुर्याद्यथाविधि ।
सूर्यप्रीतिकरीं चैव दद्याद्धेनुं हिरण्यकम् ।।२४।।

२।७ भाव का स्वामी हो तो अपमृत्यु का भय होता है! इसके शान्त्यर्थ यथाविधि सूर्य के प्रसन्न करने वाली शान्ति करनी चाहिये और गौ तथा सुवर्ण का दान करना चाहिये।।२४।।

अथ बुधदशायांचन्द्रान्तर्दशाफलम् –

सौम्यस्यान्तर्गते चन्द्रे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ।
स्वोच्चे वा स्वर्क्षमे वापि गुरुदृष्टिसमन्विते ।।२५।।

बुध की महादशा में लग्न से केन्द्र वा त्रिकोण में अपने उच्च में वा अपनी राशि में गुरु से देखे जाते हुये।।२५।।

योगस्थानाधिपत्येन योगप्राबल्यमादिशेत् ।
स्त्रीलाभं पुत्रलाभं च वस्त्रवाहनभूषणम् ।।२६।।

योगस्थान के अधिपति होने से योग प्रबल होता है, ऐसे चन्द्रमा के अन्तर में स्त्री का लाभ, पुत्र का लाभ और वस्त्र, वाहन, आभूषण का लाभ।।२६।।

नूतनालयलाभं च नित्यं मिष्ठान्नभोजनम् ।
गीतवाद्यप्रसंगश्च शास्त्रविद्याप्रशंसनम् ।।२७।।

नूतन गृह का लाभ नित्य मिष्ठान्न का भोजन होता है। गाना-बाजा का सुख, शास्त्र विद्या की प्रशंसा।।२७।।

दक्षिणांदिशमाश्रित्य प्रयाणं च भविष्यति ।
द्विपान्तरादि वस्त्राणां लाभश्चैवभविष्यति ।।२८।।

दक्षिण दिशा की यात्रा, द्वीपान्तर जे वस्त्रों का लाभ।।२८।।

मुक्ताविद्रुमरत्नानि धौतवस्त्रादिलाभदम् ।
नीचारिक्षेत्रसंयुक्ते देहबाधा भविष्यति ।।२९।।

मुक्ता, मूङा का लाभ और धौत वस्त्र का लाभ होता है। अपने नीच वा शत्रु की राशि में स्थित हो तो शरीर में बाधा होती है।।२९।।

दायेशात्केन्द्रकोणस्थे दुश्चिक्ये लाभगेऽपिवा ।
तद्भुक्त्यादौ पुण्यतीर्थस्थानदैवतदर्शनम् ।।३०।।

दशेश से केन्द्र वा कोण वा तीसरे वा एकादश भाव में हो तो उसके अन्तर के प्रारम्भ में पुण्यतीर्थ स्थान और देवता का दर्शन।।३०।।

मनोधैर्यं हृदुत्साहं विदेशेधनलाभकृत् ।
दायेशात्षष्ठरन्ध्रे वा व्यये वा पापसंयुते ।।३१।।

मन में धैर्य, हृदय में उत्साह और विदेश से धन का लाभ होता है। यदि चन्द्रमा दशेश से ६ या ८ या १२ भाव में पापग्रह से युत हो तो।।३१।।

चौराग्निनृपभीतिश्च स्त्रीसंगेगमनंतथा ।
दुष्कृतिर्धनहानिश्च कृषिगोऽश्वादिनाशनम् ।।३२।।

चोर, अग्नि, राजा से भय, स्त्री संग में यात्रा, दुष्कीर्त्ति और धन की हानि, कृषि, गौ, घोड़ा की हानि होती है।।३२।।

द्वितीयद्यूननाथे तु देहबाधा भविष्यति ।
तद्दोषपरिहारार्थं दुर्गादेवी जपं चरेत् ।
वस्त्रदानं प्रकुर्वीत आयुर्वृद्धिसुखावहम् ।।३३।।

२ वा ७ भाव का स्वामी हो तो शरीर की बाधा होती है। इस दोष की शान्ति के लिये दुर्गा देवी का जप करना चाहिये। आयु बृद्धि और सुख के लिये वस्त्र का दान करना चाहिये।।३३।।

अथ बुधदशायांभौमान्तर्दशाफलम्–

सौम्यस्यान्तर्गते भौमे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ।
स्वोच्चे वा स्वर्क्षये भौमे लग्नाधिपसमन्विते ।।३४।।

बुध की दशा में लग्न से केन्द्र वा त्रिकोण वा अपने उच्च वा अपनी राशि में लग्नेश से युत भौम के अन्तर में।।३४।।

राजानुग्रह शान्तिं च गृहे कल्याण संभवम् ।
लक्ष्मीकटाक्षचिन्हानि नष्टराज्यार्थलाभकृत् ।।३५।।

राजा की कृपा, शान्ति, गृह में कल्याण और लक्ष्मी की प्रसन्नता के चिह्न, नष्ट हुये राज्य तथा धन का लाभ।।३५।।

पुत्रोत्सवादिसंतोषं गृहे गोधनसंकुलम् ।
गृहक्षेत्रादिलाभं च गजवाजिसमन्वितम् ।।३६।।

पुत्रोत्सव, गोधन की वृद्धि हाथी घोड़े के साथ गृहभूमि का लाभ।।३६।।

राजप्रीतिकरं चैव स्त्रीसौख्यं चातिशोभनम्।
नीचक्षेत्रसमायुक्ते ह्यष्टमे वा व्ययेऽपिया ।।३७।।

राजा की प्रसन्नता और स्त्री का सुख प्राप्त होता है। यदि भौम नीच राशि में आठवें या बारहवें भाव में।।३७।।

पापदृष्टियुते वापि देहपीडा मनोव्यथा।
उद्योगभङ्गो देशादौ स्वग्रामे धान्यनाशनम् ।।३८।।

पापग्रह से दृष्ट वा युत हो तो शरीर में पीड़ा, मानसिक कष्ट, देश में उद्योग की हानि और अपने ग्राम में धान्य की हानि।।३८।।

ग्रन्थिशस्त्रब्रणादीनां भयंतापज्वरादिकम्।
दायेशात्केन्द्रगे भौमे त्रिकोणे लाभगेऽपिवा ।।३९।।

ग्रन्थि, शस्त्र, ब्रण आदि का भय, तापज्वर आदि होता है। दशेश से केन्द्र वा त्रिकोण वा लाभ में भौम हो।।३९।।

शुभदृष्टेश्च सम्प्राप्तिर्देहसौख्यं धनागमम्।
पुत्रलाभं यशोवृद्धिं मातृवर्गो महाप्रियः ।।४०।।

शुभग्रह से दृष्ट हो तो द्रव्य की प्राप्ति, देहसुख, पुत्र का लाभ, यश की बृद्धि और भाइयों से प्रीति होती है।।४०।।

दायेशाद्रिपुरन्ध्रस्थे व्यये वा पापसंयुते।
तद्भुक्त्यादौ महाक्लेशं भ्रातृवर्गे महद्भयम् ।।४१।।

दशेश से ६।८।१२ भाव में पापग्रह से युक्त भौम हो तो अन्तर के आरम्भ में महाक्लेश, भाइयों से भय।।४१।।

नृपाग्निचौरभीतिश्च पुत्रमित्रविरोधनम्।
स्थानभ्रंशं महद्वैरं मध्ये सौख्यं धनागमम् ।।४२।।

राजा, अग्नि, चोर का भय, पुत्र-मित्र से विरोध, स्थान की हानि, महावैर होता है, मध्य में सुख और धन का आगम।।४२।।

अंते तु राजभीतिः स्यात्स्थानभ्रंशोह्यथापिवा।
द्वितीयद्यूननाथे तु ह्यपमृत्युभयं भवेत्।
अनड्वाहं प्रकुर्वीत मृत्युंजय जपं चरेत् ।।४३।।

और अंत में राजभय, स्थान की हानि होती है। दूसरे या सातवें भाव के

स्वामी हो तो अपमृत्यु का भय होता है। बैल का दान और मृत्युंजय का जप कराना चाहिये।।४३।।

अथ बुधदशायांराह्वन्तर्दशाफलम्-

बुधस्यान्तर्गते राहौ केन्दलाभत्रिकोणगे।
कुलीरे मकरे वापि कन्यायां वृषभेऽपि वा ।।४४।।

बुध की दशा में केन्द्र वा लाभ वा त्रिकोण में वा कर्क वा मकर वा कन्या वा वृष राशि में गये हुये राहु के अन्तर में।।४४।।

राजसम्मानकीर्त्तिं च धनंधान्यं भविष्यति।
पुण्यतीर्थस्थानलाभं देवतादर्शनं तथा ।।४५।।

राजा से सम्मान, कीर्त्ति, धन धान्य का लाभ, पुण्यतीर्थ का लाभ, देवता का दर्शन।।४५।।

इष्टापूर्त्ते च महतो मानश्चाम्बरलाभकृत्।
भुक्त्यादौ देहपीडा च अंते सौख्यं विनिर्दिशेत् ।।४६।।

यज्ञ और मान, वस्त्र का लाभ होता है। अंतर के आदि में देह पीड़ा और अन्त में सुख होता है।।४६।।

लग्गाद्युपचये राहौ शुभग्रहसमन्विते।
राजसंलापसन्तोषं नूतनप्रभुदर्शनम् ।।४७।।

लग्न से उपचय (३।६।१०।११) स्थान में शुभग्रह से युक्त राहु हो तो राजा से सम्मान संतोष और नवीन स्वामी का दर्शन होता है।।४७।।

षष्ठाष्टव्ययराशिस्थे तद्भुक्तौ धननाशनम्।
भुक्त्यादौ देहनाशं च वातज्वरमजीर्णकृत् ।।४८।।

यदि राहु ६।८।१२ भाव में हो तो उसके अंतर के आरम्भ में धन का नाश, देह का नाश, बात ज्वर अजीर्ण से होता है।।४८।।

दायेशात्षष्ठरिःफेवा ह्यष्टमे पापसंयुते।
निष्ठुरं राजकार्याणि स्थानभ्रंशोमहद्भयम् ।।४९।।

दशेश से ६।१२।८ भाव में पापग्रह से युत हो तो कड़े राजकार्य, स्थान की हानि, महाभय।।४९।।

बंधनं रोगपीडा च आत्मबन्धु मनोव्यथा।
हृद्रोगो मानहानिश्च धनहानिर्भविष्यति ।।५०।।

बंधन, रोगापीड़ा, आत्मीय बंधु को मानसिक कष्ट, हृदय रोग, धन की हानि, मानहानि और धनहानि होती है।।५०।।

द्वितीयसप्तमस्थे वा ह्यपमृत्युर्भविष्यति ।
तद्दोषपरिहारार्थं दुर्गालक्ष्मीजपं चरेत् ।
श्वेतां गां महिषीं दद्यादायुरारोग्यदायिनीम् ।।५१।।

२ वा ७ भाव में हो तो अपमृत्यु होती है। इस दोष की शान्ति के लिये दुर्गा लक्ष्मी का जप करना चाहिये और आयु और आरोग्यता को देने वाली श्वेत गौ और भैंस का दान करना चाहिये।।५१।।

अथ बुधदशायांगुर्वन्तर्दशाफलम्–

बुधस्थान्तर्गते जीवे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ।
स्वोच्चे वा स्वर्क्षगे वापि लाभे वा धनराशिगे ।।५२।।

बुध की दशा में लग्न से केन्द्र वा त्रिकोण वा अपने उच्च वा अपनी राशि वा लाभ वा दूसरे स्थान में गये हुये गुरु के अन्तर में।।५२।।

देहसौख्यं धनावाप्तिं राजप्रीतिं तथैव च ।
विवाहोत्सवकार्याणि नित्यमिष्ठान्नभोजनम् ।।५३।।

देहसुख, धन की प्राप्ति, राजा से प्रेम, घिवाहोत्सव, नित्य मिष्ठान्न का भोजन।।५३।।

गोमहिष्यादिलाभं च पुराणश्रवणादिकम् ।
देवतागुरुभक्तिश्च दानधर्ममखादिकम् ।।५४।।

देवता गुरु में भक्ति, दान, धर्म, गौ, भैंस आदि का लाभ, पुराण आदि का श्रवण।।५४।।

यज्ञकर्मप्रवृद्धिं च शिवपूजाफलं तथा ।
दायेशात्केन्द्रकोणेवा लाभे वा बलसंयुते ।।५५।।

यज्ञ की वृद्धि शिवपूजन का फल होता है। दशेश से केन्द्र वा कोण वा लाभ स्थान में बली हो तो।।५५।।

बंधुपुत्रहृदुत्साहं शुभं शोभनसंयुतम् ।
पशुवृद्धियशोलाभमन्नदानादिकं फलम् ।।५६।।

बंधु पुत्र का सुख हृदय में उत्साह और शुभ फल, पशु वृद्धि, यश का लाभ, अन्न दानादि फल होते हैं।।५६।।

नीचे वास्तंगते वापि षष्ठाष्टव्ययगेऽपिवा ।
शन्यारफणिसंयुक्ते कलहोराजविग्रहम् ॥७७॥

यदि गुरु अस्त हो वा ६।८।१२ में हों शनि, भौम राहु से युक्त हो तो कलह, राजा से विरोध।।५७।।

चौरादिदेहपीडा च पितृमातृविनाशनम् ।
दायेशात्षष्ठरंध्रे वा व्यये वा बलवर्जिते ॥५८॥

चोर आदि से शरीर में पीड़ा पिता माता का नाश होता है॥ दशेश से ६॥८॥१२ में निर्बल हो तो।।५८।।

अङ्गतापश्च वैकल्यं देहबाधा भविष्यति ।
कलत्रबंधुवैषम्यं राजकोषो धनक्षयः ॥५९॥

शरीर में ताप, अङ्ग में विकलता, देह में बाधा, स्त्री बंधु से बैर, राजकोप, धन की हानि।।५९।।

अकस्मात्कलहाद्भीतिः प्रमादो राजविद्विषम् ।
द्वितीय सप्तमस्थे वा देहबाधा भविष्यति ॥६०॥

अकस्मात् कलह से भय प्रमाद से राजा से शत्रुता होती है॥ २॥७ भाव में हो तो शरीर बाधा होती है।।६०।।

तद्दोषपरिहारार्थं शिवसाहस्रकं जपेत् ।
गोभूहिरण्यदानेन सर्वारिष्टं प्रणश्यति ॥६१॥

इस दोष के परिहार के लिये शिवसहस्रनाम का जाप और गौ, भूमि, सोना के दान से सभी अरिष्ट नष्ट हो जाते हैं।।६१॥

अथ बुधदशायांशन्यन्तर्दशाफलम् –

सौम्यस्यान्तर्गतिमन्दे स्वोच्चे स्वक्षेत्रकेन्द्रगे ।
त्रिकोणलाभगे वापि गृहे कल्याणवर्धनम् ॥६२॥

बुध की दशा में अपने उच्च वा अपनी राशि में केन्द्र वा त्रिकोण में वा लाभ में गये हुये शनि के अन्तर में गृह में कल्याण की वृद्धि॥६२॥

राज्यलाभं महोत्साहं गृहे गोधनसंकुलम् ।
शुभस्थानफलावाप्तिं तीर्थादौ भ्रमणं तथा ॥६३॥

राज्य का लाभ, अत्यंत उत्साह, गौ, धन की वृद्धि, शुभ स्थान की प्राप्ति, तीर्थ आदि में भ्रमण होता है।।६३।।

षष्ठाष्टमव्यये मन्दे दायेशाद्वा तथैव च ।
अरातिदुःखवाहुल्यं दारपुत्रादिपीडनम् ।।६४।।

६।८।१२ भाव में शनि हो दशेश से भी इन्हीं स्थानों में हो तो ... अधिक दुःख, स्त्री पुत्र आदि को पीड़ा।।६४।।

बुद्धिभ्रंशं बंधुनाशं कर्मनाशं मनोरूजम् ।
विदेशगमनंचैवदुःस्वप्नस्यप्रदर्शनम् ।।६५।।

बुद्धि का नाश, बंधु का नाश, कर्म का नाश, मन में दुःख, विदेश यात्रा, दुःस्वप्नों का दर्शन होता है।।६५।।

द्वितीयद्यूननाथे तु ह्यपमृत्युर्भविष्यति ।
तद्दोषपरिहारार्थं मृत्युंजय जपं चरेत् ।
कृष्णां गां महिषीं दद्यादायुरारोग्यवृद्धिनम् ।।६६।।

२ वा ७ भाव का स्वामी हो तो अपमृत्यु का भय होता है। इस दोष की शान्ति के लिये काली गौ और भैंस का दान आयु आरोग्यता की वृद्धि के लिये देना चाहिये।।६६।।

इति बुधदशायामन्तर्दशाफलम्।

अथ केतुदशायांकेत्वन्तर्दशाफलम्–

केन्द्रे त्रिकोणलाभे वा लग्नाधिपसमन्विते ।
भाग्यकर्मेशसम्बन्धे वाहनेशसमन्विते ।।१।।

केतु की दशा में केन्द्र वा त्रिकोण वा लाभ स्थान में लग्नेश से युत वा भाग्येश कर्मेश से अच्छे सम्बन्ध से युक्त वाहनेश से युत केतु के अन्तर में।।१।।

तद्भुक्तौ धनधान्यादि चतुष्पाज्जीवलाभकृत् ।
पुत्रदारादिसौख्यं च राजप्रीति मनोरूजः ।।२।।

धन धान्य से युक्त चतुष्पद जीव का लाभ, पुत्र स्त्री का सुख, राजा से प्रेम मानसिक कष्ट।।२।।

ग्रामभूम्यादिलाभश्च गृहं गोधनसंकुलम् ।
नीच खखेटसंयुक्ते ह्यष्टमे व्ययगेऽपिवा ।।३।।

ग्राम भूमि आदि का लाभ और घर गोधन से परिपूर्ण होता है। नीच बा अस्त में गये हुये ग्रह से युक्त हो वा आठवें वा बारहें भाव में हो तो।।३।।

हृद्रोगं मानहानिं च धनधान्यपशुक्षयम् ।
दारपुत्रादिपीडां च मनश्चांचल्यमेव च ।।४।।

हृदयरोग, मानहानि, धन धान्य और पशु का नाश, स्त्री, पुत्र आदि को पीड़ा, मनमें चंचलता होती है।।४।।

द्वितीयद्यूननाथेन सम्बन्धे तत्र संस्थिते ।
अनारोग्यं महत्कष्टमात्मबंधुवियोगकृत् ।
दुर्गादेवी जपं कुर्यान्मृत्युंजय जपं चरेत् ।।५।।

दूसरे वा सातवें भाव के स्वामी से सम्बंध करता हुआ स्थित हो तो रोगयुक्त, महाकष्ट और आत्मीय बन्धु का वियोग होता है दुर्गा और मृत्युंजय का जप कराना चाहिये।।५।।

अथ केतुदशायांशुक्रान्तर्दशाफलम्–

केतोरन्तर्गते शुक्रे स्वोच्चे स्वक्षेत्रसंयुते ।
केन्द्रत्रिकोणलाभे वा राज्यनाथेनसंयुते ।।६।।

केतु की दशा में अपने उच्च वा अपनी राशि में केन्द्र वा त्रिकोण वा लाभ में कर्मेश से युक्त शुक्र के अन्तर में।।६।।

राजप्रीतिं च सौभाग्यं राज्यात्स्वाम्बरसंकुलम् ।
तत्काले श्रियमाप्नोति भाग्यकर्मेशसंयुते ।।७।।

राजा से प्रेम, सौभाग्य, राज्य से वस्त्रादि का लाभ होता है। यदि भाग्येश कर्मेश से युत हो तो।।७।।

नष्टराज्यधनप्राप्तिंसुखवाहनमुत्तमम् ।
सेतुस्नानदिकं चैव देवतादर्शनंमहत् ।।८।।

तत्काल लक्ष्मी की प्राप्ति, नष्ट हुये राज्य का लाभ, धन का लाभ, सुख उत्तम वाहन का लाभ, समुद्रस्नान का लाभ देवता का दर्शन।।८।।

महाराजप्रसादेन ग्रामभूम्यादिलाभकृत् ।
दायेशात्केन्द्रकोणे वा दुश्चिक्येलाभगेऽपिवा ।।९।।

और महाराज की प्रसन्नता से ग्रामभूमि आदि का लाभ होता है। दशेश से केन्द्र वा त्रिकोण वा तीसरे वा लाभ में हो तो।।९।।

देहारोग्यं शुभं चैव गृहेकल्याणशोभनम् ।
भोजनाम्बरभूपाप्तिमश्वदोलादिलाभकृत् ।।१०।।

देह आरोग्य, शुभफल, गृह में कल्याण, भोजन, वस्त्र, राजा से प्रेम, अश्व आदि का लाभ होता है।।१०।।

दायेशाद्रिपुरंध्रस्थे व्यये वा पापसंयुते ।
अकस्मात्कलहंचैव पशुधान्यादिपीडनम् ।।११।।

दशेश से ६।८।१२ भाव में पापयुक्त हो तो अकस्मात् कलह, पशु, धान्य आदि की हानि होती है।।११।।

नीचस्थखेटसंयुक्ते लग्नात्षष्ठाष्टराशिगे ।
स्वबन्धुजनवैषम्यं शिराक्षिव्रणपीडनम् ।।१२।।

नीच में गये हुये ग्रह से युक्त हो और लग्न से ६ वा ८ भाव में हो तो आत्मीय बन्धुओं से शत्रुता, नस, नेत्र व्रण आदि से पीड़ा।।१२।।

हृद्रोगं मानहानिं च धनधान्यपशुक्षयम् ।
कलत्रपुत्रपीडायास्संचारं देहरोगयुक् ।।१३।।

हृदय रोग, मानहानि, धन धान्य पशु का नाश, स्त्री, पुत्र के रोगी होने का भय शरीर में रोग होता है।।१३।।

द्वितीयद्यूननाथे तु देहजाड्यं मनोरूजम् ।
तद्दोषपरिहारार्थं दुर्गादेवीजपं चरेत् ।
श्वेतां गां च महिषीं दद्यादारोग्यप्रदायिनीम् ।।१४।।

२ वा ७ भाव का स्वामी हो तो देह में जड़ता और मानसिक रोग होता है। इस दोष के शान्त्यर्थ दुर्गा देवी का जप करना चाहिये और आरोग्य देने वाली सफेद गौ और भैंस का दान करना चाहिये।।१४।।

अथ केतुदशायांसूर्यान्दशाफलम् –

केतोरन्तर्गते सूर्ये स्वोच्चे स्वक्षेत्रगेऽपिवा ।
केन्द्रत्रिकोणलाभे वा शुभग्रहनिरीक्षिते ।।१५।।

केतु की दशा में अपने उच्च वा अपनी राशि में केन्द्र वा त्रिकोण में लाभ में शुभग्रह से देखे जाते हुये सूर्य के अन्तर में।।१५।।

धनधान्यादिलाभश्च राजानुग्रहवैभवम् ।
अनेकशुभकार्याणि चेष्टासिद्धिः सुखावहा ।।१६।।

धन धान्यादि का लाभ, राजा की कृपा से वैभव का लाभ, अनेक शुभ कार्य और सुखकर अभीष्ट की सिद्धि होती है।।१६।।

दायेशात्केन्द्रकोणे वा लाभे वा धनसंस्थिते ।
देहसौख्यं कार्यलाभं पुत्रलाभं मनोदृढम् ।।१७।।

दशेश से केन्द्र वा कोण वा लाभ वा दूसरे भाव में हो तो देह-सुख, धन का लाभ, पुत्र लाभ और मन में दृढ़ता।।१७।।

यातुः कार्यार्थसिद्धि स्यात्स्वल्पग्रामाधिपत्वयुक् ।
षष्ठाष्टव्ययराशिस्थे पापग्रहसमन्विते ।।१८।।

तथा यात्रा में कार्य और धन की सिद्धि और छोटे ग्राम की स्वामिता होती है। यदि सूर्य ६।८।१२ भाव में हो पापग्रह से युक्त हो तो।।१८।।

तद्भुक्तौ राजभीतिश्च पितृमातृवियोगकृद् ।
विदेशगमनं चैव चौराहिविषपीडनम् ।।१९।।

अंतर में राजभय और पिता माता का वियोग, विदेशयात्रा, चोर सर्प विष से पीड़ा।।१९।।

राजमित्रविरोधश्च राजदंडाद्धनक्षयः ।
शोकरोगभयं चैव उष्णाधिक्यं ज्वरोभवेत् ।।२०।।

राजा मित्र से विरोध, राजदंड से धन का नाश, शोक रोग का भय, अधिक ताप से युक्त ज्वर होता है।।२०।।

दायेशादष्टरिःफेवा षष्ठे वा पापसंयुते ।
अन्नविघ्नो मनोभीतिर्धनधान्यपशुक्षयः ।।२१।।

दशेश से ८।१२।६ भाव में पापग्रह से युक्त हो तो अन्न प्राप्ति में बाधा, मनमें भय, धन-धान्य, पशु का नाश होता है।।२१।।

आदौ मध्ये महाक्लेशमन्ते सौख्यं विनिर्दिशेत् ।
द्वितीयसप्तमाधीशे ह्यपमृत्युर्भविष्यति ।
तस्यशान्तिं प्रकुर्वीत स्वर्णधेनुं प्रदापयेत् ।।२२।।

आदि और मध्य में महाक्लेश तथा अन्त में सुख होता है। २ वा ७ भाव का स्वामी हो तो अपमृत्यु का भय होता है। इसकी शान्ति करनी चाहिये और सुवर्ण की गौ का दान करना चाहिये।।२२।।

अथ केतुदशायांचन्द्रान्तर्दशाफलम् –

केतोरन्तर्गते चन्द्रे स्वोच्चे स्वक्षेत्रराशिगे ।
केन्द्रत्रिकोणलाभे वा धने सुखसमन्विते ।।२३।।

केतु की दशा में अपने उच्च वा अपनी राशि में केन्द्र वा त्रिकोण वा लाभ स्थान वा धन वा सुख स्थान में गये हुये चंद्रमा के अंतर में।।२३।।

राजप्रीतिर्महोत्साहः कल्याणं च महत्सुखम् ।
महाराजप्रसादेन गृहभूम्यादिलाभकृत् ।।२४।।

राजा से प्रीति बड़ा उत्साह, कल्याण और बड़ा सुख, महाराजा की प्रसन्नत से गृह-भूमि का लाभ।।२४।।

भोजनाम्बरपश्वादि व्यवसायेऽधिकं फलम् ।
अश्ववाहनलाभश्च वस्त्राभरणभूषणम् ।।२५।।

भोजन, वस्त्र, पशु आदि के व्यवसाय में अधिक लाभ होता है। अश्व वाहन का लाभ, वस्त्र आभूषण का लाभ।।२५।।

देवालयतडागादिपुण्यधर्मादिसंग्रहम् ।
पुत्रदारादिसौख्यं च पूर्णचन्द्रस्तथैव च ।।२६।।

देवालय तालाब आदि पुण्य धार्मिक कार्यों का संग्रह, पुत्र, स्त्री आदि का सुख पूर्णचंद्र के होने से होता है।।२६।।

दायेशात्केन्द्रकोणे वा लाभे वा बलसंयुते ।
कृषिगोभूमिलाभं च इष्टबन्धुसमागमम् ।।२७।।

दशेश से केंद्र कोण वा लाभ में बलीचंद्र हो तो कृषि, गौ, भूमि का लाभ, इष्टबंधुओं का समागम।।२७।।

तामसात्कार्यसिद्धिं च गृहे गोक्षीरमेव च ।
भूकृत्यं शुभमारोग्यं मध्ये राजप्रियंशुभम् ।।२८।।
अंते तु राजभीतिं च विदेशगमनं तथा ।
दूरयात्रादिसञ्चारं सम्बंधिजनपूजनम् ।।२९।।

तामसी प्रकृति से कार्य की सिद्धि और घर में गोदुग्ध का सुख भूमिसंबंधि कार्य, शुभ आरोग्यता मध्य में राजा से प्रेम, अंत में राजभय, विदेशयात्रा, दूर यात्रा की सम्भावना और सम्बंधियों का पूजन होता है।।२९।।

नीचगे वा क्षीणगेचन्द्रे षष्ठाष्टव्ययराशिगे ।
आत्मसौख्यं मनस्तापं कार्यविघ्नं महद्भयम् ।।३०।।

यदि चन्द्रमा क्षीण हो और ६।८।१२ भाव में हो तो अपने सुख में मन को सन्ताप, कार्य में विघ्न, महाभय।।३०।।

पितृमातृवियोगं च देहजाड्यं मनोव्यथाम् ।
व्यवसायात्फलं नष्टं गोमहिष्यादिनाशकृत् ।।३१।।

पिता माता का वियोग, देह में जड़ता, मन में व्यथा, व्यवसाय (रोजगार) में असफलता, गौ-भैंस की हानि होती है।।३१।।

दायेशात्षष्ठरन्ध्रे वा व्यये वा बलवर्जिते ।
धनधान्यादिहानिश्च मनोव्याकुलमेव च ।।३२।।

दशेश से ६।८।१२ में निर्बल चन्द्र हो तो धन-धान्य की हानि, मन में व्याकुलता।।३२।।

स्वबंधुजनशत्रुत्वं मातृपीडा तथैव च ।
निधनाधिप दोषेण द्विसप्ताधिपसंयुते ।।३३।।
अपमृत्यु तस्य शान्तिं कुर्याद्यथाविधि ।
चन्द्रप्रीतिकरञ्वैव ह्यायुरारोग्य संभवम् ।।३४।।

अपने बंधुओं से शत्रुता, भाइयों से पीड़ा होती है। अष्टमेश हो और २।७ भाव के स्वामी से युत हो तो अपमृत्यु का भय होता है। उसकी शान्ति के लिये चन्द्रमा के प्रसन्न होनेवाली और आयु आरोग्यता देनेवाली शान्ति करनी चाहिये।।३४।।

अथकेतुदशायांभौमान्तर्दशाफलम्–

केतोरर्न्तगते भौमे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणभे ।
स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे भौमे शुभदृष्टियुतेक्षिते ।।३५।।

केतु की दशा में लग्न से केन्द्र वा त्रिकोण में वा अपने उच्च वा अपनी राशि में शुभग्रह से दृष्ट वा युत भौम के अन्तर में।।३५।।

आदौ शुभफलं चैव ग्रामभूम्यादिलाभकृत् ।
धनधान्यादिलाभश्च चतुष्पाज्जीवलाभकृत् ।।३६।।

पहले शुभफल, ग्राम, भूमि आदि का लाभ, धन, धान्य आदि का लाभ, चतुष्पद जीव का लाभ।।३६।।

गृहारामक्षेत्रलाभं राजानुग्रह वैभवम् ।
भाग्यकर्मेशसम्बंधे भूलाभं सौख्यंमेव च ।।३७।।

गृह, बगीचा, क्षेत्र का लाभ, राजा की कृपा से वैभव का लाभ होता है। भाग्येश कर्मेश से सम्बन्ध हों तो भूमि का लाभ और सुख होता है।।३७।।

दायेशात्केन्द्रकोणे वा दुश्चिक्ये लाभगेऽपिवा ।
राजप्रीति यशोलाभं पुत्रमित्रादि सौख्यकृत् ।।३८।।

दशेश से केन्द्र वा कोण वा तीसरे वा लाभ में हो तो राजा से प्रेम, यश का लाभ, और पुत्र मित्र आदि का सुख होता है।।३८।।

षष्ठाष्टमव्यये भौमे दायेशाद्धनगेऽपि वा ।
द्रुतं करोति मरणं विदेशेचापदं भ्रमम् ।।३९।।

यदि भौम ६।८।२१ स्थान में वा दशेश से २ स्थान में हो तो शीघ्र ही मृत्यु होती है।।३९।।

प्रमेहमूत्रकृच्छ्वादिचौराहिनृपपीडनम् ।
कलहादौ व्यथायुक्तं किंचित्सुखविवर्धनम् ।।४०।।

प्रमेह, मूत्रकृच्छ् आदि रोग, चौर-सर्प-राजा से पीड़ा, आदि में कलह और व्यथा तथा कुछ सुख की वृद्धि होती है।।४०।।

द्वितीयद्यूननाथे तु तापज्वर विषाद्भयम् ।
दारपीडामनःक्लेशमपमृत्युभयं भवेत् ।
अनड्वाहं प्रदद्यात्तु सर्वसम्पत्सुखावहम् ।।४१।।

२।७ भाव के स्वामी हों तो ताप ज्वर और विष का भय, स्त्री को पीड़ा, मन में क्लेश और अपमृत्यु का भय होता है। सभी सम्पत्ति और सुख प्राप्ति के लिये वृष का दान करना चाहिये।।४१।।

अथ केतुदशायांशन्यन्तर्दशाफलम्–

केतोरन्तर्गते राहौ स्वोच्चे मित्रस्वराशिगे ।
केन्द्रत्रिकोणलाभे वा दुश्चिक्ये धनसंज्ञके ।।४२।।

केतु की दशा में अपने उच्च वा मित्र के गृह वा अपनी राशि वा केन्द्र वा कोशा वा लाभ वा तीसरे भाव में गये हुये राहु के अन्तर में।।४२।।

तत्काले धनलाभः स्यात्संसारे भवति ध्रुवम् ।
म्लेक्षप्रभुवशात्सौख्यं धनधान्यफलादिकम् ।।४३।।

तत्काल धन् का लाभ होता है, म्लेक्ष राजा के वश से सुख, धन-धान्य आदि का लाभ।।४३।।

चतुष्पाज्जीवलाभः स्याद्ग्रामभूम्यादिलाभकृत् ।
भुक्तयादौ क्लेशमाप्रोति मध्यान्ते सौख्यमाप्नुयात् ।।४४।।

चतुष्पद जीव का लाभ, ग्राम, भूमि आदि का लाभ होता है। अन्तर के आरम्भ में कष्ट होता है मध्य और अन्त में सुख होता है।।४४।।

रंध्रे वा व्ययगे राहौ पापसंदृष्टिसंयुते ।
बहुपुत्रं कृशं देहं शीतज्वरविषाद्भयम् ।।४५।।

यदि राहु ८।१२ भाव में पापग्रह से दृष्ट वा युत हो तो अनेक पुत्र होते हैं। शरीर में दुर्बलता, शीत ज्वर और विष से भय।।४५।।

चातुर्थिकज्वरं चैव शूद्रोपद्रवपीडनम् ।
अकस्मात्कलहं चैव प्रमेहं शूलमेव च ।।४६।।

चौथिया ज्वर, शूद्र के उपद्रव से पीड़ा, अकस्मात्कलह, प्रमेह और शूलरोग होता है।।४६।।

द्वितीयसप्तमस्थे वा यदा क्लेशं महद्भयम् ।
तद्दोषपरिहारार्थं दुर्गादेवी जपं चरेत् ।
अयुतहोमश्च कर्त्तव्यः सर्वसौख्यप्रदायकः ।।४७।।

द्वितीय वा सातवें हों तो महा क्लेश और महा भय होता है। इस दोष के शान्त्यर्थ दुर्गा देवी का जप और सभी सुख को देने वाला अयुत होम कराना चाहिये।।४७।।

अथकेतुदशायांगुर्वनार्दशाफलम्–

केतोरन्तर्गते जीवे केन्द्रलाभत्रिकोणगे ।
स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे वापि लग्नाधिपसमन्विते ।।४८।।

केतु की दशा में केन्द्र, लाभ वा त्रिकोण में वा उच्च वा अपनी राशि में वा लग्नेश से युत गुरु के अन्तर में।।४८।।

कर्मभाग्याधिपैर्युक्ते धनधान्यार्थसम्पदम् ।
राजप्रीतिं मनोत्साहमश्वांदोल्यादिलाभकृत् ।।४९।।

अथवा कर्मेश भाग्येश से युत गुरु के अन्तर में धन, धान्य आदि सम्पत्ति का लाभ।।४९।।

गृहे कल्याण सम्पत्तिं पुत्रलाभं महोत्सवम् ।
पुण्यतीर्थं मनोत्साहं सत्कर्म च शुखावहम् ।।५०।।

गृह में कल्याण सम्पत्ति, पुत्रलाभ का उत्सव, पुण्यतीर्थ का दर्शन, मन में उत्साह, अश्व-पालकी का लाभ, राजा से प्रेम, अच्छे कर्म, सुख।।५०।।

इष्टदेवप्रसादेन विजयं कार्यलाभकृत् ।
राजसंल्लापकार्याणि नूतन प्रभुदर्शनम् ।।५१।।

इष्टदेव के प्रसाद से विजय, कार्य में लाभ, राजा से भाषण, और नूतन राजा का दर्शन होता है।।५१।।

षष्ठाष्टमव्ययेजीवे दायेशान्नीचराशिगे ।
चौराहिव्रणभीतिं च धनधान्यादिनाशनम् ।।५२।।

यदि गुरु दशेश से ६।८।१२ भाव में हो नीच राशि में हो तो चौर, सर्प, व्रण का भय, धन-धांन्य आदि का नाश।।५२।।

पुत्रदार वियोगं च अतीवक्लेशसम्भवम् ।
आदौ शुभफलं चैव अंते क्लेशकरं भवेत् ।।५३।।

पुत्र-स्त्री का वियोग अत्यंत कष्ट की सम्भावना होती है। आदि में शुभफल होता है अन्त में कष्ट होता है।।५३।।

दायेशात्केन्द्रकोणे वा दुश्चिक्येलाभभेऽपिवा ।
शुभयुक्ते नृपप्रीतिंर्विचित्राम्बरभूषणम् ।।५४।।

दशेश से केन्द्र वा कोण में गुरु हो वा तीसरे वा लाभ स्थान में हो शुभग्रह से पुण्य हो तो राजा से प्रीति, विचित्र वस्त्र आभूषण का लाभ।।५४।।

दूरदेश प्रयाणं च स्वबन्धुजनपोषणम् ।
भोजनाम्बरपश्वादि भुक्त्यादौ देहपीडनम् ।।५५।।

दूरदेश की यात्रा, बन्धुओं का भरण पोषण, भोजन, वस्त्र, पशु आदि का लाभ अन्तर के आदि में होता है।।५५।।

अन्तेतु स्थानचलनमकस्मात्कलहो भवेत् ।
द्वितीयद्यूननाथेतु ह्यपमृत्युर्भविष्यति ।।५६।।

अन्त में स्थान परिवर्तन अकस्मात् कलह होता है। दूसरे वा सातवें का स्वामी हो तो अपमृत्यु का भय होता है।।५६।।

तद्दोषपरिहारार्थं शिवसाहस्त्रकं जपेत् ।
महामृत्युंजय जाप्यं सर्वोपद्रवनाशनम् ।।५७।।

इस दोष के परिहार के लिये शिवसहस्र नाम का जप और महामृत्युञ्जय का जप कराने से सभी उपद्रव नष्ट हो जाते हैं।।५७।।

अथकेतुदशायांशन्यन्तर्दशाफलम् –

केतोरन्तर्गते मन्दे स्वदशायां तु पीडनम् ।
बन्धुक्लेशो मनस्तापश्चतुष्पाज्जीवलाभकृत् ।।५८।।

केतु की दशा में शनि के अन्तर में पीड़ा, बन्धु को कष्ट, मन में संताप चतुष्पद जीव का लाभ।।५८।।

राजकार्यकलापेन धननाशं महद्भयम् ।
स्थानच्युतिः प्रवासश्च मार्गेचौरभयं भवेत् ।।५९।।

राजकार्य के प्रसंग से धन की हानि, महाभय स्थान च्युति, प्रवास, मार्ग में चोरी का भय होता है।।५९।।

आलस्यं मनसो हानिश्चाष्टमे व्ययराशिगे ।
मीनत्रिकोणगेमन्देतुलायांस्वर्क्षराशिभेऽपिवा ।।६०।।

आठवें बारहवें भाव में हो तो आलस्य और मानसिक क्षति होती है। मीनराशि में त्रिकोण में वा तुला में वा अपनी राशि में शनि हो।।६०।।

केन्द्रत्रिकोणलाभे वा दुश्चिक्ये वाशुभांशके ।
शुभदृष्टि च संप्राप्तौ सर्वकार्यार्थसाधनम् ।।३१।।

वा केन्द्र, त्रिकोण, लाभ वा तीसरे भाव का शुभांशक में शुभग्रह की दृष्टि से युत हो तो सभी कार्य और धन का लाभ होता है।।६१।।

स्वप्रभोश्च महत्सौख्यं भ्रमणं रणलाभगम् ।
स्वग्रामे सुखसम्पत्तिः स्ववर्गे राजदर्शनम् ।।६२।।

अपने स्वामी से सुख और रण प्रयुच्य भ्रमण लाभप्रद होता है। अपने ग्राम में सुख और सम्पत्ति अपने वर्ग और राजा का दर्शन होता है।।६२।।

दायेशात्षष्ठरिःफे वा अष्टमे पापसंयुते ।
देहतापो मनस्तापः कार्ये विघ्नो महद्भयम् ।।६३।।

दशेश से ६।८।१२ भाव में पापग्रह से युत हो तो शरीर में ताप, मन में संताप, कार्य में विघ्न, महाभय।।६३।।

आलस्यं मानहानिश्च माता पित्रो विंनाशनम् ।
द्वितीयद्यूननाथे तु ह्यपमृत्युभयं भवेत् ।।६४।।

आलस्य, मानहानि और माता पिता का नाश होता है। दूसरे सातवें भाव का स्वामी हो तो अपमृत्यु का भय होता है।।६४।।

तद्दोषपरिहारार्थं तिलहोमं च कारयेत् ।
कृष्णां गां महिषीं दद्यादायुरारोग्यवृद्धिदाम् ।।६५।।

इसके शान्त्यर्थ कृष्ण गौ, भैंस का दान करने से आयु, आरोग्यता की वृद्धि होती है।।६५।।

अथ केतुदशायांबुधान्तर्दशफलम्–

केतोरन्तर्गते सौम्ये केन्द्रलाभ त्रिकोणगे ।
स्वोच्चे स्वक्षेत्रसंयुक्ते राज्यलाभोमहत्सुखम् ।।६६।।

केतु की दशा में केन्द्र वा लाभ वा त्रिकोण वा अपनी उच्चराशि वा अपनी राशि में युक्त बुध के अन्तर में राज्य का लाभ, महासुख।।६६।।

सत्कथा श्रवणं दानं धर्मसिद्धिः सुखावहा ।
भूलाभः पुत्रलाभश्च शुभगोष्ठी धनागमः ।।६७।।

अच्छी कथा का श्रवण, दान, धर्म कार्य की सिद्धि, सुख, भूमि का लाभ, पुत्र का लाभ, शुभगोष्ठी, धन का आगमन।।६७।।

अयत्नात् धर्मलब्धिश्च विवाहश्च भविष्यति ।
गृहे शुभकरं चैव वस्त्राभरण भूषणम् ।।६८।।

बिना प्रयत्न के धर्म का लाभ, विवाह गृह में शुभकार्य, वस्त्र, आभूषण का लाभ होता है।।६८।।

भाग्यकर्माधिपैर्युक्ते भाग्यवृद्धिः सुखावहा ।
विद्वद्गोष्ठीकलापेन संतोषो भूषणादिकम् ।।६९।।

भाग्येश में कर्मेश से युत हो तो सुखकर भाग्यवृद्धि, विद्वानों की गोष्ठी से संतोष, आभूषण आदि का लाभ होता है।।६९।।

दायेशात्केन्द्रभे सौम्ये त्रिकोणे लाभगेऽपिवा ।
देहारोग्यं महांल्लाभः पुत्रकल्याणवैभवम् ।।७०।।

दशेश से केन्द्र वा त्रिकोण वा लाभ में बुध हो तो देह में आरोग्यता, महालाभ, पुत्र जनित कल्याण और वैभव।।७०।।

भोजनाम्बरपश्वादिव्यवसायेऽधिकं फलम् ।
षष्ठाष्टमव्यये सौम्ये मन्दराहियुतेक्षिते ।।७१।।

भोजन, वस्त्र, पशु आदि के व्यवसाय से अधिक लाभ होता है यदि बुध ६।८।१२ भाव में शनि, भौम, राहु से युत वा दृष्ट हो तो।।७१।।

विरोधो राजभृत्यैश्च परगेहनिवासनम् ।
वाहनाम्बरपश्वादि धनधान्यादिनाशकृत् ।।७२।।

राजकर्मचारियों से विरोध, परगृहवास, वाहन, वस्त्र पशु आदि धन-धान्य का नाश होता है।।७२।।

भुक्त्यादौ शोभनम् प्रोक्तं मध्ये सौख्यं धनागमम् ।
अन्तेक्लेशकरचैव दारपुत्रादिपीडनम् ।।७३।।

अन्तर के आदि में शुभफल, मध्य में सुख और धन का आगम और अन्त में क्लेश, स्त्री-पुत्र को पीड़ा होती है।।७३।।

दायेशात्षष्ठरन्ध्रे व्यये वा बलवर्जिते ।
तद्भुक्त्यादौ महाक्लेशो दारपुत्रादिपीडनम् ।।७४।।

दशेश से ६।८।१२ भाव में निर्बल हो तो अन्तर के आरम्भ में महाकष्ट स्त्री पुत्र आदि को पीड़ा।।७४।।

राजभीतिकरं चव मध्ये तीर्थकरं भवेत् ।
द्वितीयद्यूननाथे तु ह्यपमृत्युर्भविष्यति ।
तद्दोषपरिहारार्थं विष्णुसाहस्त्रकंजपेत् ।।७५।।

और राजभय तथा मध्य में तीर्थयात्रा होती है। दूसरे वा सातवें भाव के स्वामी हों तो अपमृत्यु का भय होता है। इस दोष की शान्ति के लिये विष्णु सहस्त्र नाम का जप करना चाहिये।।७५।।

इति केतुदशायामन्तर्दशाफलम्।

अथशुक्रादशायांशुक्रान्तर्दशाफलम्–

भृगोरन्तर्गते शुक्रे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ।
लाभे वा वलसंयुक्ते योगप्रावल्यमादिशेत् ।।१।।

शुक्र की दशा में लग्न से केन्द्र वा त्रिकोण वा लाभ में बली शुक्र हो तो योग की प्रबलता होती है।।१।।

विप्रमूलाद्धनप्राप्तिर्गोमहिष्यादिलाभकृत् ।
पुत्रोत्सवादिसन्तोषं गृहे कल्याणसम्भवम् ।।२।।

ऐसे शुक्र के अन्तर में ब्राह्मण द्वारा धन का लाभ और गौ-भैंस का लाभ होता हैं। पुत्रोत्सव और कल्याण होता है।।२।।

सन्मानं राजसन्मानं राज्यलाभो महत्सुखम् ।
स्वोच्चे वा स्वक्षेत्रे वापि तुङ्गाशे स्वांशगेऽपिवा ।।३।।

सन्मान और राजा से सम्मान राज्य का लाभ और महा सुख होता है। यदि शुक्र अपने उच्च वा अपनी राशि में वा उच्चांश वा अपने नवांश में हो तो।।३।।

नूतनालयनिर्माणं नित्यं मिष्ठान्नभोजनम् ।
अन्नदानं प्रियं नित्यं दानधर्मादिसंग्रहः ।।४।।

नवीन गृह का निर्माण, नित्य मिष्ठान्न का भोजन, स्त्री पुत्र का लाभ मित्र के साथ भोजन, अन्नदान, नित्य दान धन का संग्रह।।४।।

महाराजप्रसादेन वाहनाम्बरभूषणम् ।
व्यवसायात्फलाधिक्यं चतुष्पाज्जीवलाभकृत् ।।५।।

और महाराज की प्रसन्नता से वाहन-वस्त्र आभूषण का लाभ और व्यवसाय से अधिक लाभ, चतुष्प जीव का लाभ।।५।।

प्रयाणं पश्चिमेभागे वाहनाम्बरलाभकृत् ।
लग्नाद्युपचये शुक्रे शुभदृष्टियुतेक्षिते ।।६।।

पश्चिम दिशा की यात्रा से वाहन, वस्त्र आदि का लाभ होता है। यदि शुक्र लग्न से उपचय (३।६।१०।११) भाव में शुभग्रह से युत दृष्ट।।६।।

मित्रांशे तुङ्गलाभेशयोगकारक संयुते ।
राज्यलाभो महोत्साहो राजप्रीतिः शुभावहा ।।७।।

अपने मित्र के नवांश, वा उच्च में लाभेश और योग कारक से युत हो तो राज्य का लाभ, महा उत्साह, राजा से प्रीति।।७।।

षष्ठाष्टमव्यये शुक्रे पापयुक्तेऽथवीक्षिते ।।८।।
चोरादिव्रणभीतिश्च सर्वत्र जनपीडनम् ।

गृह में कल्याण सम्पत्ति स्त्री पुत्र आदि की वृद्धि होती है। यदि शुक्र ६।८।१२ भाव में पापग्रह से युक्त और दृष्ट हो तो।।८।।

राजद्वारे जनद्वेष इष्टबन्धु विनाशनम् ।।९।।
दारपुत्रादिपीडाच सर्वत्रजनपीडनम् ।

चोर आदि एवं व्रण का भय सर्वत्र जनपीड़ा, राजकीय पुरुषों से द्वेष, इष्टबन्धु का नाश, स्त्री पुत्र आदि को पीड़ा होती है।।९।।

द्वितीय द्यूननाथे तु स्थिते चेन्मरणं भवेत् ।
शक्तौ दुर्गाजपं कुर्याद्धेनु दानं वा कारयेत् ।।१०।।

२ वा ७ भाव के स्वामी हों तो मृत्यु होती है। अनिष्ट शान्त्यर्थ दुर्गा का जप और गोदान करना चाहिये।।१०।।

अथशुक्रदशायांसूर्यान्तदशाफलम्–

शुक्रस्यानार्गते सूर्ये संतापं राजविद्विषम् ।
दायादकलहं चैव व्यवहारमथापि वा ।।११।।

शुक्र की दशा में सूर्य के अन्तर में संताप, राजा से शत्रुता, दायाद से कलह, वा व्यवहार होता है।।११।।

स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे सूर्ये मित्रर्क्षे केन्द्रकोणगे ।
दायेशात्केन्द्रकोणेवा लाभे वा धनगेऽपिवा ।।१२।।

यदि अपने उच्च, अपनी राशि वा मित्र की राशि वा केन्द्र वा त्रिकोण में हो अथवा दशेश से केन्द्र व कोण वा लाभ वा धन स्थान में हो तो।।१२।।

तद्भुक्तौ धनलाभः स्याद्रव्यस्त्री धन सम्पदः ।
स्वप्रभोश्च महत्सौख्यमिष्टबन्धु समागमः ।।१३।।

धन का लाभ में हो तो राज्य स्त्री धन सम्पत्ति का लाभ, अपने स्वामी से सुख, मित्र-बन्धु का समागम।।१३।।

पितृमात्रोः सुखप्राप्तिं भ्रातृलाभं सुखावहम् ।
सत्कीर्त्तिं सुखसौभाग्यं पुत्रलाभं च विंदति ।।१४।।

पिता-माता के सुख का लाभ और भाई के लाभ से सुख होता है। अच्छी कीर्त्ति से सुख-सौभाग्य और पुत्र का लाभ होता है।।१४।।

षष्ठाष्टमव्यये सूर्ये दायेशाद्वातथैव च ।
नीचे वा पापवर्गस्थे देहतापं मनोरुजम् ।।१५।।

यदि सूर्य ६।८।१२ भाव में हो वा दशेश से भी ऐसा ही हो, नीच राशि में पापग्रह के षड्वर्ग में हो तो शरीर में ताप, मानसिक कष्ट।।१५।।

स्वजनस्यापिसंक्लेशो नित्यं निष्ठुरभाषणम् ।
पितृपीडा बंधुहानी राजद्वारे विरोधकृत् ।।१६।।

आत्मीयलोगों को कष्ट नित्य निष्ठुर भाषण, पिता को कष्ट, बन्धु की हानि, राजा से शत्रुता।।१६।।

व्रणपीडाहिवाधा च स्वगृहे च भयं तथा ।
नानारोगभयं चैव गृहक्षेत्रादिनाशनम् ।।१७।।

व्रण से पीड़ा, सर्प का भय, अपने गृह में भय, अनेक रोग का भय और गृह-कोष का नाश होता है।।१७।।

सप्तमाधिपदोषेण देहवाधा भविष्यति ।
तद्दोषपरिहारार्थं सूर्य शान्ति च कारयेत् ।।१८।।

सप्तमेश होने से शरीर बाधा होती है। इस दोष के शान्त्यर्थ सूर्य की शान्ति करनी चाहिये।।१८।।

अथशुक्रदशायांचन्द्रान्तर्दशाफलम्-

शुक्रस्यान्तर्गते चन्द्रे केन्द्रलाभत्रिकोणगे ।
स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे चैव भाग्यकर्मेशसंयुते ।।१९।।

शुक्र की दशा में केन्द्र वा लाभ वा त्रिकोण में वा अपने उच्च वा अपनी राशि में भाग्य कर्मेश से युत।।१९।।

शुभयुक्ते पूर्णचन्द्र राज्यनाथेन संयुते ।
तद्भुक्तौ बाहनाधिक्येनापत्येन महत्सुखम् ।।२०।।

वा शुभग्रह से युत पूर्णचन्द्र कर्मेश से युत चन्द्रमा हो तो उसके अंतर में अधिक वाहनों और लड़कों से बड़ा सुख होता है।।२०।।

महाराज प्रसादेन गजांतैश्वर्यमादिशेत् ।
महानदीस्नानं पुण्यं देवब्राह्मणपूजनम् ।।२१।।

महाराजा की प्रसन्नता से हाथी आदि ऐश्वर्य से सुख, महानदी के स्नान का पुण्य, देवता ब्राह्मण का पूजन।।२१।।

गीतवाद्यप्रसंङ्गादि विद्वज्जन विभूषणम् ।
गोमहिष्यादिवृद्धिश्च व्यवसायेऽधिकं फलम् ।।२२।।

गीत बाजे का प्रसंग, विद्वानों का आदर, गौ-भैंस की वृद्धि, व्यवसाय में लाभ।।२२।।

भोजनाम्बरसौख्यं च बन्धुसंयुक्तभोजनम् ।
नीचे वास्तंगते वापि षष्ठाष्टव्ययराशिगे ।।२३।।

भोजन, वस्त्र का सुख और बन्धु के साथ भोजन होता है यदि चन्द्रमा नीच राशि में वा अस्त वा ६।८।१२ राशि में ।।२३।।

दायेशात्षष्ठगे वापि रन्ध्रे वा व्ययराशिमे ।
तत्काले धननाशः स्यात्संचरेतमहद्भयम् ।।२४।।

वा दशेश से ६।८।१२ राशि में हो तो तत्काल धन का नाश और बड़ा भय करता है।।२४।।

देहायासो मनस्तापो राजद्वारे विरोधकृत् ।
विदेशगमनं चैव तीर्थयात्रादिकं फलम् ।।२५।।

देह में परिश्रम, मन में संताप, राजद्वार से विरोध, विदेश यात्रा-तीर्थयात्रा, स्त्री-पुत्र आदि की पीड़ा, और आत्मीय बंधु से विरोध होता है।।२५।।

दारपुत्रादिपीडा च अत्मबंधुविरोधकृत् ।
दायेशात्केन्द्रलाभस्थे त्रिकोणे धनगेऽपिवा ।।२६।।

दशेश से केन्द्र वा लाभ वा त्रिकोण, दूसरे भाव में हो तो।।२६।।

राजप्रीतिकरं चैव देशग्रामाधिपत्यता ।
धैर्यं यशः सुखं कीर्त्तिर्वाहनाम्बरभूषणम् ।।२७।।

राजा से प्रीति देश-ग्राम की अधिपत्यता, धैर्य, यश, सुख-कीर्त्ति वाहन, वस्त्र आभूषण।।२७।।

कूपारामतडागादिनिर्माणं धनसंग्रहः ।
भुक्त्यादौ देह सौख्यं स्यादंते क्लेशकरंभवेत् ।।२८।।

कूआं, बगीचा, तालाब आदि का निर्माण, धन का संग्रह होता है। अन्तर के आदि में शरीर सुख और अंत में कष्ट होता है।।२८।।

अथशुक्रदशायांभौमान्तर्दशाफलम्–

शुक्रस्यान्तर्गते भौमे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ।
स्वोच्चे वा स्वर्क्षभे भौमे लाभेवा बलसंयुते ।।२९।।

शुक्र की दशा में लग्न से केन्द्र वा त्रिकोण में वा उच्च वा स्वराशि में वा स्थान में बलवान्।।२९।।

लग्नाधिपेन संयुक्ते कर्मभाग्येश संयुते ।
तद्भुक्तौ राजयोगादिसंपदं शुभशोभनम् ।।३०।।

लग्नेश वा भाग्येश कर्मेश से युत भौम के अन्तर में राजयोग के सभी सुन्दर सम्पत्ति।।३०।।

वस्त्राभरणभूम्यादेरिष्ट सिंद्धिः सुखावहा ।
षष्ठाष्टमव्यये वापि दायेशाद्वातथैव च ।।३१।।

वस्त्र, आभूषण भूमि आदि इष्टसिद्धि होती है यदि भौम लग्न से वा दशेश से ६।८।१२ भाव में हो तो।।३१।।

शीतज्वरादि पीडा च पितृ-मातृ भयावहा ।
ज्वराद्यधिकरोगाश्च स्थानभ्रंशो मनोरूजा ।।३२।।

शीतज्वर से पीड़ा और पिता-माता को भय, ज्वरादि अनेक रोग, स्थान नाश, मन में अशान्ति।।३२।।

स्वबंधुजनहानिश्च कलहो राजविद्विषम् ।
राजद्वारजनद्वेषो धनधान्य व्ययाधिकम् ।।३३।।

अपने बन्धुओं की हानि, कलह, राजा से और राज कर्मचारियों से द्वेष, धन धान्य का अधिक व्यय।।३३।।

व्यवसायात्फलं नेष्टं ग्रामभूम्यादिहानिकृत् ।
द्वितीयद्यूननाथेतु देहबाधा भविष्यति ।।३४।।

व्यवसाय से हानि और ग्राम भूमि आदि की हानि होती है। दूसरे वा सातवें भाव के स्वामी होने से शरीर में बाधा होती है।।३४।।

अथ शुक्रदशायां राह्वन्तर्दशाफलम्–

शुक्रस्यान्तर्गते राहौ केन्द्रलाभ त्रिकोणगे ।
स्वोच्चे वा शुभसंदृष्टे योगकारकसंयुते ।।३५।।

शुक्र की दशा में केन्द्र वा लाभ वा त्रिकोण वा अपने उच्च शुभग्रह से देखे जाते हुये योग कारक ग्रह से युक्त।।३५।।

तद्भुक्तौ बहुसौख्यं च धनधान्यादिलाभकृत् ।
इष्टबन्धु समाकीर्णं भोजनाम्बर लाभदम् ।।३६।।

राहु के अंतर में बहुत सुख, धन-धान्य वस्त्र का लाभ, इष्ट बंधुओं का समागम भोजन वस्त्र का लाभ।।३६।।

यातुः कार्यार्थसिद्धिः स्यात्पशुक्षेत्रादिसंभवः ।
लग्नाद्युपचये राहौ तद्भुक्तिः सुखदा भवेत् ।।३७।।

यात्रा से लाभ और कार्य की सिद्धि, पशु क्षेत्र आदि का लाभ होता है। लग्न से उपचय (३।६।१०।११) भाव में राहु हो तो इसका अन्तर सुखकर होता है।।३७।।

शत्रुनाशो महोत्साहो राजप्रीतिकरा शुभा ।
भुक्तयादौ शरमासांश्च अंते ज्वरमजीर्णकृत ।।३८।।

मात्रु का नाश, वड़ा, उत्साह राजा से प्रेम, होता है। अन्तर के आदि में ५ मास शुभफल, अंत में अजीर्ण से ज्वर का भय।।३८।।

कार्ये विघ्नमवाप्नोति सञ्चरेच्च मनोव्यथाम् ।
परं सुखं च सौभाग्यं महानिव समश्नुते ।।३९।।

कार्य मे विघ्न और मानसिक कष्ट होता है। इसके बाद सुख, सौभाग्य, महाराज के समान होता है।।३९।।

नैर्ऋतीं दिशमाश्रित्य प्रयाणं प्रभुदर्शनम् ।
यातुः कार्यार्थसिद्धिः स्यात्स्वदेशे पुनरेष्यति ।।४०।।

नैर्ऋत्य दिशा की यात्रा और स्वामी का दर्शन, यात्रा में कार्य सिद्धि पुनः स्वदेश में आगमन।।४०।।

उपकारो ब्राह्मणानां तीर्थयात्राफलं भवेत् ।
दायेशात्षष्ठराशिस्थे व्यये वा पापसंयुते ।।४१।।

ब्राह्मणों का उपकार और तीर्थयात्रा का फल होता है। दशेश से ६।१२ स्थान में पापग्रह से युत हो तो।।४१।।

अशुभं लभते कर्म पितृमातृजनावपि ।
सर्वत्र जन विद्वेषं नानारूपादि संभवम् ।।४२।।

पिता-माता आदि के अशुभ कर्मों की संप्राप्ति, सर्वत्र लोगों से विरोध अनेक प्रकार से कष्ट होते हैं।।४२।।

द्वितीये सप्तमेवापि देहालस्यं विनिर्दिशेत् ।
तद्दोषपरिहारार्थं मृत्युंजय जपं चरेत् ।।४३।।

२ वा ७ भाव में हो तो देह में आलस्य होता है। इस दोष के शान्त्यर्थ मृत्युंजय का जप करना चाहिये।।४३।।

अथशुक्रदशायांगुर्वन्तर्दशाफलम् –

शुक्रस्यान्तर्गते जीवे स्वोच्चे स्वक्षेत्रकेन्द्रगे ।
दायेशाच्छुभराशिस्थे भाग्ये वा कर्मराशिगे ।।४४।।

शुक्र की दशा में अपने उच्च, अपनी राशि में केन्द्र में दशेश से शुभराशि में भाग्य वा केन्द्र में गये हुये गुरु के अन्तर में।।४४।।

नष्टराज्याद्धनप्राप्तिमिष्टार्थाम्बर सम्पदम् ।
मित्रप्रभोश्च सन्मानं धनधान्यपरांगतिम् ।।४५।।

नष्ट हुये राज्य से धन का लाभ, इष्ट की सिद्धि वस्त्रादि का लाभ मित्र और स्वामी का सन्मान धन्धान्य का लाभ।।४५।।

राजसन्मानकीर्त्ति च अश्वंदोलादिलाभकृत् ।
विद्वत्प्रभुसमाकीर्णं शास्त्रापारपरिश्रमम् ।।४६।।

राजा से सम्मान और कीर्त्ति, घोड़ा, पालकीं का लाभ, विद्वान् और स्वामी का समागम, शास्त्र में परिश्रम।।४६।।

पुत्रोत्सवादिसन्तोषमिष्ट बन्धुसमागम् ।
पितृमातृ सुखप्राप्तिं भ्रातृपुत्रादि सौख्यकृत् ।।४७।।

पुत्रोत्सव इष्टबन्धु का समागम पिता-माता के सुख की प्राप्ति और भाई तथा पुत्र का सुख होता है।।४७।।

दायेशात्षष्ठराशिस्थे व्यये वा पापसंपुते ।
राजचौरादि पीडा च देहपीडा भविष्यति ।।४८।।

दशेश से ६ वा १२ वें भाव में पापग्रह से युत हो तो राजा तथा चोर से शरीर में पीड़ा होती है।।४८।।

आत्मरुग्वंधुकष्टं स्यात्कलेहन मनोव्यथा ।
स्थानच्युतिं प्रवासं च नानारोगं समाप्नुयात् ।।४९।।

अपने रोगी, वंधुओं को कष्ट, कलह से मन में व्यथा, स्थान च्युति, प्रवास, अनेक रोग होते हैं।।४९।।

द्वितीयसप्तमाधीशे देहबाधा भविष्यति ।
तद्दोषपरिहारार्थं महामृत्युंजयं चरेत् ।।५०।।

२ वा ७ भाव का स्वामी हो तो शरीर में बाधा होती है। इस दोष के शान्त्यर्थ मृत्युंजय का जप करना चाहिये।।५०।।

अथशुक्रदशायांशन्यन्तर्दशाफलम् –

शुक्रस्यान्तर्गते मन्दे स्वोच्चे वा परमोच्चगे ।
स्वर्क्षकेन्द्रत्रिकोणस्थे तुङ्गांशे स्वांशगेऽपिवा ।।५१।।

शुक्र की दशा में अपने उच्च वा परमोच्च में वा अपनी राशि वा केन्द्र वा त्रिकोण में वा उच्चांश वा अपने नवांश में गये हुये।।५१।।

तद्भुक्तौ बहुसौख्यं स्यादिष्टवंधुसमन्वितः ।
सन्मानं बहुसन्मानं पुत्रिकागमनसम्भवः ।।५२।।

शनि के अंतर में अनेक सुख, इष्टवंधु से युक्त 'सम्मान' अनेक लोगों से सम्मान, कन्या का जन्म।।५२।।

पुण्यतीर्थफलावाप्तिर्दानधर्मादिपुण्यकृत् ।
स्वप्रभोश्च विशेषःस्यात्वैपरीत्येक्लेशभाग्भवेत्।।५३।।

पुण्य तीर्थ के फल की प्राप्ति, दान धर्म आदि पुण्य, अपने स्वामी से विशेष सम्मान होता है। इसके विपरीत याने नीच राशि में हो तो कष्ट होता है।।५३।।

देहालस्यमवाप्नोति आयाद्धाअधिकव्ययम् ।
षष्टाष्टमव्यये मन्दे दायेशाद्वातथैव च ।।५४।।

शरीर में आलस्य, आमदनी से अधिक खर्च होता हैं। लग्न से वा दशेश से ६।८।१२ भाव में शनि हो तो।।५४।।

भुकत्यादौ च महत्पीडा पितृमातृजनावपि ।
दारपुत्रादिपीडा च संसारे देहविभ्रमम् ।।५५।।

अंतर के आदि महा पीड़ा, पिता-माता को भी कष्ट, स्त्री-पुत्र को कष्ट, संसार में भ्रम।।५५।।

व्यवसायात्फलं नष्टं गोमहिष्यादिहानिकृत् ।
द्वितीयसप्तमाधीशे देहबाधा भविष्यति ।
तद्दोषपरिहारार्थं तिलहोमं च कारयेत् ।।५६।।

व्यवसाय से हानि, गौ-भैंस की हानि होती है। २ वा ७ भाव के स्वामी हो तो शरीर में बाधा होती है। इसकी शान्ति के लिये तिल से हवन करना चाहिये।।५६।।

अथशुक्रदशायांबुधानार्दशाफलम् –

शुक्रस्यान्तर्गते सौम्ये केन्द्रे लाभत्रिकोणगे ।
स्वोच्चे वा स्वक्षेत्रगेवापि राजप्रीतिकरंशुभम् ।।५७।।

शुक्र की दशा में केन्द्र वा लाभ वा त्रिकोण में वा अपने उच्च वा अपनी राशि में गये हुये बुध के अन्तर में राजा से प्रीति।।५७।।

सौभाग्यं पुत्रलाभं च सन्मार्गे धनलाभकृत्।
पुराणधर्मश्रवणं श्रृंगारिजनसंगमम् ।।५८।।

सौभाग्य पुत्र का लाभ अच्छे मार्ग से धन का लाभ, पुराण और धर्मवार्ता का श्रवण, शृंगार करने वालों का समागम।।५८।।

नष्ट हुये राज्य से धन का लाभ, इष्ट की सिद्धि वस्त्रादि का लाभ मित्र और स्वामी का सन्मान धनधान्य का लाभ।।४५।।

राजसन्मानकीर्त्ति च अश्वंदोलादिलाभकृत् ।
विद्वत्प्रभुसमाकीर्णं शास्त्रापारपरिश्रमम् ।।४६।।

राजा से सम्मान और कीर्त्ति, घोड़ा, पालकीं का लाभ, विद्वान् और स्वामी का समागम, शास्त्र में परिश्रम।।४६।।

पुत्रोत्सवादिसन्तोषमिष्ट बन्धुसमागम् ।
पितृमातृ सुखप्राप्तिं भ्रातृपुत्रादि सौख्यकृत् ।।४७।।

पुत्रोत्संव इष्टबन्धु का समागम पिता-माता के सुख की प्राप्ति और भाई तथा पुत्र का सुख होता है।।४७।।

दायेशात्षष्ठराशिस्थे व्यये वा पापसंपुते ।
राजचौरादि पीडा च देहपीडा भविष्यति ।।४८।।

दशेश से ६ वा १२ वें भाव में पापग्रह से युत हो तो राजा तथा चोर से शरीर में पीड़ा होती है।।४८।।

आत्मरुग्वंधुकष्टं स्यात्कलेहन मनोव्यथा ।
स्थानच्युतिं प्रवासं च नानारोगं समाप्नुयात् ।।४९।।

अपने रोगी, बंधुओं को कष्ट, कलह से मन में व्यथा, स्थान च्युति, प्रवास, अनेक रोग होते हैं।।४९।।

द्वितीयसप्तमाधीशे देहबाधा भविष्यति ।
तद्दोषपरिहारार्थं महामृत्युंजयं चरेत् ।।५०।।

२ वा ७ भाव का स्वामी हो तो शरीर में बाधा होती है। इस दोष के शान्त्यर्थ मृत्युंजय का जप करना चाहिये।।५०।।

अथशुक्रदशायांशन्यन्तर्दशाफलम् –

शुक्रस्यान्तर्गते मन्दे स्वोच्चे वा परमोच्चगे ।
स्वर्क्षकेन्द्रत्रिकोणस्थे तुङ्गांशे स्वांशगेऽपिवा ।।५१।।

शुक्र की दशा में अपने उच्च वा परमोच्च में वा अपनी राशि वा केन्द्र वा त्रिकोण में वा उच्चांश वा अपने नवांश में गये हुये।।५१।।

तद्भुक्तौ बहुसौख्यं स्यादिष्टवंधुसमन्वितः ।
सन्मानं बहुसन्मानं पुत्रिकागमनसम्भवः ।।५२।।

शनि के अंतर में अनेक सुख, इष्टबंधु से युक्त 'सम्मान' अनेक लोगों से सम्मान, कन्या का जन्म।।५२।।

पुण्यतीर्थफलावाप्तिर्दानधर्मादिपुण्यकृत् ।
स्वप्रभोश्च विशेषःस्यात्वैपरीत्येक्लेशभाग्भवेत्।।५३।।

पुण्य तीर्थ के फल की प्राप्ति, दान धर्म आदि पुण्य, अपने स्वामी से विशेष सम्मान होता है। इसके विपरीत याने नीच राशि में हो तो कष्ट होता है।।५३।।

देहालस्यमवाप्नोति आयाद्धाअधिकव्ययम् ।
षष्टाष्टमव्यये मन्दे दायेशाद्वातथैव च ।।५४।।

शरीर में आलस्य, आमदनी से अधिक खर्च होता है। लग्न से वा दशेश से ६।८।१२ भाव में शनि हो तो।।५४।।

भुकत्यादौ च महत्पीडा पितृमातृजनावपि ।
दारपुत्रादिपीडा च संसारे देहविभ्रमम् ।।५५।।

अंतर के आदि महा पीड़ा, पिता-माता को भी कष्ट, स्त्री-पुत्र को कष्ट, संसार में भ्रम।।५५।।

व्यवसायात्फलं नष्टं गोमहिष्यादिहानिकृत् ।
द्वितीयसप्तमाधीशे देहबाधा भविष्यति ।
तद्दोषपरिहारार्थं तिलहोमं च कारयेत् ।।५६।।

व्यवसाय से हानि, गौ-भैंस की हानि होती है। २ वा ७ भाव के स्वामी हो तो शरीर में बाधा होती है। इसकी शान्ति के लिये तिल से हवन करना चाहिये।।५६।।

अथशुक्रदशायांबुधानार्दशाफलम् –

शुक्रस्यान्तर्गते सौम्ये केन्द्रे लाभत्रिकोणगे ।
स्वोच्चे वा स्वक्षेत्रगेवापि राजप्रीतिकरंशुभम् ।।५७।।

शुक्र की दशा में केन्द्र वा लाभ वा त्रिकोण में वा अपने उच्च वा अपनी राशि में गये हुये बुध के अन्तर में राजा से प्रीति।।५७।।

सौभाग्यं पुत्रलाभं च सन्मार्गे धनलाभकृत्।
पुराणधर्मश्रवणं श्रृंगारिजनसंगमम् ।।५८।।

सौभाग्य पुत्र का लाभ अच्छे मार्ग से धन का लाभ, पुराण और धर्मवार्ता का श्रवण, श्रृंगार करने वालों का समागम।।५८।।

इष्टबंधुजनाकीर्णं विप्रप्रभुसमागमम् ।
स्वप्रभोश्च महत्सौख्यं नित्यं मिष्ठान्नभोजनम् ।।५९।।

इष्ट बंधुओं का समागम तथा ब्राह्मण और स्वामी का समागम, महा सुख और नित्य मिष्ठान्न का भोजन होता है।।५९।।

दायेशात्षष्ठरन्ध्रे वा व्यये वा बलवर्जिते ।
पापदृष्टौ तथा युक्ते चतुष्पाज्जीवहानिकृत् ।।६०।।

दशेश से ६।८।१२ भाव में निर्बल हो और पाप दृष्ट वायुत हो तो चतुष्पद की हानि।।६०।।

अन्यालयनिवासश्च मनोवैकल्यसम्भवः ।
व्यापारेषु तथा प्राज्ञ हानिरेव न संशयः ।।६१।।

दूसरे के मकान में वास मन में विकलता, व्यापार में हानि होती है।।६१।।

भुक्त्यादौ शोभनं प्रोक्तं मध्ये सौख्यं विनिर्दिशेत्।
अंते क्लेशकरं चैव शीतवातज्वरादिकम् ।।६२।।

अन्तर के आदि में शुभफल मध्य में सुख और अन्त में कष्ट, शीत वात ज्वर होता है।।६२।।

सप्तमाधीशदोषेण देहपीडा भविष्यति ।
तद्दोषपरिहारार्थं विष्णुसाहस्रकंजपेत् ।।६३।।

सप्तमेश होने के दोष से शरीर में पीड़ा होती है। इसके शान्त्यर्थ विष्णु सहस्र नाम का जप करना चाहिये।।६३।।

अथ शुक्रदशायांकेत्वन्तर्दशाफलम् –

शुक्रस्यान्तर्गते केतौ स्वोच्चे वा स्वर्क्षगेऽपिवा ।
योगकारकसम्बन्धे स्थानवीर्य समन्विते ।।६४।।

शुक्र की दशा में अपने उच्च वा अपनी राशि वा योगकारक के संबंध युक्त वा स्थान बल से युक्त।।६४।।

भुक्त्यादौ शुभमाधिक्यान्नित्यं मिष्ठान्नभोजनम् ।
व्यवसायात्फलाधिक्यं गोमहिष्यादिवृद्धिकृत्।।६५।।

केतु के अन्तर में शुभफल की अधिकता से नित्य मिष्ठान्न का भोजन, व्यवसाय से अधिक लाभ, गौ भैंस की वृद्धि।।६५।।

धनधान्यसमृद्धिश्च संग्रामे विजयोभवेत् ।
भुक्त्यंते हि सुखं चैव भुक्त्यादौ मध्यमंफलम् ।।६६।।

धन धान्य समृद्धि का लाभ और संग्राम में विजय होती है। अंतर के अन्त में सुख और आदि में मध्यम फल।।६६।।

मध्ये मध्ये महत्कष्टं पश्चादारोग्यमादिशेत् ।
दायेशाद्रिपुरंध्रस्थे व्यये वा पापसंयुते ।।६७।।

और मध्य में बीच बीच में महाकष्ट पीछे आरोग्यता होती है। दशेश से ६।८।१२ भाव में पापग्रह से युक्त हो तो।।६७।।

चौराहिव्रणपीडा च बुद्धिनाशो महद्भयम् ।
शिरोरूजं मनस्तापमकस्मात्कलहं तथा ।।६८।।

चोर-सर्प, व्रण की पीड़ा, बुद्धि का नाश, महाभय, शिर में रोग, मन में संताप अकस्मात् कलह।।६८।।

प्रमेहरोगसम्प्राप्तिर्नानामार्गे धनव्ययः ।
भार्यापुत्रविरोधश्च गमनं कार्यनाशनम् ।।६९।।

प्रमेह रोग की उत्पत्ति, अनेक मार्ग में धन व्यय, स्त्री, पुत्र के विरोध, यात्रा और कार्य की हानि होती है।।६९।।

द्वितीयद्यूननाथे तु देहबाधा भविष्यति ।
तद्दोषपरिह्वारार्थं मृत्युंजय जपं चरेत् ।
छागदानं प्रकुर्वीत सर्वसम्पत्प्रदायकम् ।।७०।।

२।७ भाव के स्वामी हों तो शरीर में कष्ट होता है। इस दोष के शान्त्यर्थ मृत्युंजय का जप करना चाहिये और सभी सम्पत्ति को देनेवाला छाग का दान करना चाहिये।।७०।।

इति पारशर होरायां पूर्वार्धे विंशोत्तर्यामन्तर्दशा प्रकरणं समाप्तम्।

अथ प्रत्यन्तर्दशाऽध्यायः।

अथ प्रत्यन्तर्दशासाधनप्रकारः-

स्वान्तर्दशाब्दवृन्दं च हन्यात्स्वाब्दैर्ग्रहस्य च ।
विंशोत्तरशतेनाप्तं धस्राः शेषं घट्यादिकम् ।।१।।

ग्रह के अन्तर्दशामान को ग्रह के दशा वर्ष संख्या से गुणाकर गुणनफल में

१२० का भाग देने से लब्धि दिनादि उस ग्रह के प्रत्यन्तर होता है।।१।।

उदाहरण–जैसे सूर्य की दशा में सूर्य का अन्तर ० वर्ष ३ मास और १८ दिन होता है, इसे सूर्य के दशा वर्ष ६ से गुणा करने से १ वर्ष ९ मास १८ दिन हुये इसमें १२० का भाग देने से ० वर्ष ० मास ५ दिन और २४ घटी यह सूर्य की दशा में सूर्य के अन्तर में सूर्य का प्रत्यन्तर्दशा हुआ।

०।३।१८ को ६ से
गुणा किया तो १।९।१८ इसमें १२० का
भाग दिया १२०)१।९।१८(० व
१२
१२+९
२१ (० मा.
२१×३०
६३०+१८
६४८ (५ दि.
६००
४८×६०
२८८०(२४ घ.
२४०
४८०
४८०
×

इसी प्रकार सूर्य की दशा में चन्द्रमा के अन्तर्दशा वर्षादि ०।६।० को सूर्य के दशावर्ष ६ से गुणाकर १२० का भाग दिया

०।६।०×६
१२०)०।३६।०(० व.
१२
०+३६
३६ (० मा.
× ३०
१०८० (९ दि.
१०८०
×

यह सूर्य की दशा में सूर्य के अन्तर में चन्द्रमा का प्रत्यन्तर हुआ। इसी प्रकार भौमादि के अन्तर्दशा वर्षादि को सूर्य के दशावर्ष से गुणकर १२० से भाग देने से सूर्यान्तर में भौमादि के प्रत्यन्तर्दशा दिनादि आ जाती है। अर्थात् जिस ग्रह के अन्तर्दशा में जिस ग्रह की प्रत्यन्तर्दशा लानी हो उसके अन्तर्दशा वर्षादि को अन्तर्दशेश के दशा वर्ष से गुणकर १२० का भाग देने से उसके प्रत्यन्तर्दशा का दिनादि मान आ जाता है।

अथ सूर्यान्तरेसूर्यादीनांप्रत्यन्तर्दशाफलम्–

उद्वेगश्च महद्वित्तदारात्तिः शिरसिव्यथा ।
ब्राह्मणेन विवादश्चसूर्यः स्वविदशांगतः ।।२।।(सू.सू.)

सूर्य के अन्तर में सूर्य के प्रत्यन्तर में उद्वेग, धनका तथा स्त्री को बड़ा कष्ट और ब्राह्मण के साथ विवाद होता है।।२।।

उद्वेगं कलहं चित्तपीडां स्वहृतिमद्भुताम् ।
मणिमुक्तादिनाशश्च विदिशासु रवेः शशी ।।३।। (सू.चं.)

सूर्य के अन्तर में चन्द्रमा के प्रत्यन्तर में उद्वेग, कलह, मनको व्यथा, धन का अपहरण और मणि-मुक्ता आदि का नाश होता है।।३।।

राजभीति शास्त्रभीतीं बंधनं बहुसंकटम् ।
शत्रुभंगस्तथा घातो विदशासु रवेःकुजः ।।४।। (सू.मं.)

सूर्य के अन्तर में भौम के प्रत्यन्तर में राजभय, शस्त्रभय, बंधन, अनेक संकट, शत्रु और अग्नि से पीड़ा होती है।।४।।

श्लेष्मव्याधिं शस्त्रभीतिं धनहानिं महद्भयम् ।
राजभंगस्तथा घातो विदशासु रवेस्तमः ।।५।। (सू.रा.)

सूर्य के अन्तर में राहु के प्रत्यन्तर में कफव्याधि, शस्त्र से भय, धनकी हानि, बड़ा भय, राजका भंग और चोट आदि से कष्ट होता है।।५।।

शत्रुनाशं जयं वृद्धिं वस्त्रहेमादिभूषणम् ।
वस्त्रयानादि लब्धिं च गोधनं च रवेर्गुरूः ।।६।। (सू.गु.)

सूर्य के अन्तर में गुरु के प्रत्यन्तर में शत्रु का नाश, विजय, उन्नति, वस्त्र, सुवर्ण के आभूषण, सवारी और गौ का लाभ होता है।।६।।

धनहानिः पशोःपीडा महोद्वेगो महारूजः ।
अशुभं सर्वमाप्नोति विदशासु रवेः शनि ।।७।। (सू.श.)

सूर्य के अन्तर में शनि के प्रत्यन्तर में धन की हानि, पशु को पीड़ा, उद्वेग, महारोग और अनेक अशुभ होते हैं।।७।।

विद्यालाभो बंधुसंगो भोज्यप्राप्तिर्धनागमः ।
धर्मलाभो नृपात्पूजा विदशासु रवेर्बुधः ।।८।। (सू.बु.)

सूर्य के अन्तर में बुध के प्रत्यन्तर में विद्या का लाभ, बंधु का समागम, भोज्य की प्राप्ति, धन का आगम, धर्म का लाभ और राजा से आदर होता है।।८।।

प्राणभीतिर्महाहानी राजभीतिश्च विग्रहः ।
शत्रुजा च महावादो विदशासुखेः शिखी ।।९।। (सू.के.)

सूर्य की दशा में केतु के प्रत्यन्तर में प्राण का भय, बड़ी हानि, राजभय, शत्रुता, शत्रु से बड़ा वादविवाद होता है।।९।।

दिनानि समरूपाणि लाभोऽप्यल्पो भवेदिह ।
स्वल्पा च सुखसम्पत्तिर्विदशासु रवेर्भृगुः ।।१०।।(सू.शु.)

सूर्य के अंतर में शुक्र के प्रत्यन्तर में समान रुप से दिन बीतते हैं, लाभ थोड़ा होता है और थोड़ी ही सुख सम्पत्ति होती है।।१०।।

इति सूर्यान्तरे प्रत्यंतर फलम्।

अथ चन्द्रान्तरे चन्द्रादीनां प्रत्यन्तरफलम् –

भूभोज्यधश्रसम्प्राप्ती राजपूजामहत्सुखम् ।
महालाभः दारसौख्यं विदशासु स्वयं शशी ।।११।। (चं.चं.)

चन्द्रमा के अन्तर में चन्द्रमा के ही प्रत्यन्तर में भूमि, भोजन पदार्थ, धन की प्राप्ति, राजा से पूजा, बड़ा सुख, अत्यन्त लाभ और स्त्री का सुख होता है।।११।।

मतिर्वृद्धिर्महापूज्यः सुखं बंधुजनैः सह ।
धनागमं शत्रुभयं चन्द्रस्यान्तर्गतः कुजः ।।१२।। (चं.मं.)

चन्द्रमा के अन्तर में भौम के प्रत्यन्तर में बुद्धि में वृद्धि, अत्यंत आदर, बंधुओं से सुख, धन का आगम और शत्रुका भय होता है।।१२।।

भवेत्कल्याणसम्पत्ती राजवित्तसमागमः ।
अशुभैरल्पमृत्युश्च चन्द्रचन्द्रान्तरे तमः ।।१३।। (चं.श.)

चन्द्रमा के अन्तर में राहु के प्रत्यन्तर में कल्याण, सम्पत्ति, राजा से धन का समागम, अशुभ और अल्पमृत्यु का भय होता है।।१३।।

वस्त्रलाभो महातेजो ब्रह्मज्ञानं च सद्गुरोः ।
राज्यालङ्करणावाप्तिश्चन्द्रचन्द्रान्तरे गुरुः ।।१४।। (चं.वृ.)

चन्द्रमा के अन्तर में गुरु के प्रत्यंतर में वस्त्र का लाभ, तेज में वृद्धि, अच्छे गुरु से ब्रह्मज्ञान की राज्यचिह्नों की प्राप्ति होती है।।१४।।

दुर्दिने लभते पीडा वातपित्ताद्विशेषतः ।
धनधान्ययशोहानिश्चन्द्रचन्द्रान्तरे शनिः ।।१५।। (चं.श.)

चन्द्रमा के अन्तर में शनि के प्रत्यन्तर में दुर्दिन में विशेषकर वायु पित्त विकार से कष्ट धन धान्य और यश की हानि होती है।।१५।।

पुत्रजन्महयप्राप्तिर्विद्यालाभो महोन्नतिः ।
शुक्लवस्त्रान्नलाभश्च चन्द्रचन्द्रान्तरे बुधः ।।१६।। (चं.बु.)

चन्द्रमा के अन्तर में बुध के प्रत्यन्तर में पुत्र का ज़न्म, घोड़े की प्राप्ति, विद्या का लाभ, अत्यन्त उन्नति और सफेद वस्त्र एवं अन्न का लाभ होता है।।१६।।

ब्राह्मणेन समं युद्धमपमृत्युः सुखक्षयः ।
सर्वत्र जायते क्लेशश्चन्द्रचन्द्रान्तरे शिखी ।।१७।। (चं.के.)

चन्द्रमा के अन्तर में केतु के प्रत्यंतर में ब्राह्मण के साथ युद्ध, अपमृत्यु, सुख की हानि और सर्वत्र कष्ट प्राप्त होता है।।१७।।

धनलाभो महत्सौख्यं कन्याजन्म सुभोजनम् ।
प्रीतिश्च सर्वलोकेभ्यश्चन्द्रचन्द्रान्तरे भृगुः ।।१८।। (चं.शु.)

चन्द्रमा के अन्तर में शुक्र के प्रत्यन्तर में धन का लाभ, महासुख, कन्या का जन्म, सुन्दर भोजन और सभी प्राणियों से प्रेम होता है।।१८।।

अन्नागमो वस्त्रलाभः शत्रुहानिः सुखागमः ।
सर्वत्र विजयप्राप्तिश्चन्द्रचन्द्रान्तरे रविः ।।१९।। (चं.सू.)

चन्द्रमा के अन्तर में सूर्य के प्रत्यन्तर में अन्न का आगभ, वस्त्र का लाभ, शत्रु का नाश और सर्वत्र विजय होती है।।१९।।

इति चन्द्रान्तरे प्रत्यन्तर फलम् –

अथ भौमान्तरेभौमादीनांप्रत्यन्तरफलम् –

शत्रुभीतिं कलिं घोरमकस्माज्जायते भयम् ।
रक्तस्रावोऽपमृत्युश्च विदशासुस्वयं कुजः ।।२०।। (मं.मं.)

भौम के अन्तर में भौम ही के प्रत्यन्तर में शत्रु का भय, अकस्मात् घोररूप से झगड़ा, भय, रक्तस्राव और अपमृत्यु होती है।।२०।।

बंधनं राजभङ्गं च धनहानिः कुभोजनम् ।
कलहं शत्रुभिर्नित्यं भौमभौमान्तरे तमः ।।२१।। (मं.रा.)

भौम की दशा में राहु के अन्तर में बंधन, राज्य का नाश, धन की हानि, खराब भोजन, नित्य शत्रु से कलह होता है।।२१।।

मतिनाशं तथा दुःखं संतापः कलहो भवेत् ।
विफलं चिंतितं सर्वं भौमभौमान्तरे गुरुः ।।२२।। (मं.वृ.)

भौम के अन्तर में गुरु के प्रत्यन्तर में बुद्धि का नाश, दुःख, संताप कलह और सभी चिंतित कार्य विफल हो जाते हैं।।२२।।

स्वामिनाशस्तथा पीडा धनहानिर्महाभयम् ।
वैकल्यं कलहस्त्रासो भौमभौमान्तरे शनिः ।।२३।। (मं.श.)

भौम के अन्तर में शनि के प्रत्यन्तर में स्वामी का नाश, पीडा, धन की हानि, महाभय, विकलता, कलह और त्रास होता है।।२३।।

सर्वथा बुद्धिनाशश्च धनहानिज्वरस्तनौ ।
वस्त्रान्नसुहृदां नाशो भौमभौमान्तरे बुधः ।।२४।। (मं.बु.)

भौम के अन्तरदशा में बुध के प्रत्यन्तर में बुद्धि का नाश, धनहानि, शरीर में ज्वर, वस्त्र अन्न और मित्रों का नाश होता है।।२४।।

आलस्यं च शिरः पीडा पापरोगापमृत्युकृत् ।
राजभीतिः शस्त्रघातो भौमभौमान्तरे शिखी ।।२५।। (मं.के.)

भौम के अन्तर में केतु के प्रत्यन्तर में आलस्य, शिर में पीडा, पाप, रोग, अपमृत्यु राजभय और शस्त्र से चोट लगने का भय होता है।।२५।।

चांडालात्संकटस्त्रासो राजशस्त्रभयं भवेत् ।
अतिसारो च वमनं भौमभौमान्तरे भृगुः ।।२६।। (मं.शु.)

भौम के अन्तर में शुक्र के प्रत्यन्तर में चांडाल से संकट और त्रास राजा और शस्त्र से भय, अतिसार और वमन होता है।।२६।।

भूमिलाभोऽर्थसम्पत्तिः संतोषोमित्रसंमतिः ।
सर्वत्र सुख माप्नोति भौमभौमान्तरे रविः ।।२७।। (मं.सू.)

भौम के अंतर में सूर्य के प्रत्यन्तर में भूमि का लाभ, धन सम्पत्ति का लाभ, संतोष, मित्रों का लाभ और सर्वत्र सुख होता है।।२७।।

याम्यां दिशि भवेल्लाभः सितवस्त्रविभूषणम् ।
संसिद्धिः सर्वकार्याणां भौमभौमान्तरे शशी ।।२८।। (मं.चं.)

भौम की दशा में चन्द्रमा के प्रत्यन्तर में दक्षिणदिशा से लाभ, सफेद वस्त्र आभूषण का लाभ और सभी कार्यों की सिद्धि होती है।।२८।।

इति भौमप्रत्यन्तर फलम् –

अथराह्वन्तरेराह्वादीनां प्रत्यन्तरफलम् –

बंधनं बहुधारोगो बाहुघातं सुहृद्भयम् ।
अकस्मात्प्राप्यते व्याधिः राहुप्रत्यन्तरे राहुः ।।२९।। (रा.रा.)

राहु की दशा में राहु के अन्तर में बंधन, अनेक रोग, बाहु में आघात, मित्र से भय, अकस्मात् व्याधि होती है।।२९।।

सर्वत्रलभते लाभं गजाश्वं च धनागमम् ।
राजसन्मानदं राज्यं भवेद्राह्वन्तरे गुरुः ।।३०।। (रा.बृ.)

राहु के अन्तर में गुरु के प्रत्यन्तर में सर्वत्र लाभ, हाथी, घोड़ा, धन का लाभ, राज सन्मान से युक्त राज्य की प्राप्ति होती है।।३०।।

बंधनं जायते घोरं सुखहानिर्महद्भयम् ।
प्रत्यहं वातपीडा च राहौ राह्वन्तरे शनिः ।।३१।। (रा.श.)

राहु के अन्तर में शनि के प्रत्यन्तर में घोर व धन होता है। सुख की हानि और बड़ाभय और प्रतिदिन वायु से पीड़ा होती है।।३१।।

सर्वत्र बहुधा लाभः स्त्री समश्च विशेषतः ।
परदेशगतिः सिद्धिं राहो राह्वन्तरे बुधः ।।३२।। (रा.बु.)

राहु की दशा में बुध के प्रत्यन्तर में सर्वत्र अनेक लाभ स्त्री संसर्ग से विशेष लाभ और परदेश से विशेष सिद्धि होती है।।३२।।

बुद्धिनाशो भयं विघ्नं धनहानिर्महद्भयम् ।
सर्वत्र कलहोद्वेगो राहो राह्वन्तरे शिखी ।।३३।। (रा.के.)

राहु के अन्तर में केतु के प्रत्यन्तर में बुद्धि का नाश, भय, विघ्न, धन की हानि, बड़ा भय और सर्वत्र कलह और द्वेष होता है।।३३।।

योगिनीभ्योभयं भूयादश्वहानिः कुभोजनम् ।
स्त्रीनाशः कुलजं शोकं राहो राह्वतरेसितः ।।३४।। (रा.शु.)

राहु के अन्तर में शुक्र के प्रत्यंतर में योगिनी (पिशाचिनी आदि) से भय, घोड़े का नाश, खराब भोजन, स्त्री का नाश और कुलजनित शोक होता है।।३४।।

ज्वररोगो महाभीतिः पुत्रपौत्रादिपीडनम् ।
अल्पमृत्युः प्रभादश्च राहो राह्वन्तरे रविः ।।३५।। (रा.सू.)

राहु के अन्तर में सूर्य के प्रत्यन्तर में ज्वररोग, महाभय, पुत्र-पौत्र को पीड़ा, अपमृत्यु और प्रमाद होता है।।३५।।

उद्वेगकलहो चिन्ता मानहानिर्भहद्भयम् ।
पितुर्विकलता देहे राहो राह्वन्तरे शशी ।।३६।। (रा.चं.)

राहु की दशा में चन्द्रमा के प्रत्यन्तर में उद्वेग, कलह, चिन्ता, मानहानि, महाभय, पिता आदि के शरीर में विकलता होती है।।३६।।

भगंदरकृता पीडा रक्तपित्तप्रपीडनम् ।
अर्थहानिर्महोद्वेगो राहो राह्वन्तरे कुजः ।।३७।। (रा.मं.)

राहु के अन्तर में भौम के प्रत्यंतर में भगदर रोग से पीड़ा, रक्त पित्त से पीड़ा, धन हानि और महा उद्वेग होता है।।३७।।

इति राहु प्रत्यन्तर फलम् ।

अथ गुर्वन्तरे गुर्वादीनांप्रत्यंतर फलम्–

हेमलाभो धान्यवृद्धिः कल्याणं च फलोदयः ।
बहुभाग्यं गृहे वृद्धिं जीवजीवान्तरे गुरुः ।।३८।। (वृ.शू.)

गुरु के अन्तर में गुरु के प्रत्यन्तर में सुवर्ण का लाभ, धान्य वृद्धि, कल्याण, फलोदय अनेक प्रकार से भाग्योदय और घर में वृद्धि होती है।।३८।।

गोभूमिहयलाभः स्यात्सर्वत्र सुखसाधनम् ।
संग्रहो ह्यन्नपानादि गुरुर्गुर्वन्तराशनिः ।।३९।। (वृ.श.)

गुरु के अन्तर में शनि के प्रत्यन्तर में गौ, भूमि, सुवर्ण का लाभ, सर्वत्र सुख का साधन, अन्न, पान आदि का संग्रह होता है।।३९।।

विद्यालाभो वस्त्रलाभो ज्ञानलाभः समौक्षिकः ।
सुहृदां संगमः स्नेहो जीवजीवान्तराबुधः ।।४०।। (वृ.बु.)

गुरु के अन्तर में बुध के प्रत्यन्तर में विद्या का लाभ, वस्त्र का लाभ, मौक्षिक ज्ञान का लाभ, मित्रों से समागम और स्नेह होता है।।४०।।

जलभीतिस्तथा चौर्यं बंधनं कलहो भवेत् ।
अल्पमृत्युर्भयं घोरं जीव जीवांतरे ध्वजः ।।४१।। (वृ.के.)

गुरु के अन्तर में केतु के प्रत्यंतर में जल से भय, चोरी का भय, बंधन, कलह, घोर अपमृत्यु का भय होता है।।४१।।

नानाविद्यार्थसम्प्राप्तिर्हेमवस्त्रविभूषणम् ।
लभतेक्षेमसंतोषं जीवजीवांतरे कविः ।।४२।। (वृ.शु.)

गुरु के अन्तर में शुक्र के प्रत्यंतर में अनेक प्रकार से धन का लाभ, सुवर्ण, वस्त्र, आभूषण का लाभ और कुशल, संतोष का लाभ होता है।।४२।।

नृपाल्लाभस्तथा मित्रान्पितृतो मातृतोऽपि वा।
सर्वत्र लभते पूजां जीवजीवान्तरा रविः॥४३॥ (वृ.सू.)

गुरु के अंतर में सूर्य के प्रत्यंतर में राजा से लाभ, मित्र, पिता, माता से लाभ और सर्वत्र पूजनीय होता है॥४३॥

सर्वदुःखविमोक्षश्च मुक्तालाभो हयस्य च।
सिध्यंति सर्वं कार्याणि जीवजीवांतरे शशी॥४४॥ (वृ.चं.)

गुरु के अन्तर में चन्द्रमा के प्रत्यन्तर में सभी दुःखों का नाश, मुक्ता और अश्व का लाभ और सभी कार्य सिद्ध होते हैं॥४४॥

शस्त्रभीतिर्गुदे पीडावन्हिमान्द्यमजीर्णता।
पीडाशत्रुकृता भूरि जीवजीवान्तरे कुजः॥४५॥ (वृ.मं.)

गुरु के अन्तर में भौम के प्रत्यंतर में शस्त्र का भय, गुदा में पीड़ा, अग्निमांद्य, अजीर्ण और शत्रु से अधिक पीड़ा होती है॥४५॥

चांडालेन विरोधः स्याद्भयं तेभ्यो रतिग्रहः।
कष्टं स्याद्व्याधिशत्रुभ्यो जीवजीवान्तरे तमः॥४६॥ (वृ.रा.)

गुरु के अन्तर में राहु के प्रत्यंतर में चांडाल से विरोध और उनसे भय, व्याधि और शत्रु से कष्ट होता है॥४६॥

इति गुरुप्रत्यंतरफलम्।

अथ शन्यन्तरेशन्यादीनांप्रत्यन्तरफलम्–

देहपीडा कलेर्भीतिर्भयमन्त्यलोकतः।
विदेशगमनं दुःखं शनेः शन्यन्तरे शनिः॥४७॥ (श.श.)

शनि के अन्तर में शनि के प्रत्यंतर में शरीर में पीड़ा, झगड़े का भय, नीचों से भय, विदेश की यात्रा और दुःख होता है॥४७॥

बुद्धिनाशो कलेर्भीतिमन्नपानादिहानिकृत्।
धनहानिर्भयं शत्रोः शनेः शन्यन्तरे बुधः॥४८॥ (श.बु.)

शनि के अन्तर में बुध के प्रत्यंतर में बुद्धि का नाश; कलह का भय, अन्नादि की हानि, धन की हानि और शत्रु का भय होता है॥४८॥

बन्धः शत्रुगृहे जातो वर्णहानिर्वहुक्षुधा।
चित्तेचिन्ता भयं त्रासः शनेःसौरान्सरे शिखी॥४९॥ (श.के.)

शनि के अन्तर में केतु के प्रत्यंतर में शत्रु गृह में बन्धन, तेज की हानि,

बहुत भूख लगती है, चित्त में चिन्ता, भय और त्रास होता है।।४९।।

चिंतितं फलितं वस्तु कल्याणं स्वजने तथा।
मनुष्यकृतितो लाभः शनेः शन्यन्तरे भृगुः ।।५०।।(श.श.)

शनि की दशा में शुक्र के अन्तर में चिंतित वस्तु का लाभ, आत्मीयजनों का कल्याण, मनुष्य की कृति से लाभ होताा है।।५०।।

राजतेजोऽधिकारित्वं स्वगृहे जायते कलिः।
ज्वरादिव्याधिपीडाच कोणे कोणान्तरे रविः ।।५१।। (श.सू.)

शनि के अन्तर में सूर्य के प्रत्यान्तर में राजा के ऐसा तेज, अधिकार की प्राप्ति, अपने घर में कलह और ज्वर आदि व्याधि से पीड़ा होती है।।५१।।

स्फीतबुद्धिर्महारम्भो मंदतेजो बहुव्ययः।
बहुस्त्रीभिःसमं भोगं कोणे कोणान्तरे शशी ।।५२।। (श.चं.)

शनि के अन्तर में चन्द्रमा के प्रत्यंतर में स्वच्छ बुद्धि, महान् कार्य का आरम्भ, कान्ति की कमी, अधिक खर्च, अनेक स्त्रियों से संभोग होता है।।५२।।

तेजोहानिः पुत्रघातो वह्निभीतिर्रिपोर्भयम्।
वातपित्तकृतापीडा कोणेकोणान्तरे कुजः ।।५३।। (श.मं.)

शनि के अंतर में भौम के प्रत्यंतर में कान्ति की हानि, पुत्र को कष्ट, अग्नि का भय, शत्रु भय और बात-पित्त से पीड़ा होती है।।५३।।

धननाशो वस्त्रहानिर्भूमिनाशो भयं भवेत्।
विदेशगमनं मृत्युः कोणेकोणान्तरे तमः ।।५४।। (श.रा.)

शनि के अंतर में भौम के प्रत्यंतर में धन का नाश, वस्त्र की हानि, भूमि की हानि, भय, विदेश यात्रा और मृत्यु होती है।।५४।।

गृहेषु स्त्रीकृतं छिद्रं ह्यसमर्थो निरीक्षणे।
अथवा कलिमुद्वेगं दाने सौरान्तरे गुरुः ।।५५।। (श.बृ.)

शनि के अन्तर में गुरु के प्रत्यन्तर में गृह में स्त्री द्वारा कलह की उत्पत्ति जिसके निरीक्षण में असमर्थ, कलह और उद्वेग होता है।।५५।।

इति शनि प्रत्यंतरफलम्।

अथ बुधान्तरेबुधादीनां प्रत्यन्तरफलम् –

बुद्धिविद्यार्थलाभो वा वस्त्रलाभोमहत्सुखम् ।
स्वर्णादिधनलाभः स्यात्सौम्यसौम्यान्तरेबुधः ।।५६।। (बु.बु.)

बुध के अन्तर में बुध के प्रत्यंतर में बुद्धि, विद्या और धन का लाभ, वस्त्र का लाभ और सुख और सुवर्ण आदि धन का लाभ होता है।।५६।।

कठिनान्नस्यसंप्राप्तिरूदरे रोगसम्भवः ।
कामलं रक्तपित्तं च सौम्यसौम्यान्तरे शिखी ।।५७।। (बु.के.)

बुध के अंतर में केतु के प्रत्ग्ंतर में कठिन (कड़े) अन्नों की प्राप्ति, पेट में रोग की संभावना, कामला रोग वा रक्तपित्त से रोग होता है।।५७।।

उत्तरस्यां भवेल्लाभो हानिः स्यात्तु चतुष्पदात् ।
अधिकारान्महाप्रीतिः सौम्ये सौम्यान्तरे रविः ।।५९।। (बु.सू.)

बुध के अंतर में सूर्य के प्रत्यंतर में कान्ति की हानि, रोग, शरीर में मन्दाग्नि से पीड़ा और चित्त में अशान्ति होती है।।५९।।

स्त्रीलाभश्चार्थसम्पत्तिः कन्यालाभोमहद्धनम् ।
लभते सर्वतः सौख्यं सौम्यसौम्यान्तरे शशी ।।६०।। (बु.चं.)

बुध के अंतर में चन्द्रमा के प्रत्यंतर में स्त्री का लाभ, धन की प्राप्ति, कन्या का जन्म, महाधन की प्राप्ति और सर्वत्र सुख की प्राप्ति होती है।।६०।।

धर्मधीधेनसम्प्राप्तिश्चौराग्र्यादि प्रपीडनम् ।
रक्तवस्त्रं शस्त्रघातः सौम्यसौम्यान्तरे कुजः ।।६१।। (बु.मं.)

बुध के अंतर में भौम के प्रत्यंतर में धर्म, बुद्धि, धन की प्राप्ति, चोर और ब्राह्मण से पीड़ा, रक्त वस्त्र और शस्त्र से घात होता है।।६१।।

कलहो जायते स्त्रीभिरकस्माद्भयसम्भवः ।
राजशस्त्रकृताभीतिः सौम्यसौम्यान्तरे तमः ।।६२।। (बु.रा.)

बुध की दशा में राहु के अन्तर में अकस्मात स्त्री से कलह होने की सम्भावना और राजा तथा शस्त्र से भय होता है।।६२।।

राज्यं राज्याधिकारी वा पूजाराजसमुद्भवा ।
विद्याधरान्नवस्त्रं च सौम्यसौम्यांतरे गुरुः ।।६३।। (बु.बृ.)

बुध के अन्तर में गुरु के प्रत्यंतर में राज्य वा राज्याधिकारी की प्राप्ति, राजा से पूजा, विद्याधर से अन्न वस्त्र की प्राप्ति होती है।।६३।।

वातपित्तमहापीडा देहघातसमुद्भवा ।
धननाशमवाप्नोति सौम्यसौम्यान्तरे शनिः ।।६४।। (बु.श.)

बुध के अंतर में शनि के प्रत्यंतर में वात-पित्त से महापीडा, देह में चोट आदि लगने की सम्भावना और धन का नाश होता है।।६४।।

इति बुधप्रत्यन्तरफलम्।

अथ केत्वन्तरे केत्वादीनांप्रत्यन्तरफलम्–

अपां समुद्भवोऽकस्माद्देशान्तरसमागमः ।
धननाशोऽल्पमृत्युश्च केतोः केत्वन्तरे शिखी ।।६५।। (के.के.)

केतु के अन्तर में केतु के प्रत्यन्तर में अकस्मात जलमार्ग से देशान्तर की यात्रा, धन की हानि और प्राणभय होता है।।६५।।

म्लेक्षभीत्यर्थनाशो वा नेत्ररोगः शिरोव्यथा ।
हानिश्चतुष्पदानांच केतोः केत्वन्तरे भृगुः ।।६६।। (के.शु.)

केतु के अन्तर में शुक्र के प्रत्यन्तर में म्लेक्ष से भय, अत्यंत धन का नाश, नेत्र रोग, शिर में व्यथा और चतुष्पद जीव की हानि होती है।।६६।।

मित्रैः सह विरोधश्च स्वल्पमृत्यु, पराजयः ।
मतिभ्रंशो विवादश्च केतो, केत्वन्तरे रविः ।।६७।। (के.सू.)

केतु के अन्तर में सूर्य के प्रत्यंतर में मित्रों से विरोध, अल्पमृत्यु, पराजय, बुद्धि का नाश और विवाद उपस्थित होता है।।६७।।

अन्ननाशो यशोहानिर्देहपीडा मतिभ्रमः ।
आमवातादिवृद्धिश्च केतोः केत्वन्तरे शशी ।।६८।। (के.चं.)

केतु के अंतर में चन्द्रमा के प्रत्यंतर में अन्न की हानि, यश की हानि, देह में पीड़ा, बुद्धि में भ्रम और आम-बात की वृद्धि होती है।।६८।।

शस्त्रघातेन पातेन पीडितो वह्निपीडया ।
नीचाद्भीति रिपोः शङ्का केतोः केत्वन्तरे कुजः ।।६९।। (के.मं.)

केतु के अंतर में भौम के प्रत्यंतर में शस्त्रलगने से वा गिरने से पीड़ा, अग्नि

से पीड़ा, नीच से भय और शत्रु भय की शंका होती है।।६९।।

कामिनीभ्यो भयं भूयात्तथा वैरिसमुद्भवः।
शूद्रादपि भवेद्भीतिः केतोः केत्वन्तरे तमः ।।७०।। (के.र.)

केतु के अंतर में राहु के प्रत्यंतर में स्त्रियों से भय, राजा से तथा शत्रुओं से भय शूद्र से भी भय होता है।।७०।।

धनहानिर्महोत्पातो वस्त्रमित्रविनाशनम्।
सर्वत्र लभते क्लेशं केतोः केत्वन्तरे गुरुः ।।७१।। (के.वृ.)

केतु के अंतर में गुरु के प्रत्यंतर में धन की हानि, महाउत्पात, वस्त्र, मित्र की हानि और सर्वत्र क्लेश होता है।।७१।।

गोमहिष्यादिमरणं देहपीडा सुहृद्वधः।
स्वल्पाल्पलाभकरणं केतोः केत्वंतरे शनिः ।।७२।। (के.श.)

केतु के अंतर में शनि के प्रत्यंतर में गौ भैंस आदि का मरण, शरीर में पीड़ा, मित्रों का वध और थोड़ा-थोड़ा लाभ होता है।।७२।।

बुद्धिनाशो महोद्वेगो विद्याहानिर्महाभयम्।
कार्यसिद्धिर्न जायेत केतोः केत्वन्तरे बुधः ।।७३।। (के.बु.)

केतु के अन्तर में बुध के प्रत्यंतर में बुद्धि का नाश, बड़ा उद्वेग, विद्या की हानि महाभय और कार्य की सिद्धि में बाधा होती है।।७३।।

इति केतु प्रत्यंतर फलम्।

अथ शुक्रान्तरेशुक्रादीनां प्रत्यतरफलम्–

श्वेताश्ववस्त्रमुक्ताद्याः स्वर्णमाणिक्य संभवः।
लभते सुन्दरी नारी शुक्रे शुक्रांतरे भृगुः ।।७४।। (शु.शु.)

शुक्र के अन्तर में शुक्र के प्रत्यंतर में सफ़ेद घोड़ा, सफेद वस्त्र, मोती का लाभ सुवर्ण माणिवय के लाभ की संभावना और सुन्दरी स्त्री का लाभ होता है।।७४।।

वातज्वरः शिरःपीडा राज्ञः पीडा रिपोरपि।
जायते स्वल्पलाभोऽपि शुक्रे शुक्रान्तरे रविः ।।७५।। (शु.सू.)

शुक्र के अंतर में सूर्य के प्रत्यंतर में बातज्वर, शिर में पीड़ा, राजा और शत्रु से पीड़ा और अल्प लाभ होता है।।७५।।

कन्याजन्म नृपाल्लाभो वस्त्राभरणसंयुत: ।
राज्याधिकारसंप्राप्ति शुक्रे शुक्रान्तरे शशी ।।७६।। (शु.चं.)

शुक्र के अंतर में चन्द्रमा के प्रत्यंतर में कन्या का जन्म, राजा से वस्त्र-आभूषण का लाभ और राज्याधिकार की प्राप्ति होती है।।७६।।

रक्तपित्तादिरोगश्च कलहंताडनं भवेत् ।
महान्क्लेशोभवेदत्र शुक्रे शुक्रान्तरे कुजः ।।७७।। (शु.मं.)

शुक्र के अंतर में भौम के प्रत्यंतर में रक्त-पित्त के रोग, कलह-ताडना, और बड़ा कष्ट होता है।।७७।।

कलहो जायते स्त्रीभिरकस्माद्भयसंभवः ।
राजतः शत्रुतः पीडा शुक्रे शुक्रान्तरेतमः ।।७८।। (शु.रा.)

शुक्र के अंतर में राहु के प्रत्यंतर में काक सतत् स्त्री से झगड़ा और भय और राजा तथा शत्रु से पीड़ा होती है।।७८।।

महद्द्रव्यं महद्राज्यं वस्त्रमुक्तादिभूषणम् ।
गजाश्वादिपदप्राप्तिः शुक्रे शुक्रान्तरे गुरुः ।।७९।। (शु.वृ.)

शुक्र के अंतर में गुरु के प्रत्यंतर में बड़े द्रव्य, बड़े राज्य, वस्त्र, मुक्ता आदि के आभूषण, हाथी-घोड़ा पद की प्राप्ति होती है।।७९।।

खरोष्ट्रछागसम्प्राप्तिर्लोहमाषतिलादिकम् ।
लभते स्वल्पपीडादि शुक्रे शुक्रान्तरे शनिः ।।८०।। (शु.श.)

शुक्र के अंतर में शनि के प्रत्यंतर में गदहा, ऊँट, बकरी की प्राप्ति लोह, उर्दी और तिल की प्राप्ति और थोड़ी पीड़ा भी होती है।।८०।।

धनज्ञानमहांल्लाभो राज्यराज्याधिकारता ।
निक्षेपाद्धनलोभोऽपि शुक्रे शुक्रान्तरे बुधः ।।८१।। (शु.बु.)

शुक्र के अंतर में बुध के प्रत्यंतर में धन, ज्ञान का महान् लाभ, राज्य वा राज्याधिकार की प्राप्ति और व्यापार से धन का लाभ होता है।।८१।।

अल्पमृत्युर्महापीडा देशाद्देशान्तरागमः ।
लाभोऽपि जायते मध्ये शुक्रे शुक्रान्तरे शिखी ।।८२।। (शु.के.)

शुक्र के अंतर में केतु के प्रत्यंतर में अल्पमृत्यु, अत्यंत पीड़ा, देश से अन्य देश की यात्रा और लाभ होता है।।८२।।

इति वृहत्पाराशर होरायाः पूर्वखंडे सूर्यादिप्रत्यन्तर्दशाफलं समाप्तम्।

अथ सूक्ष्मान्तरदशाध्यायः ।

तत्रादौ सूक्ष्मांतरानयनप्रकारः–

ग्रहवर्षेण संगुण्यं प्रत्यन्तरघटिकादिकम् ।
विंशोत्तरशतेनाप्तं सूक्ष्मान्तरदशामितिः ।।१।।

जिस ग्रह के प्रत्यंतर में जिस ग्रह का सूक्ष्मान्तर लाना हो उस ग्रह की दशा वर्ष से प्रत्यन्तर के (घटिकादिपिंडबनाकर) घटिकादि को गुणाकर गुणनफल में १२० का भाग देने से लब्धि घटिका और शेष को ६० से गुणाकर पुन: १२० का भाग देने से फल जो प्राप्त होता है इस प्रकार घटी-पल वा दिन (यदि घटी ६० से अधिक हो तो उसमें साठ से भाग देने से लब्धि दिन होता है) सूक्ष्म अन्तर होता है।।१।।

उदाहरण–जैसे सूर्य के प्रत्यंतर में सूर्यादि ग्रहों का सूक्ष्मान्तर लाना है तो सूर्य का प्रत्यन्तर ५ दिन २४ घटी है। इसका पिड ५×६०+२४ = ३२४ घटी हुआ इसे सूर्य के दशावर्ष ६ से गुणने ३२४×६ = १९४४ हुआ इसमें १२० का भाग देने से लब्धि १६ घटी और शेष २४ को ६० गुणने से २४×६० = १४४० हुआ इसमें १२० का भाग देने से १२ पल हुआ अर्थात् सूर्य के प्रत्यंतर घटी पिंड को चन्द्रमा के दशा वर्ष १० से गुणनकर १२० का भाग देने से २७ घटी सूर्य के प्रत्यंतर में चंद्रमा का सूक्ष्मान्तर हुआ। इसी प्रकार सभी ग्रहों का सूक्ष्मांतर लाना चाहिये।

अथसूर्यप्रत्यंतरे सूर्यादीनांसूक्ष्मन्तरदशाफलम्–

नृणां भूमिपरित्यागो नियतं प्राणनाशनम् ।
स्थाननाशो महाहानिः सूर्यसूक्ष्मदशाफलम् ।।२।। (सू.सू.)

सूर्य के प्रत्यंतर में सूर्य के सूक्ष्मांतर में मनुष्य को भूमि का त्याग करना पड़ता है, प्राण नाश की आशंका और स्थान का नाश होता है।।२।।

देवब्राह्मणभक्तिश्च नित्यकर्मरतस्तथा ।
सुप्रीतिः सर्वमित्रैश्च रवेः सूक्ष्मगते विधौ ।।३।। (सू.चं.)

सूर्य के प्रत्यंतर में चन्द्रमा के सूक्ष्मांतर में देवता ब्राह्मण में भक्ति, नित्यकर्म में आसक्ति और सभी मित्रों से सुन्दर प्रेम होता है।।३।।

क्रूरकर्मरतिस्तिग्मशत्रुभिः परिपीडनम् ।
रक्तस्रावादिरोगश्च रवेः सूक्ष्मगते कुजे ।।४।। (सू. मं.)

सूर्य के प्रत्यंतर में भौम के सूक्ष्मान्तर में क्रूरकर्म में आसक्ति, शत्रुओं से पीड़ा और रक्तस्राव के रोग होते हैं।।४।।

चौराग्निविषभीतिश्च रणे भंगः पराजयः ।
दानधर्मादिहीनश्च रवेः सूक्ष्मगते ह्यगौ ।।५।। (सू.रा.)

सूर्य के प्रत्यंतर में राहु के सूक्ष्मांतर में चोर, अग्नि, विष से भय, संग्राम में विफलता वा पराजय और दान-धर्म से हीन होता है।।५।।

नृपसत्काररराजार्हः सेवकैः परिपूजितः ।
राजचक्षुर्गतः शान्तः सूर्यसूक्ष्मगतेगुरौ ।।६।। (सू.वृ.)

सूर्य के प्रत्यंतर में गुरु के सूक्ष्मांतर में राजा के समान सत्कार, नौकरो से पूजित और राजा का कृपापात्र और शांत होता है।।६।।

धैर्यसाहसकर्मार्थं देवब्राह्मणपीड़नम् ।
स्थानच्युतिं मनोदुःखं रवेः सूक्ष्मगतेशनौ ।।७।। (सू.श.)

सूर्य के प्रत्यंतर में शनि के सूक्ष्मांतर में धैर्य और साहस के कार्य के लिये देवता और ब्राह्मण का पीड़न, स्थान की हानि और मन में दुःख होता है।।७।।

दिव्याम्बरादिलब्धिश्च दिव्यस्त्रीपरिभोगता ।
अचिंतितार्थसिद्धिश्च रवेः सूक्ष्ममते बुधे ।।८।। (सू.बु.)

सूर्य के प्रत्यंतर में बुध के सूक्ष्मांतर में दिव्य वस्त्र आदि की प्राप्ति, दिव्य स्त्री का योग और अचिंतित कार्य की सिद्धि होती है।।८।।

गुरुतार्त्तिविनाशश्च भृत्यदारभवस्तथा ।
क्वचित्सेवकसम्बन्धो रवेः सूक्ष्गतेध्वजे ।।९।। (सू.के.)

सूर्य के प्रत्यंतर में केतु के सूक्ष्मांतर में गौरव नौकर और स्त्री जनित दुःख का नाश और कभी किसी सेवक से संबंध भी होता है।।९।।

पुत्रमित्रकलत्रादिसौख्यसम्पन्न एव च ।
नानाविद्या च सम्पत्ती रवेः सूक्ष्मगते भृगौ ।।१०।। (सू.शु.)

सूर्य के प्रत्यंतर में शुक्र के सूक्ष्मांतर में पुत्र, मित्र, स्त्री आदि का सुख सम्पन्न होता है और अनेक प्रकार की सम्पत्ति का लाभ होता है।।१०।।

इति रवौ सूक्ष्मांतरफलम्।

अथचंद्राप्रत्यंतरेचंद्रादीनांसूक्ष्मांतरफलम्–

भूषणं भूमिलाभश्च सन्मानं नृपपूजनम् ।
तामसत्वं गुरुत्वं च चन्दसूक्ष्मदशाफलम् ।।११।। (चं.चं.)

चन्द्रमा के प्रत्यन्तर में चन्द्रमा के सूक्ष्मान्तर में आभूषण तथा भूमि का लाभ, सन्मान और राजा से पूजन, तामस और गुरुता होता है।।११।।

दुःखं शत्रुविरोधश्च कुक्षिरोगः पितुर्मृतिः ।
वातपित्तकफोद्रेकः शशिसूक्ष्मगते कुजः ।।१२।। (चं.मं.)

चन्द्रमा के प्रत्यंतर में भौम के सूक्ष्मान्तर में दुःख, शत्रु से विरोध, कुक्षीस्थान में रोग, पिता की मृत्यु और वात-पित्त-कफ का रोग होता है।।१२।।

क्रोधनं मित्रबंधूनां देशत्यागो धनक्षयः ।
विदेशान्निगडप्राप्तिरिन्दुसूक्ष्मगतेत्यहौ ।।१३।। (चं.स.)

चन्द्रमा के प्रत्यंतर में राहु के सूक्ष्मान्तर में मित्र तथा बन्धुओं से द्वेष, देश का त्याग, धन का नाश, विदेश में बंधन होता है।।१३।।

छत्रचामर संयुक्तं वैभवं पुत्रसम्पदः ।
सर्वत्र सुखमाप्नोति चन्द्रसूक्ष्मगतेगुरौ ।।१४।। (चं.रा.)

चन्द्रमा के प्रत्यंतर में गुरु के सूक्ष्मान्तर में छत्र-चामर युक्त राज वैभव की प्राप्ति पुत्र का लाभ और सुख होता है।।१४।।

राजोपद्रवनाशः स्याद्व्यवहारे धनक्षयः ।
चौरत्वं विप्रभीतिश्च चन्द्रसूक्ष्मगते शनौ ।।१५।। (चं.श.)

चन्द्रमा के प्रत्यन्तर में शनि के सूक्ष्मान्तर में राजा के उपद्रव से हानि, रोजगार में धन की हानि, चोरी और ब्राह्मण से भय होता है।।१५।।

राजमानं वस्तुलाभं विदेशाद्वाहनादिकम् ।
पुत्रपौत्रसमृद्धिश्च चन्द्र सूक्ष्मगते बुधे ।।१६।। (चं.बु.)

चन्द्रमा के प्रत्यन्तर में बुध के सूक्ष्मान्तर में राजा से प्रतिष्ठा, वस्तु का लाभ, विदेश से वाहनादि का लाभ और पुत्र-पौत्र आदि समृद्धि का लाभ होता है।।१६।।

आत्मनो वृत्तिहननं सस्यशृंगवृषादिभिः ।
अग्निसूर्यादिभीतिः स्याच्चन्द्रसूक्ष्मगतेध्वजे ।।१७।। (चं.के.)

चन्द्रमा के प्रत्यन्तर में केतु के सूक्ष्मान्तर में धान्य मृग और बैल आदि से

अपने वृत्ति का उच्छेद, और अग्नि तथा सूर्य से भय होता है।।१७।।

विवाहो, भूमिलाभश्च वस्त्राभरणवैभवम् ।
राज्यलाभश्च कीर्त्तिश्च चन्द्रसूक्ष्मगते भृगौ ।।१८।। (चं.शु.)

चन्द्रमा के प्रत्यन्तर में शुक्र के सूक्ष्मान्तर में विवाह, भूमि का लाभ, वस्त्र, आभूषण आदि वैभव, राज्यलाभ और यश होता है।।१८।।

क्लेशात्क्लेशः कार्यनाशः पशुधान्यधनक्षयः ।
गात्रवैषम्यभूमिश्च चन्द्रसूक्ष्मगते रवौ ।।१९।। (चं.सू.)

चन्द्रमा के प्रत्यन्तर में सूर्य के सूक्ष्मान्तर में क्लेश से क्लेश, कार्य की हानि, पशु, धान्य और पशु का नाश, शरीर तथा भूमि में विषमता होती है।।१९।।

इति चन्द्रसूक्ष्मान्तर फलम्।

अथ भौम प्रत्यन्तरे भौमादीनां सूक्ष्मान्तर फलम् –

भूमिहानिर्मनः खेदोह्यपस्मारी च बंधुयुक् ।
पुरक्षोभमनस्तापो भौमसूक्ष्मदशाफलम् ।।२०।। (मं.मं.)

भौम के प्रत्यन्तर में भौम के सूक्ष्म अंतर में भूमि की हानि, चित्त में खेद, मृगी रोग, बंधु से युक्त, ग्राम से क्षोभ और मन में संताप होता है।।२०।।

अङ्गदोषो जनाद्भीतिः प्रमदावंशनाशनम् ।
वह्निसर्पभयं घोरं भौमसूक्ष्मगतेप्यहौ ।।२१।। (मं.रा.)

भौम के प्रत्यन्तर में राहु के सूक्ष्मअन्तर में किसी अंग में विकार लोगों से भय, कन्याकी हानि, और अग्नि तथा सर्प से बड़ा भय होता है।।२१।।

देहपूजारतिश्चात्र मंत्राभ्युत्थानतत्परः ।
लोकपूज्यं प्रमादं च भौमसूक्ष्मगते गुरौ ।।२२।। (मं.वृ.)

भौम के प्रत्यन्तर गुरु के सूक्ष्मान्तर में देह की पूजा, मंत्र साधन में रति, लोक से पूजा और प्रमाद होता है।।२२।।

बंधनान्मुच्यते बद्धो धनधान्यपरिच्छदः ।
भृत्यार्थवहुलः श्रीमान्भौमसूक्ष्मगते शनौ ।।२३।। (मं.श.)

भौम के प्रत्यन्तर में शनि के सूक्ष्मान्तर में बंधन से मुक्ति, धन, धान्य, नौकर आदि विशेष होते हैं।।२३।।

वाहनं छत्रसंयुक्तं राज्यभोगपरं सुखम् ।
कासश्वासादिका पीडा भौमसूक्ष्मगते बुधे ।।२४।। (मं.बु.)

भौम के प्रत्यन्तर में बुध के सूक्ष्मान्तर में वाहन, छत्र आदि राज्य के सुख का लाभ और सुख तथा कासश्वास से पीड़ा होती है।।२४।।

परप्रेरितबुद्धिश्च सर्वत्रापि च गर्हितः ।
अशुचिः सर्वकार्येषु भौमसूक्ष्मगते ध्वजे ।।२५।। (मं.के.)

भौम के प्रत्यन्तर में केतु के सूक्ष्मान्तर में दूसरे की प्रेरणा वाली बुद्धि, सर्वत्र निंदा और सभी कार्यों में असफलता होती है।।२५।।

इष्ट स्त्रीभोगसम्पत्तिरिष्टभोजनसंग्रहः ।
इष्टार्थश्चैव लाभश्च भौमसूक्ष्मगते भृगौ ।।२६।। (मं.शु.)

भौम के प्रत्यंतर में शुक्र के सूक्ष्मांतर में अभीष्ट स्त्री का सुख, सम्पत्ति अभीष्ट भोजन का लाभ और अभीष्ट की सिद्धि होती है।।२६।।

राजद्वेषोद्विजात्क्लेशः कार्याभिप्रायवंचकः ।
लोकेऽपि निंद्यतामेति भौमसूक्ष्मगते रवौ ।।२७।। (मं.सू.)

भौम के प्रत्यंतर में सूर्य के सूक्ष्मांतर में राजा से शत्रुता, ब्राह्मण से कष्ट, कार्य के अभिप्राय से रहित और लोक में निंदा होती है।।२७।।

शुद्धत्वं धनसंप्राप्तिर्देवब्राह्मणवत्सलः ।
व्याधिना परिभूयेत भौमसूक्ष्मगतेविधौ ।।२८।। (मं.चं.)

भौम के प्रत्यंतर में चंद्रमा के सूक्ष्मांतर में चित्त में शुद्धता, धन का लाभ, देवता ब्राह्मण में प्रेम और व्याधि से पीड़ित होता है।।२८।।

इति भौम सूक्ष्मांतरफलम्।

अथ राहु प्रत्यन्तरे राह्वादीनांसूक्ष्मांतरफलम्-

लोकोपद्रवबुद्धिश्च स्वकार्ये मतिविभ्रमः ।
शून्यता चित्तदोषः स्याद्राहोः सूक्ष्मदशाफलम् ।।२९।। (रा.श.)

राहु के प्रत्यंतर में राहु के सूक्ष्मांतर में उपद्रव करने की बुद्धि, बुद्धि में भ्रम, शून्यता होती है।।२९।।

दीर्घरोगी दरिद्रश्च सर्वेषां प्रियदर्शनः ।
दानधर्मरतः शस्तो राहोः सूक्ष्मगते गुरौ ।।३०।। (रा.वृ.)

राहु के प्रत्यंतर में गुरु के सूक्ष्मांतर में दीर्घ रोग, दरिद्रता, सबका दर्शन प्रिय, और दानादि में आसक्त होता है।।३०।।

कुमार्गात्कुत्सितोग्रश्च दुष्टश्च परसेवकः ।
असत्संगमतिमूढो राहोः सूक्ष्मगते शनौ ।।३१।। (रा.श.)

राहु के प्रत्यंतर में शनि के सूक्ष्मांतर में कुमार्ग से निंदित, उग्रस्वभाव दुष्ट और दूसरे का सेवक और दुष्टों का संग साथ होता है।।३१।।

स्त्रीसंभोगमतिर्वाग्मी लोकसम्भावनावृतः ।
अन्नमिच्छंस्तनुम्लानी राहोः सूक्ष्मगते बुधे ।।३२।। (रा.बु.)

राहु के प्रत्यंतर में बुध के सूक्ष्मांतर में स्त्री प्रसंग की बुद्धि, संसार में विख्यात हमेशा अन्न की चिंता से युक्त होता है।।३२।।

माधुर्यं मानहानिश्च बंधनं चाप्रमादकम् ।
पारुष्यं जीवहानिश्च राहोः सूक्ष्मगते ध्वजे ।।३३।। (रा.के.)

राहु के प्रत्यंतर में केतु के सूक्ष्मांतर में मधुरस्वभाव, मानहानि, बंधन, कठोरता और किसी जीव की हानि होती है।।३३।।

बंधनान्मुच्यते वद्धः स्थानमानार्थसंचयः ।
कारणद्रव्यलाभश्च राहोः सूक्ष्मगते भृगौ ।।३४।। (रा.शु.)

राहु के प्रत्यंतर में शुक्र के सूक्ष्मांतर में बंधन से मुक्ति, स्थान, यश, धन का लाभ और भाग्योदय होता है।।३४।।

व्यक्तार्शो गुल्मरोगश्च क्रोधहानिस्तथैव च ।
वाहनादिसुखं सर्वं राहोः सूक्ष्मगते रवौ ।।३५।। (रा.सू.)

राहु के प्रत्यंतर में सूर्य के सूक्ष्मांतर में अर्श (बवासीर) गुल्म रोग, क्रोध और वाहनादि के सुख की हानि होती है।।३५।।

मणिरत्नधनावाप्तिर्विद्योपासनशीलवान् ।
देवार्चनपरोभक्त्या राहोः सूक्ष्मगते विधौ ।।३६।। (रा.चं.)

राहु के प्रत्यन्तर में चन्द्रमा के सूक्ष्मान्तर में मणि, रत्न, धन की प्राप्ति, विद्या की उपासना और भक्ति से देवता की पूजा होती है।।३६।।

निर्जितं जनविद्रावो जने क्रोधश्च बंधनात् ।
चौर्यशीलरतिः नित्यं राहोः सूक्ष्मगते कुजे ।।३७।। (रा.म.)

राहु के प्रत्यन्तर में भौम के सूक्ष्मान्तर में मनुष्यों से विद्रोह, पराजय, जन समुदाय का क्रोध भाजन, बंधन और चौर भय होता है।।३७।।

इति राहु सूक्ष्मन्तरफलम्।

अथ गुरु प्रत्यन्तरे गुर्वादीनांसूक्ष्मान्तरफलम् -

शोकनाशो धनाधिक्यमग्निहोत्रं शिवार्चनम् ।
वाहनक्षत्रसंयुक्तं जीवसूक्ष्मदशाफलम् ।।३८।। (वृ.वृ.)

गुरु के प्रत्यन्तर में गुरु के सूक्ष्मान्तर में शोक का नाश, धन का लाभ, शिव का पूजन, वाहन और क्षेत्र का लाभ होता है।।३८।।

व्रतहा सूर्यवर्त्ती च विदेशे वसुनाशनम् ।
विरोधो धननाशश्च गुरोः सूक्ष्मगते शनौ ।।३९।। (वृ.श.)

गुरु के प्रत्यन्तर में शनि के सूक्ष्मान्तर में व्रत का छूट जाना, विदेश में धन का नाश, शत्रुता और धन की हानि होती है।।३९।।

विद्यामानयशप्राप्तिः धनागमनमेव च ।
नित्योत्सवस्तुसंजातः गुरोः सूक्ष्मगते बुधे ।।४०।। (वृ.बु.)

गुरु के प्रत्यंतर में बुध के सूक्ष्मान्तर में विद्या, मान और यश का लाभ, धन का आगमन और नित्य उत्सव होता रहता है।।४०।।

ज्ञानं विभवपाणिडत्यं शास्त्रश्रोता शिवार्चनम् ।
अग्निहोत्रं गुरोर्भक्तिर्गुरोः सूक्ष्मगते ध्वजे ।।४१।। (वृ.के.)

गुरु के प्रत्यंतर में केतु के सूक्ष्मान्तर में ज्ञान में वृद्धि, विभव, पांडित्य, शास्त्र का अध्ययन, शिव की पूजा और अग्निहोत्र और गुरु भक्ति होती है।।४१।।

रोगान्मुक्तिः सुखं भोगं धनधान्यसमागमम् ।
पुत्रदारादिकं सौख्यं गुरोः सूक्ष्मगते भृगौ ।।४२।। (वृ.शु.)

गुरु के प्रत्यंतर में शुक्र के सूक्ष्मान्तर में रोग से मुक्ति, सुख, भोग, धन, धान्य का लाभ और पुत्र स्त्री आदि का सुख होता है।।४२।।

वातपित्तप्रकोपश्च श्लेष्मोद्रेकस्तु दारूणः ।
रसव्याधिकृतं शूलं गुरोः सूक्ष्मगते रवौ ।।४३।। (घृ.सू.)

गुरु के प्रत्यंतर में सूर्य के सूक्ष्मान्तर में वायु और पित्त का प्रकोप कफ की अधिकता से कष्ट और रसदोष से शूलरोग होता है।।४३।।

छत्रचामरसंयुक्तं वैभवं पुत्रसम्पदः ।
नेत्रकुक्षिगता पीडा गुरोः सूक्ष्मगते विधौ ।।४४।। (वृ.चं.)

गुरु के प्रत्यंतर में चन्द्रमा के सूक्ष्मान्तर में छत्र, चामर से युक्त, वैभव का लाभ, पुत्र सुख, नेत्र और कोख (कुक्षि) में पीड़ा होती है।।४४।।

स्त्रीजनाच्चविषोत्पत्तिर्वंधनं चातिनिग्रहम् ।
देशांतरगमो भ्रांतिर्गुरोः सूक्ष्मगते कुजे ।।४५।। (वृ.मं.)

गुरु के प्रत्यंतर में भौम के सूक्ष्मान्तर में स्त्रियों के द्वारा कलह, बंधन और अत्यंत विग्रह, देशान्तर की यात्रा और भ्रान्ति होतां है।।४५।।

व्याधिभिः परिभूतः स्याच्चौरोपहृतं धनम् ।
सर्पवृश्चिकदंष्टत्वं गुरोः सूक्ष्मगतेऽप्यहौ ।।४६।। (वृ.रा.)

गुरु के प्रत्यन्तर में राहु के सूक्ष्मान्तर में व्याधियों से दुःखी, चोरों द्वारा धन का अपहरण और सर्प-बिच्छू के काटने का भय होता है।।४६।।

इति गुरु सूक्ष्मांतर फलम्।

अथ शनि प्रत्यंतरे शन्यादीनां सूक्ष्मान्तर फलम् –

धनहानिर्महाव्याधिः वायुपीडा कुलक्षयः ।
भिक्षाहारी महादुःखी मंदसूक्ष्मदशाफलम् ।।४७।। (श.श.)

शनि प्रत्यंतर में शनिसूक्ष्मान्तर में धन की हानि, महाव्याधि, वायु की पीड़ा, कुल का नाश और भिक्षा का भोजन तथा बड़ा दुःखी होता है।।४७।।

वाणिज्यवृत्तेर्लाभश्च विद्याविभवमेव च ।
स्त्रीलाभश्च महीप्राप्तिः शनेः सूक्ष्मगतेबुधे ।।४८।। (श.बु.)

शनि के प्रत्यंतर में बुध के सूक्ष्मान्तर में व्यापार में लाभ, विद्या और वैभव, स्त्री का लाभ और पृथ्वी का लाभ होता है।।४८।।

चौरोपद्रवकुष्ठादि वृत्तिक्षयविगुंफनम् ।
सर्वाङ्गपीडनं व्याधिः शनिसूक्ष्मगते ध्वजे ।।४९।। (श.के.)

शनि के प्रत्यंतर में केतु के सूक्ष्मान्तर में चोरी का भय, कुष्ठरोग, वृत्ति की हानि, कुंठता, सर्वांग में पीड़ा और व्याधि होती है।।४९।।

ऐश्वर्यमायुधाम्यासं पुत्रलाभोभिषेचनम् ।
आरोग्यं धनकामौ च शनिसूक्ष्मगते भृगौ ।।५०।। (श.शु.)

शनि के प्रत्यंतर में केतु के सूक्ष्मान्तर में ऐश्वर्य का लाभ, आयुध का अभ्यास, पुत्र का लाभ, अभिषेक, आरोग्यता आदि होता है।।५०।।

राजतेजोविकारत्वं स्वगृहे जायते कलिः ।
किंचित्पीडा स्वदेहोत्था शनिसूक्ष्मगते रवौ ।।५१।। (श.सू.)

शनि के प्रत्यंतर में सूर्य के सूक्ष्मान्तर में राज कार्य में विकार, अपने घर में कलि, अपने शरीर में कुछ पीड़ा होती है।।५१।।

स्फीतबुद्धिर्महारम्भो मदं तेजो बहुव्ययः ।
स्त्रीपुत्रैश्च समं सौख्यं शनिसूक्ष्मगते विधौ ।।५२।। (श.चं.)

शनि के प्रत्यंतर में चन्द्रमा के सूक्ष्मान्तर में संगीत का प्रेम, किसी बड़े कार्य का आरम्भ, यज्ञ में कमी, द्रव्य का भय और स्त्री पुत्र का सुख होता है।।५२।।

नेत्रोहानिर्महोद्वेगो वह्निक्षयभ्रमो कलिः ।
वातपित्तकृतापीडा शनेः सूक्ष्मगते कुजो ।।५३।। (श.मं.)

शनि के प्रत्यंतर में भौम के सूक्ष्मान्तर में नेत्र की हानि, उद्वेग, मंदाग्नि, क्षय, भ्रम, झगड़ा और वात पित्त से कष्ट होता है।।५३।।

पितृमातृविनाशश्च मनोदुःखं गुरुव्ययम् ।
सर्वत्र विफलं स्यात्तु शनिसूक्ष्मगतेप्यहौ ।।५४।। (श.रा.)

शनि के प्रत्यंतर में राहु के सूक्ष्मान्तर में पिता-माता की हानि, मन में दुःख, अधिक व्यय, और सब जगह विफलता होती है।।५४।।

सन्मुद्राभोगसन्मानं धनधान्यबिवर्धनम् ।
छत्रचामरसम्प्राप्तिः शनेः सूक्ष्मगते गुरौ ।।५५।। (श.वृ.)

शनि के प्रत्यन्तर में गुरु के सूक्ष्मान्तर में द्रव्य का लाभ, धन धान्य की वृद्धि और छत्र चामर का लाभ होता है।।५५।।

इति शनि सूक्ष्मान्तर फलम्।

अथ बुध प्रत्यंतरे बुधादीनां सूक्ष्मान्तर फलम् –

सौभाग्यंराजसम्मानं धनधान्यादिसम्पदः ।
सर्वेषां प्रियदर्शी च बुधसूक्ष्मदशाफलम् ।।५६।। (बु.बु.)

बुध के प्रत्यन्तर में बुध के सूक्ष्मांतर में भाग्योदय, राजा से सम्मान की प्राप्ति, धन धान्य का लाभ और सबका प्रिय होता है।।५६।।

बालग्रहाग्निभीस्ताप: स्त्रीमदोद्भवदोषभाक् ।
कुमार्गी कुत्सिताशी च बुधसूक्ष्मगतेध्वजे ।।५७।। (बु.के.)

बुध के प्रत्यंतर में केतु के सूक्ष्मांतर में बालग्रह तथा अग्नि से भय, ज्वर, स्त्री के रजोविकार से कष्ट, कुमार्ग में प्रवृत्ति और निंदित आन्नों का भोजन होता है।।५७।।

वाहनंधनसम्पत्तिर्जलजान्नार्थसम्भव: ।
शुभकीर्त्तिर्महाभोगो बुधवूक्ष्मगते भृगौ ।।५८।। (बु.शु.)

बुध के प्रत्यंतर में शुक्र के सूक्ष्मान्तर में वाहन, धन, सम्पत्ति और जल से उत्पन्न होने वाले अन्न और द्रव्य का लाभ, यशोवृद्धि और महाभोग प्राप्त होता है।।५८।।

ताडनं नृपवैषम्यं बुद्धिस्खलनरोगभाक् ।
हानिर्जनापवादं च बुधसूक्ष्मगते रवौ ।।५९।। (बु.सू.)

बुध के प्रत्यंतर में सूक्ष्मांतर में ताडना, राजा से शत्रुता, मंदबुद्धि होने का रोग, हानि और जनापवाद (कलंक) होता है।।५९।।

सुभग: स्थिरबुद्धिश्च राजसन्मानसम्पद: ।
सुहृदां गुरुसंस्कारो बुधसूक्ष्मगते विधौ ।।६०।। (बु.चं.)

बुध के प्रत्यंतर में चन्द्रमा के सूक्ष्मान्तर में सौभाग्य, स्थिर बुद्धि, राजा से सन्मान और संपत्ति का लाभ और मित्रों का समागम होता है।।६०।।

अग्निदाहं विषोत्पत्तिर्जडत्वं च दरिद्रता ।
विभ्रमश्च महोद्वेगो बुधसूक्ष्मगते कुजे ।।६१।। (बु.मं.)

बुध के प्रत्यंतर में भौम के सूक्ष्मांतर में अग्नि से जलने का तथा विष का भय, जड़ता, दरिद्रता, भ्रम और बड़ा उद्वेग होता है।।६१।।

अग्निसर्पनृपाद्भीति: कृच्छ्वादरिपराभव: ।
भूतावेशभ्रमाद्भ्रांतिर्बुधसूक्ष्मगतेप्यहौ ।।६२।। (बु.रा.)

बुध के प्रत्यंतर में राहु के सूक्ष्मांतर में अग्नि, सर्प और राजा से भय। कष्ट से शत्रु का पराभव, भूत का आवेश और भ्रम से भ्रान्ति होता है।।६२।।

ग्रहोपकरणं भव्यं त्यागं भोगादिवैभवम् ।
राजप्रसादसम्पत्तिर्बुधसूक्ष्मगते भगौ ।।६३।। (बु.बृ.)

बुध के प्रत्यंतर में गुरु के सूक्ष्मांतर में गृह के सुन्दर उपकरणों का लाभ। त्याग भाव वैभव, राजा की प्रसन्नता से सम्पत्ति का लाभ होता है।।६३।।

वाणिज्यवृत्तिलाभस्च विद्याविभवमेव च ।
स्त्रीलाभश्च महाव्याधिबुधसूक्ष्मगते शनौ ।।६४।। (बु.श.)

बुध के प्रत्यंतर में शनि के सूक्ष्मान्तर में व्यापार से लाभ, विद्या और वैभव का लाभ, स्त्री का लाभ और महाव्याधि की संभावना होती है।।६४।।

इति बुधसूक्ष्मांतर फलम्।

अथ केतो: प्रत्यन्तरे केत्वादीनां सूक्ष्मान्तरफलम् –

पुत्रदारादिजं दु:खं गात्रवैषम्यमेव च ।
दारिद्राद्भिक्षुवृत्तिश्च केतो:सूक्ष्मदशाफलम् ।।६५।। (के.के.)

केतु के प्रत्यंतर में केतु के ही सूक्ष्मांतर में पुत्र, स्त्री जन्मादि दु:ख, शरीर में विकलता और दरिद्रता से भिक्षुक वृत्ति होती है।।६५।।

रोगनाशोऽर्थलाभश्च गुरुविप्रानुवत्सल: ।
संगम: स्वजनै: साधे केतो: सूक्ष्मगते भृगौ ।।६६।। (के.शु.)

केतु के प्रत्यंतर में शुक्र के सूक्ष्मांतर में रोग का नाश, धन का लाभ, गुरु और ब्राह्मण से प्रेम और स्वजनों का समागम होता है।।६६।।

पुत्रभूमिविनाशश्च विप्रवास: स्वदेशत: ।
सुहृद्विपत्तिरार्त्तिश्च केतो: सूक्ष्मगते रवौ ।।६७।। (के.सू.)

केतु के प्रत्यंतर में सूर्य के सूक्ष्मान्तर में पुत्र-भूमि की हानि, स्वदेश से प्रवास मित्र की विपत्ति और पीड़ा होती है।।६७।।

दासीदाससमृद्धिश्च युद्धे लब्धिर्जयस्तथा ।
ललिता कीर्त्तिरुत्पन्ना केतो: सूक्ष्मगते विधौ ।।६८।। (के.चं.)

केतु के प्रत्यंतर में चन्द्रमा के सूक्ष्मांतर में दासी, नौकर और समृद्धि का लाभ, युद्ध में द्रव्यलाभ और विजय और सुन्दर कीर्त्ति होती है।।६८।।

आसने भयमश्वादेश्चौरदुष्टादिपीडनम् ।
गुल्मपीडा शिरोरोगः केतोः सूक्ष्मगते कुजो ।।६९।। (के.मं.)

केतु के प्रत्यंतर में भौम के सूक्ष्मांतर में आसन और घोड़े से भय चोर और दुष्टो से पीड़ा, गुल्मरोग और शिर में पीड़ा होती है।।६९।।

विनाशः स्त्रीगुरुणां च दुष्टस्त्रींसंगमाल्लघुः ।
वमनं रुधिरं पित्तं केतोः सूक्ष्मगतेऽप्यगौ ।।७०।। (के.रा.)

केतु के प्रत्यंतर में राहु के सूक्ष्मांतर में स्त्री तथा गुरु का नाश, दुष्ट स्त्री के संग से अपयश और रुधिर तथा पित्त का वमन होता है।।७०।।

वैरं विरोध सम्पत्तिः सहसा राजवैभवम् ।
पशुक्षेत्रविनाशस्यात्केतोः सूक्ष्मगते गुरौ ।।७१।। (के.बृ.)

केतु के प्रत्यंतर में गुरु के सूक्ष्मांतर में वैर, विरोध होता है, सहसाराज वैभव का लाभ और पशु, क्षेत्र की हानि होती है।।७१।।

मृषापीडां भवेत्क्षुद्रसुतोत्पत्तिश्चलंघनम् ।
स्त्रीविरोधः सत्यहानिः केतोः सूक्ष्मगते शनौ ।।७२।। (के.श.)

केतु के प्रत्यंतर में शनि के सूक्ष्मान्तर में व्यर्थ ही पीड़ा, दुष्ट पुत्र की उत्पत्ति लंघन, स्त्री से विरोध और सत्य की हानि होती है।।७२।।

नानाविधजनाप्तिश्च विप्रयोगोऽरिपीडनम् ।
अर्थसम्पत्समृद्धिश्च केतोः सूक्ष्मगते बुधे ।।७३।। (के.बु.)

केतु के प्रत्यन्तर में बुध के सूक्ष्मांतर में अनेक लोगों से संयोग और वियोग, शत्रु से पीड़ा और धन-सम्पत्ति की वृद्धि होती है।।७३।।

इति केतु सूक्ष्मांतर फलम्।

अथशुक्रप्रत्यन्तरेशुकादीनांसूक्ष्मान्तरफलम् –

शत्रुहानिर्महत्सौख्यं शंकरालयसम्भवम् ।
तडागकूपनिर्माणं शुक्रसूक्ष्मदशाफलम् ।।७४।।(शु.शु.)

शुक्र के प्रत्यन्तर में शुक्र के सूक्ष्मान्तर में शत्रु की हानि, अपार सुख, शंकर के मंदिर का निर्माण वा तालाब कूआँ के निर्माण की संभावना होती है।।७४।।

उरस्तापो भ्रमश्चैव गतागतविचेष्टितम् ।
कचिल्लाभः कृचिद्धानिर्भृगोः सूक्ष्मगतेरवौ ।।७५।। (शु.सू.)

शुक्र के प्रत्यन्तर में सूर्य के सूक्ष्मांतर में उरु प्रदेश में रोग भ्रम, गमनागमन की चेष्टा, कभी लाभ और कभी हानि होती है।।७५।।

आरोग्यं धनसम्पत्तिः कार्यलाभोगतागतैः।
वैरिकापारबुद्धिः स्याद्भृगोः सूक्ष्मगते विधौ ।।७६।। (शु.चं.)

शुक्र के प्रत्यन्तर में चन्द्रमा के सूक्ष्मान्तर में आरोग्यता, धन सम्पत्ति का लाभ गमनागमन से कार्य की सिद्धि, अपार बुद्धि होती है।।७६।।

जडत्वं रिपुवैषम्यं देशभ्रंशो महद्भयम्।
व्याधिदुःखसमुत्पत्तिर्भृगोः सूक्ष्मगते कुजे ।।७७।। (शु.मं.)

शुक्र के प्रत्यन्तर में भौम के सूक्ष्मान्तर में जड़ता, शत्रु से शत्रुता, देशत्याग, महाभय, व्याधि और दुःख की प्राप्ति होती है।।७७।।

राज्याग्निसर्पजाभीतिर्बन्धुनाशो गुरुव्यथा।
स्थानच्युतिर्महाभीतिभृगोः सूक्ष्मगतेप्यहौ ।।७८।। (शु.रा.)

शुक्र के प्रत्यन्तर में राहु के सूक्ष्मान्तर में राजा, अग्नि और सर्प से भय, बन्धु का नाश, व्यथा, स्थानच्युति (अवनति) और महाभय होता है।।७८।।

सर्वत्रकार्यलाभश्च क्षेत्रार्थविमनोन्नतिः।
वणिग्वृत्तेर्महालब्धिर्भृगोः सूक्ष्मगतेगुरौ ।।७९।। (शु.वृ.)

शुक्र के प्रत्यन्तर में गुरु के सूक्ष्मान्तर में सभी कार्यों में लाभ, क्षेत्र धन और वैभव की उन्नति और व्यापार से लाभ होता है।।७९।।

शत्रुपीडा महद्दुःखं चतुष्पादविनाशनम्।
स्वगोत्रगुरुहानिः स्याद्भृगोः सूक्ष्मगते शनौ ।।८०।। (शु.श.)

शुक्र के प्रत्तन्तर में शनि के सूक्ष्मान्तर में शत्रु पीड़ा, महादुःख, चौपायों की हानि, अपने गोत्रजों की हानि होती है।।८०।।

बांधवादिषु सम्पत्तिर्व्यवहारो धनोन्नतिः।
पुत्रदारादितः सौख्यं भृगोः सूक्ष्मगते बुधे ।।८१।। (शु.बु.)

शुक्र के प्रत्यन्तर में बुध के सूक्ष्मान्तर में बांधवों से सम्पत्ति का लाभ व्यवहार, धन की उन्नति और पुत्र स्त्री आदि से सुख होता है।।८१।।

अग्निरोगो महत्पीडा मुखनेत्रशिरोव्यथा ।
संचितार्थात्मनः पीडा भृगोः सूक्ष्मगतेध्वजे ।।८२।। (शु.के.)

शुक्र के प्रत्यन्तर में केतु के सूक्ष्मान्तर में जठराग्नि का रोग, महापीड़ा, मुख, नेत्र और शिर में पीड़ा और संचित धन से आत्मा को कष्ट होता है।।८२।।

इति भृगोः सूक्ष्मान्तरदशा फलम्।

इति वृहत्पाराशर होरायाः पूर्वार्धे सूर्यादि सूक्ष्मान्तर्दशा फलं समाप्तम्।

अथ प्राणदशा फलाध्यायः।

तत्रादौ प्राणदशानयन प्रकारः-

स्वसूक्ष्मदशायाश्चपिंडे विघटिकात्मके ।
स्वाब्दैर्हते पुनर्भक्ते विंशोत्तरशतेन च ।
लब्धं विघटिकाज्ञेया विपलानिततः परम् ।।१।।

ग्रह के सूक्ष्मदशामान की पला बनाकर उसे ग्रह के दश वर्ष (जिस ग्रह की प्राणदशा लानी हो उस ग्रह के दशा वर्ष से) गुणाकर गुणन फल में १२० का भाग देने विघटिकात्मक उस ग्रह की प्राणदशा होती है।।१।।

उदाहरण- जैसे सूर्य की दशा में सूर्य के अंतर में सूर्य ही के प्रत्यन्तर में सूर्य का सूक्ष्मांतर १६ घटी १२ पल है इसका पला बनाया तो १६×६०+१२ = ९७२ पल हुआ इसे सूर्य की दशा वर्ष ६ से गुणाकिया ५८३२ हुआ इसमें १२० का भाग देने से लब्धि ३६ विपल प्राप्त हुआ। आर्थात् सूर्य की दशा और उन्हीं के अंतर-प्रत्यंतर और सूक्ष्मांतर में सूर्य की प्राण दशा ० घटी = ४८ पल और ३६ विपल होगी। इसी प्रकार सूक्ष्म के पलात्मक पिंड को चन्द्रमा के दशावर्ष १० से गुणाकर ९७२० में १२० का भाग देने से लब्धि ८१ पल याने १ घटी २१ पल ० विपल यह सूर्य के सूक्ष्मांतर में चन्द्रमा की प्राणदशा हुई। इसी प्रकार अन्य ग्रहों के दशा वर्ष से गुणकर भाग देने से उन लोगों की प्राणदशा हो जाती है।

सूर्य सूक्ष्मदशामध्येप्राणदशा चक्रम्।

ग्रहाः	सू.	चं.	मं.	रा.	वृ.	श.	बु.	के.	शु.	यो.
घट्य	०	१	०	२	२	२	२	०	२	१६
पला.	४८	२१	५६	२५	९	३३	१७	५६	४२	१२
विपला	३६	०	४२	४८	३६	५४	५२	४२	०	०

अथ सूर्य प्राणदशाफलम्–

पौंश्चल्यं विषजाबाधा शोषणं विषमेक्षणम् ।
सूर्यप्राणदशायां तु मरणं कृच्छ्रमादिशेत् ।।२।। (सू.सू.)

सूर्य के सूक्ष्मांतर में सूर्य के प्राण में दुराचार, विष की बाधा, शरीर में शुष्कता, नेत्र में विकार और मरण होता है।।२।।

सुखं भोजनसम्पत्तिः संस्कारो नृपवैभवम् ।
उदारादिकृपाभिश्च रवेः प्राणगते विधौ ।।३।। (सू.चं.)

सूर्य के सूक्ष्मांतर में चन्द्रमा की प्राणदशा में सुख, भोजन की सामग्री, संस्कार और उदार पुरुष की कृपा से राजवैभव की प्राप्ति होती है।।३।।

भूपोपद्रवमन्यार्थे द्रव्यनाशो महद्भयम् ।
महत्यपचयप्राप्ति रवेः प्राणगते कुजे ।।४।। (सू.मं.)

सूर्य के सूक्ष्मांतर में भौम की प्राण दशा में राजा के उपद्रव की वृद्धि, धन की क्षति, भय और धनादिका अपचय (हानि) होता है।।४।।

अन्नोद्भवा महापीडा विषोत्पत्तिर्विशेषतः ।
अर्थाग्निराजभिः क्लेशं रवेः प्राणगतेप्यहो ।।५।। (सू.रा.)

सूर्य के सूक्ष्मान्तर राहु की प्राणदशा में अन्न से उत्पन्न महापीड़ा (हैजा आदि) विशेषतः विष की संभावना, धन, अग्नि और राजा से कष्ट होता है।।५।।

नानाविद्यार्थसम्पत्तिः कार्यलाभो गतागतैः ।
नीचजनाश्रय नाशो रवेः प्राणगते गुरौ ।।६।। (सू.वृ.)

सूर्य के सूक्ष्मान्तर में गुरु की प्राणदशा में अनेक विद्या, धन सम्पत्ति का लाभ, गमना-गमन से कार्य की सिद्धि और नीचजनों की संगति का नाश होता है।।६।।

बंधनं प्राणनाशश्च चित्तोद्वेगस्तथैव च ।
बहुबाधा महाहानी रवेः प्राणगते शनौ ।।७।। (सू.श.)

सूर्य के सूक्ष्मान्तर में शनि की प्राणदशा में बंधन, प्राण का भय, चित्त में उद्वेग, अनेक बाधा और हानि होती है।।७।।

राजान्नभोगः सततं राजलांछनतत्पदम् ।
आत्मासंत्तर्पयेदेवं रवेः प्राणगतेबुधे ।।८।। (सू.बु.)

सूर्य के सूक्ष्मान्तर में बुध की प्राणदशा में निरन्तर राजभोग राजकीय चिह्नों से युक्त और आत्मा को शान्ति मिलती है।।८।।

अन्योन्यं कलहश्चैव वसुहानिः पराजयः ।
गुरुस्त्रीबंधुहानिश्च सूर्यप्राणगते ध्वजे ।।९।। (सू.के.)

सूर्य के सूक्ष्मान्तर में केतु की प्राणदशा में परस्पर कलह धन की हानि और पराजय गुरु, स्त्री, बंधु की हानि होती है।।९।।

राजपूजा धनाधिक्यं स्त्रीपुत्रादिभवं सुखम् ।
अन्नपानादिभोगश्च रवेः प्राणगते भृगौ ।।१०।। (सू.शु.)

सूर्य के सूक्ष्मान्तर में शुक्र की प्राण दशा में राजा से पूजा, धनका विशेष लाभ, स्त्री पुत्रादि का सुख और अन्न पानादि का सुख होता है।।१०।।

इति सूर्य प्राणदशाफलम्।

अथ चन्द्रप्राणदशाफलम्।

योगाभ्यासं समाधिं च स्त्रीपुत्रादिसुखं तथा ।
इति सर्व समासेन चन्द्रप्राणे भवन्ति च ।।११।। (चं.चं.)

चन्द्रमा के सूक्ष्मांतर में चन्द्रमा की प्राणदशा में योगाभ्यास, समाधि, स्त्री पुत्रादि का सुख यह सब एक साथ ही होता है।।११।।

क्षयं कुष्टं बंधुनाशं रक्तस्त्रावान्महद्भयम् ।
भूतावेशादि जायेत चन्द्रप्राणगते कुजे ।।१२।। (चं.मं.)

चन्द्रमा के सूक्ष्मांतर में भौम की प्राणदशा में क्षय रोग, कुष्ठ रोग की संभावना, बंधु का नाश, रक्तस्राव से कष्ट और भूत आदि का आवेश होता है।।१२।।

सर्पभीतिविशेषण भूतोपद्रववान्सदा ।
दृष्टिक्षोभोमतिभ्रंशश्चन्द्रप्राणगतेप्यहौ ।।१३।।(चं.रा.)

चन्द्रमा के सूक्ष्मांतर में राहु की प्राणदशा में विशेषकर सर्प का भय, भूत का उपद्रव, दृष्टि में विकार और बुद्धि नाश होता है।।१३।।

धर्मबुद्धिः क्षमाप्राप्तिर्देवब्राह्मणपूजनम् ।
सौभाग्यं प्रियदृष्टिश्च चन्द्रप्राणगते गुरौ ।।१४।। (चं.बृ.)

चन्द्रमा के सूक्ष्मांतर में गुरु की प्राणदशा में धर्मबुद्धि, क्षमा की प्राप्ति, देवता और ब्राह्मण का पूजन और भाग्योदय होता है।।१४।।

सहसा देहपतनं शत्रूपद्रववेदना ।
अंधत्वं च धनप्राप्तिश्चन्द्रप्राणगते शनौ ।।१५।। (चं.श.)

चन्द्रमा के सूक्ष्मांतर में शनि की प्राणदशा में अकस्मात् शरीर का पतन, शत्रुओं का उपद्रव, नेत्रान्धता और धन का लाभ होता है।।१५।।

चामरछत्रसंप्राप्ती राज्यलाभो नृपात्ततः ।
समत्वं सर्वभूतेषु चन्द्रप्राणगते बुधे ।।१६।।(चं.बु.)

चन्द्रमा के सूक्ष्मांतर में बुध की प्राणदशा में राजा से चामर छत्र और राज्य का लाभ और सभी प्राणियों में समदृष्टि होती है।।१६।।

शस्त्राग्नि रिपुजापीडा विषाग्नि कुक्षिरोगता ।
पुत्रदारवियोगश्च चन्द्रप्राणगते शिखी ।।१७।। (चं.के.)

चन्द्रमा के सूक्ष्मांतर में केतु की प्राणदशा में शस्त्र, अग्नि और शत्रु से पीड़ा, विष भय, कुक्षिगत रोग और पुत्र स्त्री से वियोग होता है।।१७।।

पुत्रमित्रकलत्राप्तिर्विदेशाच्च धनागयः ।
सुखसम्पत्तिरर्थश्च चन्द्रप्राणगते भृगौ ।।१८।। (चं.शु.)

चन्द्रमा के सूक्ष्मांतर में शुक्र की प्राणदशा में पुत्र मित्र स्त्री आदि का लाभ विदेश से धन का लाभ और सुख सम्पत्ति का लाभ होता है।।१८।।

तीव्रदोषी प्रदोषी च प्राणहानिर्मनोरुजम् ।
देशत्यागो महाभीतिश्चन्द्रप्राणगते रवौ ।।१९।। (क.सू.)

चन्द्रमा के सूक्ष्मांतर में सूर्य की प्राणदशा में तीव्र दोष से प्राणहानि की संभावना देश त्याग और महाभय होता है।।१९।।

इति चन्द्रप्राणदशाफलम्।

अथ भौमप्राणदशाफलम्–

युद्धे परजनाद्वद्धः शास्त्रेण परकेन वा ।
मृत्युना मरणं याति भौमे प्राणदशा फलम् ।।२०।। (मं.मं.)

भौम के सूक्ष्मांतर में भौम के प्राणदशा में युद्ध में शत्रु से बँधने वा शत्रु के शस्त्र से बंधन और मृत्यु बात तुल्य कष्ट होता है।।२०।।

विच्युतः सुतदारादिवंधूपद्रवपीडितः ।
प्राणत्यागो विषेणैव भौमप्राणगतेप्यहौ ।।२१।। (मं.श.)

भौम के सूक्ष्मांतर में राहु की प्राणदशा में पुत्र स्त्री से रहित, बंधुओं के उपद्रव से पीड़ा और विष से प्राणनाश होता है।।२१।।

देवार्चनपरः श्रीमान्मन्त्रानुष्टानतत्परः ।
पुत्रपौत्र सुखावाप्तिर्भौमप्राणगते गुरौ ।।२२।। (मं.वृ.)

भौम के सूष्यांतर में गुरु की प्राणदशा में देवता का पूजन में तत्पर, लक्ष्मी की प्राप्ति, मन्त्र के अनुष्ठान में तत्पर और पुत्र-पौत्र के सुख की प्राप्ति होती है।।२२।।

अग्निबाधा भवेन्मृत्युरर्थनाशः पदच्युतिः ।
बंधुभिर्वधुतावाप्तिर्भौमप्राणगते शनौ ।।२३।। (मं.श.)

भौम के सूक्ष्मांतर में शनि की प्राणदशा में अग्नि से बाधा, मृत्यु, धन का नाश, पद की अवनति और भाइयों से भ्रातत्व का लाभ होता है।।२३।।

दिव्याम्बरसमुत्पत्तिर्दिव्याभरण भूषितः ।
दिव्याङ्गनायाः सम्प्राप्तिर्भौमप्राणगते बुधे ।।२४।। (मं.बु.)

भौम के सूक्ष्मान्तर में बुध की प्राशादशा में दिव्यवस्त्र का लाभ, दिव्य आभूषण का लाभ और दिव्य स्त्री का लाभ होता है।।२४।।

पतनोत्पातपीडा च नेत्रक्षोभो महद्भयम् ।
भुजङ्गाच्च महाहानिर्भौम प्राणगते ध्वजे ।।२५।। (मं.के.)

भौम के सूक्ष्मान्तर में केतु की प्राणदशा में पतन, उत्पात् - पीड़ा, नेत्र में पीड़ा महाभय और सर्प से हानि होती है।।२५।।

धनधान्यादि सम्पत्तिर्लोकपूजा सुखावहा ।
नाना भोगैर्भवेद्रोगी भौम प्राणगते भृगौ ।।२६।। (मं.शु.)

भौम के सूक्ष्मान्तर में शुक्र की प्राणदशा में धन, धान्य आदि सम्पत्ति का लाभ, लोक में प्रतिष्ठा और अनेक भोगों से रोग की संभावना होती है।।२६।।

ज्वरोन्मादः क्षयोऽर्थस्य राजविद्रोहसम्भवः ।
दीर्घरोगो दरिद्रः स्याद्भौमप्राणगते रवौ ।।२७।। (मं.सू.)

भौम के सूक्ष्मांतर में सूर्य की प्रशादशा में ज्वर, उन्माद, धन की हानि, राजा से विद्रोह की संभावना, दीर्घ रोग और दरिद्रता होती है।।२७।।

भोजनादि सुख प्रीतिर्वस्त्राभरण वांछितम् ।
शीतोष्णव्याधिपीडा च भौमप्राणगते विधौ ।।२८।। (मं.चं.)

भौम के सूक्ष्मांतर में चंद्रमा की प्राण दशा में भोजन आदि के सुख का लाभ, अभीष्ट वस्त्र आभूषण का लाभ और सर्दी गर्मी से कष्ट होता है।।२८।।

इति भौम प्राणदशा फलम्।

अथ राहोः प्राणदशा फलम्–

अन्नाशने विरक्तश्च विषभीतिस्तथैव च ।
सहसाधननाशश्च राहोः प्राणदशाफलम् ।।२९।। (रा.रा.)

राहु के सूक्ष्मान्तर में राहु की प्राण दशा में अन्न भोजन से विरक्ति विष से भय, और सहसा धन का नाश होता है।।२९।।

अङ्गसौख्यं विनिर्भीतिर्वाहनादेश्च व्यग्रता ।
नीचैः कलहसम्प्राप्ती राहोः प्राणगते गुरौ ।।३०।। (रा.बृ.)

राहु के सूक्ष्मान्तर में गुरु की प्राणदशा में शरीर सुख, निर्भयता, वाहन आदि से व्यग्रता और नीचों से कलह की संभावना होती है।।३०।।

गृहदाहशरीरे च नीचैरपहृतं धनम् ।
रोगबंधन सम्प्राप्ती राहोः प्राणगते शनौ ।।३१।। (रा.श.)

राहु के सूक्ष्मान्तर में शनि की प्राणदशा में गृह और शरीर में अग्नि का भय, नीच से धन का अपहरण, रोग बंधन की प्राप्ति होती है।।३१।।

गुरुपदेश विभवो गुरुसत्कारवर्धनम् ।
गुणवांच्छीलवांश्चापि राहोः प्राणगते बुधे ।।३२।। (रा.बु.)

राहु की दशा में बुध की प्राण दशा में गुरु के उपदेश से वैभव प्राप्ति, गुरु के सत्कार में वृद्धि, गुण और शील में वृद्धि होती है।।३२।।

स्त्रीपुत्रादि विरोधश्च गृहान्निष्क्रमणादयः ।
साक्षात्कार्यस्यहानिश्च राहोः सूक्ष्मगते ध्वजे ।।३३।। (रा.के.)

राहु के सूक्ष्मान्तर में केतु की प्राण दशा में स्त्री-पुत्र आदि से विरोध गृह त्याग और साक्षात् कार्य की हानि होती है।।३३।।

छत्रवाहनसम्पत्तिः सर्वार्थफलसंचयः ।
शिवार्चन गृहारम्भो राहोः प्राणगते भृगौ ।।३४।। (रा.शु.)

राहु के सूक्ष्मान्तर में शुक्र की प्राणदशा में छत्र वाहन आदि सम्पत्ति का लाभ सभी प्रकार के लाभ और संचय और शिवपूजन तथा गृहारम्भ होता है।।३४।।

अर्शादिरोगभीतिश्च राज्योपद्रवसम्भवः ।
चतुष्पदादिहानिश्च राहोः प्राणगते रवौ ।।३५।। (रा.सू.)

राहु के सूक्ष्मान्तर में सूर्य की प्राणदशा में अर्श (बवासीर) आदि रोग का भय, राजा से उपद्रव की संभावना और चौपाये जानवरों की हानि होती है।।३५।।

सौमनस्यं च सद्बुद्धिः सत्कारो गुरुदर्शनम् ।
पापभीतिर्मनः सौख्यं राहोः प्राणगते विधौ ।।३६।। (रा.चं.)

राहु के सूक्ष्मान्तर में चन्द्रमा की प्राणदशा में सज्जनता, सत्कार और गुरु का दर्शन, पाप से भय तथा सुख होता है।।३६।।

चांडालाग्निवशाद्भीतिः स्वपदच्युतिरापदः ।
मलिनः श्वादिवृत्तिश्च राहोः प्राणगते कुजे ।।३७।। (रा.मं.)

राहु के सूक्ष्मान्तर में भौम की प्राणदशा में चांडाल और अग्नि से भय, अवनति और आपत्ति, मलिनता और कुत्ते की वृत्ति होती है।।३७।।

इति राहोः प्राणदशा फलम्।

अथ गुरोः प्राणदशा फलम्–

शोकनाशो धनाधिक्यंमग्निहोत्रं शिवार्चनम् ।
वाहनं छत्रसंयुक्तं जीवप्राणदशाफलम् ।।३८।। (वृ.वृ.)

गुरु के सूक्ष्मान्तर में गुरु की प्राणदशा में शोकादि का नाश, धन की वृद्धि, अग्नि होत्र, शिव का पूजन और वाहन छत्र का सुख होता है।।३८।।

व्रतहा सूर्यवर्तिश्च विदेशे वसुनाशनम् ।
विरोधो धननाशश्च गुरोः प्राणगते शनौ ।।३९।। (वृ.श.)

गुरु के सूक्ष्मान्तर में शनि की प्राण दशा में व्रत की हानि, विदेश में धन की हानि विरोध और धन की हानि होती है।।३९।।

विद्याधर्मविवृद्धिश्च गुरुब्राह्मणपूजनम् ।
भाग्योदयसुखप्राप्तिर्गुरोः प्राणगते बुधे ।।४०।। (वृ.बु.)

गुरु के सूक्ष्मान्तर में बुध की प्राणदशा में विद्या और धर्म की वृद्धि, गुरु और ब्राह्मण का पूजन, भाग्योदय और सुख का लाभ होता है।।४०।।

ज्ञानं विभवपांडित्यं शास्त्रश्रोता शिवार्चनम् ।
अग्निहोत्रं गुरोर्भक्तिर्गुरोः प्राणगते ध्वजे ।।४१।। (वृ.के.)

गुरु के सूक्ष्मान्तर में केतु के प्राण दशा में ज्ञान, वैभव और पांडित्य, शास्त्र श्रवण, शिवपूजन, अग्नि होत्र और गुरु भक्ति होती है।।४१।।

रोगान्मुक्तिः सुखं भोगं धन धान्यसमागमम् ।
पुत्रदारादि सौख्यं गुरोः प्राणगते भृगौ ।।४२।। (वृ.शु.)

गुरु के सूक्ष्मान्तर में शुक्र के प्राण दशा में रोग से मुक्ति, सुख, भोग, धन, धान्य का आगमन, पुत्र स्त्री का सुख होता है।।४२।।

वातपित्तप्रकोपं च श्लेष्मोद्रेकं तु दारूणम् ।
रसव्याधिकृतं शूलं गुरोः प्राणगते रवौ ।।४३।। (वृ.सू.)

गुरु के सूक्ष्मान्तर से सूर्य के प्राण दशा में वायु पित्त के प्रकोप से कष्ट, और भयंकर कफवृद्धि तथा रस से उत्पन्न व्याधि होती है।।४३।।

छत्रचामरसंयुक्तं वैभवंपुत्रसम्पदम् ।
नेत्रकुक्षिगता पीडा गुरोः प्राणगतेविधौ ।।४४।। (वृ.चं)

गुरु के सूक्ष्मान्तर में चन्द्रमा की प्राण दशा में छत्र चामर का सुख, वैभव, पुत्र सम्पत्ति का लाभ और नेत्र तथा कुक्षि (कोंष्ठय) में कष्ट होता है।।४४।।

स्त्रीजनाच्च विषोत्पत्तिर्वधनमं चातिविग्रहः ।
देशांतरगमोभ्रांतिर्गुरोः प्राणगते कुजे ।।४५।। (वृ.मं.)

गुरु के सूक्ष्मान्तर में भौम की प्राणदशा में स्त्रियों से कष्ट बंधन अत्यंत विरोध देशांतर की यात्रा और भ्रांति होती है।।४५।।

व्याधिभिः परिभूतः स्याच्चौरैरपहृतं धनम् ।
सर्पवृश्चिकदृष्टत्वं गुरोः प्राणगतेप्यहौ ।।४६।। (वृ.रा.)

गुरु के सूक्ष्मान्तर में राहु की प्राणदशा में व्याधि से व्याप्त, चोर द्वारा द्रव्य की हानि सर्प-बिच्छू के काटने का भय होता है।।४६।।

इति गुरोः प्राणदशा फलम्।

अथ शनेः प्राणदशा फलम्–

ज्वरेण ज्वलिता कान्तिःकुष्ठरोगोदरादिरूक् ।
जलाग्निकृतमृत्युः स्यान्मन्दप्राणदशाफलम् ।।४७।। (श.श.)

शनि के सूक्ष्मांतर में शनि की प्राणदशा में ज्वर से कान्ति नष्ट हो जाती है, कुष्ठ रोग की संभावना, जल अग्नि से मृत्यु की संभावना होती है।।४७।।

धनं धान्यं च मांगल्यं व्यवहाराभिपूजनम् ।
देवब्राह्मणभक्तिश्चः शनेः प्राणगते बुधे ।।४८।। (श.बु.)

शनि के सूक्ष्मान्तर में बुध की प्राणदशा में धन, धान्य, मंगल कृव्य, व्यवहार से पूजन, देवता ब्राह्मण में भक्ति होती है।।४८।।

मृत्युवेदन दुःखं च भूतोपद्रवसंभवः ।
परदाराभिभूतत्वं शनेः प्राणगते ध्वजे ।।४९।। (श.के.)

शनि के सूक्ष्मान्तर में केतु की प्राणदशा में मृत्यु तुल्य कष्ट, भूत उपद्रव की संभावना और पर स्त्री के वश में होने की संभावना होती है।।४९।।

पुत्रार्थविभवैः सौख्यं क्षितिपालादिना सुखम् ।
अग्निहोत्रं विवाहश्च शनेः प्राणगते भृगौ ।।५०।। (श.शु.)

शनि के सूक्ष्मान्तर में शुक्र की प्राणदशा में पुत्र, धन और वैभव का सुख, राजा आदि से सुख, अग्निहोत्र और विवाह होता है।।५०।।

अग्निपीडा शिरोव्याधिः सर्पशत्रुभयं भवेत् ।
अर्थहानिः महाक्लेशः शनेः प्राणगते रवौ ।।५१।। (श.सू.)

शनि के सूक्ष्मान्तर में सूर्य की प्राणदशा में अग्नि से कष्ट, शिर का रोग, सर्प तथा शत्रु से भय, धन की हानि और महाकष्ट होता है।।५१।।

आरोग्यं पुत्रलाभश्च शान्तिपौष्टिक वर्धनम्।
देवब्राह्मणभक्तिश्च शनेः प्राणगते विधौ।।५२।। (श.चं.)

शनि के सूक्ष्मान्तर में चंद्रमा की प्राणदशा में आरोग्यता, पुत्र का लाभ, शान्तिक पौष्टिक क्रियायों की वृद्धि और देवता ब्राह्मण में भक्ति होती है।।५२।।

गुल्मरोगः शत्रुभीतिर्मृगया प्राणनाशनम्।
सर्पाग्निशत्रुतोभीतिः शनेः प्राणगते कुजे।।५३।। (श.मं.)

शनि के सूक्ष्मान्तर में भौम की प्राणदशा में गुल्म रोग। शत्रु का भय, प्राण जाने का भय, सर्प तथा अग्नि से भय होता है।।५३।।

देशत्यागो नृपाद्भीतिर्मोहनं विषभक्षणम्।
वातपित्तकृतापीडा शनेः प्राणगतेप्यहौ।।५४।। (श.रा.)

शनि के सूक्ष्मान्तर में राहु की प्राणदशा में देश का त्याग, राजा से भय और अहित, विषपान, वायु-पित्त से कष्ट होता है।।५४।।

सेनापत्यं भूमिलाभं संगमं स्वजनैः सह।
गौरवं बुधसन्मानं शनेः प्राणगते गुरौ।।५५।। (श.वृ.)

शनि के सूक्ष्मान्तर में गुरु की प्राणदशा में सेनापति का अधिकार, भूमि का लाभ, आत्मीय जनों से समागम, गुरुता और राजा से सम्मान होता है।।५५।।

इति शनेः प्राणदशा फलम्।

अथ बुध प्राणदशा फलम्–

आरोग्यं सुखसम्पत्तिर्धर्मकर्मादिसाधनम्।
समत्वं सर्भभूतेषु बुधप्राणदशाफलम्।।५६।। (बु.बु.)

बुध के सूक्ष्मान्तर में बुध की प्राणदशा में आरोग्यता, सुख संपत्ति, धर्म कर्म आदि का साधन और सभी प्राणियों में समता होती है।।५६।।

दहनं चौरविद्धांगं परमाधिविषोद्भवा।
देहांतकरणे दुःखं बुधप्राणगते ध्वजे।।५७।। (बु.के.)

बुध के सूक्ष्मान्तर में केतु की प्राणदशा में अग्नि भय, चौर से शरीर में चोट और विष से व्याधि की संभावना तथा मरण तुल्य कष्ट होता है।।५७।।

प्रभुत्वं धनसम्पत्तिः कीर्त्तिर्धर्मः शिवार्चनम् ।
पुत्रदारादिकं सौख्यं बुधप्राणगते भृगौ ।।५८।। (बु.शु.)

बुध के सूक्ष्मान्तर में शुक्र की प्राणदशा में प्रभुता, धन संपत्ति का लाभ, कीर्त्ति, धर्म और शिव पूजन, और पुत्र स्त्री का सुख होता है।।५८।।

अन्तर्दाहोज्वरोन्मादौ वांधवानां रतिः स्त्रिया ।
पापनिस्तेय सम्पत्तिर्बुधप्राणगते रवौ ।।५९।। (बु.सू.)

बुध के सूक्ष्मान्तर में सूर्य की प्राणदशा में अंतर्गत दाह, ज्वर और उन्माद बांधवों से तथा स्त्री से प्रेम और पापाचार से संपत्ति का लाभ होता है।।५९।।

स्त्रीलाभश्चार्थसम्पत्तिः कन्यालाभो धनागमः ।
लभते सर्वतः सौख्यं बुध प्राणगते विधौ ।।६०।। (बु.चं.)

बुध के सूक्ष्मान्तर में चंद्रमा की प्राणदशा में स्त्री, धन सम्पत्ति का लाभ, कन्या की उत्पत्ति, धन का आगम और सर्वत्र सुख की प्राप्ति होती है।।६०।।

पतितः कुक्षिरोगी च दंतनेत्रादिजा व्यथा ।
अर्शार्तिः प्राणसंदेहो बुधप्राणगते कुजे ।।६१।। (बु.मं.)

बुध के सूक्ष्मान्तर में भौम की प्राणदशा में पतन, कुक्षि में रोग, दांत नेत्र में पीड़ा अर्श रोग और प्राण हानि की संभावना होती है।।६१।।

वस्त्राभरणसम्पत्तिः वियोगो विप्रवैरिता ।
सन्निपातोद्भवं दुःखं बुधप्राणगतेप्यहौ ।।६२।। (बु.रा.)

बुध के सूक्ष्मान्तर में राहु की प्राणदशा में वस्त्र आभूषण आदि संपत्ति से वियोग, ब्राह्मण से वैर, सन्निपात रोग से कष्ट होता है।।६२।।

गुरुत्वं धनसम्पत्तिर्विद्या सद्गुण संग्रहः ।
व्यवसायेन सल्लाभो बुधप्राणगते गुरो ।।६३।। (बु.वृ.)

बुध के सूक्ष्मान्तर में गुरु की प्राणदशा में गुरुता, धन संपत्ति विद्या और अच्छे गुणों का संग्रह, और व्यवसाय से लाभ होता है।।६३।।

चौर्येण निधनप्राप्तिर्विधनत्वं दरिद्रता ।
याचकत्वं विशेषण बुधप्राणगते शनौ ।।६४।। (बु.श.)

बुध के सूक्ष्मान्तर में ्नि की प्राणदशा में चोर से मृत्युभय, निर्धनता और भिक्षावृति का प्रादुर्भाव होता है।।६४।।

इति बुध प्राणदशा फलम्।

अथ केतोः प्राणदशा फलम्–

अश्वपातेन घातं च पादस्खलनमेवच।
निर्विचारवधोत्पत्तिः केतोः प्राणदशाफलम् ।।६५।। (के.के.)

केतु के सूक्ष्मान्तर में केतु की प्राणदशा में घोड़े पर से गिरने से चोट, पैर फिसलने से चोट, कुत्सित विचार की उत्पत्ति होती है।।६५।।

क्षेत्रलाभो वैरिनाशो हयलाभो मनः सुखम्।
पशुक्षेत्रधनाप्तिश्च केतोः प्राणगते भृगौ ।।६६।। (के.शु.)

केतु के सूक्ष्मान्तर में शुक्र की प्राणदशा में कुशल-लाभ, शत्रुओं का नाश, मन को सुख, पशु, क्षेत्र और धन का लाभ होता है।।६६।।

स्तेयाग्निरिपुभोत्यादिघातश्चैवावरोधयुक् ।
प्राणांतकरणं कृछ्वं केतोः प्राणगते रवौ ।।६७।। (के.सू.)

केतु के सूक्ष्मान्तर में सूर्य के प्राणदशा में चोर, अग्नि और शत्रु का भय, अवरोध जनित घात और प्राणांत तुल्य कष्ट होता है।।६७।।

देवद्विजगुरोः पूजा दीर्घयात्रा धनं सुखम्।
कंठाश्रिते नेत्ररोगो केतोः प्राणगते विधौ ।।६८।। (के.चं.)

केतु के सूक्ष्मान्तर में चन्द्रमा की प्राणदशा में देवता, ब्राह्मण और गुरु की पूजा दूर की यात्रा, धन और सुख, कंठ और नेत्र का रोग होता है।।६८।।

तीव्ररोगोलसावृद्धिर्विभ्रमः सन्निपातजः।
स्वबंधुजनविद्वेषः केतोः प्राणगते कुजे ।।६९।। (के.मं.)

केतु के सूक्ष्मान्तर में भौम के प्राणदशा से तीव्र रोग, आलसी बुद्धि, सन्निपात से भ्रम रोग और अपने बंधुओं से विरोध होता है।।६९।।

विरोधः स्त्रीसुताद्यैश्च गृहान्निष्क्रमणंभवेत्।
स्वसाहसात्कार्यहानिः केतोः प्राणगतेप्यहौ ।।७०।। (के.रा.)

केतु के सूक्ष्मांतर में राहु की प्राणदशा में स्त्री, पुत्र आदि से विरोध, घर से निकाला होता है और साहस करने से कार्य की हानि होती है।।७०।।

शस्त्रव्रणैर्महारोगैर्हृत्पीडादिसमुद्भवः ।
सुतदारवियोगश्च केतो प्राणगते गुरौ ।।७१।। (के.बु.)

केतु के सूक्ष्मान्तर में गुरु की प्राणदशा में शस्त्र, व्रण और महारोग से हृदय में पीड़ा की संभावना, पुत्र, स्त्री आदि से वियोग होता है।।७१।।

मतिविभ्रमतीक्ष्णश्च क्रूरकर्मरतः सदा ।
व्यसनाद्बंधनं दुःखं केतोः प्राणगते शनौ ।।७२।। (के.श.)

केतु के सूक्ष्मान्तर में शनि की प्राणदशा में वुद्धि में भ्रम, स्वभाव में तीक्ष्णता, सदा क्रूरकर्म में आसक्त, व्यसन से बंधन और दुःख होता है।।७२।।

कुसुमं शयनं भूषा लेपनं भोजनादिकम् ।
सौख्यं सर्वाङ्गभोग्यं च केतोः प्राणगते बुधे ।।७३।। (के.बु.)

केतु के सूक्ष्मान्तर में बुध की प्राणदशा में पुष्प शय्या, आभूषण, लेपन, भोजनादि की प्राप्ति, सुख और सर्वागं का भोग प्राप्त होता है।।७३।।

इति केतोः प्राणदशा फलम्।

अथ भृगोः प्राणदशा फलम्–

ज्ञानमीश्वरभक्तिश्च तोषकर्मरसायनम् ।
पुत्रपौत्रसमृद्धिश्च शुक्रप्राणगते फलम् ।।७४।। (शु.शु.)

शुक्र के सूक्ष्मान्तर में शुक्र के प्राणदशा में ज्ञान की प्राप्ति ईश्वर में भक्ति, संतोष, रसायन और पुत्र पौत्र तथा समृद्धि का लाभ होता है।।७४।।

लोकप्रकाशकीर्त्तिश्च सुतसौख्यं विवर्जितः ।
उष्णादिरोगजं दुःखं शुक्रप्राणगते रवौ ।।७५।। (शु.सू.)

शुक्र के सूक्ष्मांतर में सूर्य के प्राणदशा में संसार में कीर्त्ति, पुत्र सुख से हीन गर्मी से रोग और दुःख होता है।।७५।।

देवार्चनैकर्मरतिर्मन्त्रतोषणतत्परः ।
धनसौभाग्यसम्पत्तिः शुक्रप्राणगते विधौ ।।७६।। (शु.चं.)

शुक्र के सूक्ष्मान्तर में चन्द्रमा की प्राणदशा में देवपूजन में प्रवृत्ति, संतोष, धन, सौभाग्य और सम्पत्ति का लाभ होता है।।७६।।

ज्वरो मसूरिका स्फोटकंडूचिपिटकादिकाः ।
देवब्राह्मणपूजा च शुक्र प्राणगते कुजे ।।७७।। (शु.मं.)

शुक्र के सूक्ष्मान्तर में भौम की प्राणदशा में ज्वर, मसरिका, चेचक, खलुली, रोग और देवता ब्राह्मण का पूजन होता है।।७७।।

नित्यं शत्रुकृता पीडा नेत्रकुक्षिरुजादयः ।
विरोधः सुहृदां पीडा शुक्र प्राणगतेप्यहौ ।।७८।। (शु.रा.)

शुक्र के सूक्ष्मान्तर में राहु की प्राणदशा में नित्य शत्रु से पीड़ा नेत्र, कुक्षि में रोग, मित्रों से विरोध और पीड़ा होती है।।७८।।

आयुरारोग्यमैश्वर्यं पुत्रस्त्री धनवैभवम् ।
छत्रवाहनसंप्राप्तिः शुक्रप्राणगते गुरौ ।।७९।।

शुक्र के सूक्ष्मान्तर में गुरु की प्राणदशा में आयु, आरोग्यता और ऐश्वर्य की प्राप्ति, पुत्र स्त्री धन का सुख द्रव्य वाहन का लाभ होता है।।७९।।

राजोपद्रवजाभीतिः सुखहानिर्महारुजः ।
नीचैः सह विवादं च शुक्रप्राणगते शनौ ।।८०।। (शु.श.)

शुक्र के सूक्ष्मान्तर में शनि की प्राणदशा में राजा के उपद्रव का भय, सुख, की हानि महारोग और नीचों से विवाद होता है।।८०।।

संतोषं राजसन्मानं नानादिग्भूमिसम्पदः ।
नित्यमुत्साहवृद्धिः स्याच्छुक्रप्राणगते बुधे ।।८१।। (शु.बु.)

शुक्र के सूक्ष्मान्तर में बुध की प्राणदशा में संतोष, राजा से सम्मान, अनेक दिशा से भूमि सम्पत्ति का लाभ और नित्य उत्साह में वृद्धि होती है।।८१।।

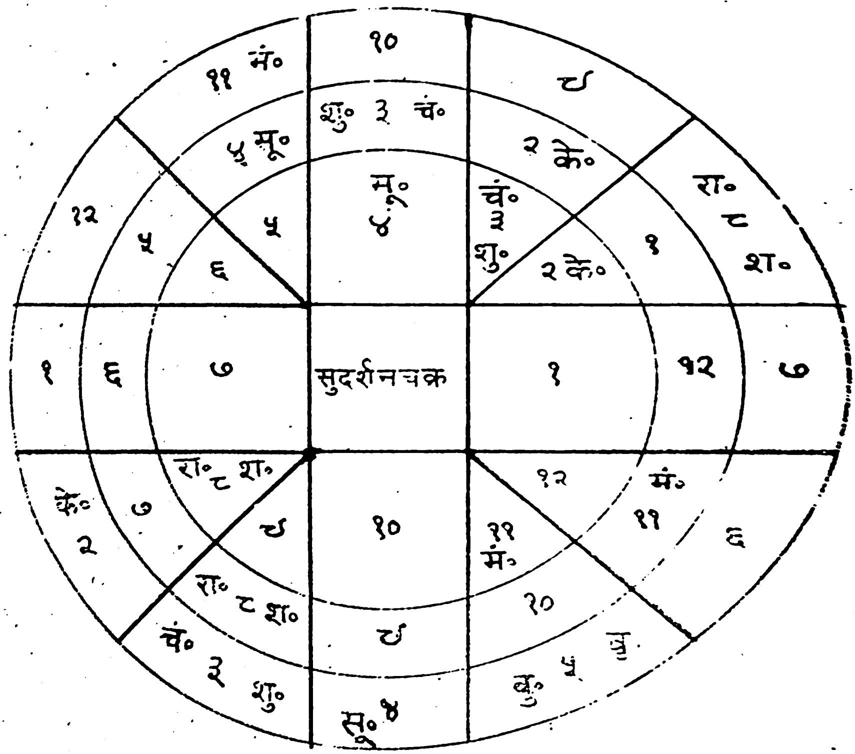
जीवितात्मयशोहानिर्धनधान्यपरिच्छदः ।
त्यागयोगधनानिस्युः शुक्रप्राणगते ध्वजे ।।८२।। (शु.के.)

शुक्र के सूक्ष्मान्तर में केतु की प्राणदशा में आत्मा, यश की हानि, धन धान्य की हानि और त्यागवृत्ति होती है।।८२।।

इति भृगोः प्राणदशाफलम्।

अथ समस्त ज्योतिः शास्त्रतत्वकामधेनुरूपम्

सुदर्शन चक्रम् ।



सुदर्शनं द्वादशारं जन्मभेन्द्वर्कराशितः ।
ग्रहान् संस्थाप्य भावेषु वर्षमासादिकल्पयेत् ।।१।।

केन्द्रकोणाष्टगो राहुः पापार्त्यै च शुभोमुदे ।
विरिःफादि शुभैः पापैस्त्रिषडायेषु बै शुभम् ।।२।।

तं तं भावं प्रकल्पयांगं तत्तत्तन्वादिजं फलम् ।
गुरुपदेशात्संवाच्यं भोजनं स्वप्नपूर्वकम् ।।३।।

चक्र परिचय–

यह चक्र वृत्ताकार जन्मपत्र में ग्रहों की स्थिति प्रगट करने को खींचा गया है। बाहरी वृत्त में जन्म लग्न से प्रारम्भ कर ग्रह लिखे गये हैं। दूसरे में चन्द्रमा से ग्रहों की स्थिति लिखी गई है तथा तीसरे वृत्त में सूर्य से ग्रहों की स्थिति लिखी गई है। इस प्रकार से यह चक्र एक ही में तीनों स्थितियों की तुलना को दिखलाता है।

भाव विचार करने के नियम–

किसी भाव का विचार करते समय उस भाव को प्रगट करने वाली तीनों राशियों का विचार करना चाहिये, जैसे दूसरे स्थान का विचार करते समय लग्न से चन्द्र से और सूर्य से दूसरे स्थान से स्थित ग्रहों का विचार करना चाहिये।

१।४।७।१०।८ भाव में राहु या पापग्रह हो तो कष्टकारक होते हैं। शुभ ग्रह हों तो शुभ होता है। १२ वें भाव को छोड़कर अन्य भावों में शुभग्रह और ३।६।११ भावों में पापग्रह शुभ फल देनेवाले होते हैं। विशेषरूप से राहु जहाँ रहता है वह अशुभ फल देता है। यदि किसी भाव में शुभग्रह है तो उस भाव का फल शुभ होगा और पूर्ण प्रभावशाली होगा। शुभग्रह शुभ फल ही देते हैं। जहाँ भी पापग्रह हो यदि उस पर शुभग्रह की दृष्टि हो तो शुभफल कहना चाहिये।

सप्तवर्ग में अधिक अशुभ वर्गोंवाले शुभग्रह के अपने शुभकारी गुण नष्ट हो जाते हैं। अनेक शुभग्रहों के वर्गों से युक्त होने पर पापग्रह भी अपेक्षया शुभद हो जाता है।

यदि कोई स्थान या भाव रिक्त हो तो उसका प्रभाव उस भाव के देखनेवाले ग्रहों से निकालना चाहिये। यदि कोई न देखता हो तो उसके स्वामी को देखना चाहिये।

उदाहरण–जैसे सुदर्शन चक्र में १०वाँ स्थान रिक्त है तथा अपने स्वामी से देखा जाता है जो चन्द्रमा के साथ बैठा है। अत: यहाँ यह कहा जा सकता है कि यह व्यक्ति अपने पेशे में पूर्णरूप से सफल होगा।

विशेष–सूर्य प्रथम भाव में शुभफल देनेवाला माना जाता है अन्य स्थानों में अशुभ माना जाता है। पापग्रह अपनी राशि में अशुभ नहीं होते हैं।

वार्षिक भविष्यवाणियाँ–

सुदर्शन चक्र से वार्षिक फल कहने के लिये जन्म से प्रथम १२ मास तक प्रथम भाव को लग्न मानकर किया जाता है। दूसरे वर्ष में द्वितीय भाव को लग्न माना जाता है, तीसरे वर्ष में तीसरा स्थान ही लग्न माना जाता है। इस प्रकार में लग्न प्रति वर्ष एक-एक राशि खिसकता जाता है। वार्षिक भविष्यवाणियों में मंदगति वाले ग्रहों राहु केतु शनि आदि का ही विचार किया जाता है। १२।२४।३६।४८ वें वर्ष के अन्त में वैसी ही स्थिति हो जाती है जैसी कि जन्मकाल में होती है। इसी प्रकार लग्नादि १२ भाव एक-एक मास के द्योतक होते हैं। दिन फल कहने के लिये एक-एक भाव में ढाई दिन कल्पना करना चाहिये।

अथ राहुदृष्टिमाहुः–

सुतमदननवांते पूर्णदृष्टिं तमस्य
युगलदशमगेहे चार्धदृष्टिंवदन्ति ।
सहजरिपुविपश्यन् पाददृष्टिं मुनीन्द्रा
निजभवनमुपेतोलोचनान्धः प्रदिष्टः ।।

ग्रहाणामुदयवर्षाणि–

आकृत्योजिनसम्मितागजकरा नेत्राग्नयः षोडश-
तत्वान्यङ्गगुणाद्विवेद प्रमिताः सूर्यादिकानां समा
यः खेटः स्वगृहे स्वतुङ्गभवने षड्वर्गशुद्धश्च यः-
तस्याब्दे हि नृणां भवेदति सुखं भाग्योदयो निश्चितम् ।।

इति सुदर्शनचक्र विवरणं समाप्तम्।

इति वृहत्पाराशरहोरायाः पूर्वार्धे सूर्यादि ग्रहाणां प्राणदशा फलाध्यायः।

समाप्तश्चायं पूर्वार्धभागः।

श्रीः

वृहत्पाराशरहोरायाः उत्तरार्धम्

भाषाटीका सहितम्

अष्टकवर्गाध्यायः।

मैत्रेय उवाच–

भगवन्सर्वमाख्यातं जातकं विस्तरेण मे।
सहस्रायुतश्लोकैरशीत्यध्यायसंयुतैः ।।१।।

मैत्रेयजी ने कहा— हे भगवन्! आपने एक हजार श्लोकों से युक्त ८० अध्याय (पूर्वखंड) में विस्तार पूर्वक सभी जातक को मुझसे कहा।।१।।

संकरात्तत्फलानां तु ग्रहाणां गतिसंकरात्।
नान्येनहीदृगस्येदमिति वक्तुमलं नराः ।।२।।

किन्तु ग्रहों की गति का परस्पर (संकर) मिश्रण होने से उनके फल में भी मिश्रण हो जाता है अतः इस प्रमाण से ऐसा फल कहना ऐसा निश्चय कर कहने को कोई समर्थ नहीं होता है।।२।।

कलौ युगे ततोऽल्पैव बुद्धिः पापोत्तरा नराः।
अतो न चास्य प्रचयगमनं न प्रयोजनम् ।।३।।

क्योंकि कलियुग में पूर्व युग से अल्प ही बुद्धि के और अधिक पापी होते हैं अतः उनके लिये इस महान् ग्रंथ का विचार करना और उसके प्रयोजन का कहना दुर्लभ ही है।।३।।

एतावंतं कलामस्य प्रयोजनं प्रचयगमनं च कथमासीत् इति शंकायामाह–

अत्र त्रेतायुगे केचिद्द्वापरे च कृतेयुगे।
कुशाग्रमतयः सर्वे पुण्यभाजश्चिरायुषः ।।४।।

आप यह कह सकते हैं इतने काल पर्यन्त इस ग्रंथ का उपयोग कैसे हुआ और अब क्यों नहीं हो पा रहा है, इसका उत्तर स्वयं दे रहे हैं— हे मुनीश्वर! इस त्रेतायुग में, द्वापर में तथा सत्ययुग में मनुष्य कुशाग्रबुद्धि, पुण्यवान् और दीर्घायु होते थे। अतः वे पूर्व के कहे हुये शास्त्र को देखने और कहने में समर्थ थे।।४।।

अतोऽल्पबुद्धिगम्यं यच्छास्त्रमेतद्वदस्य मे ।
लोकयात्रापरिज्ञानमायुषो निर्णयं तथा ।।५।।

इसलिये इस युग (कलियुग) के अल्पवुद्धि वाले लोगों के जानने योग्य शास्त्र का निर्देश करें जिसके अभ्यास से प्राणियों की लोकयात्रा (सुख दु:ख) का परिज्ञान हो और आयुष्य का निर्णय भी हो सके।।५।।

पराशर उवाच–

साधुपृष्टं त्वया ब्रह्मन्वदामि तव सुब्रत ।
लोकयात्रापरिज्ञानमायुषो निर्णयं तथा ।।६।।

पराशरजी ने कहा— हे ब्रह्मन्! तुमने बड़ा ही अच्छा प्रश्न किया है मैं लोकयात्रा का ज्ञान और आयुष्य का निर्णय।।६।।

संकरस्याविरोधं च शास्त्रस्यापि प्रसिद्धये ।
प्रयोजनस्य लोकानामुपकाराय तच्छृणु ।।७।।

और ग्रहों की गति की संकरता से फल में विपर्यास होता है इसे भी शास्त्र की सिद्धता के लिये अविरोध प्रकार और प्रयोजन भी लोकोपकार के लिये कहता हूँ उसे सुनो।।७।।

भावानांशुभाशुभत्वमाह–

लग्नादिव्ययपर्यंता भावाः संज्ञानुरूपतः ।
फलदाः शुभसंदृष्टायुक्ता वा शोभना मताः ।।८।।

लग्न से लेकर व्यय भाव पर्यन्त सभी भाव यदि शुभग्रह से युक्त वा दृष्ट हों तो उन भावों के संज्ञानुरूप शुभफल को देते हैं।।८।।

पापदृष्टयुताभावाः कल्याणेतरदायकाः ।
नितरां शत्रुनीचस्थैर्न च मित्रोच्चगैश्च तैः ।।९।।

पापग्रह से दृष्ट या युक्त हों तो अशुभ फल को देते हैं। यदि पापग्रह अपने शत्रु की राशि में वा नीचराशि में हो तो अत्यंत अशुभ फल देता है किन्तु अपने मित्र की राशि या उच्चराशि में हो तो शुभफल को ही देता है।।९।।

एवं सामान्यतः प्रोक्तं होराविद्भिस्तु सूरिभिः ।
मयैतत्सकलं प्रोक्तं पूर्वाचार्यानुवर्त्तिनी ।।१०।।

इस प्रकार होराशास्त्र के जानने वालों ने सामान्य रीति से कहा है उसे मैंने संपूर्ण पूर्वाचार्यों के अनुसार कहा है।।१०।।

आयुश्च लोकयात्रा च शास्त्रेऽस्मिंतत्प्रयोजनम् ।
निश्चेतुं तन्न शक्नीति वशिष्ठो वा बृहस्पतिः ।।११।।

इस शास्त्र में आयु का प्रमाण और मनुष्यों के सुख दुःख का वर्णन है यही इसका प्रयोजन है। किन्तु उन सबके निर्णय करने में वशिष्ठ या बृहस्पति भी समर्थ नहीं हो सकते हैं।।११।।

किं पुनर्मनुजास्तत्र विशेषात्तु कलौ युगे ।
नष्टादिषु च नातीव द्रेष्काणादि फलेषु च ।।१२।।

साधारण मनुष्य कहां से निश्चय कर सकता है। विशेषकर कलियुग में विशेषकर नष्ट चौर आदि के प्रश्नों के उत्तर द्रेष्काणादि से देने में समर्थ नहीं हो सकते हैं।।१२।।

आचार्यस्य मुखादेतच्छास्त्रं तु श्रृणुयाद्बुधः ।
संप्रदायेन यः श्रोतश्चास्मिञ्छास्त्रे महामतिः ।।१३।।

इस शास्त्र को आचार्य के मुख से सुन कर संप्रादायानुसार इसमें परिश्रम करने वाला पुरुष श्रेष्ठ दैवज्ञ होता है।।१३।।

कर्मज्ञानविदा वेदो द्विधा यद्वत्तदाह्वये ।
होराशास्त्रं द्विधा प्रोक्तं संकीर्णनिश्चयादिति ।।१४।।

जिस प्रकार कर्मकांड और ज्ञानकांड से युक्त वेद एक होते हुये भी दो प्रकार का है उसी प्रकार से संकीर्ण और निश्चय से यह ज्योति शास्त्र भी दो प्रकार का है।।१४।।

प्रोक्तः संकीर्णभागस्तु निश्चयांशस्तु कथ्यते ।
योवेत्ति सम्यगेतत्तु दैवज्ञः स उदाहृतः ।।१५।।

इसमें संकीर्णभाग पूर्वार्ध (पूर्वभाग) में वर्णित है और निश्चय भाग को इस उत्तरार्ध में कह रहा हूँ जो सम्यक् प्रकार से इसे जानता है उसे ही दैवज्ञ कहते हैं।।१५।।

भावदृष्ट्यादिषु प्रोक्तानर्थान्सम्यग्विचार्य च ।
समीचीनांस्तु संगृह्य विरुद्धांस्तु परित्यजेत् ।।१६।।

तनु आदि वारह भाव और उसपर दृष्टि का योग ठीक-ठीक विचार कर जो उत्तम बल हों उनको ग्रहण कर हीनवल का त्याग कर दे।।१६।।

आयुर्दायैः परं योगैः फलान्यष्टकवर्गतः ।
तन्वादीनां तु भावानां सूक्तैर्भावादिभिः फलैः ।।१७।।
ज्ञात्वादौ करणं स्थानं बिन्दुरेखे च वर्गणाम् ।
क्रमादष्टकवर्गस्य पृथक्कृत्य फलं वदेत् ।।१८।।

पहले आयुष्य का ज्ञान करे इसके बाद नाभसादिक योगों के फल का ज्ञान करें दोनों का ज्ञान हो जाने के बाद प्रत्येक भावों के अष्टकवर्ग के अनुसार करण और स्थान को बिन्दु और रेखा के स्थान पर मानकर योगकर उन भावों के फल को कहे।।१८।।

अथ रवेः करणसंख्यां-करणप्रदग्रहांश्चाह-

तनुस्वायुश्त्रिरिष्फेषु पंचकामेऽर्णवाः सुखे ।
अरौ भाग्ये त्रयः पुत्रे षट् करौ खे भवे चभूः ।।१९।।
लग्नेकुजीवशुक्रज्ञास्तनौखे मरणेऽपि च ।
रविभौमार्कि चन्द्रार्या व्यये ज्ञेन्दुसितार्यकाः ।।२०।।

अष्टक वर्ग क्या है— प्रायः फलकहने के तीन प्रकार हैं (१) जन्म लग्न से ग्रहों की स्थिति के अनुसार। (२) चन्द्रलग्न से ग्रहों की स्थिति के अनुसार। (३) नवांश कुंडली के अनुसार फल कहने की विधि है। जातक के जन्म लग्न से उसके शरीर के सुख दुःखादि का विचार किया जाता है और चन्द्रमा से मन का विचार किया जाता है। मन ही की शान्ति एवं अशान्ति और सबलता वा निर्बलता के अनुसार इहलौकिक और पारलौकिक सभी शुभ अशुभ कार्य हुआ करते हैं। अतः फलादेश का मुख्य अंग चन्द्रमा ही हुआ, इसलिये ही आचार्यों ने यह निश्चय किया है कि मनुष्य के जन्म के समय चन्द्रमा जिस राशि पर हो उस राशि से जिन जिन भावों में ग्रहगण भ्रमण करते हुये जाते हैं वैसा वैसा ही फल उस उस समय में मनुष्यको होते हैं। इसी को गोचर फल कहते हैं। किन्तु यह विधि गौण है। क्यों कि सम्पूर्ण मानव मात्र के चन्द्रमा इन्हीं बारह राशियों में से किसी राशि में रहता है। अतः साधारण गोचर फल केवल बारह ही प्रकार का होगा किन्तु ऐसा होता नहीं है। इसलिये आचार्यों

ने जन्मकालीन ग्रहस्थिति और जन्मलग्न स्थित राशि इन आठ स्थानों से यदि गोचर फल का विचार किया जाय तो अवश्य विश्वास योग्य होगा। ऐसा निश्चय किया है। इसी को अष्टक वर्ग विधि कहते हैं। प्रत्येक जन्मकुंडली में सातग्रह और जन्मलग्न अर्थात् इन आठ पदार्थों से किसी न किसी स्थान में शुभ और अशुभ फलों में विशेषता हो जाती है। इसी को आचार्यों ने प्रत्येक ग्रह एवं लग्न अपने अपने स्थान से जिन जिन स्थानों में शुभ फल देता है इस शुभफल दायित्व स्थान को रेखा या विन्दुद्वारा दिखलाया है। किसी आचार्य ने बिन्दु संकेत से शुभफल माना है और किसी ने रेखा द्वारा शुभ फल माना है इसके भ्रम में नहीं पड़ना चाहिये चाहे जिस चिह्न से मानाजाय। इस ग्रंथ में शून्य को करण कहते हैं। अतः सूर्य की करण संख्या कह रहे हैं— सूर्य से १, २, ८, ३, १२ भावों में पांच पांच करण होता है।, ७, ४ भाव में चार चार करण होता है। ६, ९ भाव में तीन तीन करण होता है। ५ भाव में ६ करण होता है। १० भाव में दो करण और ११ भाव में एक करण होता है। १९ अर्थात् सूर्य से १, २, ८ भाव में लग्न, चंद्र, शुक्र और बुध ये पांच ग्रह करण देने वाले हैं, १२ वें भाव में सूर्य, भौम, शनि, चंद्र, गुरु ये पांच करण देने वाले हैं।।२०।।

सुखे होरेन्दुशुक्राश्च धर्मेऽर्कार्किकुजा अरौ ।
होराज्ञार्येदवः कामे भवे दैत्येन्द्रपूजितः ।।२१।।

४ थे भाव में वुध, चन्द्र, शुक्र, गुरु ये चार ग्रह करण देने वाले हैं। नवम भाव में लग्न, चन्द्र, शुक्र ये तीन ग्रह करण प्रद हैं। ६ भाव में सूर्य शनि, मंगल ये तीन ग्रह करण देने वाले हैं। ७ भाव में लग्न, वुध, शुक्र, चंद्र ये चार ग्रह करण देने वाले हैं। ११ भाव में केवल शुक्र करण देने वाले हैं।।२१।।

सहजेऽर्कार्किशुक्रार्यभौमाः खे गुरुभार्गवौ ।
सुतेऽर्कार्कीन्दुलग्नारशुक्राः स्युः करणं रवेः ।।२२।।

तीसरे भाव में सूर्य, शनि, शुक्र, गुरु, मंगल ये पांच ग्रह करण देने वाले हैं। १० भाव में गुरु, शुक्र ये दो ग्रह करण देने वाले हैं। ५ भाव में सूर्य, शनि, चंद्र, लग्न, मंगल, शुक्र ये छः ग्रह करण देने वाले हैं। यह सूर्य की करण संख्या है।।२२।।

अथ सूर्य करण कोष्ठकम्।

मा.	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ल.	स.
त.		०		०	०	०		०	५
ध.		०		०	०	०		०	५
स.	०		०		०	०	०		५
सु.		०		०	०	०			४
सु.	०	०	०			०	०	०	६
रि.	०		०				०		३
जा.		०		०	०			०	४
मृ.		०		०	०	०		०	५
ध.		०				०		०	३
क.						०	०		२
आ						०			१
व्यय	०	०	०		०		०		५

नोट– इसका तात्पर्य यह है कि सूर्य जिस स्थान में है वहां से जिन जिन स्थानों में बिन्दु है अर्थात् ३, ५, ६, १२ स्थानों में जायगा तब-तब अपना अशुभ फल देगा और शेष स्थानों (१, २, ४, ७, ८, ९, १०, ११) में जायगा तब-तब शुभ फल देगा इसी प्रकार चंन्द्रादि ग्रहों को भी अपने अपने स्थानों से शुभ अशुभ फलों को समझना।

अथ चन्द्रस्यकरण संख्या-करणप्रदग्रहांश्चाह–

भाग्यस्वयोश्च षड् वेशममृतिहोरासु पंच च ।
मानदुश्चिक्यंयोरेकः सुतेवेदा अरिस्त्रियोः ।।२३।।

चन्द्रमा से ९, २ भाव में ६ करण ४, ८, १ भाव में ५ करण १०, ३ भाव में १ करण, ५ भाव में ४ करण, ६, ७ भाव में ३ करण।।२३।।

त्रयोव्ययेऽष्टावाये च शून्यं शीतकरस्य तु ।
होरार्कारार्किभृगवोऽङ्गज्ञार्केन्द्वार्किभार्गवाः ।।२४।।

१२ भाव में ८ करण और ११ भाव में शून्य करण होता है। चन्द्रमा से १ भाव में लग्न, सूर्य, मंगल, शनि, शुक्र ये पांच करण देने वाले हैं।।२४।।

जीवाऽर्कार्कीन्दुलग्नारा होरेन्दुगुरुभास्कराः ।
सितज्ञार्याः कुजतनुर्मदास्ते सितशीतगू ।।२५।।

दूसरे भाव में लग्न, बुध, सूर्य, चन्द्रमा, शनि और शुक्र, ये ६ करण देने वाले हैं। तीसरे भाव में केवल गुरु करण देने वाला है। चौथे भाव में सूर्य, शनि, चन्द्र, लग्न, भौम ये पांच करण प्रद हैं। पाचवें भाव में लग्न, चन्द्र, गुरु, रवि ये चार करण प्रद हैं। छठे भाव में शुक्र, बुध, गुरु ये तीन ग्रह करण प्रद हैं। सातवें भाव में भौम लग्न, शनि ये तीन करण प्रद हैं। आठवें भाव में भौम, लग्न, शनि, शुक्र, चन्द्रमा ये ५ करण प्रद हैं।।२५।।

होरार्कारार्किविज्जीवाः शनिः खं सकलाःक्रमात्।

नवम भाव में लग्न, सूर्य, भौम, शनि, बुध, गुरु ये ६ ग्रह करण प्रद हैं। दशम भाव में केवल शनि करण प्रद है, एकादश भाव में शून्य और बारहवें भाव में सभी करणप्रद होते हैं।

स्पष्टार्थचन्द्रकरणचक्रम्।

मा.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ल.	सू.	स.
त.		०			०	०	०	०	५
ध.	०		०		०	०	०	०	६
स.				०					१
सु.	०	०				०	०	०	५
सु.	०			०			०	०	४
रि.				०	०	०			३
जा		०				०	०		३
मृ.	०	०			०	०	०		५
ध.		०	०	०		०	०	०	६
क.						०			१
आ									
व्य	०	०	०	०	०	०	०	०	८

अथ भौमस्यकरणसंख्यांकरणप्रदग्रहांश्चाह–

व्ययवेश्मसुतस्त्रोषु षट्सप्त धनधर्मयोः ।।२६।।
होराभृत्योः शरा वेदा विक्रमे खेत्रयः क्षते ।
द्वौभवे शून्यमेवं स्यात्करणं भूमिजस्य तु ।।२७।।

भौम से १२, ४, ५, ७ भाव में ६ करण, २, ९ भाव में ७ करण।।२६।। १, ८ भाव में ५ करण, ३ भाव में ४ करण, २ भाव में ३ करण, ६ भाव में २ करण, ११ भाव में शून्य करण होते हैं।।२७।।

कुजस्यार्केंदुविज्जीवसिता लग्नशनी च ते।
सितारगुरुभंदाः स्युर्धमोक्तेषु कुजं विना ।।२८।।

भौम से १ भाव में सूर्य, चंद्रमा, वुध, गुरु, शुक्र ये ५ करणप्रदग्रह हैं, २ भाव में लग्न, शनि, सूर्य, चन्द्र, वुध, गुरु, शुक्र ये ७ करणप्रद ग्रह हैं। ३ भाव में शुक्र, भौम, गुरु, शनि ये ४ करणप्रद है। ४ भाव में सूर्य, चंद्र, वुध, गुरु, शुक्र लग्न ये ६ ग्रह करणप्रद हैं।।२८।।

चन्द्रारगुरुशुक्रार्किलग्नानि कुजभास्करी।
ज्ञेन्द्वर्कसितलग्नार्या एषु शुक्रं विना ततः ।।२९।।

५ भाव में चन्द्र, भौम, गुरु, शुक्र, शनि, लग्न ये ६ ग्रह करणप्रद हैं। ६ भाव में भौम, शनि ये दो करणप्रद हैं, ७ भाव में वुध, चंद्र, सूर्य, शुक्र, गुरु ये ६ करणप्रद ग्रह हैं।।२९।।

विना शनिं सप्तधर्मे सितेन्दुज्ञा वियत्ततः।
अर्कार्किज्ञेंदुलग्नाराः करणं प्रोच्यते क्रमात् ।।३०।।

८ भाव में वुध, चंद्र, सूर्य, गुरु, लग्न ये ५ करणप्रद ग्रह हैं, ९ भाव में सूर्य, चन्द्र, भौम, वुध, गुरु, शुक्र लग्न ये ७ करणप्रद ग्रह हैं, १० भाव में शुक्र, चंद्र, बुध ये तीन करणप्रद ग्रह हैं। ११ भाव में शून्य और १२ भाव में सूर्य, शनि, बुध, चंद्र, लग्न, भौम ये ६ करणप्रद ग्रह हैं।।३०।।

स्पष्टार्थभौमकरणचक्रम्।

भा.	सू.	चं.	मं.	बु.	वृ.	शु.	श.	ल.	स.
त.	०	०		०	०	०			५
ध.	०	०		०	०	०	०	०	७
स			०		०	०	०		४
सु.	०	०		०	०	०		०	६
सु.		०	०		०	०	०	०	६
रि			०				०		२
जा	०	०		०	०	०		०	६
मृ.	०	०		०	०			०	५
ध.	०	०	०	०	०	०		०	७
क.		०		०		०			३
आ									
व्य	०	०	०	०			०	०	६

अथ बुधस्य करण संख्यां करणप्रदग्रहांश्चाह–

तनुस्वगृहकर्मारि धर्मेष्वग्निर्मृतौ करौ ।
मातृस्त्रियों रसा लाभे शून्यं पुत्रे व्यये शराः ।।३१।।

बुध से १,२,४,१०,६,९ भाव में तीन करण, ८ भाव में २ करण, ३, ७ भाव में ६ करण, ११ भाव में शून्य और १२ भाव में ५ करण होता है।।३१।।

बुधस्यार्केन्दुगुरवो गुरुसूर्यबुधाः क्रमात् ।
लग्नार्कारार्किचंद्रार्या ज्ञार्कार्या हि बुधस्यतु ।।३२।।

बुध से १ भाव में सूर्य, चंद्र, गुरु ये तीन करणप्रद ग्रह हैं, २ भाव में गुरु, सूर्य, बुध ये तीन करणप्रद ग्रह हैं। ३ भाव में लग्न, सूर्य, शनि, चंद्र, भौम, गुरु ये ६ करणप्रद ग्रह हैं, ४ भाव में बुध, सूर्य, गुरु ये तीन करणप्रद ग्रह है।।३२।।

जीवारेन्द्वार्किलग्नानि शुक्रमंदधरासुताः ।
ज्ञेन्दुलग्नार्कशुक्रार्या ज्ञार्कौ जीवेन्दुलग्नकाः ।।३३।।
अर्कार्यशुक्राः शून्यं च होरेन्द्वारार्किभार्गवाः ।

५ भाव में गुरु, भौम, चंद्र, शनि, लग्न ये ५ करणप्रद ग्रह हैं। ६ भाव में शुक्र, शनि, भौम ये तीन करणप्रद ग्रह हैं। ७ भाव में बुध, चंद्र, लग्न, सूर्य, शुक्र, गुरु ये ६ करणप्रद ग्रह हैं, ८ भाव में बुध, सूर्य ये दो करणप्रद ग्रह हैं। ८ भाव में बुध, सूर्य ये दो करणप्रद ग्रह हैं। ९ भाव में गुरु, चंद्र, लग्न ये ३ करणप्रद ग्रह हैं, १० भाव में सूर्य, गुरु, शुक्र ये तीन करणप्रद ग्रह हैं, ११ भाव में शून्य और १२ भाव में लग्न, चंद्र, भौम, शनि, शुक्र ये ५ करणप्रद ग्रह हैं।।३३।।

स्पष्टार्थबुधकरणचक्रम्।

मा	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ल.	स
त.	०	०			०				३
ध.	०			०	०				३
स.	०	०	०		०		०	०	६
सु.	०			०	०				३
सु.		०	०		०		०	०	५
रि.			०			०	०		३
जा.	०	०		०	०	०		०	६
मृ.	०			०					२
क.		०			०				२
ध.	०				०	०			३
आ									
ब्य		०	०			०	०	०	५

अथ गुरोः करण संख्यां करणप्रदग्रहांश्चाह–

रूपं धनाययोः खे दौ व्यये सप्तक्षतेऽर्णवाः ।।३४।।

गुरु से २ रे भाव में १ करण, १० भाव में २ करण, ११ भाव में १ करण, १० भाव में २ करण, १२ भाव में ७ करण, ६ भाव में ४ करण।।३४।।

मृतिविक्रमयोः पंच गुरोः शेषेषु वह्नयः ।
शुक्रेन्दुमंदा लग्ने स्वे आये मंदश्च विक्रमे ।।३५।।

८, ३ भाव में ५ करण और शेष भावों (१, ४, ५, ७, ९) में ३ करण होते हैं। गुरु से १ भाव में शुक्र, चंद्र, शनि ये तीनग्रह करणप्रद हैं, २ और ११ भाव में केवल शनि करणप्रद हैं।।३५।।

लग्नारेन्दुज्ञभृगवः सुतेऽर्कार्यकुजा गृहे ।
शुक्रमंदेदवो द्यूने बुधशुक्रशनैश्चराः ।।३६।।

३ भाव में लग्न, भौम, चंद्र, वुध, शुक्र ये पांच ग्रह करणप्रद हैं। ५ भाव में सूर्य, गुरु, भौम ये तीन करणप्रद हैं, ४ भाव में शुक्र, शनि, चंद्र ये तीन ग्रह करणप्रद हैं, ७ भाव में वुध, शुक्र, शनि ये तीन ग्रह करणप्रद हैं।।३६।।

जीवारार्केन्दवः शत्रौ मंदं विना व्यये सर्वे ।
कर्मणीन्दुशनी धर्मे मन्दारगुरवो मृतौ ।।३७।।

६ भाव में गुरु, भौम, सूर्य, चन्द्र ये चार ग्रह करणप्रद हैं, १२ भाव में शनि को छोड़कर सभी ग्रह करणप्रद हैं, १० भाव में चंद्र, शनि ये २ ग्रह, ९ भाव में शनि, भौम, गुरु ये तीन ग्रह करणप्रद हैं।।३७।।

स्पष्टार्थगुरुकरणचक्रम्।

मा	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ल.	स
त.		०				०	०		३
ध.							०		१
स.		०	०	०		०		०	५
सु.		०				०	०		३
सु.	०		०		०				३
रि.		०	०			०	०		४
जा				०		०	०		३
मृ.		०		०		०	०	०	५
ध.			०		०		०		३
क.		०					०		२
आ.							०		१
व्य	०	०	०	०	०	०		०	७

लग्नार्किसितचंद्रज्ञाः करणं च गुरोरिदम् ।

८ भाव में लग्न, शनि, शुक्र, चंद्र, बुध ये पांच ग्रह करणप्रद हैं।

अथ भृगोः करणसंख्यां करणप्रद ग्रहांश्चाह—

सुतायुर्विक्रमेष्वक्षितनुस्वव्ययखेष्विषुः ।।३८।।

शुक्र से ५, ८, ३ भाव में २ करण, १, २, १२, १० भाव में ५ करण।।३८।।

अष्टौस्त्रियामरौ षड्भूर्धर्मे मित्रेऽग्निखं भवे ।
लग्ने स्वेऽर्कारविज्जीवमंदाः सर्वे च काम मे ।।३९।।

७ भाव में ८ करण, ६ भाव में ६ करण, ९ भाव में १ करण, ४ भाव में ३ करण और ११ भाव में शून्य करण होता है। शुक्र से १, २ भाव में सूर्य, भौम, गुरु, बुध, शनि ये ५ करणप्रद ग्रह हैं। ७ भाव में सूर्य, चंद्र, भौम, बुध, गुरु, शुक्र, शनि और लग्न ये आठ करणप्रद ग्रह हैं।।३९।।

अर्कार्यौ विक्रमस्थाने सुतेऽर्कारौ शुभे रविः ।
सुखेऽर्कवुधजीवाः स्युर्भौमज्ञौ मृत्तिभे द्विज ।।४०।।

३ भाव में सूर्य, गुरु दो करणप्रद ग्रह हैं, ५ भाव में सूर्य, भौम ये दो करणप्रद ग्रह हैं। ९ भाव में सूर्य, वुध, गुरु ये ३ करणप्रद ग्रह हैं। ८ भाव में भौम, बुध ये २ करणप्रद ग्रह हैं।।४०।।

स्पष्टार्थभृगोःकरणाचक्रम्।

मा	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ल.	स.
त.	०		०	०	०		०		५
ध.	०		०	०	०		०		५
स.	०				०				२
स.	०			०	०				३
स.	०		०						२
रि.	०	०		०	०	०	०	०	७
जा	०	०	०	०	०	०	०	०	८
मृ.			०						१
ध.	०			०					२
क.	०	०	०					०	५
आ									
व्य				०	०	०	०	०	५

अथ शनेःकरणसंख्यां-करणप्रद ग्रहांश्चाह–

शुक्रार्केन्द्वार्किलग्नार्याः शत्रौ शून्यं भवेव्यये ।
होरार्किबुधशुक्रार्यास्तन्वारज्ञेन्द्विनाश्च खे ।।४१।।

६ भाव में शुक्र, सूर्य, चन्द्र, शनि, लग्न और गुरु ये ६ करणप्रद ग्रह हैं। ११ भाव में कोई नहीं है। १२ भाव में लग्न, शनि, बुध, शुक्र, गुरु ये ५ करणप्रद ग्रह हैं। १० भाव में लग्न, भौम, बुध, चंद्र, सूर्य ये ५ करणप्रद ग्रह हैं।।४१।।

स्वस्त्रीधर्मेषु सप्ताङ्गं मृतिहोरागृहेषु च ।
आज्ञाभ्रातृव्यये वेदा रूपं शत्रौ सुते शराः ।।४२।।

शनि से २।७।९ भाव में ७ करण, ८ लग्न, ४ भाव में ६ करण, १०।३।१२ भाव में ४ करण, ६ भाव में १ करण, ५ भाव में ५ करण।।४२।।

आये शून्यं शनेरेवं करणं प्रोच्यते बुधैः ।
गृहे तनौ च लग्नार्कौ स्वस्त्रियोश्च रविं बिना ।।४३।।

११ भाव में शून्य करण होता है। शनि से ४।१ भाव में लग्न, सूर्य को छोड़कर सभी ग्रह करणप्रद होते हैं। २।७ भाव में रवि को छोड़कर शेष ७ ग्रह।।४।।

हित्वा धर्मे बुधं माने लग्नाररविचन्द्रजान् ।
ततो भ्रातरि जीवार्कबुध शुक्राः क्षते रविः ।।४४।।

९ भाव में बुध के बिना ७ ग्रह। १० भाव में लग्न, भौम, रवि, चंद्र के बिना (चंद्र, गुरु, शुक्र, शनि) चार ग्रह, ३ भाव में गुरु, सूर्य, बुध, शुक्र ये चारग्रह ६ भाव में केवल सूर्य।।४४।।

व्यये लग्नेन्दुमंदार्काः सितार्केन्दुज्ञलग्नकाः ।
सुते मृतौ बुधार्कौ च हित्वाऽऽये खं शनेर्विंदः ।।४५।।

१२ भाव में लग्न, चंद्र, शनि, सूर्य ये चार ग्रह। ५ भाव में शुक्र, सूर्य, चंद्र, बुध, लग्न ये चार ग्रह, ८ भाव में चन्द्र, सूर्य ये २ ग्रह, ११ भाव में कोई नहीं करणप्रद हैं। यह शनि की बिन्दु संख्या कही गई है।।४५।।

स्पष्टार्थाशनेःकरणचक्रम्।

मा.	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ल.	स.
त.		०	०	०	०	०	०		६
ध.		०	०	०	०	०	०	०	७
स.	०			०	०	०			४
स.		०	०	०	०	०	०		६
स.	०	०		०		०		०	५
रि.	०								१
जा.		०	०	०	०	०	०	०	७
मृ.		०	०		०	०	०	०	६
ध.	०	०	०		०	०	०	०	७
क.		०			०	०	०		४
आ									
व्य	०	०					०	०	४

अथ लग्नस्य करणसंख्या करणप्रदग्रहांश्चाह–

तनौ तुर्ये च बह्निः स्यादुश्चिक्ये द्वौ धने शराः ।
बुद्धिमृत्यंकरिःफेषु षट्खेशक्षतराशिषु ।।४६।।

लग्न और ४ भाव में ३ करण, ३ भाव में २ करण, २ भाव में ५ करण, ५।८।९।१२ भाव में ६ करण, १०।११।६ भाव में १ करण।।४६।।

रूपं स्त्रियां गुरुं त्यक्त्वा लग्नस्य करणं बिदुः ।
होरासूर्येन्दवो लग्ने लग्नारेंद्विनसूर्यजाः ।।४७।।

७ भाव में ७ करण होते हैं। लग्न में लग्न, सूर्य, चंद्र ये तीन करणप्रद हैं। २ भाव में लग्न, भौम, चंद्र, सूर्य, शनि ये ५ करणप्रद हैं।।४७।।

गुरुज्ञौ लग्नचन्द्रारा लसूचंमंवुसौरयः ।
क्षतेशुक्रस्तथा चैकः कामे सर्वे गुरुं विना ।।४८।।

३ भाव में गुरु, वुध ये २ करणप्रद्र हैं। ४ भाव में लग्न, चन्द्र, भौम करणप्रद हैं। ५ भाव में लग्न, सूर्य, चंद्र, भौम, बुध, शनि ये करणप्रद हैं। ६ भाव में शुक्र, ७ भाव में सूर्य, चंद्र, भौम, वुध, शुक्र, शनि ये करणप्रद हैं।।४८।।

मृतौ भृगुवुधौ त्यक्त्वा धर्मेगुरुसितौ विना ।
कर्मण्याये तथा शुक्रो व्यये सूर्येन्दुवर्जिताः ।।४९।।

८ भाव में सूर्य, चंद्र, भौम, गुरु, शनि, लग्न ये ६ ग्रह करणप्रद हैं। ९ भाव में सूर्य, चंद्र, भौम, वुध, शनि, लग्न ये करणप्रद हैं। १० भाव में और ११ भाव में शुक्र, करणप्रद हैं। १२ भाव में भौम, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, लग्न ये ६ ग्रह करणप्रद हैं।।४९।।

लग्नस्यैवं तु संप्रोक्तं करणं द्विजपुंगव ।

हे ब्राह्मण श्रेष्ठ! इस प्रकार से लग्न के करण (बिन्दु) संख्या को कहा।

उक्तान्ये स्थानदातारं इति स्थानं विदुर्वुधाः ।
अथ स्थानग्रहान्वक्ष्ये सुखवीधाय सूरिणाम् ।।५०।।

पहले सूर्यादि ग्रहों के विन्दु देनेवाले ग्रहों को कहकर उससे भिन्न स्थान (रेखा) देनेवालों को कहते हैं।।५०।।

अथ रवि भावस्थानप्रदानग्रहान् आह–

स्वायुस्तनुषु मंदारसूर्यजीवुधौ सुते ।
विक्रमे ज्ञेन्दुलग्नानि लग्नार्कार्किकुजा गृहे ।।५१।।

सूर्य से २।७, १ भाव में शनि, भौम, सूर्य ये तीन रेखाप्रद ग्रह हैं। ५ भाव में गुरु, बुध ये दो ग्रह, २ भाव में बुध, चन्द्र और लग्न ये ३ ग्रह। ४ भाव में लग्न सूर्य, शनि, भौम ये ४ ग्रह।।५१।।

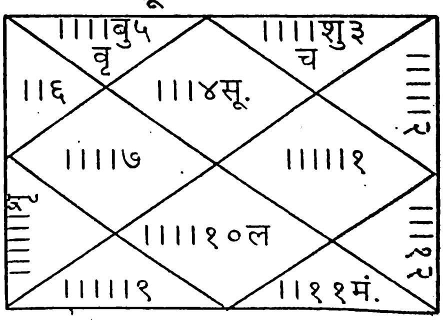
खे ज्ञेन्दुरवयश्चाये सर्वे शुक्रं विना व्यये ।
लग्नशुक्रवुधाः शत्रौ ते च जीवसुधाकरौ ।।५२।।

१० भाव में लग्न, सूर्य, शनि, भौम, बुध और चन्द्र ये ६ ग्रह। ११ भाव में शुक्र से भिन्न (सूर्य, चंद्र, भौम, बुध, गुरु, शनि, लग्न ये ७ ग्रह। १२ भाव में लग्न, शुक्र, बुध ये ३ ग्रह। ६ भाव में लग्न, शुक्र, बुध, गुरु, चंद्र ये ५ ग्रह।।५२।।

सूर्याष्टकवर्गः। रे. सं. ४८

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ल.
१	३	१	३	५	६	१	१
२	६	२	४	६	७	२	४
४	१०	४	६	९	१२	४	६
७	११	७	९	११		७	१०
८		८	१०			८	११
९		९	११			९	१२
१०		१०	१२			१०	
११		११				११	

सूर्याष्टकवर्गः



द्यूनेऽर्कारार्किशुक्राश्च धर्मेऽर्कारार्किविद्गुरुः।

७ भाव में सूर्य, भौम, शनि, शुक्र ये चार ग्रह, ९ भाव में सूर्य, भौम, शनि, वुध, गुरु ये ५ ग्रह रेखाप्रद हैं।

अथ चन्द्र भावस्थानप्रदान्ग्रहानाह–

ज्ञेन्दुजीवाः कुजार्यौ ज्ञार्केन्द्वारार्किभशुक्राः ।।५३।।

चन्द्रमा से १ भाव में बुध, चंद्र, गुरु रेखाप्रद ग्रह हैं। २ भाव में भौम, गुरु ये दो ग्रह रेखाप्रद हैं। ३ भाव में बुध, सूर्य, चन्द्र, भौम, शनि, लग्न, शुक्र ये ७ ग्रह।।५३।।

जीवशुक्रवुधाभौमवुधशुक्रशनैश्चराः ।
रवीन्द्वारार्किलग्नानि रवीन्द्वारार्यज्ञभार्गवाः ।।५४।।

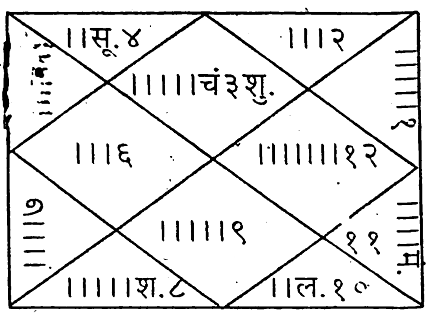
४ भाव में गुरु, शुक्र, बुध ये ३ ग्रह रेखाप्रद हैं। ५ भाव में भौम, बुध, शुक्र, शनि ये ४ ग्रह रेखाप्रद हैं। ६ भाव में सूर्य, चन्द्र, भौम, शनि, लग्न ये ४ रेखाप्रद हैं। ७ भावं में सूर्य, चंद्र, भौम, गुरु, बुध, शुक्र ये ६ ग्रह रेखाप्रद हैं।।५४।।

अर्कज्ञजीवाः शुक्रेन्दू ते च तौ लग्नभूसुतौ ।
सर्वे शून्यं क्रमात्प्रोक्तं स्थानं शीतकरस्य च ।।५५।।

८ भाव में सूर्य, वुध, गुरु ये ३ रेखाप्रद हैं। ९ भाव में शुक्र, चंद्र ये २ ग्रह रेखाप्रद हैं। १० भाव में सूर्य, वुध, गुरु, शुक्र, चन्द्र, लग्न, भौम ये ७ रेखाप्रद हैं। ११ भाव में सूर्य, चंद्र, भौम, बुध, शुक्र, शनि, लग्न ये ७ रेखाप्रद हैं। १२ भाव में कोई नहीं रेखाप्रद है।।५५।।

अथ चन्द्रभावस्थानप्रदान्ग्रहानाह रे. सं. ४९ **चन्द्राष्टकवर्गः ।**

चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	सू.	ल.
१	२	१	१	५	३	३	३
३	३	३	४	४	३	६	६
६	५	४	७	५	६	७	१०
७	६	५	८	७	११	८	११
१०	९	७	१०	९		१०	
११	१०	८	११	१०		११	
	११	१८		११			
		११					



अथ भौमभावस्थानप्रदानूग्रहानाह–

लग्नमन्दकुजा भौमो होराज्ञेन्दुदिनाधिपाः ।
मन्दारौ ज्ञरवी ज्ञेन्दुजवार्कतनुभार्गवाः ।।५६।।

भौम से १ भाव में लग्न, शनि, भौम ये तीन रेखाप्रद हैं। २ भाव में भौम, ३ भाव में लग्न, बुध, चंद्र, सूर्य ये ४ रेखाप्रद हैं। ४ भाव में शनि, भौम। ५ भाव में बुध, सूर्य। ६ भाव में बुध, चंद्र, गुरु, सूर्य, लग्न, शुक्र ये ६ ग्रह।।५६।।

मन्दारौ तौ सितश्चार्किकुजार्कार्यार्किलग्नकाः ।
सर्वे गुरुसितौ स्थानं भौमस्यैवंविदुर्बुधाः ।।५७।।

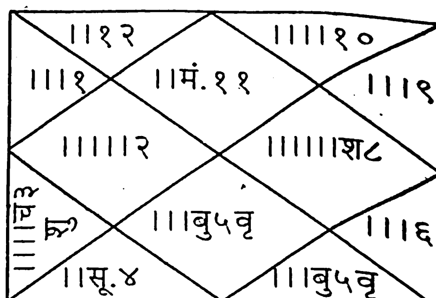
७ भाव में शनि, भौम, ८ भाव में शनि, भौम, शुक्र ये ३ रेखाप्रद हैं। ९ भाव में शनि, १० भाव में भौम, सूर्य, गुरु, शनि, लग्न ११ भाव में सूर्य, चंद्र, भौम, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, लग्न और १२ भाव में गुरु, शुक्र ये २ ग्रह रेखाप्रद हैं।।५७।।

भौमभावस्थानप्रदानूग्रहान्

रे. सं. ३९

मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	सू.	चं.	ल.
१	३	६	६	१	३	३	१
२	५	१०	८	४	५	६	३
४	६	११	११	७	६	११	६
७	११	१२	१२	८	१०		१०
८				९	११		११
१०				१०			
११				११			

भौमस्याष्टकवर्गः



अथ बुधभावस्थानप्रदानूग्रहानाह–

लग्नमन्दारशुक्रज्ञा लग्नारेन्दुसितार्कजाः ।
शुक्रज्ञौ लग्नचन्द्रार्किं, सितारज्ञार्किभार्गवाः ।।५८।।

बुध से १ भाव में लग्न, शनि, भौम, शुक्र, बुध ये ५ रेखाप्रद हैं। २ भाव में लग्न, भौम, चंद्र, शुक्र, शनि ये ४ रेखाप्रद हैं। ३ भाव में शुक्र बुध रेखा देने वाले हैं। ४ भाव में लग्न, चंद्र, शनि, शुक्र, भौम ये रेखाप्रद हैं। ५ भाव में बुध, सूर्य, शुक्र रेखाप्रद हैं।।५८।।

जीवज्ञार्केन्दुलग्नानि भूमिपुत्रशनैश्चरौ ।
तौ च लग्नेन्दुशुक्रार्या मन्दारार्कज्ञभार्गवाः ।।५९।।

लग्नमन्दारविच्चन्द्राः सर्वे जीवज्ञभास्कराः ।

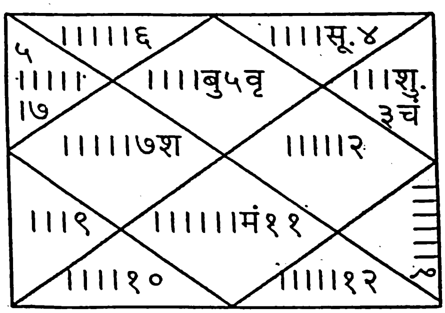
६ भाव में गुरु, वुध, सूर्य, चंद्र ये रेखाप्रद हैं। ७ भाव में भौम, शनि ये रेखाप्रद हैं। ८ भाव में लग्न, चंद्र, शुक्र, गुरु, भौम, शनि ये रेखाप्रद हैं। ९ भाव में शनि, भौम, सूर्य, वुध, शुक्र ये रेखाप्रद हैं। १० भाव में लग्न, शनि, भौम, बुध, चन्द्र रेखाप्रद हैं। ११ भाव में सूर्य, चंद्र, भौम, वुध, शुक्र, शनि ये रेखाप्रद हैं। १२ भाव में गुरु, वुध, सूर्य रेखाप्रद हैं।।५९।।

बुधभावस्थानप्रदानग्रहानाह

रे. स. ५४

बु.	बृ.	शु.	श.	सू.	चं.	मं.	ल.
१	६	१	१	५	२	१	१
२	८	२	२	६	४	२	२
५	११	३	४	९	६	४	४
६	१२	४	७	११	८	७	६
९		५	८	१२	१०	८	८
१०		८	९		११	९	१०
११		९	१०			१०	११
१२		११	११			११	

बुधस्याष्टकवर्गः



अथ गुरोः भावस्थानप्रदान्ग्रहान्नाह–

गुरोर्लग्नेसुखे जीवलग्नार्कवुधाः धने ।।६०।।

गुरु से १।४ भाव में गुरु, लग्न, भौम, सूर्य, बुध ये ५ ग्रह रेखाप्रद हैं।।६०।।

चन्द्रशुक्रौ च दुश्चिक्ये मन्दार्यार्काःशनिर्व्यये ।
सुते शुक्रेन्दुलग्नज्ञश्चन्द्रंविनात्वरौ ।।६१।।

२ भाव में गुरु, लग्न, भौम, सूर्य, बुध, चंद्र, शुक्र ये ७ ग्रह रेखाप्रद हैं। ३ भाव में शनि, गुरु, सूर्य ये ३ रेखाप्रद हैं। ५ भाव में शुक्र,चंद्र,लग्न,वुध, शनि ये ५ ग्रह रेखाप्रद हैं। ६ भाव में शुक्र, लग्न, बुध, शनि ये ४ ग्रह रेखाप्रद हैं।।६१।।

लग्नार्याऽर्केदवोऽस्ते मृतौ जीवार्कभूसुताः ।
धर्मे शुक्रार्कलग्नेन्दुबुधाः मंदं विनाऽऽयमे ।।६२।।
माने गुरुबुधारार्कशुक्रहोरास्तथा विदुः ।

७ भाव में लग्न, गुरु, भौम, सूर्य, चंद्र ये रेखाप्रद हैं। ८ भाव में गुरु, सूर्य, भौम ये रेखाप्रद हैं। ९ भाव में शुक्र, सूर्य, चंद्र, बुध ये रेखाप्रद हैं। ११ भाव

अथ भौमभावस्थानप्रदान्ग्रहानाह–

लग्नमन्दकुजा भौमो होराज्ञेन्दुदिनाधिपाः ।
मन्दारौ ज्ञरवी ज्ञेन्दुजवार्कतनुभार्गवाः ।।५६।।

भौम से १ भाव में लग्न, शनि, भौम ये तीन रेखाप्रद हैं। २ भाव में भौम, ३ भाव में लग्न, बुध, चंद्र, सूर्य ये ४ रेखाप्रद हैं। ४ भाव में शनि, भौम। ५ भाव में बुध, सूर्य। ६ भाव में बुध, चंद्र, गुरु, सूर्य, लग्न, शुक्र ये ६ ग्रह।।५६।।

मन्दारौ तौ सितश्चार्किकुजार्कार्यार्किलग्नकाः ।
सर्वे गुरुसितौ स्थानं भौमस्यैवंविदुर्बुधाः ।।५७।।

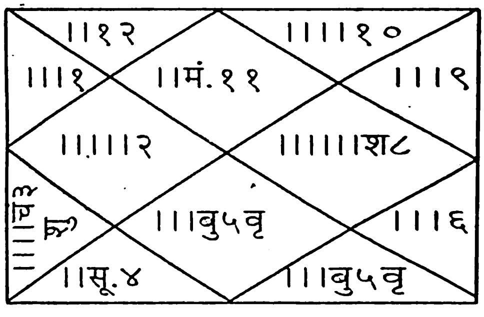
७ भाव में शनि, भौम, ८ भाव में शनि, भौम, शुक्र ये ३ रेखाप्रद हैं। ९ भाव में शनि, १० भाव में भौम, सूर्य, गुरु, शनि, लग्न ११ भाव में सूर्य, चंद्र, भौम, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, लग्न और १२ भाव में गुरु, शुक्र ये २ ग्रह रेखाप्रद हैं।।५७।।

भौमभावस्थानप्रदान्ग्रहान्

रे. सं. ३९

मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	सू.	चं.	ल.
१	३	६	६	१	३	३	१
२	५	१०	८	४	५	६	३
४	६	११	११	७	६	११	६
७	११	१२	१२	८	१०		१०
८				९	११		११
१०				१०			
११				११			

भौमस्याष्टकवर्गः



अथ बुधभावस्थानप्रदान्ग्रहानाह–

लग्नमन्दारशुक्रज्ञा लग्नारेन्दुसितार्कजाः ।
शुक्रज्ञौ लग्नचन्द्रार्कि, सितारज्ञार्किभार्गवाः ।।५८।।

बुध से १ भाव में लग्न, शनि, भौम, शुक्र, बुध ये ५ रेखाप्रद हैं। २ भाव में लग्न, भौम, चंद्र, शुक्र, शनि ये ४ रेखाप्रद हैं। ३ भाव में शुक्र बुध रेखा देने वाले हैं। ४ भाव में लग्न, चंद्र, शनि, शुक्र, भौम ये रेखाप्रद हैं। ५ भाव में बुध, सूर्य, शुक्र रेखाप्रद हैं।।५८।।

जीवज्ञार्केन्दुलग्नानि भूमिपुत्रशनैश्चरौ ।
तौ च लग्नेन्दुशुक्रार्या मन्दारार्कज्ञभार्गवाः ।।५९।।

लग्नमन्दारविच्चन्द्राः सर्वे जीवज्ञभास्कराः ।

६ भाव में गुरु, बुध, सूर्य, चंद्र ये रेखाप्रद हैं। ७ भाव में भौम, शनि ये रेखाप्रद हैं। ८ भाव में लग्न, चंद्र, शुक्र, गुरु, भौम, शनि ये रेखाप्रद हैं। ९ भाव में शनि, भौम, सूर्य, बुध, शुक्र ये रेखाप्रद हैं। १० भाव में लग्न, शनि, भौम, बुध, चन्द्र रेखाप्रद हैं। ११ भाव में सूर्य, चंद्र, भौम, बुध, शुक्र, शनि ये रेखाप्रद हैं। १२ भाव में गुरु, बुध, सूर्य रेखाप्रद हैं।।५९।।

बुधभावस्थानप्रदानग्रहानाह

रे. स. ५४

बु.	बृ.	शु.	श.	सू.	चं.	मं.	ल.
१	६	१	१	५	२	१	१
२	८	२	२	६	४	२	२
५	११	३	४	९	६	४	४
६	१२	४	७	११	८	७	६
९		५	८	१२	१०	८	८
१०		८	९		११	९	१०
११		९	१०			१०	११
१२		११	११			११	

बुधस्याष्टकवर्गः



अथ गुरोः भावस्थानप्रदान्ग्रहानाह–

गुरोर्लग्नेसुखे जीवलग्नार्कवुधाः धने ।।६०।।

गुरु से १।४ भाव में गुरु, लग्न, भौम, सूर्य, बुध ये ५ ग्रह रेखाप्रद हैं।।६०।।

चन्द्रशुक्रौ च दुश्चिक्ये मन्दार्यार्काःशनिर्व्यये ।
सुते शुक्रेन्दुलग्नज्ञश्चन्द्रंविनात्वरौ ।।६१।।

२ भाव में गुरु, लग्न, भौम, सूर्य, बुध, चंद्र, शुक्र ये ७ ग्रह रेखाप्रद हैं। ३ भाव में शनि, गुरु, सूर्य ये ३ रेखाप्रद हैं। ५ भाव में शुक्र, चंद्र, लग्न, बुध, शनि ये ५ ग्रह रेखाप्रद हैं। ६ भाव में शुक्र, लग्न, बुध, शनि ये ४ ग्रह रेखाप्रद हैं।।६१।।

लग्नार्याऽर्केंदवोऽस्ते मृतौ जीवार्कभूसुताः ।
धर्मे शुक्रार्कलग्नेन्दुबुधाः मंदं विनाऽऽयमे ।।६२।।
माने गुरुबुधारार्कशुक्रहोरास्तथा विदुः ।

७ भाव में लग्न, गुरु, भौम, सूर्य, चंद्र ये रेखाप्रद हैं। ८ भाव में गुरु, सूर्य, भौम ये रेखाप्रद हैं। ९ भाव में शुक्र, सूर्य, चंद्र, बुध ये रेखाप्रद हैं। ११ भाव

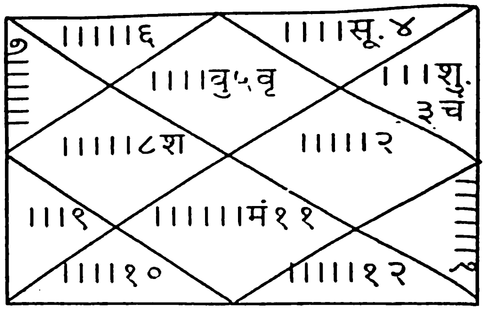
में सूर्य, चंद्र, भौम, बुध, गुरु, शुक्र, लग्न रेखाप्रद हैं। १० भाव में गुरु, बुध, सूर्य, शुक्र, लग्न ये रेखाप्रद है। शुक्र से १ भाव में लग्न, शुक्र, चंद्र ये ३ रेखाप्रद हैं। २ भाव में भी लग्न, शुक्र, चन्द्र रेखाप्रद हैं।।६२।।

गुरुभावस्थानप्रदानग्रहानाह

रे. सं. ५६

गरोरष्ठकवर्गः

बृ.	शु.	श.	सू.	चं.	मं.	बु.	ल.
१	२	३	१	२	१	१	१
२	५	५	२	५	२	२	२
३	६	६	३	७	४	४	४
४	९	१२	४	९	७	५	५
७	१०		७	११	८	६	६
८	११		८		१०	९	७
१०			९		११	१०	९
११			१०			११	१०
			११				११



अथ भृगोः भावस्थानप्रदानग्रहानाह–

लग्नशुक्रेन्दवस्ते ते ज्ञार्कारास्ते ज्ञवर्जिताः ।।६३।।

३ भाव में लग्न, शुक्र, चंद्र, बुध, शनि, भौम ये ६ ग्रह रेखाप्रद हैं। ४ भाव में लग्न, शुक्र, चंद्र, भौम, सूर्य ये रेखाप्रद हैं।।६३।।

सुतभे लग्नशशिजशशांकार्यार्किभार्गवाः ।
ज्ञारौ शून्यं सितार्केन्दुगुरुलग्नशनैश्चराः ।।६४।।

५ भाव में लग्न, चंद्र, बुध, गुरु, शनि, शुक्र ये रेखाप्रद हैं। ६ भाव में बुध, भौम रेखाप्रद हैं। ७ भाव में शून्यरेखा। ८ भाव में शुक्र, सूर्य, चंद्र, गुरु, लग्न, शनि ये रेखाप्रद हैं।।६४।।

सर्वे रविं बिना शुक्रगुरुमन्दाश्च मानभे ।
सर्वे कुजेन्दुरवयः क्रमाद्भृगुसुतस्य च ।।६५।।

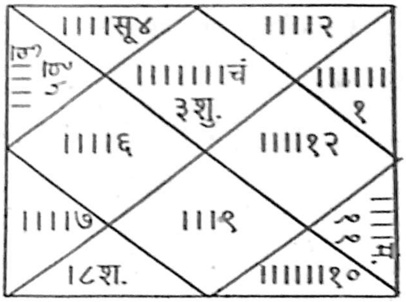
९ भाव में चंद्र, भौम, गुरु, वुध, शुक्र, शनि, लग्न ये रेखाप्रद हैं। १० भाव में शुक्र, शनि रेखाप्रद हैं। ११ भाव में सूर्य, चन्द्र, भौम, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, लग्न ये रेखाप्रद हैं। १२ भाव में भौम, चंद्र, सूर्य ये रेखाप्रद हैं।।६५।।

भृगुभावस्थानप्रदान्ग्रहानाह

रे. सं. ५२

शु.	श.	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	ल.
१	३	८	१	३	३	५	१
२	४	११	२	५	५	८	२
३	५	१२	३	६	६	९	३
४	८		४	९	९	१०	४
५	९		५	११	११	११	५
८	१०		८	१२			८
९	११		९				९
१०			११				११
११			१२				

भृगोरष्टकवर्गः



अथ शनेः भावस्थानप्रदान्ग्रहानाह-

शनेः रवितनू सूर्यो लग्नेन्दुकुजसूर्यजाः ।

लग्नार्कौ जीवमन्दाराः सर्वे सूर्य बिना क्षते ।।६६।।

शनि से १ भाव में सूर्य, लग्न ये दोनों रेखाप्रद हैं। २ भाव में सूर्य। ३ भाव में लग्न, चंद्र, भौम, शनि रेखाप्रद हैं। ४ भाव में लग्न, सूर्य रेखाप्रद हैं। ५ भाव में गुरु, शनि, भौम रेखाप्रद हैं। ६ भाव में चन्द्र, भौम, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, लग्न रेखाप्रद हैं।।६६।।

अर्कोऽर्कज्ञौ बुधोऽर्कारतनुज्ञाःसकलाश्रताः ।

कुजज्ञगुरुशुक्राश्च क्रमात्स्थानमिदं विदुः ।।६७।।

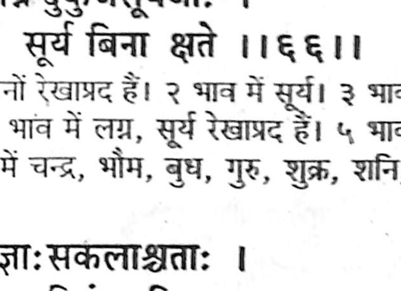
७ भाव में सूर्य। ८ भाव में सूर्य, बुध रेखाप्रद हैं। ९ भाव में बुध। १० भाव में सूर्य, भौम, लग्न, बुध रेखाप्रद हैं। ११ भाव में सूर्य, चंद्र, भौम, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, लग्न ये रेखाप्रद है। १२ भाव में भौम, बुध, गुरु, शुक्र रेखाप्रद हैं।।६७।।

शनेः भावस्थानप्रदान्ग्रहानाह

रे सं. ३९

श.	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	ल.
१	१	३	३	६	५	६	१
५	२	६	५	८	६	११	३
६	४	११	६	९	११	१२	४
११	७		१०	१०	१२		६
	८		११	११			१०
१०		१२	१२				११
११							

शनेरष्टकवर्गः



अथ लग्नस्य भावस्थानप्रदान्ग्रहानाह–

अथ स्थानं प्रवक्ष्यामि लग्नस्य द्विजपुंगव ।।६८।।

हे मैत्रेय! रेखा को ही स्थान कहते हैं। लग्न के रेखाप्रद ग्रहों को कह रहा हूँ।।६८।।

आर्किज्ञशुक्रगुर्वाराः सौम्य देवेज्यभार्गवाः ।
हित्वा सौम्यगुरु शेषाः सूज्ञेज्यभृगुसूर्यजाः ।।६९।।

लग्न भाव में शनि, बुध, शुक्र, गुरु, भौम ये ५ ग्रह रेखाप्रद हैं। २ भाव में बुध, गुरु, शुक्र ये रेखाप्रद हैं।।६९।।

तथा जीवभृगुवुधौ सर्वे शुक्रं बिना क्षते ।
जीव एकस्तथा द्यूने मृतौ सौम्यभृगू तथा ।।७०।।

३ भाव में सूर्य, चंद्र, भौम, शुक्र, शनि, लग्न रेखाप्रद हैं। ४ भाव में सूर्य, बुध, गुरु, शुक्र, शनि रेखाप्रद हैं। ५ भाव में गुरु, शुक्र रेखाप्रद हैं। ६ भाव में सूर्य, चंद्र, भौम, बुध, गुरु, शनि लग्न रेखाप्रद हैं। ७ भाव में गुरु। ८ भाव में बुध, शुक्र, रेखाप्रद हैं।।७०।।

धर्मे गुरुसितावेव ते सर्वे शुक्रमंतरा ।
सूर्यचन्द्रौ रिष्फे स्थानं लग्नस्यकीर्त्तितम् ।।७१।।

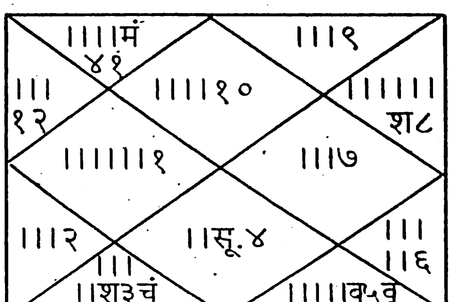
९ भाव में गुरु, शुक्र रेखाप्रद हैं। १०।११ भाव में सूर्य, चन्द्र, भौम, बुध, गुरु, शनि, लग्न ये रेखाप्रद हैं। १२ भाव में सूर्य, चंद्र, रेखाप्रद हैं।।७१।।

लग्नभावस्थानप्रदान्ग्रहानाह

रे. सं. ४९

ल	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
३	३	३	१	१	१	१	१
६	४	६	३	२	२	२	३
१०	६	१०	६	४	४	३	४
११	१०	११	१०	६	५	४	६
	११		११	८	६	५	१०
	१२			१०	७	८	११
				११	९	९	
					१०	११	
					११		

लग्नाष्टकवर्गः ।



करणं विन्दुवत्प्रोक्तं स्थानं रेखा तथोच्यते ।
मुनिदिग्वसुवेदादिगिष्वद्र्यष्टनवेषवः ॥७२॥
रूद्रार्का वर्गणामेषाद्द्विविषयेऽष्टवायवः ।
पंक्तिस्वरेषवः सूर्याद्वर्गणा प्रोच्यते बुधैः ॥७३॥

करण का स्वरूप विन्दु (शून्य) का है और स्थान का स्वरूप रेखा के (।) सदृश है। भेषादि राशियों का क्रम से ७।१०।८।४।१०।५।७।८।९।५।११।१२ ये गुणक हैं। और सूर्यादि ग्रहों को ५।५।८।५।१०।७।५ ये गुणक हैं।।७२-७३।।

राशिगुणकबोधकचक्रम्।

मे.	बृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	राशयः
७	१०	८	४	१०	५	७	८	९	५	११	१२	गुणकः

ग्रहगुणकबोधकचक्रम्।

सू.	चं.	मं.	बु.	वृ.	शु.	श.	ग्रहाः
५	५	८	५	१०		५	गुणकः

करणस्थान लेखनविधिः-

नव रेखालिखेदूर्ध्वास्तिर्यग्रेखास्त्रयोदश ।
तदा तु षण्णवतिः स्युः ग्रहयोगे पदानि च ॥७४॥

नव रेखा ऊर्ध्वाधर (खड़ी) और तेरह रेखा आड़ी (तिरछी) लिखने से ९६ कोष्ठ का चक्र ग्रहों के योग के लिये बन जाते हैं।।७४।।

तस्याशुभस्य विन्यस्य चाष्टवर्गं ततः क्रमात् ।
त्रिकोणैकाधिपस्यास्य कुर्याच्छोधनकं बुधः ॥७५॥

पूर्वोक्त अशुभ सूर्य चन्द्र चतुर्थ और पंचम में सम्पर्क रखनेवाले पूर्वोक्त पापग्रहों का अष्टवर्ग रखकर त्रिकोण और एकाधिपत्य शोधन करें। त्रिकोण स्थान ३ होते हैं अर्थात् १।५।९ इसी का संशोधन करना।।७५।।

इति पाराशर होरायामुत्तरभागे प्रथमोध्यायः।

अथ द्वितीयोऽध्यायः

भावसाधनम् –

लग्नं सुखात् सुखं कामात् कामं खात् खं च लग्नतः ।
त्र्यंशमेकद्विगुणितं युज्याल्लग्नादिषु क्रमात् ।।१।।

लग्न को सुख भाव से घटाना, सुख भाव को सातवें भाव से, सातवें भाव को दशम भाव से और दशम भाव को लग्न से घटाकर शेष का तृतीयांश लेकर क्रम से १ और २ से गुणकर पूर्व के भावों में जोड़ने से आगे के दो भाव हो जाते हैं। अर्थात् लग्न को सुखभाव से घटाकर शेष का तृतीयांश एक से गुणकर लग्न में जोड़ने से द्वितीय भाव और तृतीयांश को २ से गुणकर लग्न में जोड़ने से तृतीय भाव होता हैं।।१।।

पूर्वापरयुतेरर्धं संधिः स्याद्भवयोर्द्वयोः ।
एवं द्वादशभावास्तु भवन्ति च ससन्धयः ।।२।।

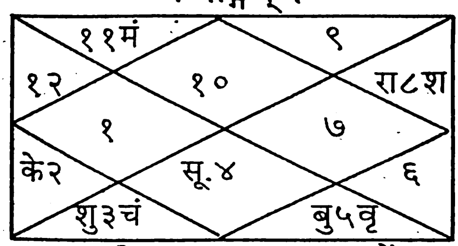
पूर्वभाव और आगे के भाव का योग कर आधा करने से भाव का संधि होती है। इस प्रकार संधि के सहित १२ भाव होते हैं।।२।।

उदाहरण–जैसे संवत् २०१३ श्रावण कृष्ण १३ शनिवासरे पुनर्वसुभे प्रथमचरणे इष्टम ३२।२८।३० जन्मलग्नम् ९।१७।५०।१४।

स्पष्टग्रह ।

सू.	चं	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
३	२	१०	४	४	२	७
१८	२२	१२	५	१२	२	३
२६	३०	३२	२२	५	३	४०
३४	४७	८	५९	५०	५	५२

जन्माङ्गम् ।



भावस्पष्ट का उदाहरण– सुख भाव राश्यादि १।१।२९।४ इसमें लग्न राश्यादि ९।१७।५०।१४ को घटाया तो शेष ३।१३।३८।५० शेष रहा इसमें तीन से भाग देने से लब्धि राश्यादि १।४।३२।५६ हुई इसे लग्न में जोड़ने से राश्यादि १०।२२।२३।१० घनभाव हुआ। पुनः लब्धि को २ से गुणा देने से राश्यादि २।९।५।५३।२० हुआ इसे लग्न में जोड़ने से राश्यादि ११।२६।५६।७ यह सहजभाव हुआ। लग्न और धनभाव को जोड़कर आधा करने से ४।५।६।४२ यह दोनों भावों के बीच की संधि हुई। इसी प्रकार अन्य भावों का भी साधन करना चाहिये। लग्न से ६ भावों में ६ राशि जोड़ने से शेष ६ भाव और उनकी संधियां हो जाती हैं शेष चक्र में स्पष्ट है।

त.	स.	ध.	सं.	स.	सं.	सु.	सं.	सु.	सं.	रि.	सं.
९	१०	१०	११	११	८	१	१	१	२	२	२
१७	५	२२	९	२६	१४	१	१४	२६	९	२२	५
५०	६	२३	३९	५६	१२	२९	१३	२६	३९	२३	६
१४	४२	१०	३९	७	३५	४	३५	३९	३९	१०	४२
मा	**सं.**	**मृ.**	**सं.**	**ध.**	**सं.**	**क.**	**सं.**	**आ**	**सं.**	**व्य.**	**सं.**
३	४	४	५	५	६	७	७	७	८	८	९
१७	५	२२	९	२६	१४	१	१४	२६	९	२२	५
५०	६	२३	३९	५६	१२	२९	१२	५६	३९	२३	६
१४	४२	१०	३९	७	३५	४	३५	७	३९	१०	४२

नैसर्गिकमैत्रीचक्रम्।

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ग्रहा:
चं. मं. बृ.	सू. बु.	सू. चं. बृ.	सू. शु.	सू. चं. मं.	बु. श.	बु. शु.	मित्राणि
बु.	मं. बृ. शु. श.	शु. श.	मं. बृ. श.	श.	मं. बृ.	बृ.	समा:
शु. श.	०	बु.	चं.	बु. शु.	सू. चं.	सू. चं. मं.	शत्रव:

तात्कालिकमैत्रीचक्रम्।

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	
चं. बु. बृ. शु.	सू. बु. बृ. श.	श.	सू. चं. बृ. शु. श.	सू. चं. बु. शु. श.	सू. चं. बु. बृ.	मं. बु. बृ.	मित्राणि
मं. श.	मं. शु.	सू. चं. बु. बृ. शु.	मं. बु.	मं.	मं. श.	सू. चं. शु.	शत्रव:

पंचधामैत्रीचक्रम्।

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ग्रहा:
चं. बृ.	सू. बृ.		सू. शु.	सू. चं.	बु.	बु.	अधि मित्राणि
बु.	बृ. शु.		चं. बृ. श.	श.	मं. बृ.	बृ.	मित्राणि
मं. शु.		सू. चं. बृ. श.	श.	मं. बु. शु.	सू. चं. शु.	मं. शु,	समा:
	मं.	शु.					शत्रव:
श.	श.	बु.				सू. चं.	अधि-शत्रव:

अथ दृष्टिवलसाधनम् –

दृश्याद्विशोध्य द्रष्टारं षड्राशिभ्योऽधिकंभवेत् ।
दिग्भ्यो विशोध्य द्वाभ्यां तु भागीकृत्य चदृष्टयः ।।३।।

जो ग्रह जिस ग्रह को देखता है उसे द्रष्टा कहते हैं, जिसे देखता है उसे दृश्य कहते हैं। दृश्य ग्रह में द्रष्टाग्रह को घटा देना शेष राशि स्थान में ६ से अधिक बचे तो उसे १० में घटाकर शेष में दो से भाग देने से-दृष्टि होती है।।३।।

द्रष्टाग्रह।

	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
सू.	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ४५ ४५
चं.	० ० ०	० ० ०	० २० २	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ३५ ६
मं.	० ४७ ५८	० ५० ०	० ० ०	० ५६ २६	० ५९ २२	० २४ ४६	० ५६ ५
बु.	० ० ०	० ६ २६	० ४५ ४१	० ० ०	० ० ०	० १८ ५९	० ५४ ३६
बृ.	० ० ०	० १० १०	१ ० ०	० ० ०	० ० ०	० २५ ४७	० ३९ ४०
शु.	० ० ०	० ० ०	० ४० २९	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ४५ १८
श.	० ३७ ५२	० ० ०	० १९ ५६	० ४२ १७	० ११ ०	० ० ०	० ० ०
शुभ-योग	० ० ०	० १६ ३६	२ ४६ १२	० ० ०	० ० ०	० ५० ६	२ ३४ ४१
पाप-योग	१ २५ ५०	० ५० ०	० १९ ५६	१ ३८ ४३	१ १० २२	० २४ ४६	१ ४१ ५०

दृग्वलचक्र।

सू.	चं.	मं.	बु.	वृ.	शु.	श.	ग्रह
०	०	०	०	०	०	०	अश
२१	८	३३	९	१७	६	१८	क.
२७	२१	४८	४१	३५	२०	१३	विक
ऋ.	ऋ.	ध.	ऋ.	ऋ.	ध.	ध.	सं.

शराधिके विनाराशिं भागाद्द्विघ्नाश्च दृष्टयः ।
वेदाधिके त्यजेद्भूताद्भागादृष्टिस्त्रिभाधिके ।।४।।

यदि शेष ५ से अधिक बचे तो राशि को छोड़कर शेष अंशादि को दूना करने से दृष्टि होती है। चार से अधिक शेष वचे तो ५ में घटा दे शेष राशि को छोड़कर अंशादि दृष्टि होती है।।४।।

विशोध्यार्णवतो द्वाभ्यां लब्धस्त्रिंशद्युतं भवेत् ।
कराधिके विनाराशिं भागास्तिथियुतं भवेत् ।।५।।

यदि शेष तीन से अधिक बचे तो उसे चार राशि में घटाकर दो से भाग देकर लब्ध में ३० जोड़ देने से दृष्टि होती है। शेष दो से अधिक हो तो राशि को छोड़कर अंश में १५ जोड़ देने से दृष्टि होती है।।५।।

रूपाधिके बिना राशिं भागा द्वाभ्यांविभाजिताः ।
त्रिदशे च त्रिकोणे च चतुरस्त्रे क्रमादथ ।।६।।
शरवेदा खरामाश्च तिथयो योजिताः क्रमात् ।
शनिदेवेज्य भौमानामादौ दृष्टिः स्फुटा भवेत् ।।७।।

यदि द्रष्टा दृश्य का अन्तर एक से अधिक हो तो राशि को छोड़कर अंशादि को २ से भाग देने से लब्धि तुल्य दृष्टि होती है। शनि की तृतीय दशम दृष्टि हो तो ४५, गुरु के त्रिकोण दृष्टि में ३० और मंगल के चतुरस्त्र (४।८) दृष्टि में दृष्टि फल में १५ और जोड़ देने से स्पष्ट दृष्टि होती है।।६-७।।

उदाहरण– जैसे द्रष्टा सूर्य राश्यादि ३।१८।२६।३४ दृश्य भौम राश्यादि १०।१२।३२।८ दृश्य में द्रष्टा को घटाने से शेष राश्यादि ६।२४।५।३४ हुआ यह ६ से अधिक है अतः इसे १० में घटाने से शेष राश्यादि ३।५।५४।२६ हुआ राशि का अंश बनाकर अंश जोड़कर २ से भाग देने लब्धि ०।४७।५८ यह भौम पर सूर्य की दृष्टि हुई इसी प्रकार अन्य ग्रहों का दृष्टि साधन करना शेष चक्र से स्पष्ट है।

उच्चबल साधन।

नीचोनं तु ग्रहं भार्धाधिके चक्राद्विशोधयेत् ।
भागीकृत्य त्रिभिर्भक्तं फलमुच्चबलं भवेत् ।।८।।

ग्रहं में उसके नीच राश्यादि को घटाकर शेष ६ राशि से अधिक हो तो १२ राशि में घटाकर शेष का अंश बनाकर उसमें तीन का भाग देने से फल उच्चवल होता है।।८।।

उदाहरण– जैसे सूर्य राश्यादि ३।१८।२६।३४ इसका नीच राश्यादि ६।१० है इसको सूर्य में घटाने से शेष राश्यादि ९।८।२६।३४ वचा यह ६ राशि से अधिक इसलिये इसे १२ राशि में घटाने से शेष २।२१।३३।२६ वचा इसमें राशि का अंश बनाकर ३ से भाग देने से २७।११।८ यह सूर्य का उच्चबल हुआ शेषचक्र में स्पष्ट है।

उच्चबलचक्र।

सू.	चं.	म.	बु.	बृ.	शु.	श.	ग्रह
०	०	०	०	०	०	०	अंश
२७	४३	५५	४६	४९	३८	५५	कला
२१	३०	८	४७	५२	१९	४६	विक

सप्तवर्गज बल साधन

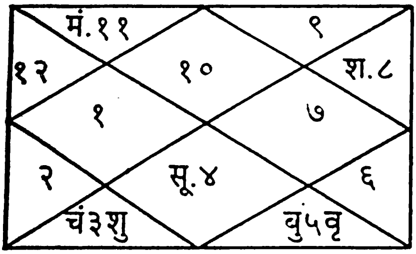
मूलत्रिकोणस्वर्क्षाधिमित्रमित्रसमारिषु ।
अधिशत्रुगृहे चापि स्थितानां क्रमशोबलम् ।।९।।
भूताब्धयः खरामाश्च नखास्तिथिर्दिशो युगाः ।

ग्रह अपने मूलत्रिकोण राशि में हो तो ४५, अपने राशि में हो तो ३०, अपने अधिमित्र की राशि में हो तो २०, अपने मित्र की राशि में हो तो १५, सम की राशि में हो १०, शत्रु की राशि में हो तो ४ और अधिशत्रु की राशि में हो तो २ बल प्राप्त करता है।।९।। स्पष्टार्थ चक्र को देखिये।

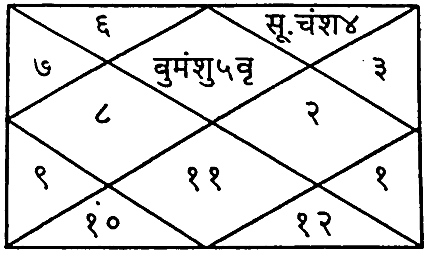
सप्तवर्गजबलचक्र।

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ग्रहाः
१५ ०	१० ०	१० ०	२० ०	२० ०	१० ०	१० ०	ग्रहबल
२० ०	३० ०	१० ०	२० ०	२० ०	१० ०	२ ०	होराबल
१० ०	२ ०	२ ०	२९ ०	३० ०	२० ०	१० ०	द्रेष्काबल
१० ०	४ ०	३० ०	३० ०	१० ०	२० ०	१० ०	सप्तमांबल
२० ०	४ ०	१० ०	२० ०	२० ०	३० ०	२ ०	नवमांबल
२ ०	१५ ०	१० ०	२० ०	१५ ०	२० ०	१५ ०	द्वादशांबल
१५ ०	२० ०	१० ०	१५ ०	३० ०	१५ ०	१० ०	त्रिंशांशबल
४३ ०	९५ ०	८२ ०	१४५ ०	१४५ ०	१३५ ०	५९ ०	वलैक्यबल

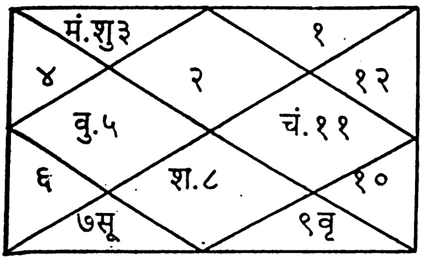
गेहाङ्गम्।



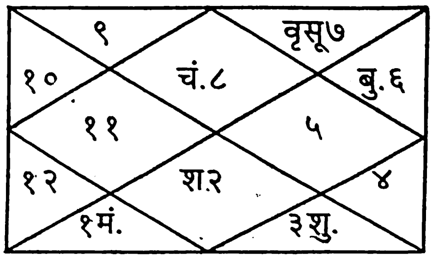
होराङ्गम्।



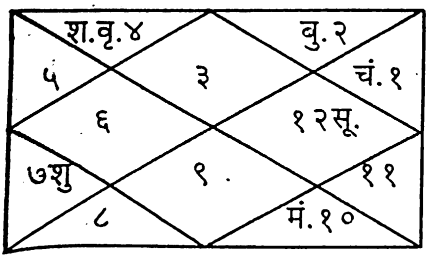
द्रेष्काणाङ्गम्।



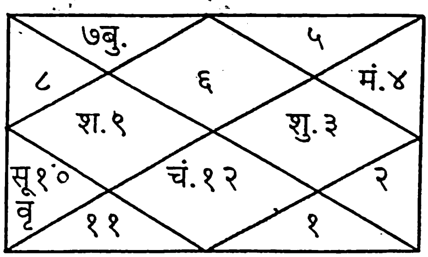
सप्तमांशांगम्।



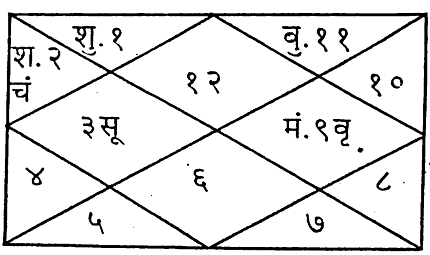
नवमांशांगम्।



द्वादशांगम्।



त्रिंशांशांगम्।



युग्मायुग्मबल–

द्वाविन्दुशुक्रौ युग्मांशे तिथिरोजांशगाः परे ।।१०।।

चन्द्रमा और शुक्र समराशि या समराशि के नवांश में हों तो १५ बल अर्थात् दोनों में हो तो ३० बल पाते हैं, अन्य ग्रह सूर्य, भौम, वुध, गुरु, शनि ये विषम राशि या विषम राशि के नवांश में हों तो १५ बल पाते हैं।।१०।।

युग्मायुग्मबलचक्र।

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ग्रह
०	०	०	०	०	०	०	अंश
१५	०	१५	१५	१५	०	१५	कला
०	०	०	०	०	०	०	विकला

केन्द्रादि द्रेष्काणबल–

केन्द्रादिषुस्थिता लग्नात्षष्टिस्त्रिंशत्तिथिः क्रमात् ।
आदिमध्यावसानेषु द्रेष्काणेषु स्थिताः क्रमात् ।।११।।

केंन्द्रादि अर्थात् केन्द्र, पणफर, आपोक्लिम में ग्रह हो तो क्रम से ६०, ३० १५ बल पाता है।।११।।

पुंन्नपुंसकस्त्रीषाख्या दद्युस्तिथिबलं ग्रहाः ।
स्वषड्वर्गगतास्त्रिंशदेवं स्थानबलं विदुः ।।१२।।

पुरुष ग्रह (सूर्य, भौम, गुरु) प्रथम द्रेष्काण में, नंपुसक ग्रह (बुध, शनि) दूसरे द्रेष्काण में और स्त्रीग्रह (चंद्र, शुक्र) तीसरे द्रेष्काण में १५ बल पाते हैं।

विशेष– यदि ग्रह अपने षड्वर्ग में हों तो द्रेष्काण में ३० बल पाता है। इस प्रकार पूर्व के सभी बलों को मिलाने से ग्रह का स्थान बल होता है।।१२।।

केन्द्रादिबलचक्र।

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
१	०	०	०	०	०	०
०	१५	३०	३०	३०	१५	३०
०	०	०	०	०	०	०

द्रेष्काणबलचक्र।

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
०	०	०	०	०	०	०
०	१५	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०

उच्चबल + सप्तवर्गजबल + युग्मायुग्मबल + केन्द्रादिबल + द्रेष्काणबल = स्थान बल।

स्थानबलचक्र।

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ग्रह
२	२	२	३	३	३	२	अंश
२५	४८	५७	५६	५९	८	२४	कला
११	३०	८	४७	५२	१९	४०	विकला

दिग्बल।

अर्कात्कुजात्सुखं जीवाज्ज्ञाच्चास्तं लग्नमार्कितः ।
मध्यलग्नं भृगोश्चंद्राद्धित्वा षड्भाधिके सति ।।१३।।
चक्राद्विशोध्य रामाप्तं भागीकृत्य च तद्बलम् ।

सूर्य और मंगल से सुखभाव को, गुरु और बुध से सप्तम भाव को, शनि से लग्न को, शुक्र और चन्द्र से दशम लग्न को घटाकर शेष ६ राशि से अधिक हो तो।।१३।।

इसको १२ राशि में घटाकर शेष का अंश कर ३ से भाग देने से दिग्बल होता है।।१३।।

दिग्बलचक्र।

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ग्रह
१५	४२	२६	५	८	४९	२५	अंश
३९	५९	१८	५०	२०	४८	३	कला
१०	२५	५८	५५	१४	३९	७	विकला

कालबल नतोन्नबल।

आमध्याह्नादर्धरात्राद्दिवारात्रिरिति क्रमात् ।।१४।।
अर्कभार्गवसूरीणांद्विघ्ना नाड्योगता दिवा ।
भौमचन्द्रशनीनां तु षष्ठिभ्यो वर्जयेदिमाः ।।१५।।

मध्याह्न से अर्धरात्रि के अन्दर इष्टकाल हो तो नत को दूना करने से सूर्य, शुक्र और गुरु का नतबल होता है और इसे ६० में घटाने से मंगल, चन्द्र, शनि का दिवाबल होता है। अर्धरात्रि से मध्याह्न के अंतर का इष्टकाल हो तो उन्नत घटी का दूना करने से चन्द्र, मंगल शनि का रात्रिबल होता है और इसे ६० में घटाने से सूर्य, शुक्र, गुरु का रात्रिबल कलात्मक होता है और बुध का सदैव १ अंशबल होता है।।१४-१५।।

उदाहरण– नतकाल १३।१३।३० को २ से गुण देने से २६।२७ यह चन्द्रमा, भौम शनि का बल हुआ और उन्नत घट्यादि १६।४७।३० को दो से गुण देने से सूर्य, गुरु, शुक्र का बल हुआ शेष चक्र में स्पष्ट है।

नतोन्नतबल।

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ग्रह
०	०	०	१	०	०	०	अंश
३३	२६	२६	०	३३	३३	२६	कला
३५	२७	२७	०	३५	३५	२७	विक.

पक्षबल–

दिवावलमिति प्रोक्तं बलं नैशं ततोऽन्यथा ।
षष्टिरेव सदाज्ञस्य चन्द्रादर्कं विशोध्य च ।।१६।।
अङ्गाधिके विशोध्यार्काद्भागीकृत्य त्रिभिर्भजेत् ।
पक्षकंबलमिन्दुज्ञशुक्रार्याणां तु षष्ठितः ।।१७।।

चन्द्रमा में सूर्य को घटा दे यदि शेष ६ राशि से अधिक हो तो उसे १२ में घटाकर शेष का अंश वनाकर ३ से भाग देने से लब्ध चन्द्र, बुध, शुक्र और गुरु का पक्षबल होता है और इसे ६० में घटा देने से शेष ग्रह-सूर्य, भौम और शनि का पक्षबल होता है।।१६-१७।।

उदाहरण– १।२२।३०।४७ में सूर्य २।१८।२६।३४ को घटाने से शेष ११।४।४।१३ यह ६ राशि से अधिक है इसलिये इसे १२ में घटाकर शेष ०।२५।५५।४७ में ३ का भाव देने से ०।३८।३५ यह चन्द्र, बुध, शुक्र और गुरु का पक्षबल हुआ। इसे ६० में घटाने से शेष ०।२१।२५ यह सूर्य भौम शनि का पक्षबल हुआ।

पक्षबलचक्र।

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ग्रह
०	०	०	०	०	०	०	अंश
२१	३८	२१	३८	३८	३८	२१	कला
२५	३५	२५	३५	३५	३५	२५	विक.

दिवारात्रित्रिभागबल–

हित्वामन्येषामहोमानं त्रिभागीकृत्य यत्र तु ।
जन्मलग्नतदंशाधिपतेः षष्ठिबलं भवेत् ।।१८।।
आधाने चित्प्रवेशे तु त्रिंशद्भूतार्णवा वलम् ।
ज्ञार्कमन्देंदुशुक्राराः पतयः सर्वदागुरुः ।।१९।।

अहोरात्र अर्थात् दिन और रात्रि का तीन-तीन भाग करने से ६ भाग होता है इन ६ भागों के अधिपति क्रम से बुध, सूर्य, शनि, चन्द्र, शुक्र और भौम होते हैं। अंशाधिपति अर्थात् जिस भाग में जन्मलग्न हो उसके स्वामी का ६० कला बल होता है। गर्भाधान में ३० और चैतन्य प्रवेश में ४५ बल होता है और गुरु का

सर्वदा १ अंश बल होता है, शेष चक्र से स्पष्ट है।।१८-१९।।

दिवारात्रित्रिभागबलचक्र।

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ग्रह
०	१	०	०	१	०	०	अंश
०	०	०	०	०	०	०	कला
०	०	०	०	०	०	०	विक.

वर्षामासदिनहोरेशबल–

वर्षमासदिनेशानां तिथि स्त्रिंशच्छरार्णवाः ।
कालहोराधिपस्यैवं पूर्णं बलमुदाहृतम् ।।२०।।

वर्ष-मास, दिन के स्वामियों का क्रम से १५, ३०, ४५ बल होता है और कालहोरेश का पूर्ण १ अंश बल होता है। पूर्व के सभी ४ बलों का योग करने से कालबल होता है।।२०।।

वर्षेशादि साधन

शके १८७८ श्रावण कृष्ण १३ शनिवार को कलियुगादि अहर्गण साधन।

१८७८ + ३१७९ = ५०५७ गतकलि:

```
   १२×
 ६०६८४ —मास
     ३ —गतमास
 ६०६८७
```

```
७०)६०६८७(८६६
   ५६०
    ४६८
    ४२०
     ४८७
     ४२०
      ६७
```

```
     ६०६८७
       ८६६
३३)६१५५३(१८६५
   ३३
   २८५
   २६४
    २१५
    १९८
     १७३
     १६५
       ८
```

```
       ६०६८७
        १८६५
       ६२५५२
          ३०
     १८७६५६०
          २७ गति
     १८७६५८७
         ×११
७०३)२०६४२४५७(२९३६३
    १४०६
    ६५८२
    ६३२७
    २५५४
    २१०९
    ४४५५
    ४२१८
    २३७७
    २१०९
     २६८
```

```
१८७६५८७
  २९३६३
१८४७२२४
      १
१८४७२२५ अहर्गणः।
```

वर्षेश-मासेश साधन।

$\frac{\text{अहर्गण—३७३}}{\text{२५२०}} = \text{ल + शे}$ $\frac{\text{शेष}}{\text{३६० ल.।}}$ $\frac{\text{शेष}}{\text{३० =}}$

$\frac{\text{ल×३+१}}{\text{७}} = \text{शेष} = \text{वर्षेश}$

$\frac{\text{ल×२+१}}{\text{१२}} = \text{शेष} = \text{मासेश}$

इसके अनुसार

```
       १८४७२२५
           ३७३
२५२०)१८४६८५२(७३२     ३६०)२२१२(६      ३०)२२१२(७३०ल.
     १७६४०                २१६०          २१०
     ८२८५                   ५२          ११२
      ७५६०                                ९०
      ७२५२                                २२
      ५०४०
      २२१२ शेष
```

$\frac{\text{६×३+१}}{\text{७}} = \text{५ वर्षेश = गुरु}$

$\frac{\text{७३×२+१}}{\text{१२}} = \text{३ मासेश = भौम}$

इस प्रकार से वर्षेश गुरु और मासेश भौम हुये। जिस दिन जन्म होता है वही वारेश होता है।

कालहोरेश साधन

उक्त दिन बार प्रवृत्ति सूर्योदय के बाद २ घटी १२ पल पर हुई है अत: बार प्रवृत्ति से इष्ट घटी ३०।१६ हुआ।

$\frac{\text{(३०।१६ × २)}}{\text{५}} = \text{ल. = १२, शे. = ०।३२}$

$\frac{\text{(६०।३२ - ०।३२ + १)}}{\text{७}} = \text{५७}$ दिनपति से ५ वाँ भौम काल होरेश हुआ।

वर्षेशादिबलचक्र।

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ग्रह
०	०	१	०	०	०	०	अंश
०	०	३०	०	१५	०	४५	कला
०	०	०	०	०	०	०	विकला

नतोन्नतबल + पक्षबल + त्रिभागबल + वर्षेशादिबल = कालबल।

कालबलचक्र।

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ग्रह
०	१	२	१	२	१	१	अंश
५४	५४	१७	३८	२७	१२	३२	कला
५०	५२	५२	२५	०	०	५२	विकला

अयनबलसाधन–

आधाने चित्रवेशे तु त्रिंशच्छरजलकराः ।
सायनांशग्रहभुजराशीनिष्वब्धिभिः सुरैः ।।२१।।
सूर्यैर्हत्वा क्रमाद्राशिभागः स्यादनुपाततः ।
एवं राश्यादिके युंज्यादर्करार्योशनः सु च ।।२२।।
राशित्रयमथो युंज्यान्मेषादिस्थेषु तेष्वथ ।
तुलादिस्थेषु राश्यादींस्त्रिराशिभ्यस्तु वर्जयेत् ।।२३।।
चन्द्रार्क्योर्विपरीतं स्यात्सदा युंज्याद्बुधस्य तु ।
भागीकृत्य त्रिभिर्भक्तं ग्रहाणामयनं बलम् ।।२४।।

अयनांश युत ग्रह के भुज राशि के तुल्य ध्रुवांक से ४५।३३।१२ गुण कर ३० से भाग देकर लब्धि में गतखंड को जोड़कर राश्यादि बनाकर तुलादि ६ राशि में ३ घटा देना मेषादि ६ राशि में हो तो ३ जोड़ देना। परन्तु चन्द्र शनि में विलोम करना अर्थात् तुलादि में जोड़ना और मेषादि में घटाना, बुध में सर्वदा ३ राशि जोड़ना और अंश करके ३ से भाग देने से अयनबल होता है किन्तु सूर्य के बल को दूना करने से अयन बल होता है। २१+२४।

उदाहरण– सूर्य ३।१८।२६।३४ इसमें अयनांश २१।५१।१८ जोड़ने से ४।१०।१७।५२ हुआ इसका भुज बनाने से १।१९।४२।८ हुआ, यहाँ पूर्वोक्त नियम के अनुसार १ राशि का ध्रुवांक ३३ प्राप्त हुआ, इससे अंश कला विकला को गुण देने से ६५१।६।२४ हुआ इसमें गतखंड ४५ को जोड़ देने से ९६।६।२४ इसका राशि कर शेषादि में होने से ३ राशि जोड़कर राशि के अंश बनाकर इसमें ३ का भाग देने से लब्ध ६२।२।२ यह सूर्य का अयन बल हुआ इसी प्रकार अन्य ग्रहों का भी साधन करना।

अयनबलचक्र।

सू.	चं.	बं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ग्रह
१२४	१	१७	४६	४२	५९	५३	अंश
४	५१	११	०	३८	११	५९	कला
४४	३०	४३	४५	५०	१५	४७	विकला

युद्धादिबल–

रवेर्द्विगुणमेवं स्याद्युध्यतोर्ग्रहयोरथ ।
विश्लेषं बलयोश्चापि निर्जितस्य बलं भवेत् ।।२५।।
अपनीते योजिते तु जितस्य च बलं भवेत् ।

ग्रहयुद्ध का लक्षण–जन्मकाल में भौमादि ग्रहों में जो दो ग्रह राशि अंश कला विकलादि से आपस में तुल्य हों उनका परस्पर युद्ध होता है। ऐसे युद्ध करने वाले दोनों ग्रहों के वलैक्य का अंतर करना जिसका वल अधिक हो वह विजयी और जिसका वल कम हो वह निर्जित अर्थात् पराजित कहा जाता है।बलैक्य में अंतर के अंक को घटाने से दक्षिण दिशा के निर्जित ग्रह का बल होता है। और जित ग्रह के वलैक्य में अंतर को जोड़ने से जित ग्रह का उत्तर दिशा का वल होता है।

गतिबल–

षष्टिवक्रगतेवीर्यमनुवक्रगतेदलम् ।।२६।।
पादं विकलभुक्तेः स्याद्दलमेव समागमे ।
पादं मंदगतेस्तस्य दल मन्दतरस्य च ।।२७।।
शीघ्रभुक्तेस्तु पादोनं दलशीघ्रतरस्यतु ।

वक्रगति का ६० बल, मार्गीगति का ३० बल, सूर्य के साथवाले ग्रह का १५ वल, चन्द्र के साथवाले ग्रह का ३० बल, मंदगति ग्रह का १५ बल, पूर्व से अल्पगति वाले ग्रह का ७।३० वल, शीघ्रगति ग्रह का ४५ बल और अतिशीघ्र गति वाले ग्रह का ३० बल होता है।।२७।।

चेष्टाबल–

मध्यमस्फुटविश्लेषदलयुक्तोनितं स्फुटात् ।।२८।।

मध्यम ग्रह और स्पष्ट ग्रह के अंतर का आधा कर मध्यम ग्रह में यदि मध्यम ग्रह स्पष्ट ग्रह से अधिक हो तो जोड़ देना, अन्यथा यदि मध्यम ग्रह स्पष्ट ग्रह से न्यून हो तो मध्यम ग्रह में अंतरार्ध को घटा देना।।२८।।

मध्यमे त्वधिके न्यूने शीघ्रादत्रास्फुटं त्यजेत् ।
चेष्टाकेन्द्रं भखेटानां रवींद्वोरयनांशयुक् ।।२९।।

इसे शीघ्रोच्च में घटा देने से शेष चेष्टाकेन्द्र होता है किन्तु यह विधि तारा ग्रह भौमादि के लिये ही है।।२९।।

अंगाधिकेऽर्कात्संशोध्य भागीकृत्य त्रिभिर्भजेत् ।
सूर्यचन्द्रौ सत्रिराशी कृत्वा प्रोक्तविधिस्तथा ।।३०।।
एवं चेष्टाबलं प्रोक्तं नैसर्गिकमथो शृणु।

और चेष्टाकेन्द्र ६ राशि से अधिक हो तो १२ राशि में घटाकर अंशादि बनाकर ३ से भाग देने से चेष्टा बल होता है। रवि चन्द्र के चेष्टा केन्द्र ६ राशि से अधिक होते हुये भी ३ राशि और अयनांश जोड़कर १२ राशि में घटाकर शेष विधि यथावत् करने से चेष्टा बल होता है।।३०।।

उदाहरण– संवत् २०१३ श्रावण कृष्ण १३ शनौ अहर्गण: २७५० चक्रम् ३९ इस पर से इष्टकालिक मध्यम ग्रह निम्नलिखित हैं।

इष्टकालिक मध्यमग्रह

सू.	चं.	मं.	बु.के.	बृ.शु.	के.	श.
३	२	१०	१	४	६	७
१९	२४	३	१०	१५	२८	५
३९	१४	४३	८	११	४६	१
१५	५७	३४	११	३२	२	४२

इष्टकालिक स्पष्टग्रह

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
३	२	१०	४	४	२	७
१८	२२	१२	५	१२	२	२
२६	३०	३२	२२	५	३	४०
३४	४७	८	५९	५४	५	५२

भौम आदि के शीघ्रोच्च

मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
३	४	३	६	३
१९	२९	१९	१७	१९
३९	४७	३९	२०	३९
४५	१२	४५	२	४५

अयनांश = २१।५१।१८

स्पष्ट भौम = १०।१२।३२।८
मध्य भौम = १०।२।४२।३४ दोनों अंतर करने से
राश्यादि = ०।९।४९।३४ इसका आधा
= ०।४।५४।४७

मध्यमग्रह में अंतरार्ध को घटाने से १०।२।४२।३४
०।४।५४।४७
शेष = ९।२७।७।४७ इसे
३।१९।३९।४५
शीघ्रोच्च में घटाने से ५।२१।५१।५८ चेष्टाकेन्द्र हुआ

इसका अंश बनाकर ३ से भाग देने से ३)१७१।१७।५८(५७।१७।१९

यह भौम का अंशादि चेष्टाबल हुआ। इसी प्रकार अन्य ग्रहों का भी चेष्टावल साधन करना चाहिये।

मध्यम चेष्टाबलचक्र

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ग्रह
४५	५०	५७	१०	८	२७	३४	अंश
५७	२०	१७	४५	७	८	४०	कला
२७	३३	१९	१६	२	१२	४७	विक.

अयनबल + चेष्टाबल = स्पष्ट चेष्टाबल

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
१७०	५२	७४	५६	५३	८६	८८
१	१२	२८	४६	४५	१९	४०
३१	३	४९	१	५३	२७	३४

नैसर्गिकबल–

षष्ठिरेकेषवः सप्तदश षड्विंशतिस्ततः ।।३१।।
चतुस्त्रिंशस्त्रिवेदांकाः सूर्यादीनांनिसर्गजाः ।

सूर्यादि का क्रम से ६०।५१।१७।२६।३४।४३।९ नैसर्गिक (स्वाभाविक) बल होता है।।३१।।

नैसर्गिकबलचक्र।

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
१	०	०	०	०	०	०
०	५१	१७	२६	३४	४३	९
०	०	०	०	०	०	०

ग्रहों का षड्बलैक्य–

शुभपापदृगब्ध्यंशयुतहीनाग्नितानि च ।।३२।।
षड्बलानि ग्रहाणां स्युरेवमेकीकृतानि तु ।

पूर्वोक्त पाँच बलों (स्थानबल, कालबल, दिग्बल, निसर्गवल, चेष्टाबल) के योग में शुभग्रह पापग्रह के दृष्टियोग के चतुर्थांश को जोड़ने और घटाने से (शुभग्रह का दृष्टियोग पापग्रह के दृष्टियोग से अधिक हो तो धन करना अन्यथा ऋण करना) स्पष्ट षड्वलैक्य होता है।।३२।। शेष चक्र से स्पष्ट है।

षड्वलैक्यचक्र।

सू.	चं.	म.	बु.	बृ.	शु.	श.	ग्रह
३ १५ ११	२ ४८ ३०	३ ५ ०	३ ५६ ४७	३ २९ ५२	२ ५१ ४१	१ ३३ ११	स्थान बल
१ ३२ १४	१ २७ ४८	० २७ ४७	१ १ २१	१ ३४ ५६	१ १९ ५६	२ ५५ ६	काल बल
० १५ ३९	० ४२ ५४	० २६ १८	० ५ ५	० ८ २०	० ४९ ४८	० २५ ३	द्रेष्काण बल
१ ४३ ५०	१ ५२ ४१	१ १४ २८	० ५६ ४५	० ५० ५५	१ ३६ १८	१ २८ ३९	दिग्बल
१ ० ०	० ५१ ०	० १७ ०	० २३ ०	० ३४ ०	० ४३ ०	० ९ ०	चेष्टा बल
७ ४६ ५४	७ ४२ ५८	५ २७ ३६	६ २२ ४३	६ ३८ ७	७ २० ४४	६ ३१ १	निसर्ग बल
० २१ ३०ऋ.	० ८ २१ऋ.	० ३६ ४९ध.	० ९ ४१ध.	० १७ ३५ऋ.	० ६ २०ध.	० १८ १३ध.	दृग्बल
७ २५ २७	७ ३४ ३७	६ ४ २२	६ ० २	६ २० २८	७ २७ ४	६ ४८ २४	षड्बल

भावबल–

शुभदृष्टि चतुर्थांशं युतं स्वमार्यदर्शनैः ।।३२।।
हीनयुतं दृगब्ध्यंशैर्युतं स्वामिबलं भवेत् ।

जिन भावों के जो स्वामी हैं उनके जो शुभ पापग्रहों से दृष्टि का अंतर करके अंतर का चतुर्थांश करके शुभग्रह दृष्टि अधिक हो योग और पापदृष्टि अधिक हो तो अंतर करने से भावबल होता है।।३२।।

परन्तु यह उन्हीं भावों के स्वामियों के लिये है जिन पर वुध, गुरु की दृष्टि है।।३२।।

विशेषसंस्कारः–

गुरुज्ञाभ्यां तु युक्तस्य पूर्णमेकं तु योजयेत् ।।३३।।
मंदाररवियुक्तस्य बलमेकेन वर्जितम् ।

जिस भाव में गुरु और बुध होवै उस भावबल में १ जोड़ देना यदि शनि मंगल युत हों तो १ घटाने से भावफल होता है।।३३।।

कालविशेषे बलाधिक्यता–

दिवा शीर्षोदयाश्चैव संध्यामुभयोदयः ।।३४।।
नक्तं पृष्ठोदयाश्चैव बलाधिक्यम् उदीरिताः ।

दिन में जन्म हो तो शीर्षोदय राशि के भाव अर्थात् मिथुन, तुला, सिंह, कन्या, वृश्चिक, कुम्भ के भाव बली होते हैं। संध्या समय में उभयादय मीन राशि बलवान् और रात्रि में मेष, वृष, कर्क, मकर और धन ये बलवान् होते हैं।।३४।।

भानां दिग्बलम् –

नृयुग्मजूकपाथोनचापपूर्वार्धकुंभभात् ।।३५।।

भावबल विचार में यदि भाव में कन्या, मिथुन, तुला, कुम्भ और धन का पूर्वार्ध हो तो उसमें सप्तम भाव को।।३५।।

मृगचापपरार्धाख्यमेषसिंहवृषादपि ।
अलेः कर्कटकाच्चापि मृगांत्यार्धाच्चामीनभात्।।३६।।

यदि मकर का पूर्वाध और धन का उत्तरार्ध मेष, सिंह, वृष हो तो चतुर्थ भाव को, यदि वृश्चिक, कर्क हो तो उसमें लग्न को, यदि मकर का उत्तरार्ध और मीन हो तो उसमें दशम भाव को घटाकर।।३६।।

अस्तं सुखं क्रमाल्लग्नं खं हित्वांगाधिके सति ।
चक्राद्विशोध्यरामैश्च भजेद्भागीकृतं बलात् ।।३७।।
भावानां च ग्रहाणां च बलान्येवं विदुर्बुधाः ।

शेष ६ राशि से अधिक हों तो उसे १२ में घटाकर शेष का अंश बनाकर उसमें ३ से भाग देने से लब्धि भावबल होता है।।३७।।

इस प्रकार भाव ग्रहों का बल पण्डितों ने कहा है।

षड्बलैक्ये शुभाशुभादिकम् - .

नवाग्नयः सुराः खाग्निर्दशसंगुणिताः क्रमात् ।
रव्यादयः सुबलिनो राशीनां स्वामिनोवशात् ।।३८।।
अधिकं पूर्णमेवं स्याद्बलं चेद्बलिनो मताः ।

सूर्यादि ग्रहों के षड्बलैक्य ३९, ३६, ३०, ४२, ३९, ३३, ३० इनको १० से गुणा देने से क्रम से ३९०, ३६०, ४२०, ३९०, ३३०, ३०० इतना हो तो सूर्यादि सुबली इससे अधिक हो तो पूर्णबली होता हैं।।३८।।

स्थानादि बले पृथक् पृथक् सुबलित्वम् -

गुरुसौम्यरवीणां तु भूतषट्केंदवो द्विज ।।३९।।

गुरु, बुध, सूर्य के स्थानबल, दिग्बल, चेष्टाबल, कालबल और अयन बल में क्रम से १६५।।३९।।

पंचाग्नयः रवभूतानि करभूमिसुधाकराः ।
खाग्नयश्च क्रमात्स्थानदिक्चेष्टासमयायने ।।४०।।

३५, ५०, ११२, ३० इतने बल हो तो सुबली।।४०।।

सितेन्दवोरूयग्निचंद्राश्च खेषवः खाग्नयःशतम् ।
चत्वारिंशत् क्रमाद्भौममन्दयोः पण्णवक्रमात् ।।४१।।
त्रिंशतूवखवेदाः सप्तांगा नखाश्च बलिनोविदुः।

और शुक्र, चन्द्र, के १३३, ५०, ३०, १००, ४० हो तो सुबली, भौम और शनि के ९६।।४१।।

३०, ४०, ६७, २० हों तो सुबली होते हैं।।

भावफलदाताग्रह-

भावस्थानग्रहैः प्रोक्तयोगे ये योगहेतवः ।
तेषां बली यः कर्तासौ स एव फलप्रदः ।।४२।।
योगेष्वाप्तेषु बहुषु न्याय एवं प्रकीर्त्तितः ।

अनेक प्रकार के योग कहे गये हैं उनमें जिन-जिन ग्रहों से शुभ अशुभ योग होते हैं उनमें जो बलवान् हो और जिसका बल अधिक हो वही फल देता है।।४२।।

और वही योग का कर्त्ता या कारण होता है। इसी प्रकार अनेक योग एक ही भाव के हों तो इसी प्रकार से किसी एक से फल को कहना चाहिये।

अथैतच्छास्त्राधिकारिलक्षणम् –

गणितेषु प्रवीणश्च शब्दशास्त्रे कृतश्रमः ।
न्यायविद्बुद्धिमान् होरास्कंधश्रवणसम्मतः ।।४३।।

जो गणित शास्त्र में कुशल हो, व्याकरण में निपुण हो, न्यायशास्त्र को जानने वाला हो, बुद्धिमान्।।४३।।

दैयविद्देशिको देवसंमतो देशकालवित् ।
ऊहापोहपटुः प्राज्ञः पटुः स्वजनसंमतः ।।४४।।

साहित्य शास्त्र में कुशल हो, नित्य देवाराधन करने वाला हो, देश-काल को जानने वाला हो, तर्क और समाधान करने में समर्थ हो और स्वजनों के अनुकूल रहने वाल चतुर हो वह इस शास्त्र को पढ़ने और फल कहने का अधिकारी होता है।।४४।।

इति पाराशरहोरायामुत्तरभागेभावफलाद्यानयनेद्वितीयोऽध्यायः।

अथेष्टकष्टाध्यायः।

उच्चरश्मिसाधनम् –

नीचोनं तु ग्रहं भार्धाधिके चक्राद्विशोधयेत् ।
उच्चरश्मिर्भवेद्राशिः सैको द्विघ्नांशसंयुतः ।।१।।

ग्रह में उसके नीच को घटा देना शेष ६ राशि से अधिक हो तो उसे १२ राशि में घटाकर राशि में १ जोड़ देना और अंशादि को दूना कर राशि में जोड़ देना तो उच्चरश्मि होगी।।१।।

जैसे– सूर्य ३।१८।२६।३४ इसमें सूर्य का नीच ६।१० घटाने से शेष ९।८।२६।३४ शेष रहा यह ६ राशि से अधिक है इसलिये इसे १२ राशि में घटाने से शेष २।२१।३३।२६ शेष बचा यहाँ राशि में १ जोड़ने से ३ अंशादि को दूना कर इसमें जोड़ने से ३।४३।६।५२ यह सूर्य की उच्चराशि हुई इसी प्रकार सभी ग्रहों की उच्चरश्मि साधन करना चाहिये।

उच्चरश्मिचक्र।

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
३	५	६	५	५	४	६
४३	२०	३०	४०	४४	४९	३४
६	५८	४७	४५	१८	५३	३८

चेष्टारश्मिसाधनम् –

सायनार्कः सत्रिभो इन्दुश्च भानुवर्जितः ।
चेष्टाकेन्द्रं कुजादीनां पूर्वाध्याये समीरितम् ।।२।।

सूर्य में अयनांश जोड़कर उसमें ३ राशि जोड़ने से सूर्य का चेष्टाकेन्द्र और चन्द्रमा में सूर्य को घटाने से चन्द्रमा का चेष्टाकेन्द्र होता है। और भौमादि का चेष्टाकेन्द्र पूर्वाध्याय में कहा ही हुआ है।।२।।

शुभाशुभरश्मिसाधनम् –

उच्चरश्मिवदानीय चेष्टारश्मिं द्वयोर्युतेः ।
दलं तु शुभरश्मिः स्यादष्टभ्यो वर्जितोऽशुभः ।।३।।

चेष्टाकेन्द्र पर से उच्चरश्मि साधन के तरह चेष्टारश्मि का साधन कर दोनों (उच्चरश्मि और चेष्टारश्मि) का योग कर आधा करने से जो आवे वह शुभरश्मि होती है और इसे ८ में घटाने से अशुभरश्मि होती है।।३।।

जैसे– सूर्य ३।१८।२६।३४ इसमें अयनांश २१।५१।१८ जोड़ने से ४।१०।१७।५२ सायन सूर्य हुआ इसमें ३ राशि जोड़ने से ७।१०।१७।५२ यह सूर्य का चेष्टाकेंद्र हुआ इस पर पूर्वोक्त रीति से ५।३९।२४ सूर्य की रश्मि हुई।।३।।

चेष्टारश्मिचक्र।

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	
५ ३९ २४	१ ३१ ५०	३ ५१ ४२	२ ४ ३०	१ ४८ ४२	४ ४२ ५६	४ २८ ४	चेष्टाकेन्द्र
४ ४१ ३०	३ २६ २४	५ ११ १४	३ ५२ ३७	३ ४६ ३०	४ ४६ २२	५ ३१ २१	शुभ रश्मि
३ १८ ३०	४ १३ ३६	२ ४८ ४६	४ ७ २२	४ १३ ३०	३ २३ ३८	२ २८ ३९	अशुभ रश्मि

इष्टकष्टसाधनम् –

उच्चचेष्टाकरौ व्येकौ दिग्भिर्हत्वा तु योजयेत् ।
दलयेदिष्टमन्यत्स्यात्षष्टिभ्यो वर्जितं फलम् ।।४।।

ग्रहों के उच्चरश्मि और चेष्टारश्मि में एक एक घटाकर १० से गुणा कर दोनों का योग कर आधा करने से इष्ट होता है इसे ६० में घटाने से कष्ट होता है।।४।।

जैसे– सूर्य की उच्चरश्मि ३।४३।६ में १ घटाकर १० से गुणा करने से २७।११।१० हुआ, चेष्टारश्मि ६।३९।३४ इसमें १ घटाकर १० से गुणा करने से ५६।३४।० हुआ दोनों का योग कर आधा करने से ४१।५२।३० यह सूर्य का इष्ट हुआ इसे ६० में घटाने से १८।७।३ कष्ट हुआ, इसी प्रकार सभी ग्रहों का इष्ट और कष्ट साधन करना चाहिये।

इष्टचक्रम्।

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
४१	२३	४१	१७.	१३	३७	४५
५	२४	५२	४	५२	४४	१३
३०	०	२५	२२	२०	५	३०

कष्टचक्रम्।

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
१८	३६	१८	४२	४६	२२	१४
७	३६	७	५५	७	१५	४६.
३०	०	३५	३८	३०	५५	३०

सप्तवर्गजशुभाशुभसाधनम् –

स्वोच्चे मूलत्रिकोणे च स्वर्क्षेधिसुहृदि क्रमात् ।
मित्रर्क्षे च समर्क्षे च शत्रुभेचातिशत्रुमे ।।५।।

ग्रह अपने उच्चराशि, मूलत्रिकोण, अपने राशि, अधिमित्र की राशि, मित्र की राशि, सम की राशि, शत्रु की राशि, अत्रिशत्रु की राशि।।५।।

नीचे च षष्ठिरिष्वब्धिः रवाग्निःकरकरास्तिथिः ।
नागा वेदाः[1] करौ शून्यं शुभमेतद् प्रकीर्तितम् ।।६।।

और नीच राशि में हो तो क्रम से ६०, ४५, ३०, २२, १५, ८, ४, २, ० ये ध्रुवांक शुभ फल के प्राप्त होते हैं।।६।।

षष्टिभ्यो वर्जिताश्चैतेशष्टिं स्यादशुभं फलम् ।
तदर्धं तु फलं प्रोक्तमन्यवर्गे शुभाशुभम् ।।७।।

इनको ६० में घटा देने से अशुभ ध्रुवांक होता है। अन्य वर्गों (होरा आदि सप्तवर्ग) के राशियों में स्वउच्चादि में हों तो पूर्वोक्त ६० आदि बलों का आधा शुभ में और आधा पापवर्ग में लेना।।७।।

पूर्वोक्तबले शुभाशुभत्वम् –

पंचस्विष्टफलं चादौ षष्ठं सममुदाहृतम् ।
अशुभास्तु त्रयः प्रोक्ता इति शास्त्रेषु निश्चयः ।।८।।

पूर्व में कहे हुये ९ प्रकार के बलों (उच्चमूलत्रिकोणादि) में आदि से पाँच वल (उच्च मूलत्रिकोण, स्वराशि, अधिमित्र, मित्र) शुभद हैं, छटाँ (समराशि) सम और शेष ३ अशुभ होते हैं।।८।।

१— वेदकश इति पाटान्तरम्।

दिग्बलादौ शुभाशुभत्वम् –

दिग्बलं दिक्फलं तस्य तथा दिनफलं भवेत् ।
तयोः फलं शुभं प्रोक्तं षष्ठ्या वर्ज्यं तथेतरम् ।।९।।

जो ग्रहों का दिग्बल है वह दिक्फल हैं और जो दिनबल है वह दिन फल है, दोनों फलों का योग करने से शुभ फल और इसे ६० में घटाने से शेष अशुभ फल होता है।।९।।

शुभाधिके शुभं नेष्टमशुभे चाधिके शुभात् ।
बलैरेव हते स्यातां दृष्टिं हन्यात्स्फुटैव सा ।।१०।।

यदि शुभफल पापफल से अधिक है तो उस ग्रह का फल शुभ, अशुभ फल अधिक हो तो अशुभ फल होता है। पूर्वोक्त इष्टबल, कष्टबल (श्लोक ५ में) उससे दृष्टि को गुणा कर देने से इष्टदृष्टि और कष्टदृष्टि होती है।।१०।।

पूर्वोक्तशुभाशुभबलस्यस्पष्टीकरणम् –

बलैः षड्भिः समेधित्वा समानीतैः पृथक्-पृथक्।
बलिनश्चोक्तसंज्ञैश्च बलैरेव हरेत्ततः ।।११।।

ग्रह षड्वलों (होरा आदि षड्बल) को ६ स्थान में रखकर इष्टबल से तथा कष्टबल से अलग अलग गुणकर पृथक् पृथक् षड्बलों से भाग देकर सभी फलों का योग करने से इष्ट स्थान स्पष्ट शुभ और कष्ट स्थान में स्पष्ट अशुभ फल होता है।।११।।

तत्तद्बलफलानि स्युरशुभानि शुभानि च ।
शुभपापफलाभ्यां च दृष्टिं हन्याद्बलं तथा ।।१२।।

इसी प्रकार से दृष्टि के इष्ट कष्ट से दृष्टिबल को गुणाकर भाग देने से दृष्टि का शुभाशुभ फल होता है।।१२।।

सग्रहे भावफले विशेषः–

दृष्टेश्च शुभ पापोत्थे बले स्यातां तथैव च ।
भावानां च फले प्रोक्ते पतीनां च फले उभे ।।१३।।

तन्वादि भावों के भी दो फल (भाव का तथा उसके स्वामी का) होता है दोनों के योग के तुल्य भाव का शुभाशुभ फल होता है।।१३।।

सराशिर्ग्रहयुक्तश्चेद्भावसाधनसंगुणे ।
फले तस्य शुभे युंज्यादशुभे वर्जयेच्छुभे ।।१४।।

यदि भावस्थ राशिग्रह युक्त हो तो भाव साधन से गुणा कर दे और शुभग्रह भाव में हो तो उस भाव के शुभ फल को फल में जोड़ दे और अशुभ भावफल में घटा दे और भाव में।।१४।।

पापाश्चेदन्यथा चैवं बले दृष्टयां च तेऽत्रतु ।
युंज्यादुच्चादिषु फलममित्रादिषु वर्जयेत् ।।१५।।

पापग्रह हो तो इससे विपरीत करने से भाव का इष्ट (शुभ) और कष्ट (अनिष्ट) स्पष्ट होता है। इसी प्रकार दृष्टि में भी करना चाहिये किन्तु यह फल यदि उच्चादि का हो तो योग और शत्रु आदि का हो तो घटाना चाहिये।।१५।।

अष्टकवर्गे विशेषः–

स्थाने चैवं क्रमात्प्रोक्तं करणेचान्यथाक्रमः ।
राशिद्वयगते भावे तद्राश्यधिपतेः क्रिया ।।१६।।

इसी प्रकार से स्थान (रेखा) में भी (अष्टकवर्ग में) क्रिया करनी चाहिये किन्तु करण (बिन्दु) में विपरीत क्रिया होती है, एक ही भाव में २ राशि हो तो उनके स्वामी के साथ क्रिया करनी चाहिये।।१६।।

स्थानाधिकस्तु भावेन लाभभावः प्रकीर्त्तितः ।
तत्समाने च तद्भावे तदानीं स्थानदान् ग्रहान् ।।१७।।
संयोज्य स्थानसंख्यायां दलमेतत्समं भवेत् ।।१८।।

भाव से रेखा अधिक हो तो उस भाव का फल या भाव लाभदायक होता है। यदि दोनों भावों में अधिक रेखा हो तो दोनों का योग कर आधा करने से जो आवे उसके समान ही भावफल होता है।।१७, १८।।

इति पाराशर होरायामुत्तरार्धे इष्टकष्टाध्यायस्तृतीयः। ३

अथ रश्मिफलवर्णनाध्यायः।

विधात्रालिखिता या सा ललाटाक्षरमालिका ।
तस्याः शरीरकथनं वक्ष्यामि च पृथक्-पृथक् ।।१।।

विधाता (ब्रह्मा) ने ललाट में जो अक्षरों की पंक्ति लिखी है उसको मैं शरीर के रूप में पृथक् पृथक् कह रहा हूँ।।१।।

लग्नाच्छरीरचिन्ता च द्वितीयात्स्वं च पैतृकम् ।
भरणीयं कुटुंबं च पश्वादिं च वदेद्बुधः ।।२।।

लग्न (तनु भाव) से शरीर की चिन्ता का, विचार करना चाहिये और द्वितीय भाव से अपने उपार्जित धन और पैतृक संपत्ति, पालनीय कुंटुंब का तथा पशु आदि का विचार करना चाहिये।।२।।

तृतीयात्सोदरं बुद्धिं दुःपूर्वा विक्रमं विदुः ।
चतुर्थात्पितरं वेश्म सुखं लालित्यमेव च ।।३।।

तीसरे भाव से भाइयों का, दुष्ट बुद्धि का और पराक्रम का विचार करना चाहिये, चौथे भाव से गृह का, सुख का, सौहार्द का विचार करना चाहिये।।३।।

सौमनस्यमपत्यानि प्रज्ञां मेधां च पंचमात् ।
हानिं व्याधिमरिं षष्ठान्मैथुनं स्त्रीं जयं ततः ।।४।।

पांचवें भाव से सौमनस्य (मन की प्रसन्नता) का, संतान का, सुबुद्धि का और धारणा शक्ति का विचार करना चाहिये। छठें भाव से हानि, व्याधि (रोग) और शत्रु का विचार तथा सप्तम भाव से मैथुन, स्त्री और युद्ध में विजय का विचार करना चाहिये।।४।।

मृतिं पराजयं दुःखं हानिं व्याधिं तथाष्टमात् ।
सौशील्यभाग्यधर्मांश्च नवमाद्दशमात्तथा ।।५।।
मानास्पदाज्ञाकर्माणि आयादर्थं व्ययाद्व्ययम् ।

आठवें भाव से मृत्यु का, पराजय का, दुःख (व्यवसन) का, हानि का, व्याधि का विचार करना चाहिये। नवम भाव से सुशीलता, भाग्य, वैभव और धर्म का विचार करना चाहिये। दशम भाव से सत्कार, स्थान, आज्ञा और शुभाशुभ कर्म का विचार करना चाहिये।।५।। ग्यारहें भाव से द्रव्य के प्राप्ति का और बारहें भाव से व्यय का विचार करना चाहिये।

उच्चस्थानस्थ रश्मि ध्रुवांकः-

दिग्भवेष्विषुसप्ताष्टशराः स्वोच्चे करा रवेः ।।६।।

यदि सूर्यादि ग्रह अपने उच्च राशि में हो तो क्रम से १०, ११, ५, ५, ७, ८, ५ यह रश्मि ध्रुयांक होता है।।६।।

नीचेन चांतरा प्रोक्ता रश्मयस्त्वनुपातजाः ।
नीचोनं तु ग्रह- मार्द्धाधिके चक्राद्विशोधयेत् ।।७।।

नीच राशि का ध्रुवांक नहीं है, उच्च नीच के मध्य में अनुपात द्वारा रश्मि का साधन करना चाहिये वह इस प्रकार से— नीच को ग्रह में घटा दे यदि शेष ६ राशि से अधिक हो तो उसे १२ राशि में घटाकर।।७।।

स्वीयरश्मिहतं षड्भिर्भजेत्स्यूरश्मयःस्वकाः ।
उच्चस्वर्क्षसुहृत्सूर्यभागेऽगाब्धि द्विसंगुणाः ।।८।।
नीचारिद्वादशांशे तु नृपांशोनाः कराश्च ते ।

शेष को ग्रह के उच्च रश्मि ध्रुवांक से गुणकर उसमें ६ से भाग देने से लब्ध रश्मि होती है। ग्रह उच्च, स्वराशि मित्र की राशि के द्वादशांश में हो तो क्रम से ६, ४, २ से गुण देने से।।८।।

और नीच शत्रु के द्वादशांश में हो तो षोडशांश कम कर देने से स्पष्ट रश्मि होती है।

जैसे सूर्य ३।१८।२६।३४ इसमें सूर्य के नीच ६।१० को घटाने से ८।२२।२६।३४ हुआ यह ६ राशि से अधिक है अतः इसे १२ राशि में घटाने से शेष ३।७।३३।२६ हुआ इसे ध्रुवांध १० से गुणा करने से ३१।५।३४।२० हुआ इसमें ६ से भाग देने से लब्धि ५।५।५५।५२ यह सूर्य की रश्मि हुई। सूर्य शनि के द्वादशांश में है और सूर्य का शनि अधिशत्रु है अतः पूर्वोक्त रश्मि का षोडशांश ०।९।४४।४४ रश्मि में घटाने से शेष ४।२५।४८।५२ यह सूर्य की स्पष्ट रश्मि हुई इसी प्रकार से शेष ग्रहों की रश्मि का साधन करना चाहिये।

रश्मि चक्र।

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
४	१५	०	३	११	१०	९
२५	४८	३२	५	३	३	५
४८	२६	५३	४८	२६	३५	१२

विशेष संस्कारः—

मूलत्रिकोणस्वर्क्षाधिमित्रमित्रनवांशके ।।९।।

यदि ग्रह अपने मूलत्रिकोण, अपनी राशि, अधिमित्र की राशि, मित्र की राशि में नवमांश की राशि।।९।।

द्रेष्काणेऽपि च होरायां त्रिशांशे च क्रमात्तथा ।
अष्टघ्ना द्व्यब्धिषट्सप्तभक्ता युक्तास्तुरश्मयः ।।१०।।
अरावध्यरिनीचे च वेदद्व्यखिलहीनकाः ।

द्रेष्काण की राशि, होरा और त्रिशांश की राशि जिसमें हो उसे देखकर ध्रुवोत्पन्न रश्मि (८-९ श्लोकोक्त) को ८ से गुण कर क्रम से मूलत्रिकोण में २ से, अपनी राशि में ४ से, अधिमित्र में ६ से और मित्र में ७ से भाग देकर लब्धि के पूर्वोक्त रश्मि में जोड़ने से उच्च रश्मि होती है।।१०।।

पूर्वोक्त वर्गों में यदि शत्रु राशि हो तो चार से भाग देकर लब्धि को घटाने से अधि शत्रु राशि हो तो २ से भाग देकर और नीच राशि में हो तो संपूर्ण को घटाने से उच्च रश्मि होती है।

अन्य संस्कारः-

उच्चे च त्रिगुणं प्रोक्तं स्वत्रिकोणे द्विसंगुणम् ।।११।।

यदि रश्मि का स्वामी अपने उच्च राशि में हो तो उच्च रश्मि को त्रिगुणित, अपने मूल त्रिकोण राशि में हो तो द्विगुणित।।११।।

स्वर्क्षे त्रिघ्ना द्विसंभक्तास्त्वधिमित्रगृहेऽपि च ।
वेदघ्ना रामसंभक्ता मित्रमे षड्गुणास्ततः ।।१२।।

स्वराशि में होते त्रिगुणित कर दो से भाग देना और अधिमित्र की राशि में हो तो पूर्व रश्मि को चार से गुणाकर तीन से भाग देकर लब्धि को पूर्व रश्मि में जोड़ने से, मित्र के राशि में ६ से गुणा कर ५ का भाग कर लब्ध को रश्मि में जोड़ने से।।१२।।

पंचभक्तास्त्वथ शत्रुगृहे द्विघ्नाश्चतुर्हताः ।
अधिशत्रोः करघ्नाश्च पंचभक्ता न नीचभे ।।१३।।

शत्रु के गृह में हो तो २ से गुणा कर ४ से भाग देकर लब्ध को जोड़ने से स्पष्ट रश्मि होता है। और अधि शत्रु की राशि में हो तो दूना कर पाँच से भाग देकर लब्धि को जोड़ने से स्पष्ट रश्मि होती है। नीच राशि में हो तो कोई संस्कार नहीं करना।।१३।।

मतांतरात् रश्मि हानिवृद्धिः-

शनिं सितं बिना ताराग्रहा अस्तंगता यदि ।
विरश्मयो भवंत्येवं वक्रादौ द्विगुणास्ततः ।।१४।।

शनि शुक्र को छोड़कर शेष ग्रह (भौम, बुध, गुरु) अस्त हों तो रश्मि का अभाव होता है, रश्मिपति वक्रारंभ में हों तो पूर्व रश्मि को दूना करने से।।१४।।

अनुपातोऽन्तरे वक्रं त्यागेऽष्टांशविहीनकाः ।
मंदायां दशभागोना वस्वंशोना कराःस्मृताः ।।१५।।

वक्र के अन्त्य में हो तो रश्मि में ८ से भाग देने से लब्ध स्पष्ट रश्मि होती है, वक्र के मध्य में हो तो अनुपात द्वारा रश्मि लाना चाहिये। रश्मिपति मंदगति हो तो रश्मि का दशांश पूर्व रश्मि में घटाने से, यदि मंदतर गति हो तो अष्टमांश हीन करने से।।१५।।

तथा शीघ्रतरायां च वेदांशोनाः कराः स्मृताः ।
अंगाशोनाश्च शीघ्रायां केचिदेवं वदन्ति हि ।।१६।।

शीघ्रगति हो तो छठाँ भाग हीन करने से और शीघ्रतर गति हो तो चतुर्थांश हीन करने से स्पष्ट रश्मि होती है ऐसा कुछ ऋषियों का मत है।।१६।।

अथ ग्रहाणां अष्टधा गतिः—

वक्रानुवक्रा विकला शीघ्रा शीघ्रतरागतिः ।
वृद्धिहीने तु शिष्टे द्वे वर्जनीये समासमा ।।१७।।

वक्र, अनुवक्र, विकला, शीघ्रगति, शीघ्रतरा, मंदगति, मंदतरा, समासमा ये आठ प्रकार की ग्रहों की गति होती हैं। शीघ्रतर गति वृद्धि हीन होने से मंदगति और शीघ्रगति बृद्धिहीन होने से अतिमंदतर होती है।।१७।।

योगविशेषात्ह्रासवृद्धिः।

योगेषु ये ग्रहाः प्रोक्तास्तेषां योगे च रश्मयः ।
पापसौम्यारिमित्राणां योगे हानिश्च कीर्त्तिताः ।।१८।।
उच्चादिषु पूर्वोक्ताः पापो बलवशाद्भवेत् ।।१९।।

पूर्व में जो राजयोग कहे गये हैं उनमें (राजयोग कारक और दरिद्र योग कारक) राजयोग कारक ग्रहों के रश्मियों के योग में दरिद्र योग कारक ग्रहों के रश्मियों को घटा देने से शेष राजयोग कारक रश्मि होती है।।१८।।

इसी प्रकार पापग्रहों की उच्चादि नब स्थान पर्यन्त रश्मियों को उनके बल के अनुसार न्यूनाधिक करने से उनकी स्पष्ट रश्मि होती है।।१९।।

द्विग्रहादियोगे निर्णयः-

द्विग्रहादिषु योगेषु ग्रहभावकलाहताः ।
ग्रह गति संज्ञानुरूपेण फलानां निर्णयःस्मृताः ।।२०।।

दो तीन आदि ग्रहों के योग में ग्रहों के भाव के फलादि को उनके रश्मियों से गुण देना यदि साठ ६० से अधिक हो तो ६० से भाग देने से लब्धि स्पष्ट रश्मि होती है। ग्रहों के रश्मियों का फल उनके गति के अनुसार ही होता है।।२०।।

इष्टकष्टरश्मेः प्रयोजनम् -

इष्टकष्टबलसंगुणास्ततस्तत्करानथ च संयुतास्तुतान्।
निश्चितार्थमखिलं समीक्ष्यतत्प्रस्तुतं तु सकलं बदेद्बुधः।।२१।।

ग्रहों के इष्ट कष्ट बल से उनके रश्मियों को गुणकर उसमें ६० से भाग देने से ग्रहों की इष्ट और कष्ट रश्मि होती है। इन सम्पूर्ण रश्मियों को देखकर ग्रहों के फलों को कहना चाहिये।।२१।।

एकतः पंचरश्मियोग फलम् -

एकादि पंचकं यावद्दरिद्रा भृशदुःखिताः ।
नीचानां दासतां याता अपि जाता कुलोत्तमे ।।२२।।

एक से पांच रश्मि योग में उत्पन्न पुरुष अत्यंत दुःखी होता है। यदि उत्तम कुल में उत्पन्न पुरुष हो तो नीचों की नौकरी करता है।।२२।।

दशरश्मियोग फलन् -

परतो दशकं यावत्केवलं जठराय वै ।
निःस्वाः कदाचिद्दासाश्च भारवाहाःकदाचन ।
स्त्रीपुत्रगृहहीनाश्च वंशायोग्यक्रियारताः ।।२३।।

६ से १० तक रश्मियोग हो तो पुरुष केवल पेट भरनेवाला, निर्धन, कभी दासता करनेवाला, कभी बोझा ढोने का काम करनेबाला, स्त्री पुत्र से हीन और कुल के विपरीत कार्य करनेवाला होता है।।२३।।

एकादशतो त्रयोदशपर्यन्तं रश्मिफलम् -

एकादशेऽल्पपुत्रस्यादल्पस्वं स्त्रीविमानितः ।
विभ्रति कृच्छ्रेण निजं स्वल्पं च कुटुम्बकम् ।।२४।।

ग्यारह रश्मियोग हो तो अल्पपुत्र, अल्पधन और स्त्री से अनादर और थोड़े कुटुम्ब को भी कष्ट से पालन करनेवाला होता है।।२४।।

द्वादशे निर्धनः मूर्खाधूर्ताः सत्त्वविनाशकाः ।
त्रयोदशे च चौराः स्युर्निर्धनाः कुलपांशवाः ।।२५।।

बारह रश्मियोग हो तो निर्धन, मूर्ख, सत्वहीन होता है, तेरह रश्मियोग में चोर निर्धन और कुलकलंक होता है।।२५।।

चतुर्दशतः पञ्चदश रश्मि फलम् –

विद्वांश्चतुर्दशे धर्मेरतो मर्षी धनार्जकः ।
कुटुम्बभरणे सक्तः कुलयोग्यक्रियो भवेत् ।।२६।।

चौदह रश्मियोग हो तो धार्मिक, क्रोधहीन, धन कों पैदा करनेवाला, कुटुम्ब के भरण पोषण में समर्थ और कुलयोग्य क्रिया करनेवाला होता है।।२६।।

रश्मिभिः पंचदशभिरेवं पूर्वोक्त गुणयुतोऽपिसन् ।
स्ववंशमुख्योजनवानित्याह भगवान्मुनिः ।।२७।।

पंद्रह रश्मियोग में पूर्वोक्त गुणों से युक्त होते हुए भी अपने कुल में प्रधान और धनी होता है, ऐसा पराशर मुनि ने कहा है।।२७।।

षोडशतः द्वाविंशतिपर्यन्त रश्मियोग फलम् –

आविंशतेः कुलेशानां बहुभृत्यः कुटुम्बिनः ।
कीर्त्तिमंतश्च पूर्णाश्च स्वजनेन च षोडशात् ।।२८।।

१६ से २० तक रश्मियोग हो तो कुल को पालन करनेवाला, बहुत से नौकरों से युक्त, कुटुम्बी, कीर्त्ति से युक्त और स्वजनों से पूर्ण होता है।।२८।।

एकविंशति विख्यातः पंचाशज्जनपोषकः ।
दानशीलः कृपायुक्तो द्वाविंशे लोभ संयुतः ।।२९।।

२१ रश्मि हो तो बड़ा प्रसिद्ध और पचासों लोगों का पालन करनेवाला होता है और २२ रश्मियोग में दानशील और कृपालु होता है।।२९।।

त्रिंशत्पर्यन्तरश्मिफलम् –

धनवानल्प शत्रुश्च प्रभुः स्वल्पगुणो भवेत् ।
त्रयोविंशे च मुख्यश्च विद्याहीनो धनीसुखी ।।३०।।

रश्मियोग २३ हो तो मनुष्य धनी, अल्प शत्रु, समर्थ और अल्पगुणी होता है।।३०।।

आत्रिंशत्परतः श्रीमान्सर्वसत्वसमन्वितः ।
राजप्रियश्च चंडश्च जनैश्च बहुभिर्युतः ।।३१।।

इसके बाद ३० रश्मि तक मनुष्य श्रीमान् सभी सत्वों से युक्त, राजप्रिय, प्रचंड और अनेक जनों से युक्त होता है।।३१।।

एकत्रिंशतश्चतुस्त्रिंशत्यावद्रश्मिफलम् –

एकत्रिंशे तु सचिवः द्वात्रिंशे वाहिनीपतिः ।
अत ऊर्ध्वं तु सामंत श्चातुःत्रिंशत्कपरावधिः ।।३२।।

रश्मियोग ३१ हो तो राजमंत्री होता है, ३२ में सेनापति इसके बाद ३४ तक रश्मियोग में मांडलिक राजा होता है।।३२।।

पंचत्रिशद्रश्मिफलम् –

अत ऊर्ध्वं नृपे श्रांतः आपंचत्रिंशतः क्रमात् ।
शतपंचकमारम्य सहस्रावधिपोषकः ।।३३।।

३५ रश्मियोग हो तो मनुष्य राज्याधिकार के क्रम से परिश्रम करने से ५०० से १००० तक जनों का भरण पोषण करनेवाला होता है।।३३।।

अत ऊर्ध्वं तु देशानां पोषकाः स्युः पंचविंशतिः ।
षडविंशतिश्च भानि स्युस्त्रिंशत् षड्त्रिंशदेव च ।।३४।।

इसके बाद ३६ रश्मियोग में २५ ग्रामों का, ३७ रश्मियोग में २६ ग्रामों का, ३८ रश्मियोग में २७ ग्रामों का, ३९ रश्मियोग में ३० ग्रामों का और ४० रश्मियोग में ३६ ग्रामों का पालक होता है।।३४।।

अत ऊर्ध्वं नृपाः क्षात्रधर्मिणः क्षत्रियोऽथवा ।
भूद्वित्र्यब्धीसुषट्सप्तभूभृज्जनपदाधिपाः ।।३५।।

इसके बाद ४० रश्मियोग हो तो क्षत्रिय जातीय बालक राजा होता है। अन्य जातीय मनुष्य क्षत्रिय धर्म को पालन करता हुआ ४० से ४७ रश्मियोग में क्रम से १, २, ३, ४, ५, ६, ७ ग्रामों के राजाओं का शासक होता है।।३५।।

पंचाशद्रश्मि संयोगे सम्राट् स्यादनुपाततः ।
अत ऊर्ध्वं तु देवेन्द्रतुल्यः स्युरिति पद्मभूः ।।३६।।

इसके बाद ५० रश्मि योग में पुरुष सम्राट् होता है, इससे न्यून होने पर

अनुपात द्वारा सम्राट् योग में न्यूनता समझना चाहिये। ५० से अधिक हो तो इन्द्र के समान होता है ऐसा ब्रह्माजी ने कहा है।।३६।।

रश्मौ विशेषफलम् –

उच्चचेष्टोत्थयोगार्धंगुणिताः षष्ठिभाजिताः ।
नरादीनां तु संख्याः स्युः स्पष्टा इत्याहपद्मभूः ।।३७।।

उच्च रश्मि चेष्टा रश्मि का योग करके उसके आधे को पूर्व योग से गुण कर ६० से भाग देने से जो लब्धि हो उस संख्या के तुल्य मनुष्य घोड़ा, हाथी आदि सेवक होते हैं।।३७।।

राजयोगेविशेषः–

शूद्रादयः कलौ राजधर्मिणो म्लेक्षधर्मिणः ।
विप्राश्चेच्छ्रीधनैर्युक्ता यज्ञकर्मक्रियारताः ।।३८।।

जो राजयोग कहे हैं वे कलियुग में शूद्रादि म्लेक्ष धर्मबालों को होता है। यदि यह राजयोग और उत्तम रश्मि योग ब्राह्मण को हो तो वह यज्ञादि कर्मनिष्ठ होता है और उसी पुण्य से स्वर्ग के राज्य की भोगनेवाला होता है।।३८।।

विशेषः–

योगरश्मिसमायोगे तदानीं तत्फलं विदुः ।
नाभसादिषु योगेषु राजयोगे स्थितं तु तत् ।।३९।।

केवल राजयोग मात्र से ही राज्य की प्राप्ति नहीं होती है किन्तु रश्मियोग राज्य फलदायक हो तो राजयोग का फल होता है और नाभसादि योग में भी रश्मियोग होने से उनका फल होता है।।३९।।

योगानां फल-व्यवस्था–

योगकर्त्तारमारम्य बलिनं च विनिर्णयेत् ।
पूर्वभागे समुद्दिष्टभाग्यकर्मफलानि तु ।।४०।।

प्रथम भाग में भाग्यादि का जो फल कहा गया है उसका शुभाशुभ फल रश्मि के अनुपात द्वारा निर्णय करना चाहिये।।४०।।

अनुपातेन विज्ञाय योजयेद्वर्जयेद्बुधः ।
स्थानवीर्याधिके देशे मुख्यः स्यादनुपाततः ।।४१।।

स्थानबल, दिग्बल, चेष्टाबल, कालबल, अयनबल, उच्चबल, नैसर्गिकबल

इनमें जो अधिक बल हो उससे उच्च रश्मि का फल कहते हैं। स्थान बल अधिक हो तो देश में मुख्य हो।।४१।।

दिग्बले विजयश्रेष्टा वीर्ये तु प्रभुता भवेत् ।
कालवीर्योऽधिके कार्ये सदोत्साही तथायने ।।४२।।

दिग्बल अधिक हो तो विजयी हो, चेष्टाबल अधिक हो तो प्रभुत्व हो, कालबल अधिक हो तो सभी कार्य में कुशल हो और अयनबल अधिक हो तो सभी समय आनंद में रहे।।४२।।

स्ववंशोत्कर्षता स्वोच्चे नैसर्गे जातिनिर्णयः ।
राशीनां च ग्रहाणां च स्वभावाः कथितामया ।।४३।।

उच्चबल अधिक हो तो अपने वंश में मुख्य हों, नैसर्गिक बल अधिक हो तो अपने जाति और कर्म का विशेष प्रतिपादन करनेवाला होता है। इस प्रकार से मेषादि राशियों का और ग्रहों का स्वभाव मैंने कहा।।४३।।

ये चात्र योजनीयाश्च दैवज्ञेन सुबुद्धिना ।।४४।।

जो मैंने कहा है उसे यथा अवसर विद्वान् बुद्धिमान् दैवज्ञ जहां जैसा उचित हो उसकी योजना वहां वैसा करें।।४४।।

इति पाराशर होरायामुत्तरार्धे रश्मिफलाध्यायश्चतुर्थः।४

अथलोकयात्राप्रकरणम्।

अष्टकवर्गेरेखाणांफलम् –

मूलस्थानाधिके स्थाने सभावः शुभ इष्यते ।
न्यूनेऽशुभः समे मातृपितृवंधून्वदिष्यते ।।१।।

जिस ग्रह का जिस भाव में जितनी रेखा कही गई है (अष्टकवर्गाध्याय श्लो. १९ आदि) यदि उस भाव में उससे अधिक रेखा हो तो उस भाव का फल शुभ, न्यून हो तो अशुभ और सम हो तो सम फल होता है।।१।।

स्ववेश्मधर्मकर्मायलग्नैशुभ्रं पतिं वदेत् ।
मृतिव्ययारिभिस्तेषां व्ययं हानिं पृथग्वदेत् ।।२।।

२।४।९।१०।११ और लग्न ये ६ भाव अपने स्वभाव के अनुसार उत्तम फल देते हैं और ८।१२ ये दो भाव खर्च तथा हानि करने वाले होते हैं।।२।।

पूर्वभागोक्तानांराजयोगादीनां व्यवस्था–

ये योगापूर्वभामे तु द्विग्रहाद्या नभादयः ।
राजयोगादयः सर्वे यथान्यायं प्रयोजयेत् ।।३।।

पूर्व खंड में जो नाभस आदि राजयोग कहे गये हैं उनका रश्मि और अष्टक वर्ग के बलाबल के अनुसार फल कहना चाहिये।।३।।

भरणीय कुटुम्बस्य द्वितीयेन शुभाशुभे ।
अन्येषां चैव भावानां स्वनाम सदृशं फलम् ।।४।।

दूसरे भाव से रेखा और शून्य के न्यूनाधिक के अनुसार अशुभ और शुभ फल देखकर कुटुम्ब पोषण का फल कहना चाहिये। अन्य भावों का उनके नाम के सदृश फल कहे।।४।।

सूर्येणवेश्मस्थानेन पितुर्मृतिपदं वदेत् ।
चन्द्रेणपंचमेनैव मातुर्मृतिपदं वदेत् ।।५।।

सूर्य और चतुर्थ स्थान से पिता की मृत्यु के समय का विचार करे और चन्द्रमा और पाँचवें भाव से माता के मृत्यु की समय का विचार करना चाहिये।।५।।

मृत्युसमयज्ञानम् –

सूर्ये चन्द्रे सपापे च तयोश्च मरणं भवेत् ।
तयोरतंरलिप्ताश्च शतद्वयविभाजिताः ।।६।।

सूर्य चन्द्र चतुर्थ और पंचम भाव पापग्रह से युत हों तो दोनों की मृत्यु होती है। सूर्यादि और पापग्रहों का यथाक्रम से अंतर करके शेष की कला बनाकर उसमें २०० का भाग देना।।६।।

अब्दादयोऽशुभस्यापि दृष्ट्या संगुणयेत्ततः ।
षष्ठया विभज्याब्दाद्याश्च तस्मात्पापेवलोत्तरे ।।७।।

फल वर्षादिक होता है यदि समबल हो तो न्यूनाधिक्य में यदि सूर्य चन्द्र से पापग्रह बली हो तो उस फल को पापग्रह की दृष्टि से गुणाकर ६० से भाग देकर वर्षादि फल लाना।।७।।

तदामृतिर्भवेन्न्यूने तद्बलेनैव वर्धयेत् ।
तदा मृत्युस्तयोर्मृत्युस्थाने पापग्रहे सति ।।८।।

पापग्रह अल्पबली हो तो सूर्य और चन्द्रबल से पूर्वोक्त वर्षादि को गुणा कर ६० से भाग देकर लब्ध वर्षादि से फल कहना चाहिये और अष्टम भाव में पापग्रह हो तो माता पिता को अरिष्ट कहना।।८।।

त्रिकोणशोधन–

अष्टकवर्ग शोधन की दो विधियाँ हैं। १. त्रिकोणशोधन, २. एकाधिपत्य शोधन। प्रथम त्रिकोण शोधन क्या है? सम्पूर्ण राशि चक्र में ४ त्रिकोण हैं। त्रिकोण से तात्पर्य प्रथम, पंचम और नवम राशि से है अत: प्रत्येक त्रिकोण की प्रथम राशि क्रमश: मेष, वृष, मिथुन और कर्क है। इसका प्रयोजन अष्टकवर्गाध्याय के श्लोक सं. ७५ में कहा हुआ है।

अथ पिंडोत्पत्ति:–

शोध्यावशेषं संस्थाप्य राशिमानेन वर्द्धयेत् ।
ग्रहयुक्तेऽपि तद्राशौ ग्रहमानेन वर्द्धयेत् ।।९।।

एकाधिपत्य शोधन करने से जो अंक जिस राशि के नीचे हों उन्हें उन-उन राशि के गुणकांकों से गुणा कर उसके नीचे रख दे इसके बाद उनका योग करने से राशि पिंड होता है। इसी प्रकार जिस राशि में जो ग्रह हो उस ग्रह के गुणकांक से एकाधिपत्य शोधन से शेष अंक को गुणा कर रख दे और सबका योग करने से ग्रहपिंड होता है।

उदाहरण चक्रों में है।

राशिगुणकांक–

गोसिंहौ दशगुणितौ बसुभिर्मिथुनालिगौ ।
वणिग्मेषौ तु मुनिभि: कन्यकामकरौ शरै:
शेषा: स्वमानगुणिता राशिमाना इभेक्रमात् ।।१०।।

ग्रहगुणकांक–

जीवारशुक्रसौम्यानां दशवसुमुनीन्द्रियै: ।
बुधस्य संख्या शेषाणां ग्रहगुणयेत्पृथक् ।।११।।
त्रिषुद्वयोर्वा यन्न्यूनमितरत्रसमं भवेत् ।
एकस्मिन् भवने शून्ये तत्त्रिकोणं न शोधयेत् ।।१२।।
समत्वे सर्वगेहेषु सर्वं संशोधयेद्बुध: ।

त्रिकोण के तीन राशियों में से जिस राशि की रेखा संख्या अल्प हो उसे त्रिकोण की अन्य दो राशि की संख्या में से घटाकर शेष को उसी राशि के नीचे रखे अल्प रेखा संख्या के स्थान में शून्य रखना चाहिये। यदि त्रिकोण की तीनों राशियों में से किसी एक राशि में शून्य हो तो अन्य दो राशियों के नीचे वैसी रेखा स्थापित कर दें अर्थात् उनका त्रिकोण शोधन न करे।।१२।।

यदि त्रिकोण के तीनों राशियों की रेखायें तुल्य हों तो सभी का संशोधन करे अर्थात् तीनों के नींचे शून्य रखे।

एकाधिपत्यशोधन–

क्षीणेन सह चान्यस्मिन् शोधयेत् ग्रहवर्जितः ।।१३।।
ग्रहयुक्ते फले हीने ग्रहाभावे फलाधिके ।
अनेन सह चान्यस्मिन् शोधयेद् ग्रहवर्जिते ।।१४।।
फलाधिके ग्रहैर्युक्ते चान्यस्मिन् सर्वमुत्सृजेत् ।
उभयोर्ग्रहसंयुक्ते न संशोध्यः कदाचन ।।१५।।
उभयोर्ग्रहहीनाभ्यां समत्वे सकलं त्यजेत् ।
सग्रहा ग्रहतुल्यत्वात्सर्वं संशोध्यमग्रहात् ।।१६।।
एकत्र नास्ति चेत्सर्वहानिरन्यत्र कीर्त्तिताः ।
कुलीरसिंहयो राश्योः पृथक् क्षेत्रं पृथक् फलम् ।।१७।।

१—भौमादि पंचग्रहों की दो दो राशियाँ होती हैं अतः इन्हीं का एकाधिपत्य शोधन होता है जिसका नियम यह है— यदि दोनों राशियों में कोई ग्रह न हो तो अल्पसंख्या को अधिक संख्या में घटाकर शेष को अधिक संख्या के नीचे रख दे और अल्पसंख्या को ज्यों का त्यों रख देना चाहिये।

२—यदि एक राशि में ग्रह हो और दूसरी राशि में ग्रह न हो और ग्रहहीन राशि के संख्या से ग्रहयुक्त राशि की संख्या अल्प हो तो ग्रहहीन राशि संख्या में से ग्रहयुक्त राशि की संख्या को घटाकर शेष को ग्रहहीन राशि के नीचे रखना और ग्रहयुक्त राशि की संख्या वैसी ही रख देना।

३—यदि ग्रहयुक्त राशि की संख्या ग्रहहीन राशि के संख्या से अधिक हो तो ग्रहयुक्त राशि की संख्या वैसी ही रहेगी और ग्रहहीन राशि के नीचे शून्य रखना चाहिये।

४—यदि दोनों राशि ग्रहयुक्त हों तो संशोधन नहीं करना चाहिये अर्थात् जैसे का तैसा ही रखना चाहिये। यदि दोनों राशियों में ग्रह न हो और संख्या भी तुल्य हो तो दोनों राशियों में शून्य रखना चाहिये।

५. यदि एक सग्रह हो और दूसरी राशि ग्रहहीन हो और संख्या भी समान हो तो ग्रहहीन राशि की संख्या के स्थान में शून्य और ग्रह युक्त राशि की संख्या

वैसी ही रहेगी।

६—यदि दोनों ग्रहयुत्त या ग्रहहीन हों अथवा दोनों में एक ग्रहयुक्त और ग्रहहीन हो और त्रिकोणशोधन के बाद किसी एक में शून्य संख्या हो तो दोनों में शून्य ही रहेगा।

७—कर्क और सिंह राशि के स्वामी चंद्र और सूर्य के अलग-अलग होने के कारण इनका एकाधिपत्य शोधन नहीं करना चाहिये।

विशेष– त्रिकोणशोधन के उपरान्त ही उपर्युक्त ७ विकल्पों से एकाधिपत्य शोधन करना चाहिये। शेष उदाहरण चक्र से स्पष्ट है।

सूर्याष्टकवर्ग शोधन।

ग्रह	सू.	बु. बृ.			श.			मं.				शु. चं.	योग	योगापिंड
राशि	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३		
रेखा	३	४	२	४	६	५	४	३	३	५	५	४	४८	
त्रि.शो.	०	०	०	१	३	१	२	०	०	०	३	१	११	
एका.शो.	०	०	०	१	०	०	०	०	०	०	२	०	३	
रा.गु.	०	०	०	७	०	०	०	०	०	०	१०	०	१७	राशिपिंड
ग्र.गु.	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	१२	१२	पिंडयोग
														२९

चंद्राष्टकवर्गशोधन।

ग्रह	चं. शु.	सू.	बु. बृ.			श.			मं.				योग	योगपिंड
राशि	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	योग	
रेखा	५	२	४	३	४	५	५	२	४	७	५	३	४९	
त्रि.शो.	१	०	०	१	०	३	१	०	०	५	१	१	१३	
एका.शो.	१	०	०	०	०	३	१	०	०	४	०	०	९	
रा.गु.	८					२४							३२	राशिपिंड
ग्र.गु.	१२					१५							२७	योगपिंड
														५९

भौमाष्टकवर्गशोधन।

ग्रह	मं.				चं. शु.	सू.	बु. बृ.			श.				योगपिंड
राशि	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	योग	
रेखा	२	२	३	५	४	२	३	३	२	६	३	४	३९	
त्रि.शो.	०	०	०	२	२	०	०	०	०	४	०	१	९	
एका.शो.	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	
रा.गु.													०	राशिपिंड
ग्र.गु.													०	ग्र. पिंड

बुधाष्टकवर्गशोधन।

ग्रह	बु. बृ.			श.			मं.				चं. श.	सू.		योगपिंड
राशि	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	योग	
रेखा	५	५	३	५	४	५	४	४	४	४	६	५	५४	
त्रि.शो.	१	१	०	१	०	१	१	०	०	०	३	१	९	
एका.शो.	१	०	०	०	०	०	१	०	०	०	३	१	६	
रा.गु.	१०						११				२४		४५	राशिपिंड
ग्र.गु.	१५						८				३६	५	६४	ग्र.पिं.यो.
														१०९

गुर्वष्टकवर्गशोधन।

ग्रह	बु. बृ.			श.			मं.				शु. चं.	सू.		
राशि	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	योग	
रेखा	४	५	६	५	३	४	६	५	६	५	३	४	५६	
त्रि.शो.	१	१	३	१	०	०	३	१	३	१	०	०	१४	
ए.शो.	१	०	२	१	०	०	०	०	२	१	०	०	७	
रा.गु.	१०	०		८									१८	राशिपिंड
ग्र.गु.	१५			५									२०	ग्र.पि.
														३८

शुक्राष्टकवर्गशोधन।

ग्रह	शु. चं.	सू.	बु. बृ.			श.			मं.			शु. चं.		
राशि	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	योग	
रेखा	७	४	४	४	४	१	३	६	५	४	६	४	५२	
त्रि.शो.	३	३	२	०	०	०	०	२	१	३	३	०	१७	
ए.शो.	०	३	२	०	०	०	०	१	१	०	०	०	७	
रा.गु.	१२	२०							११				४३	राशिपि.
ग्र.गु.	१५	३०							८				५३	ग्र.पिं.
														९६

शनेरष्टकवर्गशोधन।

ग्रह	श.			मं.				शु. चं.	सू.	बु. बृ.				
राशि	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७		
रेखा	५	२	५	१	३	७	३	४	४	२	१	२	३९	
त्रि.शो.	२	०	४	०	०	५	२	३	१	०	०	१	१८	
ए.शो.	२	०	०	०	०	३	१	०	१	०	०	१	८	
रा.गु.	१६								४				२०	रा.दि.
ग्र.गु.	१०								५				१५	३५ग्र.पि.

लग्नाष्टकवर्गशोधन।

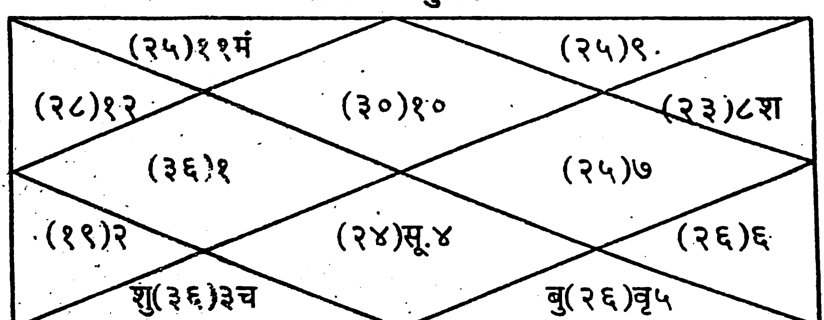
ग्रह		मं.				शु. चं.	सू.	बु. बृ.			श.		योग	पिंड
राशि	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९		
रेखा	४	४	३	६	३	५	२	५	५	३	६	३	४९	
त्रि.शो.	१	१	१	३	०	२	०	२	३	०	४	०	१७	
ए.शो.	०	१	०	०	०	२	०	२	१	०	४	०	१०	
रा.गु.	०	११				१६		१०			३२		६९	
ग्र.गु.		८				२४		३०			२०		९२	१६१ग्र.पि.

समुदायाष्टकवर्गचक्र।

राशि	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	योग
ग्रह	शु. चं.	सू.	बु. बृ.					श.			मं.		
सू.	५	५	४	३	४	२	४	६	५	४	३	३	४८
चं.	५	३	५	२	४	३	४	५	५	२	४	७	४९
मं.	३	५	४	२	३	३	२	६	३	४	२	२	३९
बु.	४	४	६	५	५	५	३	५	४	५	४	४	५४
बृ.	६	५	३	४	४	५	६	५	३	४	६	५	५६
शु.	६	४	७	४	४	४	४	१	३	६	५	४	५२
श.	७	३	४	४	२	१	२	५	२	५	१	३	३९
	३६	२९	३६	२४	३६	२३	२५	३३	२५	३०	२५	२८	

नोट- सर्वाष्टक वर्ग में सभी अष्टवर्गों में मेषादि राशियों में कितनी-कितनी रेखायें प्राप्त हुई हैं और उनका योग क्या हुआ लिखना चाहिये।

अष्टकवर्ग कुंडली



मातृपित्रोः मृत्युकालः।

ग्रहयोगेन हानिः स्यात् वर्गणाघ्नं पृथक्ततः ।
संयोज्य सप्तभिर्हत्वा सप्तविंशति भाजिताः ।।१८।।

एकाधिपत्य शोधन करने से राशियों के नीचे जो अंक आये हैं चाहे वे शून्य हों या रेखा हों उन्हें राशि के ध्रुवांको से पृथक्-पृथक् गुण देना और जिस राशि में ग्रह हैं उनके अंकों को उन उन ग्रहों के ध्रुवांकों से गुणकर पृथक्-पृथक् रखकर, राशियों के गुणनफल का योग और ग्रहों के गुणनफल का योग कर दोनों को एक जगह जोड़कर सात ७ से गुणकर उसमें २७ से भाग देने से।।१८।।

अब्दादयस्तदा देहनाशः करणदे सति ।
तस्मिन् पापग्रहे तस्माद्बलिन्येवं विधिःस्मृतः ।।१९।।

लब्धि माता पिता के आयुष्य का प्रमाण होता है। यदि पापग्रह वलवान् हो तो पूर्वविधि से ही मृत्युकाल जानना।।१९।।

बलहीने तु तं हन्यात्सप्तभिः पंचभिर्भजेत् ।
आयुस्तयोः स्यात्स्थानस्य प्रदिशेदशुभे सति ।।२०।।

यदि निर्वल हो तो योग को सात से गुणकर ५ से भाग देने से जो वर्षादि हो वही माता पिता के आयुष्य का प्रमाण होता है।।२०।।

मुनिभक्तं वसुघ्नं स्यान्नैवं चेन्नैतयोर्मृतिः ।
वक्ष्यमाणेन विधिना वदेदाह पराशरः ।।२१।।

यदि रेखाप्रद ग्रह वली हो तो पूर्व पिंड को आठ से गुणकर ७ से भाग देने से लब्ध वर्षादिक दोनों का आयुष्य होता है। शून्य के आयुष्य से रेखा का आयुष्य अधिक हो तो मृत्यु नहीं होती है ऐसा पाराशर का मत है।।२१।।

चतुर्थभावात्सूर्याच्चआयुसाधनम् –

सूर्यादायुः करौ भूपा मनवोऽर्का नवार्णवाः ।
वेदाक्षीणि तु लग्नस्य वक्ष्याम्यायुस्तथैवतत् ।।२२।।

सूर्यादि ग्रहों के और लग्न का क्रम से आयुध्रुवांक २।१६।१४।१२।९।४।४।२ है।।२२।।

स्वोच्चे नीचे तु पातः स्याद्धरणादिविधिस्ततः।
आयुस्तयोः स्यात्तौ तस्मिन् भवने तु तथा स्थितौ।।२३।।

यदि उच्च में ग्रह हो तो ध्रुवांक की आयु ही स्पष्ट होती है और नीच में ग्रह हो तो अनुपात द्वारा आयु लाना चाहिये।।२३।।

ध्रुवांक द्वारा आयुर्विचारः–

न कश्चित्स्थानदः स्याच्चेत्तत्काले च मृतिर्भवेत् ।
शुभभोगे शुभा प्रोक्ता तयोःस्याद्रश्मिसंभवः ।।२४।।

यदि वहां कोई रेखाप्रद ग्रह न हो तो उसी समय मृत्यु कहना चाहिये शुभग्रह

के योग से उत्तम रीति से और पापग्रह अधिक हों तो दंड पातादि से मृत्यु कहना।।२४।।

रश्मितः आयु साधनम् –

अष्टभिर्गुणयेत्षड्भिर्विभज्यायुः परं भवेत् ।
वेश्मनि स्थानदा न स्युर्जन्मकाले स्फुटीकृताः ।।२५।।

सूर्य और चतुर्थभाव के रश्मि संभव को ८ से गुणकर ६ से भाग लब्ध परम आयु होती है।।२५।।

करणाद्यभावेकरणादिद्वारा भाव विचारः–

कलीकृतश्च खनखैर्विभज्याब्दादयः क्रमात् ।
एवं शुभाशुभं ब्रूयान्मातापित्रोर्द्विजोत्तम ।।२६।।

यदि चतुर्थभाव में रेखाप्रद ग्रह न हों तो चतुर्थ भाव का कला पिंड बनाकर उसमें २०० से भाग देने से वर्षादि आयु होती है इसपर से माता पिता के शुभाशुभ फल को कहना।।२६।।

करणस्थानदातारः पापपुण्य फलप्रदाः ।
पुनश्चोच्चादिषु तथा त्रिगुणाद्यास्तु पूर्ववत् ।।२७।।

शून्य के देने वाले ग्रह पापफल देने वाले होते हैं और रेखा देने वाले ग्रह शुभफल देने वाले होते हैं। यदि ये अपने मूलत्रिकोणादि में हों तो पूर्ववत् त्रिगुणादि फल देते हैं।।२७।।

शत्रुनीचाधि शत्रूणां स्थानेष्वपि तु पूर्ववत् ।
राशिं हित्वा तु भावानां सर्वत्रैवं क्रिया भवेत् ।।२८।।

जहां आयुष्य का विचार हो वहां राशि को छोड़कर अंशादि से जैसा संस्कार कहा हो वैसा करना, यह क्रिया सर्वत्र जानना।।२८।।

भावानां संस्कार विशेषाद् फल विचारः–

द्वितीयभावलिप्ताश्च राशिलिप्ताविभाजिताः ।
स्ववर्गणाहतास्तस्य खेटानां वर्गणाहताः ।।२९।।

दूसरे भाव के अंशादि का कला करके उसमें दूसरे भाव की राशि के कला

से भाग देना लब्ध कलादि फल को द्वितीय भाव के ध्रुवांक से गुणाकर यदि उनमें ग्रह हो तो उसके ध्रुवांक से गुणकर।।२९।।

भावरश्मिभिराहन्यात्सप्तभिश्च विभाजयेत्।
मूलरश्मिसमूहेन शिष्टं हन्यात्तथैवतान् ।।३०।।

उसे दूसरे भाव के स्वामी के रश्मि से गुणाकर सात से भाग देने से जो अंक प्राप्त हो वह भारणीय कुटुम्ब की संख्या और शेष को मूलरश्मि समूह से गुणकर।।३०।।

इष्टानिष्टफलाभ्यां च हत्वांतरमथद्वयोः।
सप्तविंशतिभिर्हत्वा सप्तभिश्च विभाजयेत् ।।३१।।

गुणनफल में भाव स्वामी के इष्ट फल से गुणन करके एवं भाव स्वामी के कष्ट बलांकों से मूलरश्मि समूह को गुणन कर दोनों के अन्तर को २७ से गुण देने से कलादि फल को ७ से भाग देने से जो आवे वह स्त्रियों की संख्या होती हैं।।३१।।

भरणीय कुटुम्बानां पुंस्त्रियस्तत्समाविदुः।
राशीन् हित्वातु लग्नादि भावभागादिकान् ।।३२।।

राशियों को छोड़कर लग्नादि भावों के अंशादि अलग-अलग। अपने अपने स्वामियों के रश्मियों से गुणन करने से जो आवे उसे भावभागादि कहते हैं।।३२।।

गुणयेद्रश्मिभिः स्वैश्च भावभागादयोविदुः।
कलीकृत्य भलिप्ताभिर्विभज्याप्तं फलं ततः ।।३३।।

इसका कलापिंड बनाकर दो जगह स्थापित करे उसमें राशि लिप्ता से भाग देने से जो फल प्राप्त हो उसे भावफल कहते हैं और दूसरे स्थान में १२ से भाग देने से जो फल हो उसे भाव साधन फल कहते हैं।।३३।।

प्रकारांतर से भावफल साधन—

सूर्यभक्तावशिष्टं तु भावानां साधनं विदुः।
राशीन् हित्वा ततो लिप्ताखखनेत्रविभाजिताः ।।३४।।

राशिको छोड़कर अंशादि की कला बनाकर उसमें २०० से भाग देना।।३४।।

साधनघ्ना विभक्ताश्च वर्गणाभिः फलाहताः ।
उच्चादिवृद्धिहानिं च कुर्यात्तत्संख्यकाभवेत् ।।३५।।

लब्ध को पूर्व साधित भाव साधन से गुणकर अपने ध्रुवांक में भाग देना और पूर्व प्रतिपादित भाव साधन से गुण कर अपने ध्रुवांक में भाग देना पुनः इसे पूर्वसंपादित फल से गुण देने से जो संख्या प्राप्त हो वह कुटुम्बपोषण की संख्या होती है।।३५।।

अष्टकवर्गफलाध्यायः ।

तत्रादावष्टकवर्गे विचारणीयः–

आत्मभावशक्तिश्च पितृचिन्ता रवेः फलम् ।
मनोवृत्तिप्रसादश्च मातृचिन्तामृगांकतः ।।१।।

आत्मा, प्रभाव, शक्ति और पिता का फल सूर्य से विचार करना चाहिये मन, वृत्ति, प्रसन्नता और माता का विचार चन्द्रमा से करना चाहिये।।१।।

भ्रातृसत्वं गुणं भूमिंभौमेन च विचारयेत् ।
वाणिज्यकर्मवृतिश्च बुधेन तु विचिन्तयेत् ।।२।।

भाई, बल, गुण, भूमि का विचार भौम से करना चाहिये। वाणिज्य कर्म वृत्ति का बुध से करना चाहिये।।२।।

गुरुणा देहपुष्टिं च विद्यापुत्रार्थसंपदः ।
भृगोर्विवाहकर्माणि भोगस्थानं च वाहनम् ।।३।।

शरीर की पुष्टि, विद्या, पुत्र, धन संपत्ति का विचार गुरु से करना चाहिये। शुक्र से विवाह, संभोग, वाहन, वेश्या, स्त्री का विचार करना चाहिये।।३।।

वेश्यास्त्रीजनगात्राणि शुक्रेणैवनिरीक्षयेत् ।
आयुष्यं जीवनोपायं दुःखशोकमहद्भयम् ।
सर्वक्षणं च मरणं मंदेनैव निरीक्षयेत् ।।४।।

आयुष्य, जीवन, दुःख, शोक आदि का विचार शनि से करना चाहिये।।४।।

रविः पिता शशी माता भ्राता भौमो बुधःसुहृत् ।
मातुलेयः स्मृतो जीवो ज्ञानपुण्ये स्त्रियःसितः ।।५।।

सूर्य पितृ कारक, चन्द्रमा मातृकारक, भौम भ्रातृकारक, वुध मित्र और मातुल (मामा) कारक, गुरु विद्या और पुण्य (कर्म) कारक और शुक्र स्त्री कारक हैं।।५।।

एषामृक्षे च तत्काले मरणं कुरूते शनिः ।
आदित्याष्टकवर्गं च निक्षिप्याकाशचारिषु ।।६।।

इनके नक्षत्रों में जव शनि आता है तो इन लोगों को कष्ट कारक होता है। सूर्य के अष्टम वर्ग को ग्रह सहित स्थापनकर विचार करे।।६।।

अर्कस्थितस्य नवमो राशिः पितृगृहं स्मृतम् ।
तद्राशिफल संख्याभिवर्द्धयेद्योगपिंडकम् ।।७।।

सूर्य से नवम राशि पिता की होती है, उस नवम राशि में जो रेखा की संख्या हो उससे योग पिण्ड को गुणकर।।७।।

सप्तविंशोद्धृतं शेषं नक्षत्रं याति भानुजम् ।
तस्मिन्काले पितृक्लेशो भवतीति न संशयः ।।८।।

२७ से भाग देने से जो शेष बचे वह अश्विन्यादि नक्षत्र की संख्या होती है उस नक्षत्र पर जव शनि जाता है तो पिता को कष्ट होता है।।८।।

तत्त्रिकोणगते वापि पितापितृसमोऽपिवा ।
मरणं तस्य जानीयाद्दशाछिद्रेषु कल्पयेत् ।।९।।

अथवा इसके त्रिकोण नक्षत्र में जब शनि होता है तब पिता और पिता के सदृश लोगों को कष्ट होता है। यदि उस समय पापग्रह की दशा हो तो मृत्यु होती है अन्यथा कष्ट मात्र होता है।।९।।

अर्कात्तु तुर्यगेराहौ मंदे वा भूमिनंदने ।
गुरुशुक्रेक्षणमृते पितृहा जायते नरः ।।१०।।

सूर्य से चौथे स्थान में राहु, शनि, भौम में से कोई हो और उसे गुरु शुक्र न देखते हों तो पिता का नाश होता है।।१०।।

लग्नाच्चन्द्राद्गुरुस्थाने याते सूर्यसुते यदि ।
पित्रोर्नाशं तदा काले वीक्षिते पापसंयुते ।।११।।

लग्न या चन्द्रमा से नवम स्थान में शनि हों और पापग्रह दृष्ट और युत हों तो पिता का नाश होता है।।११।।

लग्नात्सुखेशराशीशदशायाम् पितृक्षयः ।
दशानुकूलकालेन योजयेत्कालवित्तमः ।।१२।।

लग्न से चतुर्थेश के राशीश की दशा में पिता का नाश होता है किन्तु दशा अनिष्टद न हो तो सुख होता है।।१२।।

पितृजन्माष्टमे जातस्तदीशे लग्नगेऽपिवा ।
तेनैव पितृकार्याणि करोत्यत्र न संशयः ।।१३।।

पिता के जन्मलग्न से आठवें लग्न में जन्म हो अथवा पिता के जन्मलग्न से आठवें भांव के स्वामी बालक के जन्मलग्न में हों तो वह बालक ही पिता के सभी कार्यों को करता है अर्थात् पिता की मृत्यु हो जाती है और वही सभी कार्य को करता है इसमें संशय नहीं है।।१३।।

पितृसुख योग–

सुखनाथ दशायां तु सुखप्राप्तेस्च संभवः ।
सुखेशे लाभलग्नस्थे चन्द्रलग्नाद्विशेषतः ।।१४।।

सुखेश की दशा में पिता को सुख होता है। सुखेश ११ वें या जन्मलग्न में हो तो, विशेषकर चन्द्रलग्न से।।१४।।

पितृगृहं समायुक्ते जातः पितृवशानुगः ।
तेनैव पितृकार्याणां कर्मक्षेत्रे समापयेत् ।।१५।।

दशमभाव में हो तो पिता के वश में रहने वाला होता है और वही पिता के कर्मों को करने वाला होता है।।१५।।

पितृजन्मतृतीयर्क्षे जातः पितृधनाश्रितः ।
पितृकर्मगृहे जातः पितृतुल्यगुणान्वितः ।।१६।।

पिता के जन्मलग्न से तीसरे लग्न में जन्म हो तो पिता के धन का भोगी होता

है। पिता के जन्मलग्न से १०वीं राशि में जन्म हो तो पिता के गुण के सदृश गुणवाला होता है।।१६।।

तदीशे लग्नसंस्थेऽपि पितृश्रेठो भवेत्सुतः ।
एवमादिफलं ज्ञात्वा तान्यत्रापि नियोजयेत् ।।१७।।

और उसके स्वामी यदि जन्मलग्न में हों तो पिता से श्रेष्ट होता है। इस प्रकार से पूर्वोक्त के फलों की योजना यहां भी करना।।१७।।

विशेषः-

सूर्याष्टवर्गे यच्छून्यं तन्मासे संवत्सरेऽपि च ।
विवाहव्रतवंधादि सर्वं तत्वर्जयेत्सदा ।।१८।।

सूर्याष्टक वर्ग में जिस राशि में अधिक शून्य हो उस राशि के मास में और संवत्सर (उस राशि में जब गुरुहों) में विवाह व्रत-वधादि शुभकर्म को न करें।।१८।।

कलहो त्रासदुःखानि शून्यमासे भवन्ति च ।
एवमादिफलं ज्ञात्वा मासं प्रति समाचरेत् ।।१९।।

अधिक शून्य वाले मास में कलह, भय, दुःखादि होते हैं इसको ध्यान में रखते हुये मास के कार्यों को करे।।१९।।

पितृ मरणकालः-

संशोध्यपिंडं सूर्यस्य रंध्रमानेन वर्द्धयेत् ।
अर्कोद्धतावशेषर्क्षे यदा याति शनैश्चरः ।
तस्मिन्मासे मृतिं विद्यात्तत्रिकोणगतेऽपिवा ।।२०।।

सूर्य के अष्टकवर्ग के पिंड को सूर्य के शून्य संख्या से गुणकर १२ का भाग देने से जो शेष बचे उस राशि में जब शनि जाता है तब उस राशि के मास में पिता की मृत्यु होती है या उस राशि से त्रिकोण राशि में जब शनि जाते हैं तब पिता की मृत्यु होती है।।२०।।

चन्द्राष्टकवर्गस्य फलम् -

चन्द्राच्चतुर्थभे मातुः प्रासादग्रामचिंतनम् ।
चन्द्राष्टवर्गेयद्राशौ शून्याधिक्यं प्रजायते ।।२१।।

चन्द्रमा से चतुर्थ भाव में माता, गृह और ग्राम का विचार करना चाहिये। चन्द्रमा के अष्टकवर्ग में जिस राशि में अधिक शून्य है।।२१।।

तं राशिं च परित्यज्य शुभकर्माणि कारयेत् ।
चन्द्राष्टमे शंनिक्षेत्रे त्रिकोणेषु विशेषतः ।।२२।।

उस राशि में जब चन्द्रमा हो तब शुभ कर्म को न करे। चन्द्रमा से आठवें शनि की राशि से विशेष कर त्रिकोण में हों तो।।२२।।

आधिव्याधिदुःखाण्यपि लभते नात्र संशयः ।
चन्द्रात्सुखफलात्पिंडं वर्धयेद्धैर्हतं चतत् ।।२३।।

उस समय जातक को मानसिक कष्ट, व्याधि और दुःख होता है। चन्द्रमा से चौथे भाव के फल को खंड (पिंड) से गुणा कर २७ से भाग देने से।।२३।।

शेषमृक्षे शनौ याते मातृहानिं विनिर्दिशेत् ।
तत्त्रिकोणेषु वा केचिद्दशाछिद्रेषु कल्पयेत् ।।२४।।

जो शेष हो तत्तुल्य नक्षत्र पर शनि के रहने से माता को कष्ट या मृत्यु होती है। अथवा उस नक्षत्र से त्रिकोण नक्षत्र (१० या १९ नक्षत्र में) में शनि के रहने से और उस समय कष्टप्रद दशा के रहने से माता की मृत्यु होती है।।२४।।

भौमाष्टकवर्गफलम् –

भौमाष्टवर्गे संचिन्त्यं भ्रातृविक्रमधैर्यकम् ।
भौमस्थितस्य सहजोराशिर्भ्रातृगृहंस्मृतम् ।।२५।।

भौमाष्टक में भाई, पराक्रम और धैर्य का विचार करना चाहिये। भौम से तीसरे भाव से भाई का विचार करना चाहिये।।२५।।

त्रिकोण शोधनं कृत्वा यत्रभूयाँसि तत्रवै ।
भूमिर्भवति भार्यवा भ्रातृगेहसुखं तथा ।।२६।।

भौमाष्टकवर्ग में त्रिकोण शोधन के पश्चात् जिस राशि में अधिक शेष हो उस राशि में जब भौम जाता है तो भूमि का स्त्री का लाभ और भाई तथा गृह का सुख होता है।।२६।।

भौमो बलविहीनश्चेत् दीर्घायुर्भ्रातृकोभवेत् ।
फलानि यत्र क्षीयन्ते तत्रभूमिहानिः स्मृतः ।।२७।।

यदि भौम निर्बल हो तो भाई दीर्घायु होता है। और जिस राशि में फल की कमी हो उस पर भौम के जाने से भूमि की हानि होती है।।२७।।

तद्राशिफलसंख्यैश्च वर्धयेच्छोध्यपूर्ववत् ।
शेषर्क्षे च शनौ याते भ्रातृहानिर्विनिर्दिशेत् ।।२८।।

फलों के योग को पिंड से गुणा कर पूर्ववत् २७ का भाग देने से शेष नक्षत्र मे शनि के जाने से भाई की मृत्यु होती है।।२८।।

अथ बुधाष्टकवर्गफलम् –

बुधात्तुर्ये कुटुम्बं च धनं मित्रादिमातुलाः ।
तत्पंचमे मंत्रविद्यालिपि बुध्यादि चिंतयेत् ।।२९।।

बुध से चौथे भाव में कुटुम्ब, धन, मित्र, मामा आदि का और बुध से पाँचवें भाव में मंत्र शास्त्र, लेखन और बुद्धि का विचार करना चाहिये।।२९।।

बुधाष्टवर्ग संशोध्य शेषमृक्षगते शनौ ।
बंधुमित्रादि नाशादींल्लभतेनात्र संशयः ।।३०।।

बुधाष्टक वर्ग में पूर्ववत् संशोधन करके रशिपिंड से योग पिंड को गुणाकर २७ से भाग देने से शेष नक्षत्र या उसके त्रिकोण नक्षत्र में शनि के जाने से बंधु मित्रादि का नाश होता है।।३०।।

अथ गुर्वष्टकवर्गफलम् –

जीवात्पंचमतो ज्ञानं पुत्रधर्मधनादिकम् ।
गुरोरष्टकवर्गेषु संतानमपि कल्पयेत् ।।३१।।

गुरु से पाँचवें भाव में संतान का विचार करना चाहिये। इसी प्रकार गुरु के अष्टकवर्ग में भी संतान विचार करना चाहिये।।३१।।

गुरुस्थितसुतस्थाने यावच्च विद्यते फलम् ।
शत्रुनीचगृहं त्यक्त्वा तावंतश्च सुताः स्मृताः ।।३२।।

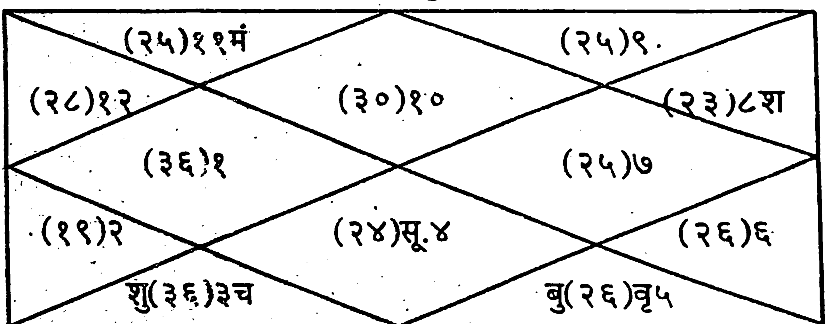
गुरु से पाँचवें भाव में जितना फल हो उतने ही संख्यक संतान होते हैं यदि वह राशि गुरु की शत्रु और नीच राशि न हो तो।।३२।।

समुदायाष्टकवर्गचक्र।

राशि	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	योग
ग्रह	शु. चं.	सू.	बु. बृ.					श.			मं.		
सू.	५	५	४	३	४	२	४	६	५	४	३	३	४८
चं.	५	३	५	२	४	३	४	५	५	२	४	७	४९
मं.	३	५	४	२	३	३	२	६	३	४	२	२	३९
बु.	४	४	६	५	५	५	३	५	४	५	४	४	५४
बृ.	६	५	३	४	४	५	६	५	३	४	६	५	५६
शु.	६	४	७	४	४	४	४	१	३	६	५	४	५२
श.	७	३	४	४	२	१	२	५	२	५	१	३	३९
	३६	२९	३६	२४	३६	२३	२५	३३	२५	३०	२५	२८	

नोट- सर्वाष्टक वर्ग में सभी अष्टवर्गों में मेषादि राशियों में कितनी-कितनी रेखायें प्राप्त हुई हैं और उनका योग क्या हुआ लिखना चाहिये।

अष्टकवर्ग कुंडली



मातृपित्रोः मृत्युकालः।

ग्रहयोगेन हानिः स्यात् वर्गणाघ्नं पृथक्ततः ।
संयोज्य सप्तभिर्हत्वा सप्तविंशति भाजिताः ।।१८।।

एकाधिपत्य शोधन करने से राशियों के नीचे जो अंक आये हैं चाहे वे शून्य हों या रेखा हों उन्हें राशि के ध्रुवांको से पृथक्-पृथक् गुण देना और जिस राशि में ग्रह हैं उनके अंकों को उन उन ग्रहों के ध्रुवांकों से गुणकर पृथक्-पृथक् रखकर, राशियों के गुणनफल का योग और ग्रहों के गुणनफल का योग कर दोनों को एक जगह जोड़कर सात ७ से गुणकर उसमें २७ से भाग देने से।।१८।।

अब्दादयस्तदा देहनाशः करणदे सति ।
तस्मिन् पापग्रहे तस्माद्वलिन्येवं विधिःस्मृतः ।।१९।।

लब्धि माता पिता के आयुष्य का प्रमाण होता है। यदि पापग्रह वलवान् हो तो पूर्वविधि से ही मृत्युकाल जानना।।१९।।

बलहीने तु तं हन्यात्सप्तभिः पंचभिर्भजेत् ।
आयुस्तयोः स्यात्स्थानस्य प्रदिशेदशुभे सति ।।२०।।

यदि निर्वल हो तो योग को सात से गुणकर ५ से भाग देने से जो वर्षादि हो वही माता पिता के आयुष्य का प्रमाण होता है।।२०।।

मुनिभक्तं वसुघ्नं स्यान्नैवं चेन्नैतयोर्मृतिः ।
वक्ष्यमाणेन विधिना वदेदाह पराशरः ।।२१।।

यदि रेखाप्रद ग्रह वली हो तो पूर्व पिंड को आठ से गुणकर ७ से भाग देने से लब्ध वर्षादिक दोनों का आयुष्य होता है। शून्य के आयुष्य से रेखा का आयुष्य अधिक हो तो मृत्यु नहीं होती है ऐसा पाराशर का मत है।।२१।।

चतुर्थभावात्सूर्याच्चआयुसाधनम् –

सूर्यादायुः करौ भूपा मनवोऽर्का नवार्णवाः ।
वेदाक्षीणि तु लग्नस्य वक्ष्याम्यायुस्तथैवतत् ।।२२।।

सूर्यादि ग्रहों के और लग्न का क्रम से आयुध्रुवांक २।१६।१४।१२।९।४।४।२ है।।२२।।

स्वोच्चे नीचे तु पातः स्याद्धरणादिविधिस्ततः।
आयुस्तयोः स्यात्तौ तस्मिन् भवने तु तथा स्थितौ।।२३।।

यदि उच्च में ग्रह हो तो ध्रुवांक की आयु ही स्पष्ट होती है और नीच में ग्रह हो तो अनुपात द्वारा आयु लाना चाहिये।।२३।।

ध्रुवांक द्वारा आयुर्विचारः–

न कश्चित्स्थानदः स्याच्चेत्तत्काले च मृतिर्भवेत् ।
शुभभोगे शुभा प्रोक्ता तयोःस्याद्रश्मिसंभवः ।।२४।।

यदि वहां कोई रेखाप्रद ग्रह न हो तो उसी समय मृत्यु कहना चाहिये शुभग्रह

के योग से उत्तम रीति से और पापग्रह अधिक हों तो दंड पातादि से मृत्यु कहना।।२४।।

रश्मितः आयु साधनम् -

अष्टभिर्गुणयेत्षड्भिर्विभज्यायुः परं भवेत् ।
वेश्मनि स्थानदा न स्युर्जन्मकाले स्फुटीकृताः ।।२५।।

सूर्य और चतुर्थभाव के रश्मि संभव को ८ से गुणकर ६ से भाग लब्ध परम आयु होती है।।२५।।

करणाद्यभावेकरणादिद्वारा भाव विचारः-

कलीकृतश्च खनखैर्विभज्याब्दादयः क्रमात् ।
एवं शुभाशुभं ब्रूयान्मातापित्रोर्द्विजोत्तम ।।२६।।

यदि चतुर्थभाव में रेखाप्रद ग्रह न हों तो चतुर्थ भाव का कला पिंड बनाकर उसमें २०० से भाग देने से वर्षादि आयु होती है इसपर से माता पिता के शुभाशुभ फल को कहना।।२६।।

करणस्थानदातारः पापपुण्य फलप्रदाः ।
पुनश्चोच्चादिषु तथा त्रिगुणाद्यास्तु पूर्ववत् ।।२७।।

शून्य के देने वाले ग्रह पापफल देने वाले होते हैं और रेखा देने वाले ग्रह शुभफल देने वाले होते हैं। यदि ये अपने मूलत्रिकोणादि में हों तो पूर्ववत् त्रिगुणादि फल देते हैं।।२७।।

शत्रुनीचाधि शत्रूणां स्थानेष्वपि तु पूर्ववत् ।
राशिं हित्वा तु भावानां सर्वत्रैवं क्रिया भवेत् ।।२८।।

जहां आयुष्य का विचार हो वहां राशि को छोड़कर अंशादि से जैसा संस्कार कहा हो वैसा करना, यह क्रिया सर्वत्र जानना।।२८।।

भावानां संस्कार विशेषाद् फल विचारः-

द्वितीयभावलिप्ताश्च राशिलिप्ताविभाजिताः ।
स्ववर्गणाहतास्तस्य खेटानां वर्गणाहताः ।।२९।।

दूसरे भाव के अंशादि का कला करके उसमें दूसरे भाव की राशि के कला

से भाग देना लब्ध कलादि फल को द्वितीय भाव के ध्रुवांक से गुणाकर यदि उनमें ग्रह हो तो उसके ध्रुवांक से गुणकर।।२९।।

भावरश्मिभिराहन्यात्सप्तभिश्च विभाजयेत् ।
मूलरश्मिसमूहेन शिष्टं हन्यात्तथैवतान् ।।३०।।

उसे दूसरे भाव के स्वामी के रश्मि से गुणाकर सात से भाग देने से जो अंक प्राप्त हो वह भारणीय कुटुम्ब की संख्या और शेष को मूलरश्मि समूह से गुणकर।।३०।।

इष्टानिष्टफलाभ्यां च हत्वांतरमथद्वयोः ।
सप्तविंशतिभिर्हत्वा सप्तभिश्च विभाजयेत् ।।३१।।

गुणनफल में भाव स्वामी के इष्ट फल से गुणन करके एवं भाव स्वामी के कष्ट बलांकों से मूलरश्मि समूह को गुणन कर दोनों के अन्तर को २७ से गुण देने से कलादि फल को ७ से भाग देने से जो आवे वह स्त्रियों की संख्या होती है।।३१।।

भरणीय कुटुम्बानां पुंस्त्रियस्तत्समाविदुः ।
राशीन् हित्वातु लग्नादि भावभागादिकान् ।।३२।।

राशियों को छोड़कर लग्नादि भावों के अंशादि अलग-अलग। अपने अपने स्वामियों के रश्मियों से गुणन करने से जो आवे उसे भावभागादि कहते हैं।।३२।।

गुणयेद्रश्मिभिः स्वैश्च भावभागादयोविदुः ।
कलीकृत्य भलिप्ताभिर्विभज्याप्तं फलं ततः ।।३३।।

इसका कलापिंड बनाकर दो जगह स्थापित करे उसमें राशि लिप्ता से भाग देने से जो फल प्राप्त हो उसे भावफल कहते हैं और दूसरे स्थान में १२ से भाग देने से जो फल हो उसे भाव साधन फल कहते हैं।।३३।।

प्रकारांतर से भावफल साधन–

सूर्यभक्तावशिष्टं तु भावानां साधनं विदुः ।
राशीन् हित्वा ततो लिप्ताखखनेत्रविभाजिताः ।।३४।।

राशिको छोड़कर अंशादि की कला बनाकर उसमें २०० से भाग देना।।३४।।

साधनघ्ना विभक्ताश्च वर्गणाभिः फलाहताः ।
उच्चादिवृद्धिहानिं च कुर्यात्तत्संख्यकाभवेत् ।।३५।।

लब्ध को पूर्व साधित भाव साधन से गुणकर अपने ध्रुवांक में भाग देना और पूर्व प्रतिपादित भाव साधन से गुण कर अपने ध्रुवांक में भाग देना पुनः इसे पूर्वसंपादित फल से गुण देने से जो संख्या प्राप्त हो वह कुटुम्बपोषण की संख्या होती है।।३५।।

अष्टकवर्गफलाध्यायः।

तत्रादावष्टकवर्गे विचारणीयः–

आत्मभावशक्तिश्च पितृचिन्ता रवेः फलम् ।
मनोवृत्तिप्रसादश्च मातृचिन्तामृगांकतः ।।१।।

आत्मा, प्रभाव, शक्ति और पिता का फल सूर्य से विचार करना चाहिये मन, वृत्ति, प्रसन्नता और माता का विचार चन्द्रमा से करना चाहिये।।१।।

भ्रातृसत्वं गुणं भूमिंभौमेन च विचारयेत् ।
वाणिज्यकर्मवृतिश्च बुधेन तु विचिन्तयेत् ।।२।।

भाई, बल, गुण, भूमि का विचार भौम से करना चाहिये। वाणिज्य कर्म वृत्ति का बुध से करना चाहिये।।२।।

गुरुणा देहपुष्टिं च विद्यापुत्रार्थसंपदः ।
भृगोर्विवाहकर्माणि भोगस्थानं च वाहनम् ।।३।।

शरीर की पुष्टि, विद्या, पुत्र, धन संपत्ति का विचार गुरु से करना चाहिये। शुक्र से विवाह, संभोग, वाहन, वेश्या, स्त्री का विचार करना चाहिये।।३।।

वेश्यास्त्रीजनगात्राणि शुक्रेणैवनिरीक्षयेत् ।
आयुष्यं जीवनोपायं दुःखशोकमहद्भयम् ।
सर्वक्षणं च मरणं मंदेनैव निरीक्षयेत् ।।४।।

आयुष्य, जीवन, दुःख, शोक आदि का विचार शनि से करना चाहिये।।४।।

रविः पिता शशी माता भ्राता भौमो बुधःसुहृत् ।
मातुलेयः स्मृतो जीवो ज्ञानपुण्ये स्त्रियःसितः ।।५।।

सूर्य पितृ कारक, चन्द्रमा मातृकारक, भौम भ्रातृकारक, बुध मित्र और मातुल (मामा) कारक, गुरु विद्या और पुण्य (कर्म) कारक और शुक्र स्त्री कारक हैं।।५।।

एषामृक्षे च तत्काले मरणं कुरूते शनिः ।
आदित्याष्टकवर्गं च निक्षिप्याकाशचारिषु ।।६।।

इनके नक्षत्रों में जव शनि आता है तो इन लोगों को कष्ट कारक होता है। सूर्य के अष्टम वर्ग को ग्रह सहित स्थापनकर विचार करे।।६।।

अर्कस्थितस्य नवमो राशिः पितृगृहं स्मृतम् ।
तद्राशिफल संख्याभिवर्द्धयेद्योगपिंडकम् ।।७।।

सूर्य से नवम राशि पिता की होती है, उस नवम राशि में जो रेखा की संख्या हो उससे योग पिण्ड को गुणकर।।७।।

सप्तविंशोद्धृतं शेषं नक्षत्रं याति भानुजम् ।
तस्मिन्काले पितृक्लेशो भवतीति न संशयः ।।८।।

२७ से भाग देने से जो शेष बचे वह अश्विन्यादि नक्षत्र की संख्या होती है उस नक्षत्र पर जब शनि जाता है तो पिता को कष्ट होता है।।८।।

तत्त्रिकोणगते वापि पितापितृसमोऽपिवा ।
मरणं तस्य जानीयाद्दशाछिद्रेषु कल्पयेत् ।।९।।

अथवा इसके त्रिकोण नक्षत्र में जब शनि होता है तब पिता और पिता के सदृश लोगों को कष्ट होता है। यदि उस समय पापग्रह की दशा हो तो मृत्यु होती है अन्यथा कष्ट मात्र होता है।।९।।

अर्कात्तु तुर्यगेराहौ मंदे वा भूमिनंदने ।
गुरुशुक्रेक्षणमृते पितृहा जायते नरः ।।१०।।

सूर्य से चौथे स्थान में राहु, शनि, भौम में से कोई हो और उसे गुरु शुक्र न देखते हों तो पिता का नाश होता है।।१०।।

लग्नाच्चन्द्राद्गुरुस्थाने याते सूर्यसुते यदि ।
पित्रोर्नाशं तदा काले वीक्षिते पापसंयुते ।।११।।

लग्न या चन्द्रमा से नवम स्थान में शनि हों और पापग्रह दृष्ट और युत हों तो पिता का नाश होता है।।११।।

लग्नात्सुखेशराशीशदशायाम् पितृक्षयः ।
दशानुकूलकालेन योजयेत्कालवित्तमः ।।१२।।

लग्न से चतुर्थेश के राशीश की दशा में पिता का नाश होता है किन्तु दशा अनिष्टद न हो तो सुख होता है।।१२।।

पितृजन्माष्टमे जातस्तदीशे लग्नगेऽपिवा ।
तेनैव पितृकार्याणि करोत्यत्र न संशयः ।।१३।।

पिता के जन्मलग्न से आठवें लग्न में जन्म हो अथवा पिता के जन्मलग्न से आठवें भाव के स्वामी बालक के जन्मलग्न में हों तो वह बालक ही पिता के सभी कार्यों को करता है अर्थात् पिता की मृत्यु हो जाती है और वही सभी कार्य को करता है इसमें संशय नहीं है।।१३।।

पितृसुख योग–

सुखनाथ दशायां तु सुखप्राप्तेस्च संभवः ।
सुखेशे लाभलग्नस्थे चन्द्रलग्नाद्विशेषतः ।।१४।।

सुखेश की दशा में पिता को सुख होता है। सुखेश ११ वें या जन्मलग्न में हो तो, विशेषकर चन्द्रलग्न से।।१४।।

पितृगृहं समायुक्ते जातः पितृवशानुगः ।
तेनैव पितृकार्याणां कर्मक्षेत्रे समापयेत् ।।१५।।

दशमभाव में हो तो पिता के वश में रहने वाला होता है और वही पिता के कर्मों को करने वाला होता है।।१५।।

पितृजन्मतृतीयर्क्षे जातः पितृधनाश्रितः ।
पितृकर्मगृहे जातः पितृतुल्यगुणान्वितः ।।१६।।

पिता के जन्मलग्न से तीसरे लग्न में जन्म हो तो पिता के धन का भोगी होता

है। पिता के जन्मलग्न से १०वीं राशि में जन्म हो तो पिता के गुण के सदृश गुणवाला होता है।।१६।।

तदीशे लग्नसंस्थेऽपि पितृश्रेठो भवेत्सुतः ।
एवमादिफलं ज्ञात्वा तान्यत्रापि नियोजयेत् ।।१७।।

और उसके स्वामी यदि जन्मलग्न में हों तो पिता से श्रेष्ट होता है। इस प्रकार से पूर्वोक्त के फलों की योजना यहां भी करना।।१७।।

विशेषः-

सूर्याष्टवर्गे यच्छून्यं तन्मासे संवत्सरेऽपि च ।
विवाहव्रतवंधादि सर्वं तत्वर्जयेत्सदा ।।१८।।

सूर्याष्टक वर्ग में जिस राशि में अधिक शून्य हो उस राशि के मास में और संवत्सर (उस राशि में जब गुरु हों) में विवाह व्रत-वधादि शुभकर्म को न करें।।१८।।

कलहो त्रासदुःखानि शून्यमासे भवन्ति च ।
एवमादिफलं ज्ञात्वा मासं प्रति समाचरेत् ।।१९।।

अधिक शून्य वाले मास में कलह, भय, दुःखादि होते हैं इसको ध्यान में रखते हुये मास के कार्यों को करे।।१९।।

पितृ मरणकालः-

संशोध्यपिंडं सूर्यस्य रंध्रमानेन वर्द्धयेत् ।
अर्कोद्धतावशेषर्क्षे यदा याति शनैश्चरः ।
तस्मिन्मासे मृतिं विद्यात्तत्त्रिकोणगतेऽपिवा ।।२०।।

सूर्य के अष्टकवर्ग के पिंड को सूर्य के शून्य संख्या से गुणकर १२ का भाग देने से जो शेष बचे उस राशि में जब शनि जाता है तव उस राशि के मास में पिता की मृत्यु होती है या उस राशि से त्रिकोण राशि में जब शनि जाते हैं तब पिता की मृत्यु होती है।।२०।।

चन्द्राष्टकवर्गस्य फलम् -

चन्द्राच्चतुर्थभे मातुः प्रासादग्रामचिंतनम् ।
चन्द्राष्टवर्गेयद्राशौ शून्याधिक्यं प्रजायते ।।२१।।

चन्द्रमा से चतुर्थ भाव में माता, गृह और ग्राम का विचार करना चाहिये। चन्द्रमा के अष्टकवर्ग में जिस राशि में अधिक शून्य है।।२१।।

तं राशिं च परित्यज्य शुभकर्माणि कारयेत् ।
चन्द्राष्टमे शंनिक्षेत्रे त्रिकोणेषु विशेषतः ।।२२।।

उस राशि में जब चन्द्रमा हो तब शुभ कर्म को न करे। चन्द्रमा से आठवें शनि की राशि से विशेष कर त्रिकोण में हों तो।।२२।।

आधिव्याधिदुःखाण्यपि लभते नात्र संशयः ।
चन्द्रात्सुखफलात्पिंडं वर्धयेद्भैर्हृतं चतत् ।।२३।।

उस समय जातक को मानसिक कष्ट, व्याधि और दुःख होता है। चन्द्रमा से चौथे भाव के फल को खंड (पिंड) से गुणा कर २७ से भाग देने से।।२३।।

शेषमृक्षे शनौ याते मातृहानिं विनिर्दिशेत् ।
तत्त्रिकोणेषु वा केचिद्दशाछिद्रेषु कल्पयेत् ।।२४।।

जो शेष हो तत्तुल्य नक्षत्र पर शनि के रहने से माता को कष्ट या मृत्यु होती है। अथवा उस नक्षत्र से त्रिकोण नक्षत्र (१० या १९ नक्षत्र में) में शनि के रहने से और उस समय कष्टप्रद दशा के रहने से माता की मृत्यु होती है।।२४।।

भौमाष्टकवर्गफलम् –

भौमाष्टवर्गे संचिन्त्यं भ्रातृविक्रमधैर्यकम् ।
भौमस्थितस्य सहजोराशिर्भ्रातृगृहंस्मृतम् ।।२५।।

भौमाष्टक में भाई, पराक्रम और धैर्य का विचार करना चाहिये। भौम से तीसरे भाव से भाई का विचार करना चाहिये।।२५।।

त्रिकोण शोधनं कृत्वा यत्रभूयाँसि तत्रवै ।
भूमिर्भवति भार्यवा भ्रातृगेहसुखं तथा ।।२६।।

भौमाष्टकवर्ग में त्रिकोण शोधन के पश्चात् जिस राशि में अधिक शेष हो उस राशि में जब भौम जाता है तो भूमि का स्त्री का लाभ और भाई तथा गृह का सुख होता है।।२६।।

भौमो बलविहीनश्चेत् दीर्घायुर्भ्रातृकोभवेत् ।
फलानि यत्र क्षीयन्ते तत्रभूमिहानिः स्मृतः ।।२७।।

यदि भौम निर्बल हो तो भाई दीर्घायु होता है। और जिस राशि में फल की कमी हो उस पर भौम के जाने से भूमि की हानि होती है।।२७।।

तद्राशिफलसंख्यैश्च वर्धयेच्छोध्यपूर्ववत् ।
शेषर्क्षे च शनौ याते भ्रातृहानिर्विनिर्दिशेत् ।।२८।।

फलों के योग को पिंड से गुणा कर पूर्ववत् २७ का भाग देने से शेष नक्षत्र मे शनि के जाने से भाई की मृत्यु होती है।।२८।।

अथ बुधाष्टकवर्गफलम् –

बुधात्तुर्ये कुटुम्बं च धनं मित्रादिमातुलाः ।
तत्पंचमे मंत्रविद्यालिपि बुध्यादि चिंतयेत् ।।२९।।

बुध से चौथे भाव में कुटुम्ब, धन, मित्र, मामा आदि का और बुध से पाँचवें भाव में मंत्र शास्त्र, लेखन और बुद्धि का विचार करना चाहिये।।२९।।

बुधाष्टवर्ग संशोध्य शेषमृक्षगते शनौ ।
बंधुमित्रादि नाशादींल्लभतेनात्र संशयः ।।३०।।

बुधाष्टक वर्ग में पूर्ववत् संशोधन करके रशिपिंड से योग पिंड को गुणाकर २७ से भाग देने से शेष नक्षत्र या उसके त्रिकोण नक्षत्र में शनि के जाने से बंधु मित्रादि का नाश होता है।।३०।।

अथ गुर्वष्टकवर्गफलम् –

जीवात्पंचमतो ज्ञानं पुत्रधर्मधनादिकम् ।
गुरोरष्टकवर्गेषु संतानमपि कल्पयेत् ।।३१।।

गुरु से पाँचवें भाव में संतान का विचार करना चाहिये। इसी प्रकार गुरु के अष्टकवर्ग में भी संतान विचार करना चाहिये।।३१।।

गुरुस्थितसुतस्थाने यावच्च विद्यते फलम् ।
शत्रुनीचगृहं त्यक्त्वा तावंतश्च सुताः स्मृताः ।।३२।।

गरु से पाँचवें भाव में जितना फल हो उतने ही संख्यक संतान होते हैं यदि वह राशि गुरु की शत्रु और नीच राशि न हो तो।।३२।।

सुतभेशनवांशैश्च तुल्या वा सन्ततिर्भवेत् ।
व्ययार्थसुतसंस्थैश्च पापैः स्यात्क्षीणसन्ततिः ।।३३।।

पंचमेश के नवांश संख्या के तुल्य संतान की संख्या होती है। १२, २, ५ वें पापग्रह के तुल्य संतति की हानि होती है। पूर्व राशिपिंड को योगपिंड से गुणा कर २७ का या १२ का भाग देकर शेष तुल्य नक्षत्र या राशि में शनि के जाने से पुत्र को कष्ट होता है।।३३।।

अथ शुक्राष्टकवर्गफलम् –

भृगोरष्टकवर्गं च निक्षिप्याकाशचारिषु ।
येषु येषु फलानि स्युर्भूयांसि किलतत्रतु ।।३४।।

शुक्र का अष्टक वर्ग ग्रहों के साथ रखकर देखना चाहिये जहाँ जिस राशि में अधिक फल हो उस राशि पर जब शुक्र होते हैं तो जातक को।।३४।।

भूमिं कलत्रं वित्तं च तद्देशे निर्दिशेन्नृणाम् ।
शुक्रजामित्रतो लब्धिर्दारेशान्वितदिग्भवा ।।३५।।

उस समय भूमि, स्त्री और धन का लाभ उस राशि के देश से प्राप्त होता है। शुक्र से सातवें स्थान की दशा अथवा सप्तमेश की दशा में स्त्री आदि का लाभ होता है।।३५।।

भृगुदारेशयुक्तर्क्षफलसंख्या स्त्रियो विदुः ।
शुक्रान्मन्दे त्रिकोणस्थे नेष्टं जीवे सुखप्रदम् ।।३६।।

शुक्र अथवा सप्तमेश के युत राशि के फल के तुल्य स्त्री की संख्या होती है। शुक्र से त्रिकोण में जब गुरु होता है तब स्त्री को सुख होता है। शेष पूर्ववत् देखना चाहिये।।३६।।

अथ शनेरष्टकवर्गफलम् –

शनैश्चरस्थितस्थानादष्टमं मृतिरुच्यते ।
शनेरष्टकवर्गाच्च स्वस्यायुष्यं विनिर्दिशेत् ।।३७।।

शनि से आठवाँ भाव मृत्यु का होता है और शनि के अष्टकवर्ग से आयु का विचार करना चाहिये।।३७।।

लग्नात्प्रभृति मंदान्तं फलान्येकत्र कारयेत् ।
लग्नादिफलयोगाब्दे व्याधिबैरं समादिशेत् ।।३८।।

शनि के अष्टकवर्ग में लग्न से शनि पर्यन्त फलों (रेखा) का योग करना चाहिये उस योग के समान वर्ष में जातक को व्याधि और बैर का भय होता है।।३८।।

मन्दादिलग्नपर्यन्तं फलान्येकत्र संयुतम् ।
मंदादिफलतुल्याब्दे व्याधिं तस्य समादिशेत् ।।३९।।

इसी प्रकार शनि से लग्न पर्यन्त फलों को एकत्र जोड़कर जो हो तत्तुल्यवर्ष में भी व्याधि भय कहना।।३९।।

तयोर्योगसमाब्दे तु मृत्युयोगं समादिशेत् ।
शोध्यादिगुणनं कृत्वा पिंडं संस्थाप्ययत्नतः ।।४०।।

और दोनों फलों के योग तुल्य वर्ष में मृत्यु होती है। शोधनादि करने से जो पिंड आवे।।४०।।

अष्टमस्थफलैर्हत्वा स्वप्तविंशति भाजितम् ।
शतादूर्ध्वं तु तत्पिंडं शतमेवाग्रतस्त्यजेत् ।।४१।।

उसे अष्टमभावस्थ फल से गुणा कर २७ से भाग देने से यदि पिंड सौ से अधिक हो तो १०० को ही रखना।।४१।।

आयुः पिंडं तु जानीयात्प्राग्वद्वेलांतुकल्पयेत् ।
त्रिकोणैकाधिपत्यर्क्ष शोधनं विरचय्य च ।।४२।।

और उसी से गुणाकर २७ से भाग देने से आयु पिंड होता है इस पर से पूर्ववत् मृत्यु काल का निश्चय करना एकाधिपत्य शोधन से जो पिंड हो।।४२।।

पिंडं संस्थाप्य गुणयेल्लग्नादष्टमगैः फलैः ।
सप्तविंशतिहृच्छेषं मृत्युकालं वदेद्बुधः ।।४३।।

उसे अष्टमस्थ फल से गुणाकर २७ का भाग देने से जो शेष हो उस नक्षत्र पर शनि के जाने से या उससे त्रिकोण के नक्षत्र पर जाने से मृत्यु होती है।।४३।।

विशेष:-

मार्त्तण्डपुत्राष्टकवर्गमध्ये यद्यद्गृहे शून्यफलं भवेच्च।
तत्तद्भमध्ये रविजेऽथ सूर्ये तदा शरीरामयपीडनंस्यात्।।४४।।

शनि के अष्टकवर्ग में जिन-जिन राशियों में शून्य फल हो उन-उन राशियों में जव शनि या सूर्य जाते हैं तब-तब शरीर में रोग और कष्ट होता है।।४४।।

अवस्थात्रयविचार:-

मीनाद्यं मिथुनांतकं प्रथमकं प्रोक्तं वय: प्राक्तनै:।
कर्काद्यं वणिजांतकं तरुणता संज्ञं च मध्यंवुधै:।।४५।।

मीन राशि से मिथुन राशि पर्यन्त प्रथम अवस्था पूर्वाचार्यों ने कल्पना की है। कर्क से तुला पर्यन्त युवा अवस्था।।४५।।

कुभांतं स्थविराह्वयं च बहुभिर्यत्तत्फलै:संयुतम् ।
तत्सौख्यार्थविशेषकं बलयुतेहित्वाव्ययाष्टकम् ।।४६।।

और वृश्चिक से कुभं पर्यन्त वृद्धा अवस्था की कल्पना की है उक्त अवस्था के भावों के (सर्वाष्टक वर्ग) रेखाओं का योग करना जिस अवस्था में अधिक रेखा हो उस अवस्था में जातक को विशेष सुख होता है। किन्तु इसमें ८ वें और १२ वें भाव की रेखाओं का योग नहीं करना चाहिये।।४६।।

इत्यटष्कवर्गफलम्।

अथसर्वाष्टकवर्गफलम् -

मेषादिभानां सकलाष्टवर्ग
उत्पन्नरेखागणमेवकुर्यात् ।
धृत्यादि तत्वांतमितं कनिष्ठं
त्रिंशावसानं किल मध्यवीर्या: ।।४७।।

सर्वाष्टकवर्ग में मेषादि राशियों की रेखाओं का योग करना, रेखाओं का योग १८ से २५ तक हो तो कनिष्ठ फल, इसके बाद ३० तक हो तो मध्यम फल।।४७।।

त्रिंशाधिकं तूत्तमवीर्यदा: स्यु:
शरीरसौख्यार्थयशोविशेष: ।

स्वस्वाष्टवर्गे यदि वेदहीनाः

क्लेशाय सौख्यायच वेदपुष्टाः ।।४८।।

इससे अधिक हो तो उत्तम बल होता है इसमें शरीर का सुख, धन और यश का लाभ होता है। अपने-अपने अष्टक वर्ग में ४ से अल्प रेखा हो तो कष्टकारक और ४ से अधिक हो तो सुखकारक होता है।।४८।।

मध्यात्फलाधिके लाभो मध्यात्क्षीणफलेव्ययः ।

यस्य रेखाधिकं लग्नं भोगवानर्थवान् भवेत् ।।४९।।

दशम भाव की रेखा से लाभ भाव की रेखा अधिक हो और इससे अधिक लग्न की रेखा हो तो जातक के भोगसम्पत्ति की हानि होती है। यदि दशम भाव के फल से लाभभाव की रेखायें अधिक हों और दशम भाव की रेखा से व्यय भाव की रेखा अल्प हो और लग्न की रेखायें अधिक हो तो वह जातक भोगवान् और धनी होता है।।४९।।

प्रादक्षिण्यादिभानां सकलफलयुतिं दिक्चतुष्कक्रमेण

कृत्वातद्भागतो यः समदधिकफलतः शोभनं हानिमल्पात्।

सौम्यां स्वोच्चस्वगेहोदितखचरयुते दिग्विभागे स्वकार्ये

वित्तेशाशासु वित्तं मृतिपतिगतदिग्भागगे देहनाशः।।५०।।

लग्नादि द्वादश भावों की तीन-तीन राशियां पूर्व से दक्षिण क्रम से (सव्य गणना से) पूर्वादि दिशा कल्पना करना अर्थात् लग्न व्यय, लाभ भाव को पूर्व दिशा में, दशम, नवम, अष्टम भाव को दक्षिण दिशा में, सप्तम, षष्ठ, पंचम भाव को पश्चिम दिशा में और चतुर्थ, तृतीय, द्वितीय भाव को उत्तर दिशा में कल्पना करके प्रत्येक दिशा के भावों के संपूर्ण फलों का योग करके विचार करना जिन-जिन दिशाओं में अल्पफल हो उन-उन दिशाओं में हानि होती है।।५०।।

अथ भावफलम्।

भावं विलोक्य सदसत्फलदायकंयत्तद्राशि

संभवफलैश्च तदुक्तपिंडम् ।

पिंडे रेखा ताडिते भावशेषे राशौ

तस्मिन्याति सौरिः समायाम् ।।५१।।

शुभ-अशुभ फल देने वाले भाव के फल को पूर्वोक्त लग्नपिंड से गुणाकर २७ का भाग देने से शेष राशि में जब शनि जाता है।।५१।।

यस्यां तद्भावहानिं च विद्यात्प्राहुर्वंशेऽथवा तत्त्रिकोणे ।
कृत्वा विन्दुभ्यस्तु कालं सुधीमांस्तस्माद्वाच्यः प्राप्तिकालः शुभत्वे ।।५२।।

तब उस भाव जनित फल की हानि होती है। लग्नपिंड को भावफल से गुणाकर उसमें १२ का भाग देने से शेष राशि में जिस वर्ष शनि जाता है अथवा उसके त्रिकोण राशि में जब शनि जाता है तब उस भाव की हानि होती है।।५२।।

अथ समुदायाष्टकवर्गफलम् –

सर्वकर्मफलोपेते ह्यष्टवर्गक उच्यते ।
अन्यथा फलविज्ञानं दुर्गमं गुणदोषजम् ।।५३।।

सभी कर्मों के फल के उपयुक्त अष्टकवर्ग होता है, अन्यथा फल विज्ञान दुर्गम और दोषपूर्ण होता है।।५३।।

त्रिंशाधिकफलाये स्युः राशयस्ते शुभप्रदाः ।
त्रिंशांतं पंचविंशादि राशयो मध्यमाः स्मृताः ।।५४।।

जो राशि ३० से अधिक फल वाली हैं वह शुभफलद होती है, २५ से ३० तक फलवाली मध्यम फल वाली होती है।।५४।।

अतिक्षीणफला ये च राशयः कष्टदुःखदाः ।
श्रेष्ठराशिषु सर्वेषु शुभकार्याणि कारयेत् ।।५५।।

और अत्यन्त क्षीण फल वाली जो राशि होती है वह कष्ट और दुःख देने वाली होती है। जो श्रेष्ठफल देने वाली राशियाँ हैं उन सभी में शुभकर्मों को करना चाहिये।।५५।।

श्रेष्ठान्नाशीन्मुहूर्त्तेषु योजयेन्मतिमान्नरः ।
तत्तज्जन्मप्रभावास्तु पुंसस्तैः सार्धमाचरेत् ।।५६।।

और श्रेष्ठ राशियों को मुहूर्तों में योजित करना चाहिये।।५६।।

लग्ने यावत्फलं चास्ति तद्दशायां फलं वदेत् ।
मूर्त्यादिव्ययपर्यन्तं दृष्ट्वा भवफलानि वै ।।५७।।

लग्न में जो फल होता है वही दशा का फल होता है, लग्न से व्यय पर्यन्त प्रत्येक भाव के फल को देखे।।५७।।

अधिके शोभनं विद्यात्क्षीणे हीने च मृत्यवे ।
मध्यमे मध्यमं चैव विचार्यैवं फलं वदेत् ।।५८।।

जिस भाव का फल अधिक हो वह शुभफलदायक, न्यून अथवा शून्य फल वाले भाव कष्टकारक होते हैं और मध्यम फलवाले मध्यम होते हैं यह विचार कर फल को कहे।।५८।।

मेषादियद्गृहगता वसुसंख्ययातास्तद्भाव-
पुष्टिवलवृद्धिकरा भवंति ।
षट्पंचसप्तसहितानि शुभप्रदानि त्रिब्द्येक-
कर्णयुतभानि न शोभनानि ।।५९।।

मेषादि जिस राशि में ८ रेखा हो उस राशि के भाव का फल शुभ और वृद्धि कारक होता है। ६।५।७ रेखा से युक्त हो तो शुभप्रद होता है और ३, २, १ रेखा वाले शुभद नहीं होते हैं।।५९।।

मिश्रंफलंभवतिसागरकर्णयोगे
रोगापवादभयदा यदि शून्यभावाः ।
एकादिकर्णयुतभानुमुखग्रहाणां
भिन्नाष्टवर्गजनि सर्वफलं प्रवच्मि ।।६०।।

और ४ रेखा से युक्त भाव मिश्रित फल को देने वाला होता है और शून्य रेखा वाला भाव रोग कलंक और भय देने वाला होता है, यह एकादि रेखा का सूर्यादि ग्रहों का फल भिन्नाष्टक वर्ग से कहा जाता है।।६०।।

रेखाशान्तिफलम् –

रेखाभिः सप्तिभिर्युक्ते मासे मृत्युर्भवेन्नृणाम् ।
सुवर्णं विंशति पलं दद्याद्वौ तिलपर्वतौ ।।६१।।

समुदायाष्टक वर्ग में जिस राशि में ७ रेखा हो उस राशि के सूर्य के मांस में मृत्युभय होता है। उसकी शान्ति के लिये २० पल सुवर्ण और दो तिल का पर्वत दान करना चाहिये।।६१।।

वसुभिर्जातिहीनः स शीघ्रं मृत्युवशो नरः ।
असत्फल विनाशाय दद्यात्कर्पूरजां तुलाम् ।।६२।।

जिस राशि में ८ रेखा हो उस मास में जातिभ्रष्टता और मृत्युभय होता है अशुभफल के नाशार्थ कंपूर का तुलादान करना चाहिये।।६२।।

रेखाभिः नवभिः सर्पान्म्रियते मनुजो ध्रुवम् ।
अश्वैश्चतुभिः संयुक्तं रथं दद्यात्शुभाप्तये ।।६३।।

जिस राशि में ९ रेखा हो उस मास में सर्प से मृत्यु का भय होता है। इसकी शान्ति के लिये चार घोड़ों के रथ का दान करना चाहिये।।६३।।

रेखाभिर्दशभिः शस्त्रात्प्राणास्त्यजति मानवः ।
दद्याच्छुभफलावाप्त्यै कवचं वज्र संयुतम् ।।६४।।

जिस राशि में १० रेखा हो उस मास में हथियार की चोट से मृत्यु की संभावना होती है। वज्र सहित कवच का दान करना चाहिये।।६४।।

रुद्रैः प्राप्याभिशापं च प्राणैर्मुक्तोभवेन्नरः ।
दिक्पलैः स्वर्णघटितां प्रदद्यात्प्रतिमां विधोः ।।६५।।

जिस राशि में ११ रेखा हो किसी के शाप के कारण मृत्युभय होता है अतः शान्त्यर्थ १० भरी सुवर्ण की चन्द्रमा की मूर्त्तिदान करना चाहिये।।६५।।

आदित्यैर्जलदोषेण मानवस्य मृतिंवदेत् ।
भूमिं दद्यात् ब्राह्मणाय तस्माच्छुभफलंभवेत् ।।६६।।

जिस राशि में १८ रेखा हो उस मास में जलदोष से मृत्यु की संभावना होती है अतः शान्त्यर्थ ब्राह्मण को भूमि का दान करे।।६६।।

त्रयोदशमितैर्व्याघ्रान्मानवो मृत्युमाप्नुयात् ।
विष्णोर्हिरण्यगर्भस्य दानं कुर्याच्छुभाप्तये ।।६७।।

जिस राशि में १३ रेखा हो उस मास में व्याघ्र से मृत्यु का भय होता है अतः शान्त्यर्थ हिरण्यगर्भ (शालिग्राम) विष्णुमूर्त्ति का दान करने से शुभफल होता है।।६७।।

अचिराज्जीवितं जह्याच्छक्रैः कालेनभ क्षितः ।
वाराहप्रतिमां दद्यात्कनकेन विनिर्मिताम् ।।६८।।

१४ रेखा हो तो थोड़े काल में अल्पायु होने का भय होता है अतः शान्त्यर्थ सुवर्ण की वराह की मूर्त्ति दान करना चाहिये।।६८।।

राज्ञोभयं तिथिमितैस्तत्रहस्ती प्रदीयते ।
रिष्टभूपैः कल्पतरोः प्रतिमां च निवेदयेत् ।।६९।।

१५ रेखा हो तो राजभय होता है अतः उसकी शान्ति के लिये हाथी का दान करना चाहिये। १६ रेखा हो तो अरिष्ट का भय होता है अतः शान्त्यर्थ कल्पतरु वृक्ष की प्रतिमा का दान करे।।६९।।

ऋषिचन्द्रैर्व्याधिभयं गुड़धेतुं निवेदयेत् ।
कलहोऽष्टेंदुभिर्दद्याद्रत्नगोभूहिरण्यकम् ।।७०।।

१७ रेखा हो तो व्याधि का भय होता है अतः शान्त्यर्थ गुड धेनु का दान करना चाहिये १८ रेखा हो तो भय होता है अतः शान्ति के लिये रत्न, गौ और भूमि का दान करना चाहिये।।७०।।

देशत्यागोंऽकचन्द्रौ स्याच्छान्तिं कुर्याद्विधानतः ।
विंशत्या बुद्धिनाशः स्यात्कुर्याल्लक्षमितंजपम् ।।७१।।

१९ रेखा हो तो देश निकाला होता है अतः शान्त्यर्थ विधानपूर्वक ग्रह शान्ति कराना चाहिये। २० रेखा हो तो बुद्धि की हानि होती है अतः शान्त्यर्थ वागीश्वरी देवी के मंत्र का एक लाख जप कराना चाहिये।।७१।।

भूमिपक्षैः रोगपीडा दद्याद्धान्यस्य पर्वतम् ।
यमाश्विभिर्वन्धुपीडादद्यादादर्शकं बुधः ।।७२।।

२१ रेखा हो तो रोग से पीड़ा होती है अतः शान्त्यर्थ धान्य का पर्वत दान देना चाहिये।।७२।।

रामपक्षयुते मासे नानाक्लेशान्प्रपद्यते ।
सौवर्णी प्रतिमां दद्याद्रवेः सप्तपलैः क्रमात् ।।७३।।

२३ रेखा हो तो उस मास में अनेक कष्टों से युक्त होता है इसकी शान्ति के लिये ७ पल की सूर्य की प्रतिमा का दान करें।।७३।।

वेदाश्विभिर्वंधुहीनो दद्याद्गोदानकं दश ।
सर्वरोगादि नाशार्थं जपहोमादि कारयेत् ।।७४।।

२४ रेखा हो तो बंधु हीनता का भय होता है इसकी शान्ति के लिये दश गोदान करे २५ रेखा हो तो सभी रोग आदि के नाशार्थ जप होम करावैं।।७४।।

ऋतुपक्षैर्बुद्धिहीनः पूज्या वागीश्वरी तथा ।
धनक्षयः स्यान्नक्षत्रैः श्रीसूक्तं तत्र संजपेत् ।।७५।।

२९ रेखा हो तो बुद्धि हीनता होती हैं इसकी शान्ति के लिये बागीश्वरी देवी का पूजन करना चाहिये। २७ रेखा हो तो धन की हानि होती है इसकी शान्ति के लिये श्रीसूक्त का जप करावे।।७५।।

वसुपक्षयुते मासे न लाभो हानिखेचरैः ।
सूर्यहोमश्च कर्त्तव्यः विधिना शुभकांक्षिभिः ।।७६।।

२८ रेखा हो तो ग्रहों द्वारा हानि होती है। सूर्य के मंत्र से हवन कराना चाहिये।।७६।।

एकोनत्रिशता चापि चिंता व्याकुलितो भवेत् ।
घृतवस्त्रसुवर्णानि तत्र दद्याद्विचक्षणः ।।७७।।

२९ रेखा हो तो चिंता से व्याकुलता होती हैं इसकी शान्ति के लिये घी वस्त्र सुवर्ण का दान करना चाहिये।।७७।।

त्रिशता धनधान्याप्तिरिति जात्तकनिर्णयः ।
भूवह्निभिर्महोद्योगः पुत्रसंपद्गुणाग्निभिः ।।७८।।

३० रेखा हो तो धन धान्य का लाभ होता है। ३१ रेखा हो तो बड़े उद्योग का आरम्भ और ३३ रेखा में पुत्र संपत्ति का लाभ।।७८।।

सहेमवस्त्रलाभश्च चतुस्त्रिंशत्समन्विते ।
पंचरामैर्भवेद्धीमान्षट्त्रिंशत्सुतवित्तदा ।।७९।।

और ३४ रेखा में सुवर्ण वस्त्र का लाभ रेखा में बुद्धि की प्राचुर्यता, ३६ रेखामें पुत्र और धन का लाभ होता है।।७९।।

सप्तत्रिंशद्धनस्याप्तिरष्टत्रिशत्सुखार्थदा ।
द्रव्यरत्नाप्तिरेकोनचत्वारिंशद्भिर्प्रवर्धते ।।८०।।

३७ रेखा में धन का लाभ और ३८ रेखा में सुख और धन का लाभ होता है। ३९ रेखा में द्रव्य और रत्न का लाभ।।८०।।

धनवान्कीर्त्तिमांश्चैव चत्वारिंशतिवर्धते ।
अतऊर्ध्वं यशोऽर्थाप्तिः पुण्यश्रीरूपचीयते ।।८१।।

और ४० रेखा में धन और कीर्त्ति की वृद्धि होती है। इससे अधिक रेखा में यश धन, पुण्य आदि की वृद्धि होती है।।८१।।

इतिपाराशरहोरायामुत्तरार्धेऽष्टकवर्गप्रकरणम्।

इति पाराशर होरायामुत्तरर्धेलोकयात्रा वर्णनंनाम पंचमोध्यायः।।५।।

षष्ठोऽध्यायः।

भाग्योत्कर्षं भाग्यहानिं कुटुम्बं दुःखं हानिं शत्रुमायं व्ययंच ।
उद्वाहं स्त्रीपुत्रलाभादिकं च ब्रूयादेवं चाव्दचर्या क्रमेण ।।१।।

भाग्यवृद्धि भाग्यहानि, पोषणीय समूह, कष्ट, हानि, शत्रु, आय, व्यय, विवाह, स्त्री, पुत्र, लाभादिक का फल कहते हैं।।१।।

अब्दमासदिनचर्यविधानं वक्ष्यते खलु मया सुमते ते ।
वक्ष्यमाणविधिना परमायुः सम्यगत्र विदधीत महात्मन् ।।२।।

हे मैत्रेय! तुम्हें मैं वर्षचर्या, मासचर्या, दिनचर्या का विधान निश्चय कर कहता हूँ। इसके जानने के लिये सम्यक् रीति से आयु का ज्ञान आवश्यक है।।२।।

भावानां फल समयः।

भावानां साधनं हत्वा दृष्टिभिश्च वलेन च ।
षड्वर्गादिपतीनां च भावे पृथक्-पृथक् ।।३।।

भावों को अपनी-अपनी दृष्टि और भाव बल से गुणा कर गुणनफल में।।३।।

तेषां च दृग्वलानां च संहत्या भाजयेदथ ।
स्वामिदृष्टिस्थितानां तु काले भावफलं विदुः ।।४।।

उन उन भावों के स्वामियों के षड्बल, दृष्टि के योग से भाग देने से लब्ध वर्षादिक में भावों के फल होते हैं।।४।।

ज्ञानसंभवकालस्तु जन्मकालाद्बला यदा ।
लग्नादिव्ययपर्यन्ता भावाः काले तथा विदुः ।।५।।

जो भाव अपने स्वामी से दृष्ट हो और स्वामी बली हो तो उसके दशा में फल होता है। यदि अपने स्वामी से न देखा जाता हो तो उक्त समय में लग्न से व्ययपर्यन्त भावों में जो अधिक बली हो उसके स्वामी के दशा में उक्तभाव का फल होता है।।५।।

अथ शुभपापभेदात्भावफले विशेषः-

लग्नाषड्वर्गहोराणां भोक्तारः पतयः स्मृताः ।
त्रिपंचवेददिक्सप्तमुनिरामांशके फलम् ।।६।।

लग्न में जो षड्वर्ग कहा गया है उसके (अर्थात् ६ वर्गों के स्वामी) पृथक्-पृथक् अपनी-अपनी दशा में फल को देते हैं।।६।

शुभग्रहास्तुद्रष्टारः स्थानदाःसकलाग्रहाः ।
युक्ताः तदातु सद्भावाः संज्ञानुफलदास्तदा ।।७।।

किन्तु क्रम से ३।५।३।१०।७।७ ३ अंशों में फल को देते हैं। देखने वाले शुभग्रहों का ही शुभ फल होता है पापग्रहों का नहीं होता है। रेखा में दोनों का शुभाशुभ फल होता है।।७।।

पापात् हानिकरान् हित्वा स्वोच्चकोणसुहृत्स्थितान्।
तद्राशिर्यस्य शत्रुर्वा नीचयोर्वा ग्रहो यदि ।।८।।
हानिं कुर्यात्तदातस्य दृष्टियोगानुपाततः ।

भावों में जो ग्रह पाप या शुभ अपने उच्च नीच मूलत्रिकोण आदि में शत्रु मित्रादि की राशि में हों उसी क्रम से वह फल देते हैं।।८।।

अथ कारक विचारः-

उद्वाहकारकौ चन्द्रशुक्रौ ज्ञोवातपोऽथवा ।।९।।

चन्द्रमा और शुक्र विवाह कारक होते हैं अथवा बुध और गरु भी विवाह कारक होते हैं।।९।।

शनिर्मृतिकरो भौमरवी नीचासतीपती ।
गुरुः शुभकरः पुत्रे कुजो भ्रातरि शत्रुमे ।।१०।।

शनि मृत्युकारक होता है, भौम नीच (कुलटा) कारक और सूर्य सती (पतिव्रता) कारक है। पांचवे भाव में गुरु शुभ फल देने वाला होता है, भौम तीसरे स्थान में, छठें स्थान में।।१०।।

मदेश्चाये शुभाः सर्वे स्वोच्चगौ भौमसूर्यजौ ।
भाग्येऽशुभाः शुभा पापा अशुभाःस्वपतिंविना ।।११।।

शनि शुभफल दायक होता है और एकादश भाव में सभी शुभ फलद होते हैं, भौम शनि अपनी उच्चराशि में हो तो शुभद होता हैं। भाग्यभाव में पापग्रह अशुभ और शुभग्रह शुभद होता है किन्तु पापग्रह यदि उस भाव का स्वामी हो तो शुभद होता है।।११।।

अथ दृष्टिबलात् भावफलस्य व्यवस्था–

पूर्वभामे समुद्दिष्टदृग्वलेन फलानि तु ।
विरुद्धानि परित्यज्य समीचीनानि संग्रहेत् ।।१२।।

पूर्वभाम में दृष्टिवल से कहे हुये फल में विरुद्ध फलों का त्यागकर शुभफलों का इस प्रकरण में उपयोग करना।।१२।।

स्त्रीपुरुषयोः स्वभाव विचारः

ग्रहराशिस्वभावेन पुंस्त्रियोराशिमेव च ।
स्वभावं च वदेद्बुध्या देशकालकुलानुगः ।।१३।।

मनुष्यों के स्वभाव गुण को राशि और ग्रहों के अनुसार देशकाल और कुल के अनुसार ही कहना चाहिये।।१३।।

स्वभावे ह्रासवृद्धिः।

तेषामिष्टफलेवृद्धिस्त्वशुभाख्य फलादयः ।
अन्यथा त्वसदेवस्यात्तस्यतस्मान्मृतौफलम् ।।१४।।

जिस भाव का इष्टबल अधिक हो उसका शुभफल उत्तरोत्तर अधिक और जिसका कष्टबल अधिक हो उसका अशुभ फल उत्तरोत्तर अधिक होता है।।१४।।

रविस्तु पाचको ज्ञेयश्चन्द्रमा बोधकः सदा ।
पाचको बोधकश्चैव कारको वेधकः क्रमात् ।।१५।।

सूर्य पाचक होता है और चन्द्रमा बोधक होता है और सूर्य को कारक तथा चन्द्रमा को वेधक भी कहते हैं।।१५।।

सूर्यादिग्रहाणां स्थान संबन्धात्पाचकादिग्रहाः।

रव्यादीनां च विज्ञेया मंदारेज्यसितास्तथा ।
शुक्रारमंदरवयो रवीन्दुशनिचन्द्रजाः ।।१६।।
चन्द्रेज्यसितभौमाश्च मन्दारेन्दुदिनेश्वराः ।
भौमज्ञसूर्यमंदाः स्युः सितेन्दुगुरुभूमिजाः ।।१७।।
षट्सप्तनवरुद्रेषु सप्तनंदभवत्रिसु ।
द्विषडायव्ययेष्वेवं द्विवेदेन्द्रियवह्निषु ।।१८।।
षट्पंचसप्तरिष्फेषु द्विषड्व्ययचतुर्ष्वपि ।
त्रिरुद्रषट्सप्तमेषु स्थिताः स्थानेषु ते ग्रहाः ।।१९।।

सूर्य से ६।७।९।११ स्थानों में क्रम से शनि, भौम, गरु, शुक्र पाचक बोधक, कारक और वेधक होते हैं। एवं चन्द्रमा से ७।९।११।३ स्थानों में शुक्र, भौम, शनि, सूर्य, भौम से २।६।११।१२ स्थानों में सूर्य, चन्द्र, शनि, बुध से २।४।५।३ स्थानों में चन्द्र, गुरु, शुक्र, भौम, गुरु से ६।५।७।१२ स्थानों में शनि, भौम, चन्द्र, सूर्य, शुक्र से २।६।१२।४ स्थानों में भौम, बुध, सूर्य, शनि और शनि, और शनि से ३।११।६।७ स्थानों में शुक्र, चन्द्र, गुरु, भौम पाचक वोधक, कारक और बेधक होते हैं।।१६-१९।।

पाचकाद्यास्तुचत्वारः सूर्यादिभ्यः क्रमादिह ।
पीडर्क्षेवाप्यपीडर्क्षे केन्द्रे लग्नं विना तथा ।।२०।।

सूर्यादि ग्रहों की शत्रुराशि, अपीऽर्क्षे (मित्रराशि) में लग्न को छोड़कर केन्द्र में गये हुये सभी पाचक आदि ग्रह बली होते हैं।।२०।।

षट्सप्तधर्मकर्मायमृतिष्वेव गताः क्रमात् ।
पाचकाद्याश्चतुर्थे च बलवंत समीरिताः ।।२१।।

तथा लग्न से ६।७।९।१०।११।८।४ इन स्थानों में गये हुये सूर्यादि पाचक आदि क्रम से बली होते हैं।।२१।।

कारको मंदफलदो वेधको विघ्नकृत्स्मृतः ।
बोधकः शीघ्रफलदः पाचको विफलप्रदः ।।२२।।

कारक ग्रह न्यून फल वेधक अपने भाव के फल की हानि करने वाला, बोधक ग्रह अपने भाव के फल को शीघ्र देने वाला तथा पाचक ग्रह अपने भाव संबधित फल को विफल करने वाला होता है।।२२।।

तदंशकालस्यांते वाप्यादावंत्याशकेऽपि च ।
धृंत्यांशकेऽपि फलदाः पाचकाद्याःक्रमादिह ।।२३।।

ये पाचक बोधक कारक और वेधक ग्रह अन्तिम नवमांश में वा प्रथम तथा अन्तिम नवांश में भी फल देते हैं।।२३।।

सूर्यादि ग्रहाणां गोचरे फलकालः।

आदौ फलप्रदौ भौमरवी मध्ये सितार्यकौ ।
सर्वदाज्ञः शशी मंदस्त्ववसाने फलप्रदौ ।।२४।।

भौम और सूर्य राशि के आदि में, शुक्र और गुरु राशि के मध्य में बुध सर्वदा और चंद्र शनि राशि के अन्त में फल देनेवाला होता है।।२४।।

इति पाराशर होरायामुत्तरार्धे लोकयात्राध्याये प्रकीर्णकाध्यायः षष्ठः।।६।।

अथ सप्तमोऽध्यायः

भावफलानामवधिः।

धनहानिभयानां च व्याधीनां दिवसास्तथा ।
शुभाशुभानि कर्माणि यात्रादि विजयादि च ।।१।।

धन की प्राप्ति और हानि, शत्रुभय और रोग की प्राप्ति का दिन, और शुभ अशुभ कर्म जय पराजय और उत्कर्ष इनका निर्णय।।१।।

मासचर्या विधानेन ब्रूयादन्येन चैतरान् ।
लग्नारिमृतिरिः फेषु कर्मणां च पर्तीस्तथा ।।२।।

मासचर्या के अनुसार करना चाहिये, इससे भिन्न कार्यो को दिन और वर्ष चर्या के अनुसार करना चाहिये। इसमें भी १।६।८।१२ भावों के स्वामी और बिन्दु के स्वामियों का विचार करना चाहिये।।२।।

करणेशान्समालोच्य कथयेन्सुनिपुंगव ।
रसेषवोमुनिः खाष्टो रविभूपा दिशस्तथा ।।३।।

सूर्य का ५६ दिन चन्द्र का ७ दिन, भौम का ८० दिन, बुध का १२ दिन, गुरु का १६ दिन शुक्र का १० दिन।।३।।

द्विशतं च क्रमात्सूर्याद्दिवसाञ्चाष्टमे स्थिताः ।
द्वितीयेऽर्धं त्वंतरे च त्रैराशिकवशेन तु ।।४।।

और शनि का २०० दिन अष्टम भाव में फल देने का समय है। दूसरे भाव में उक्त दिन संख्या का आधा और २।८ भावो को छोड़कर अंन्य भावों में अनुपात द्वारा दिन संख्या ले आकर अवधि कहना चाहिये।।४।।

इति पाराशरहोरायामुत्तरार्धेलोकयात्रायांभावफलविवेकः सप्तमोऽध्यायः।

अथाष्टमोऽध्यायः।

अथयोगानां भङ्गयोगः।

तेषां भंगमथो वक्ष्ये यथाह कमलासनः ।
गर्गाय भगवान्सोपि ममाहाहं तव द्विज ।।१।।

हे मैत्रेय! पहले ब्रह्माजी ने जो योग भंग योग को गर्ग से कहा था और गर्ग ने मुझसे कहा था उसे मैं तुमसे कहता हूँ।।१।।

तथा च रिःफषष्ठाष्टस्थानानां करणाधिपाः ।
तत्तद्भावस्य भंगस्य कर्त्तारः सति संभवे ।।२।।

यदि लग्न से १२।६।८ भावों में बिन्दु देने वाले ग्रह बैठे हों या उन भावों के स्वामी के साथ बैठे हों तो भावों का भंग होता है।।२।।

तत्तद्भावोऽष्टवर्गोत्थ संख्या तद्वर्गणाहता ।
रविभक्ता ततः शिष्टा राशिर्मेषादिकाभवेत् ।।३।।

जिस भाव का विचार करना हो उस भाव के करणांक (बिन्दु संख्या) संख्या से उस भाव के वर्गणा से गुणकर १२ का भाग देने से शेष मेषादि से राशि होती है।।३।।

षष्ठाष्टरिःफे राशिश्चेद्भंग एव प्रकीर्त्तितः ।
फलं च मुनि संवृद्धं रविभक्तं तथा भवेत् ।।४।।

यदि यह राशि ६।८।१२ भाव में हो तो भाव का भंग होता है। यहाँ १२ से भाग देने से जो लब्धांक हो उसे ७ से गुणकर उसमें १८ से भाग देने से दोष राशि होती है यदि यह राशि ६।८।१२ भाव में हो तो योग का भंग होता है।।४।।

शिष्टमेवं यदि तदा शत्रुभं वाथ भंगदम् ।
तद्भावानिष्टफलकं तच्छत्रुफलसंगुणम् ।।५।।

पूर्वोक्त प्रकार से आई हुई राशि यदि लग्नेश की शत्रुराशि हो वा लग्न से भंग युक्त हो तो उस भाव का अनिष्टफल होता है।।५।।

सप्ताप्तं शिष्टमेवात्र पापरस्मिगुणं ततः ।
अर्कशिष्टं यदि भवेत्षष्ठरिःफाष्टमेऽपि वा ।।६।।

जो शेष है वह जिस भाव का भंग करता है उस भाव के कष्टफल से उसे गुणकर ७ से योग देना जो शेष रहे उसे शत्रु की राशि से गुण देना उसमें १२ से भाग देने से शेष राशि ६।८।१२ में हो तो उस भाव का भंग कहना।।६।।

शत्रुभं वापिभंगर्क्षं हानिस्तस्य प्रकीर्त्तिताः ।
यथोत्तरमितीवाप्तं क्षयवृद्धिस्ततो भवेत् ।।७।।

इस प्रकार से जो भंग आता है उसके १।२।३ के क्रम से क्षय और वृद्धि जानना चाहिये।।७।।

पुनः प्रकारांतरेण।

षष्ठयंशे च कलांशे च त्वप्रकाशग्रहोदये ।
राहुकालसमायोगेतद्भावफलभंगदः ।।८।।

जिस भाव के भंग का विचार करना हो उस भाव के षष्ठयंश वा कलांश (षोडशांश) में अप्रकाश में से किसी एक का उदय हो तो भाव का भंगकारक योग होता है।।८।।

अनिष्टाख्यं च रश्मिं च तद्भावफलसंगुणम् ।
द्वादशाप्तावशेषं च पूर्ववत्फलमीरितम् ।।९।।

अथवा भाव के अरिष्टरश्मि को उस भाव के इष्टवलांक से गुणाकर के उसमें १२ का भाग देने से शेष राशि से पूर्ववत् भाव के भंग योग का विचार करना।।९।।

यद्यत्फलं प्रोक्तमथोत्तरत्र तत्सर्वमन्यत्रच योजनीयम् ।
भंगं च भंगं च मुनिश्च गर्गः प्रोवाचयद्वन्मुनिपुंगवाहम् ।।१०।।

मैंने जो भावभंग का विचार कहा है सो उत्तरोत्तर जहाँ जहाँ उसका उपयोग हो वहाँ वहाँ देखना, जो भंग गर्ग मुनि ने कहा है उन्हीं भंगों का लक्षण मैंने कहा है।।१०।।

षष्ठ्यंशे च कलांशे च त्रिष्वेकोऽपि यदा न चेत् ।
अधिमित्रं च मित्रं च भंगभंगः प्रकीर्त्तितः ।।११।।

यदि अभीष्टभाव के षष्ठयंश वा षोडशांश में शत्रुराशि में अप्रकाश ग्रहों का उदय, राहु समायोग इसमें से कोई भी एक न हो और अधिमित्र वा मित्र हो तो पूर्वोक्त भंग का परिहार हो जाता है।।११।।

इति पाराशरहोरायामुत्तरार्धे लोकयात्रायां प्रकीर्णकाध्यायः अष्टमः।

अथनवमोऽध्यायः ।

अथ भावानां संज्ञा।

आत्मा शरीरं होरा च कल्पं लग्नं च मूर्तयः ।
स्वं कुटुम्बं च दुश्चिक्यं विक्रमं सहजं सह ।।१।।

लग्न के आत्मा, शरीर, होरा, कल्प, लग्न, मूर्त्ति नाम हैं। दूसरे भाव के स्वं और कुटुम्ब ये दो नाम हैं। तीसरे भाव का दुश्चिक्य, विक्रम, सहज, सह ये नाम हैं।।१।।

पातालं हिवुकं वेश्म मित्रवंधूदकं सुखम् ।
त्रिकोणं प्रतिभाबुद्धिमातृविद्यासुतास्ततः ।।२।।

चतुर्थभाव के पाताल, हिवुक, वेश्म, मित्र, वंधु, उदक, सुख नाम हैं, पंचम भाव के त्रिकोण, प्रतिभा, वुद्धि, मातृ, विद्या, सुत नाम हैं।।२।।

ब्याधिक्षतारिभंगाश्च क्रोधो लोभोऽथ मत्सर ।
कामो विवाहो यात्रा स्त्री रतिद्यूनं मदोऽज्ञता ।।३।।

छठे भाव के व्याधि, क्षत्र, अरि, भंग, क्रोध, लोभ, मत्सर नाम हैं। सप्तम भाव के काम, विवाह, स्त्री, रति, द्यून, मद, अज्ञता नाम हैं।।३।।

पराभवो मृतिर्वधो रंध्रायुर्निधनं च्युतिः ।
शुभं धर्मस्ततो भाग्यं त्रिकोणं च गुरुर्विभुः ।।४।।

अष्टम भाव के पराभव, मृति, वंध, रंध्र, आयु, निधन, च्युति नाम हैं। नवमभाव के शुभ, धर्म, भाग्य, त्रिकोण, गरु, विभु नाम हैं।।४।।

व्यापारस्पदमेषूरणमानाज्ञा कर्मखम् ।
भावाय लाभाप तपो रिःफं हानिर्व्ययःस्मृतः ।।५।।

दशमभाव के व्यापार, आस्पद मेषूरण, मान, आज्ञा, कर्म, रव, नाम हैं। एकादश भाव के आय, लाभ, अप, तप नाम हैं। व्ययभाव के रिःफ, हानि और व्यय नाम है।।५।।

यात्रायां दशमेनैव निवृत्तिः सप्तमेन तु ।
वृद्धिश्चतुर्थलग्नेन त्रितयं संप्रकीर्त्तितम् ।।६।।

दशम भाव से यात्रा का विचार करना चाहिये और सातवें भाव से यात्रा में निवृत्ति का विचार करना चाहिये। चतुर्थ से वृद्धि का विचार, इन तीनों को मिलाकर कुल ७० विषय हुये।।६।।

स्वोच्चमित्र स्ववर्गस्था एवमर्थाश्च सप्ततिः ।
नीचारिवर्गगाश्चान्यत्पुष्टंचापुष्टमेव च ।।७।।

यदि ग्रह मित्र, उच्च स्वक्षेत्र या षड्वर्ग में हों तो पूर्वोक्त सभी फल उत्तम होते हैं और यदि शत्रु, नीच शत्रुवर्गादि में हो तो अशुभ फल दायक होता है।।७।।

अथ ग्रहात् भाव विचारः।

रविः शरीरे होरयां स्वे च भ्रातरि वेश्मनि ।
सुते व्याधौ क्षते शत्रौ मृतौ तपसि कर्मणि ।।८।।

सूर्य शरीर, लग्न, दूसरे भाव में तीसरे भाव में, चौथे घर में, पुत्र भाव में रोग विचार में, क्षत विचार में, मृत्यु और नवम के विचार में, कर्म के विचार में, दशम।।८।।

आये व्यये फलं दद्यात् शीतगुविक्रमे सुखे ।
कुटुम्बे भ्रातरिक्रोधे प्रतिभायां शुभे मृतौ ।।९।।
भाग्ये त्रिकोणे व्यापारे लाभे रिःफे फलप्रदः ।

आय और व्यय के विचार में फल देता है। चन्द्रमा प्रताप, कुटुम्ब, पोस्यवर्ग, भाई, क्रोध, बुद्धि, विशेषकर्म भाग्य, पंचम नवम भाव विचार और क्रयविक्रयादि और लाभ व्यय के विचार में फल देता है।।९।।

कुजः शरीरे होरायां कल्पविक्रमवंधुषु ।
सहजे च सहे शत्रौ क्रोधे लोभे च रंध्रके ।।१०।।
क्रियायायतौ हानौ जये भंमे फलप्रदः ।।११।।

मङ्गल से होरा कल्पशास्त्र, प्रताप, भाई, सहज, शत्रु, लोभ अष्टमभाव, कर्म, प्रभाव, हानि, उत्कर्ष और पतन का विचार करे।।१०-११।।

बुधो मनसि विद्यायां बुद्धौ हिबुक वेश्मनि ।
लोभे शिल्पे च गानादिप्रिये स्वेलाभरिःफयोः ।।१२।।

बुध मानसिक विचार में विद्या, चतुर्थभाव, लोभ, शिल्प, गान-विद्या ग्यारहवे और बारहवें भाव के विचार में फल देता हैं।।१२।।

गुरुकर्मे च तपसि त्रित्रिकोणे त्रिकोणके ।
आज्ञायां च सुते हानौ कारागृहनिवेशने ।।१३।।

गुरु धर्म, तच नवम पंचम, आज्ञा, पुत्र, हानि, कारागार प्रवेश।।१३।।

अभिशापे तथा व्याधौ स्वेकल्पे मूर्त्तिवेश्मसु ।
विद्याबुद्धिसुखेभावे शांत्यादिषु फलप्रदः ।।१४।।

अभिशाप, व्याधि, रचकल्प, मूर्त्ति, गृह, विद्या, बुद्धि, सुख, चतुर्थ भाव और शांति में फल देता है।।१४।।

कामान्यस्त्रीविवाहेषु गीतनृत्य प्रीयादिषु ।
सुखे वेश्मनि दुश्चिक्ये स्वे कुटुम्वेच वेश्मनि ।।१५।।

शुक्र से अन्य स्त्री समागम, विवाह, नृत्यगाना, सुख, गृह तृतीयभाव, धन, द्वितीय भाव, चतुर्थभाव।।१५।।

आज्ञा क्रियातपो भाग्ये लाभायव्ययहानिषु ।
वदान्यत्वे दयायां च भार्गवः फलदः सदा ।।१६।।

आज्ञा, तप, भाग्य लाभ और हानि का विचार करना चाहिये।।१६।।

शनिर्भतौ ध्यये रिःफे दुश्चिक्येक्षत चेतसि ।
सहजे च सहे भावे बंधने फलदो भवेत् ।।१७।।

शनि से मृत्यु, व्यय तीसरे भाव, क्षत, चित्त, सहज बंधु बंधन का विचार करना चाहिये।।१७।।

कालहोराद्दृकाणेशाः क्षेत्रार्कनवभागपाः ।
सप्तांशत्रिंशदंशेशा होरेशश्चाष्टमो भवेत् ।।१८।।

कालहोरेश, द्रेष्काणेश, गृहेश, द्वादशांशेश, नवांशेश, सप्तमांशेश त्रिशांशेश और होरेश ये क्रम से यथोत्तर बली होते हैं।।१८।।

क्रमादावृत्तितः प्रोक्ता बलिष्ठः पूर्वतो यथा ।
सूर्यादयो ग्रहा लग्नपतिश्चावृत्तितः क्रमात् ।।१९।।

सूर्यादि सात ग्रह और आठवां लग्न इनमें जो वली हो वही प्रथम फल देने वाला होता है।।१९।।

इति पाराशर होरायामुत्तरार्धे लोकयात्रायां नवमोऽध्यायः।।९।।

दशमोऽध्यायः।

अथ आयुषः प्रकारांतराणि।

वक्ष्येऽहं दायोत्थं नृणामायुः परं मुने ।
पैड्यो द्वादशधा प्रोक्तो ध्रुवरश्मि समुद्भवौ ।।१।।

हे मैत्रेय! अव मैं हरण आदि से शुद्ध मनुष्यों के परम आयु को तुमसे कह हूँ। उसमें प्रथम पिंडायु है जो १२ प्रकार का है, ध्रुवायु (निसर्गायु) ४ प्रकार ।१।।

अंशकाष्टकवर्गोत्थौ प्रत्येंक तु चतुर्विधम् ।
विषयोक्तो द्विधा प्रोक्तौ नक्षत्रांशकसंभवौ ।।२।।

रश्मि से उत्पन्न आयु ४ प्रकार का, अंशोद्भव ४ प्रकार का, अष्टवर्गोद्भव कार का सव मिलकर १६ प्रकार, नक्षत्रोत्पन्न २ प्रकार और अंशोद्भव २ प्रकार कुल मिलाकर ३२ प्रकार के आयु के भेद होते हैं।।२।।

अथ पिंडायुषः ध्रुवांकाः-

द्वात्रिंशद्भेदभिन्नं स्यात्परमायुर्नृणामिह ।
अतिधृतिरर्कस्येन्दोस्तत्वानि पंचदश ।।३।।

सूर्यादि ग्रह अपने परमोच्च में हों तो क्रम से सूर्य का १९, चन्द्रमा का २५, का १५, बुध का १२, गुरु का १५।।३।।

द्वादशवुधस्य च गुरोस्तिथिः कवेर्मूछनानखाश्चार्किः ।
परमोच्चे च नीचेऽर्ध परेषुभावेषु वा तथा प्रोक्ताः ।।४।।

शुक्र का २१ और शनि का २० पिंडायु का ध्रुवांक होता है और नीच में ो अपने २ ध्रुवांक का आधा ध्रुवांक होता है।।४।।

अनुपातः कर्त्तव्यस्वंतरसंस्थेषु खेटेषु ।
खखभूमेः खयुग्मेंद्वो स्वांशाः पूर्ववत्कृतौ ।।५।।

उक्त नीच के मध्य में ग्रहो हो तो अनुपात द्वारा फल की आना चाहिये। और ग्रहों की १०० या १२० वर्ष की परमायु होती है।।५।।

नैसर्गिक रश्मिजायुषोः ध्रुवांकाः।

कृतिरेको यमौ रत्नमष्टादश नखाः क्रमात् ।
सैकंतानमिनादीनशं दाये नैसर्गिके स्मृतम् ।।६।।

सूर्यादि अपने उच्च में हों तो सूर्य का २०, चन्द्र का १, भौम का २, का ९, गुरु का १८, शुक्र का २० और शनि का ५० ध्रुवांक नैसर्गिक में है।।६।।

षोडशविंशतिरेको नवाष्टनव पंचविंशतिः ।
षड्विंशतिस्तथोच्चे नीचेचार्द्ध रश्मौचत्विमेऽथवा ।।७।।

उसी प्रकार से सूर्यादि उच्च में हो तो सूर्य का १६, चंद्र का २०, भौम

का १, बुध का ९, गुरु का ८, शुक्र का ९ और शनि का २५ या २६ रश्म्पायु में ध्रुवांक होता है। शेष क्रिया पूर्ववत् समझना।।७।।

अथध्रुवांकेभ्यो आयुसाधनप्रकारः-

कलीकृतं ग्रहं व्योमखब्धिनेत्रावशेषितम् ।
शतद्वयेनाभिभजेदब्दमासादयः क्रमात् ।।८।।

जिस ग्रह की आयु लाना हो उसके राश्यादि की कला बनाकर उसमें २४०० से भाग देकर शेष जो बचे उसमें २०० से भाग देने से वर्ष मासादि क्रम से आयु होती है।।८।।

उदाहरण- सूर्य राश्यादि ३।१८।२६।३४ की कला ६५०६।३४ इसमें २४०० से भाग देने से शेष १७०६।३४ बचा इसमें २०० का भाग देने से लब्ध ८ और १०६।३४ इसमें ध्रुवांक १९ से गुणाकर २०० से भाग देने से लब्ध १० वर्ष शेष १४।४५ इसे १२ से गुणाकर २०० से भाग देने से लब्ध मास ० शेष १७७।१२ को ३० से गुणाकर २०० से भाग देने से २६ दिन शेष ११६।० को ६० से गुणाकर २०० से भाग देने से लब्ध २४ घटी शेष १६० को ६० से गुणाकर २०० का भाग देने से लब्ध ४८ पल प्राप्त हुआ। इस प्रकार लब्ध वर्षादि १०।०।२६।३४।४८ पूर्व लब्ध वर्ष १० में जोड़ देने से सूर्य की वर्षादि १८।०।२६।३४।४८ पिंडायु हुई। इसी प्रकार अन्य ग्रहों का भी पिंडायु साधन करना।

नवांशायुर्दायसाधनम्।

सूर्यादिगुणिताच्छेषाद्वृद्धिं कुर्याद्यथोत्तरम् ।
स्वोच्चहीनं ग्रहं कृत्वा कर्कादिच मृगादि च ।।९।।
गृहीत्वातु भुजं कोटिं कृत्वा लिप्तीकृतं तुतम् ।
हत्वा नवांशदायेन भजेद्भत्रयलिप्तिभिः ।।१०।।

सूर्यादि ग्रहों के उच्च राश्यादि को उनमें घटाने से केन्द्र होता है। उसका भुज और कोटि करके, कोटि की कला बनाकर ध्रुवांक से गुणाकर उसमें तीन राशि की कला ५४०० से भाग देने से।।१०।।

वत्सराद्या भवंत्येते वर्जयेन्मकरादिके ।
केन्द्रे नवांशदाये स्वे त्रिघ्ने कर्कटकादिके ।।११।।

लब्ध वर्ष होता है शेष को पुनः १२ आदि से गुणाकर ५४०० से भाग देने से लब्ध मासादिक होता है। यदि मकरादि केन्द्र हो तो तीन से गुणे हुये ध्रुवांक में घटाने से और कर्कादि केन्द्र हो तो ध्रुवांक का आधा जोड़ देने से मध्यम नवांशायुदयि होता है।।११।।

नवांशायुर्दाये विशेषः।

युंज्यादर्धीकृते तस्मिन् प्रक्रमानुगतो मतः ।
द्विघ्ने त्वपनयेत्तस्मिन्युज्यादेव दलीकृते ।।१२।।

पूर्व साधित नवांशायुर्दाय में यदि केन्द्र मकरादि ६ राशि में हो तो मूल ध्रुवांक को दूना करके उसमें घटा देना और कर्कादि ६ राशि में हो तो मूल ध्रुवांक का आधा कर उसमें जोड़ देने से आयुर्दाय होता है।।१२।।

अष्टकवर्गायु साधनम्।

निक्षिप्याष्टकवर्गं तु राशिचक्रे तु पूर्ववत् ।
त्रिकोणैकपशुद्धिं च कृत्वा तु गुणयेद्गुणैः ।।१३।।

पहले अष्टक वर्ग वनाकर त्रिकोण शोधन और एकादिपत्यशोधन करके संख्या को राशि गुणाकर पिंड बनाकर।।१३।।

खवन्हि भक्तभव्दाद्याः क्रमाद्भिन्नाष्टवर्गजाः ।
एवं कृत्वा तु संयोज्य भाप्तसमद्वादयःस्मृताः ।।१४।।

उसे (पिंडको) ३० से भाग देने से भिन्नाष्टक वर्गायु होता है। पूर्वोक्त प्रकार से लाये हुये पिंड में २७ का भाग देने से वर्षादि समुदायाष्टक वर्गायु होता है।।१४।।

कृत्वा करणदैरेवं स्वोत्पन्नौ दायसंज्ञितौ ।
प्रत्येकं भिन्नदायोत्थास्वैवं त्रिंशद्भिदामताः ।।१५।।

और इसी प्रकार से करणायु भी लाना चाहिये। पिंडायुर्दाय सप्तग्रहों के ७ प्रकार की, धुवायुर्दाय सप्तग्रहों के ७ प्रकार की, रश्म्यायुर्दाय सप्तग्रहों की ७ प्रकार की, अंशायुर्दाय सप्त ग्रहों के ७ प्रकार की, रेखाष्टक वर्गोत्थ आयु १ प्रकार और करणाष्टकवर्गोत्थ आयु के ३० भेद हुये।।१५।।

नवांशायुर्दाये ध्रुवाङ्काः।

पंचमूर्छा सप्त रत्नं दश षोडश वारिधिः ।
नवांशाविधितः प्रोक्ता अंत्यात्प्रोक्तास्तुभादितः ।।१६।।

सूर्य का ५, चन्द्र का २१, भौम का ७, बुध का ९, गुरु का १०, शुक्र का १६ और शनि का ४ अंशायु साधन के ध्रुवांक हैं। प्राप्तनवांश से आरम्भ कर अनुलोम विधि से आरम्भ कर अनुलोम विधि से अंतिम नवांश पर्यन्त गणना करना चाहिये।।१६।।

नक्षत्रायुर्दायानयनम्।

रवींद्वाराहिजीवार्किबुधकेतुसिताः क्रमात् ।
आग्नेयाद्भगणेशाः स्युः स्वामिनोवत्सराःक्रमात् ।।१७।।

कृत्तिका नक्षत्र से आरम्भ करके क्रम से सूर्य, चन्द्र, भौम, राहु, गुरु, शनि, बुध, केतु और शुक्र ये नव नक्षत्रो के अर्थात् पूर्वाफाल्गुनी तक के स्वामी हैं। पुनः उत्तराफाल्गुनी से पूर्वाषाढ़ तक ९ नक्षत्रों के यही स्वामी होते हैं पुनः उत्तराषाढ़ से भरणी पर्यन्त शेष ९ नक्षत्रों के भी यही स्वामी होते हैं। इस क्रम से एक ग्रह तीन नक्षत्र का स्वामी होता है।।१७।।

षडाशासप्त धृतयोनृपा एकोनविंशतिः ।
अत्यष्टिः सप्त च नखा उच्चे नीचेऽर्धमुच्यते ।।१८।।

क्रम से सूर्य का ६, चन्द्र का १०, भौम का ७ राहु का १८, गुरु का १६, शनि का १९, वुध का १७ केतु का ७ और शुक्र का २० वर्ष आयु की सीमा है किन्तु ये जव अपनी उच्च राशि में हो तो, नीच में हों तो इसका आधा हरण होता है।।१८।।

अस्मिंस्तु हरणं तस्मात्पूर्वस्मिंस्तु द्वयं हितम् ।
अनयोः पापदायदावंते स्युरपमृत्यवः ।।१९।।

पूर्व में कहे हुये पिंड ध्रुव-अंश-अष्टकवर्ग की आयु में शुभ पापग्रह जनित दोनों फल शुभ होते हैं किन्तु नवांश-नक्षत्रायुर्दाय में पापग्रह के आयुदयि के आरम्भ और अंत में अरिष्ट की संभावना होती है और शुभग्रह में शुभफल होता है।।१९।।

आयुर्दायकथने कारण तथा भावायुर्दायसाधनञ्च।

द्वात्रिंशद्भेदभिन्नोऽयमायुषो निर्णयः कृतः ।
लोकयात्रा परिज्ञानहेतवे दायनिर्णयः ।।२०।।

हे मैत्रेय! मैंने लोक के सुख दुख को जानने के लिये ३२ भेद से युक्त आयु का निर्णय कहा।।२०।।

भावानां संप्रवक्ष्यामि शृणुष्व: मुनिपुंगवः ।
आयुश्च परमं हत्वा स्वेन स्वेन वलेन च ।।२१।।

इन ३२ प्रकारों के बाद आठवां भावों का आयुर्दाय कहता हूँ। पूर्वोक्त सात प्रकार के आयुर्दाय में से किसी एक को लेकर उसे अपने-अपने भावबल से गुणाकर।।२१।।

विभजेद्बलयोगेन भावानां दाय एव सः।
अथवांशर्क्षदायेन वर्गेशानां बलेन तु ।।२२।।

भावबल समूह से भाग देने से जो लब्धि हो वही आयुर्दाय होती है। पुनः प्रकारांतर से नवमांशायर्दाय से परमायुष्य को गुणन कर षड्वर्ग पतियों के बल से भाग देने से वर्षादि भावायुर्दाय होता है।।२२।।

स्थानाधैश्च समुद्भूतः षड्बिधो दायउच्यते ।।२३।।

इस प्रकार से भाव, नक्षत्र, नवांश, अष्टकवर्ग, अंश और पैंड्य ये ६ प्रकार के आयुर्दाय भेद कहे।।२३।।

इति पाराशर होरायामुत्तरराधें आयुर्दायकथने दशमाध्यायः।।१०।।

एकादशोऽध्यायः।

आयुषःह्वासवृद्धेःयोगः।

आरार्की वक्रिणौमृत्युश्चान्योन्यभवनस्थितौ ।
वेश्मषणमृत्युरिःफस्था णीणेन्दूत्यत्तिपाष्टपाः ।।१।।

भौम शनि वक्री होकर परस्पत् एक दूसरे के गृह में हों तो मृत्युकारक होते हैं। यदि क्षीणचंद्र लग्नेश और अठमेश ६।८।१२ स्थान में हों तो मृत्युकारक होते हैं।।१।।

अष्टमस्था ग्रहाः सर्वे पापदृष्टियुतास्तु वा ।
भौममंदर्क्षगाश्चेतु शुभदृष्टिविवर्जिताः ।।२।।

अष्टम स्थान में पापग्रह से दृष्टयुत सभी ग्रह मृत्युकारक होते हैं, यदि अष्टमस्थ ग्रह भौम शनि की राशि में हों और शुभग्रह की दृष्टि से हीन हों तो मृत्युकारक होते हैं।।२।।

आयुष्ययोगाः।

केन्द्रत्रिकोणे च शुभाश्चपापाः षष्ठेत्तीयेच मृत्युसंस्थाः ।
अष्टोत्तरं जीवति वर्षमायुर्नरो गुणाट्यो नवतिःसुशीलः ।।३।।

शुभग्रह केन्द्र त्रिकोण में हों तो १०८ वर्ष की आयुष्य होती है, पापग्रह ६।३ भाव में हों और आठवें भाव में कोई ग्रह न हो तो ९० वर्ष की आयु होती है।।३।।

लग्ने गुरौ दैत्यगुरौ चतुर्थे बुधे सुते षष्ठगते च सूर्ये।
स्थानंच शात्रोश्च मृतिं च हित्वा त्वन्ये स्थिताश्चेन्नवतिश्चषट्कः।

लग्न में गुरु, चौथे भाव में शुक्र, बुध पांचवें भाव में और छठें भाव में सूर्य हो तो ९० वर्ष की आयु, यदि चंद्र, भौम, शनि ये तीनों ग्रह अपने शत्रुराशि और अष्टमभाव को छोड़कर अन्यस्थान में बैठे हों तो ९६ वर्ष की आयु होती है।।४।।

सुखादिकेन्द्रेषु गुरुः स्थितश्चेत्तत्पंचमेज्ञे तु भृगौतुषष्ठे।
षडुत्तरा सप्ततिरष्टयुक्ता त्वंशीतिरेकोत्तरतः प्रदिष्टा।।५।।

चतुर्थ आदि केन्द्र में गुरु हों और गुरु से पाचवें भाव में बुध हों तथा छठें भाव में शुक्र हो तो ७६ वर्ष की आयु होती है। सातवें भाव में गुरु हो और उससे पीछे भाव में बुध शुक्र हों तो ८८ वर्ष की आयु होती है। तथा दशम भाव में गुरु हों और उससे ५।६ भाव में क्रम से बुध शुक्र हों तो ८१ वर्ष की आयु होती है।।५।।

केन्द्रादि आयुष्य–

केन्द्रादिस्थाः शतं दद्युर्नवाष्टादींश्च दिग्गुणान् ।
मिश्रं संयुज्य दलिता अनुपातेन वत्सराः ।।६।।

सभी ग्रह केन्द्र में हों तो १०० वर्ष की आयु, पणकर में हों तो ९० वर्ष की आयु और सभी अपोक्लिम में हों तो ८० वर्ष की आयु होती है। यदि दो स्थान में ग्रह हों तो दोनों स्थान की आयु के योग की आधी आयु होती है।।६।।

शत्रुनीच समांशेषु दिग्विधेषु न चेत्स्थिताः ।
शतायुर्योग हीनास्तु सर्वे प्रोक्ता कलौ युगे ।।७।।

यदि तीनों स्थानों में ग्रह हों तो तीनों के योग का तृतीयांश आयु वर्ष होता है। यदि उक्त दशविध (३२ श्लो., ४ श्लो., ५ श्लो, ६ श्लो. में कहे हुये) आयुष्य में कोई न हो तो गणितागतायु लेना। कलियुग में सभी मनुष्य १०० वर्ष से अल्प आयुवाले होते हैं।।७।।

पूर्वोक्तायुषे हानिः–

दायानां हरणं वक्ष्ये शृणुष्व मुनिपुंगव ।
आयुर्दाये तु हरणं षड्विधं संप्रकीर्त्यते ।।८।।

हे मैत्रेय! आयु का हरण कहता हूँ इसे सुनो। वह हरण ६ प्रकार का होता है।।८।।

व्ययादिहरणं पूर्वमस्तारिहरणं तथा ।
क्रूरोदयस्थ हरणं चन्द्रयुक्तमस्तथा ।।९।।

१-१२ वें भाव से सातवें भाव तक वाम, २- अस्तगत और ३- शत्रु राशिगत का हरण, ४- लग्न में क्रूरग्रह का हरण, ५- चन्द्र सहित राहु का हरश और ६- व्ययस्थ पापग्रह ये ६ प्रकार के आयु के हरण होते हैं।।९।।

पापो व्ययस्थो हरति सर्वदायं द्विजोत्तम ।
अथ द्वित्रिचतुः पंचषडंशोनं क्रमादमी ।।१०।।

वारहवें भाव में पापग्रह हो तो सम्पूर्ण आयु की हानि, ग्यारहें भाव में हों तो आयुष्य का आधा, दशम भाव में हो तो आयुष्य का तृतीयांश नवम भाव में हो तो आयुष्य का चतुर्थांश, अष्टमभाव में हो तो आयुष्यं का पांचवा भाग और सातवें भाव में हो तो आयु कां छठां भाग कम हो जाता है।।१०।।

लाभादिसंस्थिताः खेटा वाभतः प्रक्रियांश्रृणु।
हरंति सौम्याः प्रोक्तार्ध लग्नद्वादश संधिषु ।।११।।

संधिगत पापग्रह हो तो ज्यो का त्यों हरण होता है यदि शुभग्रह हो तो आधा हरण होता है।।११।।

पापश्चेत्सकलं हंति शुभो दलमथोत्तरम् ।
लग्नाद्द्वादशसंधौ च ग्रहान्यायान्विवर्जयेत् ।।१२।।

लग्न से आरंभ कर द्वादश संधियो में पापग्रह हो तो संपूर्ण आयु और शुभग्रह हो तो आयु का आधा क्षय होता है। लग्न से द्वादशभाव की संधियों में पापग्रहों को घटा देवे।।१२।।

राश्यभावे तु भागादीन् दाद्यघ्नान्षष्ठिभाजितात् ।
दाये द्विघ्ने तु सौम्यस्य राशिरेको दलं यदि ।।१३।।

यदि राशि न हो तो अंशादि को उनके आयु से गुणाकर ६० से भाग देवे जो लब्ध अंशादि हो उसे संधि में घटाने से शेष आयुष्य का हरण फल होता है। यदि शुभग्रह की राशि का अभाव हो तो दाय को दूना कर उससे दाय को गुणाकर ६० का भाग देकर लब्धि को संधि में घटाने से शेष आयुहरण फल होता है।।१३।।

अधिकेनापहृत्ततु क्रमाद्राशिं विना कृतम् ।
दायद्विगुणया सौम्यो लब्ध्वा वाऽपचयेसमाः ।।१४।।

इस प्रकार से लाया हुआ फल एक राशि का दूसरा दल का इनमें जो अधिक हो उसमें न्यून को घटाना चाहिये। यह आयु के हरण में वर्ष होता है।।१४।।

वहवश्चेद्वली हंति समाश्चेत्प्रथमो मतः ।
अंशक ग्रहयोगे च द्वयोः पापे हरत्युत ।।१५।।

उक्त प्रकार एक ग्रहयोग में कहा है यदि बहुत से ग्रह भावसंधि में हों तो जो सवमें वली हो वही आयु का हारक होता है। यदि दो ग्रह पापग्रह और शुभग्रह हों तो उसमें पापग्रह ही आयु का हरण करता है।।१५।।

सौम्योऽपि पापवर्गे च स्थितो रिः फादिषटसुचेत् ।
त्रिषु भावगतानां च पापानां करणं स्मृतम् ।।१६।।

यदि दोनों शुभग्रह ही होवें तो यदि वे पापवर्ग में होकर १२ भाव से आरम्भ कर ६ठे भाव के अन्दर हों तो आयुहारक होते हैं। इसी प्रकार भावगत बारहवें से ६ठे भाव के अन्दर पापग्रह हों तो उनमें केवल सूर्य भौम शनि ही हरण कारक होते है। उक्त भाव गत पापग्रहों के फल का भी उत्पादन होता है।।१६।।

पूर्वोक्त फलस्य पुष्टिः-

कुटुम्बभरणं चापि दुश्चित्तं लाभमेव च ।
मेधां च प्रतिभां शान्तिं मंदक्रोधं करिष्यति ।।१७।।

यदि पापग्रह १२ वें भाव में हो तो कुटुम्ब का पोषक होता है, ११ वें भाव में हो तो दुश्चिन्त होता है। १० वें भाव में हो तो लाभ होता है। ९ वें भाव में हो तो धारणात्मिका बुद्धि होती है। ८ वें भाव में हो तो शान्ति का लाभ और ७ वें भाव में हो तो थोड़ा क्रोध होता है।।१७।।

अस्तंगतग्रहस्य तथा लग्नस्य आयुः-

अस्तंगतानां सर्वेषां दलं दायः स्मृतस्तदा ।
राशिसंख्यासमाश्चाब्दा लग्नेऽब्जेवलवत्तरम् ।।१८।।

अस्तंगत सभी ग्रहों की आयु का आधा ही आयु शेष रहता है। यदि लग्न में चन्द्रमा हो और वलवान् हो तो लग्न की राशि के समान वर्ष लग्न की आयु होती है।।१८।।

अंशान् लिप्ताहतान् कृत्वा खखाक्षिभ्यां समाहताः ।
शेषा मासादयः प्रोक्ता वर्तमानाब्दयोजने ।।१९।।

यदि लग्न में चन्द्रमा न हो अथवा निर्वल हो तो लग्न की राशि को छोड़कर अंश को ६० से गुणाकर उसमें कला को जोड़कर २०० से भाग देने से लब्धि

वर्ष और शेष को १२ आदि से गुणाकर भाजक से भाग देने से मास आदि होते हैं। इस प्रकार आये हुये मासादि आयु में पूर्वोक्त वर्ष जोड़ देने से लग्न की वर्षादि आयु होती है।।१९।।

लग्ने क्रूरग्रहे सति–

क्रूरे क्रूरोदयघ्नं तमष्टोत्तरशतैर्हृतम् ।
लब्धं चापनयेद्दाये स्वेतथा परमायुषि ।।२०।।

लग्न में क्रूरग्रह हो तो लग्न के अंशादि को क्रूरग्रह के वर्तमान नवांश राशितुल्य अंक से गुणाकर १०८ का भाग देने से लब्ध वर्षादि को लग्न की आयु में घटाने से शेष लग्न की स्पष्ट आयु होती है।।२०।।

स्वोच्चे मूलत्रिकोणे च लब्धस्यार्धंविवर्जयेत् ।
मित्रेऽधिसुहृदि प्रोक्तं पादोनेनापनायनम् ।।२१।।

लग्न में पापग्रह अपने उच्च वा मूल त्रिकोण राशि का हो तो पूर्वोक्त विधि से प्राप्त वर्षादि का आधा ही परमायु में घटाना चाहिये। यदि पापग्रह अपने मित्र या अधिमित्र के गृह में हो तो लब्ध का चतुर्थांश घराना चाहिये।।२१।।

भावेष्वेवं विधिः प्रोक्तो वर्गाणामधिपेषु च ।
तिष्टन्तौ शुभपापौ चेत्पापोदयविधिः स्मृतः ।।२२।।

यह हरण प्रकार लग्न में क्रूरग्रह के रहने से ६ वर्गों के अधिपति क्रूरग्रह हों और लग्न में क्रूरग्रह न हो तव के लिये कहा है। यदि लग्न में शुभ पाप दोनों हों तब भी पापग्रह का ही हरण करना। और लग्न में पापग्रह अधिक हों तो जो उसमें अधिक बली हो उसी का हरण करना चाहिये।।२२।।

अष्टमभावे केन्द्रे च शुभपाप योगे–

क्रूरेष्टमेष्टमांशेन भावस्याप्यनुपाततः ।
लग्नाधिपेतराष्टांशं पापो हरति मृत्युगः ।।२३।।

अष्टमभाव में पापग्रह हो तो भाव की आयु का अनुपात द्वारा अष्टमांश का हरण होता है। किन्तु लग्नेश की आयु को छोड़कर अन्य ग्रहो की आयु का अष्टमांश हरण होता है।।२३।।

वहवश्चेद्वली सौम्यपापेष्वेवंविधिः स्मृतः ।
तयोर्दायांतरं दायः केन्द्रस्य च विधीयते ।।२४।।

वहुत से पापग्रह हों तो जो सबमें बली हो उसी का हरण होता है। पापग्रह शुभग्रह दोनों हों तो दोनों के आयुष्य का अन्तर करके जो शेष रहे वही आयुष्य होती है। इसी प्रकार केन्द्रस्थ शुभ पाप के स्थिति के अनुसार समझना।।२४।।

राहुयुक्त चन्द्रस्यायु विचारः-

सेन्दौ राहौ दशाराहोरानीता मूलदायवत् ।
चन्द्रायुः पिंडतः शोध्या तद्राहुकरणं स्मृतम् ।।२५।।

चन्द्र युक्त राहु हो तो पूर्वोक्तवत् दशा लाकर उसका पिंड बनाकर चन्द्रायु का पिंड बनाकर उसमें शोधन करने से शेष राहु का कारण होता है इसपर से पूर्वोक्तवत् अंशायु के अनुसार ही राहु का आयु वर्ष होता है।।१५।।

अंशदायक्रमेणैव तमसोऽब्दाः समीरिताः ।
तस्मिन्सचन्द्रे तल्लग्नभावसाधनतस्ततः ।।२६।।

लग्न में चन्द्रमा और राहु हों तो लग्न के ही समान आयु का साधन करना चाहिये।।२६।।

तत्तद्दृष्टिहतं कृत्वा षष्ट्याप्तं धनशोधने ।
सोदये च सराह्विंदावयं न्यायः समीरितः ।।२७।।

किन्तु राहु चन्द्र दृष्टियों का परस्पर गुणाकर ६० का भाग देने से जो फल आवे उसे मकरादि में धन और कर्कादि में ऋण करने से स्पष्टायु होती है यदि लग्न में राहु के साथ चन्द्रमा हो तो यह विधि उचित है।।२७।।

द्रेष्काणवशात् हानि वृद्धिः।

स्थानवृद्धिः क्षयः कार्योद्रेष्काणर्क्षसराशिकम् ।
अस्तंगतानामर्धं स्याद्विना भृगुसुतं शनिम् ।।२८।।

यदि लग्न की राशि और द्रेष्काण की राशि एक ही हो तो भाव स्थफल की वृद्धि होती है और दोनों की भिन्न राशि हो तो भावफल की हानि होती है। शुक्र और शनि को छोड़कर अन्य अस्तंगत ग्रहों की आयु के आधे का ह्रास होता है।।२८।।

तयोर्वेदांशहीनं स्यात्पंशोनं शत्रुगस्य तु ।
अंगारकं वर्जयित्वा शत्रुक्षेत्रगतैर्ग्रहैः ।।२९।।

यदि शुक्र शनि अस्त हों तो इनकी आयु का चतुर्थांश ह्रास होता है। भौम

को छोड़कर शेष शत्रुक्षेत्र ग्रहों की आयु का तृतीयांश ह्रास होता है। यदि ग्रह मित्रवर्ग का हो तो तृतीयांश के आधे की ही हानि होती है।।२९।।

सुहृद्वर्गगतानां तु तद्दलं हरति स्वकम्।
एवं भावेषु सर्वेषु षड्विधं हरणंनहि ।।३०।।

इस प्रकार सभी भावों के ६ प्रकार के हरण नहीं होते किन्तु ग्रहों के ही होते हैं।।३०।।

अष्टवर्गोत्पन्न अंशायुषिहरणम् –

हरणं नैव कर्त्तव्यंमंदादायेऽष्टवर्गगे।
स्वोच्चे च त्रिगुणं प्रोक्तं स्ववर्गे द्विगुणं तथा ।।३१।।

अष्टवर्ग से उत्पन्न अंशायु में हरण नहीं करना किन्तु ग्रह उच्च में हो तो आयु को त्रिगुणित कर देना, अपनी राशि में हो तो दूना करना।।३१।।

अधिमित्रगृहे सार्धे त्र्यंशं मित्रगृहेयुतम्।
अरावघ्परिभावे च त्र्यंशखंडविवर्जितम् ।।३२।।

अधिमित्र के गृह में हो तो आयु का आधा उसमें और जोड़ देना, मित्र के गृह में हो तो तृतीयांश जोड़ देना।।३२।।

अष्टवर्गोत्थदायेषु प्रोक्तोऽयं विधिरंजसा।
भावदायेषु सर्वेषु प्रोक्तोऽयं विधिरुत्तमः ।।३३।।

यदि शत्रु के गृह में या अधिशत्रु के गृह में हो तो आयु का तृतीयांश घटा देना। यह विधि अष्टवर्गायु और सभी आयु के साधन में उत्तम है।।३३।।

अंतर्दशाप्रकारः–

दायगस्य तु सर्वस्य सहगस्य दलं भवेत्।
सुतधर्मगयोस्त्र्यंशं पादं मृतिसुखस्थयोः ।।३४।।

ग्रह के आयुष्य के तुल्य ही वर्षादि उसकी दशा होती है, उसमें ग्रह के साथ रहने वाले ग्रह का दशापति के आयु का आधा वर्षादि अंतर्दशा होता है। दशापति से ५।९ भाव में ग्रह की आयु के तृतीयांश के तुल्य और आठवें चौथे में स्थित ग्रह की आयु का चतुर्थांश अंतर्दशा होनी है।।३४।।

सप्तांशं सप्तमस्थस्यप्रक्रियां प्रोच्यतेऽधुना ।
अंशान्परस्परहताञ्छेदेनैव विभाजितम् ।।३५।।

जो सातवें भाव में हो वह सप्तमांश हरण करता है।।३५।।

तत्तदंशविभक्तं च स्वस्य स्वस्य समं भवेत् ।
नीचार्धपक्षे सर्वत्र विधिरेष विधीयते ।।३६।।

परस्पर अंश और छेदों का समच्छेद करके आयु को गुणाकर छेद से भाग देने से क्रम से अंतर्दशा का वर्षादि आ जाता है।।३६।।

समच्छेदाभावस्थानम् –

नीचाभावेऽष्टवर्गोस्थं भावदायेंऽशकक्रमे ।
नायं विधिस्मृतस्तत्र वहवश्चेत्तु तेऽखिलम् ।।३७।।

पूर्वोक्त हरण विधि नीच रहित, अष्टवर्गायु तथा अंशक क्रम में नहीं करना। यदि उक्त विषय में अनेक ग्रह हों तो वे सम्पूर्ण आयु को देते हैं।।३७।।

केन्द्रादिगा ग्रहाः सर्वे ददत्येवापहृत्य च ।
अर्धत्र्यंश च पादं च हरणाभाव सम्मतौ ।।३८।।

सभी ग्रह केन्द्रादि स्थानों में अर्थात् केन्द्र, पणफर, आयोक्लिम में क्रम से आधा, तृतीयांश और चतुर्थांश तुल्य आयु का ह्रास करते हैं।।३८।।

अंतर्दशा के नियम–

सर्वाद्वित्रित्रिवेदाश्च त्रिषट्सप्ताष्टपाणयः ।
स्वर्क्षहोराद्दृकाणेशात्त्रिंशाशेशाद्रि भागपाः ।।३९।।

यदि अंतर्दशेश अपनी राशि में हो तो सम्पूर्ण आयु का भोग करता है। यदि वही होरेश हो तो आयुष्य का आधा, द्रेष्काणपति हो तो तृतीयांश त्रिशांश पति हो तो तृतीयांश सप्तमांश पतिं हो तो।।३९।।

चतुर्थांश, नवांशपति हो तो तृतीयांश, द्वादशांश का अधिपति हो तो षष्ठांश, कालहो रेश हो तो सप्तांश, षष्ठ्यंश का स्वामी हो तो अष्टमांश और षोडशांश का स्वामी हो तो द्वितीयांश भोग करता है। इस प्रकार से सभी अंतर्दशा के स्वामी भोग करते हैं।।४०।।

ग्रहात्भावात्ततस्तस्मात्स्थितानां द्वादशस्वपि ।
भावानां च क्रमात्प्रोक्ता भमांशाश्च स्वयंभुवा ।।४१।।

ग्रहों से भावों के बारहों स्थानों के भागांश को ब्रह्माजी ने कहा है।।४१।।

सर्वद्विवेदसप्ताष्टट्त्रिरत्न दिशाद्रयः ।
वेदांगा हारका एव ग्रहाणां समुदीरिताः ।।४२।।

वह इस प्रकार है— तनु आदि भावों का क्रम से सम्पूर्ण, आधा, चतुर्थांश, सप्तांश, अष्टमांश, षष्टांश, तृतीयांश, नवांश, दशांश, चतुर्थांश और बारहवें भाव का षष्टांश यह ग्रहों के हारक भाग कहे गये हैं।।४२।।

हत्वा दायं वलैः स्वैस्तु वलं योगेनभाजयेत् ।
आयव्यये तु भावानां ग्रहाणां वियदादिषु ।।४३।।

लाभ और व्यय भाय में हरण करने से जो शेष आय हो उसे अपने अपने वल से गुणा कर सर्ववल योग से भाग देने से जो प्राप्त हो वह लाभ और व्यय की अन्तर्दशा का स्वरूप होता है।।४३।।

सर्वद्धित्रीषुवेदत्रिपंच सप्त ततः क्रमात् ।
स्थानांतरे तु भागांशाः सर्वभावेषु कीर्त्तिताः ।।४४।।

और तीसरे भाव से दशम भाव पर्यन्त भावों के क्रम से संपूर्ण, आधा, तृतीयांश, पंचमांश, चतुर्थांश, तृतीयांश, पंचमांश, सप्तमांश और शेष दो भावों (प्रथम द्रितीय) में क्रम से सम्पूर्ण और आधा भागांश होता है।।४४।।

सर्वत्रिसप्तरामेषुषट् त्र्याग्निद्वियमाः क्रमात् ।
कालांश अर्ध होरांशः पत्तयोऽर्धहरा यथा ।।४५।।

सर्व, तृतीयांश, सप्तांश, तृतीयांश, पंचमांश, षष्ठांश, तृतीयांश, द्रितीयांश, द्वितीयांश ये कलांश और अर्धहोरांश पति होते हैं।।४५।।

इति पाराशरहोरायामुत्तरार्धे एकादशोऽध्यायः।।११।।

अथ द्वादशोऽध्यायः।।१२।।

पिंडायुषिभेदानि—

ग्रहेषु सर्वेषु वलोत्तरेषु स्वोच्चांशगेषुप्रवलस्यवर्गे ।
दिग्वीर्य चेष्टाबलपूर्तियुक्ते पैण्डेयेषु नीचार्धकृतापहाराः।।१।।

पूर्व में कहे हुये पिंडायु के १२ भेद (१० अध्याय १ श्लो.) में नीचार्धादि अपहार से।।१।।

अष्टत्रिंशाद्भिदा संति ताः स्वोच्चादिसुसंस्कृताः ।
लग्नादिभावगानां च ग्रहाणां स्थितिभेदतः ।।२।।

३८ भेद होते हैं किन्तु सभी ग्रह बली हों और स्वोच्चांश दिग्वीर्य चेष्टा बल आदि से युक्त हों और संस्कृत हों तो ३८ भेद होता है, यदि अपने उच्चादि से संस्कृत हों तो ७६ भेद होता है। लग्नादि द्वादश भाव में ग्रहों के स्थिति भेद से।।२।।

द्विघ्नाश्चतुरशीतिश्च भिदाः संति द्विजोत्तम ।
स्वोच्चादिस्थिति भेदेन भिन्नाः सूर्येषुभूमयः ।।३।।

८४ भेद होते हैं। हे द्विज! स्वउच्चादि स्थिति भेद से १५१२ भेद होते हैं।।३।।

आयुषः ग्रहणे नियमः—

सलग्नानां वलैः सर्वैरधिकानां क्रमाद्द्विज ।
अंशोद्भवस्तथा पैड्यो निसर्गो त्थाभिधःपरः ।।४।।

हे मैत्रेय! लग्न बली हो तो अंशायुदार्य लेना चाहिये, सूर्य बली हों तो पिंडायु, चन्द्रमा बली हों तो निसर्गायु।।४।।

शतस्वरांशो भौमाच्च नक्षत्रांशक संज्ञकौ ।
स्वरांशचेतरोदायः करदायस्तथेतरः ।।५।।

भौम बली हों तो शतस्वरांशायुर्दाय, बुध बली हो तो नक्षत्रायुर्दाय, गुरु बली हों तो नवांशायुर्दाय, शुक्र बली हों तो स्वरांशयुर्दाय और शनि बलवान् हों तो करदाय लेना चाहिये।।५।।

विशेषः—

स्वोच्चनीचसुहृच्छत्रुवर्गगैश्च चतुर्विधः ।
अतिनीचातिशत्रोश्च भागराशिगतस्य च ।।६।।

स्वोच्चवर्ग में पिंडायु, स्वनीचवर्ग में निसर्गायु, त्रिवर्ग में हो तो स्वरांशायु, शत्रुवर्ग में नक्षत्रायु, अति नीच नवांश में हो तो समुदायष्टक वर्गायु, अति शत्रु नवांश राशि में भिन्नाष्टक वर्गायु लेना चाहिये।।६।।

समुदायाष्टवर्गश्च भिन्नाष्टक उदीरितः ।
तत्र मूलत्रिकोणे च भिन्नवर्गे च वृद्धिकृत् ।।७।।

यदि ग्रह मूलत्रिकोणादि त्रिवर्ग में हो तो पूर्वोक्त रीति से वृद्धि करना नीच शत्रुवर्ग में हो तो हानि करना चाहिये। सम-शत्रुवर्ग में स्थित ग्रह के आयुष्य में हानि वृद्धि नहीं करना चाहिये।।७।।

तथा समारिवर्गे च न वृद्धिहरणे तथा।
सूर्योदयः क्रमाल्लग्नगताश्चेद्बलवत्तराः ।।८।।

यदि सूर्यादिग्रह अत्यंत बलवान् होकर लग्न में बैठे हों तो क्रम से पिंडायु, ध्रुवायु, समुदायाष्टकवर्गायु, भिन्नाष्टकवर्गायु, प्रक्रमाबुगत, अंशकायु और करायु लेना चाहिये।।८।।

पैंड्योध्रुवोऽष्टवर्गोत्थः प्रक्रमानुगतोंऽशकः।
करदायः क्रमाल्लग्ने रव्यादौ तु स्थिते सति ।।९।।

यदि सूर्यादि अपने उच्च राशि के लग्न में हों तो पिंडायु, मूल-त्रिकोण राशि के हों तो स्वरांशायु, स्वराशि के हों तो ध्रुवायु अधिमित्र राशि के हों तो प्रक्रमायु।।९।।

पैंड्यः स्वरांशो ध्रुवदाय एव तत्प्रक्रमांशश्च तथांशकोत्थः।
भिन्नाष्टवर्गः समुदायसंज्ञः करोत्थ उच्चादिषु योजनीयः।।१०।।

मित्रक्षेत्र के हों तो अंशायु, शत्रुक्षेत्र के हों तो भिन्नाष्टकवर्गायु अतिशत्रुक्षेत्र के हों तो समुदायाष्टकवर्गायु, स्वनीच के हों तो अंशायुर्दाय लेना चाहिये और समराशि के हों तो अभाव समझना चाहिये।।१०।।

भावानुसारेणायुविचारः-

ध्रुवः सुखस्थस्यतु सप्तमस्य पैंड्यः स्वरांशः खलुकर्मगस्य।
द्वितीय संस्थस्य च पैंड्य उक्तस्तृतीयधीधर्मगतस्य चैव।।११।।

लग्न से चतुर्थभावस्थ ग्रह का ध्रुवायु लेना, सप्तमस्थ का पैंड्य दशमस्थ और द्वितीयभावस्थ का स्वरांशायु, तृतीय पंचमनवमस्थ का पिंडायु।।११।।

षष्ठव्ययस्थस्य तु भिन्नसंज्ञस्तथेतरो मृत्युगतस्यचैवम्।
पैंड्यः स्वरांशौ ध्रुव आयु उक्तः पैंड्योभवेदायगतस्यचैव।।१२।।

षष्ठस्थ का भिन्नवर्गायु, मृत्युगतस्थ का समुदायाष्टवर्गायु, एकादशस्थ का पिंडायु, स्वरांश-ध्रुवायु में से किसी एक को लेना और लग्नस्थ का पिंडायु लेना चाहिये।।१२।।

मिश्रायुर्दायक्रमः-

लाभे रवींद्वोरबुधेज्यशुक्रमंदाः स्थिताः प्रक्रमदाय एव ।
लग्नार्यभौमज्ञरवीन्दुमन्द शुक्रास्तृतीये सुतभे च धर्मे ।।१३।।
स्वे शुक्रमंदार्यवुधार्कभौमचन्द्राः सुखेऽस्तेनिधनेऽपिचैव ।
वुधात्क्रमात् व्युत्क्रमतश्च चन्द्राद्भौमार्कमंदार्यसितज्ञचन्द्राः ।।१४।।

एकादश भाव में सूर्य, चन्द्र, भौम, बुध, गुरु, शुक्र, शंनि ये मिश्रायु देनेवाले होते हैं। लग्न, तृतीय, पंचम और नवम भाव में क्रम से गुरु, भौम, बुध, सूर्य, चन्द्र, शनि, शुक्र आयु दायक, दूसरे घर में शुक्र, शनि, गुरु, बुध, सूर्य, भौम, चंद्र आयुदायक चौथे भाव में बुध, सूर्य, भौम, चंद्र, शुक्र, शनि, गुरु आयुर्दायक, सप्तम में चंद्र, भौम, सूर्य, बुध, गुरु, शनि, शुक्र आयु र्दायक, आठवें भाव में भौम, सूर्य, शनि, गुरु, शुक्र, बुध, चंद्र आयु र्दायक।।१४।।

षष्ठे व्यये कर्मणि लाभगा वा रवान्दुशुक्रार्किकुजार्यसौम्याः।
सौम्यात्कुजाद्भार्गवतः क्रमात्स्युर्मिश्रेतु दाये क्रमशःप्रदिष्टम्।।१५।।

षष्ठ भाव में सूर्य, चंद्र, शुक्र, शनि, भौम, गुरु, बुध आयु र्दायक। १२ वें भाव में बुध, सूर्य, चंद्र, शुक्र, शनि, भौम, गुरु आयुर्दायक, १० वें भाव में भौम, बुध, गुरु, बुध, सूर्य, चंद्र, शुक्र, शनि आयुर्दायक, ११ वें भाव में शुक्र, शनि, भौम, गुरु, बुध, सूर्य, चंद्र आयुर्दायक होते हैं।।१५।।

आयुर्दायस्यसंख्या-

नक्षत्रदायोंऽशकपिंडदायो भिन्नाष्टवर्गः समुदाय संज्ञः ।
स्वरांशदायौ क्रमशः प्रदिष्टौ विशेषतस्तत्रवदामि सम्यक्।।१६।।

नक्षत्रायु, अंशायु, पिंडायु, भिन्नाष्टकवर्गायु, समुदायाष्टकवर्गायु, शतस्वरांशायु, स्वरांशायु और नवमांशाय ये आयुर्दाय के प्रकार हैं। इनमें किस आयु के कितने भेद हैं उसको विशेष रुप से कह रहा हूँ।।१६।।

अमिश्रायुषोभेदः-

अष्ट त्रिंशदमिश्रेतु अंकसूर्यकलांशकैः ।
मूर्छाक्षिणी भिदाः संति रश्मिजास्त्रिंशदेवहि ।।१७।।

अमिश्रायु के ३८ भेद होते हैं उसमें भी नवमांश, द्वादशांश और षोडशांश के भेद से २२१ भेद होते हैं उसमें भी नवमांश, द्वादशांश और षोडशांश के भेद से २२१ भेद होते हैं। रश्मिजायु के ३० भेद होते हैं।।१७।।

एकस्य विषये द्वौ चेदाययोगदलं भवेत् ।
त्र्यादयश्चेद्युतारूयादिसंख्याप्ताश्च दशा भवेत् ।।१८।।

एक ही भाव में दो आयुष्य देनेवाले ग्रह हों तो दोनों की आयु के योग का आधा ग्रहण करना चाहिये और तीन आदि हों तो सभी की आयु के योग को ग्रह संख्या से भाग देकर आयु लेना चाहिये और वही दशा का मान होता है।।१८।।

पिंडायुषः भेदः–

रवावुच्चगते चान्ये बलिष्ठा मूलकोणगाः ।
स्वोच्चस्थेषु बलिष्ठेषु सर्वेषु शशहंसके ।।१९।।

यदि सूर्य अपनी उच्चराशि में हो शेष ग्रह बलवान् हों वा अपने-अपने मूलत्रिकोण में हों वा सभी ग्रह बलवान् हों अपनी उच्चराशि में हों, शशयोग,-हंसयोग।।१९।।

एवं चिरायुषां योगेष्वन्येषु गणितेषु च ।
चन्द्रयोगेषु त्रिषु च चन्द्रेतु बलवत्तरे ।।२०।।

और दीर्घायु योग अन्य दीर्घायु योगकारक योगों में सुनफा अनफा दुरुधरा योग जो चन्द्रमा से होते हैं।।२०।।

राजयोगेषु सर्वेषु पैंड्यमाह पराशरः ।

और चन्द्रमा बलवान् हो तो पिण्डायु लेना ऐसा पाराशर का मत है।

प्रकारांतरेण–

लग्ने गुरौ कर्मगते च भानौ चन्द्रे सुखे वास्तगतेवलिष्ठे ।
पूर्णे त्रिकोणोपचये शुभेषु पापेष्वथात्रोक्तमसंस्थितेषु ।।२१।।

गुरु लग्न में हो १० वें भाव में सूर्य हो, पूर्ण चन्द्रमा ४ भाव में वा ७ वें भाव में हो और बलवान् हो, शुभग्रह ५।९।३।६।१०।११ भाव में और पापग्रह १।२।१२।८ भावों में हों।।२१।।

शुभाश्च केन्द्रे त्रिषडायभेऽन्ये विपर्ययेपैडचमतःप्रदिष्टम् ।
रिःफाष्टषष्ठेषु सहस्त्ररश्मौ भौमे क्रमाच्छीतकरेतुपैण्ड्यः ।।२२।।

अथवा शुभग्रह केन्द्र और ३।६।१०।११ भावों में और पापग्रह इससे भिन्न स्थान में हों तो पिंडायु लेना चाहिये अथवा १२।८।६ भाव में क्रम से सूर्य, भौम और चन्द्रमा हों तो पिंडायु लेना चाहिये।।२२।।

पापा लग्ने चाष्टमे सप्तमे वा सौम्याः षष्ठे कर्मभेरिःफभेवा।
नीचाभावे पैंड्यदायःप्रदिष्टो मंदे लग्ने स्वोच्चगेच ध्रुवाख्यः।।२३।।

अथवा पापग्रह १।८।७ भाव में और शुभग्रह ६।१०।१२ भाव में अपनी नींच राशि को छोड़कर हों तो पिंडायु लेना चाहिये। यदि शनि अपनी उच्चराशि का (तुलाराशि) होकर लग्न में हो तो ध्रुवायु लेना चाहिये।।२३।।

विशेषः-

वीणायां कार्मुके चक्रे गदायामर्धचन्द्रके ।
रवौ पैंड्योंऽशको लग्ने ध्रुवश्चन्द्रे च भूमिजे ।।२४।।

वीणा, कार्मुक, चक्र, गदा, अर्धचन्द्र योगों में कोई योग हो और सूर्य बलवान् हों तो पिंडायु लेना चाहिये। लग्न बली हो तो अंशायु, चन्द्र बली हो तो ध्रुवायु।।२४।।

भिन्नाष्टवर्गः सौम्ये तु नक्षत्रांशसमुद्भवः ।
गुरौ नक्षत्रदायः स्यात्प्रक्रमानुगतः सिते ।।२५।।

भौम बली हो तो भिन्नाष्टकवर्गायु, बुधबली हो तो नक्षत्रायु, गुरु बली हो तो नक्षत्रायु, शुक्र बली हो तो प्रक्रमानुगतायु लेना चाहिये।।२५।।

समुदायाप्ट वर्गस्तु मंदे तु बलवत्तरे ।
वाप्यां पाशे शरे पद्मे समुद्रार्किषु क्रमात् ।।२६।।

शनि बली हो तो समुदायाष्टकवर्गायु लेना चाहिये। वापी पाश, शर, पद्म, समुद्र इनमें कोई योग हो तो सूर्यादि ग्रहों में जो बलवान् हो।।२६।।

वलिष्ठेषु नवांशोत्थो ध्रुवः पैड्यः स्वरांशकः ।
भिन्नाष्टवर्गो ह्यंशोत्थो नक्षत्रांशक ईरितः ।।२७।।

उसकी क्रम से नवांशायु, ध्रुवायु, पैंड्यायु, स्वरांशकायु, भिन्नाष्टकायु, अंशायु और नक्षत्रांशायु को लेना।।२७।।

रज्जौ विहंगे मालायां नले च मुसले क्रमात् ।
पैडंचो ध्रुवः क्रमात्प्रोक्तो रव्याद्रौ बलवत्तरे ।।२८।।

रज्जुयोग हो तो पिंडायु, विहंग योग हो तो ध्रुवायु, मालायोग हो तो पिंडायु, नल योग हो तो ध्रुवायु और मुशल योग हो तो पिंडायु लेना चाहिंये।।२८।।

प्रकारान्तरेण-

गंडै शक्तौ च शकटे यूपे केदारशूलयोः ।
प्रक्रमानुगतश्चाथः रश्मिजौ ध्रुवसंज्ञितौ ।।२९।।

गंड योग हो तो प्रक्रमायु, शक्तियोग हो तो रश्मिजायु, शकट योग हो तो ध्रुवायु, यूप योग हो तो अंशायु, केदार योग हो तो भिन्नाष्टकवर्गायु।।२९।।

अष्टवर्गसमुद्भूतौ क्रमादेवं वलोत्तरे ।
नौछत्रवज्रदामाख्ये स्वरदायोऽतिनीचगे ।।३०।।

शूल योग हो तो समुदायाष्टकवर्गायु सूर्यादि के बली होने से लेना। सूर्यादि अत्यंत नीच में हो और नौका योग छत्र, वज्र, दाम योग हो तो स्वरांशायु लेना चाहिये।।३०।।

योगान्तरम् –

कूटे गंडा शरे नांगे गोले शृंगाटके पुनः ।
कालकूटे क्रमात्प्रोक्ता पैंडाद्याः स्तवै द्विज ।।३१।।

हे मैत्रेय! कूट, गंड, शर, नाग, गोल, शृंगाटक और कालकूट योग हो तो क्रम से पिंडादि सात हो आयु को लेना।।३१।।

पैंड्यास्त्रयो ध्रुवाश्चांशदायाश्चाष्टकवर्गकौ ।
द्रेष्काणेषु नवांशेषु द्वादशांशेषु च क्रमात् ।।३२।।
कलांशेषु नव प्रोक्ता दायाश्चैव पुनः पुनः ।

लग्न में प्रथम द्रेष्काण हो तो पैंडव, दूसरा हो तो ध्रुवायु और तीसरा हो तो स्वरांश आयु लेना, नवांश में ध्रुवादि नव आयु लेना। द्वादशांश में अंशायु आदि लेना। कलांश (उच्चादि नव स्थानों में) भिन्नाष्टकवर्गायु आदि आयु लेना।।३२।।

रश्मिवशेनायु ग्रहणेनियमः–

त्रिंशत्खवेदा स्वरपाचकाश्च सुराश्चदंताः क्षितिपावकाश्च।।३३।।

यदि जन्म समय ३०।३४।३७।३३।३२।३१ ।।३३।।

षड्त्रिंशदिष्वग्नय एव भानि छंदासि मूर्छाश्च जिनाः कराश्चेत्।
पैंड्यस्तथा द्वादशधा प्रभिन्नः क्रमेणदायो नियतः प्रदिष्टः।।३४।।

३६।३५।२७।२६।२१।२४ इनमें से किसी संख्या के तुल्य रश्मि संख्या हो तो पिंडायु दाय लेना चाहिये।।३४।।

तत्वाग्नि नंदाग्नय एव रत्नदस्त्राास्त्रिदस्त्रा ध्रुवदाय भेदाः ।
एकास्त्रयश्चेत्समुदाय संज्ञस्ततस्तु वेदा इतरोऽष्टवर्गः ।।३५।।

यदि रश्मि संख्या २५।३९।२९।३३ हो तो ध्रुवायुष्य लेना चाहिये। यदि रश्मि संख्या १।२।३ में कोई हो तो समुदायाष्टकवर्गायु लेना चाहिये। यदि ४ रश्मि हो तो भिन्नाष्टकवर्गायु लेना चाहिये।।३५।।

पंचादिकेष्वंशकदाय उक्तो रूद्राश्च सूर्या यदि पैंड्य आद्यः ।
विश्वे मनुश्चेत्स्वरभागदायो नक्षत्रदायास्थितिसंज्ञकश्चेत् ।।३६।।

यदि ५।६।७।८।९।१० रश्मि में कोई हो तो अंशायु लेना चाहिये। यदि ११ या १२ रश्मि हो तो प्रथम पिंडायु लेना चाहिये। यदि १३ या १४ रश्मि हो तो स्वरांशायु लेना चाहिये। १५ रश्मि हो तो नक्षत्रायु लेना चाहिये।।३६।।

नृपेऽत्यष्टिचये प्रोक्ता आद्यपैंड्यभि धास्तथा ।
प्रक्रमानुगतो विंशत्यष्टत्रिंशेऽष्टवर्गजः ।।३७।।

यदि १६।१७।१८।१९ रश्मि हो तो प्रथम पिंडायु लेना चाहिये। २० रश्मि हो तो प्रक्रमायु लेना चाहिये। ३८ हो तो अष्टवर्गायु लेना चाहिये।।३७।।

चत्वारिंशत्त्रये पैंड्यो नक्षत्रांशस्त्रये ततः ।
शेषेषु षट्सु पैंड्यः स्यादाद्यो गर्गोऽयमाह च ।।३८।।

४०।४०।४२ रश्मि हो तो पिंडायु लेना चाहिये। ४३।४४।४५ रश्मि हो तो नक्षत्रायु लेना चाहिये। २२।२८।१६।४७।४८।४९ रश्मि हो तो पिंडायु लेना चाहिये।।३८।।

इष्टरश्म्यधिकप्रोक्तक्रम एव कराधिके ।
केन्द्रादिषु ग्रहाणां च वलोत्तरवशात्क्रमः ।।३९।।

यह रश्मिनायु गर्ग ने मुझसे कहा था।।३९।।

पूर्वोक्तायुषःपुष्टिमाह—

बलोत्तरवशादेव स्थानोतरवशात्तथा ।
इष्टत्फलक्रमादेव रश्म्युक्त विधिनाक्रमात्त् ।।४०।।

इस आयुर्दाय के भेद को मित्रादि स्थान के वल के तारतम्य से इष्ट कष्ट के बल योग से रश्मि के निमित्त से मैंने कहा है।।४०।।

कल्पादौ भगवान्गर्गः प्रादुर्भूतो महामुनिः ।
ऋषिभ्यो जातकं सर्वमुवाच कलिमाश्रितः ।।४१।।

कल्पादि में गर्ग मुनि अपने शिष्यों को कहे थे और कलि के आदि में पुनः प्रकट होकर अपने शिष्यों को कहेंगे।।४१।।

अस्मिन्नुत्तरभागे च मयानुक्तं च यद्भवेत् ।
तत्सर्वं गर्गहोरायां मैत्रेयत्वं विलोक्त्य ।।४२।।

हे मैत्रेय! इस उत्तर भाग में मैंने जो नहीं कहा है उसे तुम गर्ग जी की कही हुई गर्ग होरा में देखना।।४२।।

इति पाराशरहोरायामुत्तरभागे आयुर्दायाभिधोद्वादशोऽध्यायः।।१२।।

अथ त्रयोदशोऽध्यायः।

भाग्यं कर्म च वक्ष्यामि मैत्रेय ऋषि सुव्रत ।
भाग्यादेव नृणां सिद्धिर्भाग्यादेव धनायती ।।१।।

हे सुव्रत मैत्रेय! अब मैं इस अध्याय में भाग्य (वैभव) कर्म (शुभ-धर्म-कर्म) कहूँगा तुम सुनो। क्योंकि भाग्य से ही मनुष्यों को सिद्धि (संपुर्ण कार्यों की सिद्धि) होती है।।१।।

यशांसि भाग्यतो भाग्यविपर्यासाद्विपर्ययः ।
करिष्यमाण कर्माणि ज्ञातव्यानि प्रयत्नतः ।।२।।

भाग्य से ही द्रव्य और प्रभाव का लाभ भाग्य से ही कीर्त्ति का लाभ होता है, भाग्य विपरीत होने से उक्त पदार्थों का नाश होता है। अत: किये हुये कर्म भाग्य सूचक हैं अथवा अभाग्य सूचक हैं इसको प्रयत्न से जानना चाहिये।।२।।

विचारस्यरीतिः-

लग्नादिन्दोश्च नवमं भाग्यं बलवशाद्भवेत् ।
शुभपापारि मित्राख्यैग्रहैरेवं शुभाशुभैः ।।३।।

लग्न और चन्द्रमा से ९ स्थान को भाग्य स्थान कहते हैं इन दोनों में जो बलवान् हो उससे नवम स्थान लेना चाहिये।।३।।

उच्चादि पंचकाद्वृद्धिन्यस्माद्धानिरिष्यते ।
स्वस्मिन्नन्यत्र विषये स्वदेशेतरदेशयोः ।।४।।

इस स्थान में अपने उच्चादि पाँच स्थान में (उच्च, त्रिकोण, स्वर्क्ष, मित्र, अधिमित्र) होकर शुभ या पापग्रह बैठे हों वा देखते हों तो भाग्य की वृद्धि होती है। अन्यथा (सम, शत्रु, अधिशत्रु, नीचस्थान में हों) तो भाग्य की हानि होती है। यदि भाग्येश अपने वर्ग में हो तो स्वदेश में भाग्योदय होता है अन्य के वर्ग में हो तो परदेश में भाग्योदय होता है।।४।।

दशवर्गरीत्याभाग्योदयस्यविचारः–

स्वेष्वन्येषु तु वर्गेषु　ज्योतिर्विद्दशसुस्थितैः ।
अद्यंशो राशिलिप्तायाः सप्तांशः संप्रकीर्त्तितः ।।५।।

हे ज्योतिर्विद्! दशवर्गों में यदि भाग्यस्थित ग्रह अपने वर्ग में हो तो स्वदेश में अन्यथा परदेश में भाग्योदय होता है। ग्रह की राशि अंश की कला बनाकर उसमें सात से भाग देने से लब्ध सप्तांश।।५।।

अष्टादशर्क्षकांशस्तु　कलांश इति कीर्त्तितः ।
षट्यंश एवं षष्ट्यंश क्रमेण पतयः　स्मृताः ।।६।।

१८ से भाग देकर उसमें पुनः १२ का भाग देने से लब्ध षोडशांश होता है। ६० से भाग देने से जो लब्ध हो उसे षष्ट्यंश कहते हैं।।६।।

भाग्यत्रिकोणौपगतैः शुभं स्याद्भाग्यंतु केन्द्रोपगतैः शुभैश्च।।७।।

लग्न और चन्द्र से जो नवम स्थान उससे ५।९।१।४।७।१० स्थान में शुभग्रह हों तो शुभद भाग्य होता है।।७।।

पापैस्तथा स्यादशुभंच भाग्यं मित्रादिभिः स्यान्नियमोविशिष्टात्।।८।।

पापग्रह हों तो अशुभ भाग्य होता है। ग्रह मित्रादि गृहों में हो तो अत्युत्तम और नीचादि में हो तो निकृष्ट फल होता है।।८।।

भाग्योदयसमयः–

एवं भाग्यविर्यासौ भावानां च　वदेत्तथा ।
भावग्रहांतरकला　द्विशत्याप्ताः　समादयः ।।९।।

भाव और ग्रह का अंतर करके उसका कला करके उसमें २०० का भाग देने से वर्ष मास दिनादि होता है।।९।।

द्विस्थापिता करघ्नाश्च षष्ट्याप्ताः समादयः ।
अथेष्टादिफलघ्नं च समयो भाग्यभावयोः ।।१०।।

इसे दो जगह रखकर एक जगह दो से गुणाकर ६० से भाग देने से जो वर्षादि फल प्राप्त हो इसका और पूर्वस्थापित फल का गुणा करने से जो वर्षादि प्राप्त हो उसी वर्षादि में भाग्योदय का समय समझना चाहिये।।१०।।

प्रकारांतरेण–

फलेन　च　दशघ्नेन　रश्मिना　च　हृतास्तथा ।
भावाष्टवर्गोत्थ समाहतं तद्ग्रहांतरोत्थास्तु समादयःस्युः ।।११।।

अथवा ग्रह और भाव का अंतर करके शेष को १० से गुणाकर उसमें ग्रह के रश्मि से भाग देने से लब्ध वर्षादि में भाग्योदय कहना।।११।।

तत्तद्ग्रहोत्थाब्दहतास्तथा स्युरेवं तथा भाग्यफलानितत्र ।
स्थानानि नववर्गाश्च तेषां भाग्यफलं शृणु ।।१२।।

अथवा अष्टवर्गोत्थ वर्षों से भाग्योदय कहना। इसी प्रकार सभी भावों के फल की प्राप्ति का समय निश्चित करना चाहिये और ग्रहों के स्थान और नव वर्ग हैं उनके संबंध से भाग्य को सुनो।।१२।।

ग्रहाणांविशेषफलानि–

ख्यादीनां क्रमाच्छृंग चामरादेश्च विक्रये ।
कृषिकर्मणि सेवायां पैशून्ये लिपिकर्मणि ।।१३।।

यदि सूर्य उच्चादि शुभ वर्ग में हो तो क्रम से शृंग चामरादि राजचिह्न, कृषिकर्म, सेवा, दुर्जन कर्म, लिपि कर्म।।१३।।

धनार्जने व्यये व्याधौ गमनागमविक्रये ।
विवादे प्रेतकार्ये च मातृणां कलहे तथा ।।१४।।

धन संपादन, रोगनाशक कर्म, द्रव्य व्यवहार, फेरी करने से, विवाद, भ्रातृकलह।।१४।।

धनार्जने सुते दारग्रहणे लिपिकर्मणि ।
उच्चादिस्थानवर्गेषु लाभदश्च रविः क्रमात् ।।१५।।

पुत्र से धनार्जन, विवाह, लेखन कर्म करने से लाभ होता है।।१५।।

चंद्रस्यफलम् –

शंखमाणिक्य मुक्तानां लाभो तत्क्रयविक्रये ।
सुरते स्त्रीषु मैत्रे च राज्ञः पुरुषमित्रता ।।१६।।

यदि चन्द्रमा अपने उच्चादि शुभ वर्ग में हो तो शंख, माणिक्य मुक्ता का लाभ और इनके खरीदने और बेचने से लाभ होता है। मैथुन, स्त्री से मैत्री, राजपुरुष से मित्रता।।१६।।

धनायतिस्तथा तत्र मैत्रं च कृषिकर्मणि ।
वस्त्रादि धनसिद्धिश्च ब्राह्मणेन विरोधता ।।१७।।

धन का लाभ कृषिकर्म, वस्त्रादि के व्यापार से धन की सिद्धि होती है। ब्राह्मण से विरोध।।१७।।

धननाशो भवेद्युद्धे पराजय पराभवौ ।
काक्षांशांश्चार्ध होरांश फलानि क्रमशःस्थिते ।।१८।।

युद्ध में धन की हानि, पराजय और पराभव होता है।।१८।।

भौमस्यफलम् –

स्वर्णसिद्धिर्जयो वस्त्रलाभो मित्रसमागमः ।
विवादो भ्रातृभिः शत्रुकर्म स्त्रीचंचलाक्षकः ।।१९।।

यदि मंगल अपने उच्च का हो सुवर्ण की सिद्धि, विजय, वस्त्र का लाभ, मित्र समागम, बंधुविवाद, शत्रुकर्म स्त्री विषय में चंचल नेत्र।।१९।।

स्त्रीलाभो दासलाभश्च कृत्स्नेहा च वलक्षयः ।
वलैर्धनायतिः स्वोच्चे क्षेत्राद्यैर्न्यायतो भवेत् ।।२०।।

स्त्री लाभ, दास का लाभ, सभी इच्छाओं की पूर्ति, बल की हानि, बल से धन का लाभ होता है।।२०।।

मूलत्रिकोणे क्षेत्रेण राज्ञो वाथ धनायतिः ।
स्वर्क्षे वस्त्रं कांचनादि सिद्धिश्चाथ सुहृत्फलम् ।।२१।।

मूल त्रिकोण राशि का हो तो कृषि कर्म या राजा के आश्रय से धन का लाभ होता है। स्वराशि का भाग्य भाव में हो तो वस्त्र सुवर्णादि का लाभ होता है, मित्र राशि का हो तो धान्य लाभ होता है।।२१।।

धान्यायतिश्च मैत्री च क्रूरकर्म प्रवर्तनम् ।
कुष्ठं चाप्यग्निभीतिश्च गृहदाहोऽतिशत्रुभे ।।२२।।

अधिशत्रु की राशि का हो तो क्रूरकर्म में प्रवृत्ति होती है, अग्निभय, कुष्ट, सग्रहणी गुल्म आदि रोग के कारण धन हानि होती है।।२२।।

बुधस्यफलम् –

संग्रहणीगुल्मरोगश्च धननाशश्च तत्र तु ।
विद्यार्जने सुखं स्त्रीभिः कलहश्च धनायतिः ।।२३।।

बुध अपनी उच्चराशि का होकर भाग्य भाव में हो तो विद्या-संपादन और सुख प्राप्ति में लाभ होता है। शत्रु राशि का हो तो स्त्री से कलह, मित्र राशि का हो तो धन का लाभ।।२३।।

क्षेत्रदासादिलाभं च कृषिकृत्यं धनायतिः ।
विवादो बंधुमिर्युद्धे जयश्च परायजः ।।२४।।

क्षेत्रदासादि का लाभ, कृषि में लाभ, नीच राशि का हो तो वधु-विरोध, युद्ध में हानि, पराभव।।२४।।

विद्याबुद्धिधनक्षेत्रं यशांसि च फलंति च ।
राज्ञस्तत्पुरुषेणैव स्वर्णक्षेत्रायतिस्तथा ।।२५।।

उच्चादि का हो तो विद्या, बुद्धि, धन, यश, स्वर्ण, भूमि, राजपुरुष से लाभ।।२५।।

स्वर्क्षे धनायतिः प्रोक्ता लिपिना शिल्पकर्मणा ।
वस्त्रस्वर्णादिसिद्धिश्च राजस्त्रीभिर्धनायतिः ।।२६।।

स्वराशि का हो तो लेखनक्रिया से, शिल्पकर्म से राजस्त्री के द्वारा, वस्त्र स्वर्णादि से धन लाभ।।२६।।

कायस्य कर्मणा लाभो विद्यानाशः स्वकर्मणा ।
धननाशोऽश्मरी कुष्ठं कलांशादि फलंततः ।।२७।।

समराशि का हो तो शरीर कृत्य से लाभ, अधिशत्रु गृह का हो तो विद्या की हानि, व्यापार में हानि, अदमरी (पथरी) रोग, कुष्ठ रोग हो।।२७।।

विवादाद्बंधुभिर्दायो देशपर्यटनाद्धनम् ।
क्षेत्रसिद्धिर्जयो विद्यालाभोधान्यविवर्धनम् ।।२८।।

अपने षोडशांश में हो तो बंधुविवाद से धन लाभ और देशांतर से धन लाभ, क्षेत्रसिद्धि, जय, विद्यालाभ, धान्यवृद्धि।।२८।।

कृषिकर्मसमुद्योगः सेवाकरणकौशलम् ।

कृषिकर्म, नौकरी में तरक्की, विद्या संपादन में कुशलता हो।।

गुरोःफलम् –

विद्यार्जनमथप्रोक्तं गुरोः श्रीमान् सुखी गुणी ।।२९।।

गुरु भाग्य भाव में हो तो लक्ष्मी से युक्त, सुखी, गुणी।।२९।।

वह्वायतिरमात्यत्वं सर्वसम्पत्समन्वितः ।
धननाशः प्रमोहेण क्षेत्रनाशः पराभवः ।।३०।।

अधिक लाभ से युक्त, प्रधानत्व, सर्वसंपत्ति से युक्त होता है। शत्रु राशि का हो तो द्रव्यनाश, क्षेत्रनाश, पराजय होती है।।३०।।

विद्यार्जनं तथा सेवाकरणं संपदस्तथा ।
पुत्रैर्धनायतिर्मित्रैः स्त्रीभिश्च कृतकमणा ।।३१।।

मित्रराशि का हो तो विद्या संपादन सेवा करना होता है। अधिमित्र गृह का हो तो ऐश्वर्य प्राप्ति, पुत्र मित्रादि से धन लाभ, स्त्री द्वारा द्रव्य लाभ।।३१।।

विवाहो धनलाभश्च क्रमादेवं फलं वदेत् ।

विवाह आदि से धन का लाभ होता है।।

भृगोःफलम् –

राज्ञां कृत्यकरः श्रीमान्पुत्रबंधुसमन्वितः ।।३२।।

यदि शुक्र अपने उच्चादि वर्ग का होकर भाग्य भाव में हो तो राजकर्मचारी, धनी, पुत्र तथा भाइयों से सुखी।।३२।।

सेनानाथस्तथामात्यो विद्यार्जन परोधनी ।
पाठको याजकश्चाथ बहुस्त्रीकोऽतिशत्रुभे ।।३३।।

सेनापति, प्रधान, विद्या संपादन में कुशल, धनी, अध्यापक, ऋत्विक्, अनेक स्त्री से युक्त होता है।।३३।।

स्त्रीशक्तो निर्धनोमूर्खः पातकी भारकोभवेत् ।
सेनाधिकारी राज्ञश्च प्रियैर्वन्धुभिरायतिः ।।३४।।

अधिशत्रु के गृह में हो तो स्त्री लालची, दरिद्र, बुद्धिहीन, पातकी, भारवाहक होता है। स्वगृह का हो तो सेनाधिकारी, प्रियबांधवों से इष्ट प्राप्ति।।३४।।

सेवावृत्या च कृष्या च विद्यायाः पूर्तकर्मणा ।
सर्वसंपद्युतः श्रीमान् शुक्रस्यैव 'फलं' लभेत् ।।३५।।

दूसरे की सेवा से, कृषि कर्म, विद्या से, इष्टपूर्तयज्ञ से वापी, कूप तालाब आदि कार्य से सर्वसम्पत्तिमान हो।।३५।।

शनेःफलम् –

कुजोच्चादिफल चार्केःकलांशादि फलं भवेत् ।
कलांशादिषु यत्प्रोक्तं कलांशादि फलंत्विदम् ।।३६।।
उच्चादिषु तथा प्रोक्तं फलमेवं विचिंतयेत् ।

मंगल के उच्चादि का जो फल कहा है वही शनि के कालांशादि (षोडशांशादि) फल है। मंगल के षोडशांशादि जो फल कहा है वही शनि के षोडशांशादि का फल होता है।।३६।।

स्वभाग्यर्क्षगतानृक्षान्न्यूनाश्चाप्यधिकांस्ततः ।।३७।।
स्वरश्मिघ्नान् ग्रहे युक्ते तद्रश्मिघ्नांस्तथोत्तरम् ।
त्रिभिर्विभज्य निःशेषे स्वोजराशौ नवांशके ।।३८।।

भाग्यभाव को उसकी रश्मि से गुणाकर भाग्यभाव में जो ग्रह हो उसकी रश्मि से भी गुणाकर गुणनफल में ३ का भाग देने से यदि शून्य शेष बचे और भाग्यभाव में विषम राशि नवांश हो तो।।३८।।

आदिमध्यावसाने स्याद्युग्मे तत्र नवांशके ।
आदौ मध्येऽवसाने स्याद्युग्मे चौजे नवांशके ।।३९।।

आदि मध्य अंत में युग्म राशि और विषम नवांश हो तो आदि मध्य अंत्य में।।३९।।

मध्येऽवसाने चाद्ये न युग्मे मध्यांतिमादिमे ।
आदौ मध्येऽवसाने स्यादेवं चेद्भाग्यलक्षणम् ।।४०।।

तथा युग्म राशि और युग्म नवांश हो तो मध्य अंत आदि के स्थान में आदि, मध्य अंत में भाग्य का फल होता है।।४०।।

ओजराशौ नवांशे चेद्युग्मे मध्यांतिमादिमे ।
युग्मेराशौ नवांशे चेदोजे मध्येंऽतिमेऽपिच ।।४१।।

यदि विषम राशि और समनवांश हो तो मध्य, अंतिम और आदि में और समराशि विषम नवांश हो तो अंतिम और प्रथम में और सम राशि सम नवांश हो तो मध्य, अंतिम और आदि में।।४१।।

प्रथमेऽपि वयस्येवं युग्मे मध्येऽन्तिमादिमे ।
शेषं द्वयं चेदेकं स्यात्कालो व्यत्यासतो भवेत् ।।४२।।

यदि १ या २ शेष बचे तो विपरीत समय में फल होता है।।४२।।

फलाभ्यां चाहते तद्वच्चराद्यंशे चरे च भे ।
आदौमध्येवसाने स्यात्स्थिरेऽन्ते मध्यमादिमे ।।४३।।

यदि भाग्यगत चरलग्न हो तो भाग्यभाव के कला को ग्रह के कला में जोड़कर गुणाकर पूर्वोक्तवत् भाग देने से चर स्थिर द्विस्वभाव प्राप्त होने से क्रम से आदि मध्य अंत में, स्थिर में अंत्य, मध्य आदि में।।४३।।

उभये मध्यमेऽन्ते च आदावेवं प्रकीर्त्तिताः ।

तथा द्विस्वभाव राशि हो तो मध्य, अंत और आदि में भाग्य का फल होता है।।

भावानांविशेषविचारः–

भावानां चैव सर्वेषां चन्द्रलग्नात्तु लग्नतः ।।४४।।

सभी भावों का विचार चन्द्रलग्न से और जन्मलग्न से करना चाहिये।।४४।।

अंशदायोक्तवत्कृत्वा शुभपापदृगाहतम् ।
षष्ठ्याप्तं तद्बलाप्तं स्याद् भावादीनां च संख्यका ।।४५।।

पहले अंशायुर्दाय के अनुसार गणित करके जो फल आवे उसे दो जगह रखकर एक जगह शुभ दृष्टि योग से और दूसरे स्थान में पापदृष्टि योग से गुणाकर दोनों स्थान में ६० से भाग देना जो फल प्राप्त हो वह भाव प्राप्त होता है।।४५।।

रश्मिघ्नं च बलाप्तं च त्वनिष्ठमपवादनम् ।।४६।।

फिर उसी अंशायु गणित को रश्मि से गुणाकर इस बल से भाग देने से अनिष्ट और शुभ फल होता है।।४६।।

इति पाराशरहोरायामुत्तरार्धे भाग्यफलाध्यायत्रयोदशः।।१३।।

अथ चतुर्दशोऽध्यायः।

मुहूर्तलक्षणम् –

नाडीद्वयं मुहूर्त्तः स्याद्विनाडीद्वयमेव च ।
रवेरूदयतो ह्येषाक्रमात्सर्वजितः स्मृतः ।।१।।

दो घटिका का एक मुहूर्त होता है किन्तु जब दिनमान ३० घटी का होता है तब अन्यथा २ घटी से कम या अधिक भी होता है। प्रातः काल सूर्य जिस राशि पर उदय हो वही लग्न होता है वहाँ से आरम्भ कर मेषादि क्रम से लग्न बीतती हैं। दिन में १५ मुहूर्त और रात्रि में १५ मुहूर्त होते हैं।।१।।

आर्द्राश्लेषानुराधाश्च मघाश्चाथ घनिष्ठिकाः ।
उत्तराषाढसंज्ञश्च सर्वजिद्रोहिणी तथा ।।२।।

दिन के १५ मुहूर्त्त क्रम से आर्द्रा, आश्लेषा, अनुराधा, मघा, धनिष्ठा, उत्तराषाढ़ा, सर्वजित् नाम का अभिजित्, रोहिणी।।२।।

विशाखा च ततो ज्येष्ठा मूलं च शततारकम् ।
भरणीपूर्वफाल्गुन्यौ विश्वजिच्च ततो भवेत् ।।३।।

विशाखा, ज्येष्ठा, मूल, शततारक, भरणी, पूर्वाफाल्गुनी, विश्वजित् अभिजित ये १५ दिन के मुहूर्त हैं।।३।।

उत्तराप्रौष्ठपाच्चैव रेवती च ततः परम् ।
अभिजिच्चोत्तरा चाथ कृत्तिका रोहिणी ततः ।।४।।

उत्तराभाद्रपदा, रेवती, अभिजित्, उत्तरा, कृत्तिका, रोहिणी।।४।।

मूलं च रोहिणी चाथ मृगशीर्ष च हस्तकम् ।
पुष्यश्च श्रवणो हस्तचित्रे स्वाती क्रमात्स्मृता ।।५।।

मूल, रोहिणी, मृगशीर्ष, हस्त, पुष्य, श्रवण, हस्त, चित्रा, स्वाती ये १५ मुहूर्त रात्रि के हैं। इन्हें विश्वजित् कहते हैं।।५।।

विनाडेः ३२ मुहूर्त्ताः–

नाडीद्वयमुहूर्त्तानां संज्ञा एता कमाद्विज ।
सर्वजिद्भरणीहस्तविश्वजिद्रोहिणी तथा ।।६।।

भरणी, हस्त, पूर्वाषाढा, रोहिणी।।६।।

दस्रश्च मृगशीर्षश्च शर्वः पुष्यश्च सैंद्रभम् ।
उत्तराविश्वजिच्छ्रोणी चित्रा पुष्यश्च वायुभम् ।।७।।

अश्विनी, मृगशिरा, आर्द्रा, पुष्य, आर्द्रा, उत्तरा, पूर्वाषाढ़, श्रवण, चित्रा, पुष्य, स्वाती।।७।।

अभिजिद्विसुभं पौष्णं कृत्तिका च पुनर्वसुः ।
पूर्वोत्तरप्रोष्ठपदौ शततारा च विश्वभम् ।।८।।

अभिजित्, धनिष्ठा, रेवती, कृत्तिका, पुनर्वसु, पूर्वाभाद्रपद, उत्तरा भाद्रपद, शतभिष, उत्तराषाढ।।८।।

ज्येष्ठासूर्य च मूलं च भाग्यश्च क्रमशः स्मृताः ।
ज्येष्ठा चाथ विशाखा च मूलं च शततारका ।।९।।

ज्येष्ठा, हस्त, मूल, पूर्वाफाल्गुनी, ज्येष्ठा, विशाखा, मूल, शतभिष ये ३२ मुहूर्त विनाडी के हैं। इन्हें सर्वजित् कहते हैं।।९।।

षष्ठिघट्यात्मकमुहूर्त्ताः–

नामानि च मुहूर्त्तानां विनाडीद्वयरूपिणाम् ।
आवृत्याषष्ठिताः प्रोक्ताः कालांशा नाडिरुपिणः ।।१०।।

पूर्व में दिन रात्रि के २ घटी वाले मुहूर्त्त को दूना कर देने से एक घटी के ६० मुहूर्त्त होते हैं इसे कालांश कहते हैं।।१०।।

कालांशराशिचक्रमुहूर्त्त–

नक्षत्रसंज्ञया प्रोक्ताः षष्ठ्यावृत्याकलांशकाः ।
मेषोयमो वृषः कुंभो झषोजूकश्च कर्कटः ।।११।।

पूर्व में कहे हुये दिन और रात्रि के ३२ मुहूर्त्त को दूना कर देने से नक्षत्र कालांश मुहूर्त्त होता है। सूर्योदय से पाँच-पाँच घटी का मेषादि राशियों का कालांश होता है। वे मेष, मिथुन, वृष, कुंभ, मीन, तुला, कर्क।।११।।

सिंहोऽथ वृश्चिकश्चाथो मृगःकन्या क्रमाद्भवेत् ।
राशि चक्र कलांशे तु क्रमादेवं प्रकीर्त्तिताः ।।१२।।

सिंह, वृश्चिक, धन, मकर, कन्या ये राशि कालांशक हैं।।१२।।

नित्योदयस्यक्रमः–

मेषो गोर्यम कर्की लेयकन्यातुलालयः ।
धनुर्मृगघटोमीनमुदयाद्घटिकासु च ।।१३।।

ऊपर कहे हुये कालांश के नित्योदय का क्रम कह रहे हैं! मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धन, मकर, कुम्भ, मीन ये राशियाँ उदयकालीन लग्न से क्रम से घटी तुल्य अर्थात् मीन, मेष, चार-चार घटी और वृष कुंभ साढ़े चार घटी तथा मकर और मिथुन पाँच-पाँच घटी शेष राशियाँ साढ़े पाँच २ घटी में उदय होती हैं।।१३।।

सिंहान्मेषाच्च चापाच्च नक्षत्रक्रम ईरितः ।
चन्द्रज्ञ शुक्रधूमार्कपरिवेषार्ककार्मुकाः ।।१४।।

नक्षत्र लेने का प्रकार— सिंहादि नक्षत्र से १, धनुरादि से २, मेष राशि से यह तीन प्रकार है! अर्थात् जन्मलग्न सिंहादि है तो सिंह पर चन्द्रमा, कन्या पर बुध, तुला पर शुक्र, वृश्चिक पर धूम इत्यादि क्रम से कर्क पर केतु को लिखना।।१४।।

गुरुः पातः शनिः केतुर्ग्रहाः स्त्रुद्वादिश क्रमात् ।
चक्र लिप्तांशके चैवं केत्वादिस्तारकांशके ।।१५।।

इसी प्रकार धनु से एवं मेष से भी ऐसे ही १२ ग्रहों का न्यास कर नक्षत्र का ज्ञान करना।।१५।।

नित्योदयघटीप्रमाणम् –

अर्कादि धूमपर्यन्ताः क्रमात्स्युर्घटिकांशके ।
सत्र्यंशा घटिकास्तिस्रो मेषादि निमिषयोर्द्विज ।।१६।।
चतस्रः कुंभवृषयोस्तथा मकर युग्मयोः ।
पंच सत्र्यंशास्ताः कर्किधनुषोः स्मृताः ।।१७।।
सिंहवृश्चिकयोः षट् च अंशोनाः सप्तशेषयोः ।
नित्यं मानमिदं प्रोक्तं मेषादुदयराशिजम् ।।१८।।

हे मैत्रेय मेषादि राशियों के नित्योदय घटीमान कहता हूँ। शेष चक्र से स्पष्ट है।।१६-१८।।

मेषादि राशीनां उदय घटी मान।

मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	राशि
३	४	४	५	६	६	६	६	५	४	४	३	घ.
२०	०	४०	२०	०	४०	४०	०	२०	४०	०	२०	प.

प्रकारान्तरेण राशीनांमानानि–

ख्याक्रान्तात्तथा प्रोक्ता एकद्वित्रिचतुर्घटी ।
मानानि मेषतः सिंहाच्चापादर्कोदयात्ततः ।।१९।।

उदय लग्न से मेष से चार सिंह से चार और धन से चार लग्नों का क्रम से एक, दो, तीन और ४ घटी प्रकारांतर से मान होता है। जो लग्न हो उसके मान में दशवर्गाधिपों का विभाजन करना चाहिये।।१९।।

दशवर्गाधिपाश्चिन्त्याः प्रोक्ताश्चेन्दुनवांशकाः ।
अन्यत्र कीर्त्तिताः प्रश्ने नष्टद्रव्यस्य निश्चये ।।२०।।

इसका प्रयोजन-नष्टद्रव्य के निश्चय करने में तथा प्रश्न के विचार में चन्द्रनवांश को भी देखना चाहिये।।२०।।

दशवर्गानांफलम् –

श्रीमान् रिक्तश्च मूर्खश्च कुशलोवंचनः पटुः ।
स्त्रीशक्तो वेदविद्वीरो मंदाग्निस्तीव्रशेषणः ।।२१।।

मूलरोगी च पिशुनः सदा दानपरो शुचिः ।
सेवाकरः सुभाषी च धनवाँल्लोभसंयुतः ।।२२।।
प्रख्यातो विद्यया भीरूर्बुद्धि श्रीमान्सुशीलकः ।
परदाररतः श्रीमान्सुशीलो बलवान्गुणी ।।२३।।
अध्वन्योनिगमव्यग्रः पातकीच तपोयुतः ।
परदाररतो वेश्यासक्तोऽसत्फलवासनः ।।२४।।
सिंहासनस्थो रिक्तश्च जटिलः कुलपांशनः ।
योगी बुद्धश्च सन्यासी सेनानीर्वुद्धिमान्सुखी ।।२५।।
कुष्ठी भूतकरः श्रीमानेकपुत्र समन्वितः ।
शास्त्रज्ञो दासकृत्यश्च चंडरोष समन्वितः ।।२६।।
स्त्रीसक्तः परदारोक्तो भृत्यः पटुररोगवान् ।
कुरूपश्चापि कुशलो जितारिः पुत्रवर्जितः ।।२७।।
शूरोवीरश्च चंडश्च कुशलः कुक्षिरोगवांन् ।
ग्रामणीविटपो धूर्त्तः सतीपतिररिंदमः ।।२८।।
वंध्यापतिः सुरापी च रिक्तसाध्यपतिः सुखी ।
विजयी युद्धभीरूश्च चोरोऽमर्षी जनार्जकः ।।२९।।
धनार्जनाय सततमकृत्य शतकारकः ।
वृषलीपतिरिन्द्रश्च सेनानीः सत्यवाक्छुचिः ।।३०।।
शिरोरोगी च कुष्ठी च मेही च पिशुनःसुखी ।
जलवद्रोगसंयुक्तः कृतज्ञो निर्घृणो घृणी ।।३१।।
विवादशीलः सुमुखः क्रोधनः कामुकः पटुः ।
चलच्चित्तो धनी वाग्मी विद्यार्जनपरः सुखी ।।३२।।
अपुत्रः कृषिकृद्धीरः परदाररतः शुचिः ।
विद्याहीनश्च मूर्खश्च बुद्धिमान शास्त्रपारगः ।।३३।।
सदाभीरूर्शठो वाग्मी कृत्येषु कुशलः सुखी ।
नीतिज्ञो लेखको नीचजातिकृत्यरतः पटुः ।।३४।।

प्रेष्यो गोमयविक्रेता वदान्योधनवंचका ।
सेनानीः क्षेत्रवान् वीरो लेखवृत्या च जीवति ।।३५।।
मूर्खो जितेन्द्रियो वाग्मी सदाकृत्यपरः सुखी ।
अन्नदाताच मिष्ठाशी शिवभक्तो जितेन्द्रियः ।।३६।।
कुब्जो वक्रशरीरश्च जात्यंधो वधिरः शठः ।
अमर्षी नर्तकः क्रुद्धो दुर्जनो वेदपारगः ।।३७।।
वक्ता च गायकः श्रीमान् सर्वदा चजनार्जकः ।
तालज्ञो विद्यया युक्तः पंच पंचासदुत्तरम् ।।३८।।
शतं गुणाश्च श्रीयोगा एकयोगावसानक्रम् ।
पूर्वपूर्वयुता ओजे युग्मे राशौ तु वामतः ।।३९।।
चरे क्रमः स्थिरे वाममुभयोर्धपदादितः ।
आदौ त्रिंशद्गुणा ह्यते वामतस्त्रिंशदेवहि ।।४०।।
षष्ठ्यंशेतु गुणः प्रोक्ताःप्राग्वदोजचरादिकाः ।

दशवर्ग से फलादेश कहते हैं जो कि स्पष्ट हैं। विशेष यह है कि विषम नवांश हो तो श्रीमान् योग से समराशि का नवांश हो तो विद्वान् योग से आरम्भ कर श्रीमान् योग तक और चर राशि में क्रम से स्थिर राशि में विलोम से द्विस्वभाव राशि में अर्धभाग से क्रम लेना चाहिये।।३९-४०।।

राहोः गतिः-

मेषादुत्क्रमतो राहुः केतुर्यादि वृषात्क्रमात् ।।४१।।

राहु मेष राशि से विपरीत क्रम से और केतु वृष राशि से क्रम से जाता है।।४१।।

अस्य प्रयोजनम् -

ऋक्ष संध्यन्तरे जातः प्रष्टासौ म्रियते भृशम् ।
केतुराहुस्थिते राशौ भसंधौ मरणं भवेत् ।।४२।।

राहु केतु नक्षत्र प्रवेशान्तर के समय जन्म हो तो निश्चय ही प्रश्नकर्त्ता की मृत्यु होती है।।४२।।

इतरेषां त्रयाणां च प्रकाशे व्याधिपीडितः ।
दुर्बलो बुद्धिहीनश्च जायते न मृतो यदि ।।४३।।

राहु केतु से युक्त राशि के संधि में प्रश्न हो वा जन्म हो तो भी मृत्यु होती है, इसी प्रकार अन्य धूम, कार्मुक परिवेष के उदय राशि में प्रश्नकर्त्ता व्याधि से पीड़ित होता है।।४३।।

अथ पित्र्याद्यरिष्ट विचार:-

कलांशराशितोऽरिष्टे नक्षत्रारिष्टसंभवे ।
पित्रादीनां सुतस्यापि तद्दशाच्चिन्तयेत्सुधीः ।।४४।।

यदि षोडशांश से और नक्षत्र से अरिष्ट योग आता हो और भाव को पापग्रह देखता हो या उसमें पापग्रह युत हो तो पित्रादि को और पुत्र को भी अशुभ होता है।।४४।।

पावशत्रुग्रहाकांता भावास्तद्दृष्टिसंयुताः ।
सौम्यपापादयश्चैवं शुभाशुभफलप्रदाः ।।४५।।

पाप शत्रु ग्रह से भाव युक्त हो वा उसके दृष्टि से युक्त हो, तो शुभग्रह का दृष्टि योग हो तो शुभद होता है और पापग्रह का दृष्टियोग हो तो अशुभ होता है।।४५।।

एकद्वित्रिचतुः पंचषट्सप्ताष्टदिग्धराः ।
सूर्येन्दुनृपमूर्च्छेन्द्रनृपभार्क नृपाजिताः ।।४६।।
पंचाष्टवसुभूतेषु सुरदंताजिनाद्रयः ।
नखास्त्रिंशत्खवेदाः षट्सप्ततिः षष्टिरद्रियुक् ।।४७।।
नवतिश्च शतं मूर्च्छा जिना दंता जिना दिशः ।
एवं नवशतं प्रोक्ताः क्रमादेवं तु तत्रतु ।।४८।।
पूर्व पूर्व युता संख्या लक्ष्मीयोगफलप्रदा ।
नक्षत्रे राशिचक्रे तु दिवसे वामतः स्मृताः ।।४९।।

शेष योगों का विचार पूर्वा पर संबंध से देखना चाहिये।।४६-४९।।

सुगतिदुर्गतिअंश-

शुभमित्रग्रहाक्रांता भावास्तद्दृष्टिसंयुताः ।
द्वित्रिपंच च षट् सप्त वसुनंददिशोऽद्रयः ।।५०।।

यदि भाव शुभग्रह या मित्र ग्रह से आक्रांत हो वा देखा जाता हो तो २।३।५।६।७।८।९।१०।७ ।।५०।।

त्रिंशद्दिशो नखाः षष्ठिसूर्यमूर्च्छाजिनाजिनाः ।
आकृतिर्भानिभार्काग्निनखाश्छंदः शतं नखाः ।।५१।।

३०।१०।२०।६०।१२।३१।२४।२१।२७।१२।३।२०।२६।१००।२०।२ ।।५१।।

त्रिंशत्खवेदा दिग्विश्वे शतं षष्ठिः शतंजिनः ।
वेदाः खवेदाः पूर्वार्धे परार्धे प्राग्वदत्रतु ।।५२।।
एते योगवलाच्चैव केवलं दुर्मतिप्रदाः ।

३०।४०।१०।१३।१००।६०।१००।२४।४।४० के पूर्वार्ध में और राशि के उत्तरार्ध में विलोम क्रम से दुर्गति हैं।।५२।।

कुब्जादियोगाः–

दिनर्क्ष चक्रसंख्याः स्युरादिमध्यावसानिकाः ।।५३।।

दिन, नक्षत्र और राशि इनकी संख्या आदि मध्य और अंत्यभाग का योग।।५३।।

सप्तविंशतिसप्तत्यां शते षष्ठ्यां शतद्वये ।
षट्पंचांशतिविंशे च षण्नवत्यामशीतिके ।।५४।।

यदि २७।७०।१००।६०।२००।६।५०।२०।९६।८० ।५४।।

षष्ठिभागे च विंशत्यां शतषठ्यां शतद्वये ।
कुब्जः कलांशेमूकस्तु शतद्वयशतत्रये ।।५५।।

१०।६०।२०० हो तो कुब्ज होता है। यदि २००, ३०० ।।५५।।

सहस्त्रे द्विशते जातः पंचमे पापसंयुते ।
द्वित्रिपंचाष्टदिग्विश्वनृपातिधृतिभूमयः ।।५६।।

१०००, २०० हो और पाँचवें भाव में पापग्रह हो तो मूक होगा। २।३।५।८।१०।१३।१६।१८।१ ।।५६।।

नवदिग्भसुरैस्तानैस्तिथिविश्वाष्टकैः क्रमात् ।
गुणेन वामतः प्रोक्तो लक्ष्म्यंशे श्रीसमन्वितः ।।५७।।

९।१०।२७।३३।४९।१५।१३।८ इनको वायें भाग से गुणने प्राप्त अंश लक्ष्म्यंश में श्रीमान् होता है।।५७।।

योगान्तरम् –

रविचन्द्रतमपातकालेष्वरिभवेषु च ।
पंचाशीतिशते वेदे मनौद्वित्रिशते पुनः ।।५८।।

यदि सूर्य चन्द्र राहु पातकाल में ६।११ तथा ८५।१००।४।१४।२।३।१०० ।।५८।।

खाब्धिपंचसु दिग्भागे सहस्रे चाक्षिचन्द्रगे ।
खखाग्निरूपं विश्वाष्ट त्रिचन्द्रखखभूमिपैः ।।५९।।

४०।५।१०।१३००।१३।८।३।१।१६०० इन योगां में चन्द्रमा युक्त हो तो वधिर होता है।।५९।।

मृत्युकालज्ञानम् –

शताधिके च जातोऽस्मिन्वधिरः षष्ठि संयुतो ।
कर्किवृश्चिकमीनांशे तद्राशीशांशके तथा ।।६०।।

कर्क, वृश्चिक और मीन के अंश में इनके स्वामियों के (चंद्र, भौम, गुरु) इनके नवांश में।।६०।।

पातकेत्वोश्च शत्र्वृक्षगतयो रंशकेपुनः ।
एकादित्रिंशतैर्यावत्क्रमात्तास्तु सुभाजिताः ।।६१।।

पात में अथवा उच्च, शत्रु राशि में स्थित ग्रह के अंश में जो संख्या हो उससे १ से लेकर ३०० तक।।६१।।

आकाशपूर्णधृतयो निःशेषं लब्धसंख्यके ।
सदोर्षेऽतराशेतु जातस्यैतेऽपमृत्यवः ।।६२।।

१८०० में भाग देना जिससे निःशेष हो जो लब्धि प्राप्त वह यदि सदोष (पापग्रह से युक्त हों) तो जातक का लब्धि तुल्य वर्ष में अपमृत्यु कहना।।६२।।

अल्पमध्यदीर्घायुर्ज्ञानम् –

पंचाशतः षडावृत्या स्वल्पमध्यचिरायुषः ।
क्रमेणोत्क्रमशस्ते तु त्रैराशिकविधानतः ।।६३।।

पीछे कहे हुये ५० कुब्ज आवृत्ति के वर्ष से त्रैराशिक रीति से गणना करके प्रथम आवृत्ति में अल्पायु दूसरे आवृत्ति में मध्यमायु और तीसरे आवृत्ति में चिरायु चौथे आवृत्ति में उत्क्रम से दीर्घायु पाँचवीं आवृत्ति में मध्यमायु और छठी आवृत्ति में अल्पायु समझना चाहिये।।६३।।✿

✿ वर्षाण्याह— शराः दिशास्तिथयः नखाः तिथयः दश एवं षडिति।

चतुर्दशग्रहाणांषष्ठ्यंशादिः-

खाक्ष्यद्रयस्तुषष्ठयंशास्त्रिशांशाः खरसाग्नयः ।।६४।।

बारह राशियों में ७२० षष्ट्यंश।।६४।।

अष्टषट्भूमयः कालहोराः सप्तदिनेषु च ।
वेदेन्द्रा द्वादशांशा, स्युर्नवांशा गजखेंदवः ।।६५।।

३६० त्रिंशांश, १६८ कालहोरांश, १४४ द्वादशांश, १०८ नवांश।।६५।।

सप्तांशा वेदनागास्तु द्रेष्काणास्तु षडग्नयः ।
अर्धहोराजिनाः प्रोक्ता नक्षत्राणि चराशयः ।।६६।।

८४ सप्तमांश, ३६ द्रेष्काणांश और २४ अर्धहोरांश ये क्रम से नक्षत्र राशि के होते हैं।।६६।।

भुंजते च ग्रहाश्चैव मनुसंख्यैश्च भुंजते ।
राशयश्च ग्रहाश्चैव नक्षत्राणि च भुंजते ।।६७।।

इनको १ सूर्य, २ चन्द्र, ३ भौम, ४ बुध, ५ गुरु, ६ शुक्र, ७ शनि, ८ राहु, ९ केतु।।६७।।

ख्यादिशिखिपर्यन्ता नवभूमेन्द्रकार्मुकौ ।
पातश्च परिवेषश्च कालश्चेति चतुर्दश ।।६८।।

१० भूमा, ११ इन्द्रचाप, १२ पात, १३ परिवेष, १४ काल ये भोगते हैं। कौन किस अंश में है इसे देखकर फल का विचार करना चाहिये।।६८।।

अथ नक्षत्रगणनाक्रमः-

तेषां प्रादुर्भवे चैव भंगदास्तु नवग्रहः ।
दस्रात्पंच भगात्षट्क पंचार्द्राद्वारूणादपि ।।६९।।

अश्विनी से ५, पूर्वाफाल्गुनी से ६, आर्द्रा से ५, शतभिष से ४।।६९।।

मित्रान्नवक्रमात्प्रोक्तास्तत्तदेशेषु सर्वदा ।
अक्षिणी पंचदश च नखास्तत्त्वं तथामराः ।।७०।।

और अनुराधा से ७ ये नक्षत्र पूर्वोक्त अंशों में रहते हैं क्रम से २।१५।२०।२५।३३ ।।७०।।

सत्र्यंशाश्चषडंशोनाश्चत्वारिंशत्क्रमादथ ।
शतं खेष्विंदवः प्रोक्ता विनाडीतनयोऽपिच ।।७१।।

३३।३३।४०।१००।१५० ये नाडियाँ अर्धहोरा आदि के योगकाल हैं।।७१।।

काल्यंशवद्यर्धहोरांशभोगकालः प्रकीर्त्तितः ।
प्रमाणराशयश्चैते भागहारा कलात्मकाः ।।७२।।
तत्तद्देशकला इच्छाराशयो गुणराशयः ।
कटुको मधुरत्तिक्तः कषायो लवणाम्लकौ ।।७३।।

कलांश में उत्पन्न हुये का कटुक, मीठा, तीता, कषैला, नमक, अम्ल।।७२-७३।।

कालांशेक्रमतो गण्याःषष्ठ्यंशेव्युत्क्रमात्स्मृताः ।
त्रिंशांशेतु कषायादिःकालहोरांशके पुनः ।।७४।।

क्रम से गणना करने से जो रस आवे वह उस वर्ष में उसे प्रिय होता है। षष्ठ्यंश में उसे अम्ल से कटु पर्यन्त इस क्रम से, त्रिशांश में कषाय से तिक्त पर्यन्त।।७४।।

त्तिक्तादि द्वादशांशेषु मधुरादि नवांशके ।
अम्लादिमुनिभागे तु द्रेष्काणे मधुरादितः ।।७५।।

द्वादशांश में मधुरादि क्रम, नवांश में अम्लादि क्रम, सप्तांश, अर्ध होरा और द्रेष्काण में मधुरादि क्रम से गिनना चाहिये।।७५।।

षष्ठ्यंशोत्पत्तौफलम् –

अर्धहोरांशके तद्वज्जातस्यैवं प्रजायते ।
वेदाष्टदशभैरामैः प्रषष्ठ्यंशे च भास्करे ।।७६।।

यदि कन्या के जन्म समय में सूर्य ४।८।१०।२७।३ संख्यक षष्ठ्यंश में हो तो वह कन्या बंध्या होती है।।७६।।

त्रिषट्नवत्रिरवार्काब्धिजिनदंतसुराः क्रमात् ।
नवदिग्भैर्जिनार्कैश्च सूर्यैस्तानैस्त्रिपंचभिः ।।७७।।

तथा ३।६।९।३।०।१२।४।२४।३२।३३ इन अंकों को क्रम से ९।१०।२७।२४।१२।१२।४९।३।५।५० से गुण ने जो प्राप्त हो उतने संख्या के षष्ठ्यंश में सूर्य हो तो कन्या पूज्या (पूजनीया) होती है।।७७।।

मृतपुत्र-कन्यायोग–

पंचाशद्भिःक्रमाद्गुण्या वंध्यावंध्या प्रकीर्त्तिताः ।
त्रिवेदाद्यंकविश्वेंद्र नखच्छदोजिनायमाः ।।७८।।

पंचाशच्च शतं पूर्वयुताः मृतसुता स्मृता ।
पुत्राणां तु कलांशे तु शेषे जाता मृता द्विज ।।७९।।

३।४।७।९।१३।१४।२०।२६।२४।२।५०।१०० इनमें पूर्व अंकों को जोड़ने से जो संख्या हो तत्तुल्य अंश में सूर्य हों मृतसुता उत्पन्न होती है। उक्तांश से शेष अंशों में सूर्य हों तो उत्पन्न पुत्रों में मृत पुत्र भी होंगे।।७८-७९।।

अथ संन्यासयोगः–

द्वादशे च चतुर्विंशे चतुस्त्रिंशे सुरांशके ।
द्विसप्तांशे नवांशे षष्ठयुत्तरशतांशके ।।८०।।

यदि १२।२४।३३।७२।९।१६० ।।८०।।

षट्शते च सहस्रे च खखाहींद्वंशके पुनः ।
खांशतिथ्यंशके जातो भवेत्प्रव्रजितो नरः ।।८१।।

६००।१०००।१८०।१५।१० संख्यक अंश में जन्म हो तो सन्यासी होता है।।८१।।

परमहंसादियोगाः–

गुरुशुक्रोदये राशौ तयोः परमहंसकः ।
शत्रुराशिगतौ तौ चेदप्रकाशयुतौ तु वा ।।८२।।

गुरु शुक्र के उदय की राशि में जन्म हो तो परमहंस होता है। यदि वे शत्रुराशि में हों अथवा धूमादि अप्रकाश ग्रह से युक्त हों तो।।८२।।

भ्रष्टः स्यात्तु तथा ज्ञेतु त्रिदंडी वा वहूदकः।
रवौ जटाधरः शैवः कुजे नग्नोऽटनः स्मृतः।।८३।।

भ्रष्ट परमहंस होता है। ऐसे ही बुध हो तो त्रिदंडी सन्यासी होता है वा वहूदक होता है। सूर्य हो तो शिवभक्त, भौम हो तो नग्न घूमने वाला।।८३।।

मंदे बौद्धोऽथ वाग्मी स्याद्राहौ केतौ तथैव च ।
धूमे कापालिकाश्चापे काले तु परिवेषके ।।८४।।
गूढपापो यथा लिंगी कुलमार्गगतस्तथा ।

शनि हो तो वौद्ध धर्नावलम्बी, राहु वा केतु जन्मराशि में हों तो वौद्ध सन्यासी, धूमग्रह हो तो कापालिक, चाप, काल, परिवेष हो तो गुप्तपापी, पाखंडी, कुलमार्गानुकूल चलने वाला होता है।।८४।।

प्रवज्यायांनिष्ठायोग:-

षष्ठ्यंशे ऋक्षसन्ध्यंशे सार्पे पौष्णेन्द्रभांशके ।।८५।।

षष्ठ्यंश में, नक्षत्र संध्यंश में, आश्लेषा, रेवती, ज्येष्ठा के अंश में।।८५।।

त्रिंशाशे कालहोरांशे तत्तदंशाशेऽपि च ।
नवमूर्छासुरांशे तु यथा षष्ठितमे युत: ।।८६।।

त्रिंशांश में, कालहोरांश में, नवांश में, मूर्छा ४९ अंश में ३३वें अंश, ६०वें अंश ।।८६।।

शतांशेखाब्धितिथ्यंशे द्वादशांशे नवांशके ।
राश्यंतांशे तु सप्तांशे ऋक्षसंधिमृगांतिके ।।८७।।

१०० वें अंश में, १५४० वें अंश में, द्वादशांश में, राशि के अतिमांश में, सप्तांश में नक्षत्र संधि में।।८७।।

मृगकर्कालिसिंहादिर्मीनतौल्यंशकादिमे ।
अंत्यांशेऽपि च जातस्य षष्ठ्यर्थाक्षिजिनेरदे ।।८८।।

मकर, कर्क, वृश्चिक, सिंह, मेष, मीन, तुला के आदि या अंतिम अंश में उत्पन्न होने वाले, ६, ५, २, २४, ३२ अंशों में।।८८।।

द्रेष्काणेचार्द्धहोरायां त्रिसप्ते च नखेषु तु ।
जात: प्रव्रजितश्चैषु सर्वत्रैकयुतेष्वपि ।।८९।।

द्रेष्काण में अर्धहोरा में ७३, २० वें अंश में वा पूर्वोक्त अंकों में एक जोड़ने से जो अंक हो उन अंशों में उन अंकों में उत्पन्न होनेवाले सन्यास धर्म में श्रद्धा रखनेवाले होते हैं।।८९।।

अथ अंशविशेषजातायांस्त्रीलक्षणम् -

पापाप्रकाशसंयोगे कलत्रेत्वशुभं भवेत् ।
रवौवंध्या तु शीतांशौ क्षीणे तु व्यभिचारिणी ।।९०।।

सातवें भाव में पापग्रह हो अथवा अप्रकाशग्रह हो तो स्त्रीदुष्टा हो, सूर्य हो तो वंध्या, क्षीणचन्द्र हो तो व्यभिचारिणी।।९०।।

कुजे तु म्रियते मन्दे दुर्भगा राहुसंयुते ।
परदाररति: स्वीयनिषेकाभावतोऽसुता: ।।९१।।

भौम हो तो स्त्री का नाश, शनि हो तो दुर्भागिनी और राहु हो तो परस्त्रीगामी होता है।।९१।।

धूमे विवाहहीनः सन्म्रियते कार्मुकेसति ।
परिवेषेतु दुःशीला केतौवंध्याऽसतीभवेत् ।।९२।।

धूम हो तो बिना विवाह के ही मर जावे, कार्मुक हो तो भी वही फल हो, परिवेष हो तो स्त्री दुःशीला हो, केतु हो तो वंध्या और कुलटा हो।।९२।।

कालेऽभावस्य पापे तु गर्भश्रावेण संयुता ।
सुशीला स्त्रीप्रसूता च पूर्यमाणे तु शीतगौ ।।९३।।

काल हो तो स्त्री का अभाव, पापग्रह हो तो गर्भस्राव हो, पूर्ण चन्द्रमा हो तो सुशीला, कन्या प्रजावती हो।।९३।।

बुधे त्वपुत्रा जीवेतु गुणयुक्ता सुपुत्रिणी ।
शुक्रे सौभाग्य संयुक्ता श्रीमतीपुत्रिणीभवेत् ।।९४।।

बुध हो तो पुत्र हीन हो, गुरु हो तो गुणी और पुत्रवती हो। शुक्र हो तो सौभाग्यवती, लक्ष्मी से युक्त और पुत्रवती हो।।९४।।

अथ दशमभावानुसारफलम् –

एष्वेवं दशमे पापपुण्यकर्मरतो भवेत् ।
पंचाशद्भिः सुरैस्तत्त्वैनृपैश्च मुनिभिर्ग्रहैः ।।९५।।

जिस प्रकार से सप्तम भाव से स्त्री के फल का विचार किया है उसी प्रकार से दशम भाव से व्यापार आदि शुभाशुभ कर्मफल का विचार करना चाहिंये। दशम भाव शुभयुक्त का दृष्ट हो तो शुभ कर्मफल जानना, पापग्रह से दृष्ट युक्त हो अशुभ कर्मफल जानना चाहिये। मिश्रित ग्रह हों तो मिश्रफल इसमें भी शुभ पाप की संख्या के समान ही शुभ पापफलों को न्यूनाधिक कहना।।९५।।

अष्टभिः षड्भिरेवाथ सप्तादिभिरनुक्रमात् ।
पंचादिभिश्च होराः स्युरेकोपचयैरथ ।।९६।।

इसमें भी ५०।३३।२५।१६।७।९।८।६।७ तथा पाँच से एक पर्यन्त तथा पूर्वोक्त अंकों में एक जोड़ने से।।९६।।

पापपुण्यक्रियाकर्त्ता क्रमाल्लब्धांत्तरांशजः ।
आवृत्तिरुतरा प्रोक्ता पापपुण्यक्रियारतिः ।।९७।।

जो हों उन अंशों में जन्म होने से पाप शुभ।।९७।।

मिश्रे तु मिश्रं त्वाधिकवशादेव निर्णयः ।

मिश्रक्रिया ग्रहानुसार होती हैं।

वर्णाश्रमाचारविहीबुद्धिः स्त्रियांचपापी परदारसक्तः ।
क्षेत्रापहारी च परस्वसर्वं निहत्य योगं सकलं करोति ।।९८।।

वर्ण और आश्रम के आचार में हीन बुद्धिवाला, स्त्रियों के प्रति पाप बुद्धि वाला, परस्त्रीगामी, दूसरे की भूमि को अपहरण करने वाला, दूसरे के सर्वस्व को अपहरण करने वाला।।९८।।

परस्वचोत्कर्षविघातकारी विषाग्निदः घातककर्मकृच्च ।
ग्रामस्य देशस्य च विप्रवर्यः धनापहारी व्यसनेकृतार्थः ।।९९।।

दूसरे के उत्कर्ष को नाश करने वाला, विष और अग्नि को देने वाला, ग्राम को जलाने वाला, ब्राह्मण और देवता के धन को हरण करने वाला पातक कर्म करने वाला होता है।।९९।।

मृतिप्रदं कर्मकरोति सूर्यात्प्राप्यप्रकाशः सितशीतगोश्च ।
दयारतो दानरतः सुतेजाः स्वाचारपाला विजितेन्द्रियश्च ।।१००।।

सूर्य हो तो मारण कर्म करने वाला, चंद्रमा और शुक्र हो तो प्रसिद्ध होता है। भौम से दयारत, दानरत, सुन्दर तेजवान्, आचारयुक्त, इन्द्रियों को जीतने वाला।।१००।।

इष्टं च पूर्त्तं च करोति जीवे शुक्रेवदान्यः कृतदारशीलः।।१०१।।

गुरु हो तो इष्टापूर्त कर्म करने वाला, शुक्र हो तो दाता, शनि हो तो स्त्रीशील हो।।१०१।।

अथ मेषादि राशीनां फलानि।

मेषे त्वगम्यागमनप्रियश्च त्वभक्ष्यक्ष्योवृषभेसुशीलः ।
देवेशदेवालयधर्मकारी युग्मेविरक्तोऽत्यधनैर्विहीनः ।।१०२।।

मेष राशि में जन्म हो तो अगम्यागमन, अभक्ष्य को भक्षण करने वाला वृष राशि में अच्छा स्वाभव, शिव, विष्णु का उपासक, मिथुन राशि में वैराग्य युक्त।।१०२।।

चांद्रे च तीव्रं च करोतिपापं परस्वहर्तापि च पूर्वकारी ।
सिंहे तु देवस्य विघातकारी पाथोनके धर्मरतिःसुकृत्यः।।१०३।।

कर्क राशि में अत्यन्त पाप करने वाला, दूसरे के धन को हरण करने वाला, पूर्त कार्य (कूआं आदि) करने वाला, सिंह राशि में देवस्थान का नाश करने वाला, कन्याराशि में धर्म में प्रेम और सत्कर्म करने वाला।।१०३।।

जूके परेषां धनदश्च पूर्त्त करोति चापेऽपि च वृश्चिकेतु ।
परस्वहर्ता परदारसक्तो मृगेऽपि चैवं घटभे कृतज्ञः ।।१०४।।

तुला में दूसरों को धन से पूर्ण करने वाला, धन में भी पूर्वोक्त फल, वृश्चिक राशि में दूसरे के द्रव्य को हरण करने वाला दूसरे की स्त्री में आसक्त, मकर में भी पूर्वोक्त फल, कुम्भ राशि में कृतज्ञ।।१०४।।

यज्ञस्य कर्त्ता झषभे तथैव पूर्तादिकारी वहुयोजकःस्यात्।

और यज्ञकर्ता और मीन राशि में पूर्त आदि काम को करने वाला और अनेक योजना करने वाला होता है।

अथ सूर्यादीनां कालांश फलम् –

नर्तको गायको वंदी शिल्पी याञ्चापरस्ततः ।।१०५।।

सूर्यादि के कालांश में उत्पन्न होने से क्रम से नाच को जानने वाला गाने वाला, राजा की स्तुति करने वाला, कारीगरी को जानने वाला, याचक।।१०५।।

गायको नर्तको भारवाही प्राणतियोजकः ।
प्रेष्यश्च भारकोवंदी याचको धातुवादकः ।।१०६।।

गायक, नर्तक, बोझा ढोने वाला, नम्र रहने वाला दास वृत्ति करने वाला, वंदी, याचक, धातु के कामको करने वाला।।१०६।।

वेदाध्यायी स्मृतिज्ञस्तु शैवाश्रमकृतश्रमः ।
शिल्पलेखनकर्त्ता च मीमांशान्यायतर्कवित् ।।१०७।।

वेद पढ़ने वाला, स्मृति शास्त्र को जानने वाला, शिवदीक्षा में प्रवीण, शिल्प को लिखने वाला, मीमांशा न्याय तर्क का जानकार।।१०७।।

पंचरात्रार्थशास्त्रज्ञः इतिहासपुराणवित् ।
आयुधश्रमहेतुश्च आयुर्वेदकृतश्रमः ।।१०८।।
अर्कात्कलांशतश्चैव क्रमादेवं प्रकीर्त्तितः ।

आगम (तंत्र) को जानने वाला, अर्थ शास्त्र को जानने वाला, आयुध (शस्त्र) को वनाने वाला, आयुर्वेद (दवा) का ज्ञाता होता है।।१०८।।

अथ षष्ठ्यंश फलम् –

अध्यापकस्तु वेदानां सेवकः शास्त्रपाठकः ।।१०९।।

यदि विषम लग्न हो तो क्रम से वेद का अध्यापक १, सेवक २, शास्त्र पढ़ाने वाला ३।।१०९।।

अश्वसादीभसादी च लिपिलेखनतत्परः ।
मदुरावंधको नट्यौ देशिको याज्ञिको गुरुः ।।११०।।

घोड़सवारी में कुशल ४, हाथी के कार्य में कुशल ५, पुस्तकादि लिखने में कुशल ६, घोड़े के शाला का अधिकारी ७, वाचक ८, पाटशाला में पढ़ाने वाला ९, यज्ञ करने वाला १०, गुरु ११।।११०।।

दानशीलस्तु तृणको ग्रामणीर्व्यसनाधिपः ।
आरामकरणोद्युक्तः पुष्पविक्रयतत्परः ।।१११।।

दानशील तृण बेचने वाला १३, ग्राम प्रधान १४, व्यसन का अधिकारी १५, बाग लगाने में कुशल १६, फूल माला वेचने वाला।।१११।।

राजकार्यरतः सेनालतापुष्पफलक्रयी ।
नृत्यगीते च कुशलस्ताम्बूलफलविक्रयी ।।११२।।

राजकर्मचारी १८, फल फूल खरीदने वाला १९, नाचगाने में प्रवीण २०, पान बेचने वाला २१।।११२।।

निषिद्धविक्रयकरो ग्रामाणामधिकारकृत् ।
वंदी च देशिकः प्राज्ञो धूपकश्चौषधिक्रियः ।।११३।।

निंदित पदार्थ बेचने वाला, २२ ग्राम का अधिकारी २३, राज कर्मचारी २४, देशिक २५, बुद्धिमान् २६, धूप वेचने वाला २७, दवा वेचने वाला २८।।११३।।

कायस्य करणोद्यक्तो भारको भांडविक्रयी ।
कृषिकृच्च वणिग्धातुचर्मकारी च कर्षकः ।।११४।।

बहुरूप धारण करने वाला २९, भार ढोने वाला ३०, वर्तन वेचने वाला ३१, खेती करने वाला ३२, वैश्य वृत्ति करने वाला ३३, धातुचर्म का व्यापारी ३४, कृषक ३५।।११४।।

शास्त्राधिकारी विज्ञानी पुस्तकोरंजकोवणिक् ।
वेदवेदांगवेत्ता च शास्त्रज्ञोवंदिपाठकः ।।११५।।

शास्त्राधिकारी ३६, विज्ञान को जानने वाला ३७, पुस्तक का संग्रही ३८, रंगने वाला ३९, वैश्य वृत्ति करने वाला ४०, वेदवेदांग को जानने वाला ४१, शास्त्र को जानने वाला ४२।।११५।।

ग्रामणीरधिकारी च गणको दंडकारकः ।
भारकश्चेंधनाहारी फलमूलादिविक्रयी ।।११६।।

ग्राम प्रधान ४३, अधिकारी ४५, गणक ४६, दंड देने वाला ४७, भारक ४८ ईधन का व्यापारी ४९, फल फूल बेचने वाला ५०।।११६।।

शांतकृत्स्वर्णकारी च कृषिकृत्पलविक्रयी ।
याजकोऽध्यापकोऽध्यक्षःप्रतिग्रहपरः फली ।।११७।।

शांतिस्थापन करने वाला ५१, सुनार का काम करने वाला ५२, खेती करने वाला ५३, मांस बेचने वाला ५४, यज्ञ करने वाला ५५, अध्यापक ५६, अध्यक्ष ५७, दान लेने वाला ५८, फल बेचने वाला ५९।।११७।।

क्रमात्व्युत्क्रमतश्चैव षष्ठिः स्यादंशकेषु च ।

कुछ भी काम न करने वाला ६० होता है, और समराशि में जन्म हो तो विलोम से फल जानना चाहिये।

षष्ठ्यंश के विशेषः-

रवीशहरिविष्णीशदुर्गागणपतिष्वथ ।।११८।।

षष्ठ्यंश के दो दो अंशों को एक साथ करने से ३० होते हैं इस क्रम से जिस अंश में जन्म नक्षत्र हो उसका फल क्रम से रवि १, ईश २, हरि ३, विष्णु ४, हिरण्यगर्भ ५, दुर्गा ६, गजपति ७।।११८।।

चंडिकायां च चंडेश चंद्रविष्णावीशपावके ।
त्रिपुराचेंदिराविष्णुहरिशंकरशंभुषु ।।११९।।

चंडिका८, चंड९, महादेव१०, चंद्र ११, विष्णु १२, ईश १३, अग्नि १४, त्रिपुरा १५, इंदिरा १६, विष्णु १७, हरि १८, शंकर १९, शम्भु २०।।११९।।

क्षेत्रेशे गुरुडेस्कंदे शास्तरिब्रह्मणीश्वरे ।
विषापहरणोद्युक्ते जिने बुद्धे क्रमात्तथा ।।१२०।।

क्षेत्रेश २१, गरुड़ २२, स्कंद २३, शान्ता २४, ब्रह्मा २५, ईश्वर २६, गरुड़ २७, जिन २८, बौद्ध २९, सभी में समान भक्ति होती है।।१२०।।

अथ मरण निमित्तानि–

ज्वरश्लेष्मातिसारासृग्जठरव्याधिमूलरुक् ।
मेहग्रहणिपिटिका पावकावनिशस्त्रत: ।।१२१।।

सूर्यादि १४ ग्रहों में से जन्म राशि में जो हो वा जिसका अंश हो उसके निमित्त से मृत्यु कहना चाहिये। जैसे ज्वर १, कफ २, अतिसार ३, रक्तविकार ४, जठर (पेट) व्याधि ५, मूलव्याधि ६, प्रमेह ७, संग्रहणी ८, पिटकरोग ९, अग्नि १०, भू ११, शस्त्र १२।।१२१।।

दाहज्वरविषाम्यां नु सूर्यात्कालांतिमेमृति: ।
राशौ ग्रहांशके पित्तवातश्लेष्मनरोगत: ।।१२२।।
पित्तवातकफश्लेष्मपित्तवात्तै: क्रमात्स्मृत: ।

दाह १३, ज्वर विष निमित्त से मृत्यु कहना। प्रकारांतर से सूर्य से पित्त, चन्द्र से वायु, भौम से कफ, बुध से पित्त, गुरु से वायु, शुक्र से कफ, शनि से कफ, राहु से पित्त, केतु से वायु से मृत्यु होती है।।१२२।।

नवांश द्वारा मरण निमित्तानि–

ज्वरसन्निपातजठरामयांत्ररुग्रामप्रमेहजलाज्जलाग्नित: ।
ज्वरसन्निपाततोत्रभवेन्मृति: क्रिय पूर्व कस्तुनिधनांशकेषुतु।।१२३।।

मेषादि राशियों में मरण कालीन नवांशों के निमित्त क्रम से ज्वर १ सन्निपातज्वर २, जठर (पेट) के रोग ३, अत्ररोग ४, प्रमेह ५, जल से ६, अग्नि से ७, ज्वर से ९ मृत्यु कहना। यह जन्म लग्न के नवांश से देखना चाहिये।।१२३।।

राशिनिमित्ततो मृत्युविचार:–

गुल्मोदरज्वरविषाग्निजलादिपातगुदकलभगंदरोत्था ।
रक्तातिसारजठरज्वरमेहगुल्मकुष्ठातिसारपिटकादि-
भिरश्मरीयै: ।।१२४।।

मेषादि राशियों में क्रम से गुल्म १, उदरज्वर २, विष, अग्नि से ३, शस्त्रादि से ४, भगंदर से ५, रक्तातिसार, जठर रोग से प्रमेह-गुल्म से ७, कुष्ठ अतिसार से ८, पिटक रोग से ९।।१२४।।

शूलाशनिक्षतजपित्तसमावृतानि

शीतज्वरप्रभृतिराशिवशात्क्रमेण ।।१२५।।

शूल वज्रपातादि से १०, पित्तरोग से ११, शीतज्वरादि से १२ मृत्यु होती है।।१२५।।

अथ कालादि सूर्यान्त चतुर्दशग्रहाणामंशेन मृत्युज्ञानम् –

कालादिरव्यंतखगोक्तजाता चेद्दुर्गपातपतनज्वरसन्निपातात्।

गोपातसत्वजनिता च मृतिः क्रमेण वामेन चापि पुनरेवमथांशकेषु।।

काल आदि १४ ग्रहों के क्रम से दुर्गपात से १, पतन से २, ज्वर ३, सन्निपात से ४, बैल से ५, पतन से ६, प्राणि निमित्त से ७।८, पतन से १३, दुर्गपात से १४ मृत्यु होती है।।१२६।।

अथ रश्मिद्वारा वर्षानयने हरांशज्ञानम् –

आचतुर्थात्खभूतानि त्रयोद्वादश हारकौ ।

अथस्यादष्टमात्षष्ठिः पंचाष्टौ दशमात्ततः ।।१२७।।

पञ्चपञ्चाशदकाःस्युस्त्रयोरत्नानि हारकाः ।

एकादशेऽष्टषष्ठिःस्यात्सप्तकाष्ठाश्च हारकाः ।।१२८।।

त्रयोदशे च तानाः स्युर्द्विसप्ततिरथो मनौ ।

रश्मयः पंचदश चेत्पंचसप्ततिरेव च ।।१२९।।

वेदपंचरसा हारा दशरुद्राश्च रश्मयः ।

आत्रिंशतः क्रमादंका अशीतिरथ सप्ततिः ।।१३०।।

खेषवः खाब्धयः खाद्रिवेदसप्ततिः ।

षष्ठीरद्राादिरष्टेषु पंचसप्ततिरद्रियुक् ।।१३१।।

रश्मि द्वारा वर्ष लाने के लिये हारव्यांक कहते हैं शेष चक्र से स्पष्ट है।।१२७-१३१।।

एकाशीतिश्चतुर्युक्ता चत्वांरिंशत्स्मृताःसमाः ।

सप्तांकरसतर्केषु नवाद्रिरसषट्कराः ।।१३२।।

रश्मिवर्षहारज्ञानायचक्रम् –

र.	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०
व.	०	०	०	५०	५०	५०	५०	६०	०	५५	६८	०	४९	७५	७५	८०	७०	५०	४०	७
हां.	०	०	०	३	३	३	३	५	०	३	७	०	७३	५४	१०	७	९	६	६	५
हा.	०	०	०	१२	१२	१२	१२	८	०	९	१०	०	०	६	११	०	०	०	०	०
र.	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०										
व.	७४	७४	६०	७८	५८	७५	७७	८१	८५	४०										
हा.	९	७	६	६	२	११	१०	९	६	१२										

अथ अंशायुहार:–

रुद्रा दिङ्नवतर्कार्की अंकहारा: क्रमादमी ।
रुद्रार्कमनुविश्वेऽष्टि: सप्तांकेष्वर्कदिक्छरा: ।।१३३।।

११।१२।१४।१३।१६।७।५९।१२।१०।५।५४।९०। ये ये अंशायुर्दाय के हार हैं।।१३३।।

राशीनामशायुर्दाये हार:–

वेदेषुर्वेदकांका:स्युरंशहारा प्रकीर्तिता: ।
पंचानां च चतुर्णां च तत्तत्षण्णवति:शतम् ।।१३४।।

५।४।६।९०।१०० ।।१३४।।

दशरुद्रानखामूर्छा हारा:स्यु:क्रमश:स्मृता: ।
शते रसार्करुद्राश्च दशविंशोत्तरं शतम् ।।१३५।।

१०।११।२०।२१ ये क्रम से नवांशायुर्दाय के हार हैं शतायुर्दाय के क्रम से ६।१२।११।१०।१२० हार होते हैं।।१३५।।

एते हारा:क्रमात्प्रोक्ता:केषांचित्परमायुष: ।
केषांचिदनयोर्योगदलमब्दा: षिशेषत: ।।१३६।।

किसी के मत से हार शतायु के योग का करना वही वर्ष होता है।।१३६।।

अथ पूर्वोक्तानां फल विचार:–

दशमं यावदायात:स्वकुटुम्बं विभर्त्ति च ।
कृच्छ्वेण दशमे पुत्रवाहुल्यानेकसंयुत: ।।१३७।।

यदि दश पर्यन्त रश्मि योग हो तो कष्ट से कुटुम्व का भरण पोषण करे, यदि दश रश्मि योग हो तो अधिक पुत्र हों।।१३७।।

एकादशे तु विद्वांसी निर्धनो जगती सदा ।

अरंति द्वादशे नित्यं निर्धनाःकुलपांशवाः ।।१३८।।

ग्यारह रश्मि हो तो पुत्र विद्वान् निर्धनता के कारण पृथ्वी पर धूमता रहे, १२ रश्मि हो तो निर्धन, कुलाधम और नीच हो।।१३८।।

स्वदेहार्थधना दासा अतो यावत्तु विंशतिः ।

अतः परं मृतिं याता वाल्ये एव यथागताः ।।१३९।।

तेरह रश्मि हो तो शरीर के रक्षार्थ धन पैदा करने वाला, नौकरी करने वाला और कितनों की वाल्यकाल में ही मृत्यु हो जाती है।।१३९।।

अथ योगज्ञानम् –

एवं प्राग्वत्वत्सराःप्रोक्ताःप्रथमेचोत्तरेस्मृताः ।।१४०।।

केन्द्रत्रिकोणेष्वशुभाःग्रहास्तु त्रिलाभषष्ठाष्टमगाःशुभाश्चेत् ।

द्वितीयवेश्मास्तगताश्च भौमक्षीणेंदुमंदा यदि वा च वामम् ।।१४१।।

केन्द्र (१।४।७।१०) त्रिकोण (९।५) स्थानों में पापग्रह हों और ३।११।६।८ स्थान में शुभग्रह हों अथवा २।४।७ स्थानों में भौम क्षीण चन्द्रमा शनि हो।।१४१।।

स्थानेषु धनदेष्वेवं शत्रुवर्गगता यदि ।

रव्यारार्कितमःक्षीणचन्द्रास्युरेकदा इमे ।

एवं त्रिकादियोगानां स्वंयोगो एकदो गुणैः ।।१४२।।

अथवा रवि, भौम, शनि, क्षीण चन्द्र हो तो दरिद्र योग होता है। यदि ऐसा ही त्रिक (६।८।१२) भाव में संबंध हो तो गुणयुक्त दरिद्र योग होता है।।१४२।।

अन्यथा तारतम्येन कदाचित्कोभवेद्द्विज ।

लग्नद्विधर्मकर्मायसुखपुत्रास्त विक्रमे ।।१४३।।

अथवा १।५।९।१०।११।४।५।७।३ स्थानों में।।१४३।।

स्थितःस्थितौ स्थिताःखेटाःशत्रुग्रहनिरीक्षिताः ।

आदौवयसिमध्येऽन्त्ये दरिद्राःस्युःक्रमाद्भवेत् ।।१४४।।

एक ग्रह हो और शत्रु ग्रह की दृष्टि हो तो प्रथम अवस्था में दरिद्र हो, दो

ग्रह हों तो मध्य अवस्था में और तीन ग्रह हों तों अंतिम अवस्था में दरिद्र होता है।।१४४।।

योगान्तरम् –

नवयोगा इमे प्रोक्तास्त्रिषुस्थानेषु रेकदाः ।
ककटाद्वृश्चिकान्मीनाच्चतुर्ष्वेव क्रमात्स्थिताः ।।१४५।।

ये नवयोग तीन २ स्थानों के कहे गये हैं जो कि कर्क, वृश्चिक मीन राशि से आरंभ होते हैं।।१४५।।

शत्रुगेहे स्थिताः पापा मध्येंऽत्ये प्रथमे क्रमात् ।
सुखान्मृत्योर्व्ययात्पुत्राद्धर्माल्लग्नात्तथैव च ।।१४६।।

कर्क राशि से ४ राशि के अन्दर पापग्रह हों और शत्रु राशि में हों तो मध्य अवस्था में योगफल होता है, वृश्चिकादि चार राशियों में हों तो अंत्य अवस्था में और मीनादि चार राशियों में हों तो प्रथम अवस्था में योग का फल होता है। इसी प्रकार ४।८।१२।५।९।१ भावों से भी योगों का विचार करना चाहिये।।१४६।।

एवमक्षा यदि न्यूनाश्चाष्टवर्गसमुद्भवाः ।
केन्द्रेषु च त्रिकोणेषु शुभा उपचये परे ।।१४७।।

केन्द्र (१।४।७।१०) त्रिकोण (९।५) स्थानों में शुभ ग्रह हों और ३।६।११ स्थानों में पापग्रह हों।।१४७।।

धनदेषु शुभाश्चान्ये परेषु च यदि स्थिताः ।
इष्टरश्मिफलाधिक्यैकश्च द्वौ च त्रयोपि वा ।।१४८।।

धन स्थान में शुभग्रह हों इष्टरश्मि फल अधिक हो और उच्च मूल त्रिकोण राशि के एक, दो, तीन ग्रह हों।।१४८।।

उच्चादि पंचकस्थाने नवांशेष्वेव वा यदि ।
लक्ष्मीयोगा इमे प्रोक्तास्सुहृद्दृष्टास्तथापरे ।।१४९।।

अथवा उच्चादि के नवांश हों तो लक्ष्मी योग होता है।।१४९।।

योगान्तरम् –

रेके प्रोक्ताधिकालांशाः शुभारिःफाष्टषड्विना ।
उच्चौ द्वौ वा त्रयःकोणे चत्वारोऽतिसुहृत्स्थिताः ।।१५०।।

रेखा आदि दृग्द्रियोग में जो अधिक कालांश कहे हैं वे और १२।८।६ इन स्थानों को छोड़कर शेष स्थानों में उच्च त्रिकोण में हो के एक दो तीन वा चार ग्रह हों अथवा अनिमित्र स्थान के होकर पांच, छः या सात ग्रह हों तो श्रीलक्ष्मीयोग होता है।।१५०।।

योगांतरम् –

मित्रेण पंच षट् सप्तखेटाश्चेच्छ्रीप्रदाःस्मृताः ।
द्विर्द्वादशे शुभो चन्द्रात्सप्तमे वा तयोस्तथा ।।१५१।।

चन्द्रमा से २।१२ स्थान में शुभग्रह हो अथवा लग्न से ७ स्थान में शुभ ग्रह हों और लग्न में गुरु हों।।१५१।।

गुरौ लग्ने द्वितीये ज्ञे व्यये शुक्रेऽथवा भवेत् ।
भावदृखलकष्टेष्टफलभावस्वभावतः ।।१५२।।

दूसरे स्थान में बुध हो अथवा १२ वें स्थान में शुक्र हों तो लक्ष्मीयोग होता है किन्तु भाव वल दग्वाल इष्टकष्ट फल के तारतम्य से फल होता है।।१५२।।

योगान्तरम् –

दायानां च फलैरेव भाववर्गेशसंयुतैः ।
रश्म्यंशसंभवादेव वर्षचर्या च दैववित् ।।१५३।।

आयुर्दाय के फल के साथ भावेश और वगेंश के फलों का समन्वय करके रश्म्यंश के तारतम्य से वर्षचर्या का फल कहना चाहिये।।१५३।।

एषामंशाश्च संभूताःकारकादिग्रहैरपि ।
मासचर्या दिनोत्थां नाप्यष्टवर्गसमुद्भवात् ।।१५४।।

तथा कारकादि ग्रहों के अनुसार मासचर्या और अष्टकवर्ग के अनुसार दिनचर्या को कहना चाहिये।।१५४।।

अन्य विशेषः–

भावदृष्ट्योःप्रधानत्वात्कारको वोधको वले ।
इष्टकष्टफले त्वन्ये पाचको रश्मिसंभवे ।।१५५।।

इति वृहत्पाराशरहोरायामुत्तरार्धेऽब्दचर्यावर्णनं नामश्चतुर्दशोऽध्यायः

भाव और दृष्टि के विचार में कारक ही प्रधान होता है उसी को लेना चाहिये। वलावल के विचार में वोधक ग्रह की प्रधानता होती है अतः उसी को लेना चाहिये। इष्टकष्ट और रश्मि के विचार में पाचक ग्रह की प्रधानता होने के कारण पाचक को ही लेना चाहिये।।१५५।।

अंतर्दाये तु भावानां प्रधानो वेधकःस्मृतः ।
अंतर्दाये दशानां तु कारको बोधकस्मृतः ।।१५६।।

अंतर्दाय के विचार में सभी भावों का वेधक प्रधान होता है, दशा के अंतर्दाय विचार में बोधक और कारक प्रधान होते हैं।।१५६।।

भावस्वभावविषये पाचकस्त्वन्यथा भवेत् ।
पाचकस्त्वन्यथासूर्यश्चन्द्रमा बोधकःस्मृतः ।।१५७।।

और भाव स्वभाव के विचार में पाचक ग्रह प्रधान होता है। सूर्य स्वभावतः पाचकग्रह है और चन्द्रमा वोधक ग्रह है।।१५७।।

इतिंपाराशरहोरायामुत्तरार्धेऽब्दचर्याध्यायश्चतुर्दशः।

अथ वर्षचर्यादिफलाध्यायः।।१५।।

तत्रादौ रश्म्यंशफलम् –

षष्ठादिरश्मिष्वाद्येंऽशे जनको जन्मतोभृशम् ।
धनादिहीनो रिक्तश्च द्वितीयेंऽशे पितुर्मृतिः ।।१।।

छठें रश्मि के पहले अंश में जन्म हो तो उसका पिता निर्धन होता है दूसरे अंश में जन्म हो तो पिता की मृत्यु होती है।।१।।

निःस्वस्तृतीये दासश्च चेतुर्थे रंकसंयुतः ।
व्याधिभिः पीडितस्तद्वत्पंचमेभृशदुःखितः ।।२।।

तीसरे अंश में जन्म हो तो दरिद्र और सेवक होता है, चौथे अंश में दरिद्र और व्याधिग्रस्त होता है, पाचवें अंश में अत्यन्त पीड़ित।।२।।

नवमे दशमे चैवं षष्ठेंऽशे सप्तमेऽपि च ।
व्याधियुक्तो दरिद्रश्च यदि जीवति जीवति ।।३।।

नवें, दशम, छठें और सातवें अंश में रोगी और दरिद्र तथा जीवन में भी संदेह यदि जीवे तो जी सकता है।।३।।

एकादशेऽपि रश्मौ चेदाद्येंऽशेपितृलालितः ।
पितुर्धनव्ययकरो द्वितीये वंधकीपतिः ।।४।।

ग्यारहें रश्मि के प्रथमांश में पिता पालन पोषण करने वाला और पितृधन हारक होता है। दूसरे अंश में हो तो स्त्री पुंश्चली होती है और स्वयं वेश्यासक्त होता है।।४।।

वेश्यासक्तस्तृतीये स्यान्निर्धनःकुलपांशनः ।
मृतपुत्रोऽथवाऽभाग्यश्चतुर्थे स्त्रीविमानितः ।।५।।

तीसरे अंश में निर्धन और कुलहीन होता है। अथवा मृत्यु मृतपुत्र वाला भाग्यहीन होता है। चौथे अंश में स्त्री से पराजित हो।।५।।

पंचमेत्वल्पपुत्रःस्यात्षष्ठे चाप्यरुजा युतः ।
श्रीयोगे धनवान्कश्चित्सप्तमे दुःखितोऽधनः ।।६।।

पांचवें अंश में अल्पपुत्र छठें अंश में रोग रहित हो, स्त्री के योग से धनी हो, सातवें अंश में दुःखी और निर्धन हो।।६।।

आद्येंऽशे द्वादशेरश्मौ नैव तस्य शुभाशुभौ ।
द्वितीये बलवान्मूर्खश्चौर्यद्रव्येण जीवति ।।७।।

बारहवें रश्मि के प्रथमांश में जन्म हो तो शुभ अशुभ समान हो, दूसरे अंश में बलवान, मूर्ख चोर हो।।७।।

तृतीये च चतुर्थे च वेश्यापतिररिंदमः ।
नृपपुरुष मृत्युश्च भार्याहीनोऽसुतोऽधनी ।।८।।

तीसरे तथा चौथे अंश में वेश्यापति हो और शत्रु का नाश करने वाला राजपुरुष के हाथ से मृत्यु हो और यदि जीवे तो स्त्रीहीन, पुत्रहीन और धनहीन हो।।८।।

विद्वांश्चतुर्दशे त्वाद्ये पितृभ्यांलालितःसुखी ।
द्वितीये क्लेशभाग्वापि शत्रुजिच्च रणाजिरे ।।९।।
पितृभ्यां हीन एवाथ लब्धकिंचिद्धनार्जकः ।
देशाद्देशगऽत्येव तृतीये धनतत्परः ।।९-१०।।

चौदहवीं रश्मि के प्रथम अंश में जन्म हो तो विद्वान हो, दूसरे अंश में माता पिता से ललित और सुखी, तीसरे अंश में क्लेशयुक्त, शत्रु को जीतने वाला मातृ-पितृ हीन हो और भ्रमणशील हो।।१०।।

सद्भिरीड्यःसुखी ख्यातःशांतबुद्धिररिंदमः ।
चतुर्द्धे धनवान् क्षेत्री विद्ययार्जितपोषकः ।।११।।

चौथे अंश में धनी, सुखी, प्रसिद्ध, शांतवुद्धि, शत्रुनाशक, स्तुत्य, पांचवें अंश में धनी, भूमि युक्त विद्या से जीविका करने वाला।।११।।

सती श्रीयोगसंयुक्तः पंचमेदुःखभाग्धनी ।
पुत्रादिसंपत्संयुक्तः एवं पंचदशे भवेत् ।।१२।।

उत्तम स्त्री से युक्त हो, छठें अंश दुःखी, धनपुत्र से सुखी, पंद्रहवे रश्मि का फल ऊपर कहे हुये पांच अंश के सदृश ही समझना चाहिये।।१२।।

अस्मिन्षष्ठे धनी प्राज्ञो विद्यया सद्यशोभवेत् ।
एवं च षोडशे चांशे त्वतीव धनवान् भवेत् ।।१३।।

छठें अंश में बुद्धिमान् धनी सोलहवें और सत्रहवें रश्मि के प्रथम अंश में अत्यंत धनी।।१३।।

स्वबंधुभ्योऽधिकोऽन्येंऽशे विद्ययाऽथधनेनवा ।
पुत्रादिसंयुतः श्रीमांस्त्र्यंशे स्यात्स्वजनेश्वरः ।।१४।।

दूसरे अंश मे बंधु से अधिक प्रतापी, तीसरे अंश में विद्या, धन पुत्रादि से सुखी, चौथे अंश में अपने देश में अधिकार प्राप्त हो।।१४।।

इष्टापूर्त्तेन संयुक्तस्त्वष्टादशोनविंशके ।
पूर्ववद्विंशरश्मौ तु लव्धधामपरायणः ।।१५।।

पांचवें अंश में यज्ञ करने वाला, बावली, कूप, तालाब बगीचा लगाने वाला, अठारह और उन्नीसवीं रश्मि का फल सत्रहवी रश्मि के अनुसार ही होता है। बीसवीं रश्मि में भूमि प्राप्त करने वाला।।१५।।

वदान्यः पूर्वधर्माणां मनुवद्बहुपुत्रकः ।
एकविंशे धनैर्युक्तमाद्येऽनंतरभागके ।।१६।।

दानशील मनु के समान बहुपुत्रवान् हो, इक्कीसवीं रश्मि के प्रथम अंश में तथा दूसरे अंश में धनी हो।।१६।।

तृतीये तु भुवि ख्यातो दानेन च धनेन च ।
द्विनामत्वं तु वा यज्वा यानवाहनसंयुतः ।।१७।।

तीसरे अंश में दान धर्म से प्रसिद्धि युक्त वाहन युक्त, यज्ञ कर्त्ता, श्रीमान् बहुधन से युक्त।।१७।।

श्रीमान्वहुधनानां च साधकश्च चतुर्थके ।
अग्निमांद्येन रोगार्त्तश्चतुर्थे धनवान्सुखी ।।१८।।

चौथे अंश में अग्नि मांद्य रोग से पीड़ित, श्रीमान्, अनेक धनों का साधन धनी सुखी होता है।।१८।।

पंचमे देशयोर्विद्वान्वदान्यो दंतुरोऽथवा ।
सप्तमे धनहानिःस्याद्राजयोगैश्चमृत्युयुक् ।।१९।।

पाचवें अंश में धनी सुखी, छठें अंश में वक्षन्य, दंतुर सातवें अंश में निर्धन हो और राजनिमित्त से मृत्यु पाने वाला।।१९।।

अष्टमे निर्धनस्थानां जनानां पोषणे रतः ।
द्वाविंशे प्रथमेंऽशें तु पितुःपुत्रो धनस्य तु ।।२०।।

आठवें में निर्धन दरिद्रों का पोषक, बाइसवें के प्रथम अंश में पितृधन का रक्षक होता है।।२०।

द्वितीये धनहीनश्च किंचित्कृषिकरःसुखी ।
तृतीये राजकार्यार्थी तत्क्रमार्जितवित्तकः ।।२१।।

बाइसवीं रश्मि के दूसरे अंश में निर्धन, थोड़ी खेती करने वाला और सुखी होता है। तीसरे अंश में राजकार्य से धन प्राप्त करनेवाला।।२१।।

चतुर्थे तु प्रभुश्चान्यनामभाग्दृढ़वंधनात् ।
पंचमे तद्वदेव स्यात्षष्ठे कार्यस्यहानिकः ।।२२।।

चौथे अंश में समर्थ दो नाम से प्रसिद्ध, पांचवें अंश में चौथे के समान फल, छठें अंश में कार्य की हानि करने वाला।।२२।।

सर्वव्ययश्च रिक्तश्च सप्तमे रोगयुग्धनी ।
त्रयोविंशे तु जनकलालितश्च सुखी भवेत् ।।२३।।

सातवें अंश में रोगी और धनी हो। तेइसवीं रश्मि के प्रथम अंश में पिता से सुखी दूसरे अंश में सुखी।।२३।।

तृतीये मूर्खकृत्येन पराभव समन्वितः ।
चतुर्थे चौरकृत्येन पंचमे व्याधिसंभवः ।।२४।।

तीसरे अंश में मूर्खतावश हारखाने वाला चौथे अंश में चोर, पांचवें अंश में रोगी।।२४।।

षष्ठे दरिद्रःपुरुषो व्याधिना पीडितो भवेत् ।
श्रीमान् पुत्रश्चतुर्विंशे प्रथमेलालितोभृशम् ।।२५।।

छठें अंश में दरिद्र, रोगी। चौबीसवीं रश्मि के प्रथम अंश में धनी।।२५।।

स्वजात्यनुगुणो विद्वान्प्रथमे च द्वितीयके ।
तेन ख्यातस्तृतीयेस्यात्स्वतंत्रः सर्वसम्मतः ।।२६।।

पिता से सुखी, विद्वान्, स्वजातिगुण से युक्त, दूसरे अंश में पूर्व का ही फल, तीसरे अंश में स्वतंत्र।।२६।।

क्षेत्रदारसुहृत्पुत्रकलत्रैर्वहुभिर्वृतः ।
पंचमेव्याधितः षष्ठे वहुव्ययपरायणः ।।२७।।

छठें अंश में अधिक व्यय करने वाला होता है।।२७।।

पंचविंशे तु षष्ठांशे फलहीनस्तु जीवति ।
षड्विंशे प्रथमांशे तु दरिद्रः स्यात्सुतोऽपिसन् ।।२८।।

पच्चीसवीं रश्मि के छठें अंश में निष्फल जीवन वाला, छब्बीसवीं रश्मि के प्रथम अंश में दरिद्र।।२८।।

पितुःकार्ये तु वृद्धिःस्याद्द्वितीये पितृवेश्मतः ।
अन्यत्रगत्वा तत्रैव स्वयोगेन च कर्मणा ।।२९।।

दूसरे अन्श में अपने गृह से अन्यत्र दूसरे स्थान में शरीर पोषण करने वाला।।२९।।

स्वदेहपोषकोऽन्येंऽशेधनी च कृत्यवित्स्थितः ।
चतुर्थे पंचमे चैव पट्टवंधादिसंयुतः ।।३०।।

तीसरे अन्श में धनी कार्य को जानने वाला, चौथे पांचवें अन्श में पट्टवंधादि से युक्त।।३०।।

अतीवधनवान्सस्यात्षष्ठेत्वंशे स्वदेहभाक् ।
क्षेत्रदारादिवृध्या तु व्यथा व्याधिसमन्वितः ।।३१।।

छटें अन्श में धनीं, सातवें अन्श में देह पोषण करने वाला, आठवें अन्श में खेत और स्त्रियों की वृद्धि से जीवन चलाने वाला।।३१।।

नवमे धनहानिःस्यात्पुत्रदारविवर्जितः ।
यावद्दश नवांशाश्च षड्विंशवदथ द्वये ।।३२।।

नवें अन्श में मानसिक रोग से युक्त, दशम अन्श में धनहीन, स्त्रीपुत्रहीन हो, सत्ताइस और अट्ठाइस रश्मि के फल पूर्वोक्तवत्।।३२।।

राजप्रियस्ततश्चंडः शुद्धः स्यादंशकेततः ।
एकोनत्रिंशे रश्मौ तु सुखीं स्याच्च द्वितीयके ।।३३।।

उनतीसवीं रश्मि के प्रथम अन्श में जन्म हो तो सुखी होवें, दूसरे अन्श में राजसेवी तीसरे अन्श में सत्कर्म करने वाला।।३३।।

राजसेवी तृतीयेंऽशे कृत्याकृत्यविदीश्वरः ।
बहुबंधुयुतः श्रीमान्मानवाहनसंयुतः ।।३४।।

चौथे अन्श में अधिपति पांचवें अन्श में बंधुओं के समागम में रहनेवाला, छठें अन्श में श्रीमान्, सातवें अन्श में संतानयुक्त, आठवें अन्श में देशाधिपति और नवम अन्श में ग्राम का अधिकारी हो।।३४।।

देशाग्रामाधिकारी च त्रिंशे त्वेतैःसमन्वितः ।
सेनानीर्नीतिमाञ्छूरः पंचमांशे भवेदिदम् ।।३५।।

तीसवीं रश्मि में भी पूर्वोक्त फल ही होता है एकतीसवीं रश्मि के पांचवें अन्श में सेनाधिपति नीतिमान् शूर हो।।३५।।

षष्ठे तु विजयो युद्धे सप्तमेऽपिरुजा युतः ।
न्यूनायतिस्तु वस्वंशे नवांशे त्वधिकायतिः ।।३६।।

छठें अन्श में युद्ध में विजयी सातवें अन्श में रोगी, आठवें अन्श में थोड़े लाभ वाला, नवम में अधिक लाभ वाला होता है।।३६।।

त्रयस्त्रिंशेतु राजानःषष्ठांशे वा तृतीयके ।
अभिषिक्तो भवेद्यद्वा पट्टवंधस्तुयोगतः ।।३७।।

बत्तीसवीं रश्मि का फल पूर्व के अनुसार ही होता है। तैंतीसवीं रश्मि के छठें और तीसरे अन्श में राजा होता है शेष पूर्ववत् फल होता है।।३७।।

रश्मौ तथा चतुस्त्रिंशे चतुर्थांशे पराजयः ।
तृतीये पंचमे षष्ठे युद्धे यु विजयी भवेत् ।।३८।।

चौतीसवीं रश्मि के चौथे अन्श में पराजय, तीसरे, पांचवें, छठें अन्श में विजेता।।३८।।

अष्टमे नवमेंऽशेतु वृद्धिःस्यात्शमेन हि ।
षडंशविषये यस्माच्चत्वारिशत्ततःपरे ।।३९।।

आठवें नवें अन्श में वृद्धियुक्त हो, चौतीस चालीस रश्मि तक के।।३९।।

द्वितीये च तृतीये च चतुर्थे चाद्यके तथा ।
राजा स्यात्पंचमेषष्ठेसप्ताष्टनवमेततः ।।४०।।

प्रथम, द्वितीय और चतुर्थ अन्शों में राजा, सातवें अन्श में युद्ध आठवें में व्याधि नवम में व्याधि।।४०।।

दशमे च क्रमाद्युद्ध व्याधिर्वाऽथ पराजयः ।
इतरांशेषु संख्यातः सर्वसम्पत्समन्वितः ।।४१।।

और दशम में पराजय शेष अन्शों में सर्वसम्पत्तिमान् हो।।४१।।

ततःपरंच सम्राट् स्याच्चतुर्थे पंचमेजयी ।
अंशास्तुल्यास्तु तेष्वेवं विपरीत फलंविदुः ।।४२।।

इसके आगे की रश्मियों में सम्राट् होता है, और चौथे पाचवें में विजयी होता है। अन्श तुल्य हो तो विपरीत फल होता है।।४२।।

व्याधिरुक्तदेव स्याद्यावद्विंशतिरश्मयः ।
यद्यप्यंशाःपरं नात्र अधिकारंभजन्ति ते ।।४३।।

बीस रश्मि तक उक्तवद् व्याधिभय होता है, इसके वाद व्याधिका अधिकार नहीं होता है।।४३।।

सूर्यादिग्रहाणां द्वादशभाव फलम्।

अथ स्यानगतानां ख्यादीनां क्रमात्फलम् ।
ततो रविःशिरोरोगंबंधूनां च विरोधताम् ।।४४।।

यदि सूर्य लग्न में हो तो शिर के रोग और वंधु विरोध।।४४।।

द्वितीये धनहानिश्च तृतीये मित्रवर्धनम् ।
धनलाभं सुखे सौख्यं शत्रुभिश्च समागमम् ।।४५।।

दूसरे भाव में हों तो धन हानि, तीसरे में मित्रवृद्धि और धन लाभ, चौथे भाव में शत्रु समागम से सुख।।४५।।

पंचमे पुत्रलाभं च बुद्धिमुद्यमसिद्धिकृत् ।
षष्ठे धनं जयं कुर्यात्सप्तमे स्त्रीविरोधनम् ।।४६।।

पांचवें भाव में पुत्रलाभ, बुद्धि में वृद्धि उद्योग में सिद्धि, छटें भाव में धन लाभ और विजय, सातवें भाव में स्त्री से विरोध।।४६।।

अष्टमे व्याधिहानिं च नवमे मित्रबंधनम् ।
भाग्यहानिं च दशमे धनलाभं सुखंजयम् ।।४७।।

८ भाव में व्याधि और हानि, ९ वें भाव में मित्रका बंधन और भाग्य हानि, १० भाव में धन लाभ, सुख और विजय की प्राप्ति।।४७।।

एकादशेधनानां च सिद्धिः मित्रसमागमम् ।
द्वादशे धनहानिं च जयं वा कुक्षिरुक्क्रमात् ।।४८।।

११वें भाव में धन का लाभ और मित्र समागम और १२ वें भाव में होतो धन हानि, खर्चीला स्वभाव और कुक्षिरोग हो।।४८।।

अथ चन्द्रस्य द्वादशभाव फलम्।

चन्द्रलग्ने च कलहं द्वितीये धनयोजनम् ।
तृतीये भ्रातृभिर्लाभं धनवस्त्रादि संग्रहम् ।।४९।।

यदि चन्द्रमा लग्न में हो तो कलह करनेवाला, २ रे भाव में हो तो धन प्राप्ति करनेवाला, ३ रे भाव में हो तो भाई से लाभान्वित वस्त्रादि का संग्रह।।४९।।

चतुर्थे धनवस्त्रादि वाहनादिसुसंयुतम् ।।५०।।

४ भाव में धन वस्त्र वाहन प्राप्ति।।५०।।

तीक्ष्णे धनी सुतयुतः परिपूर्णसंपत्षष्ठे तु
रोगसहितं कुमतिं च कामे ।
विद्याधनक्षितिसुखादिसमन्वितश्च
मृत्यौ च मृत्युविषयः खलु कुक्षिरोगी ।।५१।।

५ भाव में धन पुत्रादि सर्व संपत्तिमान्, ६ भाव में रोगी कुबुद्धि से युक्त, ७ भाव में विद्या-धन-भूमि और भूमि का सुख, ८ भाव में मृत्यु, दुःख और कुक्षिरोग से युक्त।।५१।।

स्त्रीस्वर्णदासायतिरेवधर्मे माने सुचारित्रगुणं धनं च ।
लाभे तु चैतत्सकलं व्यये तु धनस्य रिःफं कुरुते शशी तु ।।५२।।

९ भाव में स्त्री सुवर्ण और दास की प्राप्ति, १० भाव में उत्तमगुण और धन का लाभ, ११ भाव में १० के समान फल, १२ वें भाव में धन का व्यय करनेवाला होता है।।५२।।

अथ भौमस्य द्वादशभाव फलम् –

कुजे लग्ने तु चापल्यात्क्षतं स्वेधननाशनम् ।
विक्रमे भ्रातृमरणं धनलाभः सुखं यशः ।
चतुर्थेबन्धुमरणं शत्रुवृद्धिर्धनव्ययम् ।।५३।।

भौम लग्न में होतो चंचल स्वभाव के कारण चोट लगने से रोग, २ रे भाव में हो तो धन का नाश, ३ भाव में भ्रातृनाश, धन-यश की प्राप्ति और सुख, ४ भाव में बंधुहानि शत्रुवृद्धि, धन का खर्च।।५३।।

पंचमे पितृहानिं च धनायति सुतौयशः ।
षष्ठे रिपुसमृद्धिं च जयं बंधुसमागमम् ।।५४।।

५ भाव में पिता की हानि, धनप्राप्ति, पुत्र और यश का लाभ, ६ भाव में शत्रुवृद्धि, विजय, बंधुसमागम और धन लाभ।।५४।।

अर्थवृद्धिं स्त्रियां दार मरणं नीचसेवनम् ।
नीचस्त्रीसंगमो मृत्यौ धननाशं पराभवम् ।।५५।।

७ भाव में स्त्री को कष्ट, नीच की सेवा और नीच स्त्रीसंगम, ८ भाव में धननाश, पराभव और अनर्थ।।५५।।

पराभवमनर्थं च धर्मेपापरुचिक्रिया ।
धनव्ययं च दशमे धनलाभं कुकर्म च ।।५६।।

९ भाव में पापकर्म में रुचि धन का व्यय, १० भाव में धनी; कुकर्मी है।।५६।।

लाभे धनं सुखं वस्त्रं स्वर्णक्षेत्रादिसंग्रहम् ।
व्यये नेत्ररुजं भ्रातृनाशं च कुरुते कुजः ।।५७।।

११ भाव में धन वस्त्र-सूवर्ण-भूमि का लाभ, १२ भाव में हो तो नेत्ररोगी, भाई का अनिष्ट करने वाला होता है।।५७।।

अथ बुधस्य द्वादशभावफलम् –

बुधे षष्ठेऽरिवृद्धिं च युद्धे सति पराजयम् ।
मृतौ बंधुविहीनत्वं बंधनं व्ययभे व्ययम् ।।५८।।

लग्न से पाचवें भाव तक बुध सभी भावों की वृद्धि करता है। ६ भाव में शत्रु की वृद्धि और पराजय करता है, ७ भाव में स्त्री सुख ८ भाव में बंधुहीनता और बंधन, ९ भाव में भाग्यवृद्धि, १० में व्यापार में वृद्धि, ११ भाव में लाभ और १२ भाव में खर्चा कराने वाला होता है।।५८।।

गुरु-शुक्रयोः द्वादशभावफलम् –

भावोक्तफलवृद्धिं तु परे तु कुरुते तथा ।
गुरुशुक्रौ तृतीये तु शत्रुवृद्धिं धनक्षयम् ।।५९।।

जिन भावों का मूल में उल्लेख नहीं किया है उन स्थानों में गुरु, शुक्र हों तो उनकी वृद्धि करते हैं तीसरे भाव में हों तो शत्रु की वृद्धि और धन का नाश करते हैं।।५९।।

षष्ठे पराजयं व्याधिमष्टमे बंधनं तथा ।
रिष्फे चोरहृतस्वं तु नेत्ररोगपराजयम् ॥६०॥

६ भाव में हों तो पराजय और व्याधि करते हैं, ८ वें भाव में बंधन, १२ वें भाव में चोरों द्वारा द्रव्य का अपहरण नेत्र रोग और पराजय॥६०॥

सप्तमे च चतुर्थे च सेनापत्यधनाप्तिः ।
सर्वसम्पत्समृद्धिं च नवमे राजसंपदम् ॥६१॥

सातवें और चौथे में सेनापत्य, धनलाभ, सभी सम्पत्तियों की वृद्धि, नवम में राजसम्पत्ति वा भाग्योदय होता है।।६१।।

अथ शनेः स्थानांतर फलम् –

पूर्वोक्तफलसंयगोमन्येष्वपि समं भवेत् ।
कुजवद्रविवन्मन्दः पापत्र्यंशं दलं गतः ॥६२॥

शनि का फल भौम और रवि के भाव फल के समान ही होता है॥६२॥

पादोनमेकं मित्राधिमित्रस्वर्क्षे च कोणभे ।
उच्चे तु नीचे त्रिगुणमध्यरौ द्विगुणं ततः ॥६३॥

यदि ग्रह मित्रगृह का हो तो चतुर्थांश फल, अधिमित्र गृह का हो तो तृतीयांश, स्वक्षेत्र और मूलत्रिकोण का हो तो तीन भाग फल देता है, उच्चराशि का हो तो संपूर्ण फल देता है। यदि नीच राशि का हो तो तृतीयांश न्यून, अधिशत्रुगृही हो तो द्विगुणहीन और शत्रुगृही हो तो आधा फल देता है॥६२-६३॥

ग्रहाणां दृष्टिवशात् सूर्यादीनां फलम् –

अरौ सार्धं क्रमात्कालफलजस्त्वेवनिर्णयः ।
शुभैर्दृष्टो रवी राजा राजसेनापतिस्तु वा ॥६४॥

यदि सूर्य शुभग्रह से देखा जाता हो तो राजा वा राजा का सेनापति हो॥६४॥

शत्रुभिः कलहं दुःखं रूजं जठरनेत्रयोः ।
मित्रदृष्टो जयं बंधुलाभं पापैश्च रोगिताम् ॥६५॥

शत्रुओं से देखा जाता हो तो कलह, पेट और नेत्र में रोग हो मित्रग्रह से देखा जाता हो तो विजय और बंधु से लाभ तथा पाप ग्रह से देखा जाता हो तो रोगी हो।।६५।।

चन्द्रस्य फलम् –

धनहानिं शशीपापैः शिरोनेत्ररुजं व्यथा ।
शत्रुभिः पापकरणं धननाशं गमागमौ ।।६६।।

चन्द्रमा पाप ग्रहों से दृष्ट हो तो धन की हानि, शिर और नेत्र में रोग होता है। शत्रुग्रह से दृष्ट हो तो पापकर्म करने वाला, धननाशक और भ्रमण करने वाला होता है।।६६।।

शुभैररोगतां सौख्यं धनलाभं च बंधुभिः ।
मित्रैश्च धन संसिद्धिं करोतीह न संशयः ।।६७।।

शुभग्रहों से दृष्ट हो तो नैरुज्य, सुख, द्रव्य का लाभ भाइयों से होता है। मित्रग्रह से दृष्ट हो तो मित्रों द्वारा धन का लाभ होता है।।६७।।

भौमस्य फलम् –

पापैर्दृष्टः कुजः क्षेत्रधनधान्यादिनाशनम् ।
शत्रुभिर्बंधनं रोगं चाहवे दूरवासनम् ।।६८।।

यदि भौम पापग्रहों से देखा जाता हो तो क्षेत्र (भूमि) धन, धान्य का नाश करता है, शत्रुग्रह की दृष्टि हो तो बंधन, रोग, युद्ध दूर यात्रा हो।।६८।।

शुभैस्तु विजयं देशक्षेत्रलाभं सुहृच्छुभम् ।
मित्रैश्च धन संसिद्धिं करोतीह न संशयः ।।६९।।

शुभग्रह की दृष्टि हो तो विजय, देश, भूमि का लाभ, मित्र से लाभ होता है, मित्रग्रह से दृष्ट हो तो धन का लाभ होता है।।६९।।

बुधस्यफलम् –

शुभैर्बुधोलिपिज्ञानं विद्यालाभं च कौशलम् ।
मित्रैर्भूषाधनक्षौमरत्नलाभं च शत्रुभिः ।।७०।।

बुध शुभग्रहों से देखा जाता हो तो लिपि का ज्ञान, विद्या का लाभ कुशलता प्राप्त हो। मित्रग्रहों से देखा जाता हो तो आभूषण, धन, ऊन और रत्न का लाभ हो।।७०।।

अतिसारं च दुर्बुद्धि प्रतीकेषु सदोद्यमम् ।
पापैर्महाविवादं च कुक्षौ शूलं च वर्धते ।।७१।।

शत्रुग्रहों से दृष्ट हो तो अतिसार, दुर्बुद्धि, शरीर के लिये उद्योगी हो, पापग्रहों से दृष्ट हो तो बड़े विवाद से युक्त और कुक्षि में शूलरोग की वृद्धि वाला हो।।७१।।

गुरोः फलम् –

गुरुः शुभैस्तु संदृष्टो धर्मकार्योद्यमं सुखम् ।
जयं धनायतिर्मित्रैर्दारक्षेत्रादिसंग्रहम् ।।७२।।

गुरु शुभग्रह से देखे जाते हों तो धर्मकार्य में उद्यमशील और सुखी हो, विजयी और धनी हो, मित्रग्रह से दृष्ट हो तो स्त्री, भूमि आदि का संग्रही।।७२।।

शत्रुभिः कुष्ठरोगं च त्वग्दोषकलहं रणम् ।
पापैः पराजयं बुद्धेः कुदारादिवियोजनम् ।।७३।।

शत्रुग्रहों से दृष्ट हो तो चर्मरोग कुष्ठरोग कलह और संग्राम, पापग्रह से दृष्ट हो तो बुद्धि दोष से पराजय सुख, स्त्री आदि से वियोग हों।।७२-७३।।

भृगोः फलम् –

शुभैः शुक्रः सुखं योषालाभं भूषाधनायतिम् ।
मित्रैस्तु पट्टवंधादि देशलाभादि चाखिलम् ।।७४।।

शुक्र शुभग्रहों से दृष्ट हो तो सुख, स्त्री लाभ आभूषण, धन का लाभ हो, मित्रग्रह से दृष्ट हो तो पट्टबंधन, देश का लाभ।।७४।।

पापैः पराजयं योषावियोगं धननाशनम् ।
शत्रुभिर्याप्यरोगं च मूत्रकृच्छ्रादिकं तथा ।।७५।।

पापग्रह से दृष्ट हो तो पराजय, स्त्री वियोग और धन का नाश होता है, शत्रुग्रहों से दृष्ट हो तो कष्टसाध्य रोग, मूत्रकृच्छ्र (सूजाक) रोग हो।।७५।।

मदंः पापैस्तथा कुक्षिरोगं बंधनकं क्षयम् ।
शत्रुभिः शत्रुबाधां च पराभवमथामयम् ।।७६।।

शनि पापग्रहों से देखा जाता हो तो कुक्षिरोग, बंधन और क्षय होता है। शत्रुओं से देखा जाता हो तो शत्रुबाधा, पराभव और व्याधि होती है।।७६।।

अथ स्थानबलयुक्तसूर्यादिग्रहाणां फलम् –

शुभैररोगतां मित्रैर्दृष्टो बंधुसमागमम् ।
रवौ स्थानवलेपूर्णे स्वदेशे विद्ययावली ।।७७।।

सूर्य स्थान बल से युक्त हो तो स्वदेश में विद्या से बली होता है।।७७।।

चन्द्रे प्रभुतया भौमे ग्रामण्येन बुधे सति ।
श्रौतया विद्यया वाऽर्थलिपिलेखनकर्मणा ।।७८।।

चन्द्रमा बली हो तो प्रभुता, भौम वली हो तो ग्राम में प्रभुतायुक्त, बुध बली हो तो श्रौतकर्म, विद्या लेखन कला से द्रव्ययुक्त हो।।७८।।

जनैर्धनैरमात्येषु बुध्या च बलवान्गुरौ ।
यद्वा स्वदेशराजस्तु कार्येणैववली मतः ।।७९।।

गुरु वली हो तो जन-धन-मंत्री और वुद्धि से वली हो या स्वदेश में शासन कार्य में बली हो।।७९।।

शुक्रे स्वदेशमुख्यो वा त्वाधिपत्येन योषिताम् ।
मंदे भृतकदासानां मुख्यः स्याद्बलवानपि ।।८०।।

शुक्र बली हो तो स्वदेश में मुख्य, स्त्रियों के आधिपत्य से सुखी, शनि बली हो तो नौकर दासों का प्रधान होता है। स्थानवल से रहित ग्रह हो तो दास होता है।।८०।।

उक्तैस्तु पीडितः प्रेष्यः स्थानवीर्योनितेषु तु ।
समन्यूनाधिकाद्वीर्यादृष्टोत्कर्षात्फलं वदेत् ।।८१।।

इसी समन्यून अधिक बल से युक्तग्रह के फल का विचार करना चाहिये।।८१।।

दिग्वलयुक्त ग्रहाणां फलम् –

दिग्वलेनाधिके सूर्ये वाणिज्येन धनायतिः ।
यशश्च धनवृद्धिश्च चन्द्रे तु राजसेवया ।।८२।।

सूर्य दिग्वल से पूर्ण हो तो रोजगार से धन की प्राप्ति, यश और धन की वृद्धि होती है। चन्द्रमा बली हो तो राजसेवा से धन का लाभ।।८२।।

भौमे तु सेवया ख्यातिर्वेदाभ्यासेन सर्वदा ।
बुधे धनायतिः कृष्या यशः स्याद्बुद्धिमत्तया ।।८३।।

भौम दिग्वल से युक्त हो तो सेवा से वेदाभ्यास से प्रसिद्धि होती है। बुध बली होतो बुद्धिमत्ता से यश और कृषि से धन का लाभ होता है।।८३।।

गुरौ धनायतिस्तैन वीर्येण धन शुभ्रता ।
राजकार्येण शुक्रे च वदान्यत्वेन वा यशः ।।८४।।

गुरु वली हो तो शुभ्र धन का लाभ होता है, शुक्र वली हों तो राजकार्य से द्रव्य और यश का लाभ होता है।।८४।।

मंदे दासाधिपत्येन धनायतिररिंदमात् ।
कालयानवलाधिक्ये रवौ भौमे शनैश्चरे ।।८५।।

शनि वली हो तो दासों की स्वामिता और शौर्य से धन का लाभ होता है।।८५।।

काल-अयनबलयुक्तग्रहफलम् –

मंत्रोपदेशविधिना पाखंडिपदसंश्रयात् ।
दासभावेन कृष्णेन्दौ कृषितो विद्ययान्यथा ।।८६।।

सूर्य-भौम-शनि काल और अयन वल से युक्त हों तो मंत्रोपदेशपाखंड और दासता से जीवन निर्वाह करने वाला, कृष्ण पक्ष का चंद्रमा यदि दोनों बलों से युक्त हो तो खेती और विद्या से जीवन निर्वाह करने वाला, गुरु, शुक्र, बुध और शुक्लपक्ष का चन्द्रमा दोनों बलो से युक्त हो तो विद्या और धन से जीवन निर्वाह करनेवाला होता है।।८६।।

चेष्टाबलयुक्त ग्रहाणांफलम् –

गुरौ शुक्रे बुधे पाथोनिधिजेचात्रिसंभवे ।
विद्यांया वाधने संख्यावलदिग्वलवृद्धितः ।।८७।।
नानाविध यतिः प्रोक्ता इति चेष्टाधिकेषु तु ।
केचिदुक्तं यथापूर्वं विशेषादेव निर्णयः ।।८८।।

यदि सूर्यादिग्रह चेष्टाबल से युक्त हों तो अनेक प्रकार की विद्या द्वारा द्रव्य का लाभ होता है।।८७-८८।।

बलिष्ठो दायरश्म्युक्त फलं सर्वं करोति वै ।
न्यूनाधिकेऽनुपातेन फलमेवं विचिन्त्यताम् ।।८९।।

गुरु शुक्र बुध यदि बली हों तो रश्म्युक्त पूर्णफल को देते हैं। यदि न्यूनाधिक वल हो तो अनुपात द्वारा फल को समझना चाहिये।।८९।।

इष्टबलानुसारेण फलम् –

सौम्येष्विष्टफलाधिकेषु नितरां श्रीमान्सुशीलोगुणी-
मित्रेष्वेवमतीवधर्मनिरतो दाता सुखीसत्ववान् ।

पापेष्वेवमथापि पापनिरतः शत्रुष्वथो शत्रुभि-
वीर्येणाथ पराजयो जय इमान्पर्यायतः प्राप्नुयात् ।।९०।।

यदि शुभग्रह इष्टवल में अधिक हों तो धनी, मित्रों के प्रति सुशीलता गुणी, धर्मरत, दाता सुखी और वलवान् होता है। यदि पापग्रह इष्टवल में अधिक हों तो शत्रुओं के वल द्वारा पराजय होती है।।९०।।

फलांतरम् –

अधिकेष्वशुभेष्वेवमनिष्टाख्यफलानितु ।
व्याधिभिः कलहैर्मित्रैः पीड्यते नात्र संशयः ।।९१।।

यदि पापग्रह अधिक बली हों तो ज्वरपीड़ित, कलह और मित्रों से पीड़ित रहता है।।९१।।

एवं पापेषु दुश्चेष्टः पातकी भवति ध्रुवम् ।
शत्रुष्वेवं सदा रोगी मित्रैर्बन्धुविवर्जितः ।।९२।।

पापग्रह अधिक वली हों तो दुष्ट चेष्टा वाला पातकी होता है। शत्रुग्रह अधिक बली हों तो सदा रोगी, मित्र तथा वंधु वर्ग से रहित हो।।९२।।

सर्वद्वेष्टबलाधिक्ये सर्वत्राफलदोग्रहः ।
शुभेषु च फलेष्वेव स्पष्टमेव फलप्रदः ।।९३।।

जो ग्रह सर्वद्वेषी हो और बलाधिक्य हो तो वह निष्फल होता है।।९३।।

अत्यनिष्टफलः खेटः शुभेषु त्वफलप्रदः ।
अनिष्टफलदोऽन्येषु खेटः सर्वत्र सर्वदा ।।९४।।

और जो शुभवर्ग में शुभ फल देने वाला है यदि अन्य ग्रहों से मिश्रित है तो अनिष्ट फल देने वाला होता है।।९४।।

स्वोच्चादिस्थानष्ट्स्थाःस्युस्तथादिग्वर्गगा अपि ।
क्षेत्रपुत्रकलत्रादि धनधान्यसमृद्धिदाः
यदि मित्रादिवर्गस्थाधनधान्यविवर्धनाः ।।९५।।

जो ग्रह अपने उच्च, मूलत्रिकोण स्वक्षेत्र, मित्रक्षेत्र, अधिमित्रक्षेत्र, उदासीन क्षेत्र में हो वा अपने दशमवर्ग में हो वह स्त्री पुत्र धन धान्य की वृद्धि करने वाला होता है।।९५।।

दशाफलम् –

व्याधि दुर्गतिदा प्रोक्ता दशारम्भे तु शीतगोः ।
स्वोच्चादि संस्थिता दाय प्रारम्भे शुभदादशा ।।९६।।

आरम्भ में चन्द्रमा की दशा व्याधि और दुर्गति को देती है। उच्चादि छ स्थान में गये हुये ग्रह की दशा प्रारम्भ में शुभ फल देने वाली अन्यथा अशुभ फल देने वाली होती है।।९६।।

अन्यथाऽशुभदा प्रोक्ता प्रारम्भे ज्योतिषां दशा ।
केन्द्रधूम्रगताःखेटा दशायां शुभदाः सदा ।।९७।।

केन्द्र में गये हुये ग्रह की दशा शुभद होती है।।९७।।

द्रव्यकर्मगुणा यस्य स्वभावाः कथिताः पुरा ।
ते सर्वे स्वदशाकाले योज्या भावदृगादिषु ।।९८।।

पूर्व में जिस ग्रह का जो स्वभाव और गुण कहा गया है वह सभी उसके दशाकाल में योजना करना।।९८।।

भावदृष्टिवलेष्टानि फलानि कथितानि च ।
भावाध्यायोक्त ख्यादिफलान्यत्रैव योजयेत् ।।९९।।

और भावों अथवा भावेशों के दृष्टिवश से जो फल कहे गये हैं और भावस्थ सूर्यादि के फलों को भी तारतम्य से योजना कर फल कहना चाहिये।।९६-९९।।

इति बृहत्पाराशर होरायामुत्तरार्धे पंचदशोऽध्यायः।।१५।।

अथ मासचर्याप्रकरणम्।

भावसंधिस्थग्रहाणांफलम् –

भावांशैः समतां गतः खलु खगः पूर्णं विधत्ते फलम् –
संधिस्थो न फलप्रदोऽन्तरगतैस्त्रैराशिकेनैव च ।
भावन्यूनमथग्रहस्य गुणयेदंशादिकं चार्णवैर्हित्वा-
चास्य च संधितोऽधिकमथो प्रोक्त फलं भावजम् ।।१।।

ग्रह जिस भाव में बैठा है उस भाव का राशि अंश यदि ग्रह के राशि अंश के तुल्य हो तो उस भाव का पूर्णफल प्राप्त होता है। यदि ग्रह संधि में हो तो उस ग्रह का फल नहीं होता है, दोनों के मध्य में हो तो त्रैराशिक द्वारा फल लाना चाहिये,

यदि ग्रह भाव से न्यून हो तो ग्रह के अंश को ४ से गुणने से और यदि अधिक अंश हो तो भाव संधि से घटाने से शेष भाव फल होता है।।१।।

ऊर्ध्वमुखो रवियुक्तोराशिसमेतस्त्वधोमुखोज्ञेयः ।
तिर्यङ्मुखोऽखिलयुतो राशिर्भावाः परेप्येवम् ।।२।।

यदि भाव में सूर्य हो उसे ऊर्ध्वमुख, जो भावग्रह रहित हो उसे अधोमुख और जो चन्द्रादि ग्रहों से युक्त हो उसे तिर्यक् मुख कहते हैं।।१-२।।

भावानांफलम् –

अन्य जातीय योगे तु तत्तद्भावफलं वदेत् ।
स्वजातीय योगेषु त्रिंशाद्यंशा भवंत्युत ।।३।।

भावों में अन्य जातीय ग्रहों के योग हों तो उनके अनुसार भाव के फल को कहना चाहिये। यदि स्वजातीय ग्रह युक्त हो तो सम्पूर्ण तीस अंश फल होता है।।३।।

भावानांस्थानांकसंख्यामाह–

तत्त्वमाकृतिरेकाक्षिछंदस्तत्वं चतुस्त्रयः ।
एकोनविंशतिच्छन्दो नवाक्षी षट् त्रयस्तथा ।।४।।

तनु आदि १२ भावों के क्रम से २५, २२, २१, २६, २५, ३४, १९, २६, २९, ३६, ५४, १६ ये भाव स्थानांक संख्यायें हैं।।४।।

भावानांकरण (रेखा) संख्यामाह–

वेदेषवो नृपाः स्थाने भावसंख्याःप्रकीर्त्तिताः ।
एकत्रिंशत्त्रथस्त्रिंशद्भानि त्रिंशत्तथैव च ।।५।।
एकत्रिंशद्द्विनेत्रे च मुनिरामाः खपावकाः ।
मानि त्रिंशतिरेकद्वौ खवेदाः करणस्य तु ।।६।।

तनु आदि १२ भावों के क्रम से ३१, ३३, २७, ३०, ३१, २२, ३७, ३०, २७, २०, २१, ४० करणांक है।।५-६।।

पूर्वोक्त स्थान-करण संख्यानां शुभाऽशुभत्वम् –

विषमायां क्रमादोजे युग्मे स्यातां शुभाशुभे ।
समायां भवतस्तद्वत्पापसौम्य फल क्रमात् ।।७।।

विषम राशि में स्थान संख्या विषम हो तो शुभ फल और सम राशि में स्थान

संख्या सम हो तो अशुभ फलदायक। विषम राशि में करण संख्या सम हो तो अशुभ फलदायक होता है।।७।।

विशेषफलम् –

ओजे व्याधिः समे हानिर्यावत्तुदशकं भवेत् ।
परतः पञ्चकं चौजे समे व्याधिरथान्यथा ।।८।।

विषम राशि में यदि स्थानकरण की संख्या १० हो तो व्याधि का नाश और सम राशि में हानि होती है। इसके बाद १५ पर्यन्त व्याधि इसके बाद २५ तक सम राशि में व्याधि और विषम राशि में हानि होती है।।८।।

शिरोरोगाक्षिरोगाश्च रक्तासृक्कामलाज्वरीः ।
ग्रहणी शीतको भेहप्लीहो गुल्मलतः क्रमात् ।।९।।

इसके बाद पुनः ३५ पर्यंत क्रम से शिरोरोग, नेत्ररोग, रक्तविकार, कामलारोग, ज्वररोग, संग्रहणी, शीतरोग, प्रमेहरोग, प्लीहारोग, गुल्मरोग होता है।।९।।

रत्नैर्धान्यैश्च हेमैश्च गोभिः क्षेत्रैश्च राजभिः ।
दासैश्च महिषैरुष्ट्रैर्गजाश्वैर्वृद्धयः स्मृताः ।।१०।।

इसके बाद ४५ पर्यन्त क्रम से रत्नवृद्धि, धान्यबृद्धि, सुवर्णबृद्धि, गौ आदि की बृद्धि, क्षेत्रादि की वृद्धि, राजा से लाभ, दासों से लाभ, महिषी आदि की वृद्धि, ऊंट आदि की बृद्धि, हाथी घोड़े की बृद्धि होती है।।९-१०।।

जातिदेशानुसारेणफले तारतम्यम् –

जात्या देशस्य कालस्य स्वानुरूपं फलं वदेत् ।
तत्तद्भावानुसंज्ञं च ग्रहात्भावात्फलं वदेत् ।।११।।

इस प्रकरण में स्थान करण का जो फल कहा गया है उसे जाति देश काल के तारतम्य से स्वरूप के अनुसार कहना चाहिये।।११।।

उच्चादिषु नवस्वेव कालांशादिषु यत्फलम् ।
भाग्याध्यायोक्तमप्यत्र योजयेत्तु विशेषतः ।।१२।।

पहले कहे हुये उच्चादि फल, कालांशादि फल और भाग्याध्यायोक्त फल का विचार भी स्थान करण में संयोजित करके फलादेश करना चाहिये।।११-१२।।

इति पाराशर होरायामुत्तरार्धेमासचर्याफलवर्णननाम षोडशोऽध्यायः।

दिनचर्याप्रकरणम् ।

स्थानप्रद करणप्रदग्रहाणांफलम् –

अर्केन्दुगुरवः शुक्रः क्रमादन्येवलक्रमाद् ।
भवंति स्थानदाः खेटाश्चत्वारश्च यदैकदा ।।१।।

सूर्य चन्द्र गुरु शुक्र, भौम, वुध, शनि एक ही समय में स्थानप्रद हों तो धन का लाभ होता है।।१।।

धनादीनां यथा लब्धिः पंच चेत्पूज्यतायुतः ।
आरोग्यं वस्त्रलाभश्च षट्सु पट्टस्यवंधनम् ।।२।।

इनमें पांच स्थानद हों तो पूज्यता प्राप्त हो, यदि ६ स्थानद हों तो पट्टाभिषेक होता है।।२।।

सप्तचेद्राऽयलाभः स्यादेवं करणदा यदि ।
धनहानिस्ततो व्याधिस्ततस्तु विपदादयः ।।३।।

सात ग्रह हों तो राज्यलाभ होता है। यदि चार करणप्रद हों तो धन की हानि, पांच हों तो व्याधि, छ हों तो विपत्ति।।३।।

सप्तभिर्मरणं प्रोक्तमक्षाभावे मृतिर्भवेत् ।
तत्र तिष्ठति चेत्खेटे त्वन्यस्मिन्यदिवामतः ।।४।।

सात हों तो विपत्ति और मरण होता है। करण का अभाव हो तो मृत्यु यदि विलोमग्रहस्थिति हो तो मृत्यु नहीं होती हैं।।४।।

उच्चसंख्याधिका अंशाश्चंद्रस्य स्थानदाःपरे ।
शुभाख्याः शुभदाः प्रोक्ता राशिनात्र क्रमात्फलम् ।।५।।

चन्द्रोच्च की संख्या १।३ इससे यदि अधिक अंश के स्थानदग्रह हों और शुभग्रह हों तो शुभफल होता है।।१-५।।

उपसंहारः–

होराशास्त्रमिदं सर्वं भाषितं तव सुव्रत ।
पुण्यं यशस्यं धन्यं च त्रिकालज्ञानकारणम् ।।६।।

हे मैत्रेय! यह सम्पूर्ण होरा शास्त्र मैंने कहा यह पुण्यकारक, यश को देने वाला, धन धान्य को देने वाला, भूत, भविष्य और वर्तमान काल को कहने वाला है।।६।।

विना मनु तपस्ये च शास्त्रज्ञानेन केवलम् ।
हस्तामलकवत्सर्वं जगतां लोकयेत्फलम् ।।७।।

इस शास्त्र का उत्तम ज्ञान होने से मंत्र तथा देवता की आराधना के बिना ही हाथ में रखे हुये आंवला के समान ही संपूर्ण जगत् का शुभ अशुभ देखा जा सकता है।।७।।

पुत्राय शिष्याय च धीमते च तपस्विने मंत्रविदे च दात्रे ।
दद्यादिमं शास्त्रमहासमुद्रं यथैव शम्भुः शिशवेपयोधिम् ।।८।।

इस महासमुद्र शास्त्र को पुत्र, शिष्य, बुद्धिमान्, तपस्वी, मंत्रवेत्ता और दाता को देना चाहिये। जैसे शिवजी ने तपस्वी उपमन्यु को पयोधि को दिया था।।८।।

बुद्धिहीनाय दम्भाय दांभिकायत्वमर्षिणे ।
न दद्यादादि दद्याच्चेद्विधा स्वस्य विनश्यति ।।९।।

इस शास्त्र को दंभी, क्रोधी, दुष्ट को नहीं देना चाहिये ऐसे लोगों को देने से विद्या नष्ट हो जाती है। पूर्वोक्त दोष से रहित वालक भी हो तो उसे इस शास्त्र को पढ़ाना चाहिये।।९।।

एवं ते कथितं शास्त्रं त्वयिस्नेहाद्द्विजोतम ।
जातकांशं च विद्यांशं किं भूयस्त्वं श्रोतुमिच्छसि ।।१०।।

हे मैत्रेय! तुम्हारे ऊपर स्नेह के कारण मैंने जातकांश को कहा। अब तुम्हारी क्या सुनने की इच्छा है सो कहो।।६-१०।।

इति पाराशरहोरायामुत्तरार्धे सप्तदशोऽध्यायः।।१७।।

प्रश्नाध्यायः।।१८।।

मैत्रेय उवाच--

भगवन्प्रश्नशास्त्रं तु सूचिकानां प्रकाशितम् ।
कलौ युगे तु मंदानां यज्ज्ञातुं तद्वदस्व मे ।।१।।

मैत्रेय जी बोले— हे भगवन्। आपने बुद्धिमानों के लिये प्रश्न शास्त्र को कहा है किन्तु कलियुग में मन्दवुद्धि वालों को जैसे ज्ञान हो उसे कहिये।।१।।

उपास्य विवेचनम् –

कृतेयुगे तु धर्मस्य पूर्णत्वात्तपसान्विताः ।
सर्वे जानन्ति भूतं च भवद्भावि द्विजोत्तम ।।२।।

पाराशर जी बोले— हे द्विजश्रेष्ठ ! सत्ययुग में धर्म की पूर्णता के कारण मनुष्य तपस्वी होते थे इस कारण भूत, भविष्य और वर्तमान को जानते थे।।२।।

त्रेतायां तपसा युक्ताः केचिज्जानन्ति वै द्विजाः ।
पश्यन्ति द्वापरे शास्त्रज्ञानेन तपसापि च ।।३।।

हे द्विज! त्रेता में केवल तपस्या से कुछ लोग जानते थे। द्वापर में तपस्या और शास्त्रज्ञान द्वारा जानते थे।।३।।

कलौ युगे तु धर्मस्य पादमात्र व्यवस्थितिः ।
तपः शक्त्या तु तज्ज्ञातुं न शक्ता मानवाभुवि ।।४।।

और कलियुग में १ चरण ही धर्म रहता है अतः तपस्या द्वारा ज्ञान को नहीं प्राप्त कर सकते हैं।।४।।

ज्योतिषशास्त्रज्ञाने उपायः—

तथात्र परमः शंभुर्लोकानुग्रहकांक्षया ।
लक्षीकृत्य निजां शक्तिं विद्यामाधत्स ईश्वरः ।।५।।

संसार के ऊपर अनुग्रह की वृद्धि से परमदयालु श्री शंकरजी अपनी शक्ति से आदि विद्या त्रिकालज्ञान को देने वाली अपनी कला से विभक्त कर उत्पन्न किया।।५।।

कलापि च विभक्तानां त्रिकालज्ञानदायिनी ।
वेदादि वाग्भवागौरीवदद्वयमथोगिरिः ।।६।।
परमैश्वर्यसिध्यर्थं वाग्भवास्यादयं मनुः ।
सर्वज्ञेतिपदं पूर्वं नाथ तं पार्वतीपते ।।७।।
सर्वलोकगुरोः पश्चाच्छिवेति द्वयमक्षरम् ।
शरणं तु पदं पश्चात्त्वां प्रपन्नोऽस्मितत्परम् ।।८।।
पालयेति पद ज्ञानं प्रदापय ततः परम् ।

यह मंत्र निम्नलिखित है 'ॐ ऐं गौरी वदवदगिरिपरमैश्वर्य सिध्यर्थं ऐं' यह शक्ति का मंत्र है।। "सर्वज्ञनाथपार्वतीपते सर्वलोकगुरो शिव शरणं त्वां प्रपन्नोस्मि पालय ज्ञानं प्रदापय" यह शिवजी का मंत्र है।।६-८।।

विनियोगादिकम् —

ऋषिस्तु दक्षिणामूर्त्तिर्गौरी परमेश्वरी तथा ।।९।।

सर्वज्ञश्च शिवो देवो गायत्रीछंद ईरितत् ।
अनुष्टुप् च षडंगं स्याद्वाग्भावेन हृदयादि च ।।१०।।

विनियोग— अनयोऽमन्त्रयोः दक्षिणानूर्तिर्ऋषिः गौरी परमेश्वरी सर्वज्ञः शिवश्च देवते गायत्र्यनुष्टुभौ छंदसी ज्योतिःशास्त्रज्ञानप्रादाये जपे विनियोगः, इसके बाद 'ऐं' इस बीज से षडंगादि न्यास करे जो आगे कह रहे हैं।।९-१०।।

ध्यान–

उद्यानस्यैकवृक्षाधः परे हैमवते द्विज ।
क्रीडंती भूषितां गौरीं शुक्लवस्त्रां शुचिस्मिताम् ।।११।।

हिमालय पर्वत के ऊपर बगीचे में एक वटवृक्ष के नीचे सफेद वस्त्र को धारण की हुई प्रसन्न मुख क्रीडा करती हुई बैठी हुई हैं।।११।।

देवदारुवने तत्र ध्यानस्तिमितलोचनम् ।
चतुर्भुजं त्रिनेत्रं च, जटिलं चन्द्रशेखरम् ।।१२।।

और इसी प्रकार उसी बगीचे में देवदारु वृक्ष के नीचे ध्यानमग्न आंखों को मूंदे हुये चार भुजाओं वाले तीन आंखों वाले जटा धारण किये हुये मस्तक में चन्द्रमा को धारण किये हुये शंकर जी बैठे हैं।।१२।।

शुक्लवर्णं महादेवं ध्यायेत्परममीश्वरम् ।
अनेनाभ्यां द्विजश्रेष्ठ बुद्धिस्तु विमलाभवेत् ।
जयमात्रेण सिद्धिः स्याद्दैवज्ञत्वं प्रकाशते ।।१३।।

इस प्रकार पार्वती और शुक्लवर्ण शंकर का ध्यान करके यथाशक्ति जप को करे। हे मैत्रेय! इन दोनों मंत्रों के पुरश्चरण करने से निर्मल बुद्धि होकर ज्योतिष शास्त्र का ज्ञान होने से वह दैवज्ञ होता है।।१३।।

दैवज्ञ लक्षणम् –

द्विविधं गणितं ज्ञात्वा शाखास्कंधं विमृस्य च ।
होरा स्कंधत्य शकले श्रुत्वार्थमवधार्य च ।।१४।।

जो द्विज श्रेष्ठ दोनों गणितों को जानकर तथा जातक के दोनों भागों को गुरु से पढ़कर उसको धारण करता है।।१४।।

वाग्मी द्विजवरो यः स्यान्न वंध्या तस्य भारती।।१५।।

वही उत्तम दैवज्ञ होता है और उसकी वाणी मिथ्या नहीं होती है।।१५।।

प्रश्नकर्तुः नियमः—

अलुब्धो नैष्ठिकः शुद्धो विनय प्रश्रयान्वितः ।
रत्नं स्वर्णं धनं वस्त्रं पुष्पमूल फलानि तु ।।१६।।
दैवज्ञपुरतो दत्वा पृच्छेदिष्टं प्रियान्वितः ।

त्यागी, निष्ठावान्, निष्कपट, विनयादि गुणों से युक्त जो प्रश्नकर्ता वह रत्न, वस्त्र, सुवर्ण धन पुष्प, फलादि को दैवज्ञ के सामने रख के मीठे वचनों से अपने अभीष्ट को पूछे।।१६।।

दैवज्ञस्य कर्त्तव्यः—

अथ प्राङ्मुख आसीनः शुचिर्दैवविदग्रतः ।।१७।।

दैवज्ञ प्रश्न के समय पवित्र होकर पूर्व मुख वैठकर।।१७।।

तिर्यगूर्ध्वाश्चतस्रस्तु रेखा रज्जुसमालिखेत् ।
एकीकुर्यात्तु चत्वारि मध्यस्थानि पदानि च ।।१८।।

चार रेखा तिरछी और चार खड़ी रेखा को लिखे। ऐसा करने से १६ कोष्ठ का चक्र होगा। मध्य के चार कोष्ठों में।।१८।।

तत्र पद्मं लिखेद्रेखामध्यं सकर्णिकम् ।
ईशान्यकोष्ठादारभ्य मीनाद्या राशयः क्रमात् ।।१९।।

कर्णिका के साथ कमल को बनावे इसमें ईशान कोण से आरम्भ कर मीनादि राशियों को लिखे।।१९।।

मेषवीथी वृषाद्यास्तु कौर्प्याद्या मिथुनस्य तु ।
वीथयो मीनमेषौ तु तुलाकन्ये वृषस्य तु ।।२०।।

चक्र में वृष से सिंह पर्यन्त चार राशियों की मेषवीथि, वृश्चिक से चार राशियों की मिथुन वीथि और मीन, तुला, कन्या राशियों की वृषवीथि संज्ञा जानकर।।२०।।

आरूढात् वीथिभं यावत्तावच्छत्रं तु लग्नतः ।
आरूढराशिल्लग्नं चेच्छत्रं चापि भवेत्तथा ।।२१।।

आरूढ लग्न का ज्ञान करे। प्रश्नकर्त्ता जिस दिशा में बैठा हो उस दिशा के राशि को आरूढ लग्न कहते हैं अथवा प्रश्नकर्त्ता से राशिचक्र में अंगुली को धरावै जिस राशि में अंगुली धरै वही आरूढ लग्न होती है। आरूढ़ लग्न से वीथि की राशि पर्यन्त छत्र होता है। यदि आरूढ़ राशि ही प्रश्नलग्न हो तो वही छत्र होता है।

जन्मलग्नं समासाद्य यद्यत्प्रोक्तं तु जातके ।
तत्सर्वं प्रश्न लग्नेन प्रश्नकालाद्वदेद्बुधः ।।२२।।

इसका विचार कर जन्मलग्न से जिस प्रकार विचार किये जाते हैं उसी प्रकार यहां भी सभी बातों का विचार करे।।१७-२२।।

आरूढ़लग्नादायुनिर्णयः–

यत्कालावधिलग्नं तत्तत्कालावधिस्थिते ।
तेषां बलवतां चैव निर्णयः स्वायुषाः स्मृतः ।।२३।।

तात्कालिक लग्न.की जितने काल पर्यन्त स्थिति हैं उतनी ही आयुष्य की स्थिति होती है।।२३।।

आद्यद्रेष्काणमंत्यं च मृत्युदं च क्रमाद्भवेत् ।
मृगालिकर्कटानां च मीनस्यारूढ़लग्नतः ।।२४।।

मकर, वृश्चिक और कर्क तथा मीन राशि का आरूढ़ लग्न से प्रथम और अंत द्रेष्काण हो तो मृत्युदायक होता है।।२३-२४।।

मृत्युलक्षणम् –

लग्ने पृदोदये क्रूरवेश्मास्तव्यगा यदि ।
धनेधर्मे कुजे मंदे चन्द्रे रंध्रे मृतिर्भवेत् ।।२५।।

यदि पृष्ठोदय राशि में प्रश्न हो और पापग्रह लग्न से ४।७।१२ वें स्थान में हों अथवा भौम २।९ भाव में हो शनि चंद्र ८ भाव में हों तो मृत्यु होती है।।२५।।

योगान्तरम् –

पापैदुरुधो जाते लग्नकामसुहृत्स्थिते ।
चन्द्रेऽर्के च विलग्नस्थे म्रियतेव्याधिना भृशम् ।।२६।।
राहुकाल समायोगेमरणं निश्चितं भवेत् ।

प्रश्न लग्न वा जन्म लग्न में पापग्रह से दुरूधरा योग हो अथवा लग्न ७।४ भाव में पापग्रह हों और सूर्य लग्न में हो राहु काल का योग हो तो निश्चय ही व्याधि से मृत्यु होती है।।२६।।

राहुकालसमायोगलक्षणम् –

भेषाद्व्युत्क्रमतो राहुर्वृषात्कालः क्रमाच्चरेत् ।।२७।।
राशौ राशौ तु पंचाशद्भोगकालोविनाडिकाः ।
अकोदयादितश्चोभौ भुंजाते च पुनः पुनः ।।२८।।

एकद्व्यंब्धिरामेषु षडष्टौ नाडिकाः क्रमात् ।
अर्कवारादितो राहू रात्रावेवमुदीरितः ।।२९।।
राहुरुत्क्रमशः प्राच्यां कालश्च क्रमशश्चरेत् ।
उभौ सार्धविनाड्येन राशिंषु द्वादशस्वपि ।।३०।।
इन्द्रेद्वग्निनिशाचरशमवारीशवायवः ।
रुद्रचन्द्रजलेशेशपापकेन्द्रयमस्थितः ।।३१।।
रक्षोवायुस्ततोग्नीशयमवारुणराक्षसाः ।
वायुसोमशनीनाथरक्षोग्निजलपेंदवः ।।३२।।
वाटवीशेंद्रयमाः पश्चाद्युग्मेंद्रौ च निशाचरः ।
मरुद्वरूणचग्द्रेशपावकोवरूणोयमः ।।३३।।
वायुरुद्रशशींद्राग्नी राक्षसाश्च ततः परम् ।
वायुरक्षः शशींद्रेशपावतांक वारूणाः ।।३४।।

मेष राशि से उलटे (मीन कुंभादि) राहु चलता है और वृष राशि से क्रम से काल चलता है। प्रत्येक राशि में इनका भोग ५० पल होता है। सूर्योदय कालिक लग्न से दोनों (राहु-काल) बारंबार लग्नों को भोगते हैं। सूर्यादि वारों में क्रम से १, २, ४, ३, ५, ६, ८ घटी पूर्व दिशा से आरम्भ कर विलोम दिशाओं में राहु घूमता है और इसी मान से काल भी पूर्व दिशा से क्रम से घूमता है। दोनों २।। घटी के मान से प्रत्येक दिशा में घूमते हैं। प्रत्येक वारों में दिशा के क्रम से इन्द्र, अग्नि, निशाचर आदि नामों से स्पष्ट ही है।।२७-३४।।

नक्षत्रतिथिवारेषु दिशाक्रमः-

अर्कवारादितो वामं राहुः संचरतिक्रमात् ।
रुद्रः समीरः सोमाग्नी यमोऽथ निर्ऋृतिर्जलम्।।३५।।

क्रम से ईशान, वायु, उत्तर, अग्नि, दक्षिण, नैर्ऋृत्य और पश्चिम।।३५।।

अंतिमादादिमाद्राहुः कालश्च चरतस्तथा ।
द्वयोर्योगे तु मरणमेकस्मिन्व्याधिरुच्यते ।।३६।।

इन दिशाओं में रविवार से वर्त्तमान वार तक, अश्विनी से वर्त्तमान नक्षत्र तक और प्रतिपदा तिथि से वर्त्तमान तिथि पर्यन्त राहु अंतिम दिशा पश्चिम से विलोम राहु और आदि ईशान से क्रम से काल घूमता है। इनमें किसी २ का योग हो तो मरण, एक हो तो व्याधि होती है।।३६।।

अथ द्वितीयभावादष्टमभावपर्यन्तं–

नृपा मूर्छा शरास्तत्वं तिथिषोड़श पंच च ।
द्वितीयेत्वष्टमे भावस्त्वंतरे त्वनुपाततः ।।३७।।

द्वितीय भाव में १६, तृतीय भाव में २१, चतुर्थभाव में ५, पंचम भाव में २५, षष्ठभाव में १५. सप्तम भाव में १६, अष्टम भाव में ५ ये रश्मियां होती हैं। अन्य भावों का अनुपात द्वारा पीछे कह चुके हैं।।३७।।

नागाब्देषु गुणा रूद्रा वाजिवेदांगपंक्तयः ।
दशपंचाष्टका मेषाद्रश्मयः संप्रकीत्तिता ।।३८।।

मेषादि राशियां में क्रम से ८, ८, ५, ३, ११, ७, ४, ६, १०, १०, ५, ८ होती हैं।।३८।।

एकयोगे तु सर्वेषु व्याधिर्द्वाभ्यां भवेन्मृतिः ।
लक्ष्मीयोगेषु सर्वेषु व्याधिस्तस्यनवाऽपि वा ।।३९।।

पीछे जो मरण योग कहे हैं उनमें यदि लक्ष्मी योग भी हो तो कभी मरण होता है कभी नहीं होता है।।३७-३९।।

अथ रोगिणः मृत्युसंबंधी प्रश्नः–

वैधृतौ च व्यतीपाते सार्पभेंतिमसंज्ञिते ।
कुलीरे विषनाडीषु सूर्यदुष्टेषु पंचसु ।।४०।।

यदि प्रश्न समय वैधृति, व्यतीपात, श्लेषा, रेवती, कर्कांश, विषनाडी भौम, बुध, गुरु, शुक्र, शनि ये सूर्य से दूषित हों।।४०।।

पापयुक्ते तु नक्षत्रे राशौ तत्संयुतेऽपि च ।
सन्धौ च मासशून्यर्थां तिथिराशिषु जन्मभे ।।४१।।

पापयुक्त नक्षत्र हो राशि पापग्रह से युत हो, राशि संधि हो, मास की शून्य राशि तिथि नक्षत्र हो, जन्म का नक्षत्र हो।।४१।।

व्ययाष्टमे च क्षीणेंदौ शत्रुग्रहनिरीक्षिते ।
पादं पृष्ठं च जंधां च जानु नाभिं च गुल्फके ।।४२।।

लग्न से १२।८ भाव में क्षीण चन्द्र हो और शत्रुग्रह से दृष्ट हो, पैर, पीठ, जंघा, जानु, नाभि, गुल्फ (एड़ी)।।४२।।

कर्णो च चक्षुषी मालमास्यं कंठं स्पृशेद्यदा ।
व्याधिर्वाम्रियते तद्वन्भृतिं राशिं स्पृशेत्तु वा ।।४३।।

कान, नेत्र, ललाट, मुख, कंठ को स्पर्श करता हो, तो व्याधि वा मृत्यु होती है अथवा काल राहु स्पर्श करे।।४३।।

अष्टमर्क्षं स्पृशेद्यद्वा कालांशादिषु वा तथा ।
विपद्वधप्रत्यक्ऋक्षे च वैनाशं ऋक्षमेव वा ।।४४।।

आठवीं राशि को स्पर्श करे, षोडशांश को अथवा विपत्तारा वैनाशिक नक्षत्र को।।४४।।

संस्पृशेत्प्रश्नकाले तु व्याधिर्वा तस्य वा मृतिः।।४५।।

स्पर्श करे तो व्याधि वा मृत्यु हो।।४५।।

नक्षत्रक्रमेणकालस्थावयवाः-

शिरोललाटभ्रूनेत्रनासाकर्णकपोलकाः ।
ओष्ठं च त्रिवुककंठमंशौहृदयमेव च ।।४६।।
पार्श्वौ च वक्षः कुक्षिश्चनाभिश्चकटिरेव च ।
जघनं च नितंबं च लिङ्गमंडं च वस्ति च ।।४७।।
ऊरू च जानु जंघा च गुल्फांघ्रीचाश्विभात्कमात्।

अश्विनी से आरम्भ कर रेवती पर्यन्त २७ नक्षत्रों का क्रम से शिर आदि २७ अंग होते हैं।।४६-४७।।

प्रश्नकर्त्तुः अशुभलक्षणं तथा शुभप्रश्नः-

तैलाभ्यक्तोऽथवाशुद्धोजलगर्तसमीपगः।
प्रष्टा दैवविदे वाथ मरणं तस्यनिर्दिशेत्।।४८।।

यदि प्रश्नकर्त्ता तेल लगाये हुये हो, अशौच में हो, जल के गड्ढे के समीप होकर प्रश्न करैं और इसी स्थिति में ज्योतिषी हो और प्रश्न का उत्तर दे तो मृत्यु कहना।।४८।।

लग्नत्रिसुतकामारिधर्माययगः शुभः ।
रोगशांतिकरा नो चेद्रिपुनीचग्रहस्थिताः ।।४९।।

प्रश्न लग्न से ३।५।७।६।९।११ स्थानों में शुभग्रह हो तो रोगप्रश्न में रोग शांत होगा ऐसा कहे।।४९।।

एषु पापा मृतिकरानोचेत्स्वर्क्षोच्चमित्रगाः ।
यस्य यस्य शुभं वाथ रिःफस्थानगता शुभाः ।।५०।।
यद्वा त्रिकोणकेन्द्रस्थास्तस्य तस्य शुभप्रदाः ।

यदि पूर्वोक्त स्थान में पापग्रह हों तो मृत्यु कहना। किन्तु शुभग्रह नीचादि स्थान में और पापग्रह उच्चादि स्थान में न हों तो पूर्वोक्त फल होता है। १२।९।५।१।७।१० इन स्थानों में जन्मलग्न से वा प्रश्नलग्न से शुभग्रह हों तो शुभ फल होता है।।५०।।

अयनादि ज्ञानम् –

मृगकर्क्यादितः सूर्योराशिपूर्वापरार्धतः ।
शनिशुक्रारचंद्रज्ञगुरवः शिशिरादयः ।।५१।।

जन्मकाल या प्रश्नकाल में मकरादि ६ राशि के अन्दर सूर्य हों तो उत्तरायण और कर्कादि ६ राशि के अंदर हों तो दक्षिणायन होता है। इसी प्रकार मकर, कुंभ, मीन, मेष, वृष, मिथुन राशियों के पूर्वार्ध में क्रम से शनि, शुक्र, भौम, चंद्र, बुध, गुरु हों तो क्रम से शिशिर वसंत, ग्रीष्म, वर्षा, शरद्, हेमन्त ऋतु कहना इसी प्रकार से कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धन राशियों के उत्तरार्ध में यदि पूर्वोक्त ग्रह हों तो शिशिर आदि ऋतु कहना।।५१।।

अर्को ग्रीष्मस्ततोऽन्यैर्वा वायनादृतुरेव च ।
शुक्रारमंदचंद्रज्ञ जीवाश्च परिवर्तिताः ।।५२।।

इसी प्रकार प्रश्न लग्न में सूर्यादि ग्रह हों तो भी ग्रीष्म, वर्षा, शरद्, हेमन्त, शिशिर, बसंत ऋतु कहना। अथवा अयन से ऋतु कहना। शुक्र, मंगल, शनि, चंद्र, बुध, गुरु इनमें जो द्रेष्काधिपति हो उसके ऋतु को कहना वा जो नवांश हो उससे ऋतु कहना।।५२।।

वर्ष-मास-तिथिज्ञानम् –

लग्नद्रेष्काणपाः प्रोक्ता नवांशेनैव चापरे ।
तत्पूर्वपरतो मासौ तिथिः स्यादनुपाततः ।।५३।।

जो पूर्व प्रकार से ऋतु निर्णीत हुआ हो वह यदि राशि के पूर्वार्ध की हो तो उस ऋतु का पूर्वमास और उत्तरार्ध की हो तो उत्तर मास जानना चाहिये। ऋतु के भुक्त भोग्य द्वारा अनुपात करके तिथि का ज्ञान करना चाहिये।।५३।।

वर्ष ज्ञानम् –

लग्नत्रिकोणगो जीवो नवांशस्थोऽथवा भवेत् ।
ज्ञात्वा वयोनुरूपेण ह्यनुमानवशात्समाः ।।५४।।

प्रश्न लग्न से त्रिकोण (९।५) में गुरु जिस राशि में हो उसी राशि के गुरु में जन्म हुआ है, यदि गुरु त्रिकोण में न हो तो जहां कहीं जिस राशि में जिस नवांश में हो उस नवांश राशि के गुरु में जन्म कहना। किन्तु अवस्था के अनुमान से वर्ष का निर्णय करना चाहिये।।५४।।

सूर्यस्थितांशतुल्यां वा तिथिं प्रोवाच भार्गवः ।
राशौ रात्रिदिवाख्ये च जन्म स्यात्तु विलोमतः ।।५५।।

तिथिज्ञान-सूर्य जिस त्रिशांश में हैं उसके तुल्य तिथि कहना ऐसा शुक्राचार्य का मत हैं। दिन-रात्रि का ज्ञान— प्रश्नलग्न राशि बली हो तो दिन में और दिवा बली हो तो रात्रि में जन्म कहना।।५५।।

प्राण-लग्नादेः ज्ञानम् –

गतप्राणैर्जन्मकाले ते च प्राणा भवंत्यथ ।
यद्राशिगः शशी मासः समं वा श्पृशदंगकम् ।।५६।।

प्रश्न समय जितने प्राण बीत चुके हों उतने ही प्राण जन्म समय में जानना चाहिये। मास-राशि-लग्न का ज्ञान - प्रश्न समय जिस राशि का चन्द्र हो उसी राशि के नाम वाला मास होता है जैसे मेष में चैत्र आदि।।५६।।

तत्त्रिकोणावलाधिक्यं राशिर्ल्लग्नात्तु यावति ।
चंद्रस्तावतिभं चापि जन्मलग्नं विनिर्दिशेत् ।।५७।।

प्रश्न समय में चन्द्रमा जिस राशि को स्पर्श करता हो चाहे सम हो या विषम इससे त्रिकोण की जो राशि दोनों में बली हो वहीं राशि होती है। मेषादि गणना से जितने संख्यक राशि पर चन्द्र हो उतनी ही संख्या की लग्न होती है। जैसे मीन प्रश्न लग्न हो तो मीन राशि अन्य लग्नों से अन्य राशि जानना।।५७।।

जन्मनक्षत्र ज्ञान–

मीने मीनं तु लग्नं वा तथान्यैस्त्वन्य लग्नभम् ।
छायया संयुता यामवारर्क्षतिथिराशयः ।।५८।।

प्रश्न समय प्रश्नकर्त्ता के छाया को पैर से नाप कर उसमें प्रहर, वार, तिथि को जोड़ दें २७ से अधिक हो तो २७ से भाग देकर शेष संख्या के तुल्य धनिष्टादि नक्षत्र होता है।।५८।।

यावंस्तस्तु धनिष्ठादिजन्मक्षतद्विनिर्दिशेत् ।
कालांशादिषु यत्प्रोक्तमृक्षं तद्वा भवेदिदम् ।।५९।।

अथवा पूर्व में कालांशादि में जो नक्षत्र कहा है वही नक्षत्र होता है। कालांश का आधा होरा कहा है वही होरा होती है।।५६-५९।।

प्रकारांतरेणमासादिज्ञानम् –

कालांशाद्यर्धहोरानां प्रोक्तहोरैर्विभावयेत् ।
पृथग्लिप्तीकृतं लग्नं वर्गणाभिर्हतं पुनः ।।६०।।

प्रश्न लग्न का कलापिंड बनाकर उसके वर्ग से गुणाकर दो स्थान में रखकर।।६०।।

आरूढ़छत्रयोवीर्यवलस्य वर्गणाहतम् ।
ओजे योगः समे हानिरिति तस्य विधीयते ।।६१।।

आरूढ़ और छत्र में जो वली हो उसके वर्ग से गुणाकर विषम लग्न हो तो योग अन्यथा पृथक्स्थ में घटाकर।।६१।।

स्वैः स्वैर्भागैश्च भक्तं तत्तथा मासादयःस्मृताः ।
यद्वा कलीकृतं लग्नं तथा कुर्याद्विचक्षणः ।।६२।।

शेष में अपने २ विभाग से (मास ज्ञान के लिये १२ दिन के लिये ३० आदि से) भाग देने से मासादि का ज्ञान होता है। अथवा लग्न का कला बनाकर पूर्वरीति से सभी क्रियाओं को करके।।६२।।

भावकस्य च शुद्धिं च योगं चैव करोत्यतः ।
नवभिश्च कलांशाद्यैस्तथैवोच्चादिभिः क्रमात् ।।६३।।

भाव शुद्धि आदि क्रियाओं को करके नवकलांश और उच्च त्रिकोणादि भेद से।।६३।।

एकाशीतिभिदाः संति नवकाद्यंक शोधनैः ।
येषां योगगते काले समांतेषु सतां यतः ।।६४।।

८१ प्रकार को करके उनमें नव शोधनादि करते हुये जहां अवसान हो वहीं मासादि जानना।।६४।।

लग्न बल विचारः-

राशिस्तु बलवान्स्वामिगुरुज्ञप्रेक्षणान्वितः ।
अन्यैः पापैरदृष्टः स्याच्छुभदृष्ट्या प्रयोजयेत् ।।६५।।

जो राशि अपने स्वामीं वा गुरु, बुध से दृष्ट हो, अपने पापग्रह स्वामी को छोड़कर अन्य पापग्रहों से अदृष्ट हो वह वली होती हैं।।६५।।

दृष्टिविचारः।

चन्द्रर्काचार्यशुक्रज्ञाः पादं मित्रभकर्मणि ।
पश्यन्ति च शनिः पूणमथ धर्मसुतौ गुरुः ।।६६।।

चन्द्रमा, सूर्य, गुरु, शुक्र, बुध और भौम तीसरे और दशम को पाद दृष्टि से देखते हैं। शनि ३।१० को पूर्ण दृष्टि से देखता है, ९।५ को सभीं ग्रह दो

चरण से किन्तु गुरु पूर्ण दृष्टि से देखता है।।६६।।

सर्वेऽर्धबंधुमृत्यु च पूर्ण पश्यति भूमिजः ।
परे त्रिपादं पूर्ण च सर्वे पश्यंति सप्तमम् ।।६७।।

४।८ स्थान को भौम को छोड़कर सभी ग्रह तीन चरण से देखते हैं किन्तु भौम पूर्णदृष्टि से देखता है और सप्तम को सभी पूर्णदृष्टि से देखते हैं।।६७।।

अथ ग्रहाणां स्थानदिग्वलम् –

उच्चमूलसुहृत्स्वर्क्षस्वद्रेष्काणनवांशके ।
स्थितस्य स्थानवीर्यं स्यात्कुजार्कौदशमेशनिः ।।६८।।

प्रश्न में जो ग्रह अपने उच्च, मूलत्रिकोण, मित्र, अपनी राशि, अपने द्रेष्काण, अपने नवांश में हो तो वह स्थानबली होता हैं। भौम, सूर्य दशम स्थान में।।६८।।

सप्तमेज्ञगुरुलग्ने चन्द्रशुक्रौ तु वेश्मनि ।
दिग्वीर्य संयुता एते नान्यत्र प्रश्न कर्मणि ।।६९।।

सातवें स्थान में शनि, बुध, गुरु लग्न में, चन्द्र, शुक्र चौथे भाव में दिग्बली होते हैं।।६८-६९।।

अयनबलम् –

मृगादिराशिषट्कस्थाश्चंद्रार्कज्ञार्यभार्गवाः ।
बलवंतः कुजार्कीतु कर्कटादिगतौ तथा ।।७०।।

मकर से ६ राशि तक चंद्र, सूर्य, बुध, गुरु और शुक्र अयन बल को प्राप्त करते हैं। कर्क से ६ राशि के अन्दर भौम शनि अयन बल से युक्त होते हैं।।७०।।

अथ पक्ष चेष्टा दिवा-रात्रि बलम् –

पूर्वपक्षे शुभे कृष्णे पापास्तुवलिनस्तथा ।
वक्रिणो वलिनः खेटाश्चेष्टावलसमन्वितः ।।७१।।

शुक्ल पक्ष में शुभग्रह और कृष्णपक्ष में पापग्रह बली होते हैं। वक्रीग्रह चेष्टाबली होते हैं।।७१।।

शुभाः पापादिवारात्रौ वलिनः स्युः क्रमात्स्मृताः ।
निसर्गवलिनः प्राग्वदेवं स्युः प्रश्नकर्मणि ।।७२।।

शुभग्रह दिवाबली और पापग्रह रात्रिबली होते हैं। निसर्गबल पूर्वोक्तवत् जानना चाहिये। इस प्रकार प्रश्नकाल में बलों को जानना चाहिये।।७२।।

दशवर्गबलम् –

लग्नहोराद्रेष्काणार्कनवांशाः सप्तमांशकः ।
कलांशः कालहोरा च त्रिंशांशःषष्ठिभाजकः।।७३।।
पूर्वपूर्वोवलीप्रोक्ता न बली चोत्तरोत्तरः ।

लग्न, होरा, द्रेष्काण, द्वादशांश, नवांश, सप्तांश, षोडशांश, कालहोरांश, त्रिंशांश और षष्ठ्यंश यह उत्तरोत्तर हीनबली होते हैं।।७३।।

प्रश्नलग्नाज्जन्मलग्नादीनाज्ञानम् –

प्रश्नलग्नं कलीकृत्य नवघ्नं भेन भाजितम् ।।७४।।

प्रश्न लग्न का कला करके नव से गुणाकर २७ का भाग देने से।।७४।।

लब्धं नवांशकं ज्ञेयं शिष्टमेकत्रसंस्थिते ।
लब्धं सप्तगुणं वेदभक्तं शिष्टमिहांशकः ।।७५।।

लब्धिनवांश होता है शेष को पृथक् रखना, लब्धि को सात से गुणाकर ४ से भाग देना लब्धि नवांश होती है।।७५।।

नवांशसदृशं लग्नं यद्वा त्रिघ्नार्कभाजितम् ।
सप्ताप्तशिष्टं लग्नं च सप्तमे मासि निश्चिते ।।७६।।
सौम्येतदेव कर्मर्क्षं जन्मर्क्षं वा भवेद्बलम् ।

इसी के समान जन्मलग्न होता है। अथवा त्रिगुणित करके १२ से भाग देना जो शेष हो वही जन्मलग्न होता है। अथवा शेष को सात से भाग देने से जो आवे वह सातवें मास का लग्न जानना। शुभग्रह की राशि हो तो वही कर्मनक्षत्र वा जन्मनक्षत्र जानना।।७६।।

शास्त्रस्य वेदांगत्वप्रतिपादनम् –

इदं शास्त्रं मया प्रोक्तमाद्यंत तव सुव्रत ।।७७।।

हे मैत्रेय! मैंने जो यह आद्यंत ज्योतिष शास्त्र को कहा है।।७७।।

नाशिष्याय प्रदातव्यं नापुत्राय कदाचन ।
गुणशीलयुतायैव शिष्यायैव द्विजातये ।
दातव्यं तु प्रयत्नेन वेदांगमिदमुच्यते ।।७८।।

वह कुपुत्र, कुशिष्य को कभी नहीं देना। जो गुणी, शीलसंयुक्त शिष्य हो और द्विजाति हो उसे प्रयत्नपूर्वक देना चाहिये क्योंकि यह वेदांग है।।७८।।

इति पाराशरहोरायामुत्तरार्धेऽष्टादशोऽध्यायः।।१८।।

अध्यायानुक्रमः ।। ९९ ।।

अध्यानुक्रमं वक्ष्ये त्वादौ शास्त्रावतारणम् ।
प्रादुर्भावो ग्रहाणां तु द्वितीये च प्रकीर्त्तितः ।।१।।
ततो राशिस्वभावश्च चतुर्थे दृष्टिवर्णनम् ।
गर्भाधानं ततः पश्चात्सूतिकाविधिरेव च ।।२।।
अरिष्टं सप्तमाध्याये सुतस्य तदनंतरम् ।
पित्रोश्च मातुलादीनां तद्भंगोदशमात्स्मृतः ।।३।।
धूमाद्येकादशे मिश्रः पंचागानां फलं तथा ।
कारकादि फलं तद्वद्भावानां च फलं तथा ।।४।।
द्वादश द्वादशाऽध्याये द्विग्रहाद्याश्चषट्स्मृताः ।
अष्टवर्गादि चैकस्मिन्नाभसादिस्तु चापरे ।।५।।
चिरायुषादि योगाश्च पंचाध्यायास्ततः परम् ।
राजयोगास्तथावस्था अंतर्दायविधिस्ततः ।।६।।
दायानां च फलं सप्तस्वांतर्दायस्त्रयोदश ।
लक्षणं शुभवर्गाणां योगादिषुं बलं ततः ।।७।।
एवमशीतिरध्यायाः पूर्वभागे समीरिताः ।

स्पष्ट है।।१-७।।

उत्तरार्धस्यानुक्रमणिका–

कलौ युगे ततः प्रोक्तं प्रथमेऽष्टकवर्गकः ।।८।।
द्वितीये भावदृग्वीर्यमिष्टकष्टबलं ततः ।
चतुर्थे रश्मिसंभूतिरिष्टकष्टं द्विजोत्तम ।।९।।
लोकयात्रैकदेशे च पंचमे च ततः परम् ।
त्रयं च लोकयात्राणादेकदेशस्यचाष्टमे ।।१०।।
नवमे लोकयात्रा च दशमे दाय एव च ।
अंतर्दायस्तथाध्याये दायानां विषयस्ततः ।।११।।

त्रयोदशे तथा भाग्यं कलांशादि फलं द्विज ।
चतुर्दशेऽब्दचर्या च विजानीहि ततः परम् ।।१२।।
अब्दचर्या फलं पश्चान्मासचर्या फलं ततः ।
दिनचर्या ततः प्रश्न जातकं प्रव्रवीति हि ।।१३।।
अध्यायानुक्रमं पश्चाद्विंशे शास्त्रफलं द्विज ।
एवं होराशताध्यायी सर्वपाप प्रणाशिनी ।
युगेषु च चतुर्ष्वेव प्रत्यक्षफलदायिनी ।।१४।।

स्पष्ट ही है।।८-१४।।

इति पाराशर होरायामुत्तरार्धे एकोनविंशतितमोऽध्यायः।।१९।।

शास्त्र फलं तथा शास्त्र परम्परा।।२०।।

होराशास्त्रमिदं सर्वं श्रद्धाविनयसंयुतः ।
श्रुत्वा गुरुमुखादेव बुद्धिमानवलोक्य च ।।१।।

इस होराशास्त्र को बुद्धिमान् श्रद्धा विजय से युक्त होकर गुरु के मुख से सुनकर और देखकर।।१।।

यो यानाति सशास्त्रार्थं सर्वपापैः प्रमुच्यते ।
श्रावयेद्दंर्शयेद्विद्वानन्यो गर्गो द्विजोत्तमः ।।२।।
सर्वपापविनिर्मुक्तोब्रह्मलोकं स गच्छति ।

जो शास्त्र के अर्थ को जानता है वह सभी पापों से छूट जाता है और ऐसा विद्वान दूसरे को सुनाता और दिखाता है वह दूसरा गर्ग होता है और सभी पापों से मुक्त होकर ब्रह्मलोक को जाता है।।२।।

वेदेभ्यश्चसमुद्धृत्यब्रह्मा प्रोवाच विस्तृतम् ।।३।।

यह वही वेदाङ्ग और वेद का नेत्ररूपी शास्त्र है जिसे ब्रह्माजी ने वेद से निकाल कर गर्गऋषि को बताया था और गर्गजी से मैंने सुना।।३।।

शास्त्रमाद्यं तदेवेदं वेदाङ्गं वेदचक्षुषी ।
गार्गस्तस्मादिदं प्राह मया तस्माद्यथातथा ।।४।।
तदुक्तं तव मैत्रेय शास्त्रमाद्यंतमेव हि ।।५।।

हे मैत्रेय ! उसी शास्त्र को आद्यंत मैंने तुमसे कहा है।।१-५।।

इति पाराशरहोरायामुत्तरार्धे विंशोऽध्यायः।।२०।।

अथान्तरदशादिचक्रम् ।

सूर्यान्तर्दशाचक्रम् ।

ग्र	सू	चं	मं	रा	बृ	श	बु	के	शु
व	०	०	०	०	०	०	०	०	१
मा	३	६	४	१०	९	११	१०	४	०
दि	१८	०	६	२४	१८	१२	६	६	०

चन्द्रान्तर्दशाचक्रम् ।

ग्र	चं	मं	रा	बृ	श	बु	के	शु	सू
व	०	०	१	१	१	१	०	१	०
मा	१०	७	६	४	७	५	७	८	६
दि.	०	०	०	०	०	०	०	०	०

भौमान्तर्दशाचक्रम् ।

ग्र	मं	रा	बृ	श	बु	के	शु	सू	चं
व	०	१	०	१	०	०	१	०	०
मा	४	०	११	१	११	४	२	४	७
दि	२७	१८	६	९	२७	२७	०	६	०

राहोरन्तर्दशाचक्रम् ।

ग्र	रा	बृ	श	बु	के	शु	सू	चं	मं
व	२	२	२	२	१	३	०	१	१
मा	८	४	१०	६	०	०	१०	६	०
दि	१२	२४	६	१८	१८	०	२४	०	१८

गुरोरन्तर्दशाचक्रम् ।

ग्र	बृ	श	बु	के	शु	सू	चं	मं	रा
व	२	२	२	०	२	०	१	०	२
मा	१	६		११	८	९	४	११	४
दि	१८	१२	६	६	०	१८	०	६	२४

शनेरन्तर्दशाचक्रम् ।

ग्र	श	बु	के	शु	सू	चं	मं	रा	बृ
व	३	२	१	३	०	१	१	२	२
मा	०	८	१	२	११	७	१	१०	६
दि	३	९	९	०	१२	०	९	६	१२

बुधान्तर्दशाचक्रम् ।

ग्र	बु	के	शु	सू	चं	मं	रा	बृ	श
व	२	०	२	०	१	०	२	२	२
मा	४	११	१०	१०	५	११	६	३	८
दि	२७	२७	०	६	०	२७	१८	६	९

केतोरन्तर्दशाचक्रम् ।

ग्र	के	शु	सू	चं	मं	रा	बृ	श	बु
व	०	१	०	०	०	१	०	१	०
मा	४	२	४	७	४	३	११	१	११
दि	२७	०	६	०	२७	१८	६	९	२७

भृगोरन्तर्दशाचक्रम्।

ग्र	शु	सू	चं	मं	रा	बृ	श	बु	के
व	३	१	१	१	३	२	३	२	१
मा	४	०	८	२	०	८	२	१०	२
दि	०	०	०	०	०	०	०	०	०

सूर्य की दशा में सूर्य के अन्तर में प्रत्यन्तर

ग्र	सू	चं	मं	रा	बृ	श	बु	के	शु
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	०	०	०	०	०	०	०	०	०
दि	५	९	६	१६	१४	१७	१५	६	१८
घ	०	०	१८	१२	२४	६	१८	१८	०

सूर्य की दशा में चन्द्रमा के अन्तर में चन्द्रमा का प्रत्यंतर

ग्र	चं	मं	रा	बृ	श	बु	के	शु	सू
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	०	०	०	०	०	०	०	१	०
दि	१५	१०	२७	२४	२८	२५	१०	०	९
घ	०	३०	०	०	३०	३०	३०	०	०

सूर्य की दशा में भौम के अन्तर में प्रत्यंतर

ग्र	मं	रा	बृ	श	बु	के	शु	सू	चं
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	०	०	०	०	०	०	०	०	०
दि	७	१८	१६	१९	१७	७	२१	६	१०
घ	२१	५४	४८	५७	५१	२१	०	१८	०३

सूर्य की दशा में राहु के अन्तर में प्रत्यन्तर

ग्र	रा	बृ	श	बु	के	शु	सू	चं	मं
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	१	१	१	०	०	१	०	०	०
दि	१८	१३	२१	१५	१८	२४	१६	२७	१८
घ	३६	१२	१८	५४	५४	०	१२	०	५४

सूर्ग की दशा में गुरु के अंतर में प्रत्यन्तर

ग्र	बृ	श	बु	के	शु	सू	चं	मं	रा
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	१	१	१	०	१	०	०	०	१
दि	८	१५	१०	१६	१८	१४	२४	१६	१३
घ	२४	३६	४८	४८	०	२४	०	४८	१२

सूर्य की दशा में शनि के अन्तर में प्रत्यंतर

ग्र	श	बु	के	शु	सू	चं	मं	रा	बृ
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	१	१	०	१	०	०	०	१	१
दि	२४	१८	१९	२७	१७	२८	१९	१९	१२
घ	९	२७	५७	०	६	३०	५७	१८	३६

सूर्य की दशा में बुध के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	बु	के	शु	सू	चं	मं	रा	बृ	श
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	१	०	१	०	०	०	१	१	१
दि	१३	१७	२१	१५	२५	१७	१५	१०	१८
घ	२१	५१	०	१८	३०	५१	५४	४८	२७

सूर्य की दशा में केतु के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	के	शु	सू	चं	मं	रा	बृ	श	बु
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	०	०	०	०	०	०	०	०	०
दि	७	२१	६	१०	७	१८	१६	१९	१७
घ	२१	०	१८	३०	२१	५४	४८	५७	५१

सूर्य की दशा में शुक्र के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	शु	सू	चं	मं	रा	बृ	श	बु	के
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	२	०	१	०	१	१	१	१	०
दि	०	१८	०	२१	२४	१८	२७	२१	२१
घ	०	०	०	०	०	०	०	०	०

चन्द्रमा की दशा में चन्द्रमा के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	चं	मं	रा	वृ	श	बु	के	शु	सू
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	०	०	१	१	१	१	०	१	०
दि	२५	१७	१५	१०	१७	१२	१७	२०	१५
घ	०	३०	०	०	३०	३०	३०	०	०

चन्द्रमा की दशा में भौम के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	मं	रा	वृ	श	बु	के	शु	सू	चं
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	०	१	०	१	०	०	१	०	०
दि	१२	१	२८	३	२९	१२	५	१०	१७
घ	१५	३०	०	१५	४५	१५	०	३०	३०

चन्द्रमा की दशा में राहु के अन्तर में प्रत्यंतर

ग्र	रा	वृ	श	बु	के	शु	सू	चं	मं
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	२	२	२	०	१	३	०	१	१
दि	२१	१२	२५	१६	१	०	२७	१५	१
घ	०	०	३०	३०	३०	०	०	०	३०

चन्द्रमा की दशा में गुरु के अन्तर में प्रत्यंतर

ग्र	बृ	श	बु	के	शु	सू	चं	मं	रा
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	२	२	२	०	२	०	१	०	२
दि	४	१६	८	२८	२०	२४	१०	१८	१२
घ	०	०	०	०	०	०	०	०	०

चन्द्रमा की दशा में शनि के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	श	बु	के	शु	सू	चं	मं	रा	वृ
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	३	२	१	३	०	१	१	२	२
दि	०	२०	३	५	२८	१७	३	२५	१६
घ	१५	४५	१५	०	३०	३०	१५	३०	०

चन्द्रमा की दशा में बुध के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	बु	के	शु	सू	चं	मं	रा	वृ	श
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	२	०	२	०	१	०	२	२	२
दि	१२	२९	२५	२५	१२	२९	१६	८	२०
घ	१५	४५	०	३०	३०	४५	३०	०	४५

चन्द्रमा की दशा में केतु के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	के	शु	सू	चं	मं	रा	बृ	श	घु
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	०	१	०	०	०	१	०	१	०
दि	१२	५	१०	१७	१२	१	२८	३	२९
घ	१५	०	३०	३०	१५	३०	०	२५	४५
.									

चन्द्रमा की दशा में शुक्र के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	शु	सू	चं	मं	रा	बृ	श	बु	के
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	३	१	१	१	३	२	३	२	१
दि	१०	०	२०	५	०	२०	५	२५	५
घ	०	०	०	०	०	०	०	०	०

चन्द्रमा की दशा में सूर्य के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	सू	चं	मं	रा	बृ	श	बु	के	शु
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	०	०	०	०	०	०	०	०	१
दि	९	१५	१०	२७	२४	२८	२५	१०	०
घ	०	०	३०	०	०	३०	३०	३०	०

भौम की दशा में भौम के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	मं	रा	बृ	श	बु	के	शु	सू	चं
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	०	०	०	०	०	०	०	०	०
दि	८	२२	१९	२३	२०	८	२४	७	१२
घ	३४	३	३६	१६	४९	३४	३०	२१	१५
प	३०	३०	०	३०	३०	३०	०	०	०

भौम की दशा में राहु के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	रा	बृ	श	बु	के	शु	सू	चं	मं
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	१	१	१	१	०	२	०	१	०
दि	२६	२०	२९	२३	२२	३	१८	१	२२
घ	४२	२४	५१	३३	३	०	५४	३०	३
प.									

भौम की दशा में गुरु के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	बृ	श	बु	के	शु	सू	चं	मं	रा
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	१	१	१	०	१	०	०	०	१
दि	१४	२३	१७	१९	२६	१६	२८	१९	२०
घ	४८	१२	३६	३६	०	४८	०	३६	२४

भौम की दशा में शनि के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	श	बु	के	शु	सू	चं	मं	रा	बृ
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	२	१	०	२	०	१	०	१	१
दि	३	२६	२३	६	१९	३	२३	२९	२३
घ	१०	३१	१६	३०	५७	१५	१६	५१	१२
प	३०	३०	३०	०	०	०	३०	०	०

भौम की दशा में बुध के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	बु	के	शु	सू	चं	मं	रा	बृ	श
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
दि	१	०	१	०	०	०	१	१	१
मा	२०	२०	२९	१७	२९	२०	२३	१७	२६
घ	३९	४९	३०	५१	४५	४९	३३	३६	३१
प	३०	३०	०	०	०	३०	०	०	३०

भौम की दशा में केतु के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	के	शु	सू	चं	मं	रा	बृ	श	बु
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	०	०	०	०	०	०	०	०	०
दि	८	२४	७	१२	८	१२	१९	२३	२०
घ	३४	३०	२१	१५	३४	३०	३६	१६	४९
प	३०	०	०	०	३०	०	०	३०	३०

भौम की दशा में शुक्र के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	शु	सू	चं	मं	रा	बृ	श	बु	के
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
दि	२	०	१	०	२	१	२	१	०
मा	१०	२१	५	२४	३	२६	६	२९	२४
घ	०	०	०	३०	०	०	३०	३०	३०

भौम की दशा में सूर्य के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	सू	चं	मं	रा	बृ	श	बु	के	शु
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	०	०	०	०	०	०	०	०	०
दि	६	१०	७	१८	१६	१९	१७	७	२१
घ	१८	३०	२१	५४	४८	५७	५१	२१	०

भौम की दशा में चंद्रमा के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	चं	मं	रा	बृ	श	बु	के	शु	सू
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	०	०	१	०	१	०	०	१	०
दि	१७	१२	१	२८	३	२९	१२	५	१०
घ	३०	१५	३०	०	१५	४५	१५	०	३०

राहु की दशा में राहु के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	रा	बृ	श	बु	के	शु	सू	चं	मं
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	४	४	५	४	१	५	१	२	१
दि	२५	९	३	१७	२६	४२	१८	२१	२६
घ	४८	३६	५४	४२	३६	०	३६	०	४२

राहु की दशा में गुरु के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	बृ	श	बु	के	शु	सू	चं	मं	रा
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	२	४	४	०	४	०	२	०	४
दि	५५	१६	२	५०	२४	४३	१२	५०	९
घ	१२	४८	२४	२४	०	१२	०	२४	३६

राहु की दशा में शनि के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	श	बु	के	शु	सू	चं	मं	रा	बृ
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	५	४	१	५	१	२	१	५	४
दि	१२	२५	२९	२१	२१	२५	२९	३	१६
घ	२७	२१	५१	०	१८	३०	५१	५४	४८

राहु की दशा में बुध के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	बु	के	शु	सू	चं	मं	रा	बृ	श
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	४	१	५	१	२	१	४	४	४
दि	१०	२३	३	१५	१६	२३	१७	२	२५
घ	३	३३	०	५४	३०	३३	४२	२४	२१

राहु की दशा में केतु के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	के	शु	सू	चं	मं	रा	बृ	श	बु
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	०	२	०	१	०	१	१	१	१
दि	२२	३	१८	१	२२	२६	२०	२९	२३
घ	३	०	५४	३०	३	४२	२४	५१	३३

राहु की दशा में शुक्र के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	शु	सू	चं	मं	रा	बृ	श	बु	के
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	६	१	३	२	५	४	५	५	२
दि	०	२४	०	३	१२	२४	२१	३	३
घ	०	०	०	०	०	०	०	०	०

राहु की दशा में सूर्य के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	सू	चं	मं	रा	बृ	श	बु	के	शु
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	०	०	०	१	१	१	१	०	१
दि	१६	[illegible]	१८	१८	१३	२१	१५	१८	२४
घ	१२	०	५४	३६	१२	१८	५४	५४	०

राहु की दशा में चन्द्रमा के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	सू	चं	मं	रा	बृ	श	बु	के	शु
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	०	१	१	२	२	२	२	१	३
दि	२७	१५	१	२१	१२	२५	१६	१	०
घ	०	०	३०	०	०	३०	३०	३०	०

राहु की दशा में भौम के अन्तर में प्रत्यंतर

ग्र	मं	रा	बृ	श	बु	के	शु	सू	चं
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	०	१	१	१	१	०	२	०	१
दि	२२	२६	२०	२९	२३	२२	३	१८	१
घ	३	४२	२४	५१	३३	३	०	५४	३०

गुरु की दशा में गुरु के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	बृ	श	बु	के	शु	सू	चं	मं	रा
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	३	४	३	१	४	१	२	१	३
दि	१२	१	१८	१४	८	८	४	१४	२५
घ	२४	३६	४८	४८	०	२४	०	४८	१२

गुरु की दशा में शनि के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	श	बु	के	शु	सू	चं	मं	रा	बृ
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	४	४	१	५	१	२	१	४	४
दि	२४	९	२३	२	१५	१६	२३	१६	१
घ	२४	१२	१२	०	३६	०	१२	४८	३६

गुरु की दशा में बुध के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	बु	के	शु	सू	चं	मं	रा	बृ	श
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	३	१	४	१	२	१	४	३	४
दि	२५	१७	१६	१०	८	१७	२	१८	९
घ	३६	३६	०	४८	०	३६	२४	४८	१२

गुरु की दशा में केतु के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	के	शु	सू	चं	मं	रा	बृ	श	बु
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	०	१	०	०	०	१	१	१	१
दि	१९	२६	१६	२८	१९	२०	१४	२३	१७
घ	३६	०	४८	०	३६	२४	४	११	३६

गुरु की दशा में शुक्र के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	शु	सू	चं	मं	रा	बृ	श	बु	के
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	५	१	२	१	४	४	५	४	१
दि	१०	१८	२०	२६	२४	८	२	१६	२६
घ	०	०	०	०	०	०	०	०	०

गुरु की दशा में सूर्य के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	सू	चं	मं	रा	बृ	श	बु	के	शु
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	०	०	०	१	१	१	१	०	१
दि	१४	२४	१६	१३	८	१५	२०	१६	१८
घ	२४	०	४८	१२	२४	३६	४८	४८	०

गुरु की दशा में चंद्रमा के अंतर प्रत्यंतर

ग्र	चं	मं	रा	बृ	श	बु	के	शु	सू
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	१	०	२	२	२	२	०	२	०
दि	१०	२८	१२	९	१६	८	२८	२०	२४
घ	०	०	०	०	०	०	०	०	०

गुरु की दशा में भौम के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	मं	रा	बृ	श	बु	के	शु	सू	चं
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	०	१	१	१	१	०	१	०	०
दि	१९	२०	१४	२३	१७	१९	२६	१६	२८
घ	३६	२४	४८	१२	३६	३६	०	४८	०

गुरु की दशा में राहु के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	रा	बृ	श	बु	के	शु	सू	चं	मं
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	४	३	४	४	१	४	१	२	१
दि	९	२५	१६	२	२०	२४	१३	१२	२०
घ	३६	१२	४८	२४	२४	०	१६	०	२४

शनि की दशा में शनि के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	श	बु	के	शु	सू	चं	मं	रा	बृ
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	५	५	२	६	१	३	२	५	४
दि	२१	३	३	०	२४	०	३	१२	२४
घ	२८	२५	१०	३०	९	१५	२०	२७	२४
प	३०	३०	३०	०	०	०	३०	०	०

शनि की दशा में बुध के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	बु	के	शु	सू	चं	मं	रा	बृ	श
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	४	१	५	१	२	१	४	४	५
दि	१७	२६	११	१८	२०	२६	२५	९	३
घ	१६	३१	३०	२७	४५	३१	२१	१२	२५
प	३०	३०	०	०	०	३०	०	०	३०

शनि की दशा में केतु के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	के	शु	सू	चं	मं	रा	बृ	श	बु
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	०	२	०	१	०	१	१	२	१
दि	२३	६	१९	३	२३	२९	२३	३	२६
घ	१६	३०	५७	१५	१६	५१	१२	१०	३१
प	३०	०	०	०	३०	०	०	३०	३०

शनि की दशा में शुक्र के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	शु	सू	चं	मं	रा	बृ	श	बु	के
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
दि	६	१	३	२	५	५	६	५	२
मा	१०	२७	५	६	२१	२	०	११	६
घ	०	०	०	३०	०	०	३०	३०	३०

शनि की दशा में सूर्य के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	सू	चं	मं	रा	बृ	श	बु	के	शु
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	०	०	०	२	२	२	२	०	१
दि	१७	२९	२०	२३	१७	२६	२०	२०	२९
घ	४५	३०	३९	६	१२	३	९	३९	०

शनि की दशा में चन्द्रमा के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	चं	मं	रा	बृ	श	बु	के	शु	सू
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	१	१	२	२	३	२	१	३	०
दि	१७	३	२५	१६	०	२०	३	५	२८
घ	३०	१५	३०	०	१५	४५	१५	०	३०

शनि की दशा में भौम के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	मं	रा	बृ	श	बु	के	शु	सू	चं
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	०	०	१	२	१	०	२	०	१
दि	२३	२९	२३	३	२६	२३	६	१९	३
घ	१६	५१	१२	१०	३१	१६	३०	५७	१५
प	३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	०

शनि की दशा में राहु के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	रा	बृ	श	बु	के	शु	सू	चं	मं
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	५	४	५	४	१	५	१	२	१
दि	३	१६	१२	२५	२९	२१	२१	२५	२९
घ	५४	४८	२७	२१	५१	०	१८	३०	५१
प	०	०	०	०	०	०	०	०	०

शनि की दशा में गुरु के अन्तर में प्रत्यंतर

ग्र	बृ	श	बु	के	शु	सू	चं	मं	रा
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	४	४	४	१	५	१	२	१	४
दि	१	२४	९	२३	२	१५	१६	२३	१६
घ	३६	२७	१२	१२	०	३६	०	१२	४८

बुध की दशा में बुध के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	बु	के	शु	सू	चं	मं	रा	बृ	श
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	४	१	४	१	२	१	४	३	४
दि	२	२०	२४	१३	१२	२४	१०	२५	१७
घ	४९	३४	३०	२१	१५	३४	३	३६	१६
प	३०	३०	०	०	०	३०	०	०	३०

बुध की दशा में केतु के अन्तर में प्रत्यंतर

ग्र	के	शु	सू	चं	मं	रा	बृ	श	बु
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	०	१	०	०	०	१	१	१	१
दि	२०	२९	१७	२९	२०	२३	१७	२६	२०
घ	४९	३०	५१	४५	४९	३३	३६	३१	३४
प	३०	०	०	०	३०	०	०	३०	३०

बुध की दशा में शुक्र के अन्तर में प्रत्यंतर

ग्र	शु	सू	चं	मं	रा	बृ	श	बु	के
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	५	१	२	१	५	४	५	४	१
दि	२०	२१	२५	२९	३	१६	११	२४	२९
घ	०	०	०	३०	०	०	३०	३०	३०

बुध की दशा में सूर्य के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	सू	चं	मं	रा	बृ	श	बु	के	शु
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	०	०	०	१	१	१	१	०	१
दि	१५	२५	१७	१५	१०	१८	१३	१७	२१
घ	१८	३०	५१	५४	४८	२७	२१	५१	०

बुध की दशा में चंद्रमा के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	चं	मं	रा	बृ	श	बु	के	शु	सू
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	१	०	२	२	२	२	०	२	०
दि	१२	२९	१६	८	२०	१२	२९	२५	२५
घ	३०	४५	३०	०	४५	१५	४५	०	३०

बुध की दशा में भौम के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	मं	रा	बृ	श	बु	के	शु	सू	चं
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	०	१	१	१	१	०	१	०	०
दि	२०	२३	१७	२६	२०	२०	२९	१७	२९
घ	४९	३३	३६	३१	३४	४९	३०	५१	४५
प	३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	०

बुध की दशा में राहु के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	रा	बृ	श	बु	के	शु	सू	चं	मं
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	४	४	४	४	१	५	१	२	१
दि	१७	२	२५	१०	२३	३	१५	१६	२३
घ	४२	२४	२१	३	३३	०	५४	३०	३३

बुध की दशा में गुरु के अन्तर में प्रत्यंतर

ग्र	बृ	श	बु	के	शु	सू	चं	मं	रा
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	३	४	३	१	४	१	२	१	४
दि	१८	९	२५	१७	१६	१०	८	१७	२
घ	४८	१२	३६	३६	०	४८	०	३७	२४

बुध की दशा में शनि के अन्तर में प्रत्यंतर

ग्र	श	बु	के	शु	सू	चं	मं	रा	बृ
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	५	४	१	५	१	२	१	४	४
दि	३	१७	२६	११	१८	२०	२९	२५	९
घ	२५	१६	३१	३०	२७	४५	३१	२१	१९
प	३०	३०	३०	०	०	०	३०	०	०

केतु की दशा में केतु के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	के	शु	सू	चं	मं	रा	बृ	श	बु
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	०	०	०	०	०	०	०	०	०
दि	८	२४	७	१२	८	२२	१९	२३	२०
घ	३४	३०	२१	१५	३	३०	३६	२६	४९
प	३०	०	०	०	३०	०	०	०	३०

केतु की दशा में शुक्र के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	शु	सू	चं	मं	रा	बृ	श	बु	के
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	२	०	१	०	२	०	२	१	०
दि	१०	२१	५	५४	३	१	६	२९	२४
घ	०	०	०	३०	०	२६	३०	३०	३०

केतु की दशा में सूर्य के अन्तर में प्रत्यंतर

ग्र	सू	चं	मं	रा	बृ	श	बु	के	शु
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	०	०	०	०	०	०	०	०	०
दि	६	१०	७	१८	१६	१९	१७	७	२१
घ	१८	३०	२१	५४	४८	५७	५१	२१	०

केतु की दशा में चन्द्रमा के अन्तर में प्रत्यंतर

ग्र	चं	मं	रा	बृ	श	बु	के	शु	सू
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	०	०	१	०	१	०	०	१	०
दि	१७	१२	१	२८	३	२९	१२	५	१०
घ	३०	१५	३०	०	२५	४५	१५	०	३०

केतु की दशा में भौम के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	मं	रा	बृ	श	बु	के	शु	सू	चं
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	०	०	०	०	०	०	०	०	०
दि	८	२२	१९	१३	२०	८	२४	७	१२
घ	३४	३	३६	१६	४९	३४	३०	२१	१५
प	३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	०

केतु की दशा में राहु के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	रा	बृ	श	बु	के	शु	सू	चं	मं
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	१	१	१	१	०	२	०	१	०
दि	२६	२०	२९	२३	२२	३	१८	१	२२
घ	२४	२४	५१	३३	३	०	५४	३०	०

केतु की दशा में गुरु के अन्तर में प्रत्यंतर

ग्र	बृ	श	बु	के	शु	सू	चं	मं	रा
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
भा	१	१	१	०	१	०	०	०	१
दि	१४	२३	१७	१९	२६	१६	२८	१९	२०
घ	४८	१२	३३	३३	०	४८	०	३६	२४

केतु की दशा में शनि के अन्तर में प्रत्यंतर

ग्र	श	बु	के	शु	सू	चं	मं	रा	बृ
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	२	१	०	२	०	१	०	१	१
दि	३	२६	२३	६	१९	३	२३	२९	२३
घ	१०	३१	१६	३०	५७	१५	१६	५१	१२
प	३०	३०	३०	०	०	०	३०	०	०

केतु की दशा में बुध के अन्तर में प्रत्यंतर

ग्र	बु	के	शु	सू	चं	मं	रा	बृ	श
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	१	०	१	०	०	०	१	१	१
दि	२०	२०	२९	१७	२९	२०	२३	१७	२६
घ	३४	४९	३०	५१	४५	४९	३३	३६	३१
प	३०	३०	०	०	०	३०	०	०	३०

शुक्र की दशा में शुक्र के अन्तर में प्रत्यंतर

ग्र	शु	सू	चं	मं	रा	बृ	श	बु	के
व	६	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	२०	२	३	२	६	५	६	५	२
दि	२०	०	१०	१०	०	१०	१०	२०	१०
घ	०	०	०	०	०	०	०	०	०

शुक्र की दशा में सूर्य के अन्तर में प्रत्यंतर

ग्र	सू	चं	मं	रा	बृ	श	बु	के	शु
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	०	१	०	१	१	१	१	०	२
दि	१८	०	२१	२४	१८	२७	२१	२१	०
घ	०	०	०	०	०	०	०	०	०

शुक्र की दशा में चन्द्रमा के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	चं	मं	रा	बृ	श	बु	के	शु	सू
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	१	१	३	२	३	२	१	३	१
दि	२०	५	०	२०	५	२५	५	१०	०
घ	०	०	०	०	०	०	०	०	०

शुक्र की दशा में भौम के अन्तर में प्रत्यंतर

ग्र	मं	रा	बृ	श	बु	के	शु	सू	चं
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	०	२	१	२	१	०	२	०	१
दि	२४	३	२६	६	२९	२४	१०	२१	५
घ	३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	०

शुक्र की दशा में राहु के अन्तर में प्रत्यंतर

ग्र	रा	बृ	श	बु	के	शु	सू	चं	मं
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	५	४	५	५	२	६	१	३	२
दि	१२	२४	२१	३	३	०	२४	०	३
घ	०	०	०	०	०	०	०	०	०

शुक्र की दशा में गुरु के अन्तर में प्रत्यंतर

ग्र	बृ	श	बु	के	शु	सू	चं	मं	रा
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	४	५	४	१	५	१	२	१	४
दि	८	२	१६	२६	१०	१८	२०	२६	२४
घ	०	०	०	०	०	०	०	०	०

शुक्र की दशा में शनि के अन्तर में प्रत्यंतर

ग्र	श	बु	के	शु	सू	चं	मं	रा	बृ
प	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	६	५	२	६	१	३	२	५	५
दि	०	११	६	१०	२७	५	६	२१	२
घ	३०	३०	३०	०	०	०	३०	०	०

शुक्र की दशा में बुध के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	बु	के	शु	सू	चं	मं	रा	बृ	श
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	४	१	५	१	२	१	५	४	५
दि	२४	२९	२०	२१	२५	१९	०	१६	११
घ	३०	३०	०	०	०	३०	३	०	३०

शुक्र की दशा में केतु के अंतर में प्रत्यंतर

ग्र	के	शु	सू	चं	मं	रा	बृ	श	बु
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	०	२	०	१	०	२	१	२	१
दि	२४	१०	२१	५	२४	३	२४	६	२९
घ	३०	०	०	०	३०	०	०	३०	३०

इति प्रत्यंतर्दशा चक्रम्।

अथ नवांश दशावर्ष अन्तर्दशादिचक्रम्।

मेषांश में मेष दशा वर्ष ७ में अन्तर्दशा

	मे	वृ	मि	क	सि	क	तु	बृ	ध
व	०	१	०	१	०	०	१	०	०
मा	५	१	७	५	४	७	१	५	८
दि	२६	१३	१६	१९	६	१६	१३	२६	१२
घ	२४	१२	४८	१२	०	४८	१२	२४	०
प	०	०	०	०	०	०	०	०	०

मेषांश में वृष दशा वर्ष १६ में अन्तर्दशा

	वृ	मि	क	सि	क	तु	बृ	ध	मे
व	२	१	३	०	१	२	१	१	१
मा	६	५	४	९	५	६	१	६	१
दि	२१	८	९	१८	०	२१	१३	०	१३
घ	३६	२४	३६	०	२४	३६	१२	०	१२
प	०	०	०	०	०	०	०	०	०

मेषांश में मिथुन दशा वर्ष ९ में अन्तर्दशा

	मि	क	सि	कं	तु	बृ	ध	मे	बृ
व	०	१	०	०	१	०	०	०	१
मा	९	१०	५	९	५	७	१०	७	५
दि	२१	२०	१२	२१	८	१६	२४	१६	८
घ	३६	२४	०	३६	२४	४८	०	४८	२४
प	०	०	०	०	०	०	०	०	०

मेषांश में कर्क दशा वर्ष २१ में अन्तर्दशा

	क	सि	कं	तु	बृ	ध	मे	वृ	मि
व	४	१	१	१	१	२	१	३	१
मा	४	०	१०	४	५	१	५	४	१०
दि	२७	१८	२०	९	१९	६	१९	९	२७
घ	३६	०	२४	३६	१२	०	१२	३६	२४
प	०	०	०	०	०	०	०	०	०

मेषांश में सिंह दशा वर्ष ५ में अन्तर्दशा

	सि	कं	तु	बृ	ध	मे	वृ	मि	क
व	०	०	०	०	०	०	०	०	१
मा	३	५	९	४	६	४	९	५	०
दि	०	१२	१८	६	०	६	१८	१२	१८
घ	०	०	०	०	०	०	०	०	०
प	०	०	०	०	०	०	०	०	०

मेषांश में कन्या दशा वर्ष ९ में अन्तर्दशा

	कं	तु	बृ	ध	मे	वृ	मि	क	सि
व	०	१	०	०	०	१	०	१	०
मा	९	५	७	१०	७	५	९	१०	५
दि	२१	८	१६	२४	१६	८	२१	२०	१२
घ	३६	२४	४८	०	४८	२४	३६	२४	०
प	०	०	०	०	०	०	०	०	०

मेषांश में तुला दशा वर्ष १६ में

अन्तर्दशा

	तु	वृ	ध	मे	वृ	मि	क	सि	कं
व	२	१	१	१	२	१	३	०	१
मा	६	१	७	१	६	५	४	९	५
दि	२१	१३	६	१३	२१	८	९	१८	८
घ	३६	१२	०	१२	३६	२४	३६	०	२४
प	०	०	०	०	०	०	०	०	०

मेषांश में वृश्चिक दशा वर्ष ७ में

अन्तर्दशा

	वृ	ध	मे	वृ	मि	क	सि	कं	तु
व	०	०	०	१	०	१	०	०	१
मा	५	८	५	१	७	५	४	७	१
दि	२६	१२	२६	१३	१६	१९	६	१५	१३
घ	२४	०	२४	१२	४८	१२	०	४८	१२
प	०	०	०	०	०	०	०	०	०

मेषांश में धनु दशा वर्ष १० में

अन्तर्दशा

	ध	मे	वृ	मि	क	सिं	कं	तु	वृ
व	१	०	१	०	२	०	०	१	०
मा	०	८	७	१०	१	६	१०	७	८
दि	०	१२	६	२४	६	०	२४	०	१२
घ	०	०	०	०	०	०	०	०	०
प	०	०	०	०	०	०	०	०	०

वृषांश में मकर दशा वर्ष ४ में

अन्तर्दशा

	मं	कुं	मी	वृ	तु	क	सिं	कं	मि
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	२	२	५	३	९	५	११	२	४
दि	७	७	१९	२८	१	२	२५	२४	२
घ	४५	४५	१४	३५	३	२८	४५	४२	४८
प	५३	५३	४२	१८	३२	१४	५३	२१	१४

वृषांश में कुम्भ दशा वर्ष ४ में

अन्तर्दशा

	कुं	मी	वृ	तु	कं	क	सिं	मि	म
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	२	५	३	९	५	११	२	५	२
दि	७	१९	२८	१	२	२५	२४	२	७
घ	४५	५४	३५	३	१८	४५	४२	२८	४५
प	४३	४२	१८	३२	१४	५३	२१	१४	५३

वृषांश में मीन दशा वर्ष १० में

अन्तर्दशा

	मी	वृ	तु	कं	क	सिं	मि	म	कुं
व	१	०	१	१	२	०	१	०	०
मा	२	९	१०	०	५	७	०	५	५
दि	३	२६	१७	२१	१९	१	२१	१९	१९
घ	३१	२८	३८	१०	२४	४५	१०	२४	२४
प	४६	१४	४९	३५	४२	५३	३५	४३	४३

वृषांश में वृश्चिक दशा वर्ष ७ में

अन्तर्दशा

	वृ	तु	कं	क	सिं	मि	म	कुं	मी
व	०	१	०	१	०	०	०	०	०
मा	६	३	८	८	४	८	३	३	९
दि	२७	२४	२६	२२	२८	२६	२८	२८	२६
घ	३१	३१	४९	३५	१४	४९	४५	३५	२८
प	४६	१०	२५	१७	७	२५	१८	१८	१४

वृषांश में तुला दशा वर्ष १६ में

अन्तर्दशा

	तु	कं	क	सिं	मि	म	कुं	मी	वृ
व	३	१	३	०	१	०	०	१	१
मा	०	८	११	११	८	९	९	१०	३
दि	४	९	१३	८	९	१	१	१७	२४
घ	१४	५२	३	४९	५२	३	३	३८	२१
प	७	५६	३२	२५	५६	३२	३२	४९	११

वृषांश में कन्या दशा वर्ष ९ में

अन्तर्दशा

	क	क	सिं	मि	म	कुं	मी	वृ	तु
व	०	२	०	०	०	०	१	०	१
मा	११	२	६	११	५	५	०	०	८
दि	१३	२०	१०	१३	२	२	२१	२६	९
घ	३	२८	३५	३	२८	२८	१०	४९	५२
प	३२	१४	१८	३२	१४	१४	३५	२५	५६

वृषांश में सिंह दशा वर्ष ५ में

अंतर्दशा

	सिं	मि	म	कुं	मी	वृ	तु	कं	क
व	०	०	०	०	०	०	०	०	१
मा	३	६	२	२	७	४	११	६	२
दि	१५	१०	२४	२४	१	२८	८	१०	२४
घ	५२	३५	४२	४२	४५	१४	४९	३५	४२
प	५६	१८	२१	२१	५३	७	२५	१८	१४

मिथुनांश में वृष दशा वर्ष १६ में

अन्तर्दशा

	वृ	मे	मी	कुं	म	ध	मे	वृ	मि
व	३	१	१	०	०	१	१	१	१
मा	१	४	११	९	९	११	४	१	८
दि	०	५	३	७	७	३३	५	०	२४
घ	२१	४७	५८	३५	३५	५८	४७	२१	३४
प	४१	०	३३	२५	२५	३३	०	४१	४२

मिथुनांश में मीन दशा वर्ष १०

में अन्तर्दशा

	मी	कुं	म	ध	मे	वृ	मि	बृ	मे
व	१	०	०	१	०	१	१	१	०
मा	२	५	५	२	१०	११	१	११	१०
दि	१३	२३	२३	१३	३	३	०	३	३
घ	४४	२९	२९	४४	३६	५८	२१	५८	३६
प	६	३८	३८	६	५२	३३	४२	३३	५२

वृषांश में कर्क दशा वर्ष २१ में

अन्तर्दशा

	क	सिं	मि	म	कुं	मी	वृ	तु	कुं
व	५	१	२	०	०	२	१	३	२
मा	२	२	२	११	११	५	८	११	२
दि	७	२४	२०	२५	२५	१९	२२	१३	२०
घ	४५	४२	२८	४५	४५	२४	३५	३	२८
प	५३	२१	१४	५३	५३	४३	१७	२३	१४

वृषांश में मिथुन दशा वर्ष ५ में

अंतर्दशा

	मि	म	कुं	मी	वृ	तु	कं	क	सिं
व	०	०	०	१	०	१	०	२	०
मा	११	५	५	०	८	८	११	३	६
दि	१३	२	२	२१	२६	९	१३	२०	१०
घ	३	२८	२८	१०	४९	५२	१	२८	३५
प	३२	१४	१४	३५	२५	५६	३२	१४	१८

मिथुनांश में मेष दशा वर्ष ७ में

अन्तर्दशा

	मे	मी	कुं	म	ध	मे	वृ	मि	बृ
व	०	०	०	०	०	०	१	०	१
मा	७	१०	४	४	१०	७	४	९	४
दि	२	३	१	१	३	२	५	३	५
घ	३१	३६	२६	२६	३६	३१	४७	१५	४७
प	४८	५२	४५	४५	५२	४८	०	१०	०

मिथुनांश में कुंभ दशा वर्ष ४

में अन्तर्दशा

	कुं	म	ध	मे	वृ	मि	बृ	मे	मी
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	२	२	५	४	९	५	९	४	५
दि	९	९	२३	१	७	६	७	१	२३
घ	२३	२३	२९	२६	३५	८	३५	२६	२९
प	५२	५२	३८	४५	२५	४०	२५	४५	३८

मिथुनांश में मकर दशा वर्ष ४ में अन्तर्दशा

	म	ध	मे	वृ	मि	बृ	मे	मी	कुं
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	२	५	४	९	५	६	५	५	२
दि	९	२३	१	७	६	७	६	२३	९
घ	२३	२९	२६	३५	८	३५	८	२९	२३
प	५२	३८	४५	२४	४०	२४	४०	३८	५२

मिथुनांश में धन दशा वर्ष १० में अन्तर्दशा

	ध	मे	वृ	मि	बृ	मे	मी	कुं	म
व	१	०	१	१	१	०	१	०	०
मा	२	१०	११	१	११	१०	२	५	५
दि	१३	३	३	०	१	३	१३	२३	२३
घ	४४	२६	५८	२१	५८	३६	४४	२९	२९
प	६	५२	३३	४२	३३	५२	६	३८	३८

मिथुनांश में मेष दशा वर्ष ७ में अन्तर्दशा

	मे	बृ	मि	वृ	मे	मी	कुं	म	ध
व	०	१	०	१	०	०	०	०	०
मा	७	४	९	४	७	१०	४	४	१०
दि	२	५	३	५	२	३	१	१	३
घ	३१	४७	१५	४७	३१	३६	२६	२६	३६
प	४८	०	१०	०	४०	५२	४५	४५	५२

कर्कांश में वृष दशा वर्ष १६ में अन्तर्दशा

	बृ	मि	वृ	मे	मी	कुं	म	ध	मे
व	३	१	३	१	१	०	०	१	१
मा	१	८	१	४	११	९	९	११	४
दि	०	२४	०	५	३	७	७	१	५
घ	२१	३४	२१	४७	५८	३५	३५	५८	४७
प	४१	४२	४१	०	३३	२५	२५	३३	०

मिथुनांश में मिथुन दशा वर्ष ९ में अन्तर्दशा

	मि	बृ	मे	मी	कुं	म	ध	मे	वृ
व	०	१	०	१	०	०	१	०	१
मा	११	८	९	१	५	५	१	९	८
दि	२१	२४	३	०	६	६	०	३	२४
घ	१९	३४	१५	२१	८	८	२१	१५	३४
प	३२	४२	१०	४२	४०	४०	४२	१०	४२

कर्कांश में कर्क दशा वर्ष २१ में अन्तर्दशा

	क	सिं	कं	तु	बृ	ध	म	कु	मी
व	५	१	२	३	१	२	०	०	२
मा	१	२	२	१०	८	५	११	११	५
दि	१६	१९	११	२६	१५	९	२१	२१	९
घ	२	३२	९	३	२०	४	३७	३७	४
प	४७	५	४६	४२	५६	११	४१	४१	११

कर्कांश में सिंह दशा वर्ष २ में अन्तर्दशा

	सिं	क	तु	वृ	ध	म	कुं	मी	कं
व	०	०	०	०	०	०	०	०	१
मा	३	६	११	४	६	२	२	६	२
दि	१४	८	४	२६	२९	२३	२३	२९	१९
घ	३९	२२	५३	३०	१८	४३	४३	१८	३२
प	४	२०	१	४२	९	१८	१८	९	५

कर्कांश में कन्या दशा वर्ष ९ में अन्तर्दशा

	क	तु	वृ	ध	म	कुं	मी	कं	सिं
व	०	१	०	१	०	०	१	२	०
मा	११	८	८	०	५	५	०	२	६
दि	९	२	२३	१६	०	०	१६	११	८
घ	४	४७	४३	४४	४१	४१	४४	९	२२
प	११	२५	१५	४०	५१	५१	४०	४६	३०

कर्कांश में तुला वर्ष १६ में अन्तर्दशा

	तु	वृ	ध	म	कुं	मी	क	सिं	कं
व	२	१	१	१	१	१	३	०	१
मा	११	३	१०	८	८	१०	१०	११	८
दि	२१	१८	९	२७	२७	९	२६	४	२
घ	३७	५०	४६	५४	५४	४६	३०	५३	४७
प	४१	१४	२	२६	२६	२	४२	१	२६

कर्कांश में वृश्चिक दशा वर्ष ७ में अन्तर्दशा

	वृ	ध	म	कुं	मी	क	सिं	क	तु
व	०	०	०	०	०	१	०	०	३
मा	६	९	३	३	९	८	४	८	२
दि	२	२३	२७	२७	२३	१५	२६	२३	१८
घ	६	११	२१	२१	२०	३०	४३	५०	
प	५६	२४	३३	३३	२४	५६	४२	१८	१८

कर्कांश में धन दशा वर्ष १० में अन्तर्दशा

	ध	म	कुं	मी	क	सिं	कं	तु	वृ
व	१	०	०	१	२	०	१	१	०
मा	१	५	५	१	५	६	०	१०	९
दि	२८	१७	१७	२८	९	२९	१६	९	२३
घ	३६	३६	३६	३६	४	१८	४४	४६	१
प	१६	३०	३०	१६	१३	९	४०	२	२४

कर्कांश में मकर दशा वर्ष ४ में अन्तर्दशा

	म	कुं	मी	क	सिं	कं	तु	वृ	ध
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	२	२	५	११	२	५	८	३	५
दि	६	६	१७	२१	२३	०	२७	२७	१७
घ	५८	५८	२६	३७	४३	४१	५४	१२	२६
प	३७	३७	३०	३१	१५	५१	२६	३३	३०

कर्कांश में कुम्भ दशा वर्ष ४ में अन्तर्दशा

	कुं	मी	क	सिं	कं	तु	वृ	ध	म
व	१	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	२	५	११	२	५	८	३	५	२
दि	६	१७	२१	२३	०	२७	२७	१७	६
घ	५८	२६	३७	४३	४१	५४	१२	२६	५८
प	३७	३०	४१	१५	५१	२६	३३	३०	३७

कर्कांश में मीन दशा वर्ष १० में अन्तर्दशा

	मी	क	सिं	कं	तु	वृ	ध	म	कुं
व	१	२	०	१	१	०	१	०	०
मा	१	५	६	०	१०	९	१	५	५
दि	२८	९	२९	१६	९	२३	२८	१७	१७
घ	२६	४	१८	१४	४६	१	३६	२६	२६
प	१६	१३	९	४०	२	२४	१६	३०	३०

सिंहांश में वृश्चिक दशा वर्ष ७ में अन्तर्दशा

	वृ	तु	क	क	सिं	कं	वृ	मे	मी
व	०	१	०	१	०	०	२	०	०
मा	५	२	७	५	४	७	१	७	८
दि	२६	२३	१६	१९	६	१६	१३	२	१२
घ	२४	१२	४८	१२	०	४८	१२	४	०
प	०	०	०	०	०	०	०	०	०

सिंहांश में तुला दशा वर्ष १६ में अन्तर्दशा

	तु	क	क	सिं	मि	बृ	मे	मी	वृ
व	२	१	३	०	१	२	१	१	१
मा	६	५	६	९	५	६	१	७	१
दि	२१	८	९	१८	८	२१	१३	६	१३
घ	३६	२४	३६	०	२४	३६	१२	०	१२
प	०.	०	०	०	०	०	०	०	०

सिंहांश में कन्या दशा वर्ष ९ में अन्तर्दशा

	क	कं	सि	मि	बृ	मे	मी	वृ	तु
व	०	१	०	०	१	०	०	०	१
मा	९	१०	५	९	५	७	१०	७	५
दि	२१	२०	१२	२१	८	१६	२४	१६	८
घ	३६	२४	०	३६	२४	४८	०	४८	२४
प	०	०	०	०	०	०	०	०	०

सिंहांश में कर्क दशा वर्ष २१ में अन्तर्दशा

	क	सिं	मि	वृ	मे	मी	म	तु	कं
व	४	१	१	३	१	२	१	३	१
मा	४	०	१०	४	५	१	५	४	१०
दि	२७	१८	२०	९	१९	६	१९	९	२१
घ	३६	०	२४	३६	१२	०	१२	३६	२४
प	०	०	०	०	०	०	०	०	०

सिंहांश में सिंह दशा वर्ष ५ में अन्तर्दशा

	सिं	मि	बृ	मे	मी	वृ	तु	क	कं
व	०	०	०	०	०	०	०	०	१
मा	३	५	९	४	६	४	९	५	०
दि	०	१२	१७	६	०	६	१८	१२	१८
घ	०	०	०	०	०	०	०	०	०
प	०	०	०	०	०	०	०	०	०

सिंहांश में मिथुन दशा वर्ष ९ में अन्तर्दशा

	मि	कं	मे	मी	वृ	तु	क	कं	सिं
व	०	१	०	०	०	१	०	१	०
मा	९	५	७	१०	७	५	९	१०	५
दि	२१	८	१६	२४	१७	८	२१	२०	१२
घ	३६	२४	४८	०	४८	२४	३६	२५	०
प	०	०	०	०	०	०	०	०	०

सिंहांश में वृष दशा वर्ष १६ में अन्तर्दशा

	बृ	मे	मी	वृ	तु	क	कं	सिं	मि
व	२	१	१	१	२	१	३	०	१
मा	६	१	७	१	६	५	४	९	५
दि	२१	१३	६	१३	२१	८	९	१८	८
घ	३६	१२	०	१२	३६	२४	३६	०	२४
प	३०	०	०	०	०	०	०	०	०

सिंहांश में मेष दशा वर्ष ७ में अन्तर्दशा

	मे	मी	बृ	तु	क	कं	सिं	मि	वृ
व	०	०	०	१	०	१	०	०	१
मा	५	८	५	१	७	५	४	७	१
दि	२६	१२	२६	१३	१६	१९	६	१६	१३
घ	२४	०	२४	१२	४८	१२	०	४८	१२
प	०	०	०	०	०	०	०	०	०

सिंहांश में मीन दशा वर्ष १० में अन्तर्दशा

	मी	वृ	तु	क	कं	सिं	मि	बृ	मे
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	२	२	५	३	९	५	११	२	५
दि	७	७	१९	२८	१	२	२५	२४	२
घ	४५	४५	१४	३५	३	२८	४५	४२	२८
प	५३	५३	४२	१८	३२	१४	५३	२१	१४

कन्यांश में कुम्भ दशा वर्ष ४ में अन्तर्दशा

	कुं	म	ध	मे	वृ	मि	क	सिं	कं
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	२	२	५	३	९	५	११	२	५
दि	७	७	१९	२८	१	२	२५	२४	२
घ	४५	४५	१४	३५	३	२८	४५	४२	२८
प	१७	१७	४२	१८	३२	१४	५३	२१	१४

कन्यांश में मकर दशा वर्ष ४ में अन्तर्दशा

	म	ध	मे	बृ	मि	क	सिं	कं	कुं
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	२	५	३	९	५	११	२	५	५
दि	७	१९	२८	१	२	२५	४४	२	२
घ	४५	५४	३५	३	२८	४५	४२	२८	२८
प	५३	४२	१८	३५	१४	५३	२१	१४	१४

कन्यांश में धन दशा वर्ष १० में अन्तर्दशा

	ध	मे	वृ	मि	क	सिं	कं	कुं	म
व	०	०	१	१	०	१	१	०	०
मा	२	९	१०	२	१०	७	०	५	५
दि	३	२६	१७	२१	३	१	२१	१९	१९
घ	३१	२८	३८	१०	५८	४५	१०	२४	२४
प	४६	१४	४९	३५	३९	४३	३५	४३	४३

कन्यांश में मेष दशा वर्ष ७ में अन्तर्दशा

	मे	वृ	मि	क	सिं	कं	कुं	म	ध
व	०	१	०	१	०	०	०	०	०
मा	६	६	८	८	४	८	३	३	९
दि	२७	२४	२६	२२	२८	२६	२८	२८	२६
घ	३१	२१	४९	३५	१४	४९	३५	३५	१८
प	४६	१०	१५	१७	७	१५	१८	१८	१४

कन्यांश में वृष दशा वर्ष १६ में अन्तर्दशा

	बृ	मि	क	सिं	कं	कुं	म	ध	मे
व	३	१	२	०	१	०	०	१	१
मा	०	८	११	११	८	९	९	१०	३
दि	४	९	१३	८	९	१	१	१७	२४
घ	१४	५२	३	४९	५२	३	३	३८	२१
प	७	५६	३२	२५	५६	३२	३२	४९	११

कन्यांश में मिथुन दशा वर्ष ९ में अन्तर्दशा

	मि	क	सिं	कं	कुं	म	ध	मे	बृ
व	०	२	०	०	०	०	१	०	१
मा	११	२	६	११	५	५	०	८	०
दि	१३	२०	१०	१३	२	२	२१	२६	९
घ	३	२८	३५	३	२८	२८	१०	४९	५२
प	३९	१४	१८	२२	१४	१४	३५	२५	५६

कन्यांश में कर्क दशा वर्ष २१ में अन्तर्दशा

	क	सिं	कं	कुं	म	ध	मे	वृ	मि
व	५	१	२	०	०	२	१	३	२
मा	२	२	२	११	११	५	८	११	२
दि	७	२४	२०	२५	२५	११	२२	१३	२०
घ	४५	४२	२८	४५	४५	२४	१५	३	२८
प	५३	२१	१४	४३	४३	४३	१७	३२	१४

कन्यांश में सिंह दशा वर्ष ५ में अन्तर्दशा

	सिं	कं	कुं	म	ध	मे	बृ	मि	क
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	३	६	२	२	७	४	११	६	२
दि	१५	१०	२४	२४	१	२८	८	१०	२४
घ	५२	३५	४२	४२	४५	१४	४९	१५	४२
प	४६	१७	२१	२१	५३	७	२५	१८	२१

कन्यांश में कन्या दशा वर्ष ९ में अन्तर्दशा

	कं	कुं	म	ध	मे	वृ	मि	क	सिं
व	०	०	०	१	०	१	०	२	०
मा	११	५	५	०	८	८	११	२	६
दि	१३	२	२	२१	२९	९	१३	१०	१०
घ	३	२८	२८	१०	४९	५२	३	२८	३५
प	३२	१४	[illegible]	[illegible]	२५	५६	३२	१४	१८

तुलांश में तुला दशा वर्ष १६ में

अन्तर्दशा

	तु	वृ	ध	म	कुं	मी	बृ	तु	क
व	३	१	१	०	०	१	१	२	१
भा	१	४	११	९	९	११	४	१	८
दि	०	५	३	७	७	३	५	०	२४
घ	२१	४७	५८	३५	३५	५८	४७	२१	३४
प	४१	०	३३	२५	२५	३३	०	४१	४२

तुलांश में वृश्चिक दशा वर्ष ७ में

अन्तर्दशा

	वृ	ध	म	कुं	मी	वृ	तु	क	तु
व	०	०	०	०	०	०	१	०	१
मा	७	१०	४	४	१०	७	४	९	४
दि	२	३	१	१	३	२	५	३	५
घ	३१	३६	२६	२६	३६	३१	४७	१५	४७
प	४८	५२	४५	४५	५२	४८	०	१०	०

तुलांश में धन दशा वर्ष १० में

अन्तर्दशा

	ध	म	कुं	मी	बृ	तु	क	तु	बृ
व	१	०	१	१	०	१	१	१	०
मा	२	५	२	२	१०	११	१	११	१०
दि	१३	२३	१३	१३	३	३	०	९	३
घ	४४	२९	४४	४४	३६	५८	२१	५८	३६
प	६	३८	६	६	५२	३३	४२	३३	५२

तुलांश में मकर दशा वर्ष ४ में

अन्तर्दशा

	मं	कुं	मी	वृ	तु	क	तु	बृ	ध
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	२	२	५	४	९	५	९	४	५
दि	९	९	२३	१	७	६	७	१	२३
घ	२३	२३	२९	२६	३५	८	३५	२६	२९
प	५२	५२	३८	४५	२५	४०	२५	४५	३८

तुलांश में कुंभ दशा वर्ष ४ में

अन्तर्दशा

	कुं	मी	बृ	तु	क	तु	बृ	ध	म
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	२	५	४	९	५	८	४	५	२
दि	९	२३	१	७	६	७	१	२३	९
घ	२३	२९	२६	३५	८	३५	२६	२९	२३
प	५२	३८	४५	२५	४०	२५	४५	३८	५२

तुलांश में मीन दशा वर्ष १० में

अन्तर्दशा

	मी	वृ	तु	क	तु	बृ	ध	म	कुं
व	१	०	१	१	१	०	१	०	०
मा	२	१०	११	१	११	१०	२	५	५
दि	१३	३	३	०	३	३	१३	२३	२३
घ	४४	३६	५८	२१	५८	३६	४४	२९	२९
प	६	५२	३३	४२	३३	५२	६	३८	३८

तुलांश में वृश्चिक दशा वर्ष ७

में अन्तर्दशा

	वृ	तु	क	तु	वृ	ध	म	कुं	मी
व	०	१	०	१	०	०	०	०	०
मा	७	४	९	४	७	१०	४	४	१०
दि	२	५	३	३	२	३	१	१	३
घ	३१	४७	१५	४७	३१	३६	२६	२६	३६
प	४८	०	१०	०	४८	५२	४५	४५	५२

तुलांश में तुला दशा वर्ष १६

में अन्तर्दशा

	तु	क	तु	बृ	ध	म	कुं	मी	बृ
व	३	१	३	१	१	०	०	१	१
मा	१	८	१	४	११	९	९	११	४
दि	०	२४	०	५	३	७	७	३	५
घ	२१	३४	२१	४७	५८	३५	३५	५८	४७
प	४१	४२	४१	०	३३	२५	२५	३३	०

तुलांश में कन्या दशा वर्ष ९ में अन्तर्दशा

	क	तु	बृ	ध	म	कुं	मी	वृ	तु
व	०	१	०	१	०	०	१	०	१
मा	११	८	९	१	५	५	१	९	८
दि	२३	२४	३	०	६	६	०	३	२४
घ	१९	३४	१५	२१	८	८	२१	१५	३४
प	३२	४२	१०	४२	४०	४०	४२	१०	४२

वृश्चिकांश में कर्क दशा वर्ष २१ में अन्तर्दशा

	क	सिं	मि	बृ	मे	मी	कुं	म	ध
व	५	१	२	३	१	२	०	०	२
मा	१	२	२	१०	८	५	११	११	५
दि	१६	१९	११	२६	१५	९	२१	२१	९
घ	२	३२	९	३०	२०	४	३७	३७	४
प	४७	५	४६	४२	५६	११	४१	४१	११

वृश्चिकांश में सिंह दशा वर्ष ५ में अन्तर्दशा

	सिं	मि	वृ	मे	मी	कुं	म	ध	क
व	२	०	०	०	०	०	०	२	१
मा	३	६	११	४	६	२	२	६	२
दि	१४	८	४	२६	२९	२३	२३	२९	१९
घ	३९	२२	५३	३०	१८	४३	४३	१८	३२
प	४	२७	१	४२	९	१९	१५	९	५

वृश्चिकांश में मिथुन दशा वर्ष ९ में अन्तर्दशा

	मि	वृ	मे	मी	कुं	म	ध	क	सिं
व	०	१	०	१	०	०	१	२	०
मा	११	८	८	०	५	५	०	२	६
दि	९	२	२३	१६	०	०	१६	११	८
घ	४	४७	४३	४४	४१	४१	४४	९	२२
प	११	२६	१५	४०	५१	५१	४०	४६	२०

वृश्चिकांश में वृष दशा वर्ष १६ में अन्तर्दशा

	वृ	मे	मी	कुं	म	ध	क	सिं	मि
व	२	१	१	०	०	१	३	०	१
मा	११	३	१०	८	८	१०	१०	११	८
दि	२१	१८	९	२७	२७	९	२६	४	२
घ	३७	५०	४६	५४	५४	४६	३०	५३	४७
प	४१	१४	२	२६	२६	२	४२	१	२६

वृश्चिकांश में मेष दशा वर्ष ७ में अन्तर्दशा

	मे	मी	कुं	म	ध	क	सिं	मि	वृ
व	०	०	०	०	०	१	०	०	१
मा	६	९	३	३	९	८	४	८	३
दि	२५	२३	२७	२७	२३	१५	२६	२३	१८
घ	६	१	१२	१२	१	२०	३०	४२	५०
प	५०	२४	३३	३३	२४	५६	४२	१५	१४

वृश्चिकांश में मीन दशा वर्ष १० में अन्तर्दशा

	मी	कुं	म	ध	क	सिं	मि	वृ	मे
व	१	०	०	१	२	०	१	१	०
मा	१	५	५	१	५	६	०	१०	९
दि	२८	१७	१७	२८	९	२९	१६	९	२३
घ	३६	२६	२६	३६	४	१८	४४	४६	१
प	१६	३०	३०	१६	१३	९	४०	२	२४

वृश्चिकांश में कुम्भ दशा वर्ष ४ में अन्तर्दशा

	कुं	म	ध	क	सिं	मि	वृ	मे	मी
प	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	२	२	५	११	२	५	८	३	५
दि	६	६	१७	२१	२३	०	२७	२७	१७
घ	५८	५८	२६	३७	४३	४१	५४	१२	२६
प	३७	३७	३०	४१	१५	४१	२६	३३	२०

वृश्चिकांश में मकर दशा वर्ष ४ में अन्तर्दशा

	म	ध	क	सिं	मि	बृ	मे	मी	कुं
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	२	५	११	२	५	८	३	५	२
दि	६	१७	२१	२३	०	२७	२७	१७	६
घ	५८	२६	३०	४३	४१	१९	१२	२६	५८
प	३७	३०	४१	१८	५१	२३	२३	३०	३७

वृश्चिकांश में धन दशा वर्ष १० में अन्तर्दशा

	ध	क	सिं	मि	बृ	मे	मी	कुं	म
व	१	२	८	१	१	८	५	०	०
मा	१	५	६	०	१०	९	१	५	५
दि	२८	९	२९	१६	९	२३	२८	१७	१७
घ	३६	४	२८	४४	४६	१	३६	२६	२६
प१	२१	३०	०	४०	२	२४	१६	३०	३०

धनु अंश में मेष दशा वर्ष ७ में अन्तर्दशा

	मे	वृ	मि	क	सिं	कं	तु	बृ	ध
व	०	१	०	१	०	०	१	०	०
मा	५	१	७	५	४	७	१	५	८
दि	२६	१३	१६	१९	६	१६	१३	२६	१२
घ	२४	१२	४८	१२	०	४८	१२	२४	०
प	०	०	०	०	०	०	०	०	०

धनु अंश में वृष दशा वर्ष १६ में अन्तर्दशा

	बृ	मि	क	सिं	कं	तु	वृ	ध	मे
व	२	१	२	०	१	२	१	१	१
मा	६	५	६	९	५	६	१	६	१
दि	२०	८	९	१८	८	२१	१३	३६	१६
घ	३६	२४	३६	२	२४	३६	१२	०	१२
प	०	०	०	०	०	०	०	०	०

धनु अंश में मिथुन दशा वर्ष ९ में अन्तर्दशा

	मि	क	सिं	कं	तु	बृ	ध	मे	वृ
व	०	१	०	०	१	०	०	०	१
मा	९	१०	५	९	५	७	१०	७	५
दि	२१	२०	१२	२१	८	१६	२४	१६	८
घ	३६	२४	०	३६	२४	४८	०	४८	२४

धनु अंश में कर्क दशा वर्ष २१ में अन्तर्दशा

	क	सिं	कं	तु	बृ	ध	मे	वृ	मि
व	४	१	१	३	१	२	१	३	१
मा	४	०	१०	४	५	१	५	४	१०
दि	२७	१८	२०	९	१९	६	१९	९	२०
घ	३६	०	२४	३६	१२	०	१२	३६	२४

धनु अंश में सिंह दशा वर्ष ५ में अन्तर्दशा

	सिं	कं	तु	बृ	ध	मे	वृ	मि	क
व	०	०	०	०	०	०	०	०	१
मा	३	५	९	४	३	४	९	५	०
दि	०	१२	१८	६	०	६	१८	१२	१८

धनु अंश में कन्या दशा वर्ष ९ में अन्तर्दशा

	क	तु	बृ	ध	मे	वृ	मि	कं	सिं
व	०	१	०	०	०	१	०	१	०
मा	९	५	७	१०	७	४	९	१०	५
दि	२१	८	१६	२४	१६	८	२१	२०	१२
घ	३६	२४	४८	०	४८	२४	१६	२४	०

धनु अंश में तुला दशा वर्ष १६ में अन्तर्दशा

	तु	वृ	ध	मे	बृ	मि	क	सिं	कं
व	१	१	१	१	१	१	१	०	०
मा	६	१	७	१	३	५	४	९	५
दि	२१	१३	६	१३	२१	८	९	१८	८
घ	३६	१२	०	१२	३६	२४	३६	०	२४

धनु अंश में वृश्चिक दशा वर्ष ७ में अन्तर्दशा

	वृ	ध	मे	बृ	मि	क	सिं	कं	तु
व	०	०	०	१	०	१	०	०	१
मा	५	८	५	१	७	५	४	७	१
दि	२६	१२	२६	१३	१६	१९	६	१६	१३
घ	२४	०	२४	१२	४८	२१	०	४८	१२

धनु अंश में धन दशा वर्ष १० में अंतर्दशा

	ध	मे	वृ	मि	क	सिं	कं	तु	बृ
व	१	०	१	०	२	०	०	१	०
मा	०	८	७	१०	१	६	१०	७	८
दि	०	१२	६	२४	६	०	२०	६	१२

मकरांश में मकर दशा वर्ष ४ में अंतर्दशा

	म	कुं	मी	बृ	तु	क	कं	सिं	मि
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	२	२	५	३	९	५	११	२	५
दि	७	७	१९	२८	१	३	२८	२४	२
घ	४५	५४	१४	१५	३	२८	४५	४२	२८
प	५३	५३	४२	१८	३५	१४	५३	२१	१४

मकरांश में कुम्भ दशा वर्ष ४ में अन्तर्दशा

	कुं	मी	वृ	तु	क	कं	सिं	मि	म
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	७	१९	२८	१	२	२५	२४	२	७
दि	२	५	३	९	५	११	२	५	२
घ	४५	२४	३५	३	२८	४९	४२	२८	४५
प	५३	४२	१८	३२	१४	५३	२१	१४	५३

मकरांश में मीन दशा वर्ष १० में अन्तर्दशा

	मी	वृ	तु	क	कं	सिं	मि	म	कुं
व	१	०	१	१	२	०	१	०	०
मा	२	९	१०	०	५	७	०	५	५
दि	३	२६	१७	२१	१९	१	२१	१९	१९
घ	३१	२८	३८	१०	२४	४५	१०	२४	२४
प	४६	१४	४९	३५	४३	५३	३५	४३	४३

मकरांश में वृश्चिक दशा वर्ष ७ में अन्तर्दशा

	वृ	तु	क	कं	सिं	मि	म	कुं	मी
व	०	१	०	१	०	०	०	०	०
मा	६	३	८	०	४	८	३	३	९
दि	२७	२४	२६	२२	२८	२६	२८	२८	२६
घ	३१	२०	४९	३५	१४	४९	३५	३५	२८
प	४६	१०	३०	१७	७	२५	१८	१८	१४

मकरांश में तुला दशा वर्ष १६ में अन्तर्दशा

	तु	क	कं	सिं	मि	म	कुं	मी	वृ
व	६	१	३	०	१	०	०	१	१
मा	०	८	११	११	८	९	९	१०	३
दि	४	९	१३	८	९	१	१	१०	२४
घ	१४	५२	३	४९	५२	३	३	३८	२१
प	०	५६	३२	१५	५६	३२	३२	४९	११

मकरांश में कन्या दशा वर्ष ९ में अन्तर्दशा

	क	कं	सिं	मि	म	कुं	मी	बृ	तु
व	०	२	०	०	०	०	१	०	१
मा	११	२	६	११	५	५	०	८	०
दि	१३	२०	१०	१३	२	२	२१	२६	९
घ	३	२८	३५	३	२८	२८	१०	४५	५२
प	३२	३४	१८	३२	१४	१४	३५	२५	५६

मकरांश में कर्क दशा वर्ष २१ में अन्तर्दशा

	क	सिं	मि	म	कुं	मी	बृ	तु	क
व	५	१	२	०	०	२	१	३	२
मा	२	२	२	११	११	५	८	११	२
दि	७	२४	२०	२५	२५	१९	२२	१३२	०
घ	४५	४२	२८	४५	४५	२४	३५	३	२८
प	५३	३१	१४	५३	५३	४३	१७	३२	१४

मकरांश में सिंह दशा वर्ष ५ में अन्तर्दशा

	सिं	मि	म	कुं	मी	वृ	तु	क	कं
व	०	०	०	०	०	०	०	०	१
मा	३	६	२	२	७	४	११	६	२
दि	१५	१०	२४	२४	१	२८	८	१०	२४
घ	५२	३५	४२	४२	४५	१४	४९	३५	४२
प	५६	१८	२१	२१	५३	७	२५	१८	२१

मकरांश में मिथुन दशा वर्ष ९ में अन्तर्दशा

	मि	म	कुं	मी	वृ	तु	क	कं	सिं
व	०	०	०	१	०	१	०	१	०
मा	११	५	५	०	८	८	११	२	६
दि	१३	२	२	२१	२६	९	११	२०	१०
घ	३	२८	२८	१०	४९	५२	३	२८	३५
प	३२	१४	१४	३५	२५	५६	३२	१४	१८

कुम्भांश में वृष दशा वर्ष १६ में अन्तर्दशा

	वृ	मे	मी	कुं	म	ध	मे	बृ	मि
व	३	१	१	०	०	१	१	३	१
मा	१	४	११	९	९	११	४	१	८
दि	०	५	३	७	७	९	५	०	२४
घ	२१	४७	५८	३५	३५	५८	४७	२१	३४
प	४२	०	३३	२५	२५	३३	०	४१	४२

कुम्भांश में मेष दशा वर्ष ७ में अन्तर्दशा

	मे	मी	कुं	म	ध	मे	वृ	मि	बृ
व	०	०	०	०	०	०	१	०	०
मा	७	१०	४	४	१०	७	४	९	४
दि	२	३	१	१	३	२	५	३	५
घ	३१	३६	२६	२६	३६	३१	४७	१८	४७
प	४८	५२	४५	४५	५२	४८	०	१०	०

कुम्भांश में मीन दशा वर्ष १० में अन्तर्दशा

	मी	कुं	म	ध	मे	वृ	मि	बृ	मे
व	१	०	०	१	०	१	१	१	०
मा	२	५	५	२	१०	११	१	११	१०
दि	११	२३	२३	१३	३	१	०	३	३
घ	४४	२९	२९	४४	३६	५	१	५८	३६
प	६	३८	३८	६	४२	१३	४२	३३	५२

कुम्भांश में कुंभ दशा वर्ष ४ में अन्तर्दशा

	कुं	म	ध	मे	वृ	मि	वृ	मे	मी
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	२	२	५	४	९	५	९	४	५
दि	९	९	२३	१	७	६	७	६	२३
घ	२३	२३	२९	२६	३५	८	३५	२६	२९
प	४२	४२	३८	४५	२५	४०	१५	४०	३८

कुम्भांश में मकर दशा वर्ष ४ में अन्तर्दशा

	म	ध	मे	वृ	मि	वृ	मे	मी	कुं
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	२	५	४	९	५	९	४	५	२
दि	९	२३	१	३७	६	३७	१	२३	९
घ	२३	२९	२६	३५	८	३५	२६	२९	२३
प	५२	३८	४५	२५	४	२५	४५	३८	५५

कुम्भांश में धन दशा वर्ष १० में अन्तर्दशा

	ध	मे	बृ	मि	वृ	मे	मी	कुं	म
व	१	०	१	१	१	०	१	०	०
मा	२	१०	११	१	११	१०	२	५	५
दि	१३	३	३	०	३	३	१३	२३	२३
घ	४४	३६	५८	२१	५८	३६	४४	२९	२९
प	६	२	३३	४२	३३५	२	६	३८	३८

कुम्भांश में मेष दशा वर्ष १७ में अन्तर्दशा

	मे	वृ	मि	बृ	मे	मी	कुं	म	ध
व	०	१	०	१	०	०	०	०	०
मा	७	४	९	४	७	१०	४	४	१०
दि	२	५	३	५	२	३	१	१	३
घ	३१	४७	१६	४७	३१	३६	२६	२६	३६
प	४८	०	१०	०	४८	५२	४५	४५	५२

कुम्भांश में वृष दशा वर्ष १६ में अन्तर्दशा

	वृ	मि	बृ	मे	मी	कुं	म	ध	मे
व	३	१	३	१	१	०	०	१	१
मा	१	८	१	४	११	९	९	११	४
दि	०	२४	०	५	३	७	७	३	५
घ	२१	३४	२१	४७	५८	३५	३५	५८	४७
प	४१	४२	४१	०	३३	२५	२५	३३	०

कुम्भांश में मिथुन दशा वर्ष ९ में अन्तर्दशा

	मि	वृ	मे	मी	कुं	म	ध	मे	वृ
व	०	१	०	१	०	०	१	०	१
मा	११	८	९	१	५	५	१	९	८
दि	२१	२४	३	०	६	६	०	३	२४
घ	१९	३४	१५	२१	८	८	२१	१५	३४
प	३२	३४	१०	४२	४०	४०	४२	१०	४२

मीनांश में कर्क दशा वर्ष १२ में अन्तर्दशा

	क	सिं	क	तु	वृ	ध	म	कुं	मी
व	५	१	२	३	१	२	०	०	०
मा	१	२	२	१०	८	५	११	११	५
दि	१६	१९	११	२६	१५	९	२१	२१	९
घ	२	३९	९	३०	२०	४	३७	३७	४
प	४७	५	४७	४२	५६	११	४१	४१	११

मीनांश में सिंह दशा वर्ष ५ में अन्तर्दशा

	सिं	कं	तु	वृ	ध	म	कुं	मी	क
व	०	०	०	०	०	०	०	०	१
मा	३	६	११	४	६	२	२	१	२
दि	१४	८	४	२६	२९	२३	२३	२९	१९
घ	१९	२२	५३	३०	१८	४३	४३	८	३२
प	४	२०	१	४२	९	१५	१५	९	५

मीनांश में कन्या दशा वर्ष ४ में अन्तर्दशा

	क	तु	वृ	ध	म	कुं	मी	क	सिं
प	०	१	०	१	०	०	१	२	०
मा	११	८	८	०	५	५	०	२	६
दि	९	२	२३	१६	०	०	१६	११	८
घ	४	४७	४३	४४	४१	४१	४४	९	२२
प	११	२६	१५	४०	५१	५१	४०	४६	२०

मीनांश में तुला दशा वर्ष १६
में अन्तर्दशा

	तु	वृ	ध	म	कुं	मी	क	सिं	कं
व	२	१	०	०	०	१	३	०	१
मा	११	३	१०	८	८	१०	१०	११	८
दि	२१	१८	९	२७	२७	९	२६	४	२
घ	३७	५०	४६	५४	५४	४६	३०	५३	४७
प	४१	१४	९	२६	२६	२	४०	१	२६

मीनांश में वृश्चिक दशा वर्ष ७
में अन्तर्दशा

	बृ	ध	म	कुं	मी	मं	सिं	क	तु
व	०	०	०	०	०	१	०	०	१
मा	६	९	३	३	९	८	४	८	३
दि	२५	२३	२७	२७	२३	१५	२६	२३	१८
घ	६	१	१२	१२	१	२०	३०	४३	५०
प	५९	२४	३३	३३	२४	५६	४२	१५	१४

मीनांश में धन दशा वर्ष १०
में अन्तर्दशा

	ध	म	कुं	मी	क	सिं	कं	तु	वृ
व	१	०	०	१	१	०	१	१	०
मा	१	५	५	१	५	६	०	१०	९
दि	२८	१७	१७	२८	९	२९	१६	९	२३
घ	३६	२६	२६	३६	४	१८	४४	४६	१
प	१६	३०	३०	१६	१३	९	४०	२	२४

मीनांश में मकर दशा वर्ष ४
में अन्तर्दशा

	मं	कुं	मी	क	सिं	कं	तु	बृ	ध
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	२	२	५	१	२	५	८	३	५
दि	६	६	१७	२१	१३	०	२७	२७	१७
घ	५८	५८	२६	३७	४३	४१	५४	१२	२६
प	३७	३७	३०	४१	१५	५१	२६	३३	३०

मीनांश में कुंभ दशा वर्ष ४
में अन्तर्दशा

	कुं	मी	क	सिं	कं	तु	बृ	ध	म
व	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मा	२	५	११	२	५	८	३	५	२
दि	६	१७	२१	२३	०	२७	२७	१७	६
घ	५८	२६	३७	४३	४१	५४	१२	२६	५८
प	३७	३०	४१	१५	५१	२६	२३	३०	३७

मीनांश में मीन दशा वर्ष १०
में अन्तर्दशा

	मी	क	सिं	कं	तु	बृ	ध	म	कुं
व	१	२	०	१	१	०	१	०	०
मा	१	५	६	०	१०	९	१	५	५
दि	२८	९	२९	१६	९	२३	२८	१७	१७
घ	३६	४	१८	४४	४६	१	३६	२६	२६
प	१६	११	९	४०	२	२४	१६	३०	३०

इति श्री वृहत्पाराशरहोराशास्त्रं

ज्यौतिषाचार्य श्री गणेशदत्त पाठक कृत सटीकं सोदाहरणं समाप्तम्।